UNIVERSAL
LIBRARY
OU_182565
UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.01/T65H Accession No. H2658

Author तलवार, शिवमंगल सिंह

Title हिंदी वीरकाव्य 1954

This book should be returned on or before the date last marked below.

हिंदी वीरकाव्य

(१६००—१८००ई०)

हिंदी वीरकाव्य

(१६००—१८०० ई०)

टीकमसिंह तोमर

एम० ए० (हिंदी तथा संस्कृत), डी० फिल० (इलाहाबाद)

हिंदुस्तानी एकेडेमी

उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण :: २००० :: १९५४ ई०
मूल्य १२)

मुद्रक : श्री प्रेमचन्द्र मेहरा, न्यू ईरा प्रेस, इलाहाबाद

स्वर्गीया माता

श्रीमती पन्नादेवी

एवं

स्वर्गीय पिता

ठाकुर धारासिंह तोमर

की

पुण्य-स्मृति

को

सादर समर्पित

प्रकाशकीय

हिंदुस्तानी एकेडेमी, उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद का सदैव यह प्रयत्न रहा है कि हिंदी मे महत्वपूण एवं खोजपूण मौलिक ग्रंथों का प्रकाशन किया जाए। प्रस्तुत पुस्तक 'हिंदी वीरकाव्य (१६००–१८००ई०)' डा० टीकमसिंह तोमर की इसी प्रकार की एक कृति है। इलाहाबाद यूनिवर्सिटी द्वारा डी० फिल्० उपाधि के लिए इस रचना को स्वीकृत किया जा चुका है।

हिंदी साहित्य मे वीरकाव्य-धारा का एक विशेष स्थान है। इस विषय पर कुछ संग्रह-तथा सक्षिप्त अध्ययन प्रकाशित हो चुके हैं, किंतु वैज्ञानिक एवं सुव्यवस्थित ढंग से संपूर्ण धारा के अध्ययन का प्रथम प्रयास वर्तमान लेखक ने ही किया है।

प्रस्तुत ग्रंथ दो खंडों में विभक्त है। प्रथम खड मे वीरकाव्य के प्रमुख एवं प्रतिनिधि कवियों के ग्रंथों का रचना-काल, कथानक, चरित्र-चित्रण, रस, अलंकार, छंद, प्रकृति-चित्रण, शैली तथा भाषा की दृष्टि से विवेचन किया गया है। द्वितीय खंड में इन रचनाओं मे प्रयुक्त तिथियों, पात्रों, घटनाओं आदि की ऐतिहासिक प्रामाणिकता पर विचार करके मौलिक निष्कर्ष उपस्थित किए गए है। इस प्रकार प्रस्तुत कृति साहित्य और इतिहास दोनों दृष्टियों से अत्यंत उपयोगी एव महत्वपूर्ण है।

आशा है इस धारा के अन्य उपेक्षित अंगों का अधिक विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करने के लिए विद्वान् लेखक सचेष्ट और प्रयत्नशील रहेगे।

धीरेंद्र वर्मा
मंत्री तथा कोषाध्यक्ष

हिंदुस्तानी एकेडेमी
उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद

प्राक्कथन

हिंदी वीरकाव्य-धारा गंभीर एवं वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से अभी तक उपेक्षित रही है। इसके कतिपय कवियों पर थोड़ा बहुत आलोचनात्मक कार्य अवश्य हुआ है, पर इन सभी ग्रंथों में परीक्षार्थियों की कठिनाइयों को ही ध्यान मे रक्खा गया है। इनमे उस विस्तृत और सूक्ष्म विवेचन का, जो शोध-कार्य के लिए अपेक्षित है, अभाव है। अतः अनुसंधान एव वैज्ञानिक अध्ययन की दृष्टि से प्रस्तुत निबध को इस क्षेत्र मे अपने ढग का प्रथम प्रयास समझा जाना चाहिए।

इस ग्रंथ में हिंदी वीरकाव्य (१६००-१८०० ई०) का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। यह दो भागों में विभाजित है—(१) साहित्यिक अध्ययन एवं (२) ऐतिहासिक अध्ययन। इसके प्रथम खड में—ग्रन्थ-परिचय, कथानक, चरित्र-चित्रण, रस, अलकार, छद, प्रकृति-चित्रण, शैली और भाषा—ये आठ अध्याय हैं। इनमे प्रतिनिधि कवियों एवं उनके ग्रंथों का विवेचन किया गया है। साथ ही प्रत्येक अध्याय के आरंभ मे हर एक विषय का सामान्य परिचय भी दे दिया गया है, जिससे सपूर्ण धारा का तद्विषयक ज्ञान पाठक को प्राप्त हो सके।

इस निबंध का द्वितीय खड ऐतिहासिक अध्ययन से संबंधित है। इसमें ग्यारह अध्याय है। इनके अन्तर्गत प्रत्येक ग्रथ में वर्णित तिथियों, वंश, पात्रों, घटनाओं तथा सेनाओं आदि की ऐतिहासिक प्रामाणिकता पर मौलिक एवं प्रामाणिक इतिहास-ग्रंथों की साक्ष्य से विचार किया गया है। इस तुलनात्मक अध्ययन के पश्चात् जो परिणाम और धारणायें निश्चित की गई हैं उनमे कुछ नवीनता एव मौलिकता विद्वान् पाठकों को अवश्य प्रतीत होगी।

इस ग्रंथ मे दो परिशिष्टि है। परिशिष्ट १ मे चुने हुए सहायक-ग्रन्थों की सूची है। परिशिष्ट २ में नामानुक्रमणिका है, जिसमें प्रधान व्यक्तियों तथा स्थानों आदि के नामों को दिया गया है।

अपने इस कार्य के करने से मुझे जिन महानुभावों से पूर्ण प्रेरणा एवं सहायता मिली है उनमे सर्वप्रथम स्थान पूज्य डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, एम ए०, डी० लिट्० (पेरिस), अध्यक्ष, हिंदी-विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय का है। मैंने आपके तत्वावधान में रहकर ही इस कार्य को पूरा किया है। आपने मेरे अध्ययन का मार्ग निर्देश ही नहीं किया है वरन् सदैव सभी प्रकार की सहायता और सुविधाएँ भी प्रदान करते रहे हैं। अतएव आपके प्रति मै हृदय से आभारी हूँ।

दूसरे व्यक्ति, जिनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना मै अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, डॉ० बनारसी प्रसाद जी सक्सेना, एम० ए०, पी-एच० डी० (लदन), अध्यक्ष, इतिहास-

विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय हैं। इस निबंध के ऐतिहासिक अध्ययन को वर्तमान रूप देने में आपने ही मेरा पथ-निर्देश किया है। खोज काल मे उक्त डाक्टर साहब सदैव निस्संकोच भाव से मेरी सहायता करते रहे हैं। इसके लिए मैं आपका हृदय से कृतज्ञ हूँ।

इसके अतिरिक्त प्रयाग विश्वविद्यालय के संस्कृत-विभाग के अध्यक्ष डा० बाबूराम सक्सेना, एम० ए०, डी० लिट्० तथा डा० रामकुमार वर्मा, एम० ए०, पी-एच० डी०, रीडर हिंदी विभाग के प्रति आभार प्रदर्शित करना भी मेरा परम कर्तव्य है, क्योंकि आप महानुभावों से समय समय पर मुझे उचित सुझाव एवं परामर्श मिलते रहे है। साथ ही डा० माताप्रसाद जी गुप्त, एम० ए०, डी० लिट्, रीडर हिन्दी-विभाग से भी मुझे सदैव पर्याप्त सहायता मिलती रही है। तिथियों की गणना करने मे आपने मेरी विशेष रूप से सहायता की है, जिसके लिए मै आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। हिंदी के प्रसिद्ध महाकवि पद्माकर के जयपुर निवासी वंशजों के प्रति आभार प्रदर्शित करना भी मैं अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ, जिन्होंने पद्माकर संबंधी सपूर्ण अप्रकाशित सामग्री मुझे दिखाने की कृपा की।

इसके अतिरिक्त म्युनिस्पल म्युज़ियम प्रयाग, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, तथा महाराजाज़ पब्लिक लाइब्रेरी जयपुर के प्रबन्धकों एवं अधिकारियों के प्रति मै कृतज्ञता प्रकाशित करता हूँ, जिन्होंने वहाँ जाने पर उपयोगी सामग्री देखने की अनुमति एयं सुविधायें प्रदान करने की कृपा की। उन लेखकों के प्रति भी मै आभारी हूँ जिनकी अमूल्य कृतियों से मैंने लाभ उठाया है।

साथ ही मै बलवत राजपूत कॉलेज आगरा की प्रबध-समिति, आनरेरी सेक्रेटरी राव कृष्णपाल सिंह ऑव् अवागढ़, प्रिंसिपल रामकरणसिह एम० ए०, डी० एड्० (हार्वर्ड) तथा श्री पी० सी० गोस्वामी प्रिंसिपल, बलवंत राजपूत हाई स्कूल आगरा के प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करता हूँ जिन्होंने दो वर्ष से अधिक समय का अवकाश स्वीकार करने की कृपा की, जिससे मै प्रयाग विश्वविद्यालय मे रहकर इस कार्य को संपन्न कर सका।

विजयादशमी, २०११ वि०

टीकमसिंह तोमर

बलवंत राजपूत कॉलेज,
आगरा।

विषय-सूची

पृष्ठ

प्रकाशकीय छ

प्राक्कथन ज

विषय-सूची ञ

संकेत-चिह्न-सूची ण

भूमिका ९-२०

१—(अ) हिंदी वीरकाव्य की परिभाषा ९, (आ) ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ९-११, (इ) सामाजिक परिस्थिति १२-१३, (ई) धार्मिक प्रवृत्तियाँ १३, (उ) साहित्यिक प्रवृत्तियाँ १३ १५

२—(आ) विषय की सीमा १५, (अ) डिंगल एवं पिंगल वीर-काव्यों में से केवल पिंगल काव्य के अध्ययन के कारण १५

३—सामग्री-प्राप्ति के साधन एवं अध्ययन की सामग्री का संक्षिप्त परिचय १५-१९, सविस्तर अध्ययन किए जानेवाले ग्रंथों की सूची (अ) १७-१८, सूची (ब) १८-२०

प्रथमखण्ड : साहित्यिक अध्ययन

अध्याय १ : ग्रंथ-परिचय २१-३६

केशवदास २१-२२, जटमल २२-२३, मतिराम २३-२४, भूषण २४ २६, मान कवि २६-२७ लालें कवि (गोरेलाल) २७ ३०, श्रीधर (मुरलीधर) ३० ३१, सदानंद ३१, सूदन ३१-३२, गुलाब कवि ३२, पद्माकर ३२-३४, जोधराज ३४-३६

अध्याय २ : कथानक ३७-५३

सामान्य परिचय ३७-३८, वीरसिंहदेव-चरित ३८-४०, रत्नबावनी ४०, गोराबादल की कथा ४१-४२ ललितललाम ४२, भूषण-ग्रंथावली ४२-४३, राजविलास ४३-४४, छत्रप्रकाश ४४-४६, जंगनामा ४६-४७, रासा भगवंतसिंह ४७, सुजानचरित्र ४७-४९, करहिया को रायसौ ४९, हिम्मतबहादुर-विरुदावली ५०, जगद्-विनोद ५०, प्रताप-विरुदावली ५०, हम्मीर रासो ५१-५३

अध्याय ३ : चरित्र-चित्रण ५४-७५

सामान्य स्थिति ५४-५६, वीरसिंहदेव-चरित तथा रत्नबावनी ५६-६१, गोराबादल की कथा ६१-६२, ललितललाम ६२, भूषण-ग्रंथावली ६२-६४, राजविलास ६४-६६, छत्रप्रकाश ६६-६८, जंगनामा ६९-७०, रासाभगवतसिंह का ७०, सुजान-चरित्र ७०-७२, करहिया को रायसौ ७२, पद्माकर के ग्रंथ ७२-७३, हम्मीररासो ७३-७५

अध्याय ४ : रस ७६-९६

सामान्य स्थिति ७६-७८, केशव ७८-८०, जटमल ८०-८१, मतिराम ८१-८२, भूषण ८२-८५, मान ८५-८७, गोरेलाल ८७-८८, श्रीधर ८८-८९, सदानंद ८९-९०, सूदन ९०-९२, गुलाब कवि ९२-९३, पद्माकर ९३-९४, जोधराज ९४-९६

अध्याय ५ : अलंकार ९७-११९

सामान्य स्थिति ९७-९८, केशव ९८-१०१, जटमल १०१-१०२, मतिराम १०२-१०५, भूषण १०५-१०७, मान १०८-१०९, गोरेलाल १०९-१११, श्रीधर १११-११२, सदानद ११२-११५, गुलाब कवि ११५-११६, पद्माकर ११६-११७, जोधराज ११८-११९

अध्याय ६ : छंद १२०-१४४

(अ) सामान्य स्थिति १२०-१२३, (ब) छंद-सूची (अ) मात्रिक सम-छंद (चतुष्पदी) १२३-१३०, सम-द्विपदी छंद १३०-१३१ (आ) मात्रिक अर्द्ध-सम १३१-१३४ (ई) मात्रिक विषम (चतुष्पदी) छंद १३४ (उ) मात्रिक सम अथवा विषम दंडक १३४ (२) वर्णिक छंद-(ऊ) सम चतुष्पदी १३४-१४१, (ओ) वर्ण-मुक्त-वृत्त १४१-१४२ (३) अनिश्चित छंद (औ) मात्रिक १४२-१४३, (अं) वर्णिक १४३-१४४

अध्याय ७ : प्रकृति-चित्रण १४५-१५८

सामान्य परिचय १४५-१४६, केशव १४६-१४९, भूषण १४९-१५०, मान १५०-१५४, श्रीधर १५४, सूदन १५४-१५६, पद्माकर १५६, जोधराज १५७-१५८, अन्य कवि १५८

अध्याय ८ : शैली और भाषा १५९-१७२

सामान्य परिचय १५९-१६०, वीरसिंहदेव-चरित तथा रत्नबावनी १६०-१६१, गोरा-बादल की कथा १६१-१६२, ललितललाम १६२, भूषण-ग्रंथावली १६२-१६४, राजविलास १६४-१६५, छत्रप्रकाश १६६-१६७, जंगनामा १६७, रासा भगवंतसिंह १६७-१६८, सुजान-चरित्र १६८-१६९, करहिया को रायसौ १७०, हिम्मतबहादुरविरुदावली १७०-१७१, हम्मीररासो १७१-१७२

द्वितीय खंड : ऐतिहासिक अध्ययन

सामान परिचय १७३

अध्याय १ : वीरसिंहदेव-चरित १७४-१९०

बुंदेल-वंशोत्पत्ति १७४, निश्चित पात्र—हिंदू-पात्र १७४-१८०, मुस्लिम पात्र १८०-१८१; अनिश्चित पात्र-हिंदू-पात्र १८१, स्त्री पात्र १८१, मुसलमान पात्र १८१, वीरसिंहदेव की प्रारम्भिक विजय १८२, मुराद की मृत्यु और अकबर की दक्षिण यात्रा १८२, सलीम का मेवाड़ से लौटना, विद्रोह और अकबर का दक्षिण से आगरे आना १८२-१८३, वीरसिंहदेव की सलीम से भेंट १८३, अबुलफ़ज़ल की हत्या १८३-१८६, वीरसिंहदेव और अकबर में युद्ध १८६, सलीम का आगरे में आगमन १८७, मरीयम मकानी की मृत्यु और सलीम का पुनः आगरा आगमन १८७, वीरसिंह और मुगल सेना का ओड़छा-युद्ध १८८, अकबर की मृत्यु और जहाँगीर का राज्याभिषेक १८८, वीरसिहदेव जहाँगीर द्वारा सम्मानित १८८-१८९, शाहज़ादा खुसरो का विद्रोह १८९, अब्दुल्लाह ख़ाँ का ओड़छा पर आक्रमण १८९-१९०

अध्याय २ : गोराबादल की कथा १९१-२०२

युद्ध का समय १९१, राणा रत्नसेन के वंश का नाम १९१-१९२, निश्चित पात्र-हिंदू-पात्र १९२-१९३, मुसलमान-पात्र १९३; अनिश्चित पात्र-हिंदू-पात्र १९४, अलाउद्दीन का सिंहल की ओर प्रस्थान १९४, आक्रमण का कारण १९४, युद्ध-वर्णन १९४-१९५, सेनाएँ-राब रत्नसिंह की सेना १९५, अलाउद्दीन की सेना १९५-१९६, सिंहलद्वीप १९६, (अ) पद्मिनी की कथा की ऐतिहासिकता १९६-२०२

अध्याय ३ : भूषण-ग्रंथावली की ऐतिहासिकता २०३–२३७

राजवंश-वर्णन २०३, भोंसिले नामकरण २०३, पात्रों की ऐतिहासिकता-निश्चित-पात्र हिंदू-पात्र २०४-२०६, मुसलमान-पात्र २०६-२१०, अनिश्चित पात्र-हिंदू-पात्र २१०, मुसलमान पात्र २१०, जावली-विजय २१०, अहमदनगर एवं जुन्नार की लूट तथा ख़ाँ दौरां नौसेरी-पराजय २१०-२११, शिवाजी और अफ़ज़ल ख़ां बध २११-२१४, रुस्तमें जमां-पराजय २१४-२१५, तलब ख़ां (कारतलब ख़ा) को लूटना २१५, सिंगारपुर (शृंगारपुर)-विजय २१५, रायगढ़-वर्णन २१५, शिवाजी और शाइस्ता ख़ा २१५-२१६, शिवाजी और जसवंतसिंह २१६-२१७, शिवाजी और भाऊसिंह हाड़ा-पराजय २१७, शिवाजी और सूरत की लूट २१७-२१९, शिवाजी और ख़वास ख़ां २१९, शिवाजी द्वारा जयसिंह को दुर्ग-समर्पण २१९-२२०, शिवाजी और कर्ण २२०, शिवाजी और सरजे खां २२० २२१, शिवाजी और औरंगज़ेब में भेंट २२१-२२३, शिवाजी का आगरे से लौटना २२३-२२४, सिंहगढ़-विजय २२४, लोहगढ़-विजय २२४, सलेहरि-युद्ध २२४-२२५, फ़ते (फ़तेह) ख़ाँ-पराजय २२५-२२६, बहादुर ख़ां-पराजय २२६, जवारि (जवाहर) तथा रामनगर-विजय २२६ २२७, तिलंगाना-विजय २२७, बहलोल ख़ां-पराजय २२७-२२८, शिवाजी और करनाटक-विजय २२८-२३०, बीजापुर-रक्षण २३०, शिवाजी का आतंक २३० २३१, शिवाजी तथा पाश्चात्य जातियाँ २३१-२३३, औरंगजेब सबंधी घटनायें २३३, औरगज़ेब का उत्तराधिकार-युद्ध २३३-२३४, छत्रसाल संबधी घटनाये २३४-२३५, भूषण और बाजीराव २३५, भूषण और साहू २३५, भूषण तथा अन्य राजागण २३६, सेनायें-(अ) शाइस्ता ख़ां के विरुद्ध शिवाजी की सेना २३६, (आ) अफ़ज़ल खां की सेना २३६, बीजापुर के विरुद्ध मुग़ल-सेना २३६-२३७

अध्याय ४ : राजविलास की ऐतिहासिकता २३८-२६६

तिथियाँ २३८-२३९, वश नाम २३९-२४०, निश्चित-पात्र-हिंदू-पात्र २४०-२४७; स्त्री-पात्र २४७, मुसलमान पात्र २४७ २४८, अनिश्चित पात्र हिंदू-पात्र २४८, स्त्री-पात्र २४८, मुसलमान-पात्र २४८, चित्तौड़-दुर्ग-निर्माण २४८-२४९, गृहादित्य और बलभी-राज्य २४९-२५०, बापा रावल का विवरण २५०-२५१, विलास २ की घटनायें २५१-१५३, राजसिंह-जन्म २५३, महाराणा राजसिंह का बूँदी में विवाह २५३-२५४, सर्व-ऋतु-विलास-वर्णन २५४, महाराणा राजसिंह का राज्याभिषेक २५४, महाराणा राजसिंह और रूपकुमारी का विवाह २५५, राजसमुद्र-निर्माण २५५-२५६, औरंगज़ेब का उत्तराधिकार-युद्ध २५६-२५७, औरंगज़ेब का आतंक २५७-२५८, औरंगज़ेब और जसवंतसिंह २५८-२५९, औरंगज़ेब का जोधपुर पर अधिकार २५९,

अजीतसिह का महाराणा राजसिंह के पास जाना २६०-२६१, महाराणा राजसिंह और मुग़लों मे युद्ध २६१-२६४, सेनाएँ २६४-२६६

अध्याय ५ : छत्रप्रकाश की ऐतिहासिकता २६७-२८७

छत्रसाल-जन्म-तिथि २६७, बुंदेल-जन्म-वर्णन २६७-२६८, निश्चित पात्र-हिंदू-पात्र २६८-२७०; मुसलमान-पात्र २७० २७१, अनिश्चित पात्र-हिंदू-पात्र २७१-२७२, स्त्री-पात्र २७२, मुसलमान-पात्र २७२, शाहजहाँ और बुंदेलखंड २७३, चंपतिराय की हत्या के लिए षड्यंत्र २७४, क़ंधार पर आक्रमण २७४-२७५, उत्तराधिकार-युद्ध तथा अन्य घटनाये २७५-२७६, सामूगढ़-युद्ध २७६, चंपतिराय और बहादुर खां का वैमनस्य एवं चंपतिराय का स्वदेश लौटना २७६-२७७, शुभकरन-पराजय २७७-२७८, इंद्रमणि धंधेरा की मृत्यु २७८, चंपतिराय की मृत्यु २७८-२७९, जयसिंह-छत्रसाल-मिलन २७९, देवगढ़-विजय २७९-२८०, छत्रसाल और शिवाजी में भेंट २८०-२८१, छत्रसाल-शुभकरन-मिलन २८१, छत्रसाल की प्रारंभिक विजय २८१-२८२, जोधपुर पर औरंगज़ेब का आक्रमण २८२, अकबर का विद्रोह २८२-२८३, तहव्वर पराजय २८३, राजा सुजानसिह की मृत्यु और इंद्रमनि का राज्याभिषेक २८३-२८४, सैद अफगन और छत्रसाल-युद्ध २८४, बहादुरशाह का राज्याभिषेक २८४, लोहागढ़-विजय २८४-२८५, सेनाये-जुझारसिंह की सेना २८५, चपतिराय और छत्रसाल की सेनायें २८५, शाहजहाँ की सेना २८६, छत्रसाल के प्रतिद्वंदियों की सेनाये २८६-२८७

अध्याय ६ : जगनामा की ऐतिहासिकता २८८-३०६

फ़र्रुख़सियर और जहाँदारशाह की युद्ध-तिथि २८८-२८९, निश्चित पात्र-हिंदू-पात्र २८९, मुसलमान-पात्र २८९-२९८, अनिश्चित-पात्र-हिंदू-पात्र २९८, मुसलमान-पात्र २९८-२९९, फर्रुख़सियर का अपने को सम्राट् घोषित करना २९९-३००, मीर जुमला और जहाँदारशाह ३००, अब्दुल् ग़फ़्फार खां और अबुल् हसन का युद्ध ३००-३०१, फ़र्रुख़सियर का प्रयाग पहुँचना ३०१, खजुआ का युद्ध और ऐज़ुद्दीन की पराजय ३०२-३०३, जहांदारशाह और दिल्ली-दरबार ३०३-३०४, जहादारशाह का आगरा पहुँचना ३०४, फ़र्रुख़सियर का आगरा पहुँचना ३०४-३०५, आगरा-युद्ध ३०५, सेनायें (अ) मुइज़्ज़ुद्दीन जहांदारशाह की सेना ३०५-३०६, (आ) मुहम्मद खां बंगश की सेना ३०६, मीर जुमला की सेना ३०६

अध्याय-७ . रासा भगवंतसिंह की ऐतिहासिकता ३०७-३१०

युद्ध-तिथि ३०७-३०८, वंश-नाम ३०८, निश्चित पात्र-हिंदू-पात्र ३०८, मुसलमान पात्र ३०८, अनिश्चित पात्र-हिंदू-पात्र ३०८, मुसलमान-पात्र ३०८, चचेंड़ी-विजय ३०८-३०९, पटूयो-विजय ३०९, भगवंतराय-युद्ध-वर्णन ३०९-३१०

अध्याय-८ : सुजान-चरित्र की ऐतिहासिकता ३११-३३२

तिथियाँ ३११-३१२, बदनसिंह को राजा की उपाधि मिलना ३१२-३१३, पात्रों की ऐतिहासिकता-निश्चितपात्र-हिंदू-पात्र ३१३-३१७, मुसलमान-पात्र ३१७-३२१, अनिश्चित-पात्र-हिंदू-पात्र ३२१, मुसलमान-पात्र ३२१, प्रथम जंग ३२१-३२२, द्वितीय जग-मराठों के विरुद्ध

जयपुरा-धीश की सूरजमल द्वारा सहायता ३२२, तृतीय जंग-सलावत खाँ-पराजय ३२२-३२३, चतुर्थ जंग-पठानों को परास्त करने में सूरजमल द्वारा सफ़दरजंग की सहायता करना ३२३-३२४, पंचम जग-सूरजमल और राव बहादुरसिंह बड़गूजर में युद्ध ३२४-३२५ षष्ठ जंग-इंद्रप्रस्थ का प्राचीन इतिहास ३२५, अहमदशाह तथा सफ़दरजग में अनबन होने के कारण ३२५-३२६, दिल्ली की लूट ३२६-३२७, कोटरा (कोहतिला) युद्ध ३२७ ३२८, राजेंद्रगिरि-मरण ३२८, गढ़ी-मैदान तथा बदरपुर-युद्ध ३२८-३२९- सधि ३२९, सप्तम जग-बल्लू-बध ३२९-३३०, मराठों द्वारा कुंभेर-दुर्ग का घेरा ३३०-३३१, सेनायें ३३१-३३२

अध्याय ६ : करहिया को रायसौ की ऐतिहासिकता ३३३-३३६

करहिया के युद्ध की तिथि ३३३, वंशोत्पत्ति ३३३, निश्चित पात्र ३३३ ३३४, अनिश्चित पात्र ३३४, युद्ध-वर्णन ३३४-३३५, सेनायें-(अ) जवाहरसिंह की सेना ३३५-३३६, (आ) करहिया की सेना ३३६

अध्याय-१० : हिम्मतबहादुर-विरुदावली की ऐतिहासिकता ३३७-३४४

हिम्मतबहादुर तथा अर्जुनसिंह नोने के युद्ध की तिथि ३३७, निश्चित पात्र ३३७ ३४२, अनिश्चित पात्र-हिंदू-पात्र ३४२, मुसलमान-पात्र ३४२, युद्ध-वर्णन-प्रथम युद्ध ३४२-३४३, द्वितीय-युद्ध ३४३, तृतीय युद्ध ३४३-३४४

अध्याय-११ : हम्मीररासो की ऐतिहासिकता ३४५-३६१

तिथियाँ ३४५-३५०, अग्नि-कुलोत्पत्ति ३५०, चौहान ३५०-३५१, चालुक्य-वंश ३५१, प्रतिहार ३५१, परमार (प्रमार) ३५१-३५२, पात्रों की ऐतिहासिकता-निश्चित पात्र-हिंदू-पात्र ३५२ ३५३, स्त्री-पात्र ३५४, मुसलमान-पात्र ३५४, अनिश्चित पात्र-हिंदू-पात्र-पुरुष-पात्र ३५५, स्त्री-पात्र ३५५, मुसलमान पुरुष-पात्र ३५५, स्त्री-पात्र ३५५, युद्ध-वर्णन-हम्मीर और अलाउद्दीन में वैर के कारण ३५५-३५६, आक्रमण ३५६-३५८, युद्ध का अंत ३५८, सुर्जन का विश्वासघात ३५८-३५९, अलाउद्दीन की मृत्यु ३५९, चंद्रकला नृत्य ३५९, सेनाये-राव हम्मीर की सेना ३५९-३६०, अलाउद्दीन की सेना ३६०-३६१

परिशिष्ट १ : सहायक-ग्रंथ-सूची ३६२-३७०

परिशिष्ट २ : नामानुक्रमणिका ३७१-४१२

संकेत-चिह्न-सूची

अला० मु० खि०	=	अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी
इ० गज़े० आव् इं०	=	इंपीरियल गज़ेटियर ऑव् इंडिया
उ० इति०	=	उदयपुर राज्य का इतिहास
ए० सो०	=	एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल
औरगज़ेब	=	हिस्ट्री ऑव् औरगजेब
के० हि० इं०	=	केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया
खं०	=	खण्ड
ग०	=	गुरु
गो० बा० क०	=	गोरा बादल की कथा
छं०	=	छंद
ज० ए० सो० आव् ब०	=	जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल
जहाँगीर	=	हिस्ट्री ऑव् जहाँगीर
जा० ग्र०	=	जायसी-ग्रंथावली
टा० रा०	=	टाड-राजस्थान
डि०	=	डिस्ट्रिक्ट
त०	=	तगण
तृ०	=	तृतीय
द्वि०	=	द्वितीय
दे०	=	देखिए
न०	=	नगण
न० सं०	=	नवीन संस्करण
ना० प्र० प०	=	नागरी प्रचारिणी पत्रिका काशी
पृ०	=	पृष्ठ
पृ० महा० पृ० वि० महा०	=	पृथ्वीराज-विजय-महाकाव्य
प्रे० सं० इं० डि०	=	प्रेक्टीकल संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी
भ०	=	भगण
भा०	=	भाग
भा० प्रा० राज०	=	भारत के प्राचीन राजवंश
म०	=	मगण
मा०	=	मात्रिक

य०	=	यगण
र०	=	रगण
रा० का इति०	=	राजपूताने का इतिहास
ल०	=	लघु
व०	=	वर्णिक
वि०	=	विक्रमी
श्लो०	=	श्लोक
सं०	=	संख्या
स०	=	सगण
सि० फ्रॉ० हि० लिट्०	=	सिलेक्शंस् फ्रॉम हिंदी लिट्रेचर
ह० महा०	=	हम्मीर-महाकाव्य
ह० रासो	=	हम्मीररासो
ह० आव् रण०	=	हम्मीर ऑव् रणथम्भौर
हिं० सा० इ०	=	हिंदी साहित्य का इतिहास
हि० आव् इं०	=	हिस्ट्री ऑव् इंडिया
हि० आव् मे० हि० इं०	=	हिस्ट्री ऑव् मेडीवल हिंदू इंडिया

भूमिका

(१)

(अ) हिंदी वीरकाव्य की परिभाषा

प्रत्येक भाषा का साहित्य अपने समय की राजनीतिक, सामाजिक धार्मिक तथा अन्य प्रकार की परिस्थितियों और प्रवृत्तियों का प्रतिबिंब होता है। जब हिंदी साहित्य पर दृष्टिपात करते हैं तो यह बात और भी अधिक स्पष्ट हो जाती है। हिंदी साहित्य की उत्पत्ति के समय से ही भारतवर्ष छोटे-छोटे स्वतंत्र राज्यों मे विभाजित था। इन राज्यों मे आए दिन युद्ध होते रहते थे। इन राज्यों के शासकों के आश्रित कवि अपने आश्रयदाताओं की प्रशसा किया करते थे। यह कवि प्रायः चारण, भाट आदि हुआ करते थे। वीरकाव्य की यह परंपरा हिंदी साहित्य के स्वर्णयुग— भक्ति-काल—मे होती हुई रीतिकाल तक समानांतर रूप से चलती रही और अब भी प्रवाहित हो रही है। यह दूसरी बात है कि युग-विशेष में विशेष परिस्थितियों और भावनाओं की प्रधानता के कारण उसका रूप आक्रांत होता रहा हो। आलोच्यकाल में एक ओर तो रीति-ग्रंथों का निर्माण होता रहा और दूसरी ओर यह कवि अपने आश्रयदाताओं के युद्धों एव वीरतापूर्ण कार्य-कलापों का गुण-गान करते रहे। इस काल में कुछ ऐसे कवि थे जो आदिकालीन चारण-धारा के समान कोरी प्रशसात्मक ही कविता किया करते थे, पर कुछ ऐसे प्रतिभासपन्न कवि भी थे जो अपने आश्रयदाताओं के वास्तविक गुणों का ही बखान करते थे। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि इन कवियों में से अधिकाश का चारण जाति से कोई सबध नहीं था।

उपर्युक्त विवेचन का अभिप्राय यह है कि प्रस्तावित अध्ययन के अंतर्गत उन सभी कवियों को सम्मिलित किया गया है जिन्होंने ऐतिहासिक घटना को लेकर अपने ग्रंथों का निर्माण किया है अथवा अपने आश्रयदाताओं अथवा उनके पूर्वजों की प्रशसा की है। इसी अर्थ मे 'वीरकाव्य' शब्द का प्रयोग इस धारा के अध्ययन के लिए किया गया है।

(आ) ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

अध्ययन के लिए प्रस्तावित काव्य के यथातथ्य स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह समीचीन प्रतीत होता है कि भारतवर्ष की तत्कालीन ऐतिहासिक, समाजिक, धार्मिक तथा साहित्यिक परिस्थितियों एव प्रवृत्तियों का सामान्य परिचय प्राप्त कर लिया जावे। इसीलिए नीचे क्रमशः इन्हीं विषयों पर अत्यत सक्षेप मे विचार किया जा रहा है।

आलोच्य काव्यधारा का प्रारंभ मुगल सम्राट् अकबर के शासन-काल (१५५६-१६०५ ई०) के उत्तरार्द्ध के अंतिम वर्षों मे प्रारंभ हुआ था। जिस समय वह सिंहासनारूढ हुआ था उस समय भारतवर्ष कई स्वतंत्र राज्यों में विभाजित था। पर अकबर ने इनमें से कई स्वतंत्र राज्यों पर विजय प्राप्त करके उन्हे राजनीतिक एकता के सूत्र में बाँधने का सफल प्रयत्न किया। अपने इस उद्देश्य में सफलता प्राप्त करने में उसे उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रदेश, राजस्थान, बुंदेलखंड, उत्तरी भारत के

अन्य प्रदेश तथा दक्षिण मे एक बार नहीं अनेक बार युद्धकरने पडे। अत मे वह एक ऐसे साम्राज्य की स्थापना करने मे सफल हुआ जो उस समय विस्तार, शक्ति एव वैभव की दृष्टि से सपूर्ण ससार मे अनुपम था।

अकबर की मृत्यु के उपरात जहाँगीर सिहासनारूढ हुआ। उसके गद्दी पर बैठने के कुछ समय के उपरात शाहजादा .खुसरो ने विद्रोह किया जो पकड़कर बदीगृह मे डाल दिया गया। अत मे उसकी मृत्यु हो गई। कधार का घेरा, मेवाड के द्वारा अधीनता स्वीकार करना, दक्षिण के युद्ध, तथा काँगडा की विजय आदि इसके शासन की प्रमुख घटनाए हे। साथ ही जहाँगीर और नूरजहा का विवाह, शाहजहा तथा महावत खा के विद्रोह भी विशेष उल्लेखनीय हैं, क्योंकि इन घटनाओं का प्रभाव सपूर्ण साम्राज्य पर पडा था। जहाँगीर ने भी अकबर की नीति का अनुकरण करते हुए साम्राज्य के ऐश्वर्य और वैभव को बढाने की सफल चेष्टा की थी। अत मे २८ अक्तूबर, १६२७ ई० को उसका देहात हो गया।

जहाँगीर के पश्चात् उसका पुत्र शाहजहा सिहासनारूढ हुआ। इसके शासन-काल में वीर सिह बुदेला के पुत्र जुझार सिह ने दो बार विद्रोह किया। वह अत मे मार डाला गया। खा जहा लोदी ने भी सिर उठाया, जिसके फलस्वरूप उसका सिर काट डाला गया। शाहजहा को पुर्तगालवासियो से भी कई युद्ध करने पडे (१६३१-३२ ई०)। उसे दक्षिण मे भी कई लड़ाइया करनी पडी जिनमे सम्राट् के तृतीय पुत्र औरगजेब ने बडी वीरता एव कार्य-पटुता का परिचय दिया। इसके राज्य की अन्य उल्लेखनीय घटना कधार-युद्ध सबधी है जहाँ इसने तीन बार सेनाए भेजीं। अतिम तृतीय युद्ध मे इसे पराजित होना पडा।

शाहजहा के शाहजादों में १६५८ ई० मे उत्तराधिकार-युद्ध हुआ जिनमे विजयी होकर औरगजेब सिंहासनारूढ हुआ। उसने अपने निकटवर्ती सभी सबंधियों की हत्या करवा दी और मयूर सिहासन तथा ताज के निर्माणकर्ता अपने पिता शाहजहा को आगरे के दुर्ग मे बदी बना दिया, जहा पर २१ जनवरी, १६६६ ई० को उसका देहावसान हो गया।

औरगजेब ने सम्राट् बनते ही मुगल साम्राज्य की अकबर के समय से प्रचलित होनेवाली नीति मे एकदम परिवर्तन कर दिया। वह हिंदुओं के प्रति कट्टरता का व्यवहार करने लगा। परिणाम यह हुआ कि सपूर्ण देश मे क्राति और विद्रोह की ज्वाला धधकने लगी। हिंदू, जो लगभग एक शताब्दी से मुगल साम्राज्य के स्तभ थे, शत्रु बन गए। अतः दक्षिण मे मराठा साम्राज्य, राजपूताना मे जोधपुर, मेवाड, मथुरा के आस-पास के जाट तथा सतनामी एव बुदेलखड मे बुदेला विद्रोह करने लगे। साथ ही सिक्खों ने भी स्वतत्रता का झडा फहराना आरभ कर दिया।। यही नही, सुन्नी मुसलमान होने के कारण औरगजेब दक्षिण के शीया राज्यों की स्वतत्रता का अपहरण करने के लिए तैयार हो गया। औरगजेब का समस्त जीवन उक्त शक्तियों से युद्ध करने में ही व्यतीत हुआ। अत मे दक्षिण के मराठा से युद्ध करते हुए २० फरवरी, १७०७ ई० को औरगजेब की मृत्यु हो गई।[१]

औरंगजेब की नीति के कारण मुगल राज्य की दशा जीर्ण-शीर्ण हो गई थी। कहीं पर भी

---

[१] डा० ईश्वरीप्रसाद : ए शार्ट हिस्ट्री अव् मुस्लिम रूल इन इंडिया, पृ० ३१६-६४७; केंब्रिज हिस्ट्री अव् इंडिया, भाग ४, पृ० ७०-३१८

सुख एव शांति के दर्शन नहीं हो रहे थे । देशव्यापी युद्धो के कारण वीर-भाव एवं नवीन जाग्रति हिंदू जाति में दिखलाई देने लगी थी ।

औरंगजेब की मृत्यु के उपरात उत्तराधिकार के युद्ध मे सफल हो जाने पर बहादुरशाह सम्राट् बना । २७ फरवरी, १७१२ ई० को उसका देहात हो जाने पर उसके पुत्रों में लडाई हुई जिसमे सफल होकर मुईजुद्दीन जहाँदारशाह शासक बना । वह लगभग ११ मास तक शासन कर सका, जिसके उपरांत उसे युद्ध मे पराजित करके फर्रुखसियर दिल्ली के सिहासन का स्वामी बना (जनवरी १७१३ ई०) । यह दुर्बल, कापुरुष एव साधारण शासक था । शीघ्र ही इसके राज्य की सारी शक्ति सैयद भ्राताओं के हाथों मे चली गई । कालातर मे सम्राट् और सैयदों में अनबन हो गई । अत मे फर्रुखसियर को गद्दी से उतार कर अधा बना दिया गया, तथा बाद को वह मार डाला गया ।

फर्रुखसियर के पश्चात् रफीउद्दरजात तथा रफीउद्दौला क्रमशः शासक बनाए गए, पर कुछ मासोपरांत उनके शासनों का अत होगया । इसके अनतर मुहम्मद शाह सिंहासनारूढ हुआ (१७१९ ई०) । इसके शासन-काल मे दक्षिण, अवध, बगाल स्वतत्र हो गए, मराठे शक्तिशाली बन गए, आगरे के निकट जाट स्वाधीन हो गए, पजाब में सिक्ख अपराजेय बन गए तथा रुहेलों ने रुहेलखड राज्य स्थापित कर लिया । साथ ही अफगानों के आक्रमणो ने नष्टप्राय मुगल-साम्राज्य की जडें हिला दीं ।

मुहम्मदशाह के बाद उसका पुत्र अहमदशाह शासक बना, पर १७५४ ई० मे वह गद्दी से उतार दिया गया । उसके पश्चात् आलमगीर द्वितीय गद्दी पर बैठा, पर वह नाम-मात्र का बादशाह था । वजीर की आज्ञा से उसकी हत्या कर दी गई । तदनतर शाहआलम द्वितीय सम्राट् बना । उससे अँग्रेजों ने बंगाल की दीवानी प्राप्त की । वह कुछ समय तक मराठो की सरक्षता मे रहा, जो भारत में उस समय सबसे अधिक शक्तिशाली थे । बक्सर के युद्ध मे उसने शुजाउद्दौला की सहायता की, पर वह अँग्रेजो की बढती हुई शक्ति को रोक न सका । १८०६ ई० में उसकी मृत्यु हो गई । उसके बाद उसका पुत्र अकबर द्वितीय देहली मे शाही उपाधि के साथ १८३७ ई० तक रहा ।

जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है औरगजेब के पश्चात् मुगल साम्राज्य का पतन प्रारंभ हुआ । सम्राट् की दुर्बलता दरबारी अमीरो की प्रबलता एव स्वार्थपरता, नादिरशाह का आक्रमण (फरवरी १७३९ ई०), अहमदशाह अब्दाली के आक्रमणों, मराठों की शक्ति-सपन्नता आदि के फलस्वरूप समस्त देश मे राजनीतिक अनिश्चितता व्याप्त होगई और अविरल रूप से उथल-पुथल होती रही । इसके परिणामस्वरूप राष्ट्र की एकता छिन्न-भिन्न होगई और अलग-अलग राज्य बन गए । साथ ही विदेशी शक्तिया भी अपने भाग्य की परीक्षा करने में जुट गईं । पारस्परिक सघर्षों में विजयी होकर ईस्ट इडिया कपनी अपनी सत्ता जमाने मे सफलता प्राप्त करने लगी ।[1]

इन्ही ऐतिहासिक परिस्थितियों मे रह कर आलोच्य-कालीन कवियों ने अपने ग्रथों का निर्माण किया । इनमें से अधिकाश घटनाओं का विवरण उनकी रचनाओं मे पाया जाता है जिनका ऐतिहासिक अध्ययन मे यथास्थान उल्लेख कर दिया गया है ।

---

[1] कैंब्रिज हिस्ट्री अव् इंडिया भाग ४, पृ० ३१९-४४८, टेक्स्ट बुक अव् माडर्न इंडियन हिस्ट्री, भाग २, पृ० २६-१७० ।

(इ) सामाजिक परिस्थिति

मुगलों के समय मे सामंतशाही के आधार पर समाज की व्यवस्था की गई थी । राजा के नीचे मंसबदार होते थे। दरबार वैभव और सस्कृति का केंद्र माना जाता था। दरबार से बाहर प्रदेश में दरिद्रता और दुःख प्रचुर मात्रा में वर्तमान रहते थे। इसी कारण से प्रत्येक प्रतिभा-संपन्न व्यक्ति शाही नौकरी करना तथा दरबार में रहना श्रेयस्कर समझता था। मुगल अमीर अपने आश्रयदाता के समान आमोद-प्रमोदमय जीवन व्यतीत किया करते थे। आय की अपेक्षा उनके व्यय अधिक होते थे। मदिरा का प्रचार अधिक था। अतःपुर में स्त्रियों को अधिक संख्या में रखा जाता था। नर्तकियों का भी प्रचलन था। उत्तम भोजन करना व्यवहार में था। मांस-भक्षण किया जाता था, पर गौ की प्रतिष्ठा की जाती थी। फल और बर्फ अधिकता से प्रयुक्त होते थे। अधिक मूल्यवान् वस्त्र तथा आभूषणों का प्रयोग होता था। द्यूत-क्रीडा प्रचलित थी। उत्तम एव सुसज्जित भवन निर्मित हुआ करते थे। इस प्रकार अमीर लोग अपनी सारी आय व्यय कर दिया करते थे।

मध्यम श्रेणी के लोग उपर्युक्त कृत्रिम जीवन से विरत रहते थे। उनका जीवन अपेक्षाकृत सुखी था। व्यापारी अपना धन गुप्त रखा करते थे। वे मितव्ययतापूर्ण जीवन व्यतीत करते थे।

निम्न श्रेणी के व्यक्तियों का जीवन कष्टमय एवं दुखी था। उनके वस्त्र थोडे होते थे। ऊनी वस्त्रों का प्रयोग वे नहीं करते थे तथा देश के कुछ भागों मे जूतों का प्रयोग दृष्टिगोचर नहीं होता था। पर दुर्भिक्ष के समय के अतिरिक्त खाद्य पदार्थों का अभाव नही था। अकबर के समय मे कृषक-वर्ग सामान्यतया सुखी था। हिंदुओं मे सती-प्रथा तथा बाल-विवाह प्रचलित थे।

जहाँगीर के समय मे अमीरों की विलासिता चरम सीमा को पहुँच गई थी। नौकरों को पर्याप्त वेतन नहीं दिया जाता था। उनसे बलपूर्वक कार्य लिया जाता था। वे केवल एक बार भोजन करते थे। उनके मकान छप्पर के हुआ करते थे। नौकरों की सख्या अधिक हुआ करती थी, क्योंकि वेतन कम होता था। हिंदू चतुर व्यापारी थे। मुसलमान रँगरेज और जुलाहे का काम किया करते थे। ज्योतिष, शकुन आदि मे विश्वास किया जाता था।

शाहजहा के शासन के अतिम दिनों में समाज की दशा बिगड़ने लगी थी। सड़कें सुरक्षित नहीं रह गई थीं। भिक्षा माँगना अधिक प्रचलित था।

औरगजेब के समय मे समाज की दशा और भी बिगड गई थी। अमीरों का नैतिक पतन हो गया था। ज्योतिष तथा जादू-टोना में विश्वास किया जाता था। दरबारी लोग मौलिकता तथा प्रतिभामयी स्फूर्ति से कोसों दूर थे। वे आमोद-प्रमोद के लिए धन पानी की तरह बहाया करते थे। दासता वर्त्तमान थी। हिजडों का प्रचलन था। उत्कोच स्वीकार किया जाता था। पर साधारण जनता उक्त अवगुणो से रहित थी।

अट्ठारहवीं शताब्दी में सामाजिक जीवन पतन के गर्त में तीव्र गति से गिरने लगा था। पर हिंदू और मुसलमान साधारणतया प्रेमपूर्वक जीवन व्यतीत करते थे, यद्यपि उनमें राजनैतिक वैमनस्य वर्तमान था[1]।

---

[1] ए शार्ट हिस्ट्री अव् मुस्लिम रूल इन इंडिया, पृ० ६४८-६५४, एन एडवांस्ड हिस्ट्री अव् इडिया, पृ० ५६६-५६६, टेक्स्ट बुक आव् माडर्न इंडियन हिस्ट्री, भाग ३, पृ० २८-३८

कहने की आवश्यकता नहीं है कि आलोच्य कवियों ने अपने आश्रयदाताओं के ऐश्वर्य, वैभव, दरबार, प्रासाद, वेश-भूषा आदि का यथास्थान विस्तृत वर्णन किया है, जो इस बात को सिद्ध करता है कि ये कवि अपने समय के सामाजिक जीवन से परिचित एव प्रभावित थे।

(ई) धार्मिक प्रवृत्तियां

सोलहवीं शताब्दी के अत तक भारतवर्ष में देशव्यापी धार्मिक आंदोलनों का प्रवाह प्रवाहित हो चुका था। इन धार्मिक सुधारों का सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में प्रभाव पूर्ण-रूप से वर्तमान रहा था। इसके साथ ही आलोच्य काल में विविध प्रकार के अन्य धार्मिक सप्रदायों की भी स्थापना हुई थी।

वीरभान नामक साधु ने, जिसका जन्म १५४७ ई० मे हुआ था, सतनामी धर्म की नींव डाली थी। इसके अनुयायी अधिकतर मेवात में वर्तमान थे, क्योंकि यही स्थान उसके प्रचार का केंद्र था। इसके अतिरिक्त सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में लालदासी सप्रदाय के प्रवर्तक लालदास का आविर्भाव हुआ। इसके साथ ही बावालाल नामक अन्य सुधारक ने अपने सिद्धातों का प्रचार किया था। सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में क्षत्रिय वश में प्राणनाथ नामक महात्मा का जन्म हुआ, जो छत्रसाल बुदेला के धर्मगुरु थे। इन्होंने धामी नामक सप्रदाय की नींव डाली थी। उपर्युक्त सुधारकों के अतिरिक्त जगजीवन, चरणदास, गुलाब आदि अन्य धार्मिक सप्रदाय-सस्थापक उत्पन्न हुए थे।

इस काल में दक्षिण प्रदेश में संत तुकाराम (जन्म १६०८ ई०) तथा समर्थ रामदास आदि महात्माओं[1] ने अवतीर्ण होकर धार्मिक सुधारों का बिगुल बजाया था, जिससे प्रभावित होकर वीर केशरी शिवाजी ने हिंदूधर्म-रक्षार्थ सफल प्रयत्न किए थे।

ऊपर जिन धार्मिक आदोलनों का उल्लेख किया गया है, उनमें से अधिकाश का प्रभाव आलोच्य धारा के कवियों पर पडा था। उदाहरणार्थ, गोरेलाल ने 'छत्रप्रकाश' में स्वामी प्राणनाथ के सिद्धातों का वर्णन किया है। इसी प्रकार से अन्य ग्रथ भी इन धार्मिक प्रभावों के लिए देखे जा सकते हैं।

(उ) साहित्यिक प्रवृत्तिया

जैसा कि कहा जा चुका है आलोच्य काल का प्रादुर्भाव अकबर के शासन के अतिम वर्षों में हुआ था। इस सम्राट् का राज्य-काल हिंदी भाषा के लिए स्वर्ण-युग था। इस युग में एक ओर भक्तिकाव्य-प्रवाह उमड़ा, तथा दूसरी ओर अनुकूल परिस्थिति पाकर वीर, शृगार और नीति की कविताओं के आविर्भाव के लिए विस्तृत क्षेत्र खुल गए। फुटकर कविताएँ अधिकतर इन्हीं विषयों को लेकर छप्पय, कवित्त-सवैयों और दोहों में हुआ करती थीं। मुक्तक रचनाओं के अतिरिक्त प्रबध-काव्य-परपरा ने भी जोर पकडा और अनेक अच्छे-अच्छे आख्यान-काव्य भी इस काल में लिखे गये।

इसमे सदेह नहीं कि अकबर के राजत्व-काल में एक ओर तो साहित्य की चलती हुई परपरा को प्रोत्साहन मिला, तथा दूसरी ओर भक्त-कवियों की दिव्य वाणी का स्रोत उमड़ चला। इन

---

[1] डा० ताराचंद इंफ्लूएंसः अव् इस्लाम आन इंडियन कल्चर, पृ० १७८-२८८

दोनों की विभूति से अकबर का राजत्व-काल जगमगा उठा और साहित्य के इतिहास में उसका विशेष स्थान हुआ।[1]

इस काल में विविध विषयपूर्ण वर्णन की प्रणाली और भी वृद्धिगत हुई। सगुण वैष्णव-साहित्य के उत्थान से सूफी और निर्गुण-धाराएँ बलवती न हो सकी। केशव के समय से आचार्यता की भी स्थापना हमारे साहित्य में हुई।[2]

हिंदी-काव्य अब पूर्ण प्रौढता को पहुँच गया था। केशवदास जी ने काव्य के सब अगो का निरूपण शास्त्रीय पद्धति पर किया। इस काल मे लक्षण-ग्रथों की भी भरमार होने लगी। कवियो ने कविता लिखने की यह एक प्रणाली ही बना ली कि पहले दोहे में अलंकार या रस का लक्षण लिखना फिर उसके उदाहरण के रूप में कवित्त या सवैया लिखना। हिंदी साहित्य मे यह एक अनूठा दृश्य खडा हुआ। पर सूक्ष्म विवेचन और पर्यालोचन-शक्ति का विकास नहीं हुआ।

वास्तव मे इन कवियों मे आचार्यत्व के गुण नहीं थे। इस युग मे साहित्य-शास्त्र की गभीर और विस्तृत विवेचना तथा नई नई बातो की उद्भावना नहीं हो सकी। केशव को अलकारवादी कहते हैं। शेष कवि इसको ही काव्य की आत्मा या प्रधान वस्तु मानकर चले।

इन कवियों द्वारा रसो विशेषतः शृगार रस और अलकारों के बहुत ही सरस और हृदयग्राही उदाहरण अत्यत प्रचुर परिमाण मे प्रस्तुत हुए। अलकारों की अपेक्षा नायिका-भेद की ओर अधिक झुकाव रहा। इससे शृगार-रस के अतर्गत बहुत सुदर मुक्तक रचना हिंदी में हुई। नख शिख-वर्णन और षट्ऋतु-चित्रण पर कई पुस्तकें लिखी गईं। विप्रलभ सबधी बारहमासे भी कुछ कवियों ने लिखे।

रीति-ग्रथों की इस परपरा द्वारा साहित्य के विस्तृत विकास मे कुछ बाधा पडी। प्रकृति की अनेकरूपता, जीवन की भिन्न-भिन्न चित्य बातों तथा जगत् के नाना रहस्यों की ओर कवियों की दृष्टि नहीं जाने पाई। वह एक प्रकार से बद्ध और परिमित सी हो गई। उसका क्षेत्र सकुचित हो गया। वाग्धारा बँधी हुई नालियो मे प्रवाहित होने लगी जिससे अनुभव के बहुत से गोचर और अगोचर विषय रससिक्त होकर सामने आने से रह गए। दूसरी बात यह हुई कि कवियों की व्यक्तिगत विशेषता की अभिव्यक्ति का अवसर बहुत ही कम रह गया।

बहुत थोडे कवि ऐसे मिलते हैं जिनकी वाक्य-रचना सुव्यवस्थित पाई जाती है।

रीतिकाल के कवियों के प्रिय छद कवित्त और सवैये रहे हैं। कवित्त को तो शृगार और वीर दोनों रसों के लिए समान रूप से उपयुक्त माना गया था। वास्तव में शृगार और वीर इन्हीं दो रसों की कविता इस काल मे हुई। शृगार के वर्णन को बहुतेरे कवियों ने अश्लीलता की सीमा तक पहुँचा दिया था[3]।

इस प्रकार मोटे रूप से इस युग मे दो धाराएँ—एक शृंगार तथा दूसरी वीररस-संबंधी प्रवाहित होती रहीं। मिश्रबंधुओं के शब्दों में इस भूषण और देवबाले काल में उत्साह की मूर्ति

---

[1] रामचद्र शुक्ल : हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ० १९६-१९८

[2] मिश्र-बंधु-विनोद, भाग १, पृ० ३४६

[3] हिंदी-साहित्य का इतिहास, पृ० २३२-२४१, मिश्र-बंधु-विनोद, द्वितीय भाग, पृ० ३८१-३८७-६२४-६३१

खडी हो गई और वीर-रस ने हिंदी साहित्य को कुछ समय के लिए इभारोही करके छत्र-मुकुट से सुशोभित कर दिया, मानो वह साक्षात् दीपक राग का प्रतिरूप बन गया[1]।

उपर्युक्त विवरण का अभिप्राय यह है कि ऊपर लिखी हुई साहित्यिक प्रवृत्तियो मे से प्राय: सभी आलोच्य धारा के कवियों मे भी वर्तमान थी जिनका विस्तृत वर्णन आगे यथास्थान किया गया है।

(२)

(अ) विषय की सीमा

अध्ययनार्थ प्रस्तावित विषय की सीमा १६००-१८०० ई० रक्खी गई है। इस काल के आरभिक वर्षों मे लिखे गए काव्यों पर १६वी सदी के अतिम वर्षों का प्रभाव एव घटनावली का भी विवरण मिलता है। अतएव इस विषय का क्षेत्र १६०० ई० से कुछ वर्ष पूर्व आरभ हुआ मान लेने मे कोई आपत्ति नही होनी चाहिए, क्योकि इस काल के आदिकवि केशव की काव्य-प्रतिभा अधिकाश उन्हीं वर्षों में प्रौढता को प्राप्त हुई थी। इस धारा के अतिम कवि जोधराज हैं, जिन्होंने १८२८ ई० मे 'हम्मीररासो' की रचना की थी, अतएव इस अध्ययन-काल की अतिम सीमा १८२८ ई० निर्धारित की जानी चाहिए।

इस विषय का साहित्यिक और ऐतिहासिक दृष्टि से आगे सविस्तार अध्ययन किया गया है। आरभ में यह विचार था कि उक्त पहलुओं के अतिरिक्त सामाजिक दृष्टि से भी इस साहित्य का अध्ययन किया जावे। इसी भावना से प्रेरित होकर सामग्री भी एकत्र की गई थी। पर इस निबध का आकार अधिक बढ जाने के कारण सामाजिक अध्ययन सबधी सामग्री का यहाँ पर उपयोग नहीं किया जा सका है। आशा है कि निकट भविष्य में उस सामग्री के आधार पर अपने अध्ययन की धारणाएँ पाठकों के समक्ष रखी जा सकेंगी। प्रस्तुत अवसर पर केवल साहित्यिक एव ऐतिहासिक अध्ययन से ही सतोष किया जा रहा है।

(आ) डिंगल एव पिंगल वीर-काव्यों मे से केवल पिंगल काव्य के अध्ययन के कारण

इस सबध मे यह भी स्मरण रखना चाहिए कि डिंगल और पिंगल वीरकाव्यों मे से यहा पर केवल पिंगल वीर काव्यही का अध्ययन किया गया है। इसके विशेष कारण हैं। डिंगल और पिंगल दो विभिन्न भाषाए हैं। दोनों की साहित्यिक एव भाषा सबंधी प्रवृत्तिया अलग-अलग हैं। साथ ही दोनों भाषाओं मे वीरकाव्य की अत्यधिक प्रचुरता है। ऐसी परिस्थिति मे डिंगल और पिंगल वीरकाव्यों का अलग-अलग स्वतंत्र रूप से अध्ययन करना अधिक वैज्ञानिक होगा। इसीलिए केवल एक ही प्रकार के पिंगल काव्य ही का अध्ययन यहा पर किया जा रहा है।

(३)

सामग्री-प्राप्ति के साधन एवं अध्ययन की सामग्री का संक्षिप्त परिचय

प्रस्तावित अध्ययन की सामग्री के लिए अधिकतर प्रकाशित ग्रथों की ही सहायता पर निर्भर

---

[1] मिश्र-बधु-विनोद, द्वितीय भाग, पृ० ३८२

होना पड़ा है। साथ ही इस विषय से संबंधित प्रकाशित एवं अप्रकाशित प्राप्य सभी रचनाओं का उपयोग करने का यथाशक्ति प्रयत्न किया गया है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि आलोच्य धारा के अध्ययन की सामग्री प्रचुर मात्रा में वर्तमान है। इस धारा के ग्रंथ असंख्यों की संख्या में राज्यों के पुस्तकालयों एवं व्यक्तिगत अधिकारों में विद्यमान हैं। पर खेद का विषय है कि उनके प्रकाशन की ओर लोगों का बहुत कम ध्यान गया है। यही नहीं अध्ययन एवं अवलोकनार्थ चेष्टा करने पर भी उन ग्रंथों के स्वामी उन ग्रंथों को दिखलाने के लिए तैयार नहीं होते हैं।

आरंभ में आलोच्य धारा के कवियों के क्रमिक अध्ययन का विचार था पर हस्तलिखित ग्रंथों की प्राप्ति में कठिनता एवं असफलता से निराश होकर, प्रकाशित प्राप्य ग्रंथों के विस्तृत अध्ययन से ही संतोष करना पड़ा है। आगे चलकर पद्माकर-कृत 'प्रताप-विरुदावली' की हस्तलिखित कृति प्राप्त होजाने पर उसे भी अध्ययन के लिए ग्रंथ सूची में सम्मिलित कर लिया गया है। जिन ग्रंथों का विस्तृत अध्ययन किया गया है उनकी नामावली आगे दी हुई सूची (अ) में देखी जा सकती है। इन ग्रंथों के संक्षिप्त परिचय के संबंध में प्रथम खंड के अध्याय एक में विचार किया गया है।

इस संबंध में यह स्मरण रखने की आवश्यकता है कि कुछ प्रकाशित ऐसे ग्रंथ भी उपलब्ध हैं जिनका उपयोग इस अध्ययन में नहीं किया गया है। इस प्रकार का सर्वप्रथम ग्रंथ बनारसीदास जैन-कृत 'अर्द्धकथा' (रचनाकाल वि० सं० अगहन, १६९८-१६४१ ई०) है जिसको डा० माताप्रसाद गुप्त ने संपादित करके प्रयाग-विश्वविद्यालय से प्रकाशित कराया है। यह कवि की आत्म-कथा है जिसमें उसकी समकालीन परिस्थितियों पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। यह रचना आत्मकथा होने के कारण इस अध्ययन-सूची में नहीं ली गई है।

इसके अतिरिक्त १८९७ ई० के जनरल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल में एक छोटी-सी कविता उर्दू लिपि में छपी है। इस रचना में मुहम्मदशाह और नादिरशाह के युद्ध (१७३८ ई०) का वर्णन है। यह रचना साधारण है।

साथ ही अन्य प्रमुख प्रकाशित ग्रंथ 'परमालरासो' है जिसके संपादक डा० श्यामसुंदर दास तथा प्रकाशक नागरी-प्रचारिणी सभा काशी है। अभी तक इसे 'पृथ्वीराजरासो' का एक अंश माना जाता रहा है, पर उक्त विद्वान् संपादक के मतानुसार वह एक स्वतंत्र काव्य-ग्रंथ है। इस ग्रंथ की रचना-तिथि भी अनिश्चित है। एक संदिग्ध एवं विवादास्पद रचना होने के कारण इस कृति के अध्ययन का यहाँ पर प्रश्न ही नहीं उठाया गया है। दूसरे यह बृहदाकार होने के कारण एक अलग स्वतंत्र अध्ययन का विषय बन सकता है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि इस धारा की सामग्री अप्रकाशित रूप में अत्यधिक मात्रा में वर्त्तमान है। यहाँ उन सभी अप्रकाशित ग्रंथों और ग्रंथकारों की सूची देना संभव नहीं है। केवल कुछ चुने हुए ग्रंथों का ही उल्लेख आगे सूची (ब) में किया जा रहा है। इन ग्रंथों के देखने का लेखक को अवसर नहीं प्राप्त हुआ है। उनकी नामावली आदि के लिए सहायक ग्रंथों के साक्ष्य पर ही निर्भर रहना पड़ा है।

आगे क्रमशः अध्ययन किए जानेवाले ग्रंथों की सूचियाँ क्रमशः (अ) तथा (ब) के अंतर्गत दी जा रही हैं।

सूची (अ)

सविस्तार अध्ययन किये जानेवाले ग्रंथों (प्रकाशित और अप्रकाशित) की सूची

क्रम	कवि	ग्रंथ	रचनाकाल (ई० सन् मे)	सपादक—प्रकाशक
१.	केशव	वीरसिंहदेव-चरित	१६०८	नागरीप्रचारणी सभा, काशी
२.	केशव	रत्नबावनी		भगवानदीन, रामनारायण लाल, इलाहाबाद।
३	जटमल	गोराबादल की कथा	१६२३ अथवा १६२८	अयोध्याप्रसाद शर्मा, तरुण-भारत ग्रथावली, प्रयाग।
४.	मतिराम	ललितललाम	१६६१-६२	मतिराम-ग्रथावली, गगा ग्रथागार, लखनऊ।
५	भूषण	शिवराजभूषण	२६ अप्रैल १६७३	विश्वनाथप्रसाद मिश्र
६	भूषण	शिवाबावनी		भूषण-ग्रथावली
७.	भूषण	छत्रसालदशक		साहित्य कार्यालय, काशी।
८.	भूषण	फुटकर पद		
९.	मान	राजविलास	२६ जून १६७७ को प्रारभ	लाला भगवानदीन नागरीप्रचारणी सभा, काशी
१०	गोरेलाल	छत्रप्रकाश	१७१० के लगभग	श्यामसुदर दास नागरीप्रचारणी सभा, काशी
११	श्रीधर	जगनामा	जनवरी, १७१३ के लगभग	राधाकृष्णदास, किशोरीलाल गोस्वामी, नागरीप्रचारणी सभा, काशी
१२.	सदानद	रासा भगवतसिंह	नवबर १७३५ के लगभग	नागरीप्रचारणी पत्रिका, भाग ५, १९८१ वि०
१३.	सूदन	सुजानचरित्र	१७५३ के लगभग	राधाकृष्ण दास, नागरीप्रचारणी सभा, काशी
१४.	गुलाब	करहिया कौ रायसो	अगस्त १७६७ के लगभग	नागरीप्रचारणी पत्रिका भाग १०, १९८६ वि०
१५.	पद्माकर	हिम्मतबहादुर-विरुदावली	१७९२ के लगभग	लाला भगवानदीन भारतजीवन प्रेस
१६.	पद्माकर	जगद्विनोद		विश्वनाथप्रसाद मिश्र, पद्माकर-पचामृत श्री रामरत्न-पुस्तकभवन, काशी

१७.	पद्माकर	प्रतापसिंह-विरुदावली		अप्रकाशित
१८.	जोधराज	हम्मीर रासो	१७ अप्रैल १८२८	श्यामसुंदर दास नागरीप्रचारणी सभा, काशी

सूची (ब)

नीचे उन ग्रंथों की तालिका दी जा रही है, जिनको विस्तृत अध्ययन मे सम्मिलित नहीं किया जा सका है, क्योंकि वे प्राप्त नहीं हो सके। यहां पर केवल चुने हुए ग्रंथ दिये जा रहे हैं। रचनाकाल ई० सन् मे दिखलाया गया है। इन ग्रंथों मे से अधिकांश अप्रकाशित हैं।

क्रम	कवि	ग्रंथ	रचनाकाल	विशेष
१.	केशव	जहांगीर-जस-चंद्रिका	१६१२ अथवा १६१८	
२.	ऋषभदास जैन	कुमारपालरासो	१६१३	
३	मानसिंह महाराजा	मान चरित्र	१६१८	
४.	दयालदास	राणारासा	१६२०	
५	बनवारी	स्फुट छंद	१६३१	जसवतसिंह के भाई अमरसिंह ने सलावत को मारा, उसी की प्रशसा की है।
६.	एक चारण	जगद्विलास	१६२८-५४	मेवाड के राणा जगत् सिंह के दरबारी कवि ने इसे बनाया।
७	निधान	जसवतविलास	१६४१	तृतीय त्रैमासिक खोज रिपोर्ट मे इसे १६१७ ई० की रचना माना है।
८.	गंभीर राय	एक ग्रंथ	१६५०	मऊवाले जगतू सिंह और शाहजहा का युद्ध-वर्णन।
९.	रत्नाकर	कुछ कविता	१६५५	इन्होने सुल्तान शुजा की प्रशसा मे कविता की है।
१०.	कुलपति मिश्र	रसरहस्य	१६६७	जयपुरनिवासी रामसिंह के यश का वर्णन।
११.	कुलपति मिश्र	सग्रामसहाय	१६७६	
१२.	सुखदेव मिश्र	फाजिल अली प्रकाश	१६७१	नृप-यश आदि वर्णन।
१३.	घनश्याम शुक्ल	स्फुट	१६८०-१७७८	रीवा नरेश के यहा उनकी प्रशसा मे कविता। एक छंद काशी नरेश की प्रशसा का भी सरोज में लिखा है।
१४.	कुम्भकरण	रतनमासा	१६७३	राठौर रतनसिंह और औरंगजेब के युद्ध का वर्णन।
१५.	श्रीपति भट्ट	हिम्मतप्रकाश	१६७४	बादा के नवाब सैयद हिम्मत खा के दरबार में थे।

१६.	रणछोड़	राजपट्टन	१६८०	मेवाड के राजघराने का इतिहास।
१७	महाराजा जैसिंह	जयदेवविलास	१६८१-१७००	ये उदयपुर के राणा थे। इस ग्रंथ में अपने वश का वर्णन किया है।
१८.	सतीप्रसाद	जयचद-वशावली		जयचद की वशावली एव उनका परिचय।
१६.	निवाज़ तिवारी	छत्रसाल-विरुदावती	१६८० के लगभग	नवाब आजम खा के आश्रित।
२०.	उत्तमचंद	दिलीपरजिनी	१७०३	राजा दिलीपसिह के आश्रित। उक्त राजा के वश का वर्णन।
२१.	हरिकेश द्विज	जगत्दिग्विजय	१७२५	जयतपुर के राजा जगतराज की जीवनी एव चदेल आदि राज-वशों का वर्णन।
२२.	हरिकेश द्विज	ब्रजलीला	१७३१	छत्रसाल, हृदयशाह की प्रशसा तथा कृष्ण-राधा-मिलन।
२३.	हरिकेश द्विज	वीर रस की स्फुट रचना		
२४	गजन	कमरुद्दीन खा हुलास	१८२८	
२५.	केवल राम	बाघीबिलास	१७२६	जूनागढ के नवाबों की प्रशसा मे ग्रथ।
२६.	मूकजी वदीजन	खीची-वशावली	१७१८	
२७	जगन्नाथ प्राचीन	मोहमद राज की कथा	१७१६	
२८.	शाहजू पडित	बुदेल-वशावली	१७३७	बुदेले राजाओं का विवरण।
२६	कुवर कुशल	लखपति-यशसिंधु	१७३६	
३०.	अचत फदी	स्फुट	१७४३	नाना फड़नवीस की प्रशसा।
३१.	श्रीकृष्ण भट्ट कलानिधि	साभर-युद्ध	१७३४	जयपुर के महाराजा सवाई जयसिह और देहली के सैयद भाइयों के युद्ध का वर्णन।
३२.	शभुनाथ मिश्र	अलकार-दीपक	१७४६	खीचीनृप भगवत राय का यश-वर्णन।
३३.	शभुनाथ मिश्र	रस-कल्लोस	१७५०	यश-वर्णन एव नायिकाभेद-निरूपण।
३४	शभुनाथ मिश्र	रस-तरगिनी		यश-वर्णन एव नायिका भेद-निरूपण
३५.	शभुनाथ मिश्र	भगवतराय यश वर्णन		भगवत राय का यश-वर्णन।
३६	तीर्थराज	समरसार	१७४६	डौडिया खेरे के राजा अचलसिंह के यहा थे।
३७.	महताब	नखशिख	१७४३	हिंदूपति की प्रशसा की है। राजा शब्द के स्थान पर बादशाह शब्द का प्रयोग किया है।
३८.	विहारी लाल	हरदौल-चरित्र	१७५८	
३६.	प्रतापसाहि	काव्यविलास	१७२६	

४०.	प्रतातसाहि	जयसिंह-प्रकाश	१७५५	राजपूताना के किन्हीं राजा जयसिंह की प्रशसा मे रचना।
४१.	लाल झा मैथिल	कनरपीघाट की लड़ाई	१७८०	नरेन्द्र सिंह दर्भंगा नरेश के यहाँ थे।
४२.	लाल कवि	कवित्त	१७७५	महाराजा महीपनारायण सिंह जी तथा अन्य किसी राजा का रण-वर्णन।
४३.	मान कवि	नरेन्द्र-भूषण	१७८८	राजा रणजोरसिंह के यश का वर्णन।
४४.	दत्तू अथवा देव-दत्त	ब्रजराज-पंचाशा	१७६१	राजा ब्रजराज देव की चढाई का वर्णन।
४५.	शिवराम भट्ट	प्रताप-पचीसी	१७६०	राजा विक्रमादित्य ओडछा के दरबार मे थे।
४६.	शिवराम भट्ट	विक्रम-विलास		
४७	शिवनाथ	रासा भैया बहादुर सिंह का	१७६६	बलरामपुर के राजकुमार बहादुरसिंह द्वारा शरणार्थी की रक्षार्थ किसी शत्रु से लडे गये युद्ध का वर्णन।
४८.	शिवनाथ (असनी वाले)	रायसा		महाराजा जसवन्त सिंह धारा नगरीवाले और महाराजा अर्जीतसिंह रीवा वाले के युद्ध का वर्णन।
४९.	शिवनाथ (असनी वाले)	वशावली	१८२५	
५०.	मान (खुमान)	समरसार	१७६५	किसी अँग्रेज उच्च पदाधिकारी को राज-कुमार धर्मपाल सिंह द्वारा वश मे करने की किसी घटना का वर्णन।
५१.	दुर्गाप्रसाद	अजीत सिंह फते ग्रथ अथवा नायक रासा		१७६६ ई० मे रीवा के सरदारों और पेशवा की सेना के बीच लडे गये युद्ध का वर्णन।
५२.	गोपाल	भगवतराय की विरुदावली		भगवतराय और सआदतखा के युद्ध का वर्णन।

इस स्थल पर यह उल्लेख कर देना भी अप्रासगिक न होगा कि अध्ययन किये जानेवाले ग्रथों में से 'ललितलालाम' तथा 'जगद्विनोद' के केवल कुछ ही छंद इस अध्ययन के अतर्गत आते हैं। इन पदों मे विशेष ऐतिहासिक विवरण का उल्लेख नहीं मिलता है। यही दशा 'प्रतापसिंह विरुदावली' की है। इसीलिए ऐतिहासिक अध्ययन के अतर्गत इन ग्रथों पर अलग से विचार करने की आवश्यकता नहीं समझी गई है। इन रचनाओं का साहित्यिक मूल्य अधिक है, ऐतिहासिक कम।

प्रथम खंड : साहित्यिक अध्ययन

अध्याय १ : ग्रंथ-परिचय

इस अध्याय मे सविस्तार अध्ययन किये जानेवाले कवियों का कालक्रम से सक्षिप्त जीवन-वृत्त और ग्रथ-परिचय दिया जा रहा है :—

केशवदास

सनाढ्य जाति मे उत्पन्न मिश्र उपनामधारी पडित राजकृष्णदत्त के पुत्र पडित काशीनाथ के घर केशवदास अवतीर्ण हुए थे।[1] केशवदास के ज्येष्ठ भ्राता बलभद्र और कनिष्ठ भाई कल्याण दास थे।

केशवदास का जन्म १६१२ वि० (१५५५ ई०) मे टेहरी मे और मृत्यु १६७४ वि० (१६१७ ई०) मे हुई। लाला भगवानदीन के मतानुसार इनका जन्म चैत्र १६१८ वि० (१५६१ ई०) मे और देहात १६८० वि० (१६२३ ई०) मे हुआ था। यह ओडछाधीश के राजकवि, मत्र-गुरु एव मत्री थे। महाराजा रामसिह के लघु भ्राता इद्रजीत ने इनको सम्मानित करके २१ ग्राम प्रदान किये थे। इन्होंने अपनी नीति-चातुर्य से इद्रजीत सिह पर अकबर द्वारा किया हुआ एक करोड़ रुपये का दड क्षमा करा दिया था। महाराज बीरबल ने इनके एक छद पर मुग्ध होकर इन्हे ६ लाख रुपये दिये थे।

केशव-रचित निम्नलिखित ग्रथ बतलाये जाते हैं :—

१—रत्नबावनी—इद्रजीत सिंह के ज्येष्ठ भ्राता रत्नसिह की वीरता का वर्णन इस ग्रथ मे किया गया है।

२—रसिकप्रिया - रचनाकाल १६४८ वि० (१५९१ ई०)—रसों के वर्णन के लिए इस ग्रथ की रचना हुई है।

३—कविप्रिया—रचनाकाल १६५८ वि० (१६०१ ई०)—इस ग्रथ मे कवि-वश तथा इद्रजीत सिह के वर्णन के पश्चात् काव्य के अगों का विधिपूर्वक विवेचन किया गया है।

४—रामचद्रिका - रचनाकाल १६५८ वि० (१६०१ ई०)—इसमें श्री रामचद्र जी की कथा वर्णित है।

५—वीरसिह देव चरित - रचनाकाल १६६४ वि० (१६०७ ई०)—इस ग्रथ मे महाराज वीरसिह देव बुदेला के युद्धों एव स्वातत्र-संग्राम का वर्णन है। इस ग्रथ में १६०८ ई० तक की घटनाओं का वर्णन है, अतः इसकी रचना इसी काल के आस-पास की गई होगी। इसलिए विविध विद्वानों द्वारा स्वीकार की गई तिथि १६६४ वि० अशुद्ध है।

६—विज्ञानगीता—रचनाकाल १६६७ वि० (१६१० ई०)—इस ग्रथ मे कवि-वश-परिचय तथा दार्शनिक विचारों का विवेचन किया गया है।

---

[1] रामचंद्रिका, पहिला प्रकाश, छं० ४-५; कविप्रिया, प्रभाव द्वितीय, छं० १-२१, पृ० ८-१०

७—जहागीरजसचंद्रिका—इसका रचनाकाल १६६६ वि० (१६१२ ई०) माना गया है। इस ग्रंथ में जहांगीर का यश वर्णित है।

केशव का लिखा हुआ 'नखशिख' नामक एक और ग्रन्थ बतलाया जाता है। इनके नाम से 'बालिचरित्र' और 'हनुमानजन्मलीला' दो अन्य ग्रन्थ भी मिलते हैं, पर रचना-शैली की शिथिलता और निकृष्टता के कारण उनके केशवरचित होने में संदेह है।[१]

प्रस्तावित अध्ययन की दृष्टि से 'रत्नबावनी,' 'कविप्रिया' का इंद्रजीत सिंह संबंधी अध्याय, 'वीरसिंहदेवचरित' और 'जहांगीरजसचंद्रिका' का विशेष महत्त्व है।

जटमल

जटमल ने अपने विषय में लिखा है कि मोरछड़ो के शासक पठान सरदार, नासिर-नंद अली खां न्याजी खां के समय में धर्मसी के पुत्र नाहर खां जटमल ने सिबुला ग्राम के बीच अपने ग्रंथ की रचना की[२]। संभवतः नाहर खां जटमल की उपाधि थी अथवा वह मुसलमान हो गया था[३]। श्री ओझाजी ने कवि जटमल रचित 'गोराबादल की बात' शीर्षक लेख में लिखा है कि ओसवाल महाजनों की जाति में नाहर एक गोत्र है, अतएव संभव है कि जटमल जाति का ओसवाल महाजन हो[४]।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा की सन् १६४० की हस्त-लिखित ग्रंथों की अप्रकाशित खोज रिपोर्ट में 'गोराबादल' की कथा की एक नई प्रति का उल्लेख किया गया है। यह हस्तलिखित ग्रंथ पंडित मदनलाल जी मिश्र, ज्योतिषी लक्ष्मणजी के मंदिर के पीछे, भरतपुर के पास सुरक्षित है। इस ग्रंथ में जटमल का यह वृत्त दिया है :—

आणंद उछव होत घर-घर देपता नहीं सोक।
राजा तिंह अलीपान नुं पाननां सुर नंद॥
सकल सरदार पाठाण माहे अजु नपत्र मां चंद।
धरमसीहु नंद नाहर जाट जटमल नाम।
कही कथा वणण्य के विच सावेला गाम॥
कहा यका आणंद उपजत सुणत सब सुष होइ।
जटमल हों गुणी अणां विघन न लागे कोइ॥२७॥[५]

इस उद्धरण के अनुसार नासिर खां के पुत्र अली खां के समय में धर्मसिंह के आत्मज

---

[१] मिश्रबंधुविनोद, प्रथम भाग, पृ० ३४६-७, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ० २०७-८, हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० ३६२-७, शिवसिंहसरोज, कवियों का जीवनचरित्र, पृ० २०-१, केशवपचरत्न, आदि का, पृ० २-३, ७-८, सेलेक्शंस फ्रॉम हिंदी लिट्रेचर, भाग १, पृ० ५०-१; वर्नाक्यूलर लिट्रेचर अव् हिंदुस्तान पृ० ५८।

[२] गोराबादल की कथा छं० १५०

[३] वही, कवि परिचय, पृ० ३

[४] नागरीप्रचारिणी पत्रिका, भाग १३, पृष्ठ ४०२

[५] नागरीप्रचारिणी सभा काशी की अप्रकाशित हस्तलिखित ग्रंथों की खोज रिपोर्ट, १६४० ई०, एम् एस०-७१ ग्रंथ नं० १६६, १६४० ई०

नाहर जटमल जाट ने सावेला ग्राम में इस कथा की रचना की। इस विवरण से नाहर जटमल की उपाधि प्रतीत होती है और उनकी जाति जाट ठहरती है।

सवला (सुवला, सावेला) गाव कहा है इसका पता अभी तक नही चला, पर इतना तो निश्चित है कि वह (जटमल) मेवाड-निवासी नहीं था। यदि ऐसा होता तो चितौड़ के राजा रत्नसेन को जो गुहिलवशी था, कदापि वह चौहानवशी न लिखता[1]। कहने की आवश्यकता नहीं कि श्री ओझाजी का उक्त मत केवल अनुमान पर अवलबित है। जटमल की इस ऐतिहासिक भूल का कोई और भी कारण हो सकता है, जिसके सबध मे ऐतिहासिक-विवरण में विचार किया गया है।

जटमलकृत 'गोराबादल की कथा' की प्राप्त हस्तलिखित प्रतियों मे उसके विभिन्न नाम मिलते हैं, यथा 'गोरेबादल की कथा', 'गोराबादल री कथा', 'गोराबादल की बात'[2]।

जटमल ने इस ग्रथ की रचना वि० स० १६८५ फाल्गुन पूर्णिमा (१६२८ ई०) अथवा १६८० वि० (१६२३ ई०) मे की थी[3]।

जटमल ने अपने उक्त ग्रथ में अलाउद्दीन के चित्तौड दुर्ग के आक्रमण के अवसर पर गोराबादल के द्वारा वीरता प्रदर्शित करने का वर्णन किया है।

मतिराम

मतिराम, चिंतामणि तथा भूषण के भाई परपरा से प्रसिद्ध हैं। यह तिकवाँपुर (जिला कानपुर) मे सवत् १६७४ वि० (१६१७ ई०) के लगभग उत्पन्न हुए थे। इनका स्वर्गवास अनुमान से स० १७७३ वि० (१७१६ ई०) में होना समझ पडता है। ग्रियर्सन के विचार मे इनका समय १६५० ई० से १६८२ तक रहा था। शिवसिहसरोजकार ने मतिराम का स० १७३८ वि० (१६८१ ई०) विद्यमानत्व-काल माना है।

मतिराम राजा उदोतसिह कुमाऊनरेश और भाऊसिह हाडा बूदीनरेश तथा शभुनाथ सुलकी इत्यादि के यहा बहुत दिनो तक रहे थे।

मतिराम ने निम्नलिखित ग्रथो की रचना की थी :—

१. फूलमजरी—इसमे ६० दोहे है। एक दोहे को छोडकर शेष ५६ दोहो मे फूलो का वर्णन है। जहागीर की आज्ञा से आगरा नगर मे इस ग्रथ की मतिराम ने रचना की थी।

२. रसराज—इस ग्रथ मे शृगार-रसातर्गत नायिका-भेद का वर्णन है। यह किसी राजा के आश्रय मे नही बनाया गया है।

३. छदसारपिगल—कहा जाता है कि श्रीनगर के फतेहसाहि बुदेला के लिए इस ग्रथ की रचना हुई थी।

४. ललितललाम—यह अलकार-शास्त्र-सबधी ग्रथ है। बूदी के महाराजा भावसिह जी के लिए ग्रथ की रचना हुई है। इसकी रचना अनुमानतः सवत् १७१८ और १७१६ (१६६१ और १६६२ ई०) के बीच हुई थी।

---

[1] नागरीप्रचारिणी-पत्रिका, भाग १३, पृ० ४०२

[2] हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० ८८२-३

[3] गोरा बादल की कथा, छ० १६४ (पाद-टिप्पणी अंतर्गत पाठांतर सहित), पृ० ३४, हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण, पहिला भाग, पृ० ४८

५. मतिराम-सतसई—यह पुस्तक किन्हीं भोगराज नाम के गुणी राजा के लिए मतिराम ने बनाई है।

६. साहित्यसार—यह १० पृष्ठों का एक छोटा-सा ग्रथ है। इसमे नायिकाभेद का वर्णन है।

७. लक्षणशृगार—यह १४ पृष्ठों का एक छोटा-सा ग्रथ है। इसमे भावों और विभावों का वर्णन है।

८. अलंकार-प्रवेशिका—यह ग्रथ संवत् १७४ वि० (१६६० ई०) मे कुमायू के राजा उदोत सिंह के पुत्र ज्ञानचद के लिए मतिराम जी ने बनाया था।

पडित भगीरथप्रसाद दीक्षित ने 'वृत्तकौमुदी' का पता लगाया है। इसके रचयिता का नाम भी मतिराम है। और इसका निर्माण-काल सवत् १७५८ वि० (१७०१ ई०) है। दीक्षित जी 'रसराज' और 'वृत्तकौमुदी' के रचयिता को एक ही व्यक्ति मानते हैं और उनका कहना है कि 'रसराज' के रचयिता का जो 'छदसार-पिंगल' प्रसिद्ध है, वही यह 'वृत्तकौमुदी' ग्रथ है। पर मिश्रबधुओं के मत मे 'ललितललाम' आदि ग्रथों के रचयिता कश्यपगोत्री त्रिपाठी मतिराम 'वृत्तकौमुदी' के रचयिता वत्सगोत्री मतिराम से भिन्न हैं। 'वृत्तकौमुदी' के रचयिता मतिराम 'रसराज' के कवि मतिराम से एकदम भिन्न हैं[1]।

यहा पर यह बतला देना भी ठीक प्रतीत होता है कि मतिराम के उक्त ग्रथों में से केवल 'ललितललाम' के उन्हीं छदों को आलोच्य साहित्य में सम्मिलित किया गया है जो कवि ने अपने आश्रयदाता तथा उसके परिवार के सबध मे लिखे हैं। शेष ग्रथों से प्रस्तावित अध्ययन का विशेष सबध नहीं है।

भूषण

भूषण ने 'शिवराजभूषण' मे अपने वश का परिचय देते हुए लिखा है कि ये कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। इनका गोत्र कश्यप था। इनके पिता रत्नाकर त्रिपाठी थे। यह त्रिविक्रमपुर (तिकवॉपुर) में यमुना के किनारे रहते थे, जहा बीरबल के समान राजा उत्पन्न हुए थे और जहा विश्वेश्वर के तुल्य देव-विहारीश्वर महादेव हैं। चित्रकूट-पति हृदयराम के पुत्र रुद्र सोलकी ने इन्हे 'भूषण' उपाधि से भूषित किया था[2]।

तिकवॉपुर कानपुर जिले की घाटमपुर तहसील में यमुना के बाये किनारे पर है। इसके पास अकबरपुरबीरबल नाम का एक छोटा-सा गाव है, जहा बीरबल के उत्पन्न होने की बात कही जाती है। गाव से कुछ दूर सडक के किनारे, देव-विहारीश्वर का मदिर भी है।

कहा जाता है कि ये चार भाई थे, चिंतामणि, भूषण, मतिराम और नीलकठ (उपनाम जटाशकर)। भूषण के भ्रातृत्व के सबध में विद्वानों मे बहुत मतभेद है। कुछ विद्वानों ने इनके वास्तविक नाम पतिराम अथवा मनिराम की कल्पना भी की है, पर यह कोरा अनुमान ही प्रतीत होता है।

---

[1] शिवसिंहसरोज, कवियों का जीवन-चरित्र, पृ० १०१, माडर्न वर्नाक्यूलर लिट्रेचर अव् हिदुस्तान, संख्या १४६, पृ० १६१, हिदी साहित्य का इतिहास, पृ० २५२-४, मिश्रबंधुविनोद, द्वितीय भाग, पृ० ४४३-५०; मतिराम-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० २१८-३८, भूषण विमर्श पृ० ६-१६।

[2] विश्वनाथप्रसाद मिश्र : भूषण-ग्रथावली, शिवराजभूषण, छं० २५८

भूषण के प्रमुख आश्रयदाता महाराज शिवाजी और छत्रसाल बुंदेला थे। भूषण के फुटकर कई ऐसे छंद मिलते हैं जिनमे विभिन्न नरेशों की प्रशंसा की गई है। इसके आधार पर भूषण के बहुत से आश्रयदाता नहीं माने जा सकते, क्योंकि उन छंदों मे से सभी भूषण के रचे हैं, इस बात का कोई भी पुष्ट प्रमाण नही है। मिश्रबंधुओं ने इनका जन्म अनुमान से वि० स० १६७० (१६१३ ई०) मे और मृत्यु वि० स० १७७२ मे (१७१५ ई०) मानी है। शिवसिंह सेंगर ने भूषण का जन्मकाल १७३८ वि० लिखा है। ग्रियर्सन ने इनका समय १६६० ई० माना है। कुछ विद्वानों के मतानुसार शिवाजी के दरबार मे भूषण नहीं रहे थे, वरन् वे शिवाजी के पौत्र साहू के दरबारी कवि थे। कहने की आवश्यकता नही कि उन विद्वानो का यह मत भ्रमपूर्ण है। वास्तव मे भूषण शिवाजी के ही समकालीन थे।

'शिवसिंहसरोज' मे भूषण के बनाये हुए चार ग्रंथों—'शिवराजभूषण', 'भूषणहजारा', 'भूषणउल्लास' और 'दूषणउल्लास' का उल्लेख मिलता है। इनमे से अंतिम तीन ग्रंथ अभी तक देखने मे नही आए हैं। अभी तक भूषण के बनाए हुए 'शिवराजभूषण', 'शिवाबावनी', 'छत्रसालदशक' तथा कुछ स्फुट छंद ही मिलते हैं[1]।

भूषण ने शिवराजभूषण की रचना के समय का उल्लेख इस प्रकार किया है :—

संवत् १७३०, सुचि[2] (ज्येष्ठ) बदी १३, भानुवार (रविवार)[3]

वैशाख अमावस का मध्य व्याप्ति-काल	·१	अप्रैल ६·४४
२८ तिथियों का समस्त व्याप्ति काल	२७+१ / २६	२७·५६ / ३४ ००

= २६ अप्रैल, १६७३ ई०, रविवार

---

[1] विश्वनाथप्रसाद मिश्र · भूषण-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० १०६-१५, राजनारायण शर्मा : भूषण-ग्रंथावली, भूमिका पृ०, १-१८, ब्रजरत्नदास · भूषण-ग्रथावली, भूमिका, पृ० ४-६६, मिश्रबंधु : भूषण-ग्रथावली, भूमिका, पृ० ७-३६, मिश्रबंधुविनोद, द्वितीय भाग, पृ० ४६६-८, रामचंद्र शुक्ल : हिंदी साहित्य का इतिहास, नवीन संस्करण, पृ० २५४ ६, शिवसिंहसरोज—कवियों का जीवन चरित्र, पृ० ६१-३; माडर्न वर्नाक्यूलर लिट्रेचर अव् हिंदुस्तान, संख्या १४५, पृ० ६१, उदयनारायण तिवारी · वीरकाव्य, २५८-६७; सीताराम · सेलेक्शंस फ्राम हिंदी लिटरेचर, भाग १, पृ० ८१-४; भगीरथप्रसाद दीक्षित : भूषण-विमर्श पृ० १-३४

[2] सुचि (शुचि) शब्द के अर्थ के लिए देखिए :—

विलियम : ए संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, पृ० १०८१

आप्टे : प्रेक्टिकल संस्कृत-इंग्लिश डिक्शनरी, पृ० ६२२

हिंदी-शब्दसागर, छठा खंड, पृ० ३३३५

उक्त ग्रंथों में सुचि (शुचि) शब्द का अर्थ ज्येष्ठ और आषाढ़ दोनों मास दिया है। गणना पर ठीक उतरने के कारण यहां पर इस शब्द का अर्थ ज्येष्ठ ही लिया गया है।

[3] विश्वनाथप्रसाद मिश्र : भूषण ग्रंथावली, शिवराजभूषण, छं० ३८२

अतएव भूषण ने 'शिवराजभूषण' की रचना रविवार, २६ अप्रैल, १६७३ ई० को की थी।

पाठांतर के आधार पर मिश्रबंधुओं ने इस ग्रंथ की रचना-तिथि संवत् १७३० वि० कार्त्तिक बुधवार सुदी १३ और लाहौरवाली 'भूषण-ग्रंथावली' में संवत् १७३० वि० श्रावण मास, बुधवार सुदी १३ मानी गई है[1]।

इन विद्वानों के उक्त मत पाठ-भेद तथा अनुमान के आधार पर ही अवलंबित हैं। गणना के द्वारा खरी उतरने के कारण 'शिवराजभूषण' की रचना-तिथि २६ अप्रैल, १६७३ ई० ही ठीक जँचती है। 'शिवराजभूषण' में वर्णित घटनाओं की ऐतिहासिक जाँच से भी यही तिथि ठीक उतरती है, क्योंकि उसमें कोई भी ऐसी घटना वर्णित नहीं हुई है जो इस तिथि के पश्चात् घटित हुई हो[2]। इससे भूषण और शिवाजी की समसामयिकता पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है और इनका वीर शिवाजी के दरबार में रहना सिद्ध हो जाता है।

भूषण ने 'शिवराजभूषण' में अलंकारों की परिभाषा और उदाहरणों का वर्णन किया है। 'शिवाबावनी' में ५२ छंदों में शिवाजी की कीर्ति और 'छत्रसालदशक' में महाराज छत्रसाल बुंदेला का यश दस छंदों में वर्णित है। इनकी फुटकर रचनाओं में विविध व्यक्तियों के संबंध में कहे गये पद्य संगृहीत हैं।

मान कवि

मान कवि के वंश, माता-पिता आदि के विषय में अभी तक कुछ भी ज्ञात नहीं हो सका है। इनकी जाति के संबंध में भी विद्वानों में मतभेद है। कुछ लोग इन्हें भाट और कुछ जैन यति बतलाते हैं। यह मेवाड़ के महाराणा राजसिंह (जन्म २४ सितम्बर, १६२६ ई०, राज्याभिषेक १० अक्तूबर, १६५२ ई०, मृत्यु २२ अक्तूबर १६८० ई०) के राजकवि थे। इन्होंने 'राजविलास' की रचना २६ जून १६७७ ई० को आरंभ की थी और ग्रंथ-समाप्ति १६८० ई० में की[3]। अतएव इनके संबंध में केवल इतना ही कहा जा सकता है कि यह कवि १६७७ ई०-१६८० ई० में वर्तमान थे।

शिवसिंह सेंगर ने इनका समय संवत् १७५६ वि० (१६६६ ई०) और उनके ग्रंथ का नाम 'राजदेवविलास' माना है[4]। ग्रियर्सन[5] के मतानुसार इनका रचना-काल १६६० ई० तथा मिश्रबंधुओं[6] के मतानुसार १७१७ वि० (१६६३ ई०) था। कहने की आवश्यकता नहीं कि इन सभी विद्वानों द्वारा दी हुई तिथियाँ अशुद्ध हैं।

---

[1] मिश्रबंधु : भूषण-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० ५७, वही, छं० ३८०, राजनारायण शर्मा : भूषण-ग्रंथावली, छं० ३८२, पृ० २७२, वही, पाद-टिप्पणी पृ० २७५-३

[2] विस्तृत ऐतिहासिक विवरण के लिये देखिये (इस पुस्तक का खंड २, अध्याय ३) भूषण-ग्रंथावली की ऐतिहासिकता

[3] राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा, पृ० १०७, डिंगल में वीर रस, भूमिका, पृ० ४२

[4] शिवसिंहसरोज, कवियों का जीवन चरित्र, कवि संख्या ८६, पृ० १०४

[5] वर्नाक्यूलर लिट्रेचर ऑव् हिंदुस्तान, संख्या १८६, पृ० ७३

[6] मिश्रबंधुविनोद, भाग २, पृ० ४६२-३

'राजविलास' की निम्नलिखित पक्तियों के आधार पर डा० उदयनारायण तिवारी[१] ने मान के मुख्य नाम मंडान होने की कल्पना की है :—

तिन द्यौस मात त्रिपुरा सुतवि कीनौ ग्रथ मंडान कवि ।
श्री राजसिंह महाराण कौ रचि यहि जस जौ चंद रवि[२]॥

मान ने 'राजविलास' मे अन्यत्र मडान शब्द का प्रयोग नही किया है। अन्य साक्ष्य के अभाव मे मान के नाम सबधी इस अनुमान को ठीक नही माना जा सकता।

'राजविलास' की रचना-तिथि :—

स० १७३४ आषाढ शुक्ला सप्तमी बुधवार[३]

आषाढ अमावद्र।का		
मध्यस्थ काल	४ जून	२० ४३
७ तिथियों का समस्त	७	६ ·८६
व्याप्ति काल	११	२६·६२

=बुधवार, २६ जून, १६७७ ई०

अतएव मान कवि ने 'राजविलास' की रचना बुधवार, २६ जून, १६७७ ई० को प्रारभ की होगी।

मान ने अपने इस ग्रथ में मेवाडाधिपति महाराणा राजसिंह के पूर्वजों से लेकर उनके जीवन के अन्त तक की घटनाओं का वर्णन किया है।

लाल कवि (गोरेलाल)

लाल कवि ने 'छत्रप्रकाश' मे अपने जीवनवृत्त के सबध मे कुछ नहीं लिखा है। उनके वशज उत्तमलाल गोस्वामी तैलग बीकानेरनिवासी से प्राप्त सूचना के आधार पर मिश्रबधुओं ने लाल कवि का यह जीवन परिचय दिया है :—

इनके (लाल कवि के) पूर्वज आध्र देश में राजमहेंद्री जिले के नृसिंहक्षेत्र धर्मपुरी मे रहते थे। इनके पूर्वज भट्ट काशीनाथ की पूर्णा नामक कन्या श्री जगद्गुरु बल्लभाचार्यजी को ब्याही थी। भट्ट काशीनाथ के पुत्र जगन्नाथ के ६ पुत्र हुए। दिल्ली सम्राट् बहलोल लोदी ने इनको ६ ग्राम दिये थे। अतः ये लोग भी इन्हीं ग्रामों—गिट्टा, लबुक, जोगिया, तिधरा, गिरधन तथा भरस—के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनमे से श्री गिट्टा के पुत्र नागनाथ हुए जिनकी दसवीं पीढी में कवि लाल उपनाम गोरेलाल तथा दीनदयाल हुए। प्रसिद्ध दाक्षिणात्य विद्वान् प० गगाधर शास्त्री तैलंग के पुत्र कृष्ण शास्त्री ने बल्लभ दिग्विजय नामक ग्रथ मे अपना परिचय इस प्रकार दिया है :—

बृहल्लकमौद्गल्यगोत्रे प्रथिततर यशा नागनाथान्वयेभूत् ।
बुंदेलाधीशपूज्यः कविकुलतिलको गौरिलालाख्या भट्टः ॥

---

[१] वीरकाव्य, पृ० २१४

[२] राजविलास, छं० ३८, पृ० ८

[३] वही

शास्त्री गगाधर स्तत्कुल जनिरभवत् तत्कुले शास्त्रि कृष्णः ।
तेनेदं लिख्यते श्री गुरुवरचरितम् ,स्वन्धराणां मतेन ॥

साराश यह है कि मुद्गलगोत्रीय नागनाथ के वश मे कविकुलतिलक गोरेलाल हुए जिन्हे बुदेलाधीश्वर बड़ी पूज्य दृष्टि से देखते थे। इससे उपर्युक्त कथन की पुष्टि हो जाती है।

सवत् १५३५ वि० (१४७८ ई०) मे बुदेलखड की रानी दुर्गावती ने नागनाथ को हटाकर दमोह के पास सकोलि नामक ग्राम दिया था। तभी से ये तथा इनके वशज बुदेलखड में आये। इन्हीं नागनाथ के वश मे सवत् १७१५ वि० (१६५८ ई०) मे लाल कवि का जन्म हुआ था। महाराजा छत्रसाल ने लाल कवि को बढई, पठारा, अमानगज, सगेरा तथा दुग्धा नामक पॉच गॉव दिये थे। लाल कवि दुग्धा मे रहने लगे और अब भी उनके वशज वहॉ रहते हैं।[1]

लाल कवि की मृत्यु-तिथि के सबध मे कुछ भी ज्ञात नहीं है। छत्रसाल के जीवन की 'छत्रप्रकाश' मे वर्णित अतिम घटना का समय सवत् १७६४ वि० (१७०७ ई०) मानकर मिश्रबधुओं[2], रामचद्र शुक्ल[3] आदि विद्वानों ने उक्त तिथि को ही लाल कवि की सभावित मरण-तिथि होने की कल्पना की है, पर यह अशुद्ध है। 'छत्रप्रकाश' की प्राप्त प्रति मे वर्णित अतिम घटना लोहागढ विजय है। छत्रसाल ने इस दुर्ग को १७६७ वि० (१६ दिसबर, १७१० ई०) को जीता था[4]। अतएव यदि 'छत्रप्रकाश' की वर्त्तमान प्रति को पूर्ण माना जावे तो गोरेलाल की मृत्यु १६ दिसबर १६१० ई० के पश्चात् निकट भविष्य मे हुई होगी।

ग्रियर्सन ने लाल कवि का परिचय देते हुए लिखा है :—

वह राजा छत्रसाल बुदेला के दरबार मे थे। १६५८ ई० मे दारा तथा औरगजेब के मध्य होनेवाले धौलपुर के युद्ध मे छत्रसाल की मृत्यु के अवसर पर वह उपस्थित थे। उसने नायिका-भेद पर 'विष्णुविलास' ग्रथ लिखा, पर वह 'छत्रप्रकाश' के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं[5]।

इतिहास से विदित होता है कि शाहजहा के पुत्रो मे होनेवाले उत्तराधिकार युद्ध मे धौलपुर में दारा की ओर से युद्ध करते हुए बूँदीश्वर गोपीनाथ के पुत्र छत्रसाल हाडा वीरगति को प्राप्त हुए थे[6]। ग्रियर्सन ने छत्रसाल बुदेला का परिचय देते हुए उसकी मृत्यु-तिथि १६५८ ई० स्वीकार की है[7]। यह उनकी भूल है। वास्तव मे छत्रसाल बुदेला की मृत्यु १७३१ ई० मे हुई थी। छत्रसाल हाडा के पिता का नाम गोपीनाथ[8] था। और छत्रसाल बुदेला के पिता का नाम चंपतिराय था[9]।

---

[1] मिश्रबंधुविनोद, द्वितीय भाग, पृ० ५४२-४, वीरकाव्य, पृ० २६२-४
[2] मिश्रबंधुविनोद, द्वितीय भ ग, पृ० ५४४
[3] हिंदी साहित्य का इतिहास, नवीन सस्करण, पृ० ३३३
[4] देखिये ऐतिहासिक विवरण, खड २, अध्याय ५
[5] वर्नाक्यूलर लिट्रेचर अव् हिदुस्तान, कवि संख्या २०२, पृ० ७७
[6] मआसिरुल् उमरा, भाग एक, पृ० ४०५; टाड : राजस्थान, दूसरा भाग, पृ० १३३८-४८
[7] वर्नाक्यूलर लिट्रेचर अव् हिदुस्तान, कवि सख्या, १६७, पृ० ७६
[8] टाड : राजस्थान, भाग २ पृ० ११३८
[9] मआसिरुल् उमरा, भाग १, पृ० १३६

इस विवेचन से सिद्ध हो जाता है कि ग्रियर्सन महोदय ने भ्रमवश छत्रसाल हाडा और छत्रसाल बुंदेला को एक व्यक्ति समझकर ऐसी अनर्गल बात कह डाली है।

शिवसिंह ने लाल कवि उपनाम गोरेलाल का वृत्तांत नहीं दिया है। उन्होंने लाल कवि प्राचीन का उल्लेख करते हुए लिखा है कि यह कवि राजा छत्रसाल हाडा कोटा बूंदीवाले के यहा था। जिस समय दाराशिकोह (शुकोह) और औरंगजेब फतूहा मे लडे और राजा छत्रसाल मारे गये उस समय यह कवि भी उस युद्ध मे वर्त्तमान थे। इनका बनाया हुआ 'विष्णुविलास' नामक ग्रथ नायिका-भेद मे अति विचित्र है[1]।

इस कथन से यह सिद्ध हो जाता है कि बूंदी के लाल कवि, जिन्होंने 'विष्णुविलास' लिखा, छत्रसाल हाडा की मृत्यु के अवसर पर उक्त युद्ध मे वर्त्तमान थे, न कि 'छत्रप्रकाश' के रचयिता लाल कवि। साथ ही यदि मिश्रबन्धुओ द्वारा दी हुई लाल कवि की जन्म-तिथि १७१५ वि० (१६५८ ई०) को ठीक माना जावे तो छत्रसाल हाडा के निधन के वर्ष मे लाल कवि उपनाम गोरेलाल का जन्म हुआ था, अतः उनका उक्त युद्ध मे वर्त्तमान होना असम्भव है। इससे भी ग्रियर्सन के कथन की अवास्तविकता सिद्ध हो जाती है।

ग्रियर्सन ने अपने ग्रथ की रचना करने मे राग-सागरोद्भव 'रागकल्पद्रुम' की भी सहायता ली है[2]। उक्त ग्रथ मे हिंदी कवियों की नामावली मे लाल कवि का नाम नहीं दिया है पर ग्रथ-सूची मे 'छत्रप्रकाश' का उल्लेख किया गया है[3]। उसी ग्रथ मे दी हुई वर्णानुक्रमिक नाम सूचा[4] पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि लाल को व्यक्तिवाचक मानकर उन पृष्ठों का सकेत किया गया है जहाँ पर वह शब्द प्रयुक्त हुआ है। उक्त ग्रथ मे दिये हुए पदों मे से प्रमुख रूप मे परमानददास[5], कुम्भनदास[6], कृष्णदास[7] और कृष्णानन्द[8] के पदों मे लाल शब्द का प्रयोग किया गया है। कहने की आवश्यकता नही है कि उक्त सभी पदों मे लाल शब्द कृष्ण, बालक, नायक आदि अर्थों मे प्रयुक्त हुआ है, न कि किसी व्यक्ति विशेष के लिए। कुछ भी हो यह शब्द लाल कवि का पर्यायवाची किसी भी दशा में नही हो सकता।

ऐसा प्रतीत होता है कि ग्रियर्सन ने उक्त ग्रथ में प्रयुक्त इस लाल शब्द एव उसमें उल्लिखित 'छत्रप्रकाश' के कारण अथवा 'शिवसिंहसरोज' में वर्णित बूंदी के लाल कवि को भ्रमवश मऊवासी और 'छत्रप्रकाश' के रचयिता लाल कवि मानकर उक्त भूल कर दी है। उनके इसी भ्रामक

---

[1] शिवसिंहसरोज, कवियों का जीवन-चरित्र, पृ० ११४

[2] वर्नाक्यूलर लिट्रेचर अव् हिंदुस्तान, कवि संख्या ६३८, पृ० १३६-४१

[3] रागकल्पद्रुम, दूसरा खंड, ग्रंथकार और ग्रथ का संक्षिप्त परिचय, पृ० ४-५, तथा राग सागर की सूचना, पृ० २-३

[4] वही, दूसरा खड, वर्णानुक्रमिक नाम सूची, पृ० १५

[5] रागकल्पद्रुम, दूसरा खड, पृ० ६० (दो पदों में)

[6] वही, पृ० १३४ (केवल एक पद में)

[7] वही, पृ० १३४ (दो पदों में)

[8] वही, पृ० २५७ (एक पद मे)

कथन को ठीक समझकर सीताराम[१], श्यामसुन्दर दास[२] तथा मिश्रबधुओं[३] ने उसे सत्य मान लिया है।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि छत्रसाल हाडा की मृत्यु के समय वर्त्तमान रहनेवाले और 'विष्णुविलास' के रचयिता लाल कवि बूँदी निवासी थे और मऊवासी छत्रसाल बुंदेला के दरबार मे रहनेवाले तथा छत्रप्रकाशकार लाल कवि उपनाम गोरे लाल उनसे भिन्न व्यक्ति थे, जिनका औरंगजेब के उत्तराधिकार युद्ध से कोई सबध नही था।

लाल कवि रचित निम्नलिखित ग्रथ प्रसिद्ध हैं :—

१. छत्रप्रशस्ति २ छत्रछाया ३. छत्रकीर्ति ४ छत्रछद ५. छत्रसालशतक ६. छत्र-हजारा ७. छत्रदड ८. छत्रप्रकाश ९. राजविनोद १०. विष्णुविलास[४] तथा ११. बरवै[५]।

ऊपर बतलाया जा चुका है कि 'विष्णुविलास' इनकी रचना नही है। इस ग्रंथ के रचयिता लाल कवि बूदीवाले थे। लाल कवि की वास्तविक कीर्ति का स्तंभ 'छत्रप्रकाश' ही है। छत्रसाल की आज्ञा से उन्होंने इस ग्रथ की रचना की थी, यथा :—

धन चंपति के औतरो पचम श्री छत्रसाल।
जिकी आज्ञा सीस धरि, करी कहानी लाल[६]॥

इन्होंने इस ग्रथ मे बुंदेल-वश की उत्पत्ति, चपति राय के विजय-वृत्तात, उनके उद्योग और पराक्रम, चपति राय के अतिम दिनों मे उनके राज्य का मुगलों के राज्य मे जाना, छत्रसाल का थोड़ी सेना लेकर अपने राज्य का उद्धार फिर क्रमशः विजय पर विजय प्राप्त करते हुए मुग़लों को नाकों-दम करना आदि घटनाओं (दिसबर, १७१० ई० तक की) का वर्णन किया है।[७]

श्रीधर (मुरलीधर)

श्रीधर अथवा मुरलीधर प्रयाग के रहनेवाले थे। ग्रियर्सन ने श्रीधर और मुरलीधर को दो भिन्न कवि मानते हुए यह लिखा है कि ये दोनों मिलकर कविता किया करते थे, पर वास्तव में वैसा नहीं है। 'जगनामा' की निम्न पक्ति से यह सिद्ध होता है कि श्रीधर का ही अन्य नाम मुरलीधर था।

श्रीधर मुरलीधर उरुक, द्विजवर वसत प्रयाग। (पक्ति ५)

ग्रियर्सन ने इस कवि का समय १६८३ ई० माना है, परंतु 'जगनामा' मे वर्णित घटना जनवरी, १७१३ ई० की है अतः श्रीधर इसी तिथि के लगभग (१७१३ ई०) वर्त्तमान रहे होंगे। इरविन महोदय का भी यही मत है।

---

[१] सेलेक्शस फ्राम हिंदी लिट्रेचर, भाग १, पृ० १०६।

[२] छत्रप्रकाश, भूमिका, पृ० १०।

[३] मिश्रबधु विनोद, द्वितीय भाग, पृ० ५४३।

[४] वही, पृ० ५४३।

[५] हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण, पहला भाग, पृ० ४०।

[६] छत्रप्रकाश, पृ० ६६।

[७] लाल कवि की जीवनी, हिंदी अनुशीलन, वर्ष चार, अंक १, चैत्र-ज्येष्ठ, २००८ वि०, पृ० ४५-८ में छप चुकी है।

श्रीधर ने कई ग्रथ लिखे थे। इनका एक ग्रंथ रागरागिनियों का, एक नायिकाभेद का एक जैनियों के मुनियों के वर्णन का, कुछ स्फुट श्रीकृष्ण-चरित की कविता, कुछ चित्रकाव्य, फर्रुखसियर का 'जगनामा' और उस समय के अमीर, राज्यकर्मचारियों तथा राजाओं की प्रशसा की कविता है। शिवसिंह तथा ग्रियर्सन ने इनके बनाये हुए 'कविविनोद' का वर्णन किया है[1]।

श्रीधर के जंगनामा में १६३० पक्तिया हैं। इसमे इसने फ़र्रुखसियर और जहादारशाह के युद्धों का वर्णन किया है।

सदानंद

सदानंद के विषय मे कुछ भी ज्ञात नहीं है। इन्होंने अपनी रचना में अपने सबध मे कुछ भी नही लिखा है। केवल इतना ही ज्ञात होता है कि वे अपने आश्रयदाता भगवतराय खीची के समकालीन थे और उन्होंने आँखों देखी घटनाओं का उल्लेख किया है[2]।

सदानद ने 'रासा भगवतसिंह' की रचना की है। इन्होंने अपने इस छोटे काव्य में अपने आश्रयदाता के अतिम युद्ध का वर्णन किया है। भगवतराय ने यह युद्ध नवम्बर, १७३५ ई० मे लडा था। अतएव यह कवि उक्त तिथि के आस-पास था, ऐसा अनुमान लगाना अनुचित न होगा।

सूदन

सूदन के जीवन के विषय मे विस्तृत विवरण का अभाव है। उनके 'सुजानचरित्र' मे केवल दो पंक्तियाँ आत्म-परिचायक है, जिनसे केवल इतना ही ज्ञात होता है, कि वे मथुरा निवासी माथुर चौबे थे और उनके पिता का नाम बसत था। वह छद निम्नलिखित है —

मथुरा पुर सुभ धाम माथुर कुल उतपति बर।
पिता बसंत सुनाम सूदन जानहु सकल कवि[3] ॥

ये भरतपुराधीश महाराजा बदन सिंह के पुत्र सुजान सिंह (सूरजमल) के राजकवि थे। इन्होंने अपने आश्रयदाता की प्रशसा मे 'सुजानचरित्र' नामक ग्रथ की रचना की है। इस कवि का समय अधकार के गर्त मे निहित है। 'सुजानचरित्र' मे सूरजमल के युद्धों की अगहन १८०२ वि० (२८ अक्टूबर-२७ नवम्बर, १७४५ ई०) से १८१० वि० (१७५३ ई०) तक की घटनायें वर्णित है। अतएव इस ग्रथ की रचना १८१० वि० (१७५३ ई०) के आस-पास हुई होगी। इस से सूदन के वर्तमानत्व का अनुमान लगाया जा सकता है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि सूदन ने अपने इस ग्रथ मे सुजानचरित्र के युद्धो आदि

---

[1] शिवसिंहसरोज, कवियों का जीवनचरित्र, संख्या ३५, पृ० १२३, मार्डन वर्नाक्यूलर लिट्रेचर अव् हिंदुस्तान, सं० १५६, १५७, पृ० ६५, जनरल अव् दि एशियाटिक सोसाइटी अव् बंगाल, सं० ६६, १९०० ई० पृ० १-३, सेलेक्शस फ्रॉम हिंदी लिट्रेचर, भाग १, पृ० १७७-८, जंगनामा, भूमिका पृ० २१-२, हिंदी साहित्य का इतिहास, नवीन संस्करण, पृ० ३३२-३, वीर-काव्य, पृष्ठ ३२८-३१, मिश्रबंधुविनोद, भाग २, पृ० ५४०-१

[2] नागरीप्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग ५, अक ३, पृ० ११३

[3] सुजानचरित्र, प्रथम जग, छं० १०, पृ० ३

का विस्तृत वर्णन किया है पर उनके सम्पूर्ण जीवन का विवरण उसमे अप्राप्य है। केवल ऊपर बतलाये हुए समय में सूरजमल द्वारा लडे गये युद्धों का ही वर्णन उसमें मिलता है। ग्रथ के आरम्भ में उसने १७५ पूर्ववर्ती एव समकालीन कवियो के नामों का भी उल्लेख किया है[1]।

गुलाब कवि

'करहिया कौ रायसौ' के रचयिता गुलाब कवि माथुर चतुर्वेदी, आतरी निवासी थे। इसमे वर्णित युद्ध उनके समक्ष हुआ था। और युद्ध के दस मास पश्चात् की स्वय उनकी हस्तलिखित प्रति मे वह प्रति (जो पत्रिका[2] मे प्रकाशनार्थ भेजी गई थी) लिखी गई है। यह प्रति कवि के वंशज प० चतुर्भुज जी वैद्य आतरी के यहा सुरक्षित है।

इस ग्रथ में कवि के आश्रयदाता करहिया के प्रमाणों और भरतपुराधीश जवाहरसिंह के मध्य हुए युद्ध का वर्णन है। कवि द्वारा दी हुई उस युद्ध की तिथि १५ अगस्त, १७६७ ई० है[3] इसी समय गुलाब वर्तमान रहे होंगे।

पद्माकर

पद्माकर तैलग ब्राह्मण थे। इनके पूर्व पुरुष गोदावरी के निकट रहा करते थे। इनके वश के मूल पुरुष मधुकर भट्ट अत्रिगोत्रीय और तैत्तरीय शाखा के युजुर्वेदी ब्राह्मण थे। १६१५ वि० (१५५८ ई०) मे महारानी दुर्गावती के राज्य-काल मे गढा माडला मे पद्माकर के पूर्वज आकर रहने लगे। इनमे से कुछ ने गोस्वामी विट्ठलनाथ जी का आश्रय ग्रहण किया। इनके यहाँ बसने पर एक समुदाय की दो शाखाये भी हो गई। जो मथुरास्थ और गोकुलस्थ के नाम से प्रसिद्ध हैं। पद्माकर मथुरास्थ शाखा के थे।

पद्माकर के पिता मध्यप्रातांतर्गत् सागर मे रहा करते थे। इनके पूर्व पुरुषों का निवास उत्तर मे आने पर पहले-पहल बादा मे हुआ। इसीलिये ये लोग बादावाले भी कहलाये। पद्माकर का जन्म १८१० वि० (१७५३ ई०) सागर मे हुआ था।

पद्माकर ने अपने पिता से कविता तथा मत्रसिद्धि का अभ्यास किया। तत्कालीन सागर-नरेश रघुनाथ राव अप्पा साहब की प्रशसा मे एक कविता सुनाकर एक लक्ष मुदा प्राप्त की थी। कुछ समय पश्चात् ये बादा मे जाकर रहने लगे, जहाँ इन्होने महाराज जैतपुर तथा सुगरा निवासी नोने अर्जुन सिंह को अपना शिष्य बनाया।

वहा से पद्माकर दतिया के महाराज पारीक्षत के दरबार मे गये। दतिया से होकर यह रजवान के गोसाईं अनूपसिंह उपनाम हिम्मतबहादुर के यहा गये। कहा जाता है कि १८५५ वि० (१७६८ ई०) तक पद्माकर हिम्मतबहादुर के यहा रहे।

---

[1] शिवसिंहसरोज, कवियों की जीवनी, स० ६६, पृ० १६६-७, माडर्न वर्नाक्यूलर लिट्रेचर अव् हिंदुस्तान, सं० ३६७, पृ० ६७, मिश्रबंधुविनोद, भाग २, पृ० ७०६-१७, हिंदी साहित्य का इतिहास, नवीन संस्करण, पृ० ३६२-५; सुजानचरित्र, कविपरिचय, पृ० १-६, सेलैक्शंस फ्रॉम हिंदी लिट्रेचर, भाग १, पृ० २४१-२, वीरकाव्य, पृ० ३६१-६

[2] नागरीप्रचारिणी पत्रिका, नवीन सस्करण, भाग १०, पृ० २७६

[3] देखिए 'करहिया कौ रायसौ' की ऐतिहासिकता

तत्पश्चात् यह सितारे गये और महाराज रघुनाथराव (राघोवा) के दरबार में पहुँचे। १८५६ वि० (१७६६ ई०) में सागर के रघुनाथ राव ने इन्हे फिर अपने यहा बुलाया।

इसके अनतर बाँदा होते हुये यह जयपुर के सवाई महाराज प्रतापसिंह के यहां गये। महाराज प्रतापसिंह की मृत्यु के उपरात यह पुनः बाँदा लौट आये। कुछ समय के पश्चात् यह फिर जयपुर के राजा जगत्सिंह के दरबार में पहुँचे। महाराजा ने पद्माकर को अपना राजकवि बनाया।

यह जयपुर से उदयपुर गये। उन दिनों वहाँ महाराज भीमसिंह राज्य करते थे। एक बार जयपुर से बाँदा जाते समय बूँदी नरेश ने इनका बडा आदर दिया था। इसके अनतर यह तत्कालीन ग्वालियर नरेश दौलतराव सिंधिया के यहा गये। वहा दौलतराव के एक मुसाहिब ऊदा जी ने भी इनका अच्छा आदर किया था। श्वेत कुष्ठ से आक्रात होने पर यह गगा-सेवन के लिए कानपुर चले गये। वहा इनका कुष्ठ नष्ट हो गया। पर इसके बाद केवल छः मास तक और यह जीवित रहे। अत में यहीं १८६० वि० (१८३३ ई०) में स्वर्गवासी हुए।

पद्माकर के लिखे हुए कुल ६ ग्रथ बतलाये जाते हैं:—

१. हिम्मतबहादुर-विरुदावली —यह ग्रथ पद्माकर की आरम्भिक रचनाओं में से माना जाता है। उन्होंने इस ग्रथ में हिम्मतबहादुर तथा अर्जुनसिंह नोने के बीच लडे गये युद्ध का वर्णन किया है। यह युद्ध १७६२ ई० में हुआ था। कहा जाता है कि पद्माकर उस समय हिम्मतबहादुर के साथ थे और उन्होंने अपनी इस रचना मे आँखों देखा विवरण दिया है।

२. जगद्विनोद —यह रस सम्बन्धी ग्रथ है। पद्माकर ने इस ग्रंथ की रचना जयपुराधीश महाराज जगत् सिंह की आज्ञा से की थी। उन्होंने इस ग्रथ मे अपने आश्रयदाता की प्रशंसा के उपरांत नायिकाभेद तथा रस का निरूपण किया है।

३. पद्माभरण—यह अलकार विषय एक छोटा सा ग्रथ है। इसकी रचना जयदेवकृत चन्द्रालोक के आधार पर की गई है।

४. रामरसायन—यह वाल्मीकीय रामायण के प्रारम्भ के तीन काडो का हिन्दी अनुवाद है। कुछ लोगों का कहना है कि यह ग्रथ इनके दासी-पुत्र का रचा हुआ है। पद्माकर ने एक सोनारिन रख ली थी।

५. प्रबोधपचासा—यह ग्रथ पद्माकर के ज्ञान वैराग्य तथा भक्ति विषय के ५१ कवितों का संग्रह है।

६. गगालहरी—इसमे ५६ छदों में गगा की कीर्ति का वर्णन है।

७. हितोपदेश—ग्वालियर में दौलतराव के मुसाहिब उदौ जी के कहने से सस्कृत के हितोपदेश का गद्य-पद्यात्मक भाषानुवाद पद्माकर ने किया है।

८. आलीजाह-प्रकाश (आलीजाह सागर) -पद्माकर ने दौलतराव सिंधिया के नाम पर नायिकाभेद के इस ग्रथ की रचना की। कहा जाता है कि इसमें और 'जगद्विनोद' में बहुत कम अंतर है। 'जगद्विनोद' के ही छद कहीं-कही थोड़े शब्दातर से और अधिकाश में उन्हीं शब्दों मे इसमे रखे हैं। वर्णन-पद्धति में भी कोई अतर नहीं है। हा, आरम्भ मे दौलतराव की प्रशंसा के

छंद रखे हुए हैं। यथास्थान कुछ अंतर भी पाया जाता है। 'आलीजाह-प्रकाश' की रचना १८७८ वि० (१८२१ ई०) में हुई थी। पद्माकर के ग्रंथों में केवल इसी का रचना काल दिया गया है।

६. प्रतापसिंह-विरुदावली—कुछ लेखकों ने इस ग्रंथ का नाम 'सवाई जयसिंह-विरुदावली' माना है, पर वास्तव में यह 'प्रतापसिंह-विरुदावली' है। यह पद्माकर के वंशजों (जयपुर निवासी) के यहां सुरक्षित है। मुझे इसे देखने का अवसर मिला है। यह ६८ पृष्ठों का ग्रंथ है जिससे सवाई महाराज प्रतापसिंह के यश का वर्णन रोचक शैली में किया गया है।

इसके अतिरिक्त पद्माकर की कुछ फुटकर रचनाएँ भी यत्र-तत्र देखने और सुनने में आती हैं।[1]

पद्माकर की उपर्युक्त रचनाओं में से 'हिम्मतबहादुर-विरुदावली', 'जगद्विनोद' के आश्रय-दाता सम्बंधी छंद तथा 'प्रताप विरुदावली' का इस धारा के अंतर्गत अध्ययन किया गया है।

जोधराज

हिंदी के अधिकांश कवियों के समान जोधराज का भी जीवन अप्राप्य है। इन्होंने अपने ग्रंथ में आत्म-परिचयात्मक जो छंद लिखे हैं उनका सारांश यह है कि यह (अलवर राज्यांतर्गत) नीम राणा के चौहान वंशीय राजा चंद्रभाण के आश्रित थे। इनके पिता का नाम बालकृष्ण था। इनका निवासस्थान बीजवार ग्राम था। जोधराज अत्रि गोत्रीय गौड़ वंश कुलोत्पन्न ब्राह्मण थे। यह काव्य-कला और ज्योतिष-शास्त्र के पूर्ण पंडित थे। इन्होंने अपने आश्रयदाता की आज्ञा से 'हम्मीररासो' की रचना की जिसमें रणथम्भौर के राव हम्मीर और अलाउद्दीन खिलजी के युद्धों का वर्णन है।[2]

जोधराज का केवल एक ही ग्रंथ 'हम्मीररासो' प्राप्त है, जिसकी रचना-तिथि के सम्बंध में उन्होंने यह दोहा दिया है :—

चंद्र नाग वसु पंच गिनि संवत् माधव मास।
शुक्ल सुतृतिया जीव जुत ता दिन ग्रंथ प्रकाश ॥[3]

नागों की संख्या साधारणतया ८ मानी गई है, यथा :—

अनंतो वासुकिः पद्मो महापद्मश्च तक्षक।
कुलीरः कर्कटः शंखश्चाष्टौ नागाः प्रकीर्तिताः ॥[4]

---

[1] शिवसिंहसरोज, कवियों की जीवनी, सं० २, पृ० ७२, मॉडर्न वर्नाक्यूलर लिट्रेचर ऑव् हिंदुस्तान, सं० ५०६, पृ० ११०, मिश्रबंधुविनोद, द्वि० भाग, पृ० ८६८-६१०, हिंदी-साहित्य का इतिहास, नवीन संस्करण, पृ० ३०७-११; द्वादश हिंदी-साहित्य-सम्मेलन, कार्य-विवरण दूसरा भाग (निबंध माला) संवत् १९७६ वि०, पृ० ७०-६२, हिम्मतबहादुर-विरुदावली, पद्माकर का जीवन चरित्र, पृ० १-१७; पद्माकर-पचामृत, आदर्श, पृ० ५-२४, पद्माकर की काव्य-साधना, पृ० १४-६२, सेलेक्शंस फ्राम हिंदी लिट्रेचर, भाग १, पृ० ३३३-५, वीरकाव्य, पृ० ४४४-५७

[2] हम्मीररासो, छं० ५-१३, वही, भूमिका पृ० १, मिश्रबंधुविनोद, द्वि० भाग, पृ० ६०२-४; हिंदी-साहित्य का इतिहास, नवीन संस्करण, पृ० ३५१-२, सेलेक्शंस फ्राम हिंदी लिट्रेचर, भाग १, पृ० १६५-६; वीरकाव्य, पृ० ४०८-६

[3] हम्मीररासो, छं० ६६८ [4] मिश्रबंधुविनोद, द्वि० भाग, पृ० ६०३

अर्थात् अनत, वासुकि, पद्म, महापद्म, तक्षक, कुलीर, कर्कट तथा शंख ये ८ नाग होते हैं।

विलियम महोदय[1] नाग को ७ की सख्या का सूचक मानते हैं। श्री अगरचद नाहटा[2] के मतानुसार उक्त शब्द ७ और ८ दोनों सख्याओं के अर्थ मे प्रयुक्त होता है।

नाग को ७ का पर्यायवाची मानने से रासो की रचनातिथि स० १७८५ वि० वैशाख शुक्ला ३, जीव (गुरुवार) ठहरती है। गणना करने पर ज्ञात होता है कि सं० १७८५ वि० मे वैशाख शुक्ल तृतीया को गुरुवार नही पडा था।

नाग का अर्थ ८ लेने से जोधराज-कथित तिथि १८८५ वि० वैशाख शुक्ल तृतीया बृहस्पतिवार आती है :—

वैशाख अमाचद्र का	२	अप्रैल १४.५७
मध्यस्थ समाप्ति काल		
तीन तिथियो का सम-	२+१	२·९५
स्त समाप्ति काल	५	१७५२

=बृहस्पतिवार, १७ अप्रैल, १८२८ ई०

उपर्युक्त गणना से सिद्ध होता है कि जोधराज ने 'हम्मीररासो' की रचना स० १८८५ वि०, वैशाख शुक्ल ३, बृहस्पतिवार तदनुसार, १७ अप्रैल १८२८ ई० को की थी।

शिवसिंह-सरोज में इस ग्रथ का उल्लेख नही है। ग्रियर्सन महोदय ने इसका समय १४२० वि० (१३६३ ई०) लिखकर इसकी शुद्धता पर सदेह प्रकट किया है।[3]

इसकी रचना-तिथि का विवेचन करते हुए मिश्रबधुओं ने लिखा है कि सम्भवतः अनंत को ईश्वर समझकर इनको नागों की गणना से निकालकर नाग से ७ का बोध कराया हो। जो हो, यथार्थ सवत् १७८५ (१७२८ ई०) ही जँचता है।[4]

उक्त उद्धरण पर विचार करने से विदित होता है कि मिश्रबधुओं ने केवल अनुमान का ही आश्रय लिया है अतएव उनके द्वारा स्वीकृत तिथि अमान्य है।

बाबू श्यामसुंदरदास जी ने इसका समय सवत् १७८५ वि० (१७२८ ई०) माना है। बाबू साहब को खवा (जयपुर) के महाराजकुमार ने एक पत्र मे लिखा था कि नीमराणा (नीवागढ) के वर्तमान महाराज श्री १०८ श्री जनकसिह जी राजा चद्रभान की दसवी या ग्यारहवीं पीढी में हैं। एक पीढी लगभग बीस वर्ष की पडती है, सो इस हिसाब से भी ग्रथ-निर्माण का ठीक सवत् १७८५ वि० (१७२८ ई०) जान पडता है।[5]

ऐतिहासिक ठोस प्रमाणों से रहित, अनुमान पर अवलम्बित, उक्त पत्र के आधार पर आश्रित यह कथन भ्रामक अतः त्याज्य है।

लाला सीताराम[6] ने इस ग्रथ की रचना तिथि १७८५ वि० (१७२८ई०) और आचार्य

---

[1] प्रैक्टिकल संस्कृत-इंगलिश-डिक्शनरी, पृ० ५३६

[2] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ४६, १९९८ वि०, पृ० ११९

[3] मिश्रबधुविनोद, द्वि० भाग, पृ० ६०२ [4] वही। [5] वही।

[6] सेलेक्शंस फ्रॉम हिंदी लिट्रेचर, भाग १, पृ० १९५

रामचद्र शुक्ल[1] ने १८७५ वि० (१८१८ ई०) मानी है। कहने की आवश्यकता नहीं कि अन्य विद्वानों के समान उक्त महानुभावों के मत भी निराधार ही हैं।

ऐसी परिस्थितियों मे गणना द्वारा सिद्ध बृहस्पतिवार, वैशाख शुक्ल तृतीया, १८८५ वि० तदनुसार १७ अप्रैल, १८२८ ई० ही 'हम्मीररासो' की रचना-तिथि ठीक ठहरती है।

'हम्मीररासो' की उक्त रचना-तिथि के आधार पर जोधराज का उक्त तिथि के आस-पास वर्तमान रहना सिद्ध होता है।

---

[1] हिंदी-साहित्य का इतिहास, नवीन संस्करण, पृ० ३२१

अध्याय २

कथानक

सामान्य परिचय—कथानक की दृष्टि मे अध्ययन की सुविधा के लिए आलोच्यग्रंथों को निम्नलिखित वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है :—

(१) प्रबध-काव्य :—

(अ) महाकाव्य—वीरसिंहदेवचरित, राजविलास, छत्रप्रकाश, सुजानचरित्र, हम्मीररासो।

(आ) खंडकाव्य—गोराबादल की कथा, जगनामा, रासा भगवतसिंह, करहिया को रायसौ, हिम्मतबहादुर-विरुदावली।

(२) मुक्तक ग्रथ—रत्नबावनी, ललितललाम, शिवराजभूषण, शिवाबावनी, छत्रसालदशक, भूषण की फुटकर कविता, जगत्विनोद, प्रतापविरुदावली।

महाकाव्यों की कथा-वस्तु मे कवियो ने अपने चरित्र-नायकों के जीवन की अधिकाधिक घटनाओं का समावेश किया है। उन्होंने ग्रथ के आरंभ मे नायकों के पूर्वजों के उल्लेख किये हैं, जिन पर किंवदतियो, कल्पना और चारणपरंपरा का अधिक प्रभाव होने के कारण उनका मुख्य कथा-वस्तु से विशेष सबध नही है।

इन कवियो ने अपने आश्रयदाताओ तथा उनसे संबधित पात्रो की अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशसा करके कथानकों को अधिक अस्वाभाविक बना दिया है। जान-बूझकर बार-बार ऐसे प्रसग लाये गये हैं जिनसे उन्हे दान, आत्मश्लाघा, शौर्य आदि की प्रशसा करने का अवसर मिले। फल यह हुआ है कि इन ग्रथों के कथानकों के पूर्वापर सबंध की रक्षा नही हो सकी है तथा उनमे अरोचकता एव नीरसता का समावेश हो गया है। ऐसे अशों की 'राजविलास' और 'हम्मीररासो' में भरमार है।

कुछ कवियों ने विविध-विषयों की लबी सूचियाँ गिनाने की परिपाटी का अनुकरण किया है तथा व्यक्तियों और वस्तुओं के नामों की बार-बार आवृत्ति की है, जिसके कारण कथानक को भारी ठेस पहुँची है। इन कवियों की इस पद्धति का कारण उनकी पाडित्यप्रदर्शन-भावना प्रतीत होती है।

इस काल मे ऐसे काव्यों का भी निर्माण हुआ है जिनमें ऐतिहासिक वर्णन की वास्तविकता के साथ ही कथानक को निर्दोष एवं काव्योचित गुणों से युक्त करने का भी ध्यान रक्खा गया है। इस दृष्टि से 'वीरसिंहदेवचरित' तथा 'छत्रप्रकाश' का विशिष्ट स्थान है।

इन कवियों ने ऐतिहासिक कथावस्तु को अपने काव्यों के लिए चुनकर उनमे पौराणिक, काल्पनिक एव परपरागत घटनाओं का समावेश करने के अतिरिक्त 'पृथ्वीराजरासो', तुलसीकृत 'रामचरितमानस' आदि से भी पर्याप्त सहायता ली है। इसके फलस्वरूप ग्रथों मे रोचकता और सरसता के समावेश के साथ ही साथ कवियों को अपनी काव्य-शक्ति प्रदर्शित करने के लिए अधिक स्वतत्र क्षेत्र मिल गया है। पर ऐसा करने मे कहीं-कहीं पर प्रबध-निर्वाह सबधी भूलें भी हो गई हैं जैसा कि 'हम्मीररासो' के देखने से विदित होता है।

इन ग्रथों मे जीवन के विविध-विषयों की झाँकी देखने को मिलती है। प्रकृति-वर्णन, ऋतु-चित्रण, नदी-वर्णन, धार्मिक उपदेशों का विस्तृत विवरण, राजनीति, जी को उबा देनेवाले संवाद,

दैवीशक्ति-चित्रण आदि की भी इनमे भरमार है, जिनके कारण अधिकाश स्थलों पर कथावस्तु-प्रवाह मद पड़ गया है।

खड-काव्यों में कवियों ने प्राय: एक प्रमुख घटना ही को काव्य का विषय बनाया है। कुछ कवियों ने अपने ग्रथों को रोचक बनाने के लिए कथावस्तु को आकस्मिक एवं विस्मयपूर्ण बनाने के लिए कल्पना की सहायता ली है। ऐसा करने मे उनसे कुछ ऐतिहासिक भूलें भी हो गई हैं और वे पूर्वापर सबध-निर्वाह करने मे भी असफल रहे है, जैसा कि 'गोराबादल की कथा' से स्पष्ट होता है। साथ ही नायिका-भेद की परपरा से प्रभावित होने के कारण जटमल और भी असफल रहा है।

कुछ ऐसे भी खडकाव्य लिखे गये हैं जिनमे कोरी प्रशसा, नामों की बार-बार की आवृत्ति आदि के कारण ग्रथ नीरस और कथानक का प्रवाह नष्ट हो गया है। उदाहरणार्थ 'जंगनामा' और 'हिम्मतबहादुर-विरुदावली' देखे जा सकते हैं।

पर कुछ ऐसे खडकाव्य भी मिलते हैं जिनमे कथानक के चित्रण मे उनके रचयिताओं को पर्याप्त मात्रा मे सफलता मिली है। जैसा कि 'रासा भगवत सिंह' और 'करहिया को रायसौ' से सिद्ध होता है।

मुक्तक काव्यो मे से कुछ ऐसे ग्रथ हैं जिनमे शिवाजी, छत्रसाल जैसे वीरों को आलबन बनाया गया है। इन ग्रथों मे इन पात्रो के जीवन के विस्तृत कार्य-कलापो के दर्शन हो जाते है। इनमे से अधिकाश ग्रथो मे शौर्य, वीरता, प्रताप, युद्ध, तलवार आदि के सजीव चित्रण किये गये हैं, जिनमे वीररस का अच्छा परिपाक हुआ है। इसके लिए भूषण के ग्रथ तथा 'रत्नबावनी' विशेष उल्लेखनीय हैं। शेष ग्रथों मे आश्रयदाताओं के दानादि की ही विशेष प्रशसा की गई है।

आलोच्यकालीन सभी ग्रथो के कवियो ने वीरता, रौद्र, शृगार, दया, दान, धार्मिकता आदि भावनाओं के चित्रण के लिए कथानक का सफलतापूर्वक प्रयोग किया है। पर यह मानना पडेगा कि ऐसा करने मे कही-कही पर ये कविगण औचित्य की सीमा का उल्लघन कर गये हैं।

ऊपर दिये हुए सक्षिप्त सामान्य परिचय से यह स्पष्ट हो जाता है कि कथानक प्रयोग की दृष्टि से ये कवि एक बँधी हुई धारा का ही अनुकरण करते रहे है। समानान्तर रूप से प्रवाहित होनेवाली रीति की परम्परा से उनमे से अधिकाश कवि न बच सके। साथ ही दरबारी चारण-भाट-परिपाटी भी उनके सामने थी। दान और लोभ की लिप्सा भी उनको पथभ्रष्ट करने में न चूकी। ये ही कारण थे जिनके वशीभूत होकर ये कवि प्रबध-निर्वाह मे उतने सफल नहीं हो सके जितना उन्हे होना चाहिए था। ऐसा होते हुए भी उनमे से असाधारण प्रतिभावाले कवि परम्परा से ऊँचा उठने मे आशातीत सफलता प्राप्त करने मे सफल हुए हैं। इस दृष्टि से गोरेलाल और भूषण के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

उपर्युक्त प्रमुख प्रवृत्तियों को विस्तृतरूप से स्पष्ट करने के लिए आगे प्रत्येक ग्रंथ का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जा रहा है :—

'वीरसिंहदेवचरित' और 'रत्नबावनी'

जब किसी काल्पनिक घटना को लेकर कवि अपने काव्य का ढाँचा खड़ा करता है तो उसे प्रबन्ध-कल्पना के चातुर्य को दिखाने का अधिक अवसर मिलता है। ऐतिहासिक घटनावली के आधार पर रचे गये ग्रंथों में विशेष परिवर्त्तन नहीं किये जा सकते। 'वीरसिहदेवचरित' के कथानक पर

विचार करने से यह बात अधिक दृढ हो जाती है। केशव का ध्यान कथानक को रोचक बनाने की ओर उतना नही गया है जितना कि ऐतिहासिक घटनावली के क्रमानुसार वर्णन की ओर।

केशव ने 'वीरसिंहदेवचरित' की रचना का उद्देश्य इस प्रकार दे दिया है :—

नव रस मय सब धर्म मय राजनीति मय मान।
वीर चरित्र विचित्र किय केसवदास प्रमान॥[1]

उक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि केशव का ध्यान प्रबन्ध-निर्वाह की ओर उतना नही था जितना कि उपर्युक्त बातों की ओर।

केशव ने इस ग्रथ के आरम्भ मे दान और लोभ मे तर्क-वितर्क द्वारा जो दीर्घ सवाद कराये हैं[2], उनसे कथानक को विशेष गति प्राप्त नही होती और न उनका मुख्य घटनावली से कोई विशेष सबध ही है। कवि ने इस प्रसग द्वारा अपनी जानकारी और वाक्चातुर्य को प्रकट करने की ही प्रवृत्ति प्रदर्शित की है।

आगे चलकर केशव ने वीरसिंहदेव के पूर्वजों का वर्णन[3] करने मे नामों का उल्लेख अस्पष्ट और साधारण ढग से किया है। उसमे चरित्रविकास का एकदम अभाव है।

इससे आगे के प्रसगों मे दान और लोभ के पूछने पर विन्ध्यवासिनी देवी आगे की घटनाओं का वर्णन करती चलती हैं, इससे अधिकाश स्थलों पर नाट्कीय त्वरा और रोचकता का समावेश हो जाने के कारण कथानक की नीरसता एव इतिवृत्तात्मकता प्रचुर मात्रा मे कम हो गई है।[4]

कहीं-कहीं पर केशव ने प्रासगिक घटनाओं का उल्लेख इसलिए किया है जिससे उनके चरित्रनायक का मार्ग प्रशस्त हो जाये, उदाहरणार्थ मेवाड से अपने सेनापतियों के लौट जाने पर अकबर चिन्तित होकर बुन्देलखड से आगरा चला गया और वीरसिंह देव ने शाति की साँस ली।[5]

केशव ने अपने कथानक के वर्णन मे यत्र-तत्र पात्रों के चरित्र और स्वभाव के अनुरूप भी वर्णन किये हैं। जब अबुल्फजल् वीरसिंहदेव के प्रदेश मे होकर जा रहा था उस समय का वर्णन कवि की उक्त प्रवृत्ति का परिचय देता है, यथा :—

चले कूंच कै अपने जोर
आगे दीनी रसद चलाइ।
पीछे आपुनु चले बजाइ॥[6]

इत्यादि पंक्तियों से शेख की निर्भीकता आदि पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। आगे चलकर शेख और पठान के वार्त्तालाप[7] से भी अबुल्फजल् के कतिपय गुणों का ज्ञान पाठक को हो जाता है, पर युद्ध-भूमि मे इस प्रकार की बातचीत प्रायः अस्वाभाविक होती है।

केशव ने वीरसिंह और सलीम के चरित्रों को विकसित करने के लिए ही उन दोनों के प्रयाग में मिलने के प्रसग की कल्पना की है।[8] अबुल्जफल् के मरण-समाचार के ज्ञात होने पर अकबर

---

[1] वीरसिंहदेवचरित, छं० ६, पृ० २ [2] वही, पृ० १-१३ [3] वही, पृ० १४-६
[4] वही, पृ० १६, २०-१, २८, ४४, ५५, ५६, ७२ [5] वही, पृ० २८ [6] वही, पृ० ३४-६
[7] वही, पृ० ३४-६ [8] वही, पृ० २६-३४

के दुःख, शोक, क्रोध आदि का चित्रण करके केशव ने अपनी भावुकता, चरित्र-चित्रण-पटुता एवं कथानक के चरित्र-चित्रण की दृष्टि से सफल प्रयोग का परिचय दिया है।[1] यद्यपि इस प्रसग में शोक के साथ शृङ्गार का भी वर्णन हो जाने से रसाभास की झलक आ गई है तो भी पात्रों की भावनाओं का उत्तम चित्रण हुआ है।

अबुल्फ़ज़ल् की मृत्यु का समाचार मिलने पर जहाँगीर ने वीरसिंहदेव को राज्याभिषेक देकर[2] अकबर द्वारा माँगने पर वीरसिह देव को सम्राट् के समक्ष उपस्थित न करके[3] और स्वय सम्राट् बनने पर उन्हे विविध सम्मान प्रदान करके[4] सलीम ने अपनी कृतज्ञता, गुणग्राहकता एव सद्शीलता का अनुपम परिचय दिया है। केशव ने इन अवसरों को अपनी पैनी दृष्टि से पहिचान कर उसके अनुरूप ऐतिहासिक तथ्यों का प्रयोग किया है।

इसके अतिरिक्त सगम-वर्णन[5], वीरसिह और राजसिंह के युद्ध का वर्णन[6], ऋतु-वर्णन[7], बेतवा-वर्णन[8], उपदेश[9] आदि मे केशव उपमा, उत्प्रेक्षा, सदेह आदि अलकारो मे इतने बहगये हैं कि कथानक की धारा अग्रसर होती हुई दिखलाई नहीं देती है। इन स्थलों पर पाठक को ऐसा प्रतीत होने लगता है कि मानो वह अलकार का पाण्डित्यपूर्ण कोई ग्रथ पढ रहा है, प्रबध-काव्य नही।

इसी प्रकार भुवपाल और क्षेत्रपाल का दीर्घ वार्त्तालाप[10] शरीर की नश्वरता, मृत्यु की निश्चितता, सेवा-कार्य की महत्ता, सामाजिक दशा, क्षत्रियत्व के गुण, गाय, द्विज, मित्रादि की रक्षा आदि के विवेचन से परिपूर्ण है, जिससे कथानक की शृखला विशृखलित हो जाती है। इस प्रकार के सूक्ष्म विवेचन युद्ध-क्षेत्र मे सभव नही और न वे स्वाभाविक ही लगते हैं।

उपर्युक्त कतिपय स्थलों के अतिरिक्त अधिकाश स्थलों पर लेखक ने इतिवृत्तात्मक वर्णन-शैली को ही अपनाया है, जिसका कारण कथावस्तु का ऐतिहासिक होना ही है।

'वीरसिंहदेवचरित' के कथानक के सबध मे ऊपर जो कुछ कहा गया है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि केशव मे कथानक-चित्रण की पटुता थी, जिसका उन्होंने यथावसर परिचय भी दिया है। पर उक्त-ग्रथ की ऐतिहासिक वस्तु, कवि की अलकार-प्रियता एव पांडित्य-प्रदर्शन की प्रवृत्ति के कारण केशव को इस ग्रथ के कथानक-चित्रण मे उतनी सफलता नही मिली जितनी कि मिलनी चाहिए थी। इतना होते हुए भी उन्होंने प्रबध-कल्पना का पर्याप्त परिचय दिया है।

रत्नबावनी

केशव कृत यह ग्रथ मुक्त-पद्धति मे लिखा गया है। इसमे मधुकरशाह के १६ वर्षीय पुत्र रत्नसेन की वीरता का वर्णन है। कवि ने उपयुक्त आलबनों और उद्दीपनों के वर्णनों द्वारा वीर रस का पूर्ण परिपाक करने की सफल चेष्टा की है। फुटकर रचना होते हुए भी नायक के विशिष्ट गुणों का क्रमिक विकास पाठक के हृदय-पटल पर अंकित हो जाता है, और इसके पठन में खड-काव्य का सा आनद आने लगता है।

---

[1] वीरसिंहदेवचरित, पृ० ३८-४० [2] वही, पृ० ३७-८ [3] वही, पृ० ४५ [4] वही, पृ० ५८-६ [5] वही, पृ० ३०-२ [6] वही, पृ० ५०-१ [7] वही, पृ० ६७ ६ [8] वही, पृ० ६६-७० [9] वही, पृ० ७०-१ [10] वही, पृ० ७६-८१

गोराबादल की कथा

जटमल कृत 'गोराबादल की कथा' का कथानक ऐतिहासिक होते हुए भी उसमें रोचकता लाने के लिए पर्याप्त काल्पनिक अश वर्तमान है। ग्रथ के आरभ मे राणा रत्नसेन और भाट की वार्ता[1] मे नाटकीय त्वरा के दर्शन होते है। योगी का आगमन, उसकी सहायता से मृग-चर्म पर उडकर सिहलद्वीप पहुँचना तथा रत्नसेन को पद्मावती की प्राप्ति के उपाय[2], एकदम असभव तथा आकस्मिक घटनाएँ हैं, पर इनसे कथानक मे विस्मय, चित्ताकर्षकता और रोचकता का समावेश हो गया है। इस प्रकार की घटनाएँ काल्पनिक जगत् मे ही होती हैं, व्यावहारिक क्षेत्र मे उनका विद्यमानत्व दुष्कर होता है।

जटमल ने चरित्र-चित्रण की दृष्टि से भी कथानक मे परिवर्तन किये है। मृगया खेलते समय प्यास से आकुल राजा के कष्ट निवारणार्थ राघव चेतन द्वारा पद्मिनी की मूर्त्ति निर्मित करना, रत्नसेन को उससे अप्रसन्न करने के लिए अधिक स्वाभाविक कारण उपस्थित करता है।[3]

चित्तौड से निकाले जाने पर राघव का वैरागी बनकर सयोग से दिल्ली की वाटिका मे पहुँचना, आखेट के लिए गए हुए अलाउद्दीन से अचानक भेंट हो जाना, भारत-सम्राट् के आग्रह करने पर नगर मे प्रविष्ट होने के लिए राघव का स्वीकृति देना, शशा पर हाथ फेरते हुए कोमलता का प्रसग आ जाने पर पद्मिनी का उल्लेख[4] राघव के चरित्र को अधिक निखार देते हैं। उसके ऊपर जायसी ने राणा से प्रतिशोध लेने का जो कलक लगाया है, उससे जटमल ने राघव को मुक्त कर दिया है। इसी प्रकार अलाउद्दीन की बेगमो के प्रतिबिंब के तेल मे दर्शन करना भी[5] उसके चरित्र को ऊँचा उठाने लगता है।

राणा के द्वारा अलाउद्दीन को पद्मिनी के स्थान पर दासी दिखाने की कल्पना[6] तथा अलाउद्दीन द्वारा दिये गए कष्टो से पीड़ित होकर सुल्तान को पद्मिनी समर्पित करने के लिए तैयार हो जाना[7] राणा के चरित्र को कुछ नीचा गिरा देता है। पर इसे प्रचलित कथा का अनुकरण माना जा सकता है।

जटमल ने पात्रों के भावों—कृतज्ञता[8], वीरता[9], वात्सल्य[10] आदि—के सफल चित्रण के लिए कथानक का समुचित प्रयोग किया है, पर उसने स्त्री-पुरुष-जाति-वर्णन[11] द्वारा कथानक की शृखला को नष्ट कर दिया है। इससे कथावस्तु को भारी आघात पहुँचा है।

जटमल ने कतिपय स्थलों पर कथानक के निर्वाह मे भयकर भूलें भी कर दी हैं। पद्मिनी की प्राप्ति के लिए अलाउद्दीन का सिहल पर आक्रमण तथा सागर के किनारे पहुँचकर राघव द्वारा यह बतलाना कि पद्मिनी चित्तौड़ मे है,[12] कवि की असावधानी एव कथानक-वर्णन सबधी अनभिज्ञता का परिचायक है। इसी प्रकार अलाउद्दीन का दुर्ग का घेरा डाले रहना और राणा को इसका पता न लगना भी उपर्युक्त[13] कथन की पुष्टि करता है।

---

[1] गोराबादल की कथा, छं० ६ १४ [2] वही, छ० १६-२७ [3] वही, छं० ३१ [4] वही, छं० ३१-७ [5] वही, छं० ६२ [6] वही, छं० ८६ [7] वही, छं० ८८-९० [8] वही, छं० १३८ [9] वही, छं० १२७-३७, १४१-६ [10] वही, छ० १०६-११ [11] वही, छं० ३८-६० [12] वही, छं० ६४-६ [13] वही, छं० ७३

ऊपर के विवेचन के पश्चात् ज्ञात होता है कि जटमल ने कथानक के प्रयोग में कुछ त्रुटिया की है, पर उसको अधिक रोचक बनाने के लिए कल्पना-शक्ति की भी पूर्ण सहायता ली है। कथानक-चित्रण मे उसे पर्याप्त सफलता भी मिली है।

ललितललाम

'ललितललाम' अलंकार-शास्त्र सबधी मुक्तक ग्रथ है। कवि ने अपने आश्रय-दाता बूँदी-नरेश भावसिह जी की राजधानी तथा उनके वश का वर्णन करके अलकारो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। उन्होंने प्रसगवशात् अपने आश्रयदाता के विशिष्ट गुणों – दान आदि—का उल्लेख किया है। इसमे कथानक-निर्वाह का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है। आलोच्य विषय संबधी पद्यों में आश्रयदाता की प्रशसात्मक भावनाओ का मतिराम ने सफल चित्रण किया है।

भूषण-ग्रंथावली

भूषण की सारी रचनाएँ मुक्तक-पद्धति मे लिखी गई हैं। उनमें प्रबंध-काव्य के समान कथा-प्रवाह खोजना कवि के प्रति अन्याय होगा। भूषण ने अपने चरित्रनायकों के विशिष्ट चारित्र्य-गुणों और कार्य-कलापों को ही अपने काव्य का विषय बनाया है। उनके काव्य का यह क्षेत्र इतना विस्तृत है कि उनके नायकों के जीवन की विस्तृत झाँकी पाठक को मिल जाती है। नीचे भूषण के प्रत्येक ग्रथ पर विचार करने से यह बात स्पष्ट हो जायेगी :—

भूषण ने शिवराज-भूषण की रचना के सबध मे लिखा है :—

> सिव-चरित्र लखि यों भयो, कवि भूषन के चित्त।
> भांति-भाँति भूषननि सो, भूषित करौ कवित्त ॥
> सुकबिन हूँ की कछु कृपा, समुझि कबिन को पथ।
> भूषन भूषनमय करत, सिवभूषन सुभ ग्रथ[1] ॥

ऊपर दी हुई पक्तियों से सिद्ध हो जाता है कि शिवाजी के चरित्र से ही भूषण को यह अलकार-ग्रथ लिखने की प्रेरणा मिली थी। उन्होंने इस ग्रथ में शिवाजी के जीवन की प्रमुख घटनाओ का उल्लेख किया है। उनमे से कुछ घटनाओं का उल्लेख मात्र किया है तथा कुछ पर कई छदों की रचना कर डाली है। उन्होंने कुछ स्थलो पर एक ही छद मे अनेकों घटनाओं का वर्णन कर दिया है। इस पुस्तक मे शिवाजी के वश, रायगढ आदि के वर्णन के साथ उनके जीवन के १६५५ ई० से लेकर रविवार २६ अप्रैल, १६७३ ई० तक की प्रमुख घटनाओं, युद्धों एव शौर्य-पूर्ण कार्य कलापों की झाँकी मिल जाती है। 'शिवराजभूषण' मे इन घटनाओं का क्रमबद्ध वर्णन नही है। इसका कारण यह है कि यह अलकार ग्रथ है, न कि इतिहास ग्रथ। अतएव उसमे क्रमबद्ध इतिहास अथवा घटनावली का अन्वेषण करना उचित नहीं है।

शिवाबावनी

यह ग्रंथ भी संग्रह-ग्रथ है जिसमें शिवाजी के प्रताप, रण-प्रस्थान, रण, तलवार, नगाड़ा, आतंक, तेज, पराक्रम, विजय आदि का वर्णन है। इस ग्रथ में वीर, रौद्र तथा भयानक रस का

---

[1] भूषणग्रथावली, शिवराजभूषण, छ० २६-३०।

सुंदर परिपाक हुआ है। भूषण ने इसमे शत्रुओं की दुर्गति का सुदर चित्र खीचा है। शिवाजी के प्रताप और आतक के वर्णन बडे विशद हैं। इसमें १६५५ ई० से १६७७-७६ ई० तक की प्रमुख घटनाओं का उल्लेख है।

छत्रसाल-दशक

भूषण के इस ग्रथ मे महाराज छत्रसाल बुदेला के आतक, पराक्रम, रण, तलवार, तोपखाना, प्रताप, दान आदि गुणों का वर्णन है। इन छदों मे चरित्र-नायक के गुणों का अच्छा वर्णन हुआ है। यह ग्रथ क्रमानुसार नही लिखा गया है, वरन् सग्रह मात्र है।

फुटकल छंद

भूषण कृत स्फुट-काव्य मे भी विविध व्यक्तियों के सबध मे कहे गये छदों का संग्रह है। इनमे कुछ शृङ्गार के भी पद हैं।

ऊपर के सक्षिप्त विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भूषण ने अपनी मुक्तक रचना मे शिवाजी तथा छत्रसाल के प्रमुख गुणों और उनके जीवन की प्रमुख घटनाओं का उल्लेख किया है। उनकी रचना क्रमबद्ध न होते हुए भी चरित्र-चित्रण तथा रस-परिपाक के गुणो से ओत-प्रोत है। हॉ, उसमें प्रबध-काव्य के गुणों का अभाव है जो मुक्तक काव्य के लिये स्वाभाविक ही है।

राजविलास

'राजविलास' ऐतिहासिक ग्रथ है पर मान ने उसके कथानक मे ऐतिहासिक तथ्यों का कम ध्यान रखा गया है। दरबारी कवि होने के कारण वे परपरागत, चारण और भाटों में प्रचलित घटनाओं का अपने काव्य मे स्वतत्रतापूर्वक समावेश करने के लोभ का सवरण न कर सके। यही कारण है कि अपने आश्रयदाता के पूर्वजो का वर्णन करने मे बापारावल सबधी प्रचलित सभी दतकथाओं[1] को मान ने राजविलास मे स्थान दिया है। साथ ही बापारावल की पट्टावली[2] का उल्लेख करते समय उसने नामों की एक लम्बी सूची दी है। कहने की आवश्यकता नहीं कि इन नामों मे से अधिकाश अशुद्ध है, और उनके सन्-सवत् भी भ्रान्तिपूर्ण हैं। इन नामों का प्रमुख कथानक से कोई विशेष सबध नही है और वे पाठक के हृदय मे ग्रथ के प्रति अरूचि उत्पन्न करते हैं।

मान ने 'राजविलास' के कथानक मे कुछ हेर-फेर भी किये हैं, उदाहरणार्थ उसने जसवतसिंह और औरंगजेब की अनबन के कारणों[3] औरगजेब और अजीतसिंह के मिलन आदि[4] के सबध में कुछ ऐतिहासिक भूलें की हैं। इसके सबध मे केवल इतना ही कहा जा सकता है कि ऐसा करने से औरगजेब के आतक, जसवतसिह के आत्मसम्मान, राठौरों के वीरतापूर्ण युद्धों तथा वीरों की गर्वोक्तियों का स्वतत्रतापूर्वक उत्तम वर्णन करने का मान को अवसर प्राप्त हो गया है, जिसका उसने सफलतापूर्वक लाभ उठाया है।

महाराणा राजसिह और औरगजेब के मध्य हुए युद्धों[5] मे प्रयुक्त कथानक में भी यत्र-तत्र मान ने ऐतिहासिक क्रम एव घटना को अघात पहुँचाया है, पर वहॉ पर युद्ध का सुन्दर वर्णन, वीरता, भय,

---

[1] राजविलास, छ० १७-१३८, पृ० १७-३४ [2] वही, छ० १-३७, पृ० ३५-४० [3] वही, छ० ६-६६, पृ० १४६-५७ [4] वही, छ० १०१-३२, पृ० १६४-६६ [5] वही, पृ० २०६-६३

आतंक और प्रताप का अच्छा चित्रण बन पड़ा है। इस प्रसग मे यह भी स्मरण रखना चाहिए कि कवि ने कल्पना और अतिशयोक्ति से जी भरकर कार्य लिया है।

मान ने चरित्र-चित्रण करने के विचार से घटनावली का कम प्रयोग किया है। पर उक्त काव्य मे ऐसे स्थल प्रचुरता से मिलते हैं जिनसे विदित होता है कि मान मे इस क्षमता का अभाव न था, पर इस प्रवृत्ति को प्रधानता देने मे वे असफल रहे है। चरित्र-चित्रण की भावना से प्रयुक्त 'राजविलास' मे ये स्थल देने जा सकते है[1]।

मान की रुचि विविध विषयों के विशद वर्णन की ओर अधिक झुकी हुई थी, जिसके फलस्वरूप कथानक की गति एव प्रवाह को भारी धक्का लगा है। सरस्वती-वर्णन,[2] वर्षा-वर्णन[3], राजसिह के राज्य की प्रशंसा,[4] उदयपुर वर्णनातर्गत विविध विषयों का चित्रण[5], बारात के राजसी वैभव का वर्णन,[6] राजसिह एव जसवतसिह का डीग बधारना,[7] राजसिह के राज्या भिषेक का चित्रण,[8] महाराणा की आत्मश्लाघा,[9] वीरों की लम्बी सूची,[10] सामतों की आत्म-प्रशसात्मक उक्तियाँ[11] आदि कुछ ऐसे प्रसग है जिनमे कवि ने अनावश्यक विस्तार और पुनरावृत्ति की भरमार कर दी है, जिसके कारण घटनावली के प्रवाह मे बाधा पड गई है। साथ ही अतिशयोक्ति-पूर्ण वर्णन के कारण अधिकाश स्थल ऊहात्मक हो गये हैं। पात्रों की आत्मश्लाघा एवं गर्वोक्तियों मे मान उनके चरित्र को उठाने की अपेक्षा गिराने मे अधिक सहायक हुए हैं।

यह सब होते हुए भी 'राजविलास' मे ऐसे स्थल प्रचुर मात्रों मे हैं, जहा पर मान ने कथानक के साथ उचित न्याय किया है। ऊपर दिये हुए कतिपय दोषों का कारण यह प्रतीत होता है कि मान दरबारी कवि था। अतः चारण परिपाटी एव रीति-परपरा से प्रभावित होना उसके लिये स्वाभाविक था। कविता उसके लिये जीविकार्जन का एक प्रमुख साधन थी। ऐसी दशा मे अपने आश्रयदाता की अत्युक्तिपूर्ण प्रशसा करना ही उसका मुख्य लक्ष्य था, सर्वाङ्ग सुदर काव्य लिखना नहीं। इसीलिये कथानक के साथ न्याय करने मे वह बड़ी सीमा तक असफल रहा है।

छत्रप्रकाश

गोरेलाल ने 'छत्रप्रकाश' मे गणेश जी और सरस्वती जी की बदना[12] के उपरात श्री रामचन्द्रजी से लेकर बुदेलों की वशावली का वर्णन किया है।[13] बुदेलावश-वर्णन मे कवि ने परपरा, चारण-परिपाटी और कल्पना की पर्याप्त मात्रा मे सहायता ली है। उसने ज्ञात दत-कथाओं का स्वतत्रतापूर्वक प्रयोग किया है। उसने नामावली की शुद्धता पर भी विशेष ध्यान नही दिया है।

लाल कवि ने छत्रसाल की पूर्व-जन्म-कथा, सारवाहन-चरित्र[14] के वर्णन मे कल्पना और

---

[1] राजविलास, छं० ६ २२, पृ० १०४-६, छं० ३६-६, पृ०२३०-१ [2] वही छं० १-३६, पृ० १-७ [3] वही, छ० ३६-५७, पृ० ८-१० [4] वही, छं०६०-१००, पृ० ११-५, छं० १-१५, पृ० १६-७ [5] वही, छं० ८५-१४७, पृ० ४५-५४ [6] वही, छं० ६६-८२, पृ० ७० ४ [7] वही, छं० ८५-६२, पृ० ७४-६ [8] वही, छं० २३-६३ पृ० ८४-६५ [9] वही, छं० १६५-६, पृ० १८१-२, छं० १३-७, पृ० १८६-७ [10] वही छं० ५५-६८, पृ० १६३-५ [11] वही, छं० ११-२३, पृ० १४४-२४७ [12] छत्रप्रकाश, पृ० १-२ [13] वही, पृ० २-१६ [14] वही, पृ० १७-२२

अत्युक्ति के सम्मिश्रण के साथ वीर, रौद्र एव भ्रातक के चित्रण की दृष्टि से कथानक का अच्छा प्रयोग किया है। इस कथा का आगामी घटनावली मे सुदर समवन्य किया गया है।

छत्रसाल के जन्म तथा वालचरित्र का वर्णन करने[1] में कथानक का नख-शिख, अलकार एव बाल-सौदर्य वर्णन मे सफल प्रयोग किया गया है। छत्रसाल द्वारा किये गये राम-दर्शन की घटनावली के वर्णन मे गोरेलाल ने बाल औत्सुक्य तथा धर्म-भावना का अच्छा दिग्दर्शन कराया है। सात वर्ष के छत्रसाल द्वारा राम और सीता की शृगारिक भावनाओं को समझने की क्षमता का उल्लेख करके कवि ने उसमें कुछ अस्वाभाविकता का समावेश कर दिया है। छत्रसाल के सामने बाल-गोविन्द के नृत्य की कल्पना करके कवि ने अपने आश्रयदाता की बाल्यावस्था मे ही भगवद्भक्ति-प्रवृत्ति दिखलाने की चेष्टा की है। इस घटनावली पर पौराणिक प्रभाव है। कुछ अस्वाभाविक होते हुए भी यह प्रसग ग्रथ के नायक के स्वभाव का आभास देने के साथ ही ग्रथ को सरस भी बना देता है।

चौर-बध और पहाडसिह-प्रपच-वर्णन[2] मे लाल कवि ने बडे कौशल का परिचय दिया है। इस प्रसग मे ईर्ष्या, द्वेष, कलह, षडयत्र-प्रवृत्ति, सतर्कता आदि भावो एव मनोवृत्तियों का सुदर चित्रण किया गया है। इस घटनावली का उल्लेख करते हुए कवि ने एक ऐतिहासिक भूल भी की है। दारा द्वारा कधार विजय करना लिखकर उसने अपनी ऐतिहासिक अनभिज्ञता का परिचय दिया है। हो सकता है कि कधार-विजय का सारा गौरव चपतिराय को देने की दृष्टि से ही उसने ऐतिहासिक घटना मे यह परिवर्तन किया हो। कुछ भी हो, ऐसा करने मे गोरेलाल ने दारा और चम्पतिराय के वैमनस्य का सुन्दर चित्रण करने मे सफलता प्राप्त की है।

इसी प्रकार गोरेलाल ने बहादुर खा के लडके के घोडे आदि को चपतिराय द्वारा युद्ध मे लूटने की घटना[3] का उल्लेख करके कथानक को अधिक स्वाभाविक बनाकर कथा को अग्रसरता प्रदान की है।

गोरेलाल ने यथावसर आतंक, प्रताप, बीभत्स आदि के वर्णन के साथ ही साथ चरित्र-चित्रण के लिये घटनावली का सुदर प्रयोग किया है।[4] कथानक के वर्णन के साथ ही बीच-बीच मे अविवेकी की सेवा का दुष्परिणाम,[5] क्षत्रिय के कर्त्तव्य[6] आदि का भी समावेश कर दिया गया है जिनसे कथानक मे रोचकता और सरसता आ गई है।

'छत्रप्रकाश' मे कवि ने अपने आश्रयदाता के साथियों की नामावली[7] तथा विजित देशों की दीर्घ सूची[8] का बार-बार उल्लेख किया है। उसके ऐसा करने से कथानक मे कुछ नीरसता का मिश्रण हो गया है। पर लाल ने मान तथा सूदन के समान लबी-लबी सूचियों का उल्लेख नहीं किया है। वास्तव मे गोरेलाल अपने चरित्र नायक का सूक्ष्मातिसूक्ष्म युद्ध-विवरण देना चाहते थे, यही कारण था कि उन्होंने इन नामों का बार-बार उल्लेख किया है।

---

[1] छत्रप्रकाश पृ० २३-७ [2] वही, पृ० २८-४१ [3] वही, पृ० ४७-६ [4] वही, पृ० ५०-२, ५७, ६५-८ [5] वही, पृ० ७७ [6] वही, पृ० ८० [7] वही, पृ० ८६, १०१-३, १२५, १३३-४ [8] वही, पृ० ६६-७, १०४-२०, १२८

इस कवि ने घटना की वास्तविकता का कितना ध्यान रक्खा है, यह इसी से सिद्ध हो जायेगा कि उसने अपने आश्रयदाता की एक बार की पराजय का भी उल्लेख इन शब्दों मे कर दिया है—

कहयौ सबनि समुझाइयौ, जिन भजिबे पछिताउ।
भजे कृष्ण अवतार जे, पूरन प्रगट प्रभाउ॥[1]

आगे चलकर गोरेलाल ने 'छत्रप्रकाश' मे महाराज प्राणनाथ द्वारा छत्रसाल को दिये गये कृष्ण-जन्म आदि के उपदेश का वर्णन किया है।[2] इस उपदेश मे शृगार का पुट पूर्णरूप से वर्त्तमान है। यह सम्पूर्ण वर्णन भागवत् के आधार पर लिखा गया है, ऐसा प्रतीत होता है। इस प्रसग का प्रमुख काव्य से सीधा कोई सबंध नहीं है। ऐसा ज्ञात होता है कि युद्ध मे पराजित छत्रसाल तथा उनके साथियों की निराशा एव हतोत्साहितता को दूर करने की दृष्टि से अथवा स्वामी प्राणनाथ की महत्ता प्रदर्शित करने की लालसा से ही इस विवरण को इस ग्रथ मे स्थान दिया गया है। मुख्य कथानक से सबध न होते हुए भी यह प्रसग अधिक रोचक और सरस ढग से वर्णित किया गया है।

छत्रप्रकाश मे अतिम घटना लोहगढ विजय है, जिसके वर्णन मे भी कवि ने कुछ ऐतिहासिक परिवर्त्तन किये हैं,[3] पर वर्णन सुंदर हुआ है।

इस प्रकार गोरेलाल ने 'छत्रप्रकाश' के कथानक का निर्वाह किया है। कुछ ऐतिहासिक व्यतिक्रम होते हुए भी घटनाओं का यथातथ्य निरूपण करने का उन्होंने ध्यान रक्खा है। लाल कवि ने यथाशक्ति अनावश्यक विस्तार एव आवृत्ति का बहिष्कार किया है। भावों का समुचित उत्कर्ष दिखाने मे उन्हे सफलता मिली है। कुछ खटकनेवाले दोष होते हुए भी यह मानना पड़ता है कि 'छत्रप्रकाश' मे लाल कवि की प्रबध-पटुता निस्सदेह उच्च कोटि की बन पडी है। उन्होने संबध-निर्वाह और मार्मिक स्थलो की अपनी पैनी दृष्टि से परख करके अपनी अभूतपूर्व कार्य-पटुता का परिचय दिया है।

जगनामा

श्रीधर ने 'जगनामा' के लिये फर्रुखसियर के उत्तराधिकार युद्ध की घटना को चुना है। उसने अपने इस छोटे से काव्य में कथानक के वर्णन पर बहुत कम ध्यान दिया है। इस कवि ने दोनों पक्षों से युद्ध मे सम्मिलित होनेवाले अमीरों तथा वीरों के नामों की बार-बार आवृत्ति की है।[4] इन नामों की भरमार, अमीरों की सजावट तथा विशेषणों की आवृत्ति करने मे श्रीधर ने अपनी इतनी सलग्नता दिखलाई है कि जिसके कारण कथानक-वर्णन हेय एव नीरस हो गया है। इसके अतिरिक्त नादात्मक शैली-प्रयोग[5] के कारण भी घटनावली-प्रवाह को भारी धक्का लगा है।

उपर्युक्त दोषों के होते हुए भी यह मानना पडेगा कि श्रीधर ने कथानक का वर्णन करने मे चरित्र-चित्रण, वीरता, आतंक, भय, रौद्र आदि भावनाओं का अच्छा विवेचन किया है।[6] उसने

---

[1] छत्रप्रकाश दो० ३, पृ० १४७ [2] वही, पृ० १५०-६ [3] वही, पृ० १६१-३ [4] जंगनामा, पंक्तियाँ ५२-६०, ७४-८२, १७४-२१२, २३३-३४५, ४१३-५३४, ८६७-१२४६, १२७३-४२० [5] वही, पंक्तियाँ १४२१-५०, १५६३-७४ [6] वही, पंक्तियाँ ८४-६४, ३७१-७, ५६०-६०६, ७०३-६, १२५०-७१

मुइज्जुद्दीन की बौखलाहट और डींग बघारने[1] और उसके दरबार[2] का यथातथ्य वास्तविक वर्णन किया है।

ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट है कि नीरसता एव अरोचकता के स्थलों की भरमार होते हुए भी जगनामा में ऐसे स्थान भी हैं जहा पर श्रीधर ने घटनावली के वर्णन में सहृदयता और सजगता का परिचय दिया है। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि मुरलीधर में उत्तम काव्य-रचना की अनुपम प्रतिभा वर्तमान थी, पर भाटों की प्रशसात्मक एव लोभपूर्ण प्रणाली का अनुसरण करने के कारण उन्हे कथानक के साथ उचित न्याय करने का ध्यान नही रहता था। यही कारण है कि उनके घटना-वर्णन में इतनी नीरसता एव शुष्कता है।

रासा भगवंतसिंह

सदानद ने इस ग्रथ मे अपने आश्रयदाता के अतिम युद्ध का वर्णन किया है। उसने इसमे व्यर्थ के विस्तार एव अनावश्यक प्रसगों और घटनाओं का एकदम बहिष्कार किया है।

इस कवि ने घटनावली का वर्णन इस पद्धति से किया है जिससे क्रोध,[3] आतक,[4] वीरोचित गर्वोक्ति,[5] तथा चरित्र-चित्रण[6] के सुदरतापूर्वक प्रतिपादन के साथ ही साथ युद्ध के अच्छे वर्णन[7] भी करने मे वह सफल हो सके। कवि ने युद्ध मे वीरता प्रदर्शित करनेवाले वीरों के नामों के उल्लेख[8] के अतिरिक्त चरित्रनायक के दान[9] का भी वर्णन किया है। उसके इस कार्य से कथानक का सौन्दर्य अधिक निखर गया है।

साराश यह है कि 'रासा भगवतसिह' मे लम्बी-लम्बी सूचियों तथा सयुक्ताक्षरों से युक्त शैली का एकदम अभाव है। यही कारण है कि इसका कथानक-वर्णन इतना सफल और वीररसानुकूल बन पड़ा है। इस प्रकार सदानद को अपने उद्देश्य मे पूर्ण सफलता मिली है।

सुजानचरित्र

सूदन ने अपने ग्रथ 'सुजानचरित' के लिए भरतपुराधीश सुजानसिंह के युद्धों का कथानक चुनकर उसी प्रकार दूरदर्शिता का परिचय दिया है जिस प्रकार भूषण ने शिवाजी तथा छत्रसाल को अपने काव्य का आधार बनाकर अपनी काव्य-पटुता प्रदर्शित की है। इस कवि ने सूरजमल के सपूर्ण जीवन को अपने ग्रथ मे स्थान नही दिया है। सूदन ने सुजानसिह के पूर्वजों के वर्णन के साथ उनके सात युद्धों का विस्तृत वर्णन किया है। उसने युद्ध सबधी प्रत्येक सूक्ष्म एव विस्तृत घटनावली का उल्लेख अपने इस ग्रथ मे किया है।

सूदन ने 'सुजानचरित्र' मे प्रत्येक वस्तु और पदार्थ की लम्बी नामावली दी है। आरम्भ

---

[1] जंगनामा, पंक्तियाँ ७१०-३०, ७५८-६६, ८३६-४२ [2] वही, पंक्तियाँ ६७४-६० [3] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ५, सं० १९८१ वि०, छ० १२, पृ० ११५ [4] वही, छं० ३५ पृ० ११६ [5] वही, छं० ४४, पृ० १२१-२ [6] वही, छं० ५४-५, पृ० १२३ [7] वही छं० ६८-६, पृ० १२५; छं० ७६-८० पृ० १२७ [8] वही, छं० ६५-७, पृ० १२६-३० [9] वही, छं० ४८-६, पृ० १२२

में १७५ कवियों के नाम,[1] अवतारों का उल्लेख[2] तथा सुजान के पूर्वजों का वर्णन[3] किया है। इसी प्रकार राजपूत, जाट तथा अन्य जातियों[4] तथा युद्धो मे सम्मिलित होनेवाले वीरों के नामों[5] की बार-बार आवृत्ति की है। इसका परिणाम यह निकला है कि कथानक अरुचिकर और नीरस हो गया है तथा उसकी गति को भारी धक्का लगा है। इसके अतिरिक्त सूरजमल द्वारा दिल्ली के लूटे और जलाये जाने का वर्णन करते हुए सूदन ने विविध पशु-पक्षियो, अस्त्र-शस्त्रों, वस्त्रनो, बाजो, कपडों, आभूषणो, मिष्ठान्न, अनाज, ग्रन्थों[6] आदि के नामों की एक बडी विशाल सूची दी है, जिसके फलस्वरूप कथानक की धारा एकदम टूट गई है। इस अवसर पर केशव के समान पाडित्य-प्रदर्शन के प्रलोभन मे सूदन ऐसे फँसे है कि उन्हे घटनावली के चित्रण का लेश-मात्र भी ध्यान नही रहा है। इस सबध मे यह भी स्मरण रखना चाहिए कि सूदन ने वीररस-काव्य-परपरा का अनुकरण करके सयुक्त वर्णों[7] और व्यर्थ की नादात्मक निरर्थक शैली[8] का बार-बार प्रयोग करके कथानक को और भी शुष्क, नीरस तथा अरुचिकर बना दिया है।

उपर्युक्त दोषो के होते हुए भी यह स्वीकार करना पडता है कि सूदन को कथानक को सुदर ढग से अकित करने मे भी पूर्णरूपेण सफलता मिली है। यथावसर सूदन ने पात्रों के चरित्र-चित्रण[9] करते समय घटनावली को सुदर रूप दिया है। उसने बीभत्स,[10] वीर,[11] शृगार[12] तथा भय[13] आदि के वर्णन करने मे भी कथानक को आवश्यकतानुसार परिवर्तित कर दिया है। सूदन ने अलकार-वर्णन[14] करने मे भी कथानक का उचित प्रयोग किया है।

सूदन ने अपने चरित्र-नायक के प्रतिद्वद्वी का उत्तम[15] वर्णन करके अपने ग्रथ के कथानक को स्वाभाविकता प्रदान करने के साथ ही अपनी उदारता का भी परिचय दिया है। सुजान-चरित्र, मे कवि सूदन ने युद्ध-वर्णन करने मे बडी पटुता दिखाई है।[16] बार-बार युद्ध का विस्तृत

---

[1] सुजानचरित्र, छं० १-६, पृ० १-३ [2] वही, छं० ११, पृ० ३-४ [3] वही, छं० १२-२६, पृ० ४-६ [4] वही, छं० ५ ६, पृ० १४, छं० १३-४, पृ० ३०-१, छं० २७, पृ० ७५; छं० १५, पृ० १०८-६, छं० ४, पृ० २००-१ [5] वही, छं० ३२ पृ० १८-२०, छं० ८, पृ० २३-४; छं० १३, पृ० ४६-७; छं० ३ (४), पृ० ५३-४, छ० ८, पृ० ६३-४, छं० २८, पृ० ७५-६, छं० १८, पृ० ८-४५; छं० ७, पृ० ६४ ६, छ० ५, पृ० ११२-३, छं० ६, पृ० ११५-६, छ० २-६, पृ० १२०-४, छं० ६, ६-१२, पृ० १३२-५, छ० ८-१०, पृ० १८४-५, छं० २०, पृ० १६४-५, छं० ५, पृ० २०१, छं० ३२-३, पृ० २०८ ६, छं० १६ ७ पृ० २१५-६, छं० २१, पृ० २१७-८, छं० २८, पृ० २२१-२; छं० ३२-६, पृ० २४३-४, [6] वही, छं० ३१-४७, पृ० १७१-६, [7] वही, छं० ४, पृ० २१-२; छं० १८, पृ० ३५, छं० २२, पृ० २१८-२० [8] वही, छं० २ (केवल कुछ पंक्तियाँ) पृ० २०-१, छं० १४, पृ० १३५-७, छं० १६, पृ० १४३, छं० ११, पृ० १८५ ७ [9] वही, छ० २-४, पृ० ५७-५८; छं० ३४, पृ० ६६; छं० २-३, पृ० ६२-३; छं० २०-२, पृ० ६८ [10] वही, छं० ११, पृ० ५६, छं० ६, पृ० ८२, छ० १६, पृ० २०५ [11] वही, छं० ५, पृ० ६३-४ [12] वही, छं० ३५-७, पृ० १४६-७ [13] वही, छं० १४-७, पृ० १६६-७ [14] वही, छं० १२, पृ० २६ [15] वही, छं० ४०-४, पृ० १४८-५१ [16] वही, छं० १४, पृ० ३४, छं० ५, पृ० ८१-२, छं० १५-६, पृ० १३७-४२; छं० ५, पृ० १६०, छं० १३-७, पृ० २०३-५

इस कवि ने अपने ग्रंथ में एक स्थल पर दिल्ली के आदि काल से प्रारंभिक इतिहास को वर्णित काल तक सक्षेप मे दिया है।[1] इस सक्षिप्त कथन से भी उसकी कथानक-चित्रण-पटुता का आभास मिलता है।

सूदन ने ग्रथ के अत मे पहुँचकर मराठो द्वारा किये गए जाट-राज्य के आक्रमण का विस्तृत वर्णन न करके ब्रज-शोभा, कृष्ण-लीला, मुचकुन्द-कथा आदि पौराणिक विषयों का वर्णन किया है।[2] कहना न होगा कि ऐसा करके कवि ने प्रमुख ऐतिहासिक घटनावली को छोड़कर ग्रथ के कथानक के साथ अन्याय किया है।

ऊपर के सक्षिप्त विवेचन से विदित होता है कि सूदन को कथानक-चित्रण-पटुता प्राप्त थी, पर अपनी बहुज्ञता, पाडित्य-प्रदर्शन तथा शैली और भाषा-विविधता का प्रयोग करने के प्रलोभन मे फँस जाने के कारण उनके 'सुजानचरित्र' मे अधिकाश स्थलों पर अरोचकता, नीरसता तथा शुष्कता का समावेश हो गया है, जिससे कथानक को करारी ठेस पहुँची है। यह होते हुए भी 'सुजान-चरित्र' मे कथानक के सुदर वर्णन के स्थलो की भी कमी नही है।

करहिया को रायसौ

गुलाब कवि ने 'करहिया को रायसौ' नामक छोटे से खड-काव्य मे करहिया-प्रदेश के परमारो वर्णन करने से युद्ध के उत्तम वर्णन के तो काव्य मे दर्शन हो जाते हैं, पर इससे कथानक की गति मंद अवश्य पड गई है।

और भरतपुराधीश जवाहिरसिह के युद्ध का वर्णन किया है। इस कवि ने आरभ मे सरस्वती और गणेश जी की स्तुति[3] के पश्चात् अपने आश्रय-दाताओं की प्रशसा की है[4]।

इसके अनंतर उसने उक्त युद्ध का वर्णन किया है। गुलाब कवि ने वीरों के नामो का बार बार उल्लेख किया है[5]। इन नामो के साथ ही उसने अधिकाश स्थलो पर इन वीरों के युद्ध तथा गर्वोक्तियो का अच्छा वर्णन किया है। गुलाब ने वीररसात्मक सयुक्ताक्षर शैली का भी प्रयोग किया है,[6] पर इससे कथानक के प्रवाह मे बाधा पडी है।

उपर्युक्त कथन का यह अभिप्राय कदापि नही है कि गुलाब कवि मे घटनावली के वर्णन की क्षमता का अभाव था। उसने कथानक का वीर-चरित्र-वर्णन करने मे सफल प्रयोग किया है।[7] उसे रौद्रादि रस के चित्रण मे भी पर्याप्त सफलता मिली है।[8]

यद्यपि गुलाब कवि ने इस छोटे से कथानक के चित्रण मे कुछ असावधानी दिखलाई है, पर उसके वर्णन मे उसे पर्याप्त मात्रा मे सफलता भी प्राप्त हुई है। सबसे बडी विशेषता यह है कि उसने शृगारादि का समावेश अपने इस ग्रथ में न करके कथानक को पूर्णरूपेण वीररसानुकूल बनाया है।

---

[1] सुजानचरित्र छं० ३-१६, पृ० १५४-७ [2] वही, छं० २७-५५, पृ० २२७-५० [3] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग १०, १९८६ वि०, छं० १-४, पृ० २७७ [4] वही, छं० ५-८, पृ० २७७-८ [5] वही, छं० २१-२, पृ० २७९-८० छं० २३४ पृ० २८२-३; छं० ४५, पृ० २८५-६, छं० ५९-६२, पृ० २८८-९ [6] वही, छं० ३८, पृ० २८४, छं० ४७, पृ० २८७ [7] वही, छं० ४०-२, पृ० २८५ [8] वही, छं० १८, पृ० २८९

हिम्मतबहादुर-विरुदावली

पद्माकर ने हिम्मतबहादुर-विरुदावली मे अनूपगिरि हिम्मतबहादुर तथा अर्जुनसिंह के मध्य लडे गये युद्ध का वर्णन किया है। उन्होंने इस ग्रथ के कथानक-वर्णन मे परम्परा का पालन अधिक किया है। ग्रथ के आरभ मे चरित्र-नायक की ऊहात्मक पद्धति मे प्रशसा की गई है।[1] इस ग्रथ का अधिकाश भाग राजपूत उपजातियों,[2] वाद्य-यत्रों,[3] हाथियो,[4] घोडों,[5] तोपों,[6] बदूकों,[7] तलवारो[8] तथा अन्य हथियारो[9] आदि के नामों के गिनाने से भरा पडा है। परिणाम यह हुआ है कि कथानक का प्रवाह एकदम रुक गया है और ग्रथ अरोचक हो गया है। सयुक्ताक्षरों[9] तथा नादात्मकशैली[10] के प्रयोग ने भी घटनावली के लिए घातक कार्य किया है। पात्रो द्वारा लबे-लबे कथन[11] भी इस ग्रथ मे मिलते हैं जो चरित्र और कथानक दोनो ही दृष्टियों से ठीक नहीं है।

यह सब दोष होते हुए भी हिम्मतबहादुर-विरुदावली मे कथानक की दृष्टि से कुछ विशिष्ट गुण भी वर्त्तमान है। पद्माकर ने अपने आश्रयदाता के प्रति-नायक की प्रशसा[12] करके कथा को अधिक स्वाभाविक बनाने की चेष्टा की है। पात्रों के स्वाभाव एव गुण-दोष-चित्रण की भी चेष्टा की गई है, पर कम मात्रा मे[13]। युद्ध के वर्णन मे अलकारों की भरमार कर दी गई है, पर उनमे से कुछ अच्छे चित्रण भी हुए हैं[14]।

ऊपर के विवेचन से यह सार निकलता है कि पद्माकर को 'हिम्मतबहादुर-विरुदावली' में कथानक-चित्रण मे आशातीत सफलता नही मिली है। सूदन के समान उन्होंने नाम गिनाने की परंपरा और शब्दों की तडक-भडक पर ही विशेष ध्यान दिया है। उन्होने उपयुक्त नायक चुनने ही मे असावधानी का परिचय दिया है। पर इस ग्रथ मे ऐसे स्थल भी हैं जिनसे सिद्ध होता है कि पद्माकर यदि सतर्कता से काम लेते तो उन्हे कथानक-चित्रण मे पर्याप्त सफलता मिल गई होती।

जगद्विनोद

'जगद्विनोद' के जिन छदों का आलोच्य विषय के अतर्गत अध्ययन किया गया है, वे मुक्तक हैं और उनमे महाराज जगद्सिह, जयपुराधीश की प्रशसा की गई है। अतएव इस सबंध मे कथानक-वर्णन पर विचार करने का प्रश्न ही नहीं उठता है।

प्रतापविरुदावली

प्रतापविरुदावली मे महाराज प्रतापसिंह की विविध दृष्टियों से मुक्तक छंदों मे प्रशसा की गई हैं। कवि ने उसमे किसी घटना का वर्णन नहीं किया है।

---

[1] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० ३-१४　[2] वही, छं० २७-३७　[3] वही, छं० ३६-४१　[4] वही, छं० ४७-१　[5] वही, छं० ५२-६　[6] वही, छं० ६३-७०, ८६-६१　[7] वही, छं० ७०-२　[8] वही, छं० १६३-२०१　[9] वही, छं० ४५, ६१　[10] वही, छं० १३०, १८६　[11] वही, छं० ६४-११०, १२२-८　[12] वही, छं० १७-१८　[13] वही, छं० ७३-५, १८०-४, २०८　[14] वही, छं० ७७-८६, १७६-८१

हम्मीररासो

जोधराज ने हम्मीररासो के आरभ मे गणेश और सरस्वती[१] की स्तुति, आश्रयदाता[२] तथा अपना[३] परिचय दिया है। तदनन्तर उसने सृष्टि और मानव-रचना, चद्र और सूर्य-वंश का वर्णन[४] किया है जिसका आधार पौराणिक गाथाए हैं। इसके आगे उसने आबू पर्वत पर किये गये यज्ञ से अग्निवशीय क्षत्रियों की उत्पत्ति[५] का उल्लेख किया है, जिस पर पृथ्वीराजरासो की स्पष्ट छाप विद्यमान है। तदनन्तर पद्म ऋषि के तप भग होने और हम्मीर तथा अलाउद्दीन के जन्म सबध[६] में जोधराज ने पौराणिक, काल्पनिक एव मनगढत बातों का उल्लेख किया है, जिनका मूल कथानक से विशेष सबध नहीं है। इसके सबध मे केवल इतना ही कहा जा सकता है कि इस घटना का आश्रय लेकर कवि ने ऋतुओं और शृगार का विस्तृत वर्णन किया है। पर उसके ये वर्णन परंपरानुसरण मात्र हैं और कही-कही पर सीमा का उल्लघन कर गये हैं, अतएव यह घटनावली कथानक के लिये भूषण नहीं वरन् दूषण है।

जोधराज ने हम्मीर और अलाउद्दीन के पारस्परिक बैर के कारणो का उल्लेख करते हुए मीर महिमा तथा शाही बेगम रूप-विचित्रा के प्रेम, मीर द्वारा सिह के मारने, इस घटना से सुल्तान के अप्रसन्न होकर मीर महिमा को निकाल देने तथा मीर महिमा के हम्मीर के यहा जाकर शरण लेने का वर्णन[७] किया है।

इस कथा से मिलती-जुलती एक घटना, मीर हुसेन कथा[८], का पृथ्वीराजरासो मे उल्लेख है। इन दोनों ग्रथों मे वर्णित दोनों कथाओं मे अत्यधिक साम्य है। हम्मीररासो के रचना-काल से पूर्व ही पृथ्वीराजरासो का वर्तमान रूप निश्चित हो चुका था। ऐसी परिस्थिति मे यह विदित होता है कि जोधराज इस कथा के लिये चद बरदायी का ऋणी है।

मीर महिमा और रूप-विचित्रा की कथा ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण न होते हुए भी अपना निजी महत्त्व रखती है। इस प्रसग मे कवि ने सेना, झझावत, मीर महिमा के चरित्र और शृगार के वर्णन मे विशदता का परिचय दिया है, पर शृगार के वर्णन मे वह अश्लीलता की पराकाष्ठा तक पहुँच गया है। साथ ही उसने अलाउद्दीन के द्वारा चूहे को मरवाकर उसके चरित्र को अधिक गिरा दिया है। इस दृष्टि से विचार करने पर कथानक का यह अश कवि के द्वारा उचित ढग से नहीं वर्णित किया गया है, यही कहने के लिये बाध्य होना पडता है।

आगे चल कर जब दूत अलाउद्दीन के समक्ष मीर महिमा के राव हम्मीर की शरण मे जाने का समाचार देता है, उस अवसर पर शाही मत्री बहराम खा का यह कथन कि मीर तो सागर के पार चला गया है,[९] कुछ अस्वाभाविक लगता है। उसकी इस उक्ति के पश्चात् और किसी उत्तर का उल्लेख न करके, कवि ने एकदम हम्मीर को पत्र लिखने के लिये शाही आज्ञा का कथन[१०] करके कथानक के पूर्वा पर सबध-निर्वाह को आघात पहुँचाया है।

---

[१] हम्मीररासो, छं० १-४ [२] वही, छं० ५-७ [३] वही, छं० ८-११ [४] वही, छं० १४-३९ [५] वही, छं० ४०-७० [६] वही, छं० ७१-वचनिका, पृष्ठ ३८ [७] वही, छं० १८८-२०५ [८] पृथ्वीराजरासो सार, ९ वां समय, पृष्ठ ३९-४३ [९] हम्मीररासो छं० २१८ [१०] वही, छं० २१९

इसके अनन्तर जोधराज ने दूत के मुख से राव हम्मीर के राजसी वैभव, बाटिका आदि का विस्तृत वर्णन कराया है,[1] जो परपरा का पालन मात्र है। इसमे कवि ने अपने आश्रयदाता के पूर्वजों की प्रशसा करके उसे प्रसन्न करने का प्रयत्न किया है, ऐसा अनुमान होता है। इसी प्रकार वजीर के मुख से कराये गये हम्मीर के पूर्वजो के गुण-गान[2] को भी समझना चाहिए। इन वर्णनों मे कथा की धारा एकदम मद पड गई है।

इसके आगे यथास्थान अलाउद्दीन का मत्री उसे राव हम्मीर से युद्ध न करने की मत्रणा देता है और तुरत ही आक्रमण के लिये सेना की तैयारी की सूचना मिल जाती है[3] इसको कथानक मे क्रम-भग ही कहना उचित जॅचता है। इसी प्रसग मे यह भी स्मरण रखना चाहिए कि उक्त सेना में कवि ने देश-विदेश की विविध सेनाओं के नाम गिनाये हैं, जो काल्पनिक एव परपरागत हैं।

जोधराज की कथानक संबधी त्रुटियों का यही पर अत नही हो जाता है। उसने चौहानो और मुसलामानों के परपरागत बैर का वर्णन[4] किया है, जो पृथ्वीराजरासो के आधार पर प्रतीत होता है और जिसका प्रमुख घटनावली से कोई भी सबध नही है।

यही नही, इस कवि ने दोनों पक्षो मे दैवी-शक्ति की सहायता की भी कल्पना की है। राव हम्मीर और अलाउद्दीन देवों और पीरों को अपनी अपनी सहायता के लिये बुलाते हैं। वे देव और पीर एक बार नही अनेक बार आकर अपने अपने उपासकों की सहायतार्थ युद्ध मे सम्मिलित होते हैं।[5] ऐसे स्थलों पर कथानक बच्चो का खेलवाड और उपहासास्पद हो गया है और मुख्य कथानक का रूप उनमे न जाने कहाँ विलीन हो गया है। इसी प्रकार जमाल खाँ का मुहम्मद गोरी के आदेश से पृथ्वीराज को पकडना और अलाउद्दीन के आदेश को पाकर हम्मीर के विरुद्ध रण-क्षेत्र में जाना भी कवि की असावधानी का परिचायक है[6]। उसने मुहम्मद ग़ोरी और अलाउद्दीन के समय का ध्यान नही रक्खा है, जिसके परिणामस्वरूप इस स्थल पर कथानक एकदम काल्पनिक एव निराधार हो गया है।

आगे चलकर चित्तौड के कुमारों के प्रसग[7] में भी जोधराज ने अपनी ऐतिहासिक अज्ञानता का परिचय दिया है, जिसके फलस्वरूप कथानक की स्वाभाविकता नष्ट हो गई है और इसके समावेश से अकारण ही ग्रथ को विस्तार दे दिया गया है।

चद्र-कला-नृत्यान्तर्गत मीर महिमा द्वारा अलाउद्दीन के मुकुट गिराये जाने का उल्लेख किया गया है।[8] ऐसा प्रतीत होता है कि जोधराज ने यह घटना तुलसी द्वारा वर्णित अगद द्वारा फेंके गये रावण के मुकुट के प्रसग[9] से ली है।

सुर्जन के विश्वासघात[10] के कथानक मे जोधराज ने सम्भवतः अकबर के समकालीन रणथंभौर दुर्गाध्यक्ष राव सुर्जन के नाम का उल्लेख करके अपनी अज्ञानता का परिचय दिया है।

---

[1] हम्मीर रासो, छं० ३३२-७२ [2] वही, छ० ३६७-६ [3] वही, छं० ३७०-२ [4] वही, छ० ४११-२ [5] वही, छं० ४५६, ४७८-८६, ५६१-७, ६१८-६ [6] वही, छं० ५३५-८ [7] वही, छं० ५०६-३४, ६६०-२ [8] वही, छं० ६२२-४३ [9] माताप्रसाद गुप्त, श्रीरामचरित मानस, लंका कांड, पृ० ४२१ [10] हम्मीर रासो छं० ६४७-५६, ६६२

इसी प्रकार अलाउद्दीन के द्वारा हिंदू देवो की पूजा करना,[१] उसके द्वारा सधि-प्रस्ताव,[२] सम्राट् का पराजित होकर बदी बनना तथा मुक्ति पाकर दिल्ली को प्रस्थान करना,[३] शिवजी को अर्पित किये गये राव हम्मीर के शीश की आज्ञा मानकर अलाउद्दीन का रामेश्वरम् में जाकर सागर मे समाधिस्थ होकर प्राण-विसर्जन करना,[४] ऐसे प्रसग हैं जो एकदम इतिहास-विरुद्ध और काल्पनिक हैं। इन कथानको के कारण मुख्य घटनावली का रूप विकृत हो गया है। पर ऐसा करने से कवि को अपनी कल्पना-शक्ति का परिचय देने का अच्छा अवसर मिल गया है। साथ ही अपने आश्रयदाता को प्रसन्न करके पुष्कल धन प्राप्त करने का भी सुयोग उसे मिल गया होगा, जैसा कि उसने ग्रथ के अत मे स्वीकार भी किया है[५]।

कथानक सबधी उपर्युक्त त्रुटियों और भूलों के होते हुए भी उसमे कुछ विशिष्ट गुण भी हैं। जोधराज ने वीरोक्ति[६] रौद्र,[७] आदि के अच्छे उदाहरणों द्वारा कथानक को अधिक स्वाभाविक बनाने की सफल चेष्टा की है। जोधराज ने युद्ध के अच्छे चित्रण द्वारा[८] वीररस का अच्छा परिपाक किया है, यद्यपि ऐसा करने मे उसने कल्पना का प्रचुर मात्रा मे प्रयोग किया है। उसने पात्रो के चरित्र को ऊँचा उठाने की भी चेष्टा की हे। पर कहीं-कहीं पर उसमे उपदेश की प्रधानता हो गई है, उदाहरणार्थ हम्मीर की रानी का चरित्र क्षत्राणी के अनुरूप होते हुए भी उपदेशात्मक हो गया है।[९] कहीं-कहीं पर जोधराज ने वीर और शृगार के सुदर चित्रण[१०] द्वारा कथानक को अधिक रोचकता प्रदान की है। उसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसने वीरकाव्य की सूदन वाली नाम गिनाने की परिपाटी का एकदम बहिष्कार किया है। केवल एक दो स्थानों पर ही राजपूतों[११], घोड़ो[१२] एव गजो[१३] का उल्लेख हुआ है। कवि की इस नीति के कारण कथानक की सरसता और रोचकता की पर्याप्त मात्रा मे रक्षा हो गई है।

ऊपर किये गये विवेचन का यह सार निकलता है कि हम्मीररासो मे कथानक के वर्णन मे कवि ने बहुत सी भूले की हैं, पर उसमे ऐसे विशिष्ट स्थल भी हे जो कवि की प्रबध-कल्पना-पटुता का प्रमाण देते है। सबसे बडी बात यह है कि जोधराज ने इतिहास-विश्रुत नायक अपने काव्य के लिए चुना है। यही कारण है कि उसे अपने उद्देश्य मे कुछ सफलता मिली है। उसके सामने पृथ्वीराजरासो की परपरा थी, जिससे उसने पूर्ण लाभ उठाया है। परपरा से ऊँचा उठने की मौलिक प्रतिभा सभवतः जोधराज मे वर्त्तमान नही थी, इसीलिए वे अपने काव्य के कथानक के प्रवाह की रक्षा करने मे उतने सफल नही हो सके जितना कि उन्हे होना चाहिए था। साथ ही चारणों की आश्रयदाताओं की अहात्मक प्रशसा करके प्रचुर धन प्राप्त करने की परिपाटी और लालसा ने भी कथानक के रूप को विकृत करने के लिए उन्हे विवश कर दिया था। यह सब होते हुए भी इस दृष्टि से जोधराज का निजी स्थान है इसमे किसी को आपत्ति नहीं हो सकती।

---

[१] हम्मीररासो छ० ६०१-२ [२] वही, छं० ८३०, ८४८, ९२७-२९ [३] वही, छं० ९३५-४२ [४] वही, छं० ९४७-६५ [५] वही, छ० ८६७ [६] वही, छं० ३२७ [७] वही, छं० ३८० [८] वही, छं० ४३८-५५, ८९३-९२० [९] वही, छं० ६६६-८२ [१०] वही, छं० ७५०-८ [११] वही, छं० ७०० [१२] वही, छं० ७१२-२८ [१३] वही, छं० ७२९-३७

अध्याय ३

चरित्र-चित्रण

सामान्य स्थिति— प्रस्तुत साहित्य के मथन से विदित होता है कि पात्रों के चरित्र-चित्रण की ओर इन कवियों का ध्यान विशेष रूप से नहीं गया था। ये ग्रथ ऐतिहासिक काव्य थे इसी लिए अधिकाश कविगण इतिवृत्तात्मक शैली का अनुसरण करके ऐतिहासिक घटनावली, पात्रों, स्थानों तथा अन्य सामग्री की सूची का उल्लेख भर कर दिया करते थे। इनमें पात्रों की अधिक भरमार होती थी। लूटमार तथा युद्ध-सामग्री की विस्तृत सूची, अलकार-प्रयोग, चमत्कारवादिता, रीति-परपरा का अनुसरण आदि कुछ ऐसे कारण थे, जिनके फलस्वरूप चरित्र-चित्रण की ओर इन कवियों का ध्यान बहुत कम गया था।

उपर्युक्त कथन का यह अभिप्राय नही है कि उक्त काव्यों मे चरित्र-चित्रण का एकदम अभाव है। पर इतना सत्य है, कि इन कवियो ने अधिकतर परपरागत कुछ विशिष्ट गुणों का ही उल्लेख अपने पात्रो के सबध मे किया है। पर कुछ प्रबध-काव्यो मे चरित्रो का अच्छा चित्रण भी हुआ है। ऐतिहासिक प्रबध-काव्यो मे चरित्र-चित्रण प्रायः उत्तम हुआ है। रासो परपरा के ग्रथों मे पृथ्वीराजरासो की छाप स्पष्ट रूप से मिलती है। मुक्तक-ग्रथो मे कुछ विशेष बातों को ही लेकर चित्रण कर दिया गया है। स्त्री-पात्रों के सबध मे भी एक बँधी हुई धारा का अनुकरण किया गया है। नीचे चरित्र-चित्रण सबधी कुछ विशेषताओं का उल्लेख किया जा रहा है, जिससे उपर्युक्त कथन की पुष्टि हो सके।

कुछ अपवादो के साथ प्रायः सभी पात्रों—विशेषकर नायको-मे एक ही प्रकार की विशेषताओ के उल्लेख सभी ग्रथों मे मिलते है। इन पात्रों को मृगया, मल्ल-युद्ध तथा गज-युद्ध से विशेष प्रेम होता था। वे अस्त्र-शस्त्र सचालन मे अधिक दक्षता प्राप्त किया करते थे। युद्ध मे स्वय सेना सचालन करते हुए नायक सेना के अग्र भाग मे रहकर युद्ध की गति-विधि का स्वय निरीक्षण करते थे। वे विजयी वीरो का समुचित आदर किया करते थे।

इन ग्रथों के नायक प्रायः युद्ध-वीर के रूप मे ही चित्रित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त वे दान-वीर, दया-वीर एव धर्म-वीर भी हुआ करते थे। वेद, गौ, ब्राह्मण और हिदू धर्म की रक्षा के लिए ये पात्र सदैव परिकरबद्ध रहा करते थे। वे दान मे मन-भर धन लुटाया करते थे। ये भाटों एव कवियों को सदैव सम्मानित करते थे।

कुछ पात्र बडे यशस्वी तथा कर्म-वीर हुआ करते थे। शत्रु से लोहा लेना, अपनी विजय के लिए सर्वस्व न्यौछावर करना और हँसते-हँसते अपने प्राणों की बलि चढा देना इन वीर-पुगवो के लिए साधारण बात थी। उनमे से कुछ वीरों ने अपने बाहु-बल पर, साधारण स्थिति से उठकर और दिल्ली राज्य की जडें हिलाकर, विस्तृत राज्यों की स्थापना की थी। ऐसे पात्रों के वर्णन में सच्ची वीरता, अदम्य उत्साह, असीम अध्यवसाय और कार्य-कुशलता के दर्शन होते हैं। प्रायः सभी प्रमुख पात्रों की यह विशेषता थी कि वे शत्रु को तग करने के लिए छिपकर छापा मारते, राज्यों को लूटते, आग लगा देते, चौथ उगाहते और जगलों एव अन्य सुरक्षित स्थानों मे जा छिपते थे।

दिल्ली राज्य के शत्रुओ और विद्रोहियों मे परस्पर मित्रता स्थापित हो जाया करती थी। ऐसे मेल-मिलाप द्वारा वे अपने शत्रु को पराजित करने के लिए सदैव प्रयत्न करते रहते थे। अवसर पडने पर विश्वासघात, हत्या आदि करने से भी कुछ पात्र नहीं चूकते थे, किन्तु अधिकाश पात्र सत्यानुसार आचरण करनेवाले और महान् व्यक्ति थे।

इन पात्रों मे और विशेषरूप से नायकों मे सच्ची राजपूत वीरता एव कर्मण्यता के गुण वर्तमान थे। प्रतिद्वन्द्वी से लोहा लेना और करमिट अथवा मरमिट की भावना उनमे रहा करती थी। उनकी वीरता, क्रूरता एव नृशसता की भित्ति पर अवलबित नही थी। हाहा खाते पर हाथ उठाना, धोके से शत्रु को मारना आदि बातें उन्हे रुचिकर नही थी। प्रार्थना किये जाने पर वे शत्रु को धर्म-द्वार प्रदान कर दिया करते थे। वे जितने वीर होते थे उतने ही दयालु और जितने ही कठोर उतने ही उदार।

इन पात्रों मे स्वामिभक्ति, कृतज्ञता आदि गुण वर्तमान थे। सेनापति आदि कर्मचारी अपने स्वामी के कार्य को बडी तत्परता और सच्ची लग्न के साथ किया करते थे। यह उनके चरित्र की एक अलौकिक विशेषता थी।

इन ग्रथों में कुछ ऐसे पात्र भी मिलते हैं जो छल-कपट, विश्वासघात एव धूर्त्तता के साक्षात् अवतार थे। अपने स्वार्थ की पूर्त्ति करना ही उनका एकमात्र लक्ष्य होता था। नीति, अनीति, उचितानुचित का ध्यान करना तथा ऐसी ही अन्य बातों पर विचार करना उनके लिए सदैव आवश्यक था। कुछ ऐसे भी पात्र थे जो आत्मश्लाघा एव दूसरों को उपदेश देना आदि ही सच्ची वीरता का आदर्श समझा करते थे।

इन ग्रथो मे नायक और उसके पक्ष के पात्रो के गुणों को बढा-चढाकर अकित किया गया है। उनके प्रतिपक्षियों को प्राय: अधिक ऊँचा उठाने का प्रयत्न नहीं किया गया है। ऐसे बहुत कम कवि हैं, जिन्होंने प्रतिनायक के आतक, गौरव और वैभव का उदारतापूर्वक वर्णन किया है। इस सबध मे मान और सूदन के नाम लिये जा सकते हैं। रासो परम्परा के अनुयायी जोधराज ने अपने ग्रथ के उपनायक के चरित्र को बहुत गिरा दिया है। सूदन, पद्माकर आदि कवियो ने अपने आश्रय दाता के शत्रु को भी मुक्त-कठ से प्रशंसा की है।

इन ग्रथों मे नारी-पात्रों का उल्लेख अपेक्षाकृत कम हुआ है। जटमल ने नारी-जाति-वर्णन और जोधराज ने स्त्री-चित्रण में रीति तथा रासो परम्परा का अनुसरण किया है।

उक्त सभी ग्रथों मे नारी-पात्र प्राय: दो रूप मे हमारे सामने आते हैं। कुछ ऐसे स्त्री-पात्र हैं जिनके नखशिख, सौदर्य आदि का वर्णन किया गया है। यह स्पष्ट ही शृङ्गारिक भावना का प्रभाव है। नारी का यह रूप उद्दीपक, साधना में बाधक और कर्त्तव्य-पथ से विमुख कराने वाला है।

नारी का दूसरा रूप भी इन ग्रथों मे देखने को मिलता है। उनका यह स्वरूप अत्यन्त उज्ज्वल एवं महान् है। इस रूप मे स्त्री सच्ची क्षत्राणी, सती, साध्वी, माता और पत्नी के रूप मे आती है। उसका यह रूप अधिक वास्तविक, वीरता से पूर्ण और स्थायी है। उसका यह चित्रण रीति-काल के अश्लील प्रभाव से बचा हुआ है। यह इस काव्यधारा की अपनी निजी विशेषता है, जिसकी उपमा अन्यत्र मिलना कठिन है। यद्यपि इन कवियो ने अपने ग्रथों में बहुत कम स्त्री-पात्रों का समावेश किया है, किन्तु जहा पर भी उन्होंने नारी के इस आदर्श रूप को रक्खा है वहाँ पर वह

सच्ची घटनाओं पर निर्भर होने के कारण अधिक सत्य एवं प्रभावोत्पादक हो गया है। नारी का यह रूप चारण, भक्ति और रीतिकालीन साहित्य में सबसे अलग अपनी विशेषता रखता है। सूक्ष्म होते हुए भी नारी का यह चित्रण आदर्श और महान् है।

ऊपर के विवेचन से यह स्पष्ट हो गया होगा, कि कुछ कवियों ने प्रबंध-काव्यों में इतिहास के अनुकूल और कुछ ने ऊहात्मक शैली के अनुसार अपने पात्रों के चरित्र अंकित किये हैं। कुछ ग्रंथों में अतिशयोक्तिपूर्ण चरित्र-चित्रण भी मिलते हैं। कुछ ग्रंथों में रासो की शैली पर चरित्रों का वर्णन किया गया है। मुक्तक-ग्रंथों में भी दो प्रकार के चरित्र-चित्रण मिलते हैं। कुछ में यशस्वी नायक को लेकर उसकी वीरता आदि का वर्णन किया गया है और कुछ में कोरी प्रशस्ति मात्र की गई है। कुछ कवियों ने चरित्र-चित्रण के प्रति उपेक्षा प्रदर्शित की है। पर प्रायः सभी ने कुछ विशिष्ट शैली ही का अनुकरण किया है। जैसा कि कहा जा चुका है, नारी-पात्र कम आये हैं, पर उनके चरित्रों की अपनी निजी विशेषताएँ हैं।

ऊपर बतलाई हुई चरित्र-चित्रण की प्रमुख प्रवृत्तियों को स्पष्ट करने के लिए नीचे प्रत्येक ग्रंथ के प्रमुख पात्रों के चरित्रों पर संक्षेप में विचार किया जा रहा है :—

वीरसिंहदेवचरित तथा रत्नबावनी

केशव के वीरसिंहदेवचरित के अध्ययन से विदित होता है कि कवि की प्रवृत्ति पात्रों के चरित्रों के क्रमिक विकास एवं चित्रण की ओर लेशमात्र भी नहीं रही है। इस ऐतिहासिक ग्रंथ में इतिवृत्तात्मक वर्णन-शैली का अनुकरण करते हुए तथा घटनावली की सूची देते हुए कवि तीव्र गति से अग्रसर होता हुआ दृष्टिगोचर होता है। पात्रों, स्थानों, आदि के नाम गिना देने की ओर कवि की विशेष रुचि रही है। पात्रों की इतनी भरमार कर दी है कि उनके चरित्र-संबंधी विश्लेषण के लिए अवसर ही नहीं रह गया है। साथ ही चमत्कारप्रियता, अलंकार-प्रयोग, ऋतु-वर्णन आदि के कारण भी चरित्र-चित्रण को व्याघात पहुँचा है। संवादों के द्वारा पात्रों के चरित्रों में सजीवता का समावेश हो जाता है। ऐसे अवसर जहाँ कहीं भी आये हैं, वहाँ पर पात्रों की विशेषताओं का विकास होता हुआ दिखलाई देता है, परन्तु बहुत कम पात्रों में। अधिकतर पात्र आत्मश्लाघा और उपदेशपूर्ण वार्तालाप में ही व्यस्त पाये जाते हैं।[१] स्त्री-पात्रों का कम उल्लेख किया गया है।

इस ग्रंथ में उल्लिखित अधिकांश पात्रों के ऐश्वर्य, वैभव, शौर्य, वीरत्व, चातुर्य, राजनीतिज्ञता आदि गुण इतिहास-प्रसिद्ध हैं। केशव ने उनके इन गुणों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया है। कहीं-कहीं पर उनकी ओर संकेत भर कर दिया है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, उनकी गति-विधि, विजयों तथा पराजयों का उल्लेख भर उक्त ग्रंथ में मिलता है।

'रत्नबावनी' मुक्तक ग्रंथ है। उसमें चरित्र का विकास नहीं हुआ है। रत्नसेन के कतिपय गुणों का उल्लेख भर किया गया है।

उपर्युक्त कथन की पुष्टि के लिए इन ग्रंथों के प्रमुख पात्रों के चरित्रों पर विचार कर लेना ठीक प्रतीत होता है। उक्त ग्रंथों के सभी पात्रों के चरित्रों पर इस सीमित परिधि में विचार करना संभव नहीं है। दूसरे वह अनावश्यक भी है, क्योंकि अधिकांश पात्रों के नामों का उल्लेख भर किया

---

[१] वीरसिंहदेवचरित्र, छं० ७८-८०, पृ० ३५

गया है। जिन पात्रों के चरित्र के सबध में यत्र-तत्र बिखरी हुई सामग्री मिलती है, उन्हीं में से कुछ प्रमुख पात्रों के चरित्रों पर नीचे विचार किया जा रहा है।

वीरसिहदेव—मधुकरशाह के कनिष्ठ पुत्र और बड़ौन के शासक वीरसिहदेव इस काव्य के नायक हैं। केशव ने इन्हे अत्यत शक्तिशाली, पराक्रमी, गहरवार-कुल-कलश, ईश-अशावतार, महाराजमणि, अकबार को दुःसह दुःख से [illegible] आदि विशेषणों से विभूषित किया है।[1]

यह आरभ से ही अकबर जैसे उद्दड सम्राट् का अपनी सीमिति सामग्री के बल पर बडी वीरतापूर्वक सामना करते रहे। वे उसके भेजे हुए सैनिकों को भगा देते तथा उसके सूबों और स्थानों पर बात की बात में अधिकार कर लेते थे। शत्रु की अपार सेना के आने पर वे घने वनो मे घुस जाते और वहाँ से उसको तग करते रहते थे।[2] यह उनकी राजनीतिक दूरदर्शिता थी। इतनी विशाल सेना का खुलकर सामना करना भयपूर्ण था। अतः उन्होंने उक्त नीति का अनुसरण किया था।

अकबर के सेनापति और सूबेदार नवाब दौलतखाँ द्वारा दक्षिण मे उच्च पद प्रदान करने के प्रलोभन को ठुकराकर आखेट का बहाना करके वीरसिहदेव ने बुदेलखड मे लौटकर बडौन पर पुनः अधिकार कर लिया। इन कार्यों से इनकी मातृ-भूमि के प्रति भक्ति एव नीति-चातुर्य्य विदित होती है।[3]

ओड़छा राज्य-परिवार से सहज शत्रुता होने पर भी वे अपने भतीजे सग्रामसाहि को अपने यहाँ बिना रोक-टोक आने-जाने देते थे। छली, विश्वासघातक एव दुष्ट प्रकृति के अपने ज्येष्ठ भ्राता रामसाहि की सेवा के लिए यह कहकर कि "जेठो भैया दजै राज। इनकी हमैं सेवा सौं काज॥ जो कछु राजा-आयुस दियौ। सिर पर मानि सबै हम लियौ॥" ये तत्पर हो गए थे।[4] तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए अपने ज्येष्ठ भ्राता के प्रति उनकी यह उदार भावना वास्तव मे उनके चरित्र को बहुत ऊँचा उठा देती है।

प्रयाग में पहुँचकर उन्होंने जो धार्मिक कृत्य किये उनसे उनकी धार्मिकता, दानशीलता, एव उदारता प्रकट होती है।[5]

वीरसिंहदेव अनकूल परिस्थितियों से लाभ उठानेवाले एक चतुर राजनीतिज्ञ थे। अपने शत्रु को नीचा दिखाना और अपनी स्वतत्रता की रक्षा करना ही उनका एकमात्र लक्ष्य था। इन्हीं कारणों से प्रेरित होकर उन्होंने विद्रोही सलीम से मैत्री स्थापित की थी।[6] वे निर्भय एव निडर योद्धा थे। इसी कारण सलीम के द्वारा किए गए अबुल्फजल को पकडने या मारने के प्रस्ताव का विरोध करते हुए उन्होने स्वामी और सेवक के पारस्परिक सबध को स्पष्ट करते हुए ये शब्द कहे थे:—

जन की जुवती कैसी रीति, सब तजि साहिब ही सों प्रीति।[7]

पर अत मे अपने मित्र के हित-साधन तथा अपने भावी लाभ एव अकबर के प्रति शत्रु भावना के वशीभूत होकर सलीम के प्रस्ताव के अनुसार कार्य करने को वे सन्नद्ध हो गए।

अबुल्फजल के मारे जाने पर क्रुद्ध होकर अकबर ने इनके विरुद्ध अपनी सारी शक्ति लगा

---

[1] वीरसिहदेव चरित छं० १-२, पृ० १ [2] वही, छं० २८-३७, पृ० २० [3] वही, छं० ५५-६, पृ० २३ [4] वही, छं० ६५, पृ० २३, छं० ३६, पृ० २६ [5] वही, छं० २६-४३, पृ० ३०-२ [6] वही, छं० ४४-५२, पृ० ३२-३ [7] वही, छ० ६१-३, पृ० ३३-४

दी। वीरसिंहदेव के परिवार के प्रायः सारे व्यक्ति शत्रु से मिले थे, पर उन्होंने बड़ी चतुरता, धीरता, एव वीरतापूर्वक शत्रु का सामना किया। वे एक दुर्ग से दूसरे और दूसरे से तीसरे मे चले जाते पर शत्रु के हाथ नही आते थे। विजय प्राप्त होने पर शत्रु को अभय-दान देकर वे अपनी विशालहृदयता का परिचय देते थे।[1]

जहागीर से प्राप्त बुंदेलखड के सारे पट्टे रामसाहि के सामने रखकर तथा अपने पुरोहित केशव मिश्र के परामर्श से उनके प्रभुत्व को स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत होकर उन्होंने भरत सदृश्य त्याग का आदर्श उपस्थित किया था।[2] यही नहीं, ओरछा मे नर-सहार बद करवाकर, ओरछा आदि इद्रजीत तथा अन्य व्यक्तियों को समर्पित करके तथा रामसाहि को मुक्त कराने के लिए आगरा पहुँचकर उन्होंने अपनी दयालुता, निर्लिप्तता, भ्रातृ-भक्ति आदि अनुपम गुणों का परिचय दिया था।[3]

अत मे जहागीर ने इन्हे मधुकरसाहि के सारे देश का शासक बना दिया। कवि के शब्दो मे वे "नरदेवनि के देव" थे।[4]

ऊपर के सक्षिप्त परिचय से विदित होता है कि वीरसिंहदेव आदर्श वीर, चतुर राजनीतिज्ञ, धार्मिक उदार निर्भीक मनः तथा दानी शासक थे। वे पारिवारिक वैमनस्य और शत्रुता को दूर करने के उपाय करते रहते तथा गुरुजनों एव कनिष्ठों के प्रति अपने कर्त्तव्यपालन का सदैव ध्यान रखते थे। अकबर जैसे ऐश्वर्यवान् एव शक्तिशाली शासक को सदैव नाकों चने चबाते रहना ही उनकी महान्ता का पर्याप्त प्रमाण है।

रामसाहि—वीरसिंहदेव के सबसे बडे भ्राता और ओरछा के शासक रामसाहि उन व्यक्तियों में से थे जो स्वार्थ्यन्ध होकर सदा अपने परिवारवालों के विरुद्ध अकबर के इगित पर नाचा करते थे। वीरसिंहदेव से बड़ौन छीनने के लिए, इद्रजीत और वीरसिंहदेव मे वैमनस्य उत्पन्न करने के उद्देश्य से अकबर द्वारा प्रदत्त पचहजारी मसब और बुंदेलो के राजा बनने के प्रलोभन से वे अपनी रक्षा न कर सके। इसके लिए अकबर ने सरोपाव देकर इन्हे पुरस्कृत किया था। अपने स्वार्थ मे सफल होने के लिए वे शपथ का भी कोई मूल्य नहीं समझते थे।[5]

सारांश यह है कि रामसाहि मध्ययुगीन उन स्वार्थी तथा मदाध राजाओं के प्रतीक थे जो सत्ता और भूमि-अधिकार-प्राप्त करने के लिए तत्कालीन सम्राट् के चरण-तल पर लोटते, पारिवारिक एकता और शाति को नष्ट करके स्वार्थ-सिद्धि मे लीन रहते, सजातीय की उन्नति देखकर ईर्ष्याग्नि मे भस्म होने लगते और सत्यासत्य का कुछ भी ध्यान नही रखते थे।

इंद्रजीत—कछौवा के जागीरदार इद्रजीतसिंह कभी वीरसिंहदेव के साथ हो जाते और कभी अकबर तथा रामसाहि के पक्ष मे होकर उनका विरोध करने लगते। इससे ही इनके चरित्र की दुरगी नीति का ज्ञान हो जाता है।[6] इनमे त्याग की भावना थी, क्योंकि अकबर द्वारा प्रस्तावित राज्य-प्राप्ति को इन्होंने अस्वीकार कर दिया था।[7] ये बड़े बुद्धिमान् थे।[8] यह बड़े शक्तिशाली,

---

[1] वीरसिंहदेव चरित छं० ३७-५२, पृ० ४२-४, छं० ३७-५८, पृ० ५३-५ [2] वही, छं० ५४-६, पृ० ६० छं० ४२-६०, पृ० ६५-६ [3] वही, छं० ४६-५१, पृ० ८७ [4] वही, छं० ६३, पृ० ८८ [5] वही, छं० १६-४३, पृ० १६-२१, छं० २०-४०, पृ० २५-६ [6] वही, छं० २०, पृ० २५ [7] वही, छं० ४१-५, पृ० ४७ [8] वही, छं० ३७-८, पृ० ७०

युद्ध-प्रिय एवं वीर योद्धा थे। ओरछे के युद्ध में अबदुल्लाह की असंख्य सेना को पराजित करना इसका प्रमाण है। युद्ध मे अपने घोडे के मारे जाने पर भी वीरता से शत्रु-संहार करते हुए अचेतनावस्था को ये प्राप्त हुए।[1] अत मे अपने इन गुणों के लिए वे पुरस्कृत हुए और ओरछा के शासक नियुक्त किये गए।[2]

राव भूपाल—अपने पिता रत्नसेन के ही समान राव भूपाल भी महान् वीर योद्धा थे। अब्दुल्लाह को ओरछा से पराजित करके भगाने मे इनका प्रमुख हाथ था। रणक्षेत्र से घायल इद्रजीत को हटाकर सुरक्षित स्थान पर पहुँचाकर इन्होने अपनी बुद्धि-चातुर्य्य का परिचय दिया था। ये सच्चे स्वामि-भक्त थे। आपत्ति मे स्वामी का साथ देना स्वधर्मपालनार्थ सब कुछ त्यागने को तत्पर तथा सत्य, गाय, द्विज और मित्र की सतत रक्षा करने के लिए सदैव परिकरबद्ध रहते थे। उनका सिद्धान्त था कि—

सत्य गाय द्विज मीत कौ सतत रक्षा कर्म। स्वामी तजै न सांकरै यहै हमारो धर्म॥[3]

ईश्वर के प्रति उनकी अपार आस्था थी। गुरुजनों का आदर करने मे ये चतुर थे। तलवार चलाने मे कोई इनका सामना नही कर सकता था।[4]

सग्रामसाहि—संग्रामसाहि ने अपने पिता रामसाहि के सारे गुणों को उत्तराधिकार रूप मे पाया था। यह नीच प्रकृति के पुरुष थे। वीरसिहदेव से ऊपरी मन से मिले रहते थे। बरार के पास से वीरसिंह को बडौन को लौटाने का परामर्श देकर अवसर पाकर बडौन अपने लिए माँगकर अपनी स्वार्थपरता, विश्वास-घातकता एव नीचता का परिचय दिया था। केवल आतरिक बातों को जानने के अभिप्राय से ये वीरसिह के पास आते-जाते रहते थे। इस प्रकार ये स्वार्थी, लोभी, पदलोलुप एव धूर्त प्रकृति के मनुष्य थे।[5]

केशव मिश्र (केशवदास)—वीरसिह के शब्दों मे यह "कासीमनि के कुलदेव। सबही के भेव को जाननेवाले" थे।[6] ये योग्य राजनीतिज्ञ, राजपरिवार के हितैषी, युद्ध के विरोधी एव कुल-मर्यादा के रक्षक थे।[7] मत्र-बल, मित्र-बल, बुद्धि-विवेक, दलबल दुर्ग-बल, दान-बल, बाहुबल एव ईश्वर-बल के अभाव मे युद्ध का निषेध करनेवाले चतुर नीतिज्ञ थे। कल्यानदे द्वारा निकाले जाने पर इन्होंने वीरसिहदेव के यहाँ आदर पाया।[8] इससे इनकी स्पष्टवादिता तथा निर्भीकता का अनुमान लगाया जा सकता है।

राव प्रताप—यह महान् वीर थे और वीरसिंह के प्रति सदैव स्वामिभक्त रहे। उनकी सेना में रहकर सदा वीरता के साथ शत्रु का सामना किया करते थे। वे 'रनजीत' माने जाते थे।[9]

रत्नसेन—मधुकर साहि के पुत्र और वीरसिंहदेव के अग्रज रत्नसेन तलवार चलाने में अत्यत दक्ष थे। इनकी वीरता पर मुग्ध होकर अकबर ने अपने हाथ से इनके सिर पर पाग बाधकर इन्हे सम्मा-

---

[1] वीरसिंहदेव चरित छं० ३१-४१, पृ० ७५ [2] वही छ० ४८, पृ० ८७ [3] वही, छं० १५, पृ० ७६ [4] वही, छं० ३१-४५, पृ० ७५-८० [5] वही, छं० ५८-६५, पृ० २२-३ छ० २७-३२, पृ० ४१-४ छं० २-६, पृ० ४४ [6] वही, छं० ४१, पृ० ६४ [7] वही, छ० ३४-६१, पृ० ६४-६ [8] वही, छं० ४०-५०, पृ० ७०-१ [9] वही, छं० १२, पृ० ५०, छं० १३, पृ० ७३, छं० ६३, पृ० २३

नित किया था। इन्होंने वीरतापूर्वक युद्ध करके 'गौर' को जीतकर अकबर के राज्य की वृद्धि की थी।[१] वह ईश्वर और पत्नी मे विश्वास करनेवाले महान् पुरुष थे। अपनी कुल-प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए सब कुछ त्यागने के लिए तत्पर रहते थे और उसी के लिए वीरता से लड़कर अत में परमधाम सिधारे।[२]

इस प्रकार रत्नसेन का चरित्र उन इने-गिने महान् व्यक्तियों मे से है जो अपनी वश-परपरागत मान-मर्यादा के लिए हँसते-हँसते प्राण-विसर्जन करते हैं।

रानी कल्यानदे—केशव ने अपने ग्रथों मे स्त्री-पात्रो को कम स्थान दिया है। रानी कल्यानदे के चरित्र द्वारा उन्होंने यह दिखलाया है कि अतःपुर की देवियाँ किस प्रकार नौकरों के कहने के वश मे होकर कार्य कर बैठती थी और वे प्रायः सकीर्णता, स्वार्थपरता, एव मूर्खता की साक्षात् प्रतिमा हुआ करती थी।[३]

अकबर—वीरसिंह के प्रतिद्वन्द्वी इतिहास-प्रसिद्ध अकबर के चरित्र के सबध मे केशव ने बहुत कम लिखा है। शेखअबुल्फजल के मरने पर उसका शोक-विह्वल होना तथा वीरसिंह को दड देने के लिए अपने राज्य की सारी शक्ति लगा देना अकबर के अबुल्फजल के प्रति मैत्री-भाव, तथा गुण-ग्राहकता का पता चलता है। अकबर भेदनीति मे भी बडा चतुर था इसीलिए उसने सग्राम को कछौवा और बडौन की जागरें दी थी।[४]

सलीम—मेवाड से हारकर लौट आने से अकबर के शाहजादे सलीम की कायरता विदित होती है। विद्रोही सलीम ने स्वार्थ के लिए [illegible] की हत्या करवा कर अपने नाम पर कलक का टीका लगवाया था। पर उसमे एक महान् विशेषता थी कृतज्ञता तथा गुण-ग्राहकता की। अबुलफजल की हत्या के उपरात वह वीरसिहदेव के क्रीत दास के समान व्यवहार करने लगा था। उसने उसे राजा बनाया, स्वय अकबर के हाथों महान् कष्ट और असह्य वेदनाएँ सही पर वीरसिह को उसे समाप्ति करने के लिए उद्यत न हुआ। स्वय सम्राट् बनने पर उसने वीरसिह को सपूर्ण बुंदेलखड का राजा घोषित किया। उस स्वार्थान्ध युग मे सलीम कृतज्ञता आदि सद्गुणों का प्रतीक माना जा सकता है।[५]

अबुलफ़ज़ल—केशव के अनुसार अबुल्फजल् सलीम को तिनके के समान भी नही मानता था। वही पिता-पुत्र के मध्य मनोमालिन्य का प्रमुख कारण था। वह बड़ा अभिमानी, वीर, क्रोधी, दक्षिण का विजेता तथा सम्राट् का विश्वासपात्र था। आलमतोग और नगाडे की रक्षा करना वह अपना कर्तव्य समझता था। हिन्दुओ के प्रति उसमे घृणा की भावना थी। यह उसकी महान् धार्मिक सकीर्णता थी। युद्ध से पीठ दिखाकर भाग जाना उसको कायरता का द्योतक लगता था। युद्ध छिड़ जाने पर क्रोध से अग्नि-वर्ण होकर वह युद्ध करने लगता था। रण-क्षेत्र मे प्राण देकर उसने अपने स्वामी अकबर तथा अपनी मान-मर्यादा की रक्षा की। सलीम उसे 'दिल्ली के घर का बध' पुकारा करता था।[६]

---

[१] वही, छं० ६-१०७, पृ० १५-६ [२] केशव पंचरत्न, छं० १२, १४, १६, २०, २३, पृ० ३, ४, ५, ६, [३] बीरसिहदेवचरित्र छं० ६१-४, पृ० ६६ [४] वही, छं० ६-२३, पृ० ३८-४१ [५] वही, छं० ३, पृ० २८ छं० ५९, पृ० ३३ छ० ९६-१०१, पृ० ३७ छ० ६३-६, पृ० ४९ [६] वही, छं० ५४-७, पृ० ३३ छ० ७१-९०, पृ० ३४ ६ छ० ९५, पृ० ३७

ऊपर केशव के ग्रंथो के कुछ पात्रों के चरित्रों पर विचार किया गया है। जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है कि चरित्र विकास पर कवि ने बहुत कम ध्यान दिया है। वर्णनात्मक-शैली अपना कर द्रुतगति से पुस्तक की घटनावली के अन्त तक पहुँचने की कवि की प्रकृति रही है।

गोराबादल की कथा

गोराबादल की कथा में भी कवि की प्रवृत्ति चरित्र-चित्रण की ओर नहीं गई है। कवि का ध्यान शृगारिक वर्णन तथा ऐतिहासिक इतिवृत्तात्मक घटना-चित्रण की ओर अधिक रहा है। पात्रों के चारित्र-विकास की ओर से उसने आँखें बद कर ली हैं।

जटमल ने स्त्री के सौंदर्य के साथ उसकी वीरता, सच्चे मातृत्व एव रमणीत्व का सुंदर चित्रण किया है।

इस ग्रंथ में पात्रों के स्वभाव एव गुण-दोषों का अत्यंत अल्प विवरण उपलब्ध होता है। उसी के आधार पर मुख्य पात्रों का सक्षिप्त चरित्र नीचे दिया जाता है .—

गोरा—जटमल के अनुसार गोरा बली, रण-रसिया और रण-ढाल था। अस्त्र-शस्त्र प्रयोग मे वह जितना चतुर था उतना ही दानी भी था। युद्ध मे वीरतापूर्वक लडते हुए उसने स्वामी के कार्य-सपादन मे अपने प्राण विसर्जित किए। उसकी वीरता पर मुग्ध होकर उसके शिर को क्रमशः गिरिजा, देवागना, गगा और शंभु ने लेकर सत्कार प्रदान किया।[1]

बादल—बादल भी अपने चाचा गोरा के समान अनुपम वीर, रणरसिक, एव शरणागत-रक्षक था। अपना शिर देकर यश से भूमंडल को भर देने की उसकी प्रतिज्ञा थी। वह बड़ा ही नीति-चतुर भी था, क्योंकि डोली की योजना उसी के मस्तिष्क की उपज थी। माता और पत्नी के रोकने पर भी वह युद्ध मे जाने के न रुका इससे उसके अदम्य उत्साह और शौर्य का असीम परिचय मिलता है। उसका सिद्धात था कि—

नासी न पूत देऊँ कबहुँ, बादल दल थेना चलै।

अत में वीरतापूर्वक लड़ते हुए अलाउद्दीन को पराजित करके उसने राय रत्नसेन को छुड़ाकर दम ली।[2]

रतनसेन—चितौड के राजा रायमल बत्तीसों लक्षणों से युक्त, रण-निपुण तेजस्वी तथा पराक्रमी योद्धा थे। वे भाटों का विशेष सम्मान किया करते थे। आखेट के प्रति उनकी विशेष रुचि थी। वे एक रसिक हृदय व्यक्ति थे। वे पद्मावती पर विशेष अनुरक्त। रतनसेन सरल प्रकृति के थे इसी कारण से वे अलाउद्दीन के प्रलोभन जाल मे फँस गये थे। शारीरिक यातना से भयभीत होकर पद्मावती को अलाउद्दीन को समर्पित कर देने के लिए उद्यत होकर उन्होंने अपनी भीरुता का परिचय

---

[1] गोराबादल की कथा छं० ६, पृ० ६, छं० ६२, पृ०, २४ छं० १३०, पृ०, ३० छं० १३४, पृ० ३१ छं० १४२-३, पृ० ३३, छं० १४६, पृ० ३३

[2] वही, छं० ६, पृ० ६ छ० ६२, पृ० २३ छं० ६६, पृ० २४ छं० ६८, पृ० २५ छं० १०४ पृ० २६ छं० १०७-६, पृ० २७ छं० ११६, पृ० २८ छं० १३६-७, पृ० ३१-२

दिया था। पर डोलियों के आने पर अप्रसन्नता प्रकट की। इससे विदित होता है कि वे स्वभाव से वीर थे। उनकी वह कायरता क्षणिक थी।[1]

पद्मावती—पद्मावती अत्यंत रूपवती एवं गुणवती थी। अपनी मान प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए कपट से काम लेने को भी वह उचित समझती थी। गोरा और बादल को युद्ध के लिए प्रस्तुत करने से उसकी नीतिचातुर्य विदित होती है। युद्ध से विजयी होकर लौटने पर बादल की उसने आरती उतारी इससे सिद्ध होता है कि वह कृतज्ञता और गुणग्राहकता के उच्च आदर्श मे विश्वास रखती थी।[2]

अलावदी (अलाउद्दीन)—अलाउद्दीन महान् महान् शक्तिशाली, हठी तथा आखेट-प्रिय शासक था। वह बडा सरस व्यक्ति था। सच्चे गुणों का सदैव आदर करता था। वह कपट और प्रलोभन मे कार्य-सिद्धि को न्याय संगत मानता था।[3]

*अन्य पात्रों का न तो विशेष महत्त्व है और न उनके चरित्र के संबंध में ग्रंथ से विशेष सामग्री ही उपलब्ध है।

ललितललाम

मतिराम ने ललितललाम नामक मुक्तक ग्रथ मे के आलोच्य छंदो में बूदी नरेश राव भाव-सिंह के पूर्वजों से लेकर उन तक के राजाओं की गुणगाथा वर्णन करने का प्रयत्न किया है। यह वर्णन एकदम चारणो के समान ही है। केवल प्रचलित विशेषणो, धार्मिकता, प्रताप, आतक और दानशीलता का ही विशेष उल्लेख मिलता है। राव भावसिह के चरित्र के सबध मे कवि के विचार देखने से यह बात स्पष्ट हो जाती है : –

राव भावसिह—मतिराम के अनुसार राव भावसिह हिन्दुओं की ढाल थे। वे ईश्वर भक्ति और वेद मे आस्था रखते थे। वे तेजस्वी, दुष्ट-दमनकर्ता और प्रतापशाली थे। भावसिह दान मे कल्पद्रुम के समान थे। वे समर मे हटना नही जानते थे। वैरियों के नाश और मित्रों के रक्षण मे वे चतुर थे। हाथियो का दान करने मे उनकी समता कोई नही कर सकता था। वे राजऋषि सदृश्य थे।[4]

इस प्रकार मतिराम द्वारा वर्णित चरित्र-चित्रण मे कोई नवीनता अथवा मौलिकता नहीं है। उन्होंने अपने आश्रयदाता मे सभी गुणों विशेषकर गज-दान की महानता को आरोपित किया है।

भूषण ग्रथावली

भूषण के सारे ग्रथ मुक्तकाव्य शैली मे प्रणीत हैं। मुक्तक-कविता में रस-परिपाक पर विशेष

---

[1] गोराबादल की कथा, छं० ३, पृ० १, छं० ४, पृ० वही, छं० १० पृ० २ छं० १५-६, पृ० ३ छं० २२, पृ० ५-६, छं० २६, पृ० ८ छं० ८१, पृ० २० छं० ८६, पृ० २२ छं० ८८, पृ० २३ छं० १२५, पृ० २६ [2] वही, छं० १४, पृ० ३ छं० ७६, पृ० २० छं० ६१, पृ० २३ छं० ६२-३, पृ० २३-४ छं० १३८, पृ० ३२ [3] वही, छं० ३३, पृ० ६ छं० ३४ पृ० वही, छं० ६४, पृ० १६ छं० ६५, पृ० १६ छं० ७२, पृ० १७ छं० ७६, पृ० १६ छं० ८६, पृ० २२

[4] मतिराम ग्रंथावली, ललितललाम छद ३४-३, पृष्ठ ३६७ छ० ४१, पृ० ३६८ छं० ४७ पृ० ३७० छं० ५८, पृ० ३७२ छं० ६४, पृ० ३७३ छं० ७१, पृ० ३७५ छ० ११६-२० पृ० २८६-३८७, छं० ३७३, पृ० ४६५

ध्यान रखा जाता है। उसमे चरित्र-चित्रण, पात्रों के स्वाभाविक गुणदोषों के क्रमिक विकास तथा उत्थान-पतन का वर्णन करने के लिए बहुत कम अवसर रहता है। यही कारण है कि भूषण की कविता मे पात्रों के चरित्र-चित्रण मे उस प्रवृत्ति का अभाव है जो प्रबन्ध काव्यों मे दृष्टिगोचर होती है।

भूषण की कविता का अधिकाश भाग प्रातःस्मरणीय, पुण्यश्लोक महाराज शिवाजी तथा छत्रसाल के विषय मे है। इन अनुपम वीरों के कुछ विशिष्ट गुणों एव कृत्यों ही को आधार मानकर इन्होंने अपने काव्य का भव्य प्रासाद निर्मित किया है। अन्य पात्रों के नाम केवल प्रासगिक रूप से उक्त नायकों के गुण-विकास के लिए उल्लिखित कर दिये गये हैं। अतएव नीचे केवल इन्हीं प्रमुख पात्रों के चरित्रो पर विचार किया जा रहा है।

शिवाजी—भूषण ने शिवाजी को शिव जी का अवतार माना है। वे बाल्यावस्था से ही महान् वीर थे। उन्होंने बाल लीला के बहाने अनेक गढ एव कोट अधिकृत कर लिये थे। शिवाजी महान् बलशाली, साहसी और उत्साही राजा थे।

युवा होते ही इन्होंने अपनी वीरता द्वारा असख्य दुर्गो पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। दक्षिण के मुसलमान राज्यो और भारत समाट् औरगजेब की सेनाओं को अपनी वीरता के बल पर वे सदैव पराजित करते रहे। वे युद्ध-कला मे बडे चतुर थे। अस्त्र-शस्त्र प्रयोग तथा सैन्य सचलन मे कोई भी उनकी समता नही कर सकता था।

शिवाजी प्रायः शत्रु पर अचानक धावा बोला करते थे, जिससे शत्रु आतक के वशीभूत होकर अपने बचाव के उपाय सोचने लगता था। सलेहरि विजय और शाइस्ता खॉ पराजय इनकी इस सफल नीति के प्रमाण हैं।

वे शत्रु से सदैव सावधान रहते थे। यही कारण था कि अफजल खॉ से भेट करने के लिए जाते समय वे अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित होकर गये थे। शिवाजी उक्त सावधानी के साथ कुशाग्रबुद्धि भी थे। यदि यह न होता तो आगरे के कारागार से मुक्त होना उनके लिए असम्भव हो जाता।

युद्धवीर होने के साथ ही वे नम्र, विनयशील तथा दयालु थे। शत्रु के प्रार्थना करने पर वे उसे अभय दान देकर उसके गतव्य स्थान तक पहुँच जाने के समय तक की उसकी रक्षा का सारा भार अपने ऊपर से लिया करते थे।

वेद, गौ और ब्राह्मण के सेवक शिवा जी ने औरगजेब की हिन्दू धर्म विनाशिनी नृशसतापूर्ण नीति का सफलता पूर्वक विरोध करके हिन्दू धर्म की रक्षा की।

अधिक क्या, शिवाजी वीररसावतार, दक्षिण की ढाल, हिन्दुओं की दीवार और तुर्कों के काल थे। वे सदैव वीरता एव निर्भीकता का प्रदर्शन किया करते थे। शिवाजी सुदरता, गुरुता, प्रभुता, सज्जनता, दयालुता, कोमलता, दान, कृपाण-सचालन, दीनों को अभय-दान, विवेक-बुद्धि आदि सद्गुणों के साक्षात् अवतार थे।[1]

छत्रसाल—वीर केसरी महाराज छत्रसाल अत्यत शक्तिशाली एव अनुकरणीय योद्धा थे।

---

[1] **विश्वनाथप्रसाद मिश्र, भूषण ग्रंथावली, शिवराज भूषण, छं० १३, ३४, ४०, ५१, ६३, ६८, ७३, ७५, ७६, ८३, १११, १२२, १६२,२३७, २४६, २६६, शिवा बावनी, छं० ६, १७, १८, ४१, ४२**

बर्छी आदि आयुध प्रयोग में कोई भी इनकी समता नहीं कर सकता था। इनकी धाक सर्वत्र व्याप्त थी। कोई भी इनका सामना करने का साहस नहीं कर सकता था। वे वीर रस मे सदैव मत्त रहते थे। औरंगजेब भी सदा इनसे काँपता रहता था। वे जैसे वीर थे वैसे ही दानी।[1]

औरंगजेब—भूषण की कविता में यह शिवाजी और छत्रसाल के प्रतिपक्षी के रूप में आया है। औरंगजेब बडा छली, कपटी, एव धूर्त था। सिहासनारुढ होते समय इसने अपने सबधियों को मौत के घाट उतारा। उसने बाबर और अकबर की हिन्दुओं के प्रति सहिष्णुता की नीति त्यागकर उनके साथ नृशसता एव क्रूरता का व्यवहार करना आरभ कर दिया था।

उदड एव शक्तिशाली औरंगजेब शिवाजी की शक्ति के आतक से सदैव भयभीत रहता था। 'सरजा' नाम सुनते ही औरंगजेब अचेत हो जाया करता था। ससारविजेता औरंगजेब को शिवाजी से पराजित होना पड़ा था।[2]

ऊपर के कतिपय चरित्रों के विवेचन से विदित होता है कि भूषण ने अपने पात्रों के कुछ गिने-गिनाए गुणदोष का ही विवेचन किया है। अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन होने पर भी उनके अधिकांश गुण ऐतिहासिक सत्य घटनाओं पर अवलबित है। भूषण ने अपने नायक के प्रतिपक्षी को प्रायः प्रच्छन्न रखा है।

राजविलास

मान कवि ने पात्रों के चरित्र-चित्रण मे अपनी निजी शैली को अपनाया है। दरबारी कवि होने के नाते चारण शैली मे उन्होंने स्वय ही पात्रों के सबध मे प्रशस्ति-शैली का आश्रय लेकर कथन किये हैं। यत्र-तत्र पात्रों से उन्होंने सुदर गर्वोक्तियाँ कहलाई हैं, पर उनसे उन पात्रों के वास्तविक गुण-दोषों पर प्रकाश नही पडता। उन उक्तियों मे शब्दाडबर, वाक्जाल और आत्मश्लाघा ही की प्रधानता है। इतना अवश्य है कि इन उक्तियों से पाठक के हृदय मे वीररसात्मक स्फूर्ति का अवश्य संचार हो जाता है।

इस कवि ने पात्रों के सबध में उक्तियों की प्रायः आवृत्ति कर दी है। वे प्रायः एक ही प्रकार के भाव व्यक्त करते हुए दिखलाए गये हैं। परिणाम यह हुआ है कि इन पात्रों के सबध मे हमे एक ही प्रकार की धारणा निर्धारित करनी पडती है। पात्रों का अस्तित्व जहाँ पर भी स्वयं सामने आया है वहाँ पर उनका रूप अधिक निखरा हुआ दृष्टिगोचर होता है। राजसिह के प्रतिपक्षी औरंगजेब के ऐश्वर्य, वैभव, आतंक आदि का वर्णन करके कवि ने नायक के गौरव को बढाने का प्रयत्न किया है। उनकी यह विशेषता भूषण से भी बढकर है।

राजविलास में स्त्री पात्रों का कम उल्लेख हुआ है। कवि ने उनके केवल सौंदर्य और नख-शिख का ही वर्णन किया है। तत्कालीन मान-मर्यादा पर मर मिटनेवाली राजपूत-रमणियों के चित्रण का इसमे खटकनेवाला अभाव है। रूपकुँवरि ने औरंगजेब के साथ किये जानेवाले अपने विवाह का विरोध करके क्षत्राणियोचित गुणों का कुछ आभास दिया है।

नीचे कुछ पात्रों के गुण-दोषों का विवेचन कर लेने से ऊपर की बातों का स्पष्टीकरण हो जायेगा।

---

[1] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण ग्रंथावली, छत्रसाल दर्शक, छं०२, ३, ७, १० फुटकर, छं० ४१, पृ० १०७ [2] वही, शिवराज भूषण, छं०७६, ६०, १११, २५६, २८० शिवाबावनी, छं० ३५, ३६, ४०, ४१

राजसिंह—राजविलास के देखने से विदित होता है कि राजसिंह की प्रकृति विभिन्न गुणों की आकर थी। वे बाल्यावस्था से ही युद्धप्रिय थे। मल्ल युद्ध, उन्मत कुंजरों की लड़ाई आदि की ओर उनका अधिक झुकाव था। साथ ही उन्हें नाटक गीत आदि में भी अधिक आनंद मिलता था। उनके अंग-प्रत्यंग में सदा राग-रंग रमता था। 'ऋतु-विलास वाटिका' उनकी सरसता एवं सहृदयता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस प्रकार वीरता एवं शृंगारिकता दोनों का उनमें सुंदर सामंजस्य था।

वे खरी बात कहनेवाले थे। उन्हें देखकर शत्रु काँप जाते थे। वे जितने वीर थे उतने ही भगवद्भक्त तथा प्रजा-वत्सल भी थे। दुर्भिक्ष से पीड़ित प्रजा के हाहाकार को सुनकर उनका हृदय करुणा से द्रवीभूत हो गया था। इसीलिए उन्होंने 'राजसर' का निर्माण कराया था, जिससे असंख्य प्राणियों की रक्षा हुई थी। अतएव राजसर उनकी प्रजा-पालन नीति तथा दयालुता का सजीव कीर्तिस्तम्भ है।

गुजरात की पीड़ित प्रजा की करुण कहानी सुनकर उन्होंने वहां से अपने पुत्र भीमकुमार को लौटा लिया जो उस प्रदेश को लूटने और प्रजा को कष्ट देने में व्यस्त थे। यह भी उनकी दीन-रक्षा एवं दयालुता का एक प्रमाण है।

जोधपुर के शरणागत शिशु महाराजकुमार अजीतसिंह को आश्रय देकर महाराणा ने अपनी शरणागत-वत्सलता का परिचय दिया था।

वे जितने वीर, सरस, दानी और दयालु थे, उतने ही चतुर राजनीतिज्ञ भी। औरंगजेब के आक्रमण का समाचार ज्ञात होने पर दुर्गम पार्वतीय प्रदेश में रहकर शत्रु का सामना करने के लिए निश्चय करना उनकी महान् युद्ध-नीति-चातुर्य थी।

कि बहुना, महाराणा राजसिंह दानी, सज्जन का सम्मान करनेवाले और दुर्जन को दंड देनेवाले थे। वेद-विहित नीति के अनुसार वे इस उत्तम ढंग से न्याय करते कि दूध का दूध और पानी का पानी हो जाता था। कवि के मतानुसार इनके शासन-काल में अजा और सिंह एक घाट पानी पीते थे।[1]

जगत्सिंह—यह महाराणा राजसिंह के पिता थे। जगत्सिंह बड़े धर्मात्मा और वेद आदि धार्मिक ग्रंथों के पंडित थे। वे महान् दानी, उदयपुर-शृंगार, गो-ब्राह्मण तथा प्रजापालक थे। ये 'हिन्दुआन'-सूर्य थे।[2]

जसवंतसिंह—मान के मतानुसार जोधपुराधीश महाराज जसवंतसिंह हिन्दू-हठ-रक्षक तथा संग्राम-शूर थे। वे बड़े अभिमानी एवं चतुर माने जाते थे। भरसक प्रयत्न करने पर भी औरंगजेब इन्हें अपने किसी भी प्रपंच में न फँसा सका था। यह इनके चातुर्य का पर्याप्त प्रमाण है।[3]

---

[1] राजविलास, छंद १६१-२, पृ० ६१, राजविलास, छं० १६, पृ० ६४, छं० ६०, पृ० ७५, छ० १, पृ० ७६, छ० ४३-४, पृ० १२४-५, छ० १३५-७, पृ० १३६, छं० ८, पृ० १४६, छं० १६५, पृ० १८१, छं० ६६, पृ० २०१, छ० ३६-७, पृ० २३०, छं० १०५, पृ० २६२ [2] वही, छंद ३८, पृ० ४१, छ० ४४-२, पृ० वही; छ० ५५, पृ० ४२, छं० १६, पृ० ६३, छं० ३०, पृ० ६५ [3] वही, छं० ८७, पृ० ७५, छं० ५२, पृ० १५५

औरंगज़ेब—राजविलास में औरंगजेब महाराणा राजसिंह के प्रति-पक्षी के रूप मे अंकित हुआ है। इस ग्रंथ के अनुसार वह महान् शक्तिशाली सम्राट् था। उसके ऐश्वर्य, एवं वैभव की सर्वत्र धाक थी।

वह प्रलोभन, दंभ, छल, कपट, धूर्तता आदि सभी से काम लेने मे दक्ष था। राज्य-प्राप्ति के लिए अपने पिता को कारागार मे डालने से भी वह नहीं चूका था।[1]

शाहज़ादा अकबर—मान के अनुसार यह शाहजादा अहंकारी, ऐश्वर्य एव तरुणावस्था के मद से अंधा और राग-रंग मे सदैव लिप्त रहनेवाला था। मल्ल-युद्ध तथा गज-युद्ध मे उसकी विशेष अभिरुचि थी।[2]

ऊपर दिये हुए कतिपय पात्रो के चरित्रों के उल्लेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि मान ने प्रायः सभी पात्रों मे एक सी ही विशेषताएँ दिखलाने की चेष्टा की है। उन्होंने कुछ विशिष्ट गुणों और दोषों को लेकर उनका उल्लेख भर कर दिया है। राजविलास मे प्रबंधात्मक एव क्रमिक चारित्र्य-विकास का अभाव है। पात्रों के चरित्र-चित्रण मे कवि ने परंपरा का अनुकरण किया है; पर कहीं-कहीं पर उसने वास्तविक गुण-दोष की ओर भी संकेत किया है।

छत्रप्रकाश

छत्रप्रकाश इतिहास काव्य है। बुंदेल-वंश की उत्पत्ति से लेकर छत्रसाल तक की वंशावली और चंपतिराय तथा छत्रसाल के युद्धों और वीर-कार्यों का इतिवृत्तात्मक वर्णन ही इसमे मिलता है। पात्रों की संख्या भी बहुत है पर अधिकांश नाम प्रसंगवशात् घटना से संबंधित होने के कारण-उल्लिखित हुए है। उनके गुण, शील, स्वभाव के क्रमिक विवरण का अभाव है। कवि ने सरल पद्धति का अनुसरण करते हुए घटना-वर्णन को ही अपना लक्ष्य बनाया है। चंपतिराय तथा छत्रसाल के युद्धों से संबंधित बातों का ही वर्णन होने के कारण अधिकांश पात्रो के चरित्र-चित्रण का उल्लेखनीय विवरण इसमे नही मिलता। पर चंपतिराय और छत्रसाल के शौर्य और वीरता का विवरण पर्याप्त मात्रा मे मिल जाता है। अतः इनके ही चरित्रो को नीचे देने का प्रयत्न किया जा रहा है :—

चंपतिराय—गोरेलाल ने चंपतिराय को महान् वीर एवं अदम्य उत्साहवाला व्यक्ति चित्रित किया है। इन्होंने अपने बाहु-बल से शाहजहाँ से बुंदेलखंड का राज्य पुनः लौटा लिया था। ये बडे युद्ध-नीति-चतुर थे। शत्रु के राज्य मे छापा मारते थे और उसके राज्य के चंबल से बेतवा नदी तक के सारे प्रदेश मे आग लगा दी थी। वे कभी सामने आकर युद्ध करते और कभी छिपकर शत्रु पर आक्रमण करते थे। वे उससे मनमाना 'डाड भराया' करते थे। ये सारे कार्य उनकी नीति-कुशलता के यथेष्ट प्रमाण है।

चंपतिराय सदैव शत्रु से सावधान रहते थे। ओडछा के पहाडसिंह द्वारा भेजे हुए हत्यारे को इन्होने रात्रि के अंधकार मे मार डाला था। वीर इतने थे कि दारा के साथ कंधार तक युद्ध मे भेजे गये थे। इन्हीं की सहायता से औरंगजेब गुप्त मार्ग से नदी पार उतर कर अपनी सेना की रक्षा

---

[1] राजविलास, छं० २३, पृ० १०६ छं० ८२, पृ० ११४, छं० ६-११, पृ० १४६; छं० ५१, पृ० १५५ [2] वही, छं० ११५, पृ० १६६, छं० १, पृ० २११, छं० ७, पृ० २४४, छं० ८, पृ० वही, छं० ६७, पृ० २६१

कर सका था। औरंगजेब की सेना के अग्रभाग मे रहकर इन्हाने दारा को पराजित किया था यही इनकी वीरता का पर्य्याप्त प्रमाण है।

घायल होकर ये अधिक रणोन्मत्त हो जाते थे। संधि की अपेक्षा युद्ध को यह अधिक श्रेयस्कर समझते थे।

इनकी वीरता क्रूरता की भित्ति पर अवलम्बित नही थी। इन्होंने सेहरा के राजा को बादशाह के कारागार से मुक्ति दिलवाई थी। उनका यह कार्य भी इनकी दयालुता और द्रवणशीलता का द्योतक है। यह कवियों को दानादि देकर सदैव उनका आदर किया करते थे।

ये ईश्वर के महान् भक्त थे। जर्जर शरीर होने और शत्रुओं द्वारा चारों ओर से आक्रात रहने पर भी वे ईश्वर के मदिर मे दर्शनार्थ गए थे।

अत में जब शत्रुओं ने इन्हे घेर लिया तो अपनी मान-मर्य्यादा की रक्षा करने के लिए कटार मारकर इन्होंने प्राण विसर्जन कर दिया।

चपतिराय ने अपने वश और क्षत्रियों के पानी को रक्खा, शत्रुओ का सदैव नाश किया, निर्बलों की रक्षा की और सबलों का नाश किया। वे सज्जनों को अत्यत प्रिय थे। उन्होंने ससार मे अपना यश प्रसारित किया था।[1]

छत्रसाल—छत्रसाल जन्म से ही चक्रवर्ती के सर्व लक्षणों से युक्त थे। ये अपने कुल के मडन थे। बाल्यावस्था मे ही इन्होंने अस्त्र-शस्त्र-सचालन, असवारी, चौगान, आखेट, दान आदि ६४ कलाओं में दक्षता प्राप्त करली थी। 'दान, जूझ, बल, बूझ, बडाई' यही इनका मत था।

राम के ये अनुपम भक्त थे। पितृ-भक्ति भी इनके हृदय मे कूट-कूटकर भरी थी। आपत्ति मे धैर्य से काम लेना इनकी एक महान् विशेषता थी। माता-पिता की मृत्यु के अवसर पर इन्होंने अपनी असीम दृढता और साहस का परिचय दिया था।

हाथ पर हाथ रखकर बैठना ये कायरता का चिन्ह समझते थे। उद्यम की महानता मे इनका विश्वास था। जुझाऊ बाजे सुनकर छत्रसाल का हृदय वीर रस से उमडने लगता था और आनन पर अरुण-आभा सदैव छाई रहती थी। वीररस मे पगकर वे सब से आगे धावा मारते थे। वे सदैव शत्रु से ऊँचा मोर्चा लिया करते थे।

वश परपरागत प्रतिष्ठा की रक्षा, क्षात्रधर्म-पालन आदि को वह अपना सर्वप्रथम कर्त्तव्य समझते थे। नष्ट होते हुए हिंदू-धर्म की रक्षा तथा प्रातः स्मरणीय वीर शिवाजी की अलौकिक वीरता पर मुग्ध होकर शाही मसब को ठुकरा कर दुर्गम एव बीहड मार्ग की विपत्तियों को सहते हुए वे शिवाजी के पास पहुँचे थे। यह कार्य उनकी सच्ची गुणग्राहकता एव दूरदर्शिता का परिचायक है।

छत्रसाल वर्ण-धर्म-व्यवस्था मे विश्वास करते हुए क्षत्रिय के 'तेग चलाने' के कर्त्तव्य का पालन करते थे। वीर होने के साथ ही वे दयालु भी थे। दया से द्रवीभूत होकर ही उन्होंने पटैल, को बिना 'डाडे' छोड दिया था। शत्रु द्वारा 'धर्मद्वार' की प्रार्थना किए जाने पर युद्ध बंद करके उसे सुरक्षित स्थान पर चले जाने देते थे।

---

[1] छत्रप्रकाश, पृ० १५, १६, २६, ३०, ३१-४, ३७-८, ४०, ४५, ४६ ७, ५२, ५४, ५८ ६०-१, ६५

अवसर पाकर शाही धन लूट लेते, उसके राज्य में आग लगा देते और इस प्रकार वे अपनी नीति-चातुर्य का परिचय देते थे। युद्ध इतनी वीरता से करते थे कि सारे-रण-क्षेत्र की देख रेख रखते थे। जिस किसी भी वीर को शत्रुओं द्वारा घिरा देखते उसकी सहायता के लिए तुरत जा पहुँचते। ऐसी सावधानी से युद्ध करने वाले वीर विरले ही मिलेंगे।

बड़े-बड़े गढ़पति इनकी धाक मानते थे, सूबेदार इनसे सदैव भयभीत रहते थे और उमराव रण में इनके सामने नहीं आते थे। ये चौथ लेकर ही शत्रु के देश को छोड़ते थे।

जब शत्रु सत्यता का व्यवहार करता तो छत्रसाल भी शत्रु-भावना त्यागकर उससे मैत्रीपूर्ण व्यवहार करते थे। इसी कारण से युद्ध मे लूटे सारे सामान को दलेल खाँ के पास लौटाकर भेज दिया था।

गाढ़ पड़ने पर वे धैर्य से काम लिया करते थे। युद्धभूमि से भाग आनेवाली अपनी सेना को उन्होंने धैर्य बँधाया था। इस अवसर पर स्वामी प्राणनाथ ने आकर उपदेश देकर हतोत्साहित व्यक्तियों के हृदय में पुनः उत्साह का सचार किया था।

अत मे प्राणनाथ स्वामी ने इनका राजतिलक किया। वे सतोषी इतने थे कि अपने राज्य से ही संतुष्ट रहकर बहादुरशाह द्वारा प्रस्तावित मसब को अस्वीकार कर दिया था। ईश्वर के प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करते हुए वे अपने राज्य का भार सँभालते रहे।

छत्रसाल एक आदर्श वीर एव महान् विभूति थे। उनकी महान्ता इसी से व्यक्त होती है कि पाँच सवार और पच्चीस पैदल लोगों के साथ युद्ध आरभ करके लगभग दो करोड़ रुपये की आय की रियासत अपने लिए अर्जित कर ली। यह उनकी असाधारण ईश्वरप्रदत्त शक्ति का यथेष्ट प्रमाण है।[1]

छत्रप्रकाश के अन्य पुरुष पात्रों के चरित्रों के सबध मे भी यथातथ्य इतिहास-सम्मत गुणों का पता चलता है, पर उन सभी के चरित्रों के विषय मे विचार करना यहां असभव है।

स्त्री पात्र—छत्र प्रकाश मे स्त्री पात्रो का कम उल्लेख हुआ है। छत्रसाल की माता लाल-कुवरि[2] आदर्श राजपूत रमणी तथा हीरादेवी[3] अपने स्वार्थ के लिए चंपतिराय से वैमनस्य रखने-वाली नारी के रूप मे चित्रित की गई हैं।

ऊपर के प्रमुख पात्रों के चरित्रो के सक्षिप्त विवेचन से स्पष्ट है कि कवि ने अपने पात्रों के युद्ध संबंधी गुणों का ही उल्लेख किया है। कोरी प्रशंसा के वशीभूत होकर ऊहात्मक उडाने उसने नहीं भरी है। वह अपने पात्रों के प्रति कथन करते समय सत्य से दूर नहीं भागा है, यहाँ तक कि छत्रसाल की पराजय तक को चातुर्य के साथ कह गया है। अभिप्राय यह है कि लाल द्वारा वर्णित पात्रों के चरित्र प्रायः स्वाभाविक घटनावली के अधिक निकट और अधिक सरल हैं। यह विशेषता अन्य अधिकाश कवियों से इन्हे अलग रखती है।

---

[1] छत्रप्रकाश, पृ० १७, १६, २३, ४, २७, ४३-५५, ६६-७, ६६-७२, ७७-६, ८४, ८६, ६१-२, ६५ ६, १०७, ११३, ११८, १२३, १४३, १४७, १५१-६, १६३ [2] वही, पृ० ६५ [3] वही, पृ० ५५-६, ६८

जंगनामा

जगनामा में पात्रों के चरित्र-चित्रण की लेशमात्र भी प्रवृत्ति नहीं दिखलाई पडती है। एक छोटी सी घटना के वर्णन मे श्रीधर ने सौ से अधिक पात्रों के नामों की भरमार कर दी है। सम्राट् से लेकर साधारण अमीर तक का नाम नहीं छोडा है। यही नही अनेक स्थलों पर उनके नामों की बार-बार आवृत्ति की है। इस कारण से पात्रो के गुण-स्वभाव कथन का कवि को अवसर ही नहीं मिला है। प्रायः सभी पात्रों की एक सी वेश-भूषा, एक से अस्त्र-शस्त्र और एक ही प्रकार की युद्ध-पद्धति का कवि ने वर्णन किया है। स्मरण रहे कि ऐसे वर्णन भी अपेक्षाकृत कम ही हैं। सेनाओं के सचालन और युद्ध-वर्णन की घटनाओ का उल्लेख करते हुए द्रुतगति से श्रीधर जगनामा मे आदि से अन्त तक पहुँच गये हैं। ऐतिहासिक घटना का वर्णन करना ही उनका लक्ष्य रहा है। इसी कारण पात्रों के चरित्र का वास्तविक चित्रण नही हो सका है। नीचे दिये हुए कुछ पात्रों के चरित्र से इस कथन की पुष्टि हो जायेगी :—

फर्रूखसियर—श्रीधर के अनुसार बादशाह फर्रुखसियर उदार एव वीर योद्धा था। दिल्ली का सिंहासन प्राप्त करने के लिए क्रुद्ध होकर उसने पटने से प्रस्थान किया। ईद आदि धार्मिक कृत्यों में भी उसकी विशेष अभिरुचि थी।

वह वस्त्र आदि से पुरस्कृत करके सैनिकों को सम्मानित करता था। सेना के द्वारा लूटे हुए सामान को वह सैनिकों मे ही विभाजित करके अपनी नीति-चातुर्य का प्रमाण दिया करता था।

वह युद्ध-नीति मे भी दक्ष था। आगरे के निकट उसने यमुना बडे कौशल से पार कर ली थी और शत्रु को इसका कानों-कान पता तक न चलने दिया।

इस कवि के विचार मे वह सुदर, सुजान, वीर, शीलवत, ओजस्वी, दानी, तथा सम्राट् अकबर के समान सर्वगुण सपन्न था। कहने की आवश्यकता नहीं है कि श्रीधर का उक्त कथन अतिशयोक्तिपूर्ण है।[1]

मौजुद्दीन (मुइजुद्दीन) —इसने सम्राट् बनते ही दिल्ली दरबार को कलावंतों और नर्तकियों का अखाडा बना दिया था और उन्हे बड-बडे माही, मरातिब आदि प्रदान किये। इसे अस्त्र-शस्त्र के स्थान पर ढोलक आदि वाद्य-यत्र अधिक प्रिय थे। राग रग के प्रति इसकी अधिक रूचि थी। यह बक्की एवं झक्की भी बहुत था।

इन दुर्गुणों के होते हुए भी इसमे एक विशेषता यह थी कि यह बडा वीर था। यद्यपि यह युद्ध में पराजित हुआ पर इसने रण भूमि मे असीम वीरता का परिचय दिया था।[2]

एजुद्दीन—जब-जब अवसर पडा तब-तब इसने युद्ध-भूमि से भागकर अपनी कायरता और कापुरुषता का परिचय दिया था। युद्ध के प्रति उसकी नाममात्र को भी अभिरुचि नहीं थी।[3]

छबीलेराम—यह अवसर पाते ही एजुद्दीन का साथ छोडकर फर्रुखसियर से जा मिला था। यह वीर और युद्ध मे प्रवीण था। युद्धस्थल में यह महान् वीरता प्रदर्शित करता था। इसने शत्रु को अपने सामने से हराकर भगा दिया था।[4]

---

[1] जंगनामा, पंक्तियाँ ११, ३७६-८०, ३८४, ३८६ ६२, ६४५-६०, ८२०-३४, १५८५-६०
[2] वही ६७४-६०, ७१८-२८, ८३५-४१, १४७५-८६ [3] वही, ५८६-६० [4] वही, ३६७-८ ७७३-७, ६६२-७३, १२३५, १३२५-२६, १५११-३०

इस प्रकार जंगनामा मे पात्रों के चरित्रों के निखरे हुए रूप का अभाव है। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से यह ग्रथ अत्यन्त साधारण कोटि का है।

रासा भगवंतसिंह का

इस छोटे खडकाव्य मे कवि ने चरित्र-चित्रण के विषय में विशेष प्रयास नहीं किया है। उसमें चरित्र-नायक के केवल कतिपय गुणों का उल्लेख भर कर दिया गया है।

भगवंतराय खीची—असोथर के स्वामी भगवतराय बडे वीर थे। अवसर पडने पर लूट मार करके शत्रु को त्रस्त करने मे ये बडे कुशल थे। दान करने मे भी बे अनुपम थे। पैतृक-भूमि को त्याग कर भाग जाना उन्हे कापुरुषता का चिह्न प्रतीत होता था। युद्ध करने के लिए घड़ी-मुहूर्त्त देखने के पक्ष मे वे नहीं थे। युद्ध मे वीरतापूर्वक शत्रु-संहार करते हुए उन्होंने वीर-गति प्रात की थी।[1]

स्त्री-पात्र—इस काव्य में स्त्री-पात्रों का अभाव है। भगवतराय की रानी के द्वारा युद्ध के स्थान से भाग चलने का प्रस्ताव करवा कर कवि ने उसके चरित्र को गिरा दिया है। उसका उक्त कथन राजपूत रमणी के स्वाभाविक चरित्र के विरुद्ध पड़ता है।[2]

सुजान-चरित्र

सूदन ने चरित्र-चित्रण मे अन्य कवियों की अपेक्षा अधिक उदार दृष्टि से काम लिया है। उसने अपने आश्रयदाता के ऐश्वर्य, वैभव और गुणों का सुदर वर्णन करने के साथ ही प्रति-पक्षियों का भी उतना ही उत्तम वर्णन किया है। चरित्र-चित्रण में उसने प्रायः ऐतिहासिक परंपरा ही का अनुकरण किया है। पात्रों के युद्ध-वीरत्व को अंकित करने की ओर उसकी कुछ अधिक प्रवृत्ति रही है, किंतु अवसर मिलने पर करुणा, रति आदि भावनाओं को चित्रित करके पात्रों के गुण-दोषों के विस्तृत क्षेत्र को अपनाने का भी उसने प्रयत्न किया है। पर नामों की अधिकता, उनकी आवृत्ति तथा विविध वस्तुओं की विशाल सूचियों के कारण पात्रों के चारित्र्य-विकास मे अवश्य कुछ बाधा पडी है। एक ही प्रकार के गुण, वीरभावना, आतक तथा प्रताप आदि को प्रदर्शित करने के लिए बार बार एक ही प्रकार के युद्ध-सबंधी विवरण देने के कारण उनके प्रति पाठक की अरुचि हो जाती है। कुछ पात्रों के चरित्र नीचे दिये जाते हैं—

सुजानसिंह—सुजान-चरित्र का नायक सुजानसिह बाल्यावस्था से ही निडर और वीर था। वह अपने पिता का परम भक्त था। उसके हृदय मे महादेव जी के प्रति अगाढ भक्ति थी। उसे आखेट से विशेष प्रेम था।

वह सेना के सुख-दुःख का अत्यधिक ध्यान रखता था। युद्ध-भूमि में स्वय सैन्य-संचालन और युद्ध-निरीक्षण करना उसे अधिक प्रिय लगता था। युद्ध मे वह सदैव सेना के अग्र भाग में रहता था।

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ५, १९८१ विक्रमी, छं० १०, पृ० ११५; छं०४८-९, पृ० १२२; छं० ५५, पृ० १२३; छं० ५७, पृ० १२४; छं० १०३, पृ० १३१ [2] वही, भाग वही, संवत् वही, छं० ५३-४, पृ० १२३

सुजानसिंह साम, दाम भेद और दंड चारो प्रकार की नीति मे चतुर था। अपनी मित्रता और दिल्ली-सिंहासन के प्रति स्वामि-भक्ति मे वह इतना दृढ था कि शत्रु की भेद-नीति उसे विचलित नही कर सकती थी। हतोत्साहित सैनिकों के हृदय मे वह सदैव उत्साह का संचार किया करता था। विचलित होते हुए प्रधान-मत्री मसूर को प्रोत्साहन प्रदान करके उसने युद्ध के लिए सन्नद्ध किया था। उसके युद्ध-क्षेत्र से भाग जाने पर सुजान स्वय अत तक रण-क्षेत्र मे युद्ध करता रहा था। उसकी वीरता का यह यथेष्ठ प्रमाण है।

'दुष्ट के साथ दुष्टता का पूर्ण व्यवहार करना चाहिए' यह उसका सिद्धात था। और इसी के अनुसार वह सदा आचरण भी किया करता था।

आवश्यकता पडने पर वह युद्ध-भूमि से हटकर शत्रु को धोखे मे डालने की नीति का भी अनुसरण किया करता था। भावी युद्ध की आशका से वह अपने दुर्ग-सेना आदि को सदैव सुसज्जित रक्खा करता था।[1]

राव बहादुरसिंह—यह सुजानसिंह का एक प्रतिपक्षी था। यद बड़ा बुद्धिमान् और शूर वीर था। सुजान द्वारा प्रस्तावित अपमानजनक सधि-प्रस्तावों को ठुकराकर इसने अपनी महान्ता का परिचय दिया था। वह क्षत्रिय के कर्त्तव्य और धर्म को पूर्ण रूप से समझता था। अवसर पडने पर शत्रु के साथ छल-पूर्ण व्यवहार करना यह राजनीति के अंतर्गत मानता था। उसके लिए मृत्यु और जीवन का आनद समान था। अतिम युद्ध मे जाने से पूर्व अत:पुर मे उसकी केलि-क्रीड़ा इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। इसके उपरात उक्त युद्ध मे वीरतापूर्वक इसने प्राण विसर्जन करके वीरता का आदर्श उपस्थित किया था।[2]

सफ़दरगंज मंसूर—यह दिल्ली का प्रधान-मत्री था। अपने उपसूबेदार नवलराय की मृत्यु का बदला लेने के लिये बगश नवाबों के विरुद्ध युद्ध के लिए प्रस्तुत होकर इसने अपनी वीरता का परिचय दिया था। यह उसका अपनी आत्मप्रतिष्ठा की रक्षा का प्रयत्न समझना चाहिए। वह वीरों को सदैव आदर की दृष्टि से देखा करता था। आवश्यकता पडने पर युद्धभूमि से भाग जाना इसके लिए एक साधारण बात थी। अपनी मान-मर्यादा की रक्षा के लिए वह सम्राट् के विरुद्ध अस्त्र-शस्त्र ग्रहण करने से भी नहीं चूकता था। इससे सिद्ध होता है कि उसे राज्य के लाभ-हानि का इतना ध्यान नही था जितना कि व्यक्तिगत स्वार्थ का।

---

[1] **सुजानचरित्र, जंग १, अंक १, छं० १३, पृ० ५, जं० वही, अं० २, छं०१, पृ० ७, जं० वही, अं० ४, छं० ११, पृ० २५, जं० २, अं० १, छ० ८, पृ० २६, ज० वही, अंग २, छं० ५, पृ० ३२; जं० ३, अं० २, छं० १, पृ० ४३, जं० वही, अ० ३, छं०१०, पृ० ५०, जं० वही, अं० ५, छ० ४, पृ० ५८, ज० ४, अं० ३, छं० ३२,-३३, पृ० ७८, जं० वही, अं० २, छं० ३६-४३, पृ० ७८-६; जं० ५, अं० ३, छं० ३६, पृ० १३१, ज० ६, अ० ४, छं० १७, पृ० १६३-१६४, जं० वही, अं० ६ छं० १० पृ० २१३-४** [2] **वही,५ अंक २, छं० १८, पृ० ११८-६, जं० वही, अं० ३, छं० १६, पृ० १२७, जं० वही, अं० वही, छं० २७-८, पृ० १३०, जं० वही, अं० ४, छं० ३५-७, पृ० १४६-७ जं० वही, अं० वही, छ० ४३-४, पृ० १५१**

यह नीतिकुशल भी था। दिल्ली के युद्ध मे पीछे हटकर इसने अपनी नीति-पटुता का अच्छा परिचय दिया था।[1]

उसके चरित्र से स्पष्ट है कि तत्कालीन उच्च पदाधिकारी अपने निजी स्वार्थ की चिंता किया करते थे। प्रजा-पालन और राज्य के प्रति अपने कर्त्तव्य का उन्हे ध्यान नही रहता था।

स्त्री-पात्र—सुजान-चरित्र मे प्रधान रूप से किसी भी स्त्री-पात्र का उल्लेख नही किया गया है। प्रसगवश राव बहादुर की स्त्री तथा देवी आदि का यत्र-तत्र उल्लेख भर कर दिया गया है।

करहिया को रायसौ

चरित्र-चित्रण की दृष्टि से करहिया को रायसो' का एक अत्यत साधारण स्थान है। उसमे व्यक्तिगत रूप मे पात्रों के नाम और साथ ही इने-गिने गुणों—'सत्य, खग्ग-सचालन, पैज, रजपूती मूँछों का पानी' आदि का उल्लेख कर दिया गया है। राजपूत रमणियों ने अपने सतीत्व और मान-मर्यादा के लिए किस प्रकार हँसने-हँसते प्राण-विसर्जन किए इसका भी कवि ने सुंदर ढंग से उल्लेख करके राजपूत नारी के पूत-चरित्र का आभास दिया है।[2]

पद्माकर के ग्रंथ

(क)—हिम्मतबहादुर-विरुदावली—इस छोटे खडकाव्य मे चरित्र-चित्रण का प्रयास कम मिलता है। कवि ने अपने आश्रयदाता के दान, दया, धर्म आदि का ही अधिक वर्णन किया है। उसके सैन्य-बल और युद्ध-कौशल का भी वर्णन मिलता है। नायक के प्रतिद्वन्द्वी की वीरता का भी अच्छा चित्रण हुआ है। इस ग्रथ मे युद्ध-स्थली मे वीरों तथा अस्त्र शस्त्रो के नामो के उल्लेख ही विशेष रूप से मिलते हैं। चरित्रो के वर्णन में परपरा का अनुसरण मात्र है। इस काव्य मे नारी पात्रों का एकदम अभाव है।

हिम्मतबहादुर—पद्माकर ने इसके चरित्र-वर्णन मे अत्युक्ति से काम लिया है। उन्होंने इसे शिवजी के समान वीर, महान् दानी, दया की मूर्ति, हिंदू-लाज-रक्षक, चौसठ कला-प्रवीण, दृढ-प्रतिज्ञ, सत्यवक्ता, नवरस-प्रतिमूर्ति, आदि गुणों से युक्त बतलाया है। वह घड़ी मुहूर्त्त देखकर युद्ध करनेवाला माना गया है। वह युद्ध मे विजय की अभिलाषा से भागवत् "गीतान के जत्र-मत्र" धारण करता था। युद्ध भूमि को देखकर रौद्र-रूप धारण करके वह वीररस मे डूब जाता था। अपने सैनिकों को जागीर, दान आदि देकर अपना बना लेता था जिससे वे प्रसन्नतापूर्वक उसके हित-साधन मे प्राण-विसर्जन किया करते थे।[3]

मानधाता—यह हिम्मतबहादुर के कोषाध्यक्ष मनसुखराय कायस्थ का आत्मज था। यह युद्ध करने मे अनुभवी वीर था। अपने स्वामी का सच्चा भक्त और सेवक था। वह सदा हरावल में रहा करता था। वह मरना और मारना दोनो भली प्रकार से जानता था। युद्ध मे बड़ी वीरता से शत्रु-सहार करते हुए उसने वीरगति पाई थी।[4]

अर्जुनसिंह नोने—यह सच्चे वीर क्षत्रिय थे। इन्होंने अनेक राजाओं को पराजित करके

---

[1] सुजानचरित्र, जं० ४ अं० २, छं० १३-४, पृ० ६५, जं० वही, अंक वही, छं० २८, पृ० ६७; जंग वही, अंक ५, छं० ७, पृ० ६१, जंग ६, अंक ४, छद १७, पृ० १६३-४ [2] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग १०, संवत् १९८६, छं० ४०, २८५, छं० ५१, पृ० २८७ [3] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० ३-१४, २०, ११६, ११६, १२५ [4] वही, छं० १२१, १२३-४, १३३

उनके राज्यों को हस्तगत कर लिया था। यह युद्ध मे बडी वीरता से काम लेते थे। इनकी उपस्थिति से हतोत्साहित सैनिक भी उत्साहित होकर युद्ध-रत हो जाते थे।

अर्जुनसिंह निर्भीक इतने थे कि दुर्ग की आड लेकर युद्ध करने के प्रस्ताव को ठुकरा कर खुले मैदान मे आ डटे थे। जय-पराजय को ईश्वराधीन छोडकर क्षत्रिय-धर्म-पालन करना ही उनका एकमात्र लक्ष्य था। युद्ध-भूमि मे दीनता प्रदर्शित करना और शत्रु को पीठ दिखाना ये दोनों कार्य उन्हे अरुचिकर लगते थे। अपने शत्रु की वीरता का भी वह आदर किया करते थे।

अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए अंत मे उन्होने वीरगति प्राप्त की।[1]

(ख) जगद्विनोद—इस मुक्तक काव्य-ग्रथ मे जगद्सिह सबंधी कुछ पद मिलते हैं जिनमे जगद्सिंह के गुणों का अत्युक्तिपूर्ण वर्णन है:—

जगद्सिंह—जयपुराधीश महाराजा जगद्सिह क्षत्रियों के ईश, दयालु तथा धर्मात्मा थे। शत्रु को देखकर वे उग्र और रौद्र रूप धारण कर लिया करते थे। युद्ध मे पीठ दिखाना और पर-स्त्री पर कुदृष्टि डालना उन्हे दुर्जनता और नीचता के लक्षण लगते थे। वे महान् दानी भी थे[2]।

इस प्रकार पद्माकर द्वारा चित्रित कुछ चरित्रों के विवेचनोपरात हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि उनका ध्यान चरित्र वर्णन की ओर अपेक्षाकृत कम था। परपरागत इने-गिने विशेषणों का बढा चढाकर उल्लेख कर देना ही उन्हे अभीष्ट था। पर अपने नायक के प्रतिद्वंद्वी का उदारतापूर्वक वर्णन करके उन्होंने अपनी दूरदर्शिता एव विशाल-हृदयता का परिचय दिया है।

हम्मीररासो

'हम्मीररासो' के चरित्र-चित्रण मे कवि ने रासो-परम्परा का अनुकरण किया है। स्त्री को ही युद्ध का कारण मानकर कवि को शृगारिक विचारधारा-वर्णन का अवसर प्राप्त हो गया है। फल यह हुआ है कि पात्रो के शृङ्गार-सबधी गुणों को दिखलाने में कवि ने अधिक समय नष्ट किया है। पर आशा आदि राजपूत रमणियों के चरित्रों से नारी-वीर-भावना का चित्रण करने मे कवि पर्याप्त मात्रा मे सफल हुआ है।

इन ग्रथों में भूत-प्रेत, वीर आदि के युद्ध-वर्णन के कारण पात्रों को रण-स्थल मे अपनी वीरता प्रकट करने का कम अवसर मिला है। इस कारण से पात्रों का चरित्र निरखने नही पाया है।

जोधराज ने हम्मीर के प्रतिपक्षी अलाउद्दीन के चरित्र को बहुत गिरा दिया है। इसके दो परिणाम हुए हैं। एक तो अलाउद्दीन का इतिहास सम्मत उद्दड, रौद्र तथा वीर चरित्र पाठक के सामने नहीं आता है। उसका चूहे से भयभीत होना हास्यास्पद हो गया है। दूसरा परिणाम यह हुआ है कि नायक का चरित्र भी ऊँचा नहीं उठ सका है। प्रतिद्वन्द्वी जितना ही अधिक शक्ति-शाली होगा उतना ही नायक के साहस, उत्साह तथा वीरत्व का विकास होगा। कवि इस साधा-रण बात को विस्मृत कर गया है।

---

[1] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० १७, ८७, ९१, ९४-६, १०१, १०३, ११०-१, २०७

[2] पद्माकर-पंचामृत, जगद्विनोद, छं० ५-६, ५६६, ६८६, ६६४-५।

मीर महिमा के चरित्र से तत्कालीन हिन्दू-मुस्लिम प्रेम-भावना के ऊपर पर्याप्त प्रकाश पडता है। नीचे हम्मीररासो के प्रमुख पात्रों के चरित्रों पर सक्षिप्त विचार किया जा रहा है—

हम्मीर—हम्मीररासो के नायक हम्मीर परम्परागत राजपूत वीरभावना के प्रतीक थे। शरणागत-वत्सलता तथा प्राण-विसर्जन करके अपने प्रण की रक्षा करना वह भली प्रकार जानते थे। होनहार तथा ससार की अनित्यता को जानते हुए क्षात्र-धर्म का पालन करना वे अपने जीवन का एकमात्र उद्देश्य समझते थे। दूसरे के दुःख से द्रवीभूत हो जाना उनका स्वभाव था। युद्ध मे शत्रु को पीठ दिखलाना वे जानते ही न थे। वह नीति के अनुसार युद्ध करने के पक्षपाती थे। उन्होंने इसी कारणसे रात्रि-युद्धबन्द करा दिया था क्योकि उसमे मित्र-शत्रु, वीर-कायर आदि का पता लगना कठिन था। विप्र, दीन-दुखी और आश्रित की रक्षा करते हुए अपने धर्म-पालन द्वारा यश-प्राप्त करनायही उनके जीवन का लक्ष्य था। उन्होंने शत्रु द्वारा प्रस्तावित सन्धि-प्रस्ताव का विरोध करके अपनी वीरता तथा बन्दी सुलतान को छोड़कर अपनी उदारता का महान् परिचय दिया था।[1]

इस स्थान पर यह कहना अप्रासगिक न होगा कि जोधराज ने हम्मीर का चरित्र अकित करने मे पृथ्वीराजरासो के कथानक की सहायता ली है। जिसके फलस्वरूप उसमे अनैतिहासिकता का पुट आ गया है।

राव रणधीर—राव रणधीर स्वामि-भक्त और सच्चे वीर थे। शत्रु को पराजित करना ही उनका लक्ष्य था, इसलिए रात्रि मे युद्ध करना भी उन्होंने न्यायसगत समझा था। घायल होकर भी वे वीरतापूर्वक युद्ध करते रहे थे। शत्रु ने भी मुक्तकठ से इनकी वीरता की प्रशसा की थी। लड़ते हुए इन्होंने वीरगति प्राप्त की।[2]

आशा रानी—आशा रानी सती, साध्वी और पति-पुत्र को प्रसन्नता से युद्ध की अनुमति देनेवाली वीर क्षत्राणी थी। अन्त मे वीरतापूर्वक जौहर करके इसने अपने गौरव की रक्षा की थी।[3] उसका चरित्र वीरता और मान-मर्यादा-रक्षण का सजीव उदाहरण है।

मीर महिमा—मीर महमि साहसी, वीर, एव धर्मानुसार आचरण करनेवाला था। वह अपनी प्रतिज्ञा पर सदा अटल रहता था। वीरतापूर्ण कार्य करना, पर गर्व या हर्ष लेशमात्र भी प्रकट न करना उसके चरित्र की अनुपम विशेषता थी। झूठ बोलना और युद्ध मे पीठ दिखलाना वह जानता ही न था। वह मधुर-भाषी एवं पर-दुःख-कातर था। निर्भीकता और गम्भीरता की वह साक्षात् प्रतिमा था। राव हम्मीर के गुणों से वह इतना प्रभावित हुआ था कि अपने प्राणों का मोह त्याग कर शत्रु के पास जाने के लिए वह प्रस्तुत हो गया था, जिससे हम्मीर की आपत्ति का अन्त हो जाए। अन्त मे अपने कुटुम्बियों को मारकर और युद्ध क्षेत्र मे पहुँचकर उसने अपनी महानता का परिचय दिया तथा युद्ध करते हुए वीरगति प्राप्त की।[4]

---

[1] हम्मीररासो, छं० २८६, ३०३, ३२७, ३५३-४, ४२३, ४१५, ४१६, ४७६, ६५८ ७०६, ८२८, ८४८, ६२६, ६३६-८, ६३६, ६४०, ६४२, ६४६ [2] वही, छं० ४४८, ४६६, ५०५, ५०७, ५८· [3] छं० ३५१, ५२१, ६६६, ६७२, ६८०, ६४५ [4] वही, छं० २१४, २१६ २२३, २४०, २५६-६१, २६७, ६४३, ६५८, ६६५, ६३०, ६४७।

वन में अपरिचित स्त्री के सम्पर्क में आकर मानवीय दुर्बलता के वशीभूत हो जाना मीर महिमा के चरित्र पर एक कलक है। इसका समाधान केवल इस प्रकार किया जा सकता है कि उसकी दुर्बलता का चित्रण करके जोधराज ने उसे मानव कोटि मे रखकर उसके चरित्र को स्वाभाविक बनाने का प्रयत्न किया है। पर जिन परिस्थितियों मे उसके इस दोष को दिखलाया गया है वे उसके चरित्र को कदापि ऊँचा नहीं उठा सकतीं। इस सम्बन्ध मे केवल इतना ही कहा जा सकता है कि कवि का उद्देश्य उसके चरित्र के चित्रण की ओर नहीं था, वरन् रासो-परम्परा का अनुसरण और तत्कालीन अमीरों की भोग-विलासमयी प्रवृत्ति का चितण मात्र था। हाँ इतना अवश्य है, कि ऊपर कहे हुए अन्य गुणों के कारण मीर महिमा की महान् वीरता, स्वामिभक्ति एव कृतज्ञता का पता चल जाता है।

अलाउद्दीन—जोधराज ने अलाउद्दीन के साथ उचित न्याय नहीं किया है। उसे एक का पुरुष, हिन्दू-देवताओं की उपासना और सागर मे प्राण-विर्सजन करनेवाला बतलाकर कवि ने अवास्तविक एवं अनर्गल बातों से उसका सम्बन्ध जोड दिया है। इसके परिणाम-स्वरूप इतिहास में वर्णित अलाउद्दीन के चरित्र के स्वरूप की अपेक्षा यह चित्रण अत्यन्त प्रच्छन्न और विकृत हो गया है।

कवि ने इसे मृगया प्रिय, रमण में कामदेव तुल्य और चूहे को मारकर अपने मुख से अपनी डींग बघारनेवाला बतलाया है। उसके अनुसार अलाउद्दीन हम्मीर के वैभव-विवरण को सुनकर भयभीत हो उठा था और उसने तुरन्त मन्त्रणा करने के लिए उसे दरबार मे बुलाया था। वह अपनी आन पर दृढ रहनेवाला व्यक्ति था। अवसर पडने पर दान, भेद और प्रलोभन सभी साधनों को काम में लाना वह उचित समझता था।[1]

रूप विचित्रा—अलाउद्दीन की बेगम रूपविचित्रा के हृदय मे मीर महिमा के प्रति पूर्वानुराग वर्तमान था। एकात मे किसी अपरिचित व्यक्ति से इस प्रकार दुर्बलता का परिचय देना उसके चरित्र की नीचता की चरम सीमा है। पर उसमे वीरता की भावना भी वर्तमान थी। जब उसने अलाउद्दीन को मीर महिमा को मारने के लिए प्रस्तुत देखा, तो वह स्वय अपना शिर कटवाने के लिए तैयार हो गई थी।[2] इसका चरित्र कवि की [illegible] का प्रतीक है।

ऊपर के चरित्र-विवेचन से विदित होता है कि जोधराज ने अपने नायक तथा उसके प्रण-पालन मे सहायक पात्रों के चरित्रों को ऊँचा उठाने का प्रयत्न किया है और उनके प्रतिद्वन्द्वियों को नीच प्रकृति का दिखलाया है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपने आश्रयदाता के पूर्वजों के शत्रुओं मे महानता दिखलाने के पक्षपाती नही थे। इसी कारण से और पृथ्वीराज रासो के प्रभाव से उन्होंने अलाउद्दीन आदि के चरित्र को अत्यन्त गौण रूप दे दिया है।

---

[1] **हम्मीररासो** छं० १८८, २०८, २४५, ३६३, ३६४, ५६०, ६०१, ६४७, ८३०, ९३६

[2] **वही**, छं० २२२, २४५, २४६, २६८।

अध्याय ४

रस

सामान्य स्थिति—रस-निरूपण के विचार से इस धारा का प्रमुख स्थान है। रस-वर्णन की प्रवृत्तियों की दृष्टि से आलोच्य ग्रथों को निम्नलिखित भागों मे विभाजित किया जा सकता है :—

१. कुछ ग्रंथ रसों के लक्षण और उदाहरण वर्णन करने के विचार से लिखे गए हैं, जैसे मतिराम कृत ललितललाम ।

२ अलंकारों के रीतिग्रथ जिनमें उदाहरण रूप मे विविध छन्दो में रसों का परिपाक दिखलाया गया है। इस कोटि मे शिवराजभूषण और जगद्विनोद आते हैं।

३. वे ग्रथ जो कविता की दृष्टि से लिखे गए हैं और जिनमे विविध रसों के उदाहरण मिलते हैं, इसके अन्तर्गत शेष सभी ग्रथ सम्मिलित हैं।

इस काल मे यद्यपि सभी रसों का किसी न किसी रूप मे प्रयोग होता रहा है, पर कुछ ऐसे विशिष्ट रस थे जिनका प्राय: सभी कवियों ने रुचि-वैचित्र्य के साथ प्रयोग किया है। उन रसों के नाम ये हैं :—

वीर (चारों प्रकार के—युद्ध, दान, दया तथा धर्म), शृगार, बीभत्स, रौद्र, भयानक ।

कम प्रयुक्त होनेवाले रसों मे करुण, हास्य, अद्भुत तथा शात रस की गणना की जा सकती हैं।

वीररस—वीर-निरुपण की प्रवृत्ति सभी ग्रथों में दृष्टगोचर होती है। वीररस के चारों प्रकार—युद्ध, दान, दया और धर्मवीर के चित्रण करने की ओर इन कवियों का ध्यान गया है, पर प्रधानता युद्धवीर और दानवीर की ही रही है। ऐसा होना स्वाभाविक भी था। ये कवि राजाश्रित थे। उनके दान और युद्ध-कौशल की प्रशसा करना इनके लिए नितान्त आवश्यक था। पर कुछ ऐसे कवि भी थे, जिन्होंने अपने चरित्र-नायकों के वीरत्व एव शौर्य का वास्तविक अंकन करना ही अपना लक्ष्य बनाया था। उनकी रचनाये वीररस की दृष्टि से अधिक सफल बन पड़ी हैं, उदाहरणार्थ रत्नवावनी तथा भूषण की रचनाये ली जा सकती हैं।

वीररस के प्रसंग मे अस्त्र-शस्त्र आदि युद्ध-सामग्री, वीरों की सजावट, सैन्य-प्रस्थान, वीरों की गर्वोक्तियाँ, पौरुषपूर्ण कार्यों, तुमुल कोलाहल आदि के सजीव चित्र अकित किए गए हैं, जिनसे वीररस का वास्तविक चित्र पाठक के हृदयपटल पर अकित हो जाता है,। इस सम्बन्ध मे केशव, भूषण, मान और सूदन की रचनाये विशेष उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त जटमल, गुलाब एवं सदानन्द को भी वीररस के वर्णन में पर्याप्त सफलता मिली है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कुछ कवियों ने अपने आश्रय-दाताओं की दानशीलता का वर्णन करने मे ऊहात्मक उडानें भरी हैं। रस प्रसग मे दान की सामग्री, तथा 'गज' आदि का वर्णन जी खोलकर किया गया है। मान, मतिराम तथा सदानन्द के नाम इस प्रसग मे विशेष

उल्लेखनीय हैं। ऐसे अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णनों में अस्वाभाविकता एवं नीरसता का समावेश हो गया है। संयुक्ताक्षरों की वर्णन-शैली का प्रयोग ही वीर-रस निष्पत्ति की वास्तविक शैली, है ऐसा समझने वाले भी इस धारा मे अधिकांश कवि थे। ऐसे कवियों मे मान और सूदन प्रमुख हैं।

युद्ध-सामग्री का वर्णन करने मे उपमा, उत्प्रेक्षा, सदेह आदि अलकारों का सहारा लेकर बाह्य तड़क-भड़क मे मग्न रहनेवाले केशव और पद्माकर उक्त प्रसगों मे वास्तविक रस-निरुपण करने मे असफल रहे हैं।

कुछ कवियों का ध्यान केवल अपने नायकों के युद्धो आदि का वर्णन करने की ओर ही गया है। इस कारण वीररस का उनकी रचनाओं मे अभाव पाया जाता है। ऐसे कवियों मे गोरेलाल तथा श्रीधर विशेष उल्लेखनीय हैं।

वीररस के साथ एक ही छद मे अन्य रसों को मिश्रित कर देने की प्रवृत्ति भी इस युग में प्रचलित थी।

उपर्युक्त विवेचन से वीररस की वास्तविक दशा का परिचय हमें प्राप्त हो जाता है। कुछ हेर-फेर के साथ प्रायः एक ही प्रकार की प्रवृत्तियाँ इस धारा मे प्रचलित रही है। पर चारण-काल की अपेक्षा इस धारा में वीररस का अधिक निखरा हुआ, वास्तविक और सजीव स्वरूप हमें मिलता है।

शृगार—वीररस के उपरान्त शृगार-रस का प्रयोग इस साहित्य में प्रमुख रूप से हुआ है। शृङ्गार-वर्णन मे स्त्री-पुरुष-जाति-भेद, नख-शिख-वर्णन, ऋतु-वर्णन आदि का प्रचुर मात्रा में चित्रण मिलता है। इसके लिए जटमल, मान तथा जोधराज विशेष प्रकार से उल्लेखनीय हैं। अधिकांश कवि शृंगार-वर्णन मे तल्लीन होकर कथा-वस्तु का निर्वाह विस्मृत कर देते थे, रीति-काल तथा रासो-परपरा का प्रभाव इन ग्रथों के शृगार-चित्रण मे स्पष्ट रूप से लक्षित होता है। कहीं-कहीं पर अश्लीलता के नग्न चित्र भी प्रस्तुत कर दिए गए हैं।

उक्त दोषो के होते हुए भी इन कवियों की रचनाओं मे शृगार के ऐसे सुन्दर वर्णन मिलते हैं, जो उत्तमता मे रीतिकालीन उच्च शृगारी कवियों से किसी भी दशा मे कम नहीं हैं।

गोरेलाल जैसे कवि ने लौकिक शृगार द्वारा अलौकिक शृगार की ओर सकेत किया है। कुछ ऐसे भी कवि हैं जिन्होंने वीररस मे शृगार का पुट दिया है। जोधराज तथा पद्माकर के नाम इस सम्बन्ध में विशेष रूप से लिए जा सकते हैं।

शृगार-वर्णन के लिए रासो-परपरानुसार स्त्री-पात्रों की कल्पना करनी भी इन ग्रथकारों ने आवश्यक समझी है। उदाहरण के लिए जोधराज का नाम लिया जा सकता है।

कुछ कवियों के शृगार-रस-वर्णन मे स्ववाचकत्व दोष आ गया है। परतु इन थोडे से दोषों के होते हुए भी यह रस भी वीररस के समान ही प्रधान है, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

बीभत्स—वीर रस के साथ वीभत्स-रस-चित्रण मे आरभ से अंत तक एक ही से उपकरणों-जोगिनी, गिद्ध, हर, कालिका, कंक, मास, रक्त आदि का चित्रण मिलता है। प्रायः एक ही प्रकार के रूपक भी बाँधे गए हैं।

रौद्र तथा भयानक—वीररस के मित्र रसों—रौद्र तथा भयानक-का थोड़ा-बहुत वर्णन सभी

कवियों की रचनाओं में मिलता है। अधिकांश ग्रंथों में इन रसों का सुदर परिपाक हुआ है, फिर भी यह कहना अनुचित न होगा कि इन रसो का जैसा चित्रण होना चाहिए था, वैसा नही हो सका है।

करुण, हास्य, अद्‌भुत और शात रसों के कम उदाहरण मिलते हैं। ये रस प्राय: उपेक्षित रहे हैं।

ऊपर के विवरण से स्पष्ट हो गया होगा कि इस धारा मे सभी रसों का वर्णन मिलता है पर प्रधानता वीर और शृ गार की ही रही है। कुछ इने-गिने दोषों के रहते हुए भी इन रसो का सुदर परिपाक एव निर्वाह हुआ है।

प्रत्येक कवि द्वारा प्रयुक्त विभिन्न रसों के विश्लेषण से रस-सबधी प्रवृत्तियाँ अधिक विस्तार से स्पष्ट हो जायेंगी, इसलिए आगे के प्रत्येक कवि द्वारा किए गए रस-निरूपण का सक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है :—

केशव

केशव ने वीरसिंहदेव-चरित मे वर्णनात्मक शैली का अनुकरण करके अपनी स्वाभाविक चमत्कार-प्रियता को प्रधानता दी है। यही कारण है कि इसमे रस-सामग्री और रस-परिपाक की ओर कवि ने पर्याप्त ध्यान नहीं दिया है। और यदि उसका ध्यान उधर गया भी है, तो वह उसका समुचित रूप से निर्वाह नहीं कर पाया है। वीरसिहदेव-चरित में बहुत कम ऐसे स्थल आए हैं जहाँ केशव रस-चित्रण का प्रयत्न करते हुए दिखलाई पडते हैं। वह अपने इस कार्य मे कहाँ तक सफल हुए हैं यह जानने के लिए कुछ उदाहरणो की सहायता से नीचे विचार किया जा रहा है :—

वीरसिह देव-चरित मे केशव ने वीर, शृ गार, करुण और बीभत्स रस चित्रित करने का प्रयत्न किया है।

वीर रस—वीरसिहदेव-चरित का नायक वीर राजपूत था। उसके चरित्र का आश्रय पाकर कवि वीर, रौद्र, भयानक आदि के अच्छे चित्र उपस्थित कर सकता था, पर इनकी ओर उनका बहुत कम ध्यान गया है। वीर रस का एक उदाहरण देखिए। अबुल्फजल की वीरता का वर्णन करते हुए केशव लिखते हैं :—

> "काढ़े तेग सोह यों सेख, जनु तनु धरे धूमधुज देख।
> दंड धरै जनु आपुन काल, मृत्यु सहित जम मनहु कराल"।[1]

कहने की आवश्यकता नहीं है कि ऊपर का वर्णन साधारण कोटि का है।

अस्त्र-शस्त्र का वर्णन वीररस के अतर्गत ही माना जाता है। भूपाल राव की तलवार के वर्णन में केशव ने एक सुदर छद लिखा है :—

> "कालिका की केलि सी, कै कालकूट बेलि सी,
> कै काली कैसी जीभ किधौं कालदंड कामिनी।
> किधौं केसौदास ओछी तच्छक की देह दुति,
> जातना की जोति किधौं जात अंतगामिनी॥

---

[1] वीरसिंहदेव-चरित, प्र० ५, छं० ८६ पृ० ३६।

मीन कैसी छाँह, विषकन्या कैसी बाँह,
किधौ रनजय साधि तानी सिद्धि अभिरामिनी।
राती राती माती अति लोहू की भूपाल राइ,
तेरी तरवारि पर वारि डारौं दामिनी॥"[1]

उक्त छंद मे उपमा और संदेह की सहायता से तलवार का अच्छा वर्णन हुआ है। ऐसे उदाहरणों से स्पष्ट है कि कवि मे वीररस-चित्रण की प्रतिभा थी, पर पाडित्य, आचार्यत्व, शृगार आदि के चक्कर मे पड़कर वह इधर पर्याप्त ध्यान नही दे सका।

शृंगार—कतिपय स्थलों पर केशव ने शृगार का वर्णन करने का भी प्रयत्न किया है। अबुलजफ़ल की मृत्यु का समाचार पाकर अकबर के राजप्रासाद मे करुण-क्रदन मच गया। उस अवसर पर कवि कहता है:—

"कोलाहल महलनि मे भयो, तिनकी प्रतिधुनि सुनि मुनि मन रयो।
मुग्धा मध्या प्रौढ़ा नारी, उठि दौरी जहं तहं डर डारी।
भूषन पटन सम्हारत अंग, अधिक सोभ बाढ़ी अग अंग।
चंचल लोचन जल झलमले, पवन पाइ जनु सरसिज हले।
चिलके अलिक अलक अति बनी, तरकी तन अंगिये की तनी।
राजकुमारि हसैं मुँह मोरि, तुरकिन के उपजै दुख कोरि।
रोवति तन तोरति अति बनी, बिच बिच बाजति ढोलक घनी।"[2]

उपर्युक्त पक्तियों तथा इनके आगे के छद[3] के देखने से स्पष्ट हो जाता है कि करुण-दृश्य के अकित करते समय कवि शृगार की भावना मे बह गया है और इस प्रकार अलकार आदि की सहायता से रसाभास चित्रित कर बैठा है।

रामसिंह की प्रतिष्ठा को पद्मिनी[4] और शरद्-ऋतु को नायिका[5] का रूप देकर नखशिख का वर्णन करके कवि ने अपनी शृगार-प्रियता का परिचय दिया है। कहने की आवश्यकता नही है कि कवि ने इन प्रसंगों में भी अलकारों और उक्ति-वैचित्र्य ही को प्रधानता दी है।

करुण—करुणरस के रसाभास का ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। एक आध अन्य स्थल पर करुण की झलक मात्र मिल जाती है। वास्तविक रस-परिपाक के दर्शन नहीं होते हैं।

वीभत्स—बीभत्स रस के वर्णन का एक उदाहरण पर्याप्त होगा :—

"अंचल मुख पौंछति जगमगी, कंठ श्रोन पिय मारग लगी।
सांचहु मृतक मानि भय दली, मानहु सती छोड़ि सत चली।
गीधिन के सुत सोभित घनैं, लीलत पल मुख श्रोनित सनैं।"[6]

इस प्रकार रस-निरूपण और रस-परिपाक की दृष्टि से "वीरसिंह-देव-चरित" अत्यन्त

---

[1] बीरसिंहदेव-चरित्र, पृ० १४, छं० ३०, पृ० ८४ [2] वही, पृ० ६, छं० १२-४, पृ० ३६ [3] वही, पृ० वही, छं० ४, पृ० वही [4] वही, पृ० ८ छं० १४-२६, पृ० ५०-१ [5] वही, पृ० ११, छं० १६-२०, पृ० ६८ [6] वही, पृ० ८ छं० ५३-४

साधारण रचना है। सबसे अधिक आश्चर्य की बात तो यह है कि ग्रथ के नायक के वीरत्व के सबंध में कवि सर्वथा मौन रहा है। केवल उनके कार्य-कलापों का इतिवृत्तात्मक उल्लेख भर उसने कर दिया है।

वीर रस के उक्त अभाव की बहुत कुछ पूर्ति रत्नबावनी मे कवि द्वारा कर दी गई है। कवि ने इस छोटी सी रचना मे वीररस का वर्णन ओजस्विनी भाषा मे अत्यत उत्तम ढग से किया है। एक उदाहरण से इसका स्पष्टीकरण हो जायेगा :—

"दीठि पीठि तन फेर पीठ तन इक्क न दिक्खिय।
फिरहु फिरहु फिर फिरहु कहत दल सकल उमग्गिय।
ठान ठान निज शान मुरकि पाठान जु धाए।
काढ़ काढ़ तरवार तरल ता छिन तठ आए।
इक इक्क घाउ घल्लिव सबन रतनसेन रनधीर कहँ।
जनु ग्वाल बाल होरी हरपि खंडल छोर अहीर कहँ॥"[1]

ऊपर के छद ही के समान रत्नबावनी मे अन्य छद भी देखे जा सकते हैं, जो ओज और वीर-भाव से परिपूर्ण हैं। अतएव वीररस की दृष्टि से "रत्नबावनी" अत्यत उत्कृष्ट रचना है। इससे सिद्ध हो जाता है कि चमत्कारवादी, घोर शृ गारी एव आचार्य कवि केशव मे वीररस-चित्रण की पूर्ण पटुता और प्रतिभा थी, पर परिस्थितियों के कारण वे इसकी ओर अपना मन न लगा सके और वीर रस उपेक्षित होकर गौण बन गया तथा अन्य बातों को प्राधान्य प्राप्त हो गया।

जटमल

गोरा-बादल की कथा मे वीर और शृ गार प्रमुख रस हे। वीररस का चित्रण करने में कवि को यथेष्ट सफलता मिली है। समरांगण मे युद्ध करते समय गोरा की वीरता सबधी कुछ पक्तियाँ नीचे दी जा रही है :—

"तजै तरवार गुरज्ज कुं लेह, दड़ो बड़ साह दुरज्जन देइ।
करै चकचूर गयन्द कपाल, सकै उमराव न आप संभाल।
कहै मुख मीर अयो जमकाल, ग्रदे नर दे हथियार सुडाल।
तिणे तिण दंतन सारहुं वीर, न मारहिं तौ सिरगोरिल वीर॥"[2]

युद्ध को प्रस्थान करते समय बादल से उसकी पत्नी का कथन भी विचारणीय है।

"कन्ता रण में पैसतां, मत तूँ कायर होइ।
तुम्हैं लाज मुझ मेहणों, भलो न भाषै कोइ॥"[3]

गोरा के मरणोपरान्त उसकी पत्नी की यह उक्ति हृदय मे वीरता की भावना जाग्रत करने की पूर्ण क्षमता रखती है।

---

[1] केशव-पंचरत्न, छं० ३१, पृ० ८ [2] गोराबादल की कथा, छं० १३४, पृ० ३१ [3] वही, छं० ११४, पृ० २८।

"भला हुआ जो भिड़ मुआ, कलंक न आयो काइ,
जस जंपै सब जगत में, हिव रण ढूढ़ो जाइ।"[1]

इसी प्रकार वीररस संबधी अन्य उदाहरण हैं, जो इस बात को साक्ष्य देते हैं कि कवि ने वीर रस के वर्णन में बड़ी सावधानी से काम लिया है।

शृंगार—जटमल ने शृ गार-वर्णन भी किया है। पुस्तक के अधिकाश भाग में "स्त्री-पुरुष-जाति-वर्णन" किया है। इस प्रसंग में कहीं-कहीं पर वह अश्लीलता की सीमा तक पहुँच गया है, यथा :—

"गर्धब-गति गुण-हीण, परै ढ़रि पीन पयोहर।
मच्छ-गंध तन मलिन, चुल्ह-सम-तुल्य भगंदर॥"[2]

यहाँ पर यह बतला देना भी अप्रासंगिक न होगा कि "स्त्री-जाति-वर्णन" तथा "पुरुष-जाति-वर्णन" का मुख्य घटनावली से कोई सबध नही है। अतएव इस वर्णन से वीर-भावना के विकसित होने मे कोई सहायता नहा मिलती है।

कहीं-कही पर शृंगार-वर्णन करने मे कवि को सफलता भी मिली है, जैसा कि नीचे के उदाहरण से स्पष्ट होता है :—

"नव-सत साजि सजाइ, नारि बादल पै आई।
थै क्युं रमणि न विरम्यो, चलेउ क्युं करण लड़ाई॥
अजहुँ न माडी सेज, घाव नख नाहिं चमंक्के।
कुचन चोट न सही, सहवि किम सांग धमंक्के॥
छूटंत नाल गोला तहा, टूटनि धड सिर ऊपरे।
यू बादल सूं नारी कहै, मता देख दल तै मुरै॥"[3]

इस प्रकार जटमल का कृति मे केवल दो प्रमुख रस वीर और शृंगार मिलते हैं। जटमल वीर रस का चित्रण करने मे शृंगार की अपेक्षा अधिक सफल हुए हैं।

मतिराम

जैसा कि अन्यत्र बतलाया जा चुका ह कि ललितललाम मे अलकारों के लक्षणों और उदाहरणों का विवेचन किया गया है। इन अलकारों के उदाहरणों मे से जितने छंद बूँदी राज-परिवार विषयक हैं उनमे से अधिकाश उनकी दानशीलता और प्रशस्ति सबधी हैं। अतएव ये छद आलोच्य धारा के अन्तर्गत आ जाते हैं।

वीर रस—मतिराम ने नीचे के पद मे वीर रस के चारों प्रकार—धर्म, दया, दान और युद्ध का सुन्दर रूप से चित्रण किया है :—

एक धर्म, गृह खंभ जंभ रिपु-रूप अवनि पर,
एक बुद्धि गम्भीर धीर वीराधि-वीर-वर।

---

[1] गोराबादल की कथा, छं० १४४, पृ० ३३ [2] वही, छं० ४८, पृ० १३ [3] वही छं० ११३ पृ० २७-८

एक ओज अवतार सकल सरनागत-रच्छक,
एक जासु करबाल निखिल खलकुल कहं तच्छक।
'मतिराम' एक दाता निमनि जग जस अमल प्रगट्टियउ,
चहुवान-बंस-अवतंस इमि इक राव सुरजन भयउ।"[1]

युद्धवीर :—युद्ध-वीर का नीचे के छंद मे सुंदर वर्णन मिलता है :—

जेते ऐंडदार दरबार-सिरदार सब,
ऊपर प्रताप दिल्लीपति को अभंग भौ।
'मतिराम' कहै करवार के कसैया कैते
गादर-से मूंड़े जग हांसी को प्रसंग भौ।
सुरजन-सुत रज-लाज-रखवारो एक,
भोज ही तैं साहि को हुकुम-पग पंग भौ।
मूँछनि सों राव मुख लाल रग देखि मुख,
औरनि कौ मूँछनि बिना ही स्याम रंग भौ॥"[2]

ललितललाम मे दानवीर के उदाहरणों की प्रधानता है। धर्मवीर के भी कुछ उदाहरण मिलते हैं।[3] यहाँ पर यह कह देना भी ठीक प्रतीत होता है कि दान सबधी पद्यों मे से अधिकांश गज-वर्णन पर हैं, जिनमे से कुछ छंदों मे कोरा शब्द-चमत्कर ही है।[4]

शृंगार—यहा पर बूंदी वर्णन मे से शृंगार का उदाहरण भी दे देना अप्रासगिक न होगा।

"चंद्रमुखिन के भौंह जुग, कुटिल कठोर उरोज।
बाननि सौ मन कौ जहाँ, मारत एम मनोज॥
जहाँ चित्त-चोरी करै मधुर-बदन-मुसकानि।
रूप ठगत है दृगन कौ, और न दूजो जानि॥"[5]

भूषण

भूषण की कविता मे प्रायः सभी रसों का सम्यक् रूप से परिपाक हुआ है। पर उनकी कविता के नायक शिवाजी और छत्रसाल जैसे वीर हैं इस कारण से वह वीर रस प्रधान है। उसमें चारों प्रकार के वीर—युद्धवीर, दयावीर, दानवीर और धर्मवीर—के वर्णन प्रचुर मात्रा मे मिलते हैं, पर प्रधानता युद्धवीर की ही है। यथा :—

"छूटत कमान बान बन्दूकरू कोकबान,
मुसकिल होत मुरचानहू की ओट मैं।
ताही समै सिवराज हुकुम कै हल्ला कियो,
दावा बाँधि द्वैषिन पै वीरन लै जोट मैं।
'भूषन' भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहौं,
किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट-झोट मै।

---

[1] मतिराम-ग्रंथावली, छं० २३, पृ० ३६४ [2] वही, छं० २६, पृ० ३६५ [3] वही, छं० २३६, पृ० ४०६-१० [4] वही, छं० ३६, पृ० ३६७ [5] वही, छं० २०-१, पृ० ३६३

ताव दै-दै मूँछन कगूँरन पै पाँव दै-दै,
घाव दै-दै अरि-मुख कूदे परैं कोट मैं।"[1]

युद्ध-वीर के संबध में चतुरग चमू, वीरों की गर्वोक्तियाँ, योद्धाओं के पौरुषपूर्ण कार्य, उनके आयुध, वस्त्र, युद्ध के बाजे और रण के तुमुल कोलाहलादि का वर्णन हुआ करता है। भूषण की रचनाएँ इस प्रकार के वर्णनों से भरी पडी हैं। यहाँ पर केवल एक उदारण देना पर्याप्त होगा। छत्रसाल की तलवार का वर्णन भूषण ने इस प्रकार किया है :—

"भुज भुजगेस की वैसंगिनी भुजगिनी-सी,
खेदि-खेदि खाती दीह दारुन दलन के।
बखतर पाखरन बीच धँसि जाति, मीन
पैरि पार जात परवाह ज्यौ जलन के।
रैयाराव चंपति के छत्रसाल महाराज,
भूषन सकै करि बखान को बलन के।
पच्छी परछीने ऐसे परे परछीने बीर,
तेरी बरछी ने बर छीने है खलन के।"[2]

युद्ध-वीर के अतिरिक्त दयावीर,[3] दानवीर,[4] और धर्मवीर[5] का भी भूषण के छदों में सुदर निर्वाह हुआ है। कुछ स्थलों पर भूषण ने चारों प्रकार की वीरता का वर्णन एक ही पद्य में कर दिया है। यथा :—

"दान-समै द्विज देखि मैरहू कुबेरहू की,
संपति लुटायबे को हियो ललकत है।
साहि के सपूत सिव साहि के बदन पर,
सिव की कथान में सनेह झलकत है।
भूषन जहान हिन्दुवान के उबारिबे को,
तुरकान मारिबे को बीर बलकत है।
साहिन सों लरिबे की चरचा चलत आनि,
सरजा के दृगन उछाह छलकत है।"[6]

उक्त पथ मे पहले चरण मे दान, दूसरे मे धर्म, तीसरे मे दया और चौथे में युद्ध-वीरता दिखलाई गई है। पिछले चरण मे उत्साह की भरपूर सामग्री संकलित कर लेने पर स्थल संकोच से अतिम चरण में 'उछाह' का आ जाना भारी दोष नही है।[7]

भूषण में यद्यपि उत्साह के समस्त रूपों का समावेश नहीं है, क्योंकि उन्होंने वीर रसात्मक महाकाव्य न लिखकर स्फुट रचना की है, पर उस के कुछ रूप स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं।...भूषण की

---

[1] विश्वनाथप्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रथावली, शिवाबावनी, छं० ८, पृ० ७२-३ [2] वही, वही, छत्रसाल दशक, छं० ७, पृ० ६१ [3] वही, वही, शिवराजभूषण, छं० १०३, पृ० १६ [4] वही, वही, छत्रसाल दशक, छं० १०, पृ० ६२ [5] वही, शिवाबावनी, छं० १७, पृ० ७५ [6] वही, शिवराज भूषण, छं० ३२८, पृ० ५८ [7] वही, भूमिका, पृ० ७३

कविता मे खुले तौर पर महत्कार्य आलम्बन के रूप मे इसीलिए नहीं मिलता है कि उसमें प्रतिपक्षी बहुत स्पष्ट है।[1]

रौद्र रस—वीर रस के सहकारी रौद्ररस का भूषण ने बहुत वर्णन किया है। नीचे एक उदाहरण दिया जाता है :—

"सारी पातसाही के अमीर जुरि ठाढ़े तहाँ,
लायके बिठायो कोऊ सूबन के नियरे।
देखि कै रसीले नैन गरब-गसीले भए,
करी न सलाम न बचन बोले सियरे।
भूषन भनत जबै धर्‌यो कर मूठ पर,
तबै तुरकन के निकसि गए जियरे।
देखि तेग चमक सिवा को मुख लाल भयो,
स्याह मुख नौरंग सिपाह मुख पियरे।"[2]

भयानक रस—भूषण ने भयानक रस का बहुत वर्णन किया है। नीचे केवल एक उदाहरण लिखा जा रहा है :—

"कत्ता की कराकनि चकत्ता को कटक काटि,
कीन्हीं सिवराज वीर अकह कहानियाँ।
भूषन भनत और मुलुक तिहारी धाक,
दिल्ली और बिलाइत सकल बिललानियाँ।
आगरे - अगारन की नाँघती पगारन,
सँभारती न बारन बदन कुम्हलानियाँ।
कीबी कहैं कहा औ गरीबी गहे भागी जाहिं,
बीबी गहे सूथनी सुनीबी गहे रानियाँ।"[3]

भयानक-रस की पूर्णता भूषण की कविता मे बहुत अधिक है। इस रस के आलम्बन मे पक्षी तो स्पष्ट है, पर प्रतिपक्षी प्रायः प्रच्छन्न है। फिर भी शिवाजी के विकट कर्म विपक्षी के रूप मे परोक्ष होते हुए भी स्वयमेव आश्रय की दुर्दशा के उद्‌भूत हो जाते है।[4]

बीभत्स रस—भूषण ने बीभत्स-रस के व्यापारों की भी सुदर योजना की है। यथा :—

"किलकति कालिका कलेजी की कलल करि,
करिकै अलल भूत - भैरो तमकत हैं।
कहूँ रुंड-मुंड कहूँ कुंड भरे स्रोनित के,
कहूँ बखतर करी झुंड झमकत है।
खुलै खग्ग कंध धरि ताल-गति-बंध पर,
धाय-धाय धरनि कबन्ध धमकत है।"[5]

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० ७४ [2] वही, शिवाबावनी, छं ४२, पृ० ८४-५ [3] वही, छं० २२, पृ० ७७ [4] वही, भूमिका, पृ० ७६ [5] वही, छं० १३, पृ० ७४

भूषण ने शृगार,[1] शांत,[2] करुण,[3] अद्‌भुत[4] तथा हास्य[5] रसों के भी बडे चातुर्य से चित्रण किए है।[6]

ऊपर के विवेचन से यह सिद्ध हो जाता है कि भूषण ने अपने काव्य के अन्तर्गत सभी रसों का वर्णन किया है। अधिकाश स्थलों पर अन्य रस वीर रस से लपटे हुए हैं। उनके काव्य मे रस-राजकता वीर रस की ही है। इन्होंने शृगारादि का स्वतत्र रूप से वर्णन किया है, पर उनका प्रायः संपूर्ण काव्य वीर रस और वीर रस-सामग्री-चित्रण प्रधान है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि कवि की रचना मे रसों का पूर्ण परिपाक हुआ है। इस दृष्टि से इस धारा मे उनका एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

मान

मान ने राजविलास मे राजदरबारी कवियों की परम्परा का अनुसरण किया है, इस कारण इनका काव्य अधिक वर्णनात्मक हो गया है। वर्णनों के फेर में पड़कर कवि का ध्यान रस-परिपाक की ओर अधिक नहीं गया है, फिर भी इस धारा के कतिपय कवियों की अपेक्षा इन्हे रस-निरूपण मे अधिक सफलता मिली है।

वीर रस—वैसे तो प्रायः सभी रसों के उदाहरण इनके ग्रथ मे मिलते हैं, पर वीर, शृगार तथा शातरसात्मक स्थलों की इसमे अधिकता है। उक्त रसो के चित्रण मे ही कवि का मन अधिक रमा है। महाराज जसवतसिह की वीरोचित उक्ति देखिए :—

"षेती हम कुल षग्ग षग्ग हम अषय षजानह।
षग्ग करैं बस पलक नाम हम षग्ग निदानह।
पल दल षंडन षग्ग षेत इच्छत हम षग्गह।
छिति रच्छन फुनि षग्ग अहितु भग्गो इन अग्गह।
षग धार तित्थ छत्री धरम आवागमनहि अपहरन।
सो षग्ग बंध हम सूर सब धरय न साहि पजान धन।"[7]

इसी प्रकार के अन्य उदाहरणों[8] की ग्रथ मे भरमार है, जिनसे सिद्ध होता है कि कवि में वीर रस वर्णन की प्रतिभा थी, पर समय के फेर मे पडकर अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशसात्मक कथन भी उसे करने पडे, जिससे अधिकाश स्थलों पर अस्वाभाविकता आ गई है। उदाहरणस्वरूप एक पद्य नीचे दिया जाता है :—

"कत्ती किल किल्लां सक्ति सलिल्ला तोप त्रिमुल्ला जाजल्ला।
दल मचि दहचल्ला लोह उजल्ला नहि बिचि पल्ला घर भल्ला।
घूमत घामल्ला छक्क छयल्ला तजि गृह तल्ला गृह तल्ला एकल्ला।
तुटि तूरत बल्ला ढरि गज डल्ला कापर डुल्ला अकतुल्ला॥"[9]

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, फुटकर, छं० ६२, पृ० ११२ [2] वही, छं० ७४, पृ० ११६, [3] वही, शिवाबावनी, छं० ३३, पृ० ८१, [4] वही, छं० ५२, पृ० ८८, [5] वही, शिवराज-भूषण, छं० ३५२, पृ० ६३ [6] वही, भूमिका, पृ० ७०-८० राजनारायण शर्मा, भूषण-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० ७६-८४ [7] राजविलास, विलास ६, छं० ८०, पृ० १६०, [8] वही, वि० वही, छं० ८१, पृ० वही, वि० १२, छं० ६-१५ पृ० २०६-१० [9] वही, वि० ११, छं० ६, पृ० २०७, (अन्य उदाहरणों के लिए देखिए विलास ११ के छं० ६-८, १०-४, पृ० २०६-८)

यह सब होते हुए भी कवि ने अपने पात्रों के वीरत्व, वीर-भावना एव कर्त्तव्य-परायणता के सुदर चित्र उपस्थित किए हैं।

युद्ध-वीर के अतिरिक्त दानवीर[1] एवं धर्म-वीर (दान-वीर गर्भित)[2] का भी मान ने अच्छा चित्रण किया है।

शृंगार रस—इसके वर्णन में कवि ने नखशिख[3] का अच्छा चित्रण किया है। शृगार-वर्णन का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है, जिसमे अश्लीलता का पुट आ गया है :—

"कहुँ लंब कुच तिय किद्ध, पुहवी अनादि प्रसिद्ध।
कहुँ जनत कामिनि जात, तब पवन राजत तात ॥"[4]

नीचे शृ गार-वर्णन का एक सुदर उदाहरण भी देखिए :—

"सुचि सुरभि सकोमल सारी, कव्वरि मनु नागिनि कारी।
सिर मोती माग सुसाजैं, राषरी कनकमय राजैं ॥"[5]

शांत रस—शातरसात्मक वर्णन मे मान का मन पर्याप्त मात्रा मे रमा है। केवल एक उदाहरण देखिए :—

"झमकति झंझरि नाद रुणझुण पाय पायल पहिरना।
कमनीय क्षुद्रावली किंकिनि अवर पय आभूषना।
कलधौत कूरम समय मन क्रम पाप पीड प्रहारनी।
अद्भुत अनूप मराल आसनि जयति जय जगतारनी ॥"[6]

ऐसे पद्यों मे रचना-सौष्ठव के साथ ही साथ माधुर्य-गुण और अनुप्रास की स्वाभाविक छटा के भी दर्शन होते हैं।

इसके अतिरिक्त इसमें रौद्र और भयानक रसों के भी सुदर उदाहरण मिलते हैं। नीचे दोनों रसों का एक-एक उदाहरण दिया जा रहा है :—

रौद्र रस— "लोयन करिय सु लाल कही कमधज्ज कहानिय।
हम नरनाह अनादि हद्द रक्खन हिंदवानय ॥
हमसे कोइ न हठी होउ हम किन पै हल्लय।
संग्रामहि हम सूर दुट्ट दानव पय डुल्लय।
बंदिहुँ प्रथम तोरन बिहसि तरकि कलहंतन करौं।
अति तुंग सिषर धरवर अचल पूरब तैं पछिम धरौं ॥"[7]

भयानक रस—"मच्यो भय मालव देश मझार। उडै प्रज जानि कि टिड्डि अपार ॥
कहूँ तिय पुत्त कहूँ गय कंत। रड़ै जननी कहुँ बाल रडंत ॥"[8]

---

[1] राजविलास, वि० १, छं० ६१, पृ० ११ [2] वही, वि० ५, छं० ४६, पृ० ८८ [3] वही, वि० १, छं० १७-३०, पृ० ३-६, वि० ७, छं० ६-२२, पृ० १०४-६ [4] वही, वि० १, छं० ८३, पृ० १३ [5] वही, वि० ७, छं० ७, पृ० १०४ [6] वही, वि० १, छं० १४, पृ० ३, (अन्य उदाहरणों के लिए देखिए इसी विलास के छं० ६-१३, १४-५, पृ० १-३) [7] वही, वि० ३, छं० ८७, पृ० ७४-५ [8] वही, वि० १७, छं० २६, पृ० २३६

वीभत्स रस—मान ने वीभत्स रस का वर्णन करने मे परम्परा का ही अनुसरण किया है जैसा कि निम्न उदाहरण से सिद्ध होता है :—

"चौसट्टि पीवत चोल, भरि भरि सुपत्र अलोल।
बिहसंत बीर बेताल, कलिकाल झाल कराल ॥"[1]

करुणरस—मान मे कही कही पर करुण-रस का भी दर्शन हो जाता है। यथा :—

"सुनिय बत्त संग्राम सीह परिवार समेतह।
धसकि परी धनबती अवनि मुरझाइ अचेतह।
सखियनि करी सचेत धवल उट्ठी धीरज धरि।
सती संग संगह्यौ पिता बरजंत बिबिहि परि।
निज उअर फारि काढ्यौ गरत पावक पिंड पइट्ठयौ।
धन धन्य कहै सुर धनवती पति सम प्रान परट्ठयौ ॥"[2]

ऊपर की समीक्षा से हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि मान के राजविलास मे सभी प्रमुख रसों का चित्रण हुआ है। पर कवि ने वीर, शृंगार और शात-रसात्मक भावनाओं का अधिक सरलतापूर्वक वर्णन किया है। अधिकांश स्थलों पर अतिशयोक्तिपूर्ण चित्रण होते हुए भी, यह निर्विवाद है कि कवि मे रसानुभूति की पूर्ण क्षमता थी, जिसका उसने अपनी रचना में यथेष्ठ मात्रा मे परिचय भी दिया है।

गोरेलाल

गोरेलाल ने वर्णनात्मक शैली मे चपतिराय और उनके पुत्र छत्रसाल के युद्धों का वर्णन किया है। उनकी विजयों का विवरण मात्र देना और विजित स्थानों तथा योद्धाओं की नामवाली का उल्लेख करना ही इस कवि का एकमात्र उद्देश्य रहा है। फलस्वरूप रस चित्रण की ओर उसका ध्यान ही नहीं गया है। कुछ पक्तियाँ वीर, शृगार और वीभत्स आदि रसों की ओर संकेत करती हुई यत्र-तत्र बिखरी मिल जाती हैं, जिनसे अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि ने आचार्यत्व की दृष्टि से प्रेरित होकर यह ग्रंथ नहीं लिखा है। स्वाभाविक रूप मे जो रस सबधी सामग्री ग्रथ में आ गई है वह उसकी रस-चित्रण-योग्यता की परिचायक है। इसके सबध मे कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं :—

वीर रस—कुँवर सारवाहन के युद्ध के वर्णन मे से कुछ पक्तियाँ देखिए :—

"कुँवर कढ़े जल तैं सर भीनै। आइ हथ्यार तीर में लीनै।
हाँके मुगल ताल की जोरी। भजें बिडरि बालक चहुँ ओरी।
कुँवर सारवाहन बल बाढ़े। तमकि तीर तरकस तें काढ़े।
× × ×
अरुन रंग आनन छबि लीनी। तानि कमान कुंडलित कीनी।
छूटे बान बज्र से बाँके। फूटे सुभट निकट जे हाँके।"[3]

---

[1] राजविलास, वि० १२, छं० १८, पृ० २१० [2] वही, वि० १, छं० ३७, पृ० २०-१
[3] छत्रप्रकाश, अध्याय ३, पृ० २०

छत्रसाल की वीरता का वर्णन इस छंद मे दर्शनीय है :—

"तरल तुरंगम की तनक, तुरत बग्ग झमकाइ।
परदल मे हाँक्यौ छता, खाई कोट नकाइ॥"[1]

शृंगार रस—इस काव्य की एक विशेषता यह है कि इसमे शृंगार रस का बहुत कम वर्णन हुआ है। राम की मूर्त्ति का वर्णन करते हुए शृंगारिक भावना की निम्न उक्ति विचारणीय है :—

"इत उत ये चितवत नहीं, मन्द मन्द मुसकात।
सीता सौं चाहत कह्यौ कछू रसीली बात।"[2]

स्वामी प्राणनाथ के द्वारा छत्रसाल को जो उपदेश दिया गया है उसमे भी यत्र-तत्र लौकिक शृंगार-भावना का वर्णन करते हुए पारलौकिक प्रेम का वर्णन किया गया है।[3]

वीभत्स रस—इस ग्रंथ मे वीभत्स-भावना संबंधी भी कुछ पंक्तियाँ मिलती हैं। यथा :—

"खाइ मास मसहार अघाने, जोजन दसक गीध मँडराने।"[4]

कवि वीभत्स का अच्छा वर्णन नहीं कर पाया है। उसने वीभत्स-रस के वर्णन मे प्रयुक्त सामग्री मे से केवल एक आध का उल्लेख भर कर दिया है, जिससे किसी विशेष प्रयोजन की सिद्धि नहीं होती है।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि रस-परिपाक की दृष्टि से साधारण होते हुए भी 'छत्रप्रकाश' अपने ढङ्ग का एक अनूठा काव्य है।

श्रीधर

'जगनामा' मे ऐसे बहुत कम स्थल है जहाँ पर रस का समुचित निर्वाह हुआ है। विविध रसों संबंधी कुछ उदाहरण नीचे दिए जाते हैं।

वीर रस—युद्ध-प्रधान-काव्य होने के कारण संपूर्ण ग्रंथ मे वीर रस की प्रधानता होनी चाहिए थी, पर कथानक की इतिवृत्तात्मक शैली, नामों की भरमार आदि के कारण कवि का ध्यान उधर पर्याप्त मात्रा मे नहीं गया है। पर जहाँ कहीं भी उसने वीर रस संबंधी चित्रण किए हैं उनसे स्पष्ट है कि उसमे वीर रस-वर्णन की अनूठी प्रतिभा थी। नीचे के उदाहरण से यह बात सिद्ध हो जाती है :—

"भालनि सों भाला भिर्‌यो बरछा सों बरछानि,
सरे समसेर समसेरनि सुखंग मै।
तीरन को कीनो तन तीरनि तुनीर तोरू,
तोरादार जोरन न पावतु सुफंग मै॥
जंग सुलतानी मैं कहानी कैसो कीनो काम,
श्रीधर छबीलेराम राजा रनरंग मै।
साढ़े तीनि हाथ कद दसहथा हाथी चढ्‌यो,
दोई हाथ होत हैं हजार हाथ जंग मैं॥"[5]

---

[1] छत्रप्रकाश, अध्याय २२, पृ० १४५, [2] वही, अध्याय ४, पृ० २५, [3] वही, अध्याय २३, पृ० १५३-४, [4] वही, अध्याय २६, पृ० १२६ [5] जंगनामा, पृ० ६२

भयानक रस—भयानक रस का सजीव चित्रण नीचे की दी हुई पंक्तियों में देखिए :—

"यह सुनत एजुद्दीन भाग्यो फौज सग सबै भगी।
तहँ सकल मजलिस मौज मै इक बारगी दुख सों पगी॥
तब लगी मुख बिष सी बिरी अरु गीत गारी सी लगी।
अंग अमल की लाली घटी ततबीर औ डर रिस जगी॥
कहाँ लौं लेखिये कथा सब रीति देखि परी नई।
हहरे कलावंत गिर गए मेहरान को मुरछा भई॥
कहुँ परी ढिनगत ढोलकी सुध ताल धुँधरू की गई।
सब गयो मद छुटि छाक सो रट ऊहि आहि दई दई।"[1]

बीभत्स रस—इस कवि ने बीभत्स रस का भी सुन्दर वर्णन किया है। यहाँ पर केवल एक उदाहरण दिया जाता है :—

"झुंडनि झूँडूले प्रेत लोहू के प्रवाह परे,
लाती लरैं पौरै पेलि पियत अन्हात हैं।
खोपरा लों खोपरिन फोरैं गलकर गदू,
पोरी लों पलासी खाल खैंचि खैंचि खात है॥
पाखर से खापरनि चहुआ चुरैलनि के,
चाइ भरे चर चर चपरि चबात है।"[2]

ऊपर बतलाए हुए ही प्रमुख रस हैं, जिनके उदाहरण उक्त ग्रंथ में मिलते हैं। शेष रसों के चित्रण का इसमें प्राय अभाव है।

सदानन्द[3]

वीर रस—भगवतरायसा में रस-निरूपण में कवि को आशातीत सफलता प्राप्त हुई है। यह ग्रंथ [illegible] है। उसमें वीर रस का अच्छा निर्वाह हुआ है। यथा :—

"चमकै छटा सी ज्यौं घटा सो दल फारि देत,
केतिक कटा कै भट जुत्थन सुभाइ कै।
भूप भगवन्त की कृपान ज्यौं करद खैदु,
खंडे खल सीस भुज समर चुनाइ कै।
जीति सी जगी है अनुराग सों रंगी है,
वज्र ज्वाल सों पगी है गति अद्भुत पाइ कै।
आरत कौं छाँड़ते बिचारि तन मानी मूढ़,
मोगल संघारत तुराब खान खाइ कै।"[4]

---

[1] जंगनामा, पृ० २६ [2] वही, पृ० ६३ [3] इस कवि कृत भगवंतरायसा का पाठ नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ५, १९८१ वि० की पृष्ठ संख्या ११४-३१ पर दिया है, अतः प्रासगिक संकेतों में दी हुई छ०संख्या इन्हीं पृष्ठों पर देखनी चाहिए। [4] छं० ८०, (अन्य उदाहरणों के लिए देखिए छं० संख्या ४४, ६८, ६६, ७६, १०२, १०३)

दान में दिए गए हाथियों के वर्णन का एक सुदर उदाहरण यह है :—

"मत्त चलै अति मत्त सदा मद पंडन ते बहु नीरु झरै जू।
कज्जल से गिरि राजत भू पर ताहि लखे घन संक धरे जू॥
है जु सिगार निजै दल कौ अरि के दल कौ जिमि काल घिरै जू।
"नन्द" सदा भगवंतसिंह नृप ते बारन बकसीस करे जू॥"[1]

इसमे रौद्र[2] तथा बीभत्स[3] के भी सुदर उदाहरण मिलते हैं। इस प्रकार इस संक्षिप्त ग्रंथ मे कवि ने रस-निरूपण का विशेष ध्यान रक्खा है। उसने रासो की प्रचलित शृगार-रस-प्रधान-परम्परा का एकदम बहिष्कार किया है।

सूदन

सूदन की रचना मे सभी प्रमुख रसों का सुन्दर चित्रण हुआ है। नीचे कुछ उदाहरणों की सहायता से उन पर विचार किया जा रहा है :—

वीर रस—वीर रस से सबधित सामग्री-अस्त्र-शस्त्र, सेना, हाथी, घोडे, वीर-वेश, युद्ध आदि का कवि ने अच्छा वर्णन किया है, जिससे वीर रस के परिपाक मे पूर्ण सफलता मिली है। इस रस के चित्रण का एक उदाहरण देखिए :—

"कोप्यो मानौ काल सौ बदन महिपाल पूत,
दीठि बाँकी करि कै निहारै ओर तू जाकी।
तू ही अवतार भुवभार के उतारन कौं,
सार के संभार नहिं ताब नर दूजा की।
सूदन समथ्थ अरि रूदन कौं पथ्थ सम,
कीरति अकथ्थ रत्नाकर लौं भूजा की।
दिल्ली दलदट्टन सुकट्टन मलेच्छ बंस,
देस-देस जाहर प्रचड तेग सूजा की।"[4]

इसी प्रकार अन्य उदाहरण भी दिए जा सकते हैं, जिनसे इस कथन की पुष्टि होती है कि कवि को इस रस के चित्रण मे पूर्ण रूप से सफलता मिली है।

रौद्र रस—वीर रस के मित्र-रसों मे से रौद्र का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है :—

"कालजमन तिहिं काल लाल लोचन कराल तन।
अति उताल चलि चाल ढाल किरवाल धारि पन॥
छह करोर गज बाजि जोरि मुच्छन मरोरि मुख।
× × ×
वहुँ जमन जाल बिकराल बल ज्यौं अकाल ज्वाला झरिय॥"[5]

भयानक रस—वीर रस के अन्य मित्र-रस भयानक के चित्रण का एक सुन्दर उदाहरण देखिए :—

---

[1] वही, छं० ४६ [2] वही, छं० १२, ३५, [3] वही, छं० ७६, ६८ [4] सुजान-चरित्र, जंग १, अं० ४, छं० १६, पृ० २६ [5] वही, जं० ७, अं० २, छं० ६६, पृ० २५१-२

"सूदन सबल सिंह सूरज तिहारे धाक,
धूमनु करत रहै दक्खिनी बिभूक्यौ सौ।
सहित अमीर पीर धीर न धरत उर,
चौंकि-चौंकि चाहत चकत्ता चित चूक्यौ सौ।"[1]

बीभत्स रस—सूदन ने बीभत्स का बहुत वर्णन किया है, पर उन्होंने सभी स्थलों पर बीभत्स रस की सामग्री मे से केवल थोडे से चुने हुए उपकरणों और उपमानों की ही आवृत्ति की है। एक उदाहरण देखिए जिसमे इस रस का सजीव चित्र अंकित किया गया है :—

"तिनके जुद्धहिं देखि बहुत चरबीचर आइय।
जुग्गिनि जोरि जमाति जहाँ जाहर जमुहाइय।
काली करत कलोल खलखलैं तहँ खबीस गन।
भैरव भभर्‌यौ फिरत पिता के हार हेत रन॥
जहँ ईस दूत जगदीस के गीरबान गनिका उमगि।
जहँ रुस्तमखाँ रु हकीमखाँ स्वामि काम हित रहिय पगि॥"[2]

शृंगार रस—सुजान-चरित्र मे शृगार रस का वर्णन प्रचुर मात्रा में मिलता है। सूदन की प्रवृत्ति इस रस की ओर अधिक झुकी हुई थी। इनका शृगार रसव का र्णन कहीं-कहीं पर अश्लीलता की सीमा के निकट पहुँच गया है, जैसा कि इस उदाहरण के स्पष्ट है :—

"सैन के सदन दोऊ राजत मदन भरे
बदन बिलोकि कै ललकि लपटाने हैं।
उर सौं उरज मिले अधर सुधरु चारु
चूमत कपोल लोल लोचन लजाने हैं।
हार उरझाने मुरझाने हैं कुसुमभार
अंग मदसूदन तऊ न अरसाने हैं।
बैन तुतराने सतराने भौंह ताने रस
साने मुसिकाने ललचाने रतिमाने हैं॥"[3]

उक्त छंद उस अवसर पर आया है, जब राव बहादुरसिंह बड़गूजर युद्ध करने का निश्चय करके, अतःपुर में प्रविष्ट हुआ है। इस प्रसग मे वीर रस सबंधी सवादों आदि का वर्णन न करके इस प्रकार के शृंगार संबंधी पद्यों का प्रयोग कवि की शृगार-भावना-प्रियता का द्योतक है। यह स्पष्ट रूप से रीति-काल की शृंगारिक भावना का प्रभाव प्रतीत होता है।

हास्य रस—सूदन ने हास्य रस का पुट देकर शिव की स्तुति मे एक सुदर कवित्त लिखा है :—

"बाप विष चाखै मैया-पट-मुख राखै देखि
आसन मै राखै बसवास जाकौ अचलै।

---

[1] सुजानचरित्र, जं० ५, अं० ४, छं० ४७, पृ० १५२ [2] वही, जं० ३, अं० ४, छं० २, पृ० ५३ [3] वही, जं० ५, अं० ४ छ० ३६, पृ० १४७

भूतन के छैया आस-पास के रखैया
और काली के नथैया हू के ध्यान हू ते न चलै।
बैल बाघ वाहन बसन कौं गयंद-खाल
भाँग कौं धतूरे कौं पसार देतु अचलै।
घर को हवालु यहै संकर की बाल कहै,
लाज रहै कैसे पूत मोदक कौं मचलै॥"[1]

सूदन ने एक ही छंद में दो रसों के वर्णन भी किये हैं। वीर और शृंगार विरोधी रसों का एक ही छंद में वर्णन कर देने से रसाभास हो गया है।[2] कहीं-कहीं पर वीर रस के साथ बीभत्स रस के भाव का एक ही छंद मे वर्णन कर दिया है।[3] सूदन ने एक ही छद में भयानक और बीभत्स के भाव का सुंदर समन्वय भी किया है।[4]

ऊपर सूदन द्वारा प्रयुक्त केवल प्रमुख रसों ही का संक्षिप्त विवेचन किया गया है। सपूर्ण ग्रथ में प्रधानता वीर रस की है, जो स्वाभाविक ही है। कुछ स्थलों को छोड़कर सूदन को रस-चित्रण मे, अन्य काव्य-क्षेत्रों के समान, पूर्ण सफलता मिली है। इस दृष्टि से उनका एक विशिष्ट स्थान है।

गुलाब कवि

"करहिया कौ रायसौ" मे बहुत कम रसों के चित्रण के दर्शन होते हैं। एक स्थान पर गुलाब ने एक ही छद मे दान धर्म-युद्ध-वीर का वर्णन किया है :—

"दान तेग सूरे बल विक्रम से रूरे पुण्य
पूरे पुरषारथ को सुकृती उदार है।
गावे कविराज यश पावे मन भायो तहाँ
वर्ण धर्म चारु सुन्दर सुढार है॥
राजत करहिया में नीत के सदन सदा
पोषक प्रजा के प्रभुताई हुसयार है।
जग अरबीले दल भंजन अरिंदन के,
बिदित जहान जग उदित पमार है।"[5]

वीर रस—का एक सुन्दर उदाहरण देखिए :—

"गज छोड़ के अश्व सवार भयौ। ललकार जवाहिर आय गयौ॥
बिरच्यौ इत केहरि सिद्ध नरम्। कर इष्ट उचारन शुद्ध भरम्॥
पहुँच्यौ रन पंचम सिंघ मरद्। करै झुक झार अरीन गरद्॥
रुप्यौ इत जाट निराट बली। मुख ते रटना सुचितान भली।"[6]

---

[1] सुजानचरित्र, जं० ३, अं० १, छं० १, पृ० ४१ [2] वही, जं० ५, अं० ४, छं० ३४, पृ० १४६ [3] वही, ज० ३, अं० ४, छं० ११, पृ० ५६, जं० २, अं० २, छं० १३, पृ० ३३ [4] वही, जं० ५, अं० २, छं० ६, पृ० ११३ [5] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भा० १०, संवत् १९८६, छं० ८, पृ० २७८, [6] वही, वही, छं० ३५, पृ० २८३

बीभत्स—उक्त छंद में आगे बीभत्स रस की कुछ पंक्तियाँ भी दर्शनीय हैं :—

"कटि मूँडनि शूरन श्रोन मचे। तहाँ बेगि सदाशिव माल सचे॥
कर जुग्गिन चौसठ नच्च पगम्। इम देखि के कायर देह डगम्॥"[1]

नीचे बीभत्स का एक और उदाहरण दिया जाता है :—

"मसहार गिद्धन कीन। नच जुग्गनी परबीन।
कहुँ भूत भैरों प्रेत। चुनि मुंड मालनि हेत॥
तहाँ हुलस काली आय। पल चरन मंगल गाय।
कर स्रोन पान नवीन। बहु भाँत आशिख दीन।"[2]

इस प्रकार उक्त रचना में केवल वीर और बीभत्स के ही उदाहरण मिलते हैं। बीभत्स में प्रायः एक से ही उपमानों का प्रयोग किया गया है। रस-परिपाक के विचार से "करहिया कौ रायसौ" साधारण कृतियों ही मे परिगणित किया जाना चाहिए।

पद्माकर

रस-निरूपण की दृष्टि से पद्माकर हमारे सामने रीतिकार तथा कवि के रूप में आते हैं। इन्होंने जगद्विनोद में हिन्दी की प्रचलित रीति-परम्परा का पूर्ण अनुगमन किया है। पद्माकर परम्परा से तिल भर भी हटकर चलना नहीं चाहते थे।[3] इन्होंने स्थायी भावों के जितने उदाहरण दिए हैं, उनमे इसका बराबर ध्यान रखा है कि भाव-कोटि मे उसका क्या स्वरूप होगा।[4] हिन्दी के अधिकाश रचयिताओं ने भावों या रसों का नाम लेना बहुत आवश्यक समझा है। इसलिए पद्माकर उससे नही बच सके। अतः पद्माकर का रस और भाव-निरूपण वैसा उत्तम नहीं है जैसा उसे होना चाहिए।[5] पर हमे यह न भूलना चाहिए कि जगद्विनोद के जिन प्रकरणों—मरण तथा वितर्क (सचारी भाव), युद्धवीर, दानवीर, भयानक और बीभत्स—से हमारा प्रयोजन है, उनके लक्षण और उदाहरण दोनों ही अपेक्षाकृत निर्दोष हैं। नीचे के उदहरणों से यह बात स्पष्ट हो जायेगी :—

युद्ध-वीर :— "जाही ओर सोर परै घोर घन ताही ओर,
जोर जंग जालिम को जाहिर दिखात है।
कहै "पद्माकर" अरिन की अवाई पर,
साहब सवाई की ललाई लहरात है॥
परिघ प्रचंड चमू हरपित हाथी पर,
देखत बनत सिंह माधव को गात है।
उद्धत प्रसिद्ध जुद्ध जीति ही के सौदा-हित,
रौदा ठनकारि तब हौदा में न मात है॥"[6]

इसी प्रकार दानवीर,[7] भयानक,[8] तथा बीभत्स[9] के उदाहरण भी देखे जा सकते हैं।

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भा० १०, १९८६ वि०, छं० ३५, २८३ [2] वही, छं० ४५, पृ० २८६ [3] विश्वनाथप्रसाद मिश्र : पद्माकरपंचामृत, भूमिका, पृ० ५१ [4] वही, वही, वही, पृ० ५६ [5] वही, वही, पृ० ६०-१ [6] वही, वही, छं० ६८६, पृ० २१५ [7] वही, वही, छं० ६९४, ६९५, पृ० २१६ [8] वही, वही, छं० ७०३, ७०५, पृ० २१८-९ [9] वही, वही, छं० ७१०, पृ० २१९

शुद्ध वीररस-प्रधान रचना के विचार से हिम्मतबहादुर-विरुदावली के रस-निरूपण पर विचार करने पर उसमे निम्नलिखित रसों के प्रयोग के उदाहरण मिलते हैं।

वीररस :— **"तहँ दुहुँ दल उमड़े घन सम घुमड़े झुकि झुकि झुमड़े जोर भरे।**
ताकि तबल तमंके हिम्मत हके वीर बमंके रन उभरे॥
बोलत।।रन करखा बाढ़त हरषा बानन बरषा होन लगी।
उलछारत सेलैं अरिगन ठेलैं सीनन पेलैं रारि जगी॥"[1]

दानवीर,[2] रौद्र,[3] भयानक,[4] वीभत्स,[5] शृंगार गर्भित वीर,[6] आदि अन्य प्रमुख रस हैं, जिनके उदाहरण हिम्मतबहादुर-विरुदावली मे प्रचुर मात्रा मे मिलते हैं। वीर रस के छदों की संख्या सबसे अधिक है और होनी भी चाहिए। पर वीर रस के छदों मे अस्त्रों-शस्त्रों आदि के नाम भर गिना दिए गए हैं। इस कारण से वीर रस-परिपाक पूर्ण रूप से नही हो पाया है, इस संबध मे विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का कथन बहुत कुछ सत्य प्रतीत होता है। वे लिखते हैं :—

"इनकी युद्धवाली रचना मे वीररस के साथ बीभत्स, रौद्र, भयानक और करुण सब के लिए जगह थी, पर ये युद्ध-वीर का ही सच्चा निरूपण नहीं कर पाए, फिर अन्य रसों की चर्चा ही क्या? युद्ध के प्रसग मे जहाँ वीरों की काट का अवसर आया है वहाँ सभी जगह तीर, बरछी, आदि का नाम भर ले लिया है। उनकी काट का वर्णन करके, रसात्मकता उत्पन्न करने की चेष्टा ही नहीं है। जहाँ चढाई आदि का चित्रण करने की आवश्यकता थी वहाँ इन्हे नाम गिनाने से ही फुरसत नहीं थी। जहाँ सेना के उपकरणों का वर्णन आया है, वहाँ उपमा, उत्प्रेक्षा और परंपरा-पालन मे ही लगे रहने से बाह्यस्वरूप तक मजे मे नही झलकाया गया, आभ्यंतर की चर्चा ही क्या? केवल सबसुखराय के पुत्र मानधाता की स्वामिभक्ति और उत्साह-वर्धक वचनों के अतिरिक्त और कहीं भी कोई भाव-व्यजना हिम्मतबहादुर-विरुदावली मे नहीं है।'[7]

मिश्र जी के ऊपर के कथन मे बहुत कुछ सत्य होते हुए भी, यह स्वीकार करना पड़ता है कि पद्माकर मे इस धारा के अन्य कवियों के समान परम्परा का अनुकरण मात्र था। उनका रस-निरूपण बहुत से कवियों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट है। रस-निरूपण की दृष्टि से जगद्विनोद में दिए हुए उदाहरण अधिक, स्वच्छ, स्पष्ट और सजीव हैं।

जोधराज

जोधराज के 'हम्मीररासो' मे परंपरानुसार वीर और शृंगार रसों का प्रधानतया चित्रण हुआ है। वीररस के वर्णन मे कवि को उच्च कोटि की सफलता नहीं मिली है। इतिहास प्रसिद्ध कथानक होने पर भी इस कवि ने वीर रस के चित्रण मे, चातुर्यपूर्ण कौशल नहीं दिखलाया है। नीचे दिए हुए वीररस के छद से इस कथन की पुष्टि हो जाती है :—

"किए हुक्म साह तन में रिसाइ।
किन्हों जु जंग फिर बीर आइ॥

---

[1] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० १८२, पृ० ३७ [2] वही, छं० ८, पृ० २, ३ [3] वही, छं० ११७, पृ० २३ [4] वही, छं० ७४-५, पृ० १४ [5] वही, छं० २०७ ८, पृ० ४३ [6] वही, छं० ५३, पृ० ६ [7] पद्माकर-पंचामृत, भूमिका, पृ० ८३-४।

छूटंत तोप मनु वज्रपात ।
जल सुविक धरा छुटि गर्भ जात ।"[1]

कहने की आवश्यकता नही है कि उक्त पद्य रस-परिपाक की दृष्टि से अत्यंत साधारण कोटि का है ।

दान वीर—दान वीर के कुछ पद्य भी इन्होंने लिखे हैं, जिनमे दान-सामग्री की गणना मात्र करा दी गई है । यथा :—

"बकसि सेख को बाजि साज कंचन के साजे ।
मुक्त माल सिरपेच जटित हीरा छबि छाजे ॥
सकल सथ्थ सिरपाव शाल दिन्नव अति भारिय ।
पंच लक्ख को पटो दियो आदर भुवकारिय ॥
दिन्नी सुठौर सुंदर इकै तेहि देखत हिय हर्षियउ ।
उच्छाह सहित उठि शेष तब आनन्द मंगल वर्षियउ ।"[2]

शृंगार रस—इस ग्रथ मे शृगाररस की भी प्रधानता है जैसा कि ऊपर कहा जा चुका हैं । शृंगार रस के वर्णन के प्रसंग मे कवि ने ऋतु-वर्णन[3] तथा नखशिख-वर्णन[4] जी खोलकर किया है । इनका शृगार-वर्णन अश्लीलता की पराकाष्ठा को पहुँच गया है, यथा—

"कंचन लता सी थहरात अंग अंग मिलि-

[illegible]

आनन्द उमंगन मैं मुसकात बाल तुत-
रात बतरात सतरात रस बरसै ।
लपटनि झपटनि मसकनि अनेक अंग,
रति रंग जग तैं अनंग रंग सरसै ।"[5]

उक्त छंद मे अधिक खुला वर्णन होने के कारण अश्लीलता का समावेश हो गया है । इस प्रकार इस कवि ने शृगार-वर्णन मे रासो और रीतिकाल की परपरा का अनुसरण किया है ।

नीचे के पद्यों मे वीर और शृंगार रसों का एक ही छद में प्रयोग करके रसों के नामों का उल्लेख कर दिया गया है, जिससे उसमें स्ववाचकत्व दोष आ गया है :—

"श्रवन सुनै वर वीर रस, सिंधव राग अपार ।
हरषि उठे दोउ तिहिं समै, मिलन वीर शृंगार ॥
मिलनै सुवीर शृंगार, दुहु हरष हिए अपार ।
बर वीर हरषेउ अंग, उत अच्छरी सु उमंग ॥"[6]

---

[1] हम्मीररासो, छं० ४६२, पृ० ६३ [2] वही, छं० ३०४, पृ० ६१ [3] वही, छं० १००-३०, पृ० २०-७ [4] वही, छं० १३१-४२, पृ० २७-८ [5] वही, छं० २४२, पृ० ४८-६ [6] वही, छं० ७४७-८, पृ० १४८

जोधराज ने कुछ छंदों मे युद्ध के लिए प्रस्तुत होते हुए सैनिकों तथा युद्ध मे मृत वीरों का वरण करने के लिए प्रस्तुत होती हुई अप्सराओं के साथ-साथ सुसज्जित होने का वर्णन किया है।[१] यह वर्णन कवि की शृगार-प्रियता का द्योतक है। इस रस के उपरांत कवि ने बीभत्स का अधिक वर्णन किया है। इस चित्रण मे प्रायः सभी स्थलों पर एक ही प्रकार के उपकरणों का प्रयोग हुआ है। यहाँ पर केवल एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा :—

"गिद्धय पल भष्पैं रत बल चष्पैं, जबू अष्पैं हिय हर्षैं ।
× × × ×
बहु पत्र भरावैं मिलि मिलि गावैं, धरि धरि धावैं मन भावैं ।
पल अस्ति चचोरैं बसन निचोरैं, लुत्थि टटोरैं गुन गावैं।"[२]

प्रमुख रसों मे से अन्य रौद्र है, जिसके वर्णन इस ग्रंथ मे मिलते हैं।[३] अन्य रसों में से भयानक[४] तथा शांत रस[५] का चित्रण भी इस कवि के द्वारा किया गया है।

ऊपर के विवेचन से यह सार निकलता है कि रस-परिपाक की दृष्टि से हम्मीर रासो को वीर रस-प्रधान ग्रथ स्वीकार नही किया जा सकता। इतना शौर्य-पूर्ण कथानक होते हुए भी कवि वीर रस का सजीव चित्रण अंकित करने मे असमर्थ रहा है। ग्रथ के उपनायक अलाउद्दीन को आखूत (चूहा) से डराकर कवि ने शौर्य और वीरता का अपमान किया है।[६] हम्मीररासो मे शृगार रस की प्रधानता है, पर उसका विकृत और अश्लील रूप ही पाठक के सामने अधिक आता है। केवल इतना ही कहा जा सकता है कि कवि ने रासो-परंपरा का अनुकरण किया है और रासो-ग्रंथों में रस-निरूपण की जो परिपाटी थी कवि ने उसका पूर्ण रूप से निर्वाह किया है।

---

[१] हम्मीररासो छं० ७४६-५८, पृ० १४८-६ [२] वही, छं० ७८६, पृ० १५५, (बीभत्स के अन्य उदाहरणों के लिए देखिए छं० ३८,५२६, ७७६, ८०६, ६०६-६०६, ६११)
[३] वही, छं० २६५,३३०, ३६३,४१३ [४] वही, छं० २३३ [५] वही, छं० ८५०-५३, पृ० १६४-५
[६] वही, छं० २४५, पृ० ५०

अध्याय—५

अलकार

सामान्य स्थिति—अलकार-योजना की दृष्टि से आलोच्य काल की अपनी कुछ विशिष्ट विशेषताएँ हैं। इस सपूर्ण साहित्य मे अलकार सबधी दो प्रमुख प्रवृत्तियाँ मिलती हैं। प्रथम धारा उन कवियों की थी, जो रीति काल से प्रभावित होकर अपने ग्रथों मे अलकारों के लक्षणों और उदाहरणों का विवेचन करके आचार्य-पद प्राप्त करने का प्रयत्न किया करते थे। इस प्रकार के केवल दो ग्रथ 'शिवराज-भूषण' और 'ललितललाम' हैं। 'शिवराज-भूषण' शुद्धि रीति की दृष्टि से निर्दोष ग्रथ नहीं माना जा सकता। उसके अधिकाश अलकारों के लक्षण और उदाहरण अस्पष्ट और सदोष है। ऐसा प्रतीत होता है कि उसके रचयिता का लक्ष्य अपने चरित्र-नायक का यश-गान करना हे रीति-ग्रथ लिखना नही। मतिराम को 'ललितललाम' मे अधिक सफलता मिली है। आचार्यत्व के विचार से भूषण की अपेक्षा वे अधिक सफल हुए हैं। इस प्रकार इस धारा मे केवल दो ही ग्रथ आते है और उनको भी नितात उच्चकोटि के रीति-ग्रथ नही माना जा सकता।

दूसरी प्रवृत्ति के अंतर्गत वे ग्रथ आते है, जिनमे अलकारों के लक्षणों का बहिष्कार करके कविता करना ही कवियो ने अपना लक्ष्य रक्खा है और उनमे अलकारों के प्रयोगों के उदाहरण न्यूनाधिक सख्या मे वर्त्तमान हैं। इस कोटि मे उपर्युक्त दो लक्षण ग्रथो के अतिरिक्त शेष सभी ग्रथ सम्मिलित हैं। इनमे से कुछ ग्रथों मे अलकारो का बाहुल्य से प्रयोग हुआ हे और कुछ मे नगण्य। इनका विवरण आगे के पृष्ठो मे यथास्थान दिया गया है।

संपूर्ण काल में अलकार-प्रयोग का क्षेत्र व्यापक होते हुए भी कुछ विशेष अलकारो का ही अधिक प्रयोग हुआ है। नीचे दिये हुए अलकारों का अधिकाश कवियो के ग्रथों मे प्रचुर-मात्रा मे प्रयोग मिलता है।

(अ) शब्दालकारों मे अनुप्रास और यमक।

(आ) अर्थालकारों मे निम्नलिखित सादृश्यमूलक अलकारो का प्रचुरता से प्रयोग हुआ है :—

उपमा, मालोपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा (गम्योत्प्रेक्षा, उक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा), अतिशयोक्ति (रूपकातिशयोक्ति, अक्रमातिशयोक्ति), भ्रम तथा सदेह।

(इ) विरोध मूलक अलकारों मे विरोधाभास।

(ई) लोक-व्यवहारमूलक अलकारों मे से लोकोक्ति के अधिक उदाहरण मिलते हैं।

इनके अतिरिक्त नीचे दिए हुए अलंकारो के प्रयोग भी मिलते हैं, पर उन्हे बहुत कम कवियों ने अपनाया है :—

(उ) **शब्दालंकार**—श्लेष।

(ऊ) **अर्थालंकार**—अनन्वय, अपह्नुति, उल्लेख, तुल्योगिता, प्रतिवस्तूपमा, व्यतिरेक, विषम, विशेषोक्ति, परिसख्या, पर्याय, काव्यलिग, अनुमान, ललितोपमा, व्यतिक्रम, अप्रस्तुतप्रशसा, अत्युक्ति तथा उदाहरण।

उपर्युक्त अलंकारो के प्रयोगों में कवियों ने कुछ विशेष नियमों, परपराओं एव विशेषताओं का पालन किया है। नीचे कुछ ऐसे ही प्रमुख अलकारों की विशेषताओं पर विचार किया जा रहा है :—

अनुप्रास—इस अलकार का प्रायः सभी रचनाओं मे प्रयोग हुआ है। कुछ कवियों ने इसका प्रयोग कोरे चमत्कार-प्रदर्शनार्थ किया है। ऐसे अवसर पर कोरे शब्दाडम्बरों की भरमार है। चमत्कार-प्रियता के कारण अवसर का ध्यान नहीं रक्खा गया है। नायक-नायिका का रूप-वर्णन, ओज, छटा, युद्ध-वर्णन, कवियों के नामों तथा लूट की सामग्री की सूची, युद्ध के उपकरणों आदि के वर्णन के अवसर पर अनुप्रास को विशेष प्रकार से अपनाया गया है। कहीं-कहीं पर इसके प्रयोग से काव्य मे सजीवता, ओज और कवित्व गुणों का समावेश हो गया है। पर अधिकाश स्थलों पर नीरसता आदि की इतनी भरमार हो गई है कि कविता के प्रति अरुचि होने लगती है।

उपमा—अर्थालकारो मे से उपमा का अत्यधिक प्रयोग मिलता है। गोरेलाल, जोधराज आदि कवियो ने सुदर उपमानों का सृजन किया है। सेना के प्रस्थान, युद्ध, हाथी, घोड़ों, अस्त्र-शस्त्र आदि के वर्णन मे मेघ, बिजली, और वर्षा के उपकरणो को उपमानो के रूप मे प्रयुक्त किया गया है। सूदन ने कृषि सबधी कुछ नवीन उपमानों को अपनाया है।

रूपक—सेना के प्रस्थान, युद्ध की सामग्री, युद्ध के वर्णन मे मेघ, बिजली, बूदें, नदी, पानी के प्रवाह, बक-पक्ति आदि के रूपक बाँधे गये हैं। केशव ने सूर्य के लिए "अरुनमुख" उपमान का प्रयोग करके अपनी अदूरदर्शिता का परिचय दिया है। उपर्युक्त प्रचलित रूपकों के अतिरिक्त बरात, तीर्थराज-प्रयाग, काल की वाटिका, सूरजमल का होता बनकर यज्ञ करना, विराट-पुरुष, वसत, कृष्ण-स्तुति, गोवर्द्धन की कथा आदि पौराणिक तथा अन्य प्रकार के रूपकों का इन कवियों ने सफल चित्रण करके काव्य मे नवीनता और सजीवता का समावेश किया है।

उत्प्रेक्षा—इस अलकार का प्रयोग वस्तुओं, हाथी, नगर, वर्षा, घोड़ों, युद्ध, रूप आदि के वर्णन मे सुदरता के साथ किया गया है।

अतिशयोक्ति—अतिशयोक्ति तथा इसके भेद रूपकातिशयोक्ति और अक्रमातिशयोक्ति का कवियों ने जी खोलकर वर्णन किया है। युद्ध तथा वैभव आदि के वर्णन मे ऊहात्मक उडानें भरी गई हैं। राजविलास मे गर्वोक्तियों के चित्रण मे इस अलकार द्वारा विशेष छटा का समावेश हो गया है।

ऊपर दिये हुए सक्षिप्त परिचयात्मक विवरण से इस काल की प्रमुख आलकारिक प्रवृत्तियों का सामान्य ज्ञान प्राप्त हो जाता है। अलकार संबंधी विस्तृत विवरण के लिए आगे प्रत्येक कवि की अलंकार सबंधी विशेषताओं और उनके द्वारा प्रयुक्त प्रमुख अलकारों का सक्षेप मे विवरण दिया जा रहा है जिससे प्रस्तुत विषय का सविस्तर परिचय पाठकों को प्राप्त हो जाय।

केशव

आलोच्यकालीन प्रत्येक कवि के अलकार-प्रयोग पर विचार करने की दृष्टि से हिंदी के प्रथम आचार्य केशव सर्व प्रथम हमारे सामने आते हैं।

अलकार-प्रयोग करने मे केशव चमत्कारवादी कवि हैं। उन्होने इस सिद्धात का निर्वाह अपने प्रायः सभी ग्रथो में किया है। केशव ने वीरसिहदेव-चरित्र मे शब्दालकार और सादृश्यमूलक

अलकारों का बाहुल्य से प्रयोग किया है। शब्दालकारो मे से अनुप्रास, यमक और श्लेष के बहुत से उदाहरण मिलते हैं। ये अलकार कोरे चमत्कार और उक्ति-वैचित्र्य के लिए प्रयुक्त हुए हैं। यह बात नीचे दिए हुए उदाहरणों से स्पष्ट हो जायेगी।

अनुप्रास—वीरसिहदेव-चरित्र मे अनुप्रास सब से अधिक प्रयुक्त शब्दालकार है। इस ग्रथ के प्रथम दो तीन प्रकाशों मे लोभ और दान के सवाद मे तो इसकी भरमार कर दी गई है। कोरे चमत्कार के लिए उक्ति-वैचित्र्यपूर्ण वार्त्तालाप कराए गए हैं। कुछ ऐसे भी उदाहरण मिल जाते हैं जहाँ पर अनुप्रास के प्रयोग से काव्य के सौदर्य की वृद्धि हुई है, यथा :—

"रोग भये भागे सब भोग, भोग भगे नहि सुख संजोग।
सुख बिन दुख कर दिन उद्दोत, दुख तै कैसे मंगल होत॥"[1]

अधिकाश स्थलों पर केशव ने चमत्कार-प्रियता के वशीभूत होकर, अनुप्रास की झोक मे आकर और प्रसग का ध्यान न रखते हुए पद्य लिख डाले है। यहाँ पर केवल एक उदाहरण पर्याप्त होगा :—

"केसौ राह अब्बुलफजलि मार्‌यौ वीरसिह साहि के महल जहँ तहँ उठि धाई है।
पीरी पीरी पातरी निपट पट पातरेई कटितट छीन उर लट लटकाई है॥
भृकुटी सो व झुकी सी, झझके से लोचिन उझके से उरजनि उर छवि छाई है।
खानजादी खान डारि, पान डारि सेखजादी साहिजादी पान डारि पीटनै कौं आई है॥"[2]

शुद्ध अलकार की दृष्टि से उक्त उदाहरण उत्तम है पर अबुलफ़ज़ल् की मृत्यु के उपरान्त शोक से पीड़ित रमणियों के सबध मे ऐसी उक्ति कवि की अलकार-प्रियता की ही द्योतक है।

यमक—अनुप्रास के उपरान्त यमक शब्दालकार का प्रयोग प्रचुर मात्रा मे मिलता है। इसका केवल एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा :—

"राजा वीरसिंह जू को बंधु हरीसिह देउ।
हरीसिह की दुहाई हरिसिह कैसो जायो है॥"[3]

श्लेष—केशव ने उक्त ग्रथ मे इस शब्दालकार का प्रयोग अपेक्षाकृत कम किया है। सूर्य के वर्णन के प्रसग मे श्लेष का यह उदाहरण विचारणीय है :—

"जहीं वारुनी की करी रंचक रुचि द्विजराज।
तहाँ कर्‌यौ भगवंत बिन संपति सोभा साज।"[4]

इस ग्रथ मे सादृश्यमूलक अलकारों मे से उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, भ्रम, सदेह और अतिशयोक्ति का प्रयोग अत्यधिक मात्रा मे हुआ है :—

उपमा—उपमा केशव का अधिक प्रिय अलकार है। अबुलफजल की मृत्यु के समाचार को पाकर शोक-पीडित अकबर की दशा का वर्णन करते समय उपमा का अच्छा उदाहरण बन पडा है :—

---

[1] वीरसिंहदेव-चरित, प्रकाश ७, छं० ५७, पृ० ४८ [2] वही, पृ० ६, छं० ४, ३६
[3] वही, प्र० वही, छं० ४१, पृ० ४२ [4] वही, प्र० ११, छं० २६, पृ० ६६

"अति निःशब्द भयौ दरबार, पवन हीन ज्यौं सिंधु अपार।
घरी चारि मे आई सुद्धि, तब उठि बैठ्यौ साहि सुबुद्धि॥"[1]

विद्रोही खुसरो का पीछा करते हुए जहाँगीर का वर्णन करते समय केशव ने उपमान के प्रयोग का समुचित ध्यान नही रक्खा है, यथा :—

"पीछे लग्यौ साहि सिरताज, ज्यौं सुवास पीछे अलिराज॥"[2]

खुसरो विद्रोही था और जहाँगीर शत्रु-भाव से प्रेरित होकर उसका पीछा कर रहा था। अतएव अलिराज से उसकी तुलना करने मे कवि ने प्रचलित उपमान परपरा का दुरुपयोग किया है :—

वर्षा-वर्णन मे उपमा के कतिपय सुदर उदाहरण इनके द्वारा बन पडे हैं।[3]

रूपक—केशव ने उत्प्रेक्षा-गर्भित रूपक का बडी सफलतापूर्वक प्रयोग किया है। युद्ध-वर्णन मे वर्षा के उपकरणो की कल्पना का यह सुदर उदाहरण देखिए :—

"धुंध धूरि धुरवा से गनौ, बाजत दुंदुभि गर्जत मनौ।
जहाँ-तहाँ तरबारै कढी, तिनकी दुति जनु दामिनि बढ़ी॥
तुपक तीर ध्रुव धारापात, भीत भये रिपुदल भट ब्रात।
श्रोनित जल पैरत तिहिं खेत, कूरभ कुल सब दलहि समेत॥"[4]

युद्ध के अवसर पर सेना के प्रयाण तथा युद्ध आदि का वर्णन करने मे बरात का सुदर रूपक बाँधा गया है।[5]

शरद्-ऋतु-वर्णन मे नायिका की कल्पना करके रूप और नखशिख-वर्णन करने मे सुदर रूपक केशव से बन पडा है।[6] केशव ने कही-कही पर अलकार प्रियता के कारण उपमा देते समय उपमान का उचित ध्यान नही रक्खा है, उदाहरणार्थ रूपक का यह छद देखिए :—

"दिनकर बानर अरुन मुख चढ्यौ गगन तरु धाय।
केसव, तारा कुसुम बिनु कीनौ झुकि झहराय॥"[7]

उक्त छद मे सूर्य की उपमा अरुन मुखवाले बानर से देना असगत है।

उत्प्रेक्षा—यह अलकार केशव को सब से अधिक प्रिय है। आलोच्य ग्रथ मे उत्प्रेक्षा का सब से अधिक प्रयोग हुआ है। वस्तु-वर्णन,[8] हाथी-वर्णन,[9] आगरा-वर्णन,[10] तथा वर्षा[11] आदि के वर्णन मे कवि ने उत्तम-उत्तम उत्प्रेक्षाएँ प्रयुक्त की हैं। उपर्युक्त स्थलों के अतिरिक्त अन्य स्थलों पर भी इस अलंकार के सुदर उदाहरण मिलते हैं। वीरसिंह की बलध्वजा का वर्णन करते हुए कवि कहता है :—

---

[1] वीरसिंहदेव-चरित्र, प्र० ६, छं० ७, पृ० ३८ [2] वही, प्र० १०, छं० १४, प्र० ६३ [3] वही, पृ० ११, छं० १-१४, पृ० ६७ [4] वही, प्र० ८, पृ० ५३ [5] वही, प्र० ८, छ० ६-३५, पृ० ५०-५२ [6] वही, प्र० ११, छ० १६-२०, पृ० ६८ [7] वही, प्र० ११, छं० २६, पृ० ६९ [8] वही, प्र० ४, छं० १८, पृ० २५; छ० ६३, पृ० ६१ [9] वही, प्र० ५, छं० ३४-४०, पृ० ३१ [10] वही, प्र० ९, छ० २२, पृ० ५७ [11] वही, प्र० ११, छं० १-१३, पृ० ६७

"वीरसिंह की बल-ध्वजा धूरिनि में सुख देति।
जुद्ध जुरन कौं मनहु प्रति जोधनि बोले लेति॥"[1]

वीरसिंह के डके के बजने पर उत्प्रेक्षा का एक सुंदर उदाहरण देखिए :—

"काँपन लागी भूमि भय भागि गयो जनु भानु।
बाजि उठ्यौ दिसि वाम तै वीरसिंह नीसानु॥"[2]

केशव ने अधिकाश स्थलों पर उत्प्रेक्षाओं की झडी लगा दी है, जिससे कवि की कोरी अलकार-प्रियता ही टपकती है।[3]

भ्रमालंकार—इस अलकार का कवि ने बहुत कम प्रयोग किया है। प्रासगिक रूप से एक उदाहरण पर्याप्त होगा। युद्ध के उपरात रणक्षेत्र का वर्णन करते हुए कवि का कथन है :—

"चंद्र जानि वासर चहुँ ओर, चुंचनि चुनत अँगार चकोर।"[4]

संदेह—केशव ने राव-भूपाल की तलवार का वर्णन उपमा से पुष्ट सदेह अलकार द्वारा एक अत्यंत सुंदर छद मे किया है।[5]

अतिशयोक्ति—केशव ने अतिशयोक्ति का कम प्रयोग किया है। युद्ध-वर्णन मे अन्य अलकारों के साथ इसके भी यत्र-तत्र उदाहरण मिल जाते हैं, पर बहुत कम। सदेह अलकार के ऊपर दिए हुए उदाहरण मे भी तलवार के वर्णन मे अतिशयोक्ति की सहायता ली गई है।

विरोधाभास—विरोधमूलक अलकार मे से केवल विरोधाभास के कतिपय उदाहरण इस ग्रथ मे मिलते हैं। नर्मदा का वर्णन करते हुए केशव कहते हैं :—

"जद्यपि निपट कुटिलगति आप, देति सुद्धगति हति अति पाप।
आपुन अधो अधोगति चलै, पतितनि कौ ऊरध फल फलै॥"[6]

केशव द्वारा 'वीरसिंहदेव-चरित्र' मे प्रयुक्त अलकारों के सक्षिप्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि इस ग्रथ की रचना करते समय भी अलंकार के आचार्य बनने की उन्हे धुनि थी। अतएव उन्होंने कुछ चुने हुए शब्दालंकारों और सादृश्यमूलक अलकारों के प्रयोग मे ही अपनी रुचि विशेष प्रकार से लगाई है। कहीं-कहीं पर अलकार-प्रयोग के कारण उनके काव्य में शैथिल्य भी आ गया है। पर कतिपय अलकारों की बडी सुदर उक्तियाँ भी उनसे बन पडी हैं। साथ ही हमे यह भी मानने के लिए बाध्य होना पडता है, कि उनके इस ग्रथ के अलकारों मे वह प्रौढता, क्लिष्टता, उक्ति-वैचित्र्य तथा दोषों की भरमार नहीं है, जो उनके अन्य ग्रथों मे हैं। अलकार की दृष्टि से यह ग्रथ अत्यत साधारण कोटि का है।

जटमल

अलकार-प्रयोग की दृष्टि से इनके ग्रथ का अत्यन्त साधारण स्थान है। जटमल की भावना

---

[1] वीरसिंहदेव-चरित, प्र० १२, छं० २८, प्र० ७४ [2] वही, प्र० वही, छं० ३६, प्र०७५ [3] वही, प्र० १४, छं० १३, प्र० ८२ [4] वही, प्र० ८, छं० ४८, प्र० ५४ [5] देखिए अध्याय ४, केशव कृत वीरसिंह देव-चरितांतर्गत वीररस का द्वितीय उदाहरण पृ० ७८-६ [6] वीरसिंहदेव चरित, प्र० १, छं० ६, पृ० २

आचार्यत्व प्रदर्शित करने की नही थी। ग्रंथ लिखते समय अनायास ही जो अलंकार आ गए हैं उन्हीं के उदाहरण उनकी रचना मे मिल जाते हैं।

अनुप्रास—शब्दालकारों मे से अनुप्रास का कवि बहुत प्रेमी था। गोराबादल की कथा मे इस अलकार के सबसे अधिक उदाहरण मिलते हैं। उन्होने नायक-नायिकाओं के रूप वर्णन[1] तथा युद्ध-वर्णन[2] मे अनुप्रास का प्रयोग करके चमत्कार का समावेश करने के साथ ही साथ काव्य को सौंदर्य प्रदान करने का सफल प्रयास किया है। "स्त्री-जात-वर्णन" मे से एक पद्य देखिए :—

"पदमिनी पद्मगंधा च, पुहुपपगंधा च चित्रनी।
हस्तिनी मदगंधा च, मच्छगंधा च संखिनी।"[3]

रूपकातिशयोक्ति—अर्थालकारो मे से रूपकातिशयोक्ति इनके द्वारा सबसे अधिक प्रयुक्त अलकार है। इसके उदाहरण "स्त्री-जात-वर्णन" के पद्यो मे देखे जा सकते हैं।[4]

अतिशयोक्ति—अतिशयोक्ति के प्रयोग मे इस कवि ने ऊहात्मक उडान से काम लिया है। यहां पर एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा :—

"लाख लहै ढोलियो, सवा लाख लहै दुलाई।
अरध लाख गिंडुवो, लाख त्रय अंक लगाई॥
केसर अगर कपूर, सेज परमल सूँ भीनी।
ता ऊपर पदमिनी, रमै रस रूप नवीनी॥
अलावदीन सुलताण सुणि, पदमगंध पदमावती।
चंद-बदन चपक-वरन, रतनसेन मन भावती॥"[5]

उपमा, रूपक तथा उत्प्रेक्षा अन्य अर्थालंकार हैं, जिनके एक आध उदाहरण प्रयत्न करने पर इस ग्रथ मे खोजे जा सकते हैं।

जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है अलकार प्रयोग को कवि ने विशेष महत्त्व नहीं दिया है। इस दृष्टि से 'गोराबादल की कथा' एक अत्यन्त साधारण कृति है।

मतिराम

भूषण के समान मतिराम ने भी 'ललितललाम' मे अलकारों के लक्षण और उदाहरण का विवेचन किया है। उन्होंने अपने उक्त ग्रथ में अधिकांश उदाहरण बूँदी-नरेश भाऊसिह के संबंध में कहे हैं। मतिराम ने 'ललितललाम' मे शब्दालकारों का वर्णन नही किया है। उसमें केवल अर्थालंकारों के लक्षण और उदाहरण दिए गए हैं। रसवदादि अलकारों का भी इसमे वर्णन नहीं हुआ है।

मतिराम के लक्षण और उदाहरण प्रायः निर्दोष और स्पष्ट हैं, पर निम्नलिखित अलंकारों के लक्षण और उदाहरण विशेष प्रकार से मनोहर एव सुदर बन पडे हैं :—

उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, दीपक, दृष्टांत, व्यतिरेक, अतिशयोक्ति और यथासख्य।

---

[1] गोराबादल की कथा, छं० ४६-५५, पृ० १२-४ [2] वही, छं० १३४-७, पृ० ३०-२ [3] वही, छं० ४६, पृ० १३, [4] वही, छं० ४२-४, पृ० ११-२; छं० ६३ पृ० १५-६ [5] वही, छं० ८१, पृ० २०।

इन अलकारों के अतिरिक्त अन्य अलकारों के उदाहरण भी उत्तम दिए गए हैं,[1] पर वीर विषय से सबधित न होने के कारण उनके नाम यहाँ पर नही दिए जा रहे हैं।

मतिराम रीतिकालीन अन्य कवियों की अपेक्षा अलकार-वर्णन मे अधिक सफल हुए हैं। उन्हे उत्तम आचार्य मानने मे किसी को आपत्ति नही हो सकती।

मतिराम कृत ललितललाम के प्रमुख अलकारों की सूची

यहाँ पर ललितललाम के केवल उन्ही अलकारों की सूची दी जा रही है, जिनके उदाहरणो के लिए कवि ने अपने आश्रयदाता के गुणगान को आधार माना है। शेष अलकार आलोच्य-धारा की सीमा से बाहर होने के कारण इस स्थान पर नहीं दिए गए हैं।

क्रम सख्या	अलकार	उदाहरण पद्य सख्या[2]	पृष्ठ[1]
१.	उपमा	४१	३६८
२.	लुप्तोपमा	४७	३६६-३७०
३.	मालोपमा	४६	३७०
४	रसनोपमा	५२	३७०-३७१
५	अनन्वय	५४	३७१
६	उपमेयोपमा	५६	३७१ ३७२
७	प्रतीप	५८	३७२
८.	द्वितीय प्रतीप	६०	३७२-३७३
६	चतुर्थ-प्रतीप	६४	३७३
१०.	पचम-प्रतीप	६६	३७४
११.	रूपक-समोक्ति अभिन्न रूपक	६६	३७५
१२.	हीनोक्ति-अभिन्न रूपक	७०	३७५
१३.	अधिकोतित-अभिन्न रूपक	७१	३७५
१४.	समोक्ति-तद्रूप-रूपक	७२	३७६
१५	अधिकोक्ति तद्रूप रूपक	७४	३७६
१६.	परिणाम	७७	३७७
१७.	उल्लेख-प्रथमोदाहरण	७८	३७७
१८.	द्वितीयोदाहरण	७६	३७७-३७८
१६.	भ्रात्यापह्नुति	६४	३८०
२०.	छेकापह्नुति	६७	३८१
२१	उक्तविषया वस्तूत्प्रेक्षा	१०३	३८२

[1] विश्वनाथप्रसाद मिश्र; भूषण-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० २६-७; कृष्ण बिहारी मिश्र, मतिराम-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० ५६-७२ [2] कृष्ण-बिहारी मिश्र कृत मतिराम ग्रंथावली मे सम्मिलित ललितललाम के क्रम के अनुसार पद्यों और पृष्ठो की संख्या दी गई हैं।

क्रम संख्या	अलकार	उदाहरण	पृष्ठ
२२.	सिद्धविषया हेतूत्प्रेक्षा	१०५	३८३
२३.	असिद्ध विषया फलोत्प्रेक्षा	१०८	३८४
२४.	(द्विविध) सबधातिशयोक्ति	११६-१२०	३८५-३८६
२५	द्वितीय संबधातिशयोक्ति	१२२	३८७
२६	अत्यन्तातिशयोक्ति	१२६	३८८-३८६
		पद्य सख्या	
२७	प्रथम तुल्ययोगिता (अवर्ण्य)	१३१	३८६
२८	दीपकावृत्ति (शब्दावृत्ति)	१३८	३६०
२६	शब्दार्थवृत्ति	१४०	३६१
३०	प्रतिवस्तूपमा	१४३	३६२
३१	दृष्टात	१४७	३६२
३२	प्रथम निदर्शना	१४६	३६३
३३	द्वितीय निदर्शना	१५१	३६३
३४	व्यतिरेक	१५६	३६४
३५	सहोक्ति	१५८	३६४
३६.	परिकर	१६५	३६६
३७.	श्लेष (प्रकृतापकृत)	१७१ १७२	३६७
३८	प्रथम पर्यायोक्ति	१७८	३६८
३६.	विरोधाभास	१६५	४०१
४०.	प्रथम असगति	२१५	४०५
४१.	विचित्र	२३५	४०८-४०६
४२.	द्वितीय अधिक	२३६	४०६-४१०
४३.	द्वितीय विशेष	२४८	४११
४४.	तृतीय विशेष	२५०	४१२
४५.	प्रथम हेतुमाला	२५६	४१३
४६.	एकावली	२६०	४१४
४७.	मालादीपक	२६२	४१४-४१५
४८.	सार	२६५	४१५
४६.	यथासंख्य	२६६	४१५
५०.	परिवृत्ति	२७२	४१६-४१७
५१.	परिसख्या	२७४	४१७
५२	द्वितीय प्रहर्षण	३०६	४२३
५३	रत्नावली	३३०	४२७
५४.	द्विविध उदात्त	३७८	४३६-४३७

५५.	विधि	३६०	४४०
५६	हेतु	३६२	४४०
५७	तृतीय हेतु	३६८	४४१

भूषण

आलोच्य धारा के कवियो मे भूषण के दो प्रकार के ग्रथ उपलब्ध हैं। (१) उन्होंने 'शिवराजभूषण' मे अलकारो का विवेचन किया है। (२) 'शिवाबावनी', 'छत्रसाल दशक' तथा फुटकर छदों मे इस कवि ने शिवराजभूषण की रीति-शैली का अनुसरण नही किया है, वरन् कवित्व-शैली को अपनाया है।

भूषण ने 'शिवराजभूषण' मे दोहा छदों मे अलकारों के लक्षण देकर उनके उदाहरण दिए है। उदाहरणों के लिए वीर केशरी शिवाजी सबधी घटनाओं को आधार माना है। इन्होंने इस ग्रंथ मे कुल १०५ अलकारो का वर्णन किया है, जिनमें से १०० अर्थालकार, पाँच शब्दालंकार और एक उभयालंकार है। अर्थालकारो की सख्या मे अधिकाश अलकारों के भेदों की सख्या भी सम्मिलित है।[1] इन्होने जितने अर्थालकारों का विवेचन किया है उनमे से कुछ के सारे भेद कहे है, कुछ के कुछ ही भेदो का विवेचन किया है और कुछ अलकारों के भेद एक दम छोड दिए है। भूषण ने जिन अलकारों का विवेचन किया है उनमे से कुछ के लक्षण छोड़ दिए है और केवल उदाहरण ही दे दिए हैं। उनके नाम ये हैं—

उत्प्रेक्षा के भेद-वस्तु, फल-हेतु, पर्यायोक्ति का द्वितीय भेद, विशेष का द्वितीय भेद और अर्थान्तरन्यास के सामान्य तथा विशेष भेद।[2]

कतिपय स्थलों पर इस कवि ने एक ही छद मे दो अलकारों के लक्षण दे दिए हैं। उनमे से कुछ ये है :—

परिकर तथा परिकराकुर, द्वितीय एव चतुर्थ विभावना, मालादीपक और सार, लोकोक्ति, छेकोक्ति, छेक एवं लाटानुप्रास।[3]

भूषण के अधिकाश अलकारो के लक्षण तथा उदाहरण अस्पष्ट और दोषपूर्ण हैं। पंचम-प्रतीप, विरोध, विरोधाभास, छेकानुप्रास, लाटानुप्रास तथा सकर अलकारों के लक्षण सदोष हैं।[4]

लक्षणों की अपेक्षा भूषण के उदाहरण अधिक अशुद्ध है। सदोष उदाहरणवाले कुछ अलकारों के नाम निम्नलिखित है :—

उपमा (दूसरा उदाहरण), लुप्तोपमा (दूसरा उदाहरण), परिणाम, भ्रमालकार, निदर्शना (प्रथम भेद), समासोक्ति, अप्रस्तुत प्रशंसा, पर्यायोक्ति (द्वितीय), सम, विकल्प, काकुवक्रोक्ति, फलोत्प्रेक्षा, परिकर, विभावना (चतुर्थ), काव्यलिंग, अर्थान्तरन्यास, (विशेष), मिथ्याध्यवसिति, निरुक्ति तथा छेकानुप्रास।[5]

---

[1] देखिए आगे दी हुई भूषण के अलंकारों की सूची, पृ० १०७ [2] भूषण-ग्रंथावली, पृ० १८६, ३१-२, ४१, ४७-८ [3] वही, पृ० २६, ३४, ४२, ५६, ६३ [4] वही, पृ० ८, ३३, ६३, ६७ [5] वही, शिवराजभूषण, छं० ३५, ३८, ६८, ६६, ७७, १०३-४, १४०, १५८-६, १६१-३, १६६-७१, १७४, १६१, २१०-१, २५०-५१, २६४, २६७, २७३-४, ३२५-६, ३४६-८, ३५६-६१

भूषण ने दो नवीन अलकार 'सामान्य-विशेष' और 'भाविक-छवि' माने हैं, पर ये दोनों ही क्रमशः विशेष निबधना और भाविक के अतर्गत आ जाते हैं।

उपर्युक्त सक्षिप्त विवेचन के पश्चात् यही मानना पडता है कि रीतिकार के रूप मे भूषण को आशातीत सफलता प्राप्त न हो सकी। रीति-ग्रथ की दृष्टि से [illegible] साधारण श्रेणी की कृति है। सच बात तो यह है कि रीति-ग्रथ-लेखन-प्रणाली ने इस ग्रथ मे भूषण की कविता का स्वतत्र विकास नही होने दिया है। सभवतः भूषण को अलकारो का अभ्यास बहुत कम था। यह भी संभव है कि रीति-ग्रंथ के बंधन मे न पडकर भूषण ने शिवाजी के यशोगान करने के लिए रीति-ग्रंथ-परपरा को साधन मानकर अपने उद्देश्य की पूर्त्ति की हो। अन्य कवियो के समान उनकी दृष्टि कविता की ओर अधिक टिकी थी। यही कारण है कि 'शिवराज-भूषण' के अधिकाश पद्यो मे अलंकारो के अत्यंत उत्कृष्ट प्रयोग के साथ कवित्व के सुंदर दर्शन होते है। जहाँ इन्हे कोई बंधन न था वहाँ इन्होंने स्वाभाविक रूप से अत्यंत उत्तम अलंकार-योजना की है।[१]

इनके द्वारा रचित 'शिवाबावनी',' छत्रसाल-दशक' और फुटकर पद्यों मे कवित्व के साथ अलंकारों के सफल प्रयोग हुए हैं। इन ग्रंथो मे प्रयुक्त अलंकारो का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। पर निम्नलिखित अलंकारो का प्रचुर मात्रा मे भूषण ने प्रयोग किया है :—

(क) शब्दालंकारो मे से अनुप्रास और यमक का अधिकता से प्रयोग हुआ है।

(ख) अर्थालंकारों मे से सादृश्यमूलक अलंकार-उपमा, मालोपमा, प्रतिवस्तूपमा, रूपक, अपह्नुति, उत्प्रेक्षा, व्यतिरेक, अप्रस्तुत-प्रशसा, तुल्ययोगिता आदि को कवि ने विशिष्ट रूप से अपनाया है।

(ग) विरोध-मूलक अलंकारो मे से विरोधाभास, विषम, विशेषोक्ति आदि का प्रयोग किया गया है।

(घ) न्यायमूलक अलंकारो मे से परिसंख्या, अनुमान, पर्याय और और काव्यलिंग प्रयुक्त हुए हैं।

(ङ) लोक व्यवहारमूलक अलंकारो मे से लोकोक्ति तथा अत्युक्ति आदि अलंकारों का प्रयोग किया गया है।

अन्य अलंकारो का भी सफल प्रयोग हुआ है। इन्होंने अधिकाश पद्यों मे कई अलंकारों का प्रयोग बडे कौशल से किया है, उदाहरणार्थ, छत्रसाल की तलवार की प्रशंसा करते हुए उसने एक ही छंद मे रूपक, उपमा, उदाहरण, [illegible] यमक और अनुप्रास का प्रयोग इतने चातुर्य से किया है कि काव्य की सरसता बढ गई है।[२]

'शिवाबावनी' के कुछ पद्यों मे वृत्यानुप्रास के प्रयोग द्वारा शिवाजी के आतंक का सुंदर वर्णन हुआ है।[३] यमक के प्रयोग के लिए 'शि [illegible]' के ये छंद देखे जा सकते हैं।[४]

उपर्युक्त विवेचन के उपरात हम इस परिणाम पर पहुँचते है कि यह कवि रीतिकार के रूप मे प्रायः असफल रहा है। पर हमें यह न भूलना चाहिए कि उनका उद्देश्य शिवा जी एवं छत्रसाल

---

[१] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० ८६-६८, राजनारायण शर्मा, देवचंद्र विशारद : भूषण-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० ६६-७३ [२] भूषण-ग्रंथावली, छं० ७, पृ० ६१ [३] वही, शिवाबावनी, छ० २७, ४४, ४८ [४] वही, वही, छं० २६-८, ३७।

की गौरव-गाथा-गान करना था। समय के प्रवाह मे बहकर अलंकार-विवेचन को साधन-मात्र मानकर शिवा-गुणा-गान को उन्होंने अपना लक्ष्य बनाया था और इसमे इन्हे पूर्ण सफलता मिली है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, इनके ग्रंथो मे अलंकार-प्रयोग के निर्दोष सफल उदाहरण प्रचुर-मात्रा मे मिलते हैं। अतएव इन्हे चाहे आचार्यत्व की पदवी न प्रदान की जाये, पर शुद्ध कवित्व की दृष्टि से इनका अपना निजी स्थान है।

(ब) 'शिवराज-भूषण' के अलकारों की सूची

भूषण ने 'शिवराज-भूषण' मे क्रमशः (अ) अर्थालकार, (आ) शब्दालकार तथ (ई) उभयालकार का विवेचन किया है। इसी क्रम से यह सूची रक्खी गई है। उन्होंने कतिपय अलकारों केभेदों को भी वास्तविक अलकार के समान माना है। इसी क्रम से संख्या-क्रम भी रक्खा गया है :—

(अ) अर्थालकार

१ उपमा, लुप्तोपमा, २. अनन्वय, ३ प्रथम प्रतीप, द्वितीय प्रतीप, तृतीत प्रतीप, चतुर्थ प्रतीप, पंचम प्रतीप, ४. उपमेयोपमा, ५ मालोपमा, ६ ललितोपमा, ७. रूपक, रूपक के अन्य दो भेद (न्यूनाधिक), ८. परिणाम, ९ उल्लेख, १०. स्मृति, ११ भ्रम, १२. सदेह, १३. शुद्धापह्नुति, १४. हेत्वापह्नुति, १५. पर्य्यस्तापह्नुति, १६ भ्रात्यापह्नुति, १७. छेकापह्नुति, १८. केतवापह्नुति, १९.उत्प्रेक्षा, वस्तूत्प्रेक्षा, हेतूत्प्रेक्षा, फलोत्प्रेक्षा, गम्योत्प्रेक्षा, २० रूपकातिशयोक्ति, २१.भेदकातिशयोक्ति, २२ आक्रमातिशयोक्ति, २३, चचलातिशयोक्ति, २४. अत्यतातिशयोक्ति, २५.सामान्यविशेष, २६. प्रथम तुल्योगिता, द्वितीय तुल्योगिता, २७ दीपक, दीपकावृत्ति, २८. प्रतिवस्तूपमा, २९ दृष्टान्त, ३०. प्रथम निदर्शना, द्वितीय निदर्शना, ३१ व्यतिरक, ३२. सहोक्ति, ३३. विनोक्ति, ३४. समासोक्ति, ३५. परिकर, ३६. परिकराकुर, ३७ श्लेष, ३८ अप्रस्तुत प्रशसा, ३९. पर्यायोक्ति-प्रथम, द्वितीय, ४०. व्याजस्तुति, ४१, आक्षेप प्रथम, द्वितीय, ४२. विरोध, ४३. विरोधाभास, ४४. विभावना-प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, पष्ठ, ४५ विशेषोक्ति, ४६ असम्भव, ४७. असगति-प्रथम, द्वितीय, तृतीय, ४८ विषम, ४९. सम, ५०. विचित्र, ५१ हर्षण, ५२. विषादन, ५३. अधिक, ५४. अन्योन्य, ५५. विशेष, प्रथम, द्वितीय, ५६ व्याघात, ५७. मुकुल, ५८. एकावली, ५९. मालादीपक, ६०. सार, ६१. यथासख्य, ६२ पर्याय, ६३. परिवृत्ति, ६४ परिसख्या, ६५ विकल्प, ६६. समाधि, ६७ समुच्चय, प्रथम, द्वितीय, ६८ प्रत्यनीक, ६९. अर्थापत्ति, ७०. काव्यलिग, ७१ अर्थान्तरन्यास, समान्य-भेद, विशेष-भेद, ७२. प्रौढोक्ति, ७३. सभावना, ७४. मिथ्याध्यवसिति, ७५. उल्लास, गुणेनदोषो, दोषेन गुणो, गुणेन गुणो, दोषेन दोषो, ७६. अवज्ञा, ७७. अनुज्ञा, ७८. लेश, ७९ तद्गुण, ८० पूर्व रूप, ८१ अतद्गुण, ८२. अनुगुण, ८३ मीलित, ८४. उन्मीलित, ८५ सामान्य, ८६ विशेषक, ८७ पिहित, ८८ प्रश्नोत्तर, ८९. व्याजोक्ति, ९०. लोकोक्ति, ९१ छेकोक्ति, ९२. वक्रोक्ति, श्लेष से वक्रोक्ति, काकु से वक्रोक्ति, ९३. स्वभावोक्ति, ९४.भाविक, ९५. भाविक छवि, ९६. उदात्त, ९७. अत्युक्ति, ९८ निरुक्ति, ९९. हेतु, १००. अनुमान।

(आ) शब्दालकार

१०१. अनुप्रास-छेक, लाट, १०२. यमक, १०३. पुनरुक्तिवदाभास, १०४. चित्र,

(इ) उभयालकार

१०५. सकर।

मान

मान कवि का अन्य कवियों के समान ही अलंकार प्रयोग की दृष्टि से विशेष महत्त्व है। इन्होंने भी इस धारा की प्रचलित शैली का अनुकरण किया है। गिने गिनाए प्रचलित अलकारों की ही इनके ग्रथ मे भरमार है। इनके द्वारा प्रयुक्त प्रसिद्ध अलंकारो के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं।

अनुप्रास—शब्दालकारों में अनुप्रास का मान ने सबसे अधिक प्रयोग किया है। सेना के प्रस्थान करते समय अनुप्रास की सहायता से कवि ने एक चित्र उपस्थित कर दिया है :—

"सलसलत सेस कलमलत कच्छ, झलझलत उदधि रलरलत मच्छ।
परभरत चित्त पल दल अधीर, चलचलत चक्र चहुँ डुलत नीर" ॥[1]

राजकुमारी रूपकुँवरि के नखशिख-वर्णन मे भी अनुप्रास की सुदर छटा आखों के सामने अकित हो जाती है। एक उदाहरण देखिए :—

" कलकंठ सुरसना कुहकें, मुख स्वास कुसुम वर महकें।
चित चुभी चिबुक चतुराई, ससि पूरन बदन सुहाई ॥"[2]

उपमा—मान द्वारा उपमा अलकार का भी सफलतापूर्वक सुदर प्रयोग किया गया है। यथा :—

" ता पाछैं कमधज्ज नैं, बंदिय तोरन वार।
उभयराज वर इंद्र ज्यौ, बरसैं कंचन धार ॥"[3]

उत्प्रेक्षा—मान ने इस अलकार का अन्य अर्थालंकारो की अपेक्षा अधिक प्रयोग किया है। इसके प्रयोग मे इन्हे सफलता भी पूर्णरूप से मिली है। एक उदाहरण देखिए :—

" सूर चंद सुर साखि सब, बर गँठ जोरा बन्धि।
बँधी मनु हित गंठि दृढ, दम्पति उभय संबंधि ॥"[4]

रूपक—रूपकालंकार का मान ने बड़े चातुर्य एवं कौशल से प्रयोग किया है। यथा :—

"महिथल सुरग उपजे ममोल, अति अरुन अंग कोमल अमोल।
बगपंति श्याम बद्दल विहार, हिय मध्य पहरि मनु मुत्ति हार ॥"[5]

अतिशयोक्ति—इस अलङ्कारों का प्रयोग वैभव, युद्ध आदि वर्णन के प्रसंग में हुआ है। राणा राजसिंह की गर्वोक्ति मे से एक छद उदाहरणस्वरूप नीचे दिया जा रहा है :—

"उज्जरि करि अग्गरो ढाहि ढिल्ली ढंढोरों।
लाहोरिय धर लुट्टि तटकि तुरकानी तोरो ॥
पनि नंपो पधार बेगि खुरसान बिहंडों।
परजारों पट्टनहि देश भक्खर सब दंडों ॥
सुबिहान साहि औरंग को गज समेत जीवत गहों।
हौ राजराण तो हिंदुपति कहा अधिक तुम सो कहौ ॥"[6]

---

[1] मान, राजविसाल, वि० ३, छं० ३६, पृ० ६६ [2] वही, वि० ६, छं० ११, पृ० १०४ [3] वही, वि० ३, छं० ६८, पृ० ७७ [4] वही, वि० ७, छं० ७३, पृ० ११२ [5] वही, वि० १, छं० ४५, पृ० ६ [6] वही, वि० ६, छ० १६७, पृ० १८१-२

ऊपर दिये हुए कतिपय उदाहरणों से स्पष्ट है कि भान ने केवल उन्हीं अलङ्कारों का प्रयोग किया है जो वर्ण्य-विषय की सजीवता एव भावव्यजना को बढाने में सहायक हुए हैं। अलङ्कार-पद-योजना मे इस कवि ने अन्य कवियों की अपेक्षा स्वाभाविकता का अधिक ध्यान रखने का प्रयत्न किया है और इसमे उसे पर्याप्त सफलता भी मिली है।

गोरेलाल

गोरेलाल ने अलकार-प्रयोग मे अधिक सयम से काम लिया है। उनके सपूर्ण ग्रंथ के अवलोकन से विदित होता है कि अलकारों के पीछे पडने की उनकी प्रवृत्ति नही थी। काव्य को स्वाभाविक प्रगति से प्रवाहित होना चाहिए, यह उनका मत था। काव्य के चरित्र-नायक के कार्य-कलापों का वर्णन करते समय प्रासगिक रूप से जो कुछ अलकार आ गए हैं, उनसे काव्य के सौदर्य का पर्याप्त मात्रा मे विकास हुआ है।

अनुप्रास—गोरेलाल कोरे शाब्दिक चमत्कार के पक्षपाती नही थे। यही कारण है कि शब्दालंकारों का 'छत्रप्रकाश' में सर्वथा अभाव है। केवल अनुप्रास के एक दो उदाहरण मिल जाते हैं। युद्ध मे संलग्न सारवाहन के वर्णन मे निम्न उक्ति विचारणीय है :—

"कुँवर सारवाहन बल बाढ़े, तमकि तीर तरकस तैं काढ़े।"[1]

अर्थालकारों मे से निम्नलिखित अलकारों के विशेष प्रयोग मिलते हैं :—

उपमा—युद्ध के वर्णन मे गोरेलाल ने सुदर उपमाएँ दी हैं, जैसे :—

"तीछन तीर बज्ज से छूटे, बखतरपोस पैान से फूटे।"[2]

तथा

"खाइ-खाइ गोलिन की चोटैं, रन-मंडल लोटन से लेटैं।"[3]

छत्रसाल के विवाह के समय के रूप का वर्णन करते हुए उपमा की यह सुदर उक्ति कवि ने कही है :—

"तहँ बिधि सौ आगौनी कीनी, बाँध्यौ मौर इन्द्र छबि लीनी।"[4]

रूपक—इस अलकार का प्रयोग युद्ध-वर्णन के लिए हुआ है। युद्ध-वर्णन मे आखेट का रूपक बाँधता हुआ कवि कहता है :—

"मियाँ दुरद भुमिया हरिन, कानन मुलक बिसाल।
कढ़ि सिकार खेलन लग्यौ, समरसिंह छत्रसाल॥"[5]

सागर मथने के रूपक की सहायता से युद्ध-वर्णन की यह उक्ति विचारणीय है :—

"मथ्यौ मध्य रन पैठि कै, मच्यौ चहूँ दिस चाल।
अफगन सैन समुद भौ, मंदर भौ छत्रसाल॥"[6]

उत्प्रेक्षा—युद्ध-वर्णन मे वर्षा की कल्पना द्वारा उत्प्रेक्षा का सुदर प्रयोग हुआ है :—

"जो खग्गन खेलत उत काढ़ी, बेलै जनु बिजुरन की बाढ़ी।
टोपन टूटि उटैं असि सच्छी, दह में मनो उछल्लै मच्छी॥"[7]

---

[1] छत्रप्रकाश, अध्याय, ३ पृ० २० [2] वही, अ० ४, पृ० २६ [3] वही, अ० २१, पृ० १३६ [4] वही, अ० १६, पृ० १०६ [5] वही, अ० १७, पृ० ११५ [6] वही, अ० २३, पृ० १४६ [7] वही, अ० २०, पृ० १३४-५

वीर छत्रसाल के भतीजे जगतसिंह का वर्णन करते हुए गोरेलाल की यह उक्ति दर्शनीय है :—

"छत्रसाल कौ सुभट भतीजौ, मानहु नैन रुद्र कौ तीजौ।"[1]

छत्रसाल के रूप का वर्णन करते हुए कवि ने अत्यंत उत्तम उत्प्रेक्षाएँ में प्रयुक्त की है, यथा :—

"घूँघरवारी घनी लटूरी। देती आनन कौ छवि पूरी॥
मनौ भ्रमर की पाँति सुहाई। अमृत पियन उचपति पै आई॥
ऊँच्यौ भाल विसाल विराजै। कनक पट्ट कैसी छबि छाजै॥
लसतु अष्टमी चंद किधौं है। बखत भूप कौ तखत मनौ है॥
नैन बिसाल असित सित राते। कमलदलन पर अलि जनु माते॥
भुजा विसाल जानु लौ आये। भुवभर मानहुँ लेत उठाये॥"[2]

श्रीकृष्ण भगवान् के रूप-लावण्य के कथन मे कवि ने एक सुंदर उत्प्रेक्षा का प्रयोग किया है :—

"सुभग स्याम तन मुकुट अनि, पीतबसन छबि देत।
जनु घन उभयौ है मनौ, उडगन तड़ित समेत।"[3]

अतिशयोक्ति—युद्ध के वर्णन मे कवि ने अतिशयोक्ति अलंकार की सहायता से कार्य लिया है। निम्नलिखित उक्ति मे कल्पना की ऊहात्मक उडान है :—

"दौर अनौर कोस दस आवै। धुआँ कोस चालिस लौ आवै।[4]

कुछ उक्तियों मे "भानु का रथ रोक कर युद्ध देखना" इस उपमान की सहायता से इस अलंकार का प्रयोग किया गया है, यथा :—

"लरे हाँक हिंदू तुरक, झर्‌यौ सार सौ सार।
भये भानु रथ रोक कै, कौतुक देखनहार।"[5]
"नाच्यौ समर बजाइ हर, मच्यौ घोर घमसान।
छके वीर रनरंग मे, थके रोपि रथ भान।"[6]
"बिडरतु कटकु भान रथ रोपे, बिडर्‌यौ कटकु कुंवर के कोपे।"[7]

नीचे ऊहात्मक उडान से परिपूर्ण अतिशयोक्ति का एक उदाहरण दिया जाता है :—

"छत्रसाल जिहि दिसि पिलै, काढ़ि धोप कर माँहि।
तिहि दिस सीस गिरीस पै, बनत बटोरत नाँहि।"[8]

गूढोक्ति अलंकार—इस रचना म गूढार्थमूलक अलंकारो मे से गूढोक्ति अलंकार का एक उदाहरण मिलता है :—

"भुजा भतीजे की बल बाढ़ी खेल्यौ खेल चचा की डाढ़ी।"[9]

---

[1] छत्रप्रकाश, अ० २१, पृ० १३६ [2] वही, अ० ४, पृ० २३ [3] वही, अ० २४, पृ० १५८ [4] वही, अ० १७, पृ० ११६ [5] वही अ० १८, पृ० १२६ [6] वही, अ० २०, पृ० १३५ [7] वही, अ० ३, पृ० २१ [8] वही, अ० २०, पृ० १३६ [9] वही, अ० २२, पृ० १४२

उपर्युक्त विवेचन के उपरान्त यह सार निकलता है कि गोरेलाल कृत "छत्रप्रकाश" मे अलकारों का प्रयोग अधिक, सयत और स्वाभाविक ढग से हुआ है। कवि अलंकारों के भार से कविता-कामिनी को भाराक्रान्त करने का पक्षपाती नही रहा है। उसने प्राय: प्रचलित उपमानों का ही प्रयोग किया है पर कहीं-कहीं कुछ उत्तम एव अनूठे उपमानो की भी कल्पना की है। अन्य कवियो के समान वेसिर पैर की कल्पना का अतिशयोक्ति पूर्ण प्रयोग उसे इष्ट नही रहा है।

श्रीधर

अलङ्कार-प्रयोग की दृष्टि से 'जगनामा' एक साधारण कोटि का ग्रथ है। उसमे अलङ्कार का समावेश नही के बराबर हुआ है। श्रीधर ने इस रचना मे साधारणतया अनुप्रास और यमक शब्दालङ्कारो तथा रूपक और उत्प्रेक्षा अर्थालङ्कारो का बार-बार प्रयोग किया है। कुछ स्थलों पर एक ही पद्य मे उक्त अलङ्कारो मे से दो तक के प्रयोग मिलते है।

अनुप्रास गर्भित यमक—नीचे की पक्तिया मे अनुप्रास और यमक का सुदर प्रयोग हुआ है :—

"साढ़े तीन हाथ कद दस हथा हाथी चढ्यो।
दोई हाथ होत है हजार हाथ जंग मै॥'[1]

उत्प्रेक्षा—इस कवि का उत्प्रेक्षा अत्यत प्रिय अलङ्कार है। उसने अधिकाश स्थलों पर उत्प्रेक्षा का प्रयोग करते समय वर्षा के उपकरणों से उपमान लिए है। कुछ उदाहरण ये हैं :—

'तेहि बीच झुकि पर ओर ते तरवारि झम झम झम परी।
झर लगी तीरन की महा मनु लगी सावन की झरी।"[2]

× × ×

"चहुँ ओर फौजनि फौज सो मन मौज मारु महा परी।
हथियार भार दुधार भर मनु मघा मेघत की झरी।"[3]

× × ×

"गडादार घेरे सिरी कट्टबंटा। गजैं मेघ मानों बजे घोर घंटा॥"[4]

अनुप्रास गर्भित उत्प्रेक्षा—निम्नलिखित पक्तियो मे अनुप्रास मिश्रित उत्प्रेक्षा का सुदर प्रयोग किया गया है :—

"अनुराग उपजत राग सुनि सुनि कबित रस के दोहरा।
मनु ढरे सांचे नवल नाचे नटा नट के छोहरा॥"[5]

रूपक—अन्य कवियो के समान युद्ध-वर्णन मे वर्षा का रूपक श्रीधर द्वारा प्रयुक्त हुआ है। इसका एक उदाहरण नीचे दिया जा रहा है :—

"बखतरपोस पखरैत फील स्वारन की,
कारी घटा भारी ज्यों पयोद प्रलैकाल को।
श्रीधर भनत गोला बान सर झर भर,
बरखत थाँभैं को करैरी तरवाल को॥"[6]

---

[1] जंगनामा, पृ० ६२ [2] वही, पृ० ४ [3] वही, पृ० ५६ [4] वही, पृ० २३ [5] वही, पृ० २८ [6] वही, पृ० ६०-१

इसी प्रकार उक्त अलङ्कारों के और भी उदाहरण देखे जा सकते हैं।

सदानद

सदानन्दकृत "रासा भगवन्तसिंह" नामक छोटी रचना में अलकारो का प्रायः अभाव है। कवि ने अलकार-योजना के प्रति विशेष अभिरुचि नही प्रदर्शित की है। उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, अनुप्रास, भ्रम आदि परपरागत अलकारो के कतिपय उदाहरण यत्र-तत्र उपलब्ध हो जाते हैं। उक्त अलकारों के प्रयोग में कवि को साधारण सफलता मिली है, यह बात नीचे दिए हुए उदाहरणों से स्पष्ट हो जायेगी :—

उत्प्रेक्षाः —"छुट्यौ तोपखाना भयो रोर दूनौ।
कहाँ लौं कहौं जो मनो भार भूनौं॥
यही भाँति बीती निसा भो सबारा।
तबै कूच फौजानि बाजे नगारा॥"[1]

अतिशयोक्ति तथा अनुप्रास :—"कंप्यो लोक अवलोकि सोक भय जहँ तहं बज्यौ।
लखि चरित्र बिधि-हरि-हर-हिय अनुराग उपज्यौ॥
प्रेरित गन चलि बेगि समर अवनी महँ आयौ।
कहि प्रणाम कर जोरि अभिमान बचन सुनायौ॥

[redacted]

चष्टा का जा रहा ह :—

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ५, १९८१ वि०, छं० २९, पृ० ११८-९
[2] वही, भा० वही, छं० १०३, पृ० १३१ [3] वही, भा० वही, छं० १५, पृ० ११६

अनुप्रास—शब्दालकारों मे से अनुप्रास इस कवि को अधिक प्रिय है। ग्रंथ के आरभ में कवियों की नामावली[1] तथा दिल्ली की लूट मे विविध सामग्री की सूची आदि के अवसर पर उसने अनुप्रास की झडी लगा दी है।[2] इस अलकार की सहायता से कवि ने युद्ध का सजीव चित्र अकित किया है।[3] अनुप्रास की सहायता से वर्णन मे कितनी सजीवता आ गई है इसका एक उदाहरण देखिए :—

"फिर फेरि झटक्कै पकरि पटक्कै साग सटक्कैं मारु कहै।
इक इक्क हटक्कै देत दडक्कैं सेल तटक्कैं श्रौन बहैं॥
बिन हथ्थ भटक्कै भरत बटक्कैं मास गटक्कैं देखि रहै।
इक जात पटक्कैं खग्ग खटक्कैं सीस कटक्कै दौर गहै॥"[4]

इस प्रकार अंग्रेजी के 'ऑनो मोटो-पोइ॥' नामक अलंकार का उसके द्वारा सफल प्रयोग हो गया है, पर उससे कविता मे कही-कही शिथिलता भी आ गई है।[5]

यमक—सूदन ने इस अलकार का अपेक्षाकृत कम प्रयोग किया है। इसका केवल एक उदाहरण पर्याप्त होगा :—

"काटे तनत्रान निज प्रानन-पयान हेतु।
सूरज ने भेज्यौ बैठ्यौ सूरज के पास मे॥"[6]

उपमा—अर्थालंकारों मे से उपमा सूदन को अधिक रुचिकर लगा है। सेना के प्रस्थान तथा युद्ध के वर्णन मे कुछ स्थलो पर उन्होंने वर्षा के प्रचलित उपकरणों को ही उपमान रूप मे ग्रहण किया है, यथा :—

"झरिय सार तिहि पर अपार मुख मारु मारु रर।
ज्यों पहार पर जलद धार बरसंत सांग सर॥"[7]

× × ×

"धद्धरा धद्धरी बद्दरा से गजैं।
लेउ रे लेउ दात्यूर के कीरटा॥
मास आसाढ़ की आपगा सी बढ़ी।
सूर सैना धइ तोरि दिल्ली तटा॥"[8]

सूदन ने उपमा देने के लिए कुछ उपमान कृषि-संबंधी पदार्थों से भी लिए हैं जैसे :—

"प्रथम दिना पुरइन्द्र दिखायौ साथ कौ।
ज्यौ किसान लहि सगुन करै कृषि हाथ को॥"[9]

× × ×

---

[1] सुजान-चरित्र, जंग १, अंक १, छं० ४-१०, पृ० २-३ [2] वही, जंग ६, अंक द्वितीय, छं० ३२-७, ४१-३, पृ० १७२ ३, १७५ [3] वही, जग वही, अं० ५, छं० १४-६, पृ० १६६-७ [4] वही, जंग २, छं० २, छं० १६, पृ० ३५ [5] वही, जं० प्र०, अं० च०, छं० २, पृ० २०-१, जं० पं०, अं० च०, छं० १४, पृ० १३६-७; जं० प०, अ० ३, छं० ५, पृ० १८२; जं० वही, अं० वही, छं० ११, पृ० १८६ [6] वही, जं० प्र०, अ० च०, छं० १२, पृ० २६ [7] वही, छं० १०, पृ० ६६ [8] वही, छं० १२, पृ० १६२ [9] वही, छ० २६, पृ० १६२

"एक ओर तै लूट मचाई, करत किसान खेत ज्यौ लाई।"[१]

कवि के द्वारा प्रयुक्त उपमा के कुछ अन्य उत्तम उपमान ये हैं :—

"तिनके मद्धि सिंह मुजान, नवग्रह जूह जैसे भान।"[२]

× × ×

"जग अत कौ अँधियार सौ, रितु सीत कौ नीहार सौ।"[३]

× × ×

"उतते राउ मलार जैपुर ते कूँचहि कियौ।
जैसे सलभ अपार उठे प्रजा संहार कौ॥"[४]

रूपक—सूदन ने रूपक अलकार के अत्यत सुदर एवं सजीव चित्र उपस्थित किये हैं। युद्ध का वर्णन करते हुए तीर्थराज का मनोमुग्धकारी रूपक दर्शनीय है :—

"अनी दोऊ बनी घनी लोह कोह सनी धनी
धर्मनु की मनी बान बीतत निपग में।
हाथी हटि जात साथी संग न थिरात श्रौन
भारती में न्हात गंग कीरति तरंग मे।
भानु की सुता सी कवि सूदन निकारी तेग
बाहत सराहत कराहत न अंग मे।
वीर रस रंग में यौं आनन्द उमग मे सो
पगु पगु प्राग होत जोधन कों जंग मे॥"[५]

युद्ध-भूमि का वर्णन करते हुए काल की वाटिका का कितना मनोरम उत्प्रेक्षा गर्भित रूपक उसने चित्रित किया है :—

"गेदा से गुलफू गुलमेहंदी से अंतभार
कुणय कलित तास खोपरी सुभाल की।
नासा गुलवासा मुख सूरजमुखी से भुज
कलगी बधूक ओठ जीव दुति लाल की।
कोकनद कर ज्यौ करन गुल कोकन से
इंदीवर नैन बाल जाल अलि-माल की।
पानी किरवानी सौं हर्यानी कर सूरज कै।
पर-भूमि फूली फुलवारी मानौं काल की॥"[६]

जिस प्रकार तुलसीदास ने कवितावली मे हनुमान को 'होता' मानकर रूपक लिखा है उसी प्रकार सूदन ने सूरजमल को होता मानकर यह छंद रचा है :—

"धर्म-सुत-धाम जान जमुना निकट मान
सर्व मेदजज्ञ कौ बनायौ बूज्यौंत पूर है।

---

[१] सुजान-चरित्र, छं० ३, पृ० १६३ [२] वही, छं० ८, पृ० १८५ [३] वही, छं० ११, पृ० १८६ [४] वही, छं० ४७, पृ० २४७ [५] वही छ० ३, पृ० २१ [६] वही, छं० ११, पृ० ६७-७

पत्र फल फूल सब औषध समूल रस
पट अनतूल धात धान धन मूर है ।
अंडज जरायुज और स्वेदज उद्भिज हब्बि ।
करयौ पूरनाहुति चकत्ता कुल मूर है ॥
औज की अगिन इंद्रपुर सों अगिनकुंड ।
होता श्री सुजान जजमान मनसूर है ॥"[1]

इसी प्रकार युद्ध क्षेत्र सरोवर के समान,[2] सेना मेघ और नदी सदृश्य,[3] ससैन्य सूरजभान विराट-पुरुष के तुल्य,[4] दुर्ग-विजय मे वसंत आदि शृंगारिक सामग्री का रूपक,[5] युद्ध मे काली-पूजा का रूपक,[6] कृष्ण द्वारा महाभारत-सागर से पाडवों की रक्षा के रूपक मे कृष्ण-स्तुति[7] सूरजभान को कृष्णावतार मानकर गोवर्द्धन उठाने की कथा के रूपक को घटित करना,[8] बन मे नगर बसाने का रूपक[9] आदि मे रूपक अलकारों के प्रयोग से सजीवता का समावेश हो गया है ।

उत्प्रेक्षा—अर्थालकारों मे से उत्प्रेक्षा का प्रयोग भी इस कवि को अधिक इष्ट रहा है। इसके सफल प्रयोग को सिद्ध करने के लिए दो उदाहरण पर्याप्त होगे :—

"कहूँ सेल सन्नाह कौ फोरि बैठे । मनो भानुजा मे फनी जात पैठे ॥"[10]

× × ×

"नूपुर वलय वलयानु रसनानु धुनि । मानहुँ प्रभात पंछी बानी मँडरानी है ॥"[11]

उपर्युक्त अलकारो के अतिरिक्त, अतिशयोक्ति,[12] लोकोक्ति,[13] संदेह,[14] आदि के प्रयोग भी सुजान-चरित्र मे मिलते हैं ।

ऊपर जो कुछ भी कहा गया है उससे स्पष्ट हो जाता है कि सूदन ने अलकार-प्रयोग मे पूर्ण सफलता पाई है । यद्यपि उनके द्वारा प्रयुक्त अलकार इने-गिने ही हैं, पर उनका चित्रण प्राय: निर्दोष हुआ है। ये अलकार उनकी कविता मे स्वाभाविक ढंग से प्रयुक्त हुए हैं। वे उनकी कविता के भूषण हैं, दूषण नही ।

गुलाब कवि

गुलाब कवि विरचित "करहिया कौ रायसौ" मे सुदर अलकार-योजना की आशा करना आकाश-कुसुम-चयन करने के सदृश्य है । यदि यह कहा जाये कि इस कवि को अलकार-शास्त्र का लेशमात्र भी ज्ञान नहीं था, तो इसमे अत्युक्ति न होगी ।

---

[1] सुजान-चरित्र, छं० ५१, पृ० १८० [2] वही, छं० ६, पृ० ३६ [3] वही, छं० १०, पृ० ४६ [4] छं० २, पृ० ६२ [5] वही, छं० ७, पृ० ११४, [6] वही, छं० १२, वही, पृ० १८७ [7] वही, छं० १, पृ० २२४ [8] वही, छं० ५७, पृ० २३२ [9] वही, छ० ४०, पृ० २४६ [10] वही, छं० १४, पृ० ५२ [11] वही, छं० २१, पृ० १६८ [12] वही, छं०२८, पृ० २२१ [13] वही, छं० ४२, पृ० ७६; छ० ३६, पृ० १३१; छं० २०, पृ० १६०, छ० २६, पृ० १६२ [14] वही, छं० १६, पृ० २४०

गुलाब ने अनुप्रास,[1] उपमा,[2] उत्प्रेक्षा,[3] लोकोक्ति[4] और सदेह[5] अलंकारों का प्रयोग किया है। उनके उदाहरण साधारण श्रेणी के हैं। इसमे उन्होने परपरा का अनुसरण मात्र किया है।

पद्माकर

पद्माकर रीतिकार और कवि थे। अलकार प्रयोग की दृष्टि से आलोच्य-ग्रथों मे हमे उनके कवि-रूप के ही दर्शन होते हैं, अलकार-लक्षण-निर्माता के रूप मे नही। हिम्मतबहादुर-विरुदावली तथा जगद्विनोद (केवल वीर-काव्य सबंधी छद) मे पद्माकर ने सुदर अलकार-योजना की है। इनके विशिष्ट प्रिय अलङ्कार अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि हैं।

अनुप्रास—अनुप्रास इनका अत्यधिक प्रिय अलकार है। हिम्मतबहादुर-विरुदावली के प्राय: प्रत्येक छद मे अनुप्रास प्रयुक्त हुआ है। अन्य अलकारो का विवेचन करते समय उनके उदाहरणों मे अनुप्रास की भरमार मिलेगी। इस पुस्तक मे हाथी और घोडो के वर्णन[6] तथा राजपूत-जातियों[7] और तलवारों[8] की नामावली गिनाते समय पद्माकर ने अनुप्रास की झडी लगा दी है। कहने की आवश्यकता नही है कि ऐसे स्थानो पर, विशेषकर तलवारो की सूची के प्रसग मे, अनुप्रास के अधिक और अनावश्यक प्रयोग के कारण कवित्व-शक्ति को भारी धक्का लगा है। यदि पद्माकर को इनकी अनुप्रास-प्रियता के कारण, अनुप्रास-सम्राट् की उपाधि से विभूषित किया जाये, तो अत्युक्ति न होगी।

उपमा—अनुप्रास के पश्चात् उपमा पद्माकर का अधिक प्रिय अलंकार है। घोडो के वर्णन के प्रसग मे अतिशयोक्ति मिश्रित उपमा के निम्न उदाहरण मे उपमान विचारणीय हैं :—

"बाग लेत अति लेत फलंगनि, जिमि हनुमत किय समुद उलंघनि।
जिन पर चढ़त सिधु ढिग लग्गहि, मंडल फिरि-फिरि उठत उमग्गहि।"[9]

अनुप्रास गर्भित उपमालकार के निम्नलिखित उदाहरण मे वर्णन का सजीव चित्र उपस्थित हो गया है :—

"तहँ ढुक्का ढुक्की मुक्का मुक्की ढुक्का ढुक्की होन लगी।
रन इक्का इक्की झिक्का झिक्की फिक्का फिक्की जोर लगी॥
काटत चिलता है इमि असि वाहै तिनहि सराहै वीर बडे।
टूटैं कटि झिलमैं रिपु रन बिलमै सोचत दिल मे खड़े-खड़े॥"[10]

रूपक—पद्माकर ने सेना और युद्ध का वर्णन करने के लिए रूपक अलङ्कार की विशेष सहायता ली है। इन स्थलों पर उन्होंने उपमान के लिए वर्षा के परपरागत प्रचलित उपकरणों को ही अपनाया है। यहा पर केवल एक उदाहरण पर्याप्त होगा :—

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० १०, १९८६ वि०, छं० २-५, पृ० २७७, छं० ८, पृ० २७८, छ० २२, पृ० २८० [2] वही, छं० ३१, पृ० २८१; छं० ५२, पृ० २८२ [3] वही, छं० १६, पृ० २७९, छं० ४९, पृ० २८७, [4] वही, छं० २८, पृ० २८१, छं० ५१, पृ० २८७, [5] वही, छ० ७, पृ० २७८ [6] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० ४७-५५, पृ० ८-९, [7] वही, छं० २७-३७, पृ० ५-६ [8] वही, छ० १९२-२०१, पृ० ३९-४२, [9] वही; छं० ५५, पृ० ९, [10] वही, छं० १८१, पृ० ३९

"तहँ रन उतंग मतंग माते उमडि बद्दल से रहे।
चहुँ ओर धुरवा से घुमडि घर धूरि धारन को थहै॥
झमझम झला से बान वर चपला चमक वरछीन की।
भननात गोलिन की भनक जनु धनि धुकार झिलीन की॥"[1]

उक्त छद मे उपमा और अनुप्रास के एक साथ प्रयोग हो जाने से उसमे अधिक प्रभावोत्पादकता का समावेश हो गया है। रूपक के अन्य उदाहरणो के लिए ये छद देखे जा सकते हैं।[2]

उत्प्रेक्षा—उत्प्रेक्षा अलंकार भी इस कवि को अधिक प्रिय है। घोडों की चचलता का वर्णन करते हुए एक अच्छी अतिशयोक्तिपूर्ण उत्प्रेक्षा इनके द्वारा प्रयुक्त हुई है :—

"उडत अमित गति करि करि ताछन, जीतन जनु कुलटान कटाछन।
थिरकत थिरकि चलत अंग अगनि, जीतत जुमकि पौन मग संगनि॥"[3]

युद्ध का वर्णन करते हुए अनुप्रासयुक्त उत्प्रेक्षा का अनुपम उदाहरण यह है :

"अध अधर चब्बत नही दब्बत फलि फब्बत समर मे।
कौंचन उमैठत हरपि पैठत लोह की भर भ्रमर मे॥
तहँ घालि बरछी घोर बहु अरिगन गिराये गजन ते।
मानौ गिरे कंचन कलस अर्जुन अजिर के छजन ते॥"[4]

अक्रमातिशयोक्ति— पद्माकर ने अतिशयोक्ति अलंकार के प्रयोग मे भी पूर्ण सफलता दिखलाई है। अक्रमातिशयोक्ति का यह कितना सुदर उदाहरण है :—

"चली चदरे त्यों मचे है धडाके, छडाके फडाके खडाके सड़ाके।
छुटैं सेर बच्चे भजे वीर कच्चे, तजैं बाल बच्चे फिरैं खात दच्चे॥"[5]

पद्माकर द्वारा प्रयुक्त अन्य अलंकार यमक,[6] संदेह,[7] अनन्वय,[8] व्यतिक्रम,[9] ललितोपमा,[10] लोकोक्ति,[11] तथा उल्लेख[12] आदि है। पर ये अलंकार बहुत कम मात्रा मे प्रयुक्त हुए हैं। उनकी रुचि प्रायः उन्हीं अलंकारो के प्रयोग करने मे अधिक रमी है जिनका ऊपर सविस्तर विवेचन किया गया है।

इस प्रकार पद्माकर का अलंकार-क्षेत्र विस्तीर्ण होने पर भी कुछ विशिष्ट अलंकारों तक ही सीमित है। कहने की आवश्यकता नही है कि कुछ स्थलों को छोड कर इन्हे अलंकार-योजना मे पर्याप्त सफलता मिली है। पर यह स्वीकार करना पडेगा कि पद्माकर रीतिकाल की बँधी-बँधाई सीमित परपरा से अपने को मुक्त करने मे असफल रहे हैं।

---

[1] हिम्मतबहादुर विरुदावली छं० ८०, पृ० १५ [2] वही, छं० ७९, ८१, पृ० वही; छं०४८-९, पृ० ८ छं० १८२-३, पृ० ३७ [3] वही, छं० ५३, पृ० ९, [4] वही, १४७, पृ० २९, [5] वही, छं० ७०, पृ० १३, (अन्य उदाहरणों के लिए दे० छं० ८७, पृ० १७, छं० ९१, पृ० १७ ८) [6] वही, छं० १७५-६, पृ० ३५-६, [7] वही, छं० ६८, पृ० १२-३, छं० ७३, पृ० १३ [8] वही, छ० १३३, पृ० २६-७, [9] वही, छं० ११५, पृ० २२-३ [10] वही, छं० वही, पृ० वही, [11] वही, छं० ११०, पृ० २१-२, छ० ११३, पृ० २२ [12] वही, छ० ९-१४, पृ० ३

जोधराज

अलकार-योजना की दृष्टि से इस कवि का अत्यत साधारण स्थान है। अलंकार-प्रयोग मे उन्होंने परपरा का अनुकरण मात्र किया है। शब्दालंकारों और अर्थालंकारों मे सब से अधिक प्रचलित अनुप्रास, यमक, उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक तथा लोकोक्ति आदि अलंकारों का ही इन्होने विशेष प्रयोग किया है।

अनुप्रास—यह इनका अधिक प्रिय अलंकार है, एक उदाहरण देखिए :—

"कल कूँजत कोकिल ऋतु बसंत।
सुनि मोहत जहँ तहँ सकल जंत॥
नर नारि भए कामंध अंध।
तजि लाज काज परि काम फंद॥"[1]

यमक—अन्य शब्दालंकार यमक के भी यत्र-तत्र दर्शन हो जाते हे, यथा :—

"बहु बारन बारन बीर कढ़ै।
गज बाजि सु सिंदन जान चढै॥"[2]

उपमा—अर्थालंकारों मे से उपमा के प्रयोग मे इस कवि ने कही-कही पर सुदर उपमानो का सृजन किया है, यथा :—

"तिहीं काल कविराज उप्पम विचारी।
बहैं स्याम पब्बै सु गेरू पनारी॥"[3]

रूपक—रूपक अलंकार का जोधराज ने अपेक्षाकृत कम प्रयोग किया है। उसके प्रयोग में वही परपरागत वर्षा, मेघ तथा, बिजली आदि से उपमान लिए गए हैं। हाथियो के वर्णन मे से एक उदाहरण देकर इस कथन की पुष्टि की जा रही है :—

"बगपंति सुदंति अनन्त रजे।
धुरवा किर सुंड छुटे भरजे॥"[4]

उत्प्रेक्षा—उत्प्रेक्षा कवि का सब से प्रिय अलंकार है। इसका प्रयोग करने मे उसे पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई हैं। नीचे कुछ उदाहरण इस कथन की पुष्टि मे दिए जा रहे है :—

"चढ़े चतुरंग कियो तन कोप।
मनो अरुनोदय भान सु ओप॥"[5]

× × ×

"बहैं सील अंगं परैं पार होई।
मनौ रुंड मैं नाग लपटंत सोई॥
कटारी लगैं अंग दीसंत पारं।
मनौ नारि मुग्धा कढ्यौ पानि वारं॥
छुरी बार सूरं करैं जोर ऐसैं।
मनो सर्पनी पुच्छ दीखंत जैसै॥

---

[1] हम्मीररासो, छं० १०३, पृ० २१ [2] वही, छं० ४४३, पृ० ६० [3] वही, छं० ८६६ पृ० १७३ [4] वही, छं० ८५८, पृ० १६६ [5] वही, छं०।५१५, पृ० १०४

लगै जोर सों यों विषाणं जवानं ।
हुवै अंग पारं जुटे जोर वानं ॥"[1]

जोधराज ने गम्योत्प्रेक्षा,[2] उक्तविषयावस्तूत्प्रेक्षा,[3] अतिशयोक्ति,[4] लोकोक्ति तथा[5] उदाहरण[6] आदि अलंकारों का भी प्रयोग किया है ।

अन्त मे यह मानना पडता है कि इस कवि ने परपरागत अलंकार-प्रयोग-पद्धति का अनुकरण किया है। कोई नवीन उपमान अथवा अलकार सबधी अन्य विशेषता उसने नहीं अपनाई है । पर अपने सीमित क्षेत्र मे उसने अलकारो की अधिक सख्या अपनाई है ।

---

[1] हम्मीररासो, छं० ६०३-४, पृ० १७४-५ [2] वही, छं० १३१, पृ० २७ [3] वही, छ० १३२, पृ० वही [4] वही, छं० ३४०-६, पृ० ६६-७० [5] वही, छं० २१२-३, पृ० ४३-४ [6] वही, छं० १६३, पृ० ३६-४०

अध्याय—६

छंद[1]

अ-सामान्य-स्थिति—नीचे के पृष्ठों मे आलोच्यकालीन कवियों द्वारा प्रयुक्त छदों की सामान्य-परिस्थिति पर विचार किया जा रहा है। उक्त कवियों ने विविध छदो का प्रयोग करके रुचि-वैचित्र्य का परिचय दिया है :—

केशव ने १५ प्रकार के छदों का प्रयोग किया है। चोपही, दोहा, छप्पय, कवित्त, सवैया (मालती), उनके अधिक प्रिय छद थे। शेष प्रकार के छद उनके द्वारा अपेक्षाकृत कम प्रयुक्य हुए हैं। मात्रिक छद उन्हे अधिक रुचिकर थे। केशव ने छदों मे नवीनता लाने और परिवर्त्तन करने का भी प्रयत्न किया है।

जटमल ने सात प्रकार के छंदों का प्रयोग किया है। इसने दोहा और छप्पय को विशेष रूप से अपनाया है। जटमल ने केवल एक ही प्रकार के वर्णवृत्त, मोतीदाम का प्रयोग किया है। उनके द्वारा प्रयुक्त शेष छद मात्रिक है।

मतिराम के ललितललाम मे दोहा, कवित्त और मालती सवैया का विशेष और छप्पय का सामान्य रूप से प्रयोग हुआ है।

भूषण ने १२ प्रकार के छदों का प्रयोग किया है। कवित्त इनका अत्यत प्रिय छद है। इन्होंने अलकारों की परिभाषा तथा अन्य विषयों के लिए दोहे को अपनाया है। इस कवि ने सवैया के चार भेदों का प्रयोग किया है जिनमे से मालती का प्रयोग सब से अधिक मिलता है।

मान कवि द्वारा प्रयुक्त २७ प्रकार के छंद मिलते हैं। इनमे से कवित्त (छप्पय), उद्धोर, कामुकी बाँताण, गीतामालती, गुणबेलि, दोहा, दडमाली, दडक, निसानी, पद्धरी, बिज्जूमाला, बृद्धिनाराच, लघुनाराच, मोतीदाम, रसाबल, विद्याधरी, विराज, हनूफाल, हंसचार तथा त्रोटक का अधिक प्रयोग मिलता है। मान ने चद बरदायी के समान छप्पय के लिए कवित्त नाम लिखा है। इन्होंने राजस्थानी छंदों को अधिक अपनाया है। छंदों मे परिवर्त्तन करने और उनके रूप बदलने की प्रवृत्ति इनमे पर्याप्त मात्रा मे वर्त्तमान है।

जायसी के पद्मावत और तुलसी के रामचरितमानस के समान गोरेलाल ने छत्रप्रकाश मे केवल दोहे और चौपाई का प्रयोग किया है। इस प्रकार इन्होने यह सिद्ध कर दिया है, कि उक्त छद, अवधी के ही समान ब्रजभाषा मे भी सफलता एवं निर्दोषतापूर्वक प्रयुक्त किए जा सकते हैं।

श्रीधर ने अपनी रचना मे १३ प्रकार के छदों को स्थान दिया है। इस ग्रथ मे कवित्त, गीता (गीतिका), छप्पय, दोहा, पादाकुल, भुजगप्रयात, मधुभार, हरिगीतिका, हरिगीता, हुलास, अधिक प्रयुक्य हुए हैं। जगनामा के इस कवि को मात्रिक छद अत्यत प्रिय रहे हैं।

---

[1]**यह प्रकरण दो भागों में विभाजित है। प्रथम भाग (अ) के अंतर्गत आलोच्य काल में छंदों की सामान्य स्थिति तथा द्वितीय खंड (ब) में इस युग में प्रयुक्त छंद सूची एवं तद् विषयक विवरण दिया गया है।**

सदानन्द ने १५ प्रकार के छंदों को अपनाया है जिनमें दोहा, छप्पय, त्रोटक, भुजगप्रयात, गीतिका, मत्तगयद, सवैया, चंद्रकला, त्रिभंगी, ससिवदना, सखनारी तथा सर्वकल्यान की संख्या अधिक है। इन्होने मात्रिक तथा वर्णिक दोनों प्रकार के छंदो का प्रयोग किया है। अधिकाश स्थलों पर इनके छंद दोषपूर्ण हैं।

छंदों की विविधता की दृष्टि से इस धारा के कवियों मे सूदन का स्थान सर्वोपरि है। इन्होने १०३ प्रकार के छंदों का प्रयोग किया है। दोहा, सोरठा, हरगीत (हरिगीत), कवित्त, दाव (दौवे), दुपई, पद्धरी, पवगा, भुजगी, संजुता, त्रिभगी, तोमर, अरिल्ल, कडखा, छप्पय, कुडलिया तथा मुक्तादाम आदि छंद को सूदन ने अपने काव्य मे विशेष स्थान दिना है। इन्होंने मात्रिक सम, मात्रिक अर्द्धसम, मात्रिक विषम, वर्णिक सम, वर्ण मुक्तक आदि सभी प्रकार के छंदो को अपनाया है। सूदन ने आठ मात्रा के छंदो मे लेकर चालीस मात्रा तक के मात्रिक छंदो और दो वर्णों से लेकर बत्तीस वर्णों तक के वर्णवृत्तो का प्रयोग किया है। छदो के रूप-परिवर्त्तन करने और उनके नामो को बदलने की प्रवृत्ति द्वारा इन्होने अपने पाडित्य एवं आचार्यत्व का परिचय दिया है। इस दृष्टि से केशव के समकक्ष ही नही वरन् कतिपय बातो मे ये उनसे बढकर ठहरते हैं।

गुलाब कवि ने तेरह प्रकार के छंदो का प्रयोग किया है, जिनमे से दोहा, सवैया (विशेषकर मालती), कवित्त, सोरठा, छप्पय, पद्धरी और चौपाई को विशेष प्रकार से अपनाया गया है। इनके छंद लक्षणों पर प्रायः खरे नही उतरते है।

पद्माकर ने हिम्मतबहादुर-विरुदावली मे छः प्रकार के छंदों का प्रयोग किया है। उनका सर्वप्रिय छंद हरिगीतिका है। तदुपरान्त हाकल, त्रिभंगी, डिल्ला, भुजगप्रयात तथा छप्पय हैं। जगद्विनोद मे कवित्त, छप्पय, तथा दोहा का अधिक प्रयोग मिलता है। जिस प्रकार सूदन ने प्रत्येक जंग के हर एक अंक के अन्त मे एक हरिगीतिका की आवृत्ति की है, वैसे ही पद्माकर ने भी इस छंद को प्रयुक्त किया है।

जोधराज ने हम्मीररासो मे सत्रह प्रकार के छदो का स्थान दिया है। प्रयोग की दृष्टि से पद्धरी, भुजंगप्रयात, छप्पय, त्रोटक, चौपाई, हनूफाल, रसावल, मोतीदाम, लघुनाराच तथा नाराच विशेष उल्लेखनीय है। इस ग्रंथ मे उन्होंने वचनिका को भी स्थान दिया है। मात्रिक छंदों के प्रति जोधराज ने अधिक अभिरुचि प्रदर्शित की है।

चौपाई, पद्धरी, हीर (हीरा, हीरक), गीतिका, गीता, हरिगीतिका, लीलावती, त्रिभगी, रसावल तथा हनूफाल आदि मात्रिक छद, दोहा (दोहरा) तथा सोरठा अर्द्धमात्रिक छंद, अमृतध्वनि, कुडलिया तथा छप्पय, विषम छदो का तीन अथवा अधिक कवियों ने प्रयोग किया है। तोमर, निसानी पावकुलक (पादाकुल) तथा विअक्खरी आदि मात्रिक छदों का कम से कम दो कवियों ने प्रयोग किया है।

अर्द्धनाराच (लघुनाराच), तोटक (त्रोटक), भुजगप्रयात, भुजंगी, मोतीदाम (मोतियदाम), नाराच (बृद्धिनाराच), सवैया (विशेष कर मालती, दुर्मिल) वर्ण-सम, कवित्त मुक्तक का कम से कम तीन कवियों द्वारा तथा सखनारी (सखजारी), नगस्वरूपिनी का कम से कम दो कवियों ने प्रयोग किया है।

यह कहना कि विशेष विषय के लिए कुछ विशिष्ट छंदों का ही प्रयोग हुआ है, कठिन

है, क्योंकि प्रायः सभी छंदों के प्रयोग का क्षेत्र विस्तीर्ण रहा है। तो भी कुछ विषयों एवं रसों के लिए कुछ छंदो का विशेष प्रकार से प्रयोग हुआ है। उनका यहाँ पर उल्लेख किया जा रहा है।

स्तुति, वंदना आदि के लिए अधिकतर दोहा, सोरठा, छप्पय, अर्द्धनाराच, नाराच तथा कवित्त का प्रयोग किया गया है।

ऋतु-वर्णन, प्रकृति-चित्रण आदि के लिए पद्धरी, दोहा, छप्पय, अर्द्धनाराच, तोटक, भुजंग-प्रयात, मोतीदाम, वचनिका; नगर, स्थल आदि की शोभा के चित्रण के लिए मोतीदाम, स्वागता, भुजगी, सवैया, दंडमाली, आदि अधिक प्रयुक्त हुए है।

नखशिख तथा रूप-वर्णन करने के लिए दौवै, दोहा, चौपाई, छप्पय, अर्द्धनाराच, गुणा-बेलि, अधिक प्रयुक्त हुए हैं। शृंगार, आभूषण आदि के लिए पद्धरी, दोहा, छप्पय तथा कवित्त अधिक प्रचलित रहे हैं।

हाथियों तथा घोडों का वर्णन अधिकतर डिल्ला, त्रिभंगी, तथा कवित्त मे हुआ है।

युद्ध-सामग्री, युद्ध तथा वीररस के लिए तोमर, रोला, सोरठा, पद्धरी, निसानी, त्रिभंगी, अमृतध्वनि, कुडलिया, संजुता, तोटक, भुजगप्रयात, भुजंगी, मोतीदाम, लछमीधर, सारग, कंद, चामर, चंचला, नील, नाराच, गगोदक, नूफा, गीतामालती, हीरक, गगनंगन, छप्पय, कवित्त तथा हनूफाल आदि अधिकतर प्रयुक्त हुए हैं और इन छंदो मे सुंदर चित्रण किए गए है।

रौद्र रस तथा आतंक का त्रिभंगी तथा छप्पय मे अच्छा परिपाक हुआ है। बीभत्स का वर्णन करने के लिए त्रिभंगी, छप्पय, तोटक, भुजंगप्रयात, भुजंगी और कवित्त अधिक अपनाए गए हैं।

चौपही, चौपाई, सोरठा, दोहा, छप्पय, कवित्त, सवैया प्रायः सभी विषयों के लिए प्रयुक्त हुए हैं।

इनके अतिरिक्त जिन छंदों का उल्लेख ऊपर नहीं किया गया है वे भी प्रयोग की दृष्टि से अपनी विशेषता रखते है, पर वे विशेष महत्त्वपूर्ण नही है।

इस काल मे एक ही छंद के विविध नाम प्रचलित थे। इससे स्पष्ट है कि उस समय एक छंद को विभिन्न प्रकार से लिखने तथा मानने की प्रवृत्ति प्रचलित थी। कुछ ऐसे छंदों के भी प्रयोग मिलते है जिनके शास्त्र-सम्मत सभी नामों का प्रयोग हुआ है।

कुछ प्रयोग ऐसे मिलते है जिनसे सिद्ध होता है कि छंदों के नाम परिवर्त्तित करने की प्रवृत्ति इन कवियों मे वर्त्तमान थी, जैसे चौपाई के नाम जयकरी के लिए करी, मंजुमालिनी के लिए मालिनी रूपघनाक्षरी के लिए रूपघना आदि नामों का प्रयोग हुआ है। अर्थ-साम्य का आश्रय लेकर नवीन नाम देने की प्रवृत्ति भी सूदन के कुछ छंदों मे वर्त्तमान है, जैसे विद्युन्माला के लिए चपला, दिगपाल के लिए दुरद, ईश के लिए हरि तथा हरी। इसके अतिरिक्त सूदन ने मनहंस के लिए कलहंस, पदम के लिए मानक्रीडा, हंस के लिए हद, बाला के लिए मोहठा का प्रयोग किया है। इन नवीन नामों से स्पष्ट है कि छंदों संबंधी नवीन नामावलि के सृजन मे इन कवियों का अधिक हाथ था।

ये कवि छंदो के प्रचलित लक्षणों मे भी परिवर्त्तन कर रहे थे। इनमे से कुछ तो दोषों के अन्तर्गत माने जा सकते हैं तथा कुछ अवश्य ही छदों के रूपों मे नवीनता लाने के लिए और छंद-शास्त्र को नवीन रूप देने के उद्देश्य से किए गए थे।

इस युग मे दो छंदों के मेल से बने हुए छंदों का भी प्रयोग होता था जैसे अमृतध्वनि,

कुंडलिया, छप्पय, दातार, अभिराम और हुलास। हुलास (पादाकुलक+त्रिभंगी) और (भुजग-प्रयात+दोहा) दो प्रकार से बनाया जाता था। सूदन ने एक छंद मे कवित्त तथा घनाक्षरी दोनों का रूपक बाँधा है।

इन कवियों ने कुछ प्राकृत छदों खंधा, घत्ता, घनानन्द, गाहा, करहंची, राजस्थानी, गुणा-बेलि तथा कामुकी बाँताँए आदि का प्रयोग किया है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि छंदों के प्रयोग की दृष्टि से इन कवियों का क्षेत्र अधिक व्यापक रहा है। राजस्थानी, प्राकृत, संस्कृत आदि के छंदों को इन्होने बडी उदारता से अपनाया है। प्राचीन समय से बहती हुई चारण-धारा के छदों, रीतिकाल के संकुचित क्षेत्र मे प्रयुक्य छंदों तथा प्रेममार्गी एवं भक्ति-धारा के छंदों को भी इन कवियों ने अपनाया है। यहाँ तक कि वार्त्ता एव वचनिका को भी स्थान दिया गया है। नवीन नामो का निर्माण एवं लक्षणों मे परिवर्त्तन करके इन्होंने छद-शास्त्र को अग्रसर करने मे हाथ बटाया है। इस धारा के कवियों मे सूदन का सर्वोत्कृष्ट स्थान है। सभी कवियों ने इस क्षेत्र मे उदारता, दूरदर्शिता एव समन्वय भावना का परिचय दिया है।

(ब) छन्द-सूची

आलोच्य काव्यो मे प्रयुक्त छदों पर विचार करने की सुगमता की दृष्टि से उनका विभाजन निम्नलिखित वर्गों मे किया गया है :—

(१) मात्रिक छद (अ) सम, (आ) अर्द्धसम, (इ) विषम (षट्पदी), (ई) विषम (चतुष्पदी), (उ) मात्रिक सम दडक।

(२) वर्णिक छद (ऊ) सम (ओ) मुक्तक।

(३) अनिश्चित छद (औ) मात्रिक (अं) वर्णिक।

नीचे इसी क्रम से छदों पर विचार किया जा रहा है। प्रत्येक चरण मे सबसे कम मात्रा अथवा वर्ण की संख्या के अनुसार क्रम रखते हुए छद के नाम के साथ उसके प्रयोग-कर्त्ता कवि का नाम तथा विशेष विवरण दे दिया गया है।

१. (अ) मात्रिक सम छन्द (चतुष्पदी)

क्र० स०	छद	कवि	विवरण
१	मधुभार	सूदन—	(८ मात्रा, अत मे जगरण)।[1] सूदन की कृति मे इस छंद के चारों चरण एक ही पक्ति में लिख दिए गए हैं और उसमे विराम चिन्हों का अभाव है। इससे इसके रूप को जानने में पाठक को कठिनाई हो सकती है।
२	दीपक	सूदन—	(१० मात्रा, अत मे लघु)।[2] यह छंद सस्कृत छद दीप (१० मात्रा अत मे ।।।ऽ।)[3] से मिलता-जुलता है। सूदन ने अत में ऽ। रक्खा है, पर अंतिम दो अक्षरों से पूर्व के ।।। के नियम का पालन कतिपय स्थानों

[1] छंद-प्रभाकर, पृ० ४३ [2] प्राकृतपैंगल, श्लोक १८१-२, पृ० २११-२ [3] छंद-प्रभाकर, पृ० ४४

क्र०स०	छंद	कवि—	विवरण

पर नहीं किया है। उन्होंने इस छंद के प्राकृत रूप को अधिक अपनाया है। इस छंद में युद्ध का अच्छा वर्णन किया गया है।[1]

३. आभीर — सूदन—(११ मात्रा अन्त में जगण)।[2]

४. तोमर — सूदन—(१२ मात्रा, अन्त में ऽ।)।[3] इस छंद में सैनिकों की नामावली गिनाई गई है और युद्ध का सुंदर वर्णन एवं वीररस का उत्तम परिपाक हुआ है।

श्रीधर

५. उद्धोर — मान—(४ न ऽ। = १४ मात्रा। यह मात्रा गण-बद्ध छंद है)[4] इसमें राजसिंह के गुणों का वर्णन किया गया है।

६. हाकल — पद्माकर—(१४ मात्रा, अंत में ऽ। हाकल में तीन चौकल के पश्चात् एक गुरु होता है। जहाँ पर चारों पदों में तीन-तीन चौकल न पड़ें, वहाँ पर इस छंद का नाम मानव होता है)।[5] पद्माकर ने इस छंद का प्रयोग करने में लक्षणों का विशेष ध्यान नहीं रक्खा है।[6] कहीं-कहीं पर उनके छंदों में मात्राओं की संख्या कम है, यथा :—

"निज खिलवतिन मे हास है, भय रूप दुरजन पास।"[7]

उक्त उद्धरण में रेखांकित अंश में केवल १२ मात्रायें हैं और अन्त में गुरु के स्थान में लघु है। इसी प्रकार छंद ४३ के प्रत्येक चरण के अंत में पद्माकर ने लघु का प्रयोग किया है।[8]

इससे विदित होता है कि पद्माकर शास्त्रीय नियमों से स्वतंत्र होने की प्रवृत्ति रखते थे। उक्त स्थानों के अतिरिक्त पद्माकर ने मात्रादि का प्रायः सभी स्थलों पर ध्यान रक्खा है। यह छंद उन्हें अत्यंत प्रिय था। इस छंद में हिम्मतबहादुर की दान-वीरता, प्रशंसा, युद्ध-यात्रा, राजपूत जातियों की सूची आदि का वर्णन किया गया है।[9]

७ चौपाई, चौपाही, — केशव—(१५ मा० अंत में ऽ। अन्य नाम जयकरी)[10] केशव ने इस छंद के अंत में ऽ। तथा ।ऽ का प्रयोग किया है।[11] वर्णनात्मक कथा-प्रसंगों तथा अन्य विविध विषयों के लिए इस छंद का प्रयोग किया गया है।

८. — करी — सूदन—(१५ मा०, अंत में ऽ। अथवा ।ऽ)।[12] यह छंद चौपई के समान

---

[1] सुजानचरित्र, छं० १८, पृ० ११८-६ [2] छं० प्रभाकर, पृ० ४४ [3] वही, पृ० वही [4] रघुनाथ रूपक गीतांरो, परिशिष्ट, पृ० २८ [5] छंद-प्रभाकर, पृ० ४६ [6] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० १२, पृ० ३ [7] वही, छं० १३, पृ० वही। [8] वही, पृ० ७ [9] वही, पृ० २-७ [10] छं०-प्रभाकर, पृ० ४७ [11] वीरसिंहदेव चरित्र, छं० ४, पृ० १ [12] सुजानचरित्र, छं० ४, प्र० २२४ ५

क्र० सं० छंद कवि— विवरण

है। सभव है कि सूदन ने चौपाई के अन्य नाम जयकरी[1] का संक्षिप्त रूप 'करी' चौपाई के स्थान पर प्रयुक्त किया हो, तो आश्चर्य की बात नही है।

९. चौबोला सूदन—(१५ मा०, अत मे ।ऽ)[2]। कही-कहीं पर सूदन ने इसके नियम मे परिवर्त्तन करके १५, १४, १६, १७ मात्रा का प्रयोग किया है।[3] इन्होंने कतिपय स्थलों पर एक ही छद में वीर और शृ गार-रसों का सफल प्रयोग कर दिया है।[4]

१०. अरिल्ल सूदन—(१६ मा०, अत मे ॥ अथवा ।ऽऽ)[5]। भरतपुर से प्राप्त सुजान-चरित्र की प्रति में एक स्थल पर इस छद का नाम अडिल्ल दिया है।[6] युद्ध-वर्णन के अतिरिक्त लूट मे प्राप्त आभूषणों की सूची भी इस छद मे दी गई है।[7] सुजान-चरित्र मे प्रयुक्त इस छद का अत सभी स्थलो पर ॥ से हुआ है। इस छद मे कवि की प्रवृत्ति चौकल के नियम को त्याग कर अत मे पूरी मात्रा मानने की रही है।

११. खधा सूदन—(चतुर्मात्रा के आठ गण, पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध मे समान रूप)।[8] यह छंद सस्कृत स्कधम् का प्राकृत रूप है। भानु ने इसे अर्द्ध-सम (१२, २०, १२, २०) माना है।[9]

१२. चौपाई केशव—(१६ मा०, अत मे ऽ। वर्जित)।[10] केशव तथा सूदन ने इसके जटमल, गोरेलाल, सूदन, गुलाब, जोधराज प्रति चरण मे प्राय: १५ मात्रायें रखकर अन्त मे ऽ। का प्रयोग किया है, यथा :—

आसकरन कौ भौ फरमान। वीरसिह को घालहि मान।
ऽ।।।।ऽ ऽ।।ऽ। ऽ।ऽ।ऽऽ।।ऽ।
१५ मा० १५ मा०

(वीरसिहदेवचारत्र, छ० १५, पृ० १६)।

तथा

"हय गय सरोपाउ समसेर"
।, ।।।ऽऽ।।ऽ।
१५ मा०

(सुजान—चरित्र, छ० ६, पृ० १०६)। इसी प्रकार इन कवियों के अन्य उदाहरण भी देखे जा सकते हैं।[11] उक्त छद

---

[1] छंदप्रभाकर, पृ० ४७, [2] वही पृ० वही [3] सुजानचरित्र, छ० २२ पृ० १६, [4] वही, छं० ३४, पृ० १४६ [5] छदप्रभाकर, पृ० ४८, [6] सुजानचरित्र, छं० ३०, पृ० ७६ [7] वही, छं० ४१, पृ० १७४-५, [8] प्राकतपैंगल, श्लोक ७३-४, पृ० १२६-३१, प्राकतपिंगलसूत्राणि, पृ० ३४-५ [9] छंदप्रभाकर, पृ० ६८ [10] वही, पृ० ४६ [11] वीरसिहदेवचरित, छं० १६, १८ आदि, पृ० १६, सुजानचरित्र, छं० ६ (पंक्ति २,३,४,७ ६.१०.११ १२) पृ० १०६

क्र० सं० छंद कवि— विवरण

चौपई के नियमों पर खरे उतरते हैं। सम्भव है कि केशव और सूदन ने चौपाई के शास्त्रीय नियमों की शृंखलायें तोडने का प्रयत्न किया हो। यह भी हो सकता है कि इन्होंने अपने आचार्यत्व की प्रेरणा से प्रेरित होकर ऐसा प्रयोग किया हो।

चौपाई का सबसे अधिक प्रयोग गोरेलाल ने किया है। इन्होने इसके प्रयोग मे शास्त्रीय नियमो का पूर्णरूप से पालन किया है।

यह छंद सभी प्रकार के वर्णनो के लिए प्रयुक्त हुआ है। वर्णनात्मक प्रसगो मे इसका सफल प्रयोग हुआ है। जोधराज तथा गोरेलाल ने विविध रसों और कथा-प्रसगों मे इस छद को सफलतापूर्वक अपना कर सिद्ध कर दिया है कि इस छद का व्रजभाषा मे भी अधिकारपूर्वक निर्दोष प्रयोग हो सकता है।

१३. डिल्ला पद्माकर— (१६ मात्रा, अत मे भगण)।[1] पद्माकर ने इस छन्द मे हाथियों, अश्वों तथा अन्य विषयों का वर्णन किया है। इस छंद द्वारा उन्होंने वीर के साथ शृगार-रस का भी सुंदर पुट दिया है।[2]

१४. पद्धरिय, पद्धरी — मान, सदानंद, सूदन, गुलाब, जोधराज (१६ मात्रा, अत मे जगण)।[3] इन कवियों ने इस छद का बहुत प्रयोग किया है। साधारणतया यह वीररस के लिए प्रयुक्त हुआ है। पर मान कवि ने वीररस के अतिरिक्त दहेज मे प्राप्त सामग्री, तथा शृंगार के आभूषणों के वर्णन के लिए भी इसका प्रयोग किया है।[4] सूदन ने इस छद मे युद्ध-सामग्री, राजपूतों के वशों एव वीरों की नामावली गिनाने के अतिरिक्त युद्ध का निर्दोष वर्णन किया है।[5] युद्ध के सजीव चित्रण और वीररस के परिपाक के कतिपय सुंदर उदाहरण सुजान-चरित्र मे मिलते हैं।[6]

जोधराज ने इस छद द्वारा अपने आश्रयदाता का परिचय, सृष्टिरचना, ऋतुवर्णन, हम्मीर-जन्म-वर्णन, युद्ध-सामग्री, पूजा-पाठ, शृंगाररस, उपदेश आदि विषयों का सफल वर्णन किया है।[7]

ऐसी परिस्थिति मे यह कहना कि इस छद का प्रयोग केवल वीररस के प्रतिपादन मे ही किया गया है, भ्रामक होगा। वास्तव में इस

---

[1] छंदप्रभाकर, पृ० ४७ [2] हिम्मतबहादुरविरुदावली, छं० ५३ पृ० ६ [3] छंदप्रभाकर, पृ० ४८ [4] राजविलास, छं० ८५-१०६, पृ० ११८, छं० ६७-८४, पृ० १३०-२ [5] सुजानचरित्र, छं० ६, पृ० २४-५, छं० १४, पृ० ३०-१, छ० २, पृ० १२०-२ [6] वही, छं० ७, पृ० ६४-६, छं० २१, पृ० २१७-८ [7] हम्मीररासो, छं० ४-३३, पृ० २-७, छं० १००-६, पृ० २१-२, छं० १६६-७१, पृ० ३३-४; छं० १७५-८७, पृ० ३५-७; छ०२४०-६२, पृ० ६६-७३, छं० ६०१-२, पृ० १२२, छं०६३२, पृ०१२६; छं० ६५४-७, पृ० १८६

क्र० स०	छंद	कवि—	विवरण
			छंद का क्षेत्र अधिक विस्तृत है। केवल इतना ही स्वीकार किया जा सकता है कि इस छंद मे वीररस का सफलतापूर्वक निर्वाह किया जा सकता है।
१५.	पावकुलक पावककुलक पादकुल	श्रीधर—(१६ मात्रा, ४ चौकल)[1] सूदन—पूर्ण रूप से पालन नही किया है।[2]	इन कवियों ने पादाकुलक छंद को विविध नामों से पुकारा है। कही-कही पर इन्होंने इसके लक्षणों का सुजान-चरित्र मे दो छंदों के नाम पादाकुलक दिए है, पर वे वास्तव मे पवगा के नियमों पर खरे उतरते हैं।[3] भरतपुर की प्रति मे इनके नाम पवंगा ही दिए हैं।[4]
१६.	चन्द्रायन, चान्द्रायण	मान—(११, १०=२१।	इस छंद की ११ मात्रा जगणान्त और १० मात्रा रगणान्त होती है।[5] मान ने कतिपय स्थलों पर प्रत्येक चरण की अंतिम मात्रा को रगणान्त नही रक्खा है और उनका अंत ।। से किया है।[6]
१७	पवगा, प्लवगा	सूदन—२१ (८, १३, आदि मे ऽ अंत मे ज ग)।	कोई-कोई ११, १० पर भी यति मानते है।[7] सूदन ने इस छंद मे ११, १० पर यति मानकर आदि मे ऽ तथा अंत मे ज ग को विकल्प से माना है। इस संबंध मे उन्हे जो सुविधाजनक प्रतीत हुआ है, उन्होंने उसी प्रयोग को अपनाया है।[8] सुजान चरित्र मे, जैसा कि पावकुलक के प्रकरण मे बताया जा चुका है, दो छंदों के नाम पावकुलक मिलते हैं, पर वास्तव मे वे पवंगा छंद ही प्रतीत होते हैं।[9]
१८.	निसानी, नीसानी	मान—२३ (१३-११ अंत मे ग ग)।[10] सूदन—ग भी मिलता है।	सूदन के इस छंद के अंत मे ल सुजान-चरित्र के रचयिता ने इस छंद मे मुसलमान पात्रों से उर्दू मिश्रित पंजाबी तथा राजस्थानी भाषा का प्रयोग कराया है। इस छंद द्वारा युद्ध का सुन्दर वर्णन भी किया गया है।[11]
१९	हीर, हीरा, हीरक	श्रीधर—२३ मात्रायें (६, ६, ११ आदि मे ग अन्त मे रगण)।[12] केशव—और सूदन ने इस छंद के आरंभ मे ग रखने के नियम का पालन सूदन—नहीं किया है।	केशव का सूदन के इस छंद मे वीररस का अच्छा परिपाक हुआ

---

[1] छंदप्रभाकर, पृ० ४७ [2] सुजानचरित्र, छं० ५, पृ० ७१; जंगनामा, पंक्तियाँ १६१-३३६, पृ० ७-१४ [3] छं० २-३, पृ० २१२ [4] भरतपुर की प्रति, पृ० १४७ [5] छंदप्रभाकर पृ० ५६ [6] राजविलास, छ० ७० (पंक्ति १-४), पृ० ११२, छ० ७२ (पं०क्ति १-२), पृ० ११२, छं० ७६ (चारों पंक्ति), पृ० ११३ [7] छन्दप्रभाकर, पृ० ५५-६ [8] सुजानचरित्र, छं० २०, पृ० १३, छं० १४, पृ० ३६ [9] वही, छं० २-३, पृ० २१२ [10] रघुनाथरूपक गीतौंरो, पृ० २६६; वही, परिशिष्ट, पृ० १ [11] सुजानचरित्र, छ० ७, ४४-५, छं० ३१, पृ० ७७, छं० ३, पृ० ८७-८८ [12] छन्दप्रभाकर, पृ० ६०

क्र० स०	छंद	कवि—	विवरण
			है। श्रीधर द्वारा प्रयुक्त छंद मे १४, १४=२८ मात्रा और अंत मे ग ल ग का प्रयोग हुआ है। इरविन ने श्रीधर के इस छंद को कवित्त माना है।[1] उनका यह कथन ठीक नही है।
२०.	रोला	सूदन—	२४ (११, १३)[2] इस छंद मे घोडा का वर्णन हुआ है और लूट मे प्राप्त सामग्री की सूची दी गई है।[3]
२१.	काव्य	सूदन—	२४ जिस रोला छंद के चारो पदो मे ११ वी मात्रा लघु हो उसे काव्य कहते है।[4] भरतपुर की प्रति मे इस छंद का नाम "कव्वि" दिया है। सुजान-चरित्र मे इस छंद द्वारा ब्रज-वर्णन किया गया है।[5]
२२.	दुरद (दिगपाल)	सूदन—	२४ (१२, १२)[6] ऐसा प्रतीत होता है कि सूदन ने दिगपाल नामक छंद को दुरद (द्विरद) नाम दे दिया है। उनके इस छंद मे केवल ७ पंक्तियाँ हैं।[7]
२३.	गगनगन (गगनागना)	सूदन—	२५ (१६, ६ अंत मे रगण। इस छंद के प्रत्येक पद मे ५ गुरु और १५ लघु रहते है)।[8] भरतपुर की प्रति मे इसका नाम गगनंगन दिया है, जो अशुद्ध है।[9] इस छंद मे रौद्र रस का वर्णन हुआ है।[10]
२४.	गीतिका	सदानंद— भूषण सूदन	२६ (१४, १२ अंत मे ल ग)।[11] सदानन्द तथा सूदन के छंदो मे १४, १४=२८ मात्रायें और अंत मे ल ग है।[12] इनके ये छंद हरिगीतिका के बहुत निकट हैं। संभव है कि इन कवियों ने हरिगीतिका के लिए ही गीतिका नाम प्रयुक्त किया हो। यह भी हो सकता है कि उस समय तक गीतिका छंद २८ मात्रा का प्रयुक्त होने लगा हो। भूषण के इन छंदों मे १४, १२=२६ मात्रा और अंत मे ग ल है। अतः उन्हे गीता मानना अधिक समीचीन होगा। भूषण ने इस छंद मे अलंकारो की नामावली का उल्लेख किया है।[13]
२५.	गीता, सुगीतिका	श्रीधर— सूदन	२६ (१४,१२ अंत मे ग ल)।[14] श्रीधर ने इस छंद के प्रत्येक चरण में २८ मात्राएँ और अंत मे ल ग का प्रयोग किया है। इस कारण से यह छंद हरिगीतिका के सामान हो गया है।[15] जगनामा

---

[1] वीरसिंहदेवचरित्र, छं० ६६, पृ० २३, सुजानचरित्र, छं० १६, पृ० १४३, जंगनामा, पंक्तियाँ १०२० १२४८, पृ० ५०-१, जनरल आव दी ए० सो० ऑव बं०, १६०० ई०, पृ० २ [2] [3] छंदप्रभाकार, पृ० ६१, सुजानचरित्र, छं० ४, पृ० ८-६, छं० ३२, पृ० १७२-३ ४६ [4] छंदप्रभाकार, पृ० ६१ [5] सुजानचरित्र, छं० ५६, पृ० २३३-४ [6] छन्दप्रभाकर, पृ० ६२ [7] सुजानचरित्र, छं० २६, पृ० २४१ [8] छन्दप्रभाकर, पृ० ६३ [9] भरतपुर की पति, पृ० १५० [10] सुजानचरित्र, छं० १८, पृ० २१६ [11] छंदप्रभाकर, पृ० ६५ [12] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ५, १६८१ वि०, छं० ४४, पृ० १२१-२, छं० ६२-३, पृ० १२४; सुजानचरित्र, छं० १७, पृ० १६३ [13] भूषण-ग्रथावली, छं० ३७३-८१, पृ० ६७-६ [14] छन्दप्रभाकर, पृ० ६६ [15] जंगनामा पंक्तियाँ ६६६-८६५ पृ० २७-३६

क्र० सं०	छं०	कवि	विवरण
			की पंक्ति ३०-६१ के लिए 'छंद' शीर्षक मिलता है। इनमें १४,१२ के विराम से २६ मात्रायें और अंत मे ल ग ल अथवा ग ग ल है, अतएव इन पंक्तियों की गणना गीता छंद के अंतर्गत ही करनी चाहिए। इरविन महोदय ने पंक्ति ३०-३८ को तोमर छंद और पंक्ति ३९-६० को दोहरा माना है।[1] उनका यह मत भ्रमपूर्ण है। सूदन ने इस छंद मे १४, १२=२६ मात्रा और अंत में ग ल रखा है। संभवतः उन्होने गीता का अन्य नाम सुगीता माना है।[2]
२६.	दाव (दोवै)	सूदन—	२८ (१६, १२ अंत मे कर्ण ग ग)।[3] भरतपुर की प्रति मे इस छंद का नाम 'दोवै' दिया है।[4] अतएव इस छंद का नाम 'दोवै' ही होना चाहिए। केवल एक छंद के दो पदों को छोड़कर शेष सभी छंदों का अंत ग ग मे हुआ है।[5] इस कवि ने इस छंद के द्वारा कृष्ण के रूप, बाल-लीला तथा गोवर्द्धन-कथा आदि का वर्णन किया है।[6]
२७.	ललितपद	सूदन—	२८ यह 'दोवै' छंद का अन्य नाम है।[7] इस छंद के नाम से सूदन की एक ही छंद के विभिन्न नामो के प्रयोग करने की प्रवृत्ति विदित होती है।
२८.	हरिगीतिका हरिगीता हरिगीत	श्रीधर— पद्माकर, श्रीधर, सूदन,	२८ (१६, १२ अंत मे ल ग)।[8] सूदन ने प्रत्येक जंग के हर एक अंक के अंत मे एक हरिगीत अथवा हरगीत की आवृत्ति की है, जिसके तीन चरण तो एक से ही रहे है पर चौथा चरण विषय के अनुसार बदलता गया है। पद्माकर ने हिम्मतबहादुर-विरुदावली में हरगीतिका की अनेक स्थलों पर आवृत्ति की है, जिनके प्रथम दो चरण बदलते गए हैं और अन्तिम दो समान रहे हैं।[9] पद्माकर को यह छंद अधिक प्रिय था, यहाँ तक कि सम्पूर्ण ग्रंथ में २११ छंदों में यह छंद १०८ बार प्रयुक्त हुआ है। सूदन ने भी इस छंद को ३० बार अपनाया है। प्रकृति-चित्रण, युद्ध-वर्णन, ईश्वर मे विश्वास तथा उपदेश आदि के लिए इस छंद का प्रयोग किया गया है।[10]

---

[1] जंगनामा, पृ० २-३; ज० आव ए० सो० आव बं०, १९०१ ई०, पृ० २ [2] सुजानचरित्र, छं० ३२, पृ० २२७ [3] छंद प्रभाकर, पृ० ६६-७ [4] भरतपुर की प्रति, पृ० १६० [5] सुजानचरित्र, छं० ४०, पृ० २३० [6] वही, छं० ३७-४७, पृ० २२९-३२ [7] छंद-प्रभाकर, पृ० ६७ [8] वही, पृ० वही [9] सुजानचरित्र, छं० ३०, पृ० १६२, हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० २, पृ० १-२ [10] सुजानचरित्र, छं० ५, पृ० ८१-८२, हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० ८१-३, पृ० १५-६; छं० ९६-१०३, पृ० १८-२०

क्र० सं०	छंद	कवि—	विवरण
२९	मरहठा	सूदन—	२९ (१०, ८, ११ अंत मे ग ल)।[1]
३०.	ताटक	सूदन—	३० (१६, १४ अन्त मे मगण)।[2] सूदन ने इस छंद मे १४, १४ और अंत मे मगण का प्रयोग करके निश्चित लक्षण के विरुद्ध नवीन प्रयोग की प्रवृत्ति दिखलाई है।[3]
३१.	रुचिरा	सूदन—	३० (१४, १६ अंत मे ग)।[4] सूदन ने केवल दो चरणों का एक छंद प्रयुक्त किया है, जिनके दोनों चरणों में क्रमशः ३१, ३२ मात्रायें तथा अंत मे ल ग है।[5]
३२.	दुमला	सूदन—	३२ (१०, ८, १४ सो गुरु द्वै)।[6] भरतपुर की प्रति मे इसका नाम दुर्मिल्ला दिया है। सूदन ने इस छन्द के अंत मे ल ग का प्रयोग किया है।[7]
३३	लीलावती	सूदन— सदानन्द	३२ (पद्धरिया का दूना, १६, १६ गुरु लघु का कोई नियम नही)।[8]
३४.	त्रिभंगी	मान— सदानन्द, सूदन, पद्माकर, जोधराज	३२ (१०, ८, ८, ६ अंत मे ग)।[9] यह छंद पद्माकर, सूदन, जोधराज तथा मान को अधिक प्रिय था। इन कवियों द्वारा प्रयुक्त इस छंद का अंत ल ग तथा ग ग से किया गया है। हाथियों की सजावट, वस्त्रों की सूची, युद्धों का सुंदर एवं सजीव वर्णन, बीभत्स, रौद्र एवं वीररस के चित्रण मे इन कवियों ने इस छंद का सफल प्रयोग किया है।[10]

सम-द्विपदी छंद

३५.	दुपई	सूदन—	२८ (अन्त मे ग ग)।[11] सूदन के एक दुपई छंद[12] का भरतपुर की प्रति मे[13] मोहनी (मात्रिक अर्द्ध सम, १२, ७ अत मे सगण)[14] नाम दिया है। सूदन के उक्त छद मे प्रायः १२, ७ और अत मे ज अथवा त मिलता है। अतएव यह छद मोहनी (मोहिनी) ही ठीक लगता है। सूदन के एक दुपई छद का भरतपुर की प्रति में चौपइया (चार मात्रा के ७ गण रखकर अत मे दो गुरु=३० मात्रा) नाम

---

[1] छंद-प्रभाकर, पृ० ६६ [2] वही, पृ० ७० [3] सुजानचरित्र, छं० २८, पृ० २४२ [4] छंद-प्रभाकर, पृ० ७१ [5] सुजान-चरित्र, छं० ३, पृ० २०० [6] छंद-प्रभाकर, पृ० ७४; प्राकृत-पैंगल, श्लोक १६६-८, पृ० ३१५-८ [7] सुजानचरित्र, छं० १५, पृ० १५; छं० १८, पृ० ७३ [8] छंद-प्रभाकर, पृ० ७३ [9] वही, पृ० ७२ [10] सुजानचरित्र, छं० १३, पृ० १०८, छं० ७-११, पृ० १२४-५, छं० १४-७, पृ० १६६-७; छं० ३८-९, पृ० १७४; हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० १८९-९८, हम्मीररासो, छं० ७८३-६, पृ० १५४-५, राजविलास, छं० ६-१३, पृ० २०६-८ [11] प्राकृत-पैंगलम्, श्लोक १५२-३, पृ० २५७-६० [12] सुजानचरित्र, छं० १, पृ० ११९-२० [13] भरतपुर की प्रति. पृ० ८२ [14] छंद-प्रभाकर पृ० ८१

क्र० सं०	छ० कवि	विवरण
		मिलता है।[1] उक्त छंद चौपइया के नियमों पर खरा उतरता है और उसमे दो पद हैं।
		सुजान-चरित्र पृष्ठ १८० के छंद ५२ के प्रति चरण की अंतिम दो मात्रायें भरतपुर की प्रति के पाठ में नहीं हैं।[2] यह छंद अपने वर्त्तमान रूप मे चौपइया के नियमों के अनुकूल है।
३६.	विद्वनमाल सूदन	—२८ (मा०) भरतपुर की प्रति में इस छंद का नाम दुपई दिया है जो ठीक प्रतीत होता है।[3] इसीलिए इस छंद को मात्रिक अर्द्ध सम छंदो की सूची मे नही रक्खा गया है।
३७.	घत्ता सूदन	—३१ (चतुर्मात्रिक सप्तग गणांतर तीन लघु, द्विपदी)।[4] सूदन ने इस छंद के अंत मे ल ग ल अथवा ग ग ल का प्रयोग किया है।[5]
३८.	घनानन्द सूदन	—३१ (आरंभ मे ६ मात्रा रखकर तीन चतुष्कला देकर, ५ मात्रा के पश्चात् दो चतुष्कला रखकर घतानन्द छंद बनता है)।[6] सूदन के इस छंद के अंत मे नगण का प्रयोग हुआ है। उन्होंने घतानंद के स्थान पर घनानद नाम दिया है।[7]

(आ) मात्रिक अर्द्ध-सम

३९.	दोहा केशव, जटमल, गोरेलाल, श्रीधर, सदानद, सूदन, गुलाब, पद्माकर, जोधराज, भूषण, मान, मतिराम, दोहरा केशव, मान,	—२४ (विषम चरण मे १३ और सम चरण मे ११, विषम चरण के आदि मे जगण वर्जित तथा अंत मे लघु आवश्यक)।[8] यह छंद आलोच्यकालीन सभी कवियों को अत्यंत प्रिय रहा है। उन्होंने सभी विषयों—सरस्वती, गणेश आदि की वदना, राज्य-वर्णन, ग्रंथ-निर्माण का उद्देश्य, कवि-परिचय, तिथि-कथन, अलकार-लक्षण, आश्रयदाता का गुण-गान, ऋतु-वर्णन, शृंगार-चित्रण, दुर्भिक्ष, मृगया, युद्ध की तैयारी, विवाह, उपदेश, नीति, सृष्टि रचना आदि का प्रतिपादन करने के लिए इस छंद का सफलतापूर्वक प्रयोग किया है।[9] कथानक को अग्रसर करने और घटना का पाठक को परिचय देने के लिए

---

[1] सुजानचरित्र, छं० ३२, पृ० १४५, भरतपुर की प्रति, पृ० १००; प्राकृत-पैंगलम्, श्लोक ६७-८, पृ० १६७-६ [2] भरतपुर की प्रति, पृ० १२५ [3] वही, पृ० १६७, सुजानचरित्र, छं० ६-७, पृ० २३८ [4] प्राकृत-पैंगलम्, श्लोक ६६-१०१, पृ० १७०-२ [5] सुजानचरित्र, छं० ४, पृ० १०६ [6] प्राकृत-पैंगल, श्लोक १०२-४, पृ० १७३-६ [7] सुजानचरित्र, छं० ६-८, २०२ [8] छंद-प्रभाकर, पृ० ८२ [9] कुछ उदाहरण ये हैं :—भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ३, ८-६, ११-२, २५-३१-३, ३८२ आदि, राजविलास, छं० १-६, पृ० १; छं० ३३-७, पृ० ७; छं० ११३-७, पृ० १३६, हम्मीररासो, छं० ३४-७, ११०, ११५, १२२, १२४, १६५, १७२-४

क्र० सं० छंद कवि— विवरण

जोधराज भी इस छंद को अपनाया गया है। इस प्रकार इस छंद का क्षेत्र अत्यंत विस्तीर्ण रहा है।

इस छंद के दोहा और दोहरा दो नाम मिलते हैं। दोहरा राजस्थानी प्रभाव का द्योतक है। केशव के दोहों के साथ मे कतिपय स्थलों पर कुछ ऐसे छंद मिलते हैं जो चौपही के नियमों पर खरे उतरते हैं। अतः उन्हे दोहा अथवा दोहरा मानने मे सकोच होता है।[1] केशव ने एक स्थान पर दोहे के प्रथम दल मे आठ और सोलह पर यति का प्रयोग किया है।[2]

जटमल ने एक स्थान पर एक पद्य का नाम छंद लिखा है।[3] संभवतः ये दोहा छंद हैं पर इनमे बहुत से दोष हैं।

४०. सोरठा केशव,—२४ (विषम चरण मे ११, सम मे १३, दोहे का उलटा)।[4]
जटमल, सूदन ने एक सोरठे के प्रथम दल मे १३+१३=२६ मात्राओं का
सूदन, प्रयोग किया है।[5] भरतपुर की प्रति मे उक्त दल मे (तो) शब्द
गुलाब, नही दिया है, इस कारण वहाँ पर यह छंद निर्दोष हो गया है। सूदन
जोधराज, का यह अत्यन्त प्रिय छंद था। इस छंद का प्रयोग कवि-परिचय, गणेश-वंदना, तबू आदि की सूची, शृंगार आदि रसों के विवेचन तथा अन्य वर्णनों के लिए हुआ है।[6] सुजान-चरित्र का एक सोरठा भरतपुर की प्रति मे अप्राप्य है।[7] सुजान-चरित्र का एक सोरठा भरतपुर की प्रति मे दोहा माना गया है, पर वास्तव मे वह सोरठा ही है।[8]

४१. हरिपद सूदन—२७ (१६+११)।[9]

४२. उल्लाला सूदन—२८ (विषम चरण मे १५, सम मे १३)[10]। सूदन ने प्रत्येक दल के अंत मे गुरु का प्रयोग किया है।[11]

(इ) मात्रिक विषम-छंद (पट्-पदी)

४३. अमृतध्वनि भूषण—(एक दोहा+एक रोला)। इसके रोला मे आठ-आठ मात्रा पर

---

[1] वीरसिंहदेवचरित्र, दोहा ६ के उपरान्त छं० ७-१५, पृ० २, दोहा ३८ के उपरांत छं० ३९-५९, पृ० २१-२; दोहा ५३ के उपरांत छं० ५१ ५२, पृ० ४४, दोहरा ४६ के उपरांत छं० ४७-६६, पृ० ४८-९ [2] वही, दोहा १२, पृ० ६२ [3] गोराबादल की कथा, छं० १५०, पृ० ३४ [4] छंदप्रभाकर, पृ० ८७ [5] सुनानचरित्र, छं० ९, पृ० १० [6] वही, छं० १०, पृ० ३; छं० १, पृ० १००, छं० ३५-३७, पृ० १७३-४, गोराबादल की कथा छं० १२७-३३, पृ० ३०, हम्मीर-रासो, छं० २२७-९, पृ० ४६ [7] सुजानचरित्र, छं० ३८, पृ० १४७; भरतपुर की प्रति, १०१ [8] सुजानचरित्र, छं० ६४, पृ० २५१ [9] भरतपुर की प्रति, पृ० १७७ [10] छंदप्रभाकर, पृ० ८९ [11] सुजानचरित्र, छं० २३, पृ० १४४

क्र० सं०	छंद कवि—	विवरण
	सूदन, गुलाब	यति, यमक को तीन बार झमकाव के साथ सजाया जाता है। कुल ६ पद तथा १४४ मात्रायें होती हैं।[1] इस छंद का प्रयोग युद्ध-वर्णन और वीर रस के चित्रण के लिए किया गया है।[2]
४४.	कुंडलिया केशव, जटमल, सूदन, गुलाब, कुंडरिया केशव	—(दोहा + रोला = ६ पद = १४४ मात्रा)।[3] केशव ने कुंडलिया के दो दल के उपरांत ही छंद संख्या डाल दी है और एक स्थल पर एक छंद मे केवल चार ही चरण दिए हैं।[4] विभिन्न कवियो ने इस छंद द्वारा नीति तथा युद्ध आदि विषयों का वर्णन किया है।[5]
४५.	छप्पय केशव, जटमल, भूषण, श्रीधर, सदानंद, सूदन, गुलाब, पद्माकर, जोधराज, मतिराम, छप्पै केशव, छप्पद केशव, कवित्त मान।	—(रोला के चार पद + उल्लाला के दो पद। उल्लाला मे कहीं पर २६ और कहीं पर २८ मात्राएँ होती हैं। कुल छः पद मिलाकर १४८ अथवा १५२ मात्राएँ होती है।[6]) केशव ने इस छंद के लिए छप्पद नाम भी दिया है। मान कवि ने चंदवरदायी के समान छप्पय के लिए कवित्त नाम का प्रयोग किया है, जो राजस्थानी प्रभाव का द्योतक है। श्रीधर द्वारा प्रयुक्त इस छंद के कुछ स्थल छप्पय की अपेक्षा अमृतध्वनि के नियमो के अधिक निकट पहुँचते हैं। अतएव उन्हे अमृतध्वनि ही मानना चाहिए।[7] छप्पय का प्रयोग स्तुति-वंदना, अवतार, आखेट, अन्न आदि की सूची, प्रकृति-वर्णन, नख-शिख, वात्सल्य, शृंगार, वीर, बीभत्स, रौद्र, शौर्य, आतंक, ऋतु-वर्णन आदि विविध विषयों के लिए हुआ है।[8] अतः यह नहीं कहा जा सकता कि इस छंद का प्रयोग केवल वीररस के वर्णन मे ही किया जाता है। केवल इतना ही स्वीकार किया जा सकता है कि इस छंद के द्वारा अन्य विषयों के अतिरिक्त वीर रस का निर्वाह सफलतापूर्वक हो सकता है और हुआ है। सभी कवियों ने सभी विषयों के लिए इसे समान रूप से अपनाया है।

---

[1] छंद-प्रभाकर, पृ० ६४ [2] सुजानचरित्र, छं० ३०, पृ० १८६-६६, भूषण-ग्रंथावली, छं० ३५६-६, पृ० ६४, करहिया को रायसौ, ना० प्र० प०, भा० १०, १६८६ वि०, छं० ४७, पृ० २८६-७ [3] छंद-प्रभाकर, पृ० ६५ [4] वीरसिंहदेव-चरित, छं० ४३-५, पृ० ७६, छं० २३, पृ० ८१ [5] सुजानचरित्र, छं० ८, पृ० ११४ [6] छंद-प्रभाकर, पृ० ६६ [7] जगनामा, पंक्तियाँ १४२१-१४, पृ० ५८-६ [8] वीरसिंह देवचरित, छं० ३, पृ० १, छं० २४, पृ० ६८, गोराबादल की कथा, छं० १४, ४१-५, १०६, १३५-८, भूषण-ग्रंथावली, शिवराजभूषण, छं० २, २३, ३६०-१, वही, शिवाबावनी, छं० ३३, मतिराम-ग्रंथावली, जगद्विनोद, छं० ७०५, पृ० २१८-६, सुजान-चरित्र छं० १ पृ० २८; छं० २, पृ० ८, छं० १, पृ० २०, छं० ४६-८, पृ० १७८ ६, छं० ६६, पृ० २५१; हम्मीररासो, छं० २-३, १२३, १४२-३, २२२; राजविलास छं० १०, पृ० २, छं० ३८, पृ० ८, छं ६६, पृ० १२

क्र० सं०	छंद	कवि	विवरण
४६.	छप्पै	सूदन—अभिराम	यह छप्पय का एक भेद प्रतीत होता है। सूदन ने इसका एक ही बार प्रयोग किया है।[1]
४७.	कलस—कवित्त	मान—	(रोला+उल्लाला) मान कवि ने एक प्रकार के छप्पय को ही इस नाम से पुकारा है ऐसा अनुमान होता है।[2]
४८.	दातार	जोधराज—	यह छंद छप्पय के लक्षणों पर खरा उतरता है। अतएव यह उसका अन्य नाम अथवा एक भेद प्रतीत होता है।[3]
४९.	हुलास	श्रीधर—	(पादाकुलक+त्रिभंगी)।[4] श्रीधर ने इस छंद के प्रत्येक चरण मे विभिन्न मात्राओं का प्रयोग किया है, उदाहरणार्थ पंक्ति ८७० (३८ मात्रा), पंक्ति ८७१ (३४ मात्रा), पंक्ति ८७८ (२८ मात्रा), पक्ति ९५० (२९ मात्रा)।[5] इस कवि ने भुजंगप्रयात तथा दोहे के सम्मिश्रण से भी हुलास छद की रचना की है।[6]

(ई) मात्रिक विषम (चतुष्पदी) छद

५०.	गाहा	सूदन -	(१२, १८, १२, १५=५७ मात्रा, आर्या छद का अन्य नाम।[7]

(उ) मात्रिक सम अथवा विषम दंडक (चतुष्पदी)

५१.	कडखा कडषा	सूदन—	(८, १२, ८, ९=३७ मात्रा, अंत मे य)[8] इस छद का प्रयोग सूदन अपशकुन तथा युद्ध-सामग्री आदि के वर्णन के लिए हुआ है।[9]
५२	उद्धत	सूदन—	(१०, १०, १०, १०=४० मात्रा, अंत मे ग ल)।[10] सूदन ने इस छद के द्वारा युद्ध का अच्छा वर्णन किया है।[11]
५३.	मदनहरा	सूदन—	(१०, ८, १४, ८ के विश्राम से ४० मात्रा, आदि मे दो लघु और अंत मे एक गुरु)।[12] सूदन ने इस छद के आदि मे गुरु लघु तथा लघु लघु दोनों क्रमों को विकल्प से अपनाया है।[13]

(२) वर्णिक छंद

(ऊ) सम चतुष्पदी

५४	मारु	सूदन—	२ वर्ण (ग ल)।[14] भरतपुर की प्रति मे इसका नाम सारू मिलता

---

[1] सुजानचरित्र, छं० १०, पृ० ९९ [2] राजविलास, छं० १०३-७, पृ० २६२-३ [3] हम्मीररासो, छं० ३१७-८, पृ० ६४ [4] छंद-प्रभाकर, पृ० ७२ [5] जंगनामा, पंक्ति ८६६-१२१९, पृ० ३६-४० [6] वही, पंक्ति ९७०-५, पृ० ४० [7] छंद-प्रभाकर, पृ० ९८, प्राकृत-पैंगलम्, श्लोक ५४-६१, पृ० १०८-१६, सुजानचरित्र, छं० ३, पृ० ६३ [8] छंद-प्रभाकर, पृ० ७६ [9] सुजानचरित्र, छं० २६-९, पृ० १७ ८; छं० ८, पृ० १०९-१० [10] छंद-प्रभाकर, पृ० ७७ [11] सुजानचरित्र, छं० ५, पृ० १९० [12] छंद-प्रभाकर, पृ० ७७ [13] सुजानचरित्र, छं० २६-७ पृ० २०७-८ [14] छंद-प्रभाकर, पृ० ११९

क्र० सं०	छंद	कवि	विवरण
	(सारू) (सार)		है। अतएव यही नाम ठीक ज्ञात होता है। सूदन ने केवल एक ही छंद का प्रयोग किया है, जिसके चारों चरण एक ही पक्ति मे लिख दिए गए हैं।[1]
५५.	नारी	केशव—३ वर्ण (म)।[2]	
५६.	हारी (हारीत)	सूदन—५ (त ग ग)।[3] चारों चरणों के एक ही पक्ति में लिखे जाने और विराम चिह्नों के अभाव के कारण इसके रूप को जानने में पाठक को भ्रम हो सकता है। इसकी तीसरी पक्ति मे केवल दो ही चरण दिए हैं।[4]	
५७.	हद (हस)	सूदन—५ (भ ग ग)। भरतपुर की प्रति मे इसका नाम हंस मिलता है। इस छंद का यही नाम वास्तविक प्रतीत होता है।[5]	
५८.	तिलक (तिलका)	सूदन—६ वर्ण (स स)। सूदन ने इसके चारों चरण एक ही पंक्ति मे लिख दिए हैं और उसमे विराम-चिह्नों का अभाव है।[6]	
५९	मथान	सूदन—६ (त त)।[7]	
६०.	मालती	सूदन—६ (ज ज)।[8]	
६१.	विजोहा	सूदन—६ (र र)।[9] सूदन ने इस छंद मे युद्ध की तैयारी का अच्छा वर्णन किया है।[10]	
६२.	संखनारी (शखनारी) सखजारी	सदानंद—६ (य य)।[11] सूदन—	
६३.	ससिवदना (शशिवदना)	सदानंद—६ (न य)।[12]	
६४.	करहेची (करहंस) करहंची।	सूदन—७ (न स ल)।[13] सूदन ने इस छद मे अपशकुनों का वर्णन किया है। भरतपुर की प्रति में इसका नाम करहंची दिया है।[14]	
६५.	समानिका	सूदन—७ (र ज ग)।[15]	

---

[1] सुजानचरित्र, छं० ७६, पृ० २५४ [2] छंद-प्रभाकर, पृ० ११९ [3] वही, पृ० १२२ [4] सुजानचरित्र, छं० ५३, पृ० २४९ [5] छंद-प्रभाकर, पृ० १२२, भरतपुर की प्रति, पृ० १३२; सुजानचरित्र, छं० ३, पृ० १८९-९० [6] छंद-प्रभाकर, पृ० १२३, सुजानचरित्र, छ० ९, पृ० १६५ [7] छंद-प्रभाकर, पृ० १२४ [8] वही, पृ० वही, [9] वही, पृ० १२३ [10] सुजानचरित्र, छं० ३३, पृ० १४६ [11] छंद-प्रभाकर, पृ० १२३ [12] वही, पृ० १२४ [13] वही, पृ० १२६; प्राकृत-पैगलम्, श्लोक ६२-३, पृ० ३७५-६ [14] सुजानचरित्र, छं० ४९, पृ० २४८ [15] छंद-प्रभाकर पृ० १२५

छ० सं०	छंद	कवि	विवरण
६६.	अर्द्धनाराच, लघुनाराच,	जोधराज	—८ (ज र ल ग) यह छंद प्रमाणिका[1] के समान है। संभवतः जोधराज, इन कवियों ने प्रमाणिका छंद को ही विभिन्न नामों से पुकारा है। मान इस छंद द्वारा स्तुति, वसंत, नखशिख, राज्याभिषेक आदि का वर्णन किया गया है।[2]
६७.	नगस्वरूपिनी (नगस्वरूपिणी), प्रमानिका (प्रमाणिका)	केशव, सूदन	—८ (ज र ल ग)[3] इन कवियों ने अपनी रुचि के अनुसार इस छंद के दोनों नामों मे से एक का प्रयोग किया है। यह छंद अर्द्धनाराच तथा लघुनाराच के समान हे। अतः संभव है कि ये सब एक ही छंद के विभिन्न नाम हों।
६८.	निगालिका	सूदन	—८ (ज र ल ग) यह छंद प्रमाणिका के समान है, अतएव यह उसी का अन्य नाम प्रतीत होता है।[4]
६९.	मानक्रीडा	सूदन	—८ (न स ल ग) यह छंद पद्म (कमल) के समान है।[5] अतएव यह उसी का अन्य नाम भासित होता है।[6]
७०.	चपला (विद्युन्माला)	सूदन	—८ (म म ग ग)।[7] सम्भवतः सूदन ने विद्युन्माला छंद के लिए नवीन नाम चपला की सृष्टि की है।
७१.	तु ग	सूदन	—८ (न न ग ग)।[8]
७२.	मल्लिका	सूदन	—८ (र ज ग ल)।[9]
७३.	हरि हरी (ईश)	सूदन	—८ वर्ण। यह छंद ईश (स ज ग ग)।[10] के लक्षणों के समान है। ऐसा अनुमान होता है कि सूदन ने ईश के पर्यायी नाम हरि का प्रयोग किया है। यह छंद कहीं-कहीं पर सदोष है।
७४.	महालच्छिमी	सूदन	—९ (र र र)।[11] सूदन के छंद की प्रथम पंक्ति इन नियमों पर पूर्ण रूप से खरी नही उतरती है।[12]
७५.	सजुता, सयुता	सूदन	—१० (स ज ज ग)।[13] सूदन ने कहीं-कहीं पर इस नियम का पालन नहीं किया है।[14] इस छंद द्वारा युद्ध की तैयारी और युद्ध के वर्णन का अच्छा चित्रण किया गया है।[15]
७६.	सारवती	सूदन	—१० (भ भ भ ग)।[16] भरतपुर की प्रति मे इसका नाम सारवत मिलता है।[17]

---

[1] छंद-प्रभाकर, पृ० १२८ [2] हम्मीररासो, छं० ७४-७, पृ० २५; छं० १३०-४१, पृ० २७-८, राजविलास छं० २-२०, पृ० ८२-३ [3] छंद-प्रभाकर, पृ० १२८ [4] सुजानचरित्र, छं० ७७, पृ० २५४ [5] छंद-प्रभाकर पृ० १२९ [6] सुजानचरित्र, छं० ३९, पृ० २४६ [7] छंद-प्रभाकर, पृ० १२७ [8] वही, पृ० १२९ [9] वही, पृ० १२७ [10] वही, पृ० १२८ [11] वही, १३१ [12] सुजानचरित्र, छं० २०; पृ० १६०-१ [13] छंद-प्रभाकर, पृ० १३५ [14] राजविलास, छं० १३ (प्रथम दो पंक्तियाँ), पृ० ३० [15] वही, छं० ११, पृ० १८५-७ [16] छंद-प्रभाकर, पृ० १३४ [17] भरतपुर की प्रति, पृ० १७३

क्र० सं०	छंद	कवि	विवरण
७७.	मोहठा (बाला)	सूदन	१० (र र र ग)।[1] सूदन रचित इस छंद की ८ वी पंक्ति के उत्तरार्द्ध को छोडकर शेष सम्पूर्ण छंद 'बाला' के नियमो के अनुरूप है। अतएव यह बाला का ही अन्य नाम प्रतीत होता है।[2]
७८.	इन्द्रवज्र (इन्द्रवज्रा)	सूदन	११ (त त ज ग ग)।[3]
७९	दोधक	सूदन	११ (भ भ भ ग ग)।[4]
८०.	सालिनी (शालिनी)	सूदन	११ (म त त ग ग)।[5]
८१.	सुमुखी	सूदन	११ (न ज ज ल ग)।[6]
८२.	सैनिका	सूदन	११ (गुरु-लघु रूप से ११ वर्ण। सुविधा के लिए इस प्रकार भी कह सकते हैं—र ज र ल ग)।[7]
८३.	स्वागता	सूदन	११ (र न भ ग ग)।[8] सूदन ने इस छंद द्वारा व्रज-शोभा का वर्णन किया है।[9]
८४.	भुजगी	मान, सूदन, गुलाब,	११ (य य य ग ग)।[10] गुलाब रचित भुजंगी छंद भुजगप्रयात के समान है।[11] मान ने इस छंद मे १२ अथवा अधिक वर्णों का प्रयोग किया है, इसलिए इनका यह छंद भी भुजगप्रयात के समान है। सूदन कृत इस छंद मे १२ अथवा १३ अथवा १४ अक्षर मिलते हैं जो प्राय भुजंगप्रयात के ही समान है।[12] इससे सिद्ध होता है कि इन कवियों ने भुजगी छंद के रूप मे परिवर्तन करना आरभ कर दिया था। यह भी संभव है कि कालान्तर मे भुजगप्रयात का ही नाम भुजंगी प्रयुक्त होने लगा हो। इस छंद द्वारा युद्ध-वर्णन, व्रज-चित्रण, बीभत्स-रस आदि का वर्णन किया गया है।[13]
८५.	तोटक त्रोटक	सूदन— सूदन,	१२ (स स स स)।[14] सदानन्द के त्रोटक छंद प्रायः सदोष हैं।[15] इस छंद मे सेना-प्रयाण, युद्ध-वर्णन, प्रकृति-चित्रण, वीर, बीभत्स

---

[1] छंद-प्रभाकर, पृ० १३५ [2] सुजानचरित्र, छं० ३७, पृ० २४५ [3] छंद-प्रभाकर, पृ० १४१ [4] वही, पृ० १४६ [5] वही, पृ० १३७ [6] वही, पृ० १४७ [7] प्राकृत-पैंगल, श्लोक ११०-१, पृ० ४२२-३, प्राकृत-पिंगल-सूत्राणि, पृ० १३८, सुजानचरित्र, छं० १८, पृ० २२६ [8] छंद-प्रभाकर, पृ०१३६ [9] सुजानचरित्र, छं० ४०, पृ०२४६ [10] छंद-प्रभाकर, पृ० १३८-६ [11] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० १०, १९८६ वि०, छं० ३८, पृ० २८४ [12] सुजानचरित्र, छं० १२, पृ० ११-२ [13] वही, छं० १३, पृ० ५१-२; छं० ६, पृ० ८२, छं० ६०, पृ० २३४-५, राजविलास, छं० २३-२६, पृ० ८४-७; छं० २७-५१, पृ० १८१-९२ [14] छंद-प्रभाकर, पृ० १५२ [15] ना० प्र० प०, नवीन संस्करण, भा० ५, १९८१ वि०, छं० १३ (तीसरी और चौथी पंक्ति), पृ० ११५, छं० ६४ (प्रथम पंक्ति), पृ० १२४

क्र० सं०	छंद	कवि	विवरण
		मान, सदानद, जोधराज	आदि का सुंदर प्रतिपादन हुआ है।[1] जोधराज के कुछ त्रोटक केवल द्विपदी हैं।[2]
८६.	भुजगप्रयात	केशव, श्रीधर, सदानद, सूदन, पद्माकर, जोधराज	१२ (य य य य)।[3] सदानद ने इस छंद में कतिपय स्थलों पर १३ वर्णों का प्रयोग किया है। उनका यह छंद अधिकांश स्थलों पर दोषपूर्ण है।[4] जोधराज के कुछ छंद दो पदों के हैं और छंद ५५७ में छः पद हैं।[5] सूदन का एक भुजंगप्रयात दोहे के समान है।[6] भरतपुर की प्रति में एक छंद का नाम भुजगप्रयात के स्थान पर भुजगी माना गया है।[7] इस छंद का प्रयोग युद्ध, ऋतु, प्रकृति, बीभत्स, वीर आदि के वर्णन के लिए हुआ है।[8]
८७.	मोतीदाम - जटमल	मान, गुलाब, जोधराज, मुक्तादाम-जोधराज, सूदन, मुतियादाम सूदन	१२ (ज ज ज ज)।[9] भरतपुर की प्रति में एक स्थल पर इसका नाम मुतियकदाम दिया है।[10] गुलाब कवि ने इस छंद में कहीं-कहीं पर वर्णों का क्रम (स स स स) रखा है।[11] इस छंद में युद्ध, नगर, बाल-लीला, ऋतु आदि विविध विषयों का चित्रण किया गया है।[12]
८८.	मोदक	सूदन	१२ (भ भ भ भ)।[13] सूदन रचित छंद की तृतीय पंक्ति का उत्तरार्द्ध इस नियम के अनुकूल नहीं है।[14]
८९.	लच्छीधर, लछमीधर	सूदन	१२ (र र र र)।[15] युद्ध की प्रस्तुतियों तथा वर्णनों के लिए इस छंद का प्रयोग किया गया है।[16]

---

[1] सुजानचरित्र, छं० १०, पृ० ४५-६; छं० ५, पृ० ११२-३; छं० १३, पृ० १८७-८, राज-विलास, छं० १२-२६, पृ० २३३-५, हम्मीररासो, छं० ११६-२१, पृ० २४-५, छं० ७२६-४६; पृ० १४५-८ [2] वही, छं० ४५४, ५८०, ७४६, ८७८ [3] छंद-प्रभाकर, पृ० १५० [4] ना० प्र० प० भा० ५, १९८१ वि, छं० १६, २१, २२, पृ० ११६-७; छं० २८, पृ० ११८ [5] हम्मीररासो, छं० ६६, २१६, ४८८, ७७८ [6] सुजानचरित्र, छं० १६, पृ० ४७ [7] वही, छं० १५, पृ० ४७ [8] वही, छं० २५, २६, पृ० १६६, हम्मीररासो, छं० १११-४, १६१-२१६, ८८८-६२० [9] छंद-प्रभाकर, पृ० १५४, [10] भरतपुर की प्रति, पृ० १४० [11] ना० प्र० पत्रिका, नवीन संस्करण भा० १०, १९८६ वि०, छं० ३४ (पंक्तियाँ ६, १०, ११ आदि), पृ० २८२ ३ [12] सुजानचरित्र, छं० ८, पृ० ३७-८, छं० २, पृ० ८६-७, राजविलास, छं० ८५-१४१, पृ० ४५-५३, छं० १७२-६२, पृ० ५८-६१, हम्मीररासो, छं० १२५-६, पृ० २६-७ [13] छंद-प्रभाकर, पृ० १५५ [14] सुजानचरित्र, छं० १०, पृ० २१३-४ [15] छंद-प्रभाकर पृ० १५१ [16] सुजानचरित्र छं० १६ पृ० १६ छं० ५ पृ० २१-२

क्र० सं०	छंद	कवि	विवरण
९०.	सारंग	सूदन	१२ (त त त त)।[1] इस छंद द्वारा युद्ध-चित्रण तथा वीररस का पूर्ण परिपाक हुआ है।[2]
९१.	कद	सूदन	१३ (य य य य ल)।[3] इसमे युद्ध का अतीव सुंदर वर्णन हुआ है।[4]
९२	तारक	सूदन	१३ (स स स स ग)।[5]
९३.	वसन्ततिलका	सूदन	१४ (त भ ज ज ग ग)।[6]
९४.	कलहंस (मनहस)	सूदन	१५ (स ज ज भ र)।[7] सूदन द्वारा प्रयुक्त यह छंद 'मनहस' के समान है। ऐसा प्रतीत होता है कि सूदन ने मनहंस का नाम कलहस रखकर छंदो के नाम परिवर्त्तित करने की प्रवृत्ति का परिचय दिया है। उनके इस छंद मे कही-कही पर कुछ दोष भी हैं, जैसे उसकी 'चौथी' और 'पाँचवी' पंक्ति उक्त नियम पर खरी नही उतरती हैं। उनमें १६, १६ अक्षर हैं।[8]
९५.	चामर	सूदन	१५ (र ज र ज र)।[9] युद्ध-वर्णन।[10]
९६.	निशिपालिका	सूदन	१५ (भ ज स न र)।[11]
९७	मालिनी (मजुमालिनी)	सूदन	१५ वर्ण (न न म य य = ८,७)।[12]
९८	चचला	सूदन	१६ (र ज र ज र ल)।[13]
९९	नील	सूदन	१६ (भ भ भ भ भ ग)।[14]
१००.	नाराच	केशव, सूदन, जोधराज,	१६ (ज र ज र ज ग)।[15] जोधराज के कुछ नाराच छंद अर्द्धनाराच प्रतीत होते हैं और एक छंद (२९३) की प्रथम पक्ति मे १७ अक्षरों का प्रयोग हुआ है।[16]
	बृद्धिनाराच	मान, सूदन	सूदन के नाराच छंद ऊपर दिए हुए लक्षणों के समान हैं, पर उनके बृद्धिनाराच उससे भिन्न और (ज र ल ग) के अनुरूप हैं, जिनमें कही-कहीं पर कुछ दोष भी आ गए हैं।[17] मान के बृद्धिनाराच उक्त लक्षणों के अनुकूल होते हुए भी यत्र-तत्र सदोष हैं, यथा छंद ४१ की प्रथम पक्ति गुरु से आरम्भ हुई है।[18] केशव ने ऊपर दी हुई नाराच छंद

---

[1] छंद-प्रभाकर, पृ० १५२, [2] सुजानचरित्र, छं० ७, पृ० ८९-९१, छ० ६, पृ० १८३ [3] छंद-प्रभाकर, पृ० १६१ [4] सुजानचरित्र, छं० ११, पृ० १०२-३, छ० ४२, पृ० १४९-५१, छ० ३५, पृ० २०९-११ [5] छद-प्रभाकर, पृ० १६२, [6] वही, पृ० १६८, [7] वही, पृ० १७२, [8] सुजानचरित्र, छं० १९ पृ० १५९-६० [9] छद-प्रभाकर, पृ० १७२ [10] सुजानचरित्र, छ० ९, पृ० ११५-६ [11] छंद-प्रभाकर, पृ० १७४ [12] वही, पृ० १७५ [13] वही, पृ० १७७ [14] वही, पृ० १७८ [15] रघुनाथरूपक गीताँरो, परिशिष्ट, पृ० २७, [16] हम्मीररासो, छं० २९३, पृ० ५९ छं० ४२०-६, पृ० ८६-७ [17] सुजानचरित्र, छं० २८, पृ० १९६-७ [18] राजविलास, पृ० ८७

क्र० सं०	छंद	कवि	विवरण

की परिभाषा को स्वीकार किया है, पर उनका यह छंद उसके अनुरूप नहीं है। सर्व प्रथम तो यह कि प्रत्येक चरण का आरम्भ ल ग से न करके ग ल से किया है। दूसरे वह अपने वर्त्तमान रूप मे विराम-चिह्नों के इस ढग से प्रयुक्त होने के कारण ८ वर्णों के छंद के समान प्रतीत होने लगता है।[1]

सूदन, जोधराज तथा मान के नाराच छंद पचचामर (नराच)[2] तथा प्रमाणिका[3] के समान हैं। केशव के नराच की अपनी निजी विशेषता है।

इस छंद द्वारा युद्ध-चित्रण आदि का सुदर-वर्णन हुआ है।[4]

१०१. चर्चरी — सूदन — १८ (र स ज ज भ र=८,१०)।[5]

१०२. सुंदरी (मदिरा) — सूदन — २२ (भ भ भ भ भ भ भ ग)। यह छंद मदिरा (मालिनी) सवैया के समान है।[6]

१०३. मालती — सूदन, केशव, मतिराम, भूषण, गुलाब, सदानन्द — २३ (भ भ भ भ भ भ भ ग ग)।[7] सूदन ने सात स्थानों पर सवैया छंद का प्रयोग किया है, जिनमे से पाँच मालती सवैया हैं। भूषण ने शिवराजभूषण मे ५० तथा फुटकर छंदो मे ५ मालती सवैयों का प्रयोग किया है। उनके इस छंद मे एक स्थान पर कुछ दोष आ गए हैं।[8] सदानन्द को इस छंद का मत्तगयद नाम अधिक प्रिय था।

मत्तगयंद — सदानन्द — गुलाब द्वारा प्रयुक्त मालती सवैया प्रायः सदोष है।[9] केशव द्वारा प्रयुक्त सवैयों मे से ३ मालती हैं। उनके एक सवैया के प्रथम दो चरण मालती तथा शेष दो अरसात के समान है।[10]

इन सभी कवियों ने इस छंद का प्रयोग शृंगार-रस, दान, प्रशसा आदि विषयों के लिए किया है।

१०४. अरसात सवैया — भूषण-२४ (भ भ भ भ भ भ भ र)।[11]

१०५. किरीट सवैया — भूषण-२४ (भ भ भ भ भ भ भ भ)।[12] भूषण के इस छंद मे यत्र-तत्र कुछ दोष आ गए है, पर गुरु लघु का ठीक ध्यान रखकर छंद पाठ करने से उसके दोषों का कुछ परिहार हो सकता है।[13]

---

[1] लाला भगवानदीन, केशव-कौमुदी, भा० १, पृ० ३४ (पाद-टिप्पणी) छं० के लक्षण के लिए, वीरसिंहदेव-चरित, छ० १ पृ० ४१, [2] छंद-प्रभाकर, पृ० १७७-८ [3] वही, पृ० १२८ [4] सुजानचरित्र, छ० १४, पृ० ३४, छं० २२, पृ० २१८-२०, राजविलास, छं० ६६-८२, पृ० ७०-७३; हम्मीररासो, छ० ४२०-४२६, पृ० ८६-७ [5] छंद-प्रभाकर, पृ० १८७ [6] छंद-प्रभाकर, पृ० १९९; सुजानचरित्र, छं० १७, पृ० १४२ [7] छंद-प्रभाकर, पृ० २०१-२ [8] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ३५ (प्रथम दो पंक्तियां), पृ० ६ [9] ना०प्र०प०, नवीन संस्करण, भा० १०, १९८६ वि०, छं० ३१, पृ० २८१, छं० ४१, पृ० २८५, छं० ४९-५०, पृ० २८७; छं० ६३, पृ० २८९ [10] वीर-सिंहदेवचरित, छ० ७, पृ० १७-८, छं० ५८, पृ० ५५, छं० सवैया, पृ० ७३, छं० ३२, पृ० ८५ [11] छंद-प्रभाकर, पृ० २०५ [12] वही, पृ० वही [13] भूषण ग्रथावली, छं० ३२२, पृ० ५७

क्र० सं०	छंद	कवि	विवरण
१०६.	गगोदक सवैया	सूदन-२४ (र र र र र र र र)।[1] युद्ध-वर्णन।[2]	
१०७.	दुर्मिल सवैया	भूषण,-२४ (स स स स स स स स)।[3] गुलाब द्वारा प्रयुक्त दुर्मिल सवैया की गुलाब, प्रथम पक्ति मे २२ वर्ण तथा चतुर्थ पक्ति मे यति भंङ्ग दोष है।[4]	
	चंद्रकला	सूदन	सदानद को इसका चंद्रकला नाम अधिक प्रिय लगा है।
१०८.	मनहरण (मुक्तहरा)	सदानन्द—२४ (ज ज ज ज ज ज ज ज)। यह छद मुक्तहरा का अन्य नाम सूदन है।[5]	
१०९.	मकुदडामर	मान—२४ (स स स स स स स स)। यह छद दुर्मिल सवैया के समान है।[6]	
११०.	सवैया	केशव—केशव के कुछ सवैयों की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :— छद ४, पृ० ३६, प्रति चरण मे ३३, ३१, ३०, ३१ वर्ण हैं। छद ४१, पृ० ४२, प्रति चरण मे ३१, २६, ३१, ३३ वर्ण हैं। छद ४०, पृ० ४१, प्रति चरण मे ३१, ३१, ३१, ३१ वर्ण हैं। छद २५, पृ० ८३-८४ प्रति चरण मे ३१, ३२, ३२, ३१ वर्ण हैं। वीरसिहदेव-चरित के ऊपर दिए हुए छदो के वर्णो की गणना से विदित होता है कि उपर्युक्त सभी छद कवित्त के बहुत निकट पहुँच जाते हैं। संभवतः इस कवि ने इन छदों की रचना इसलिए की थी कि वे सवैया और कवित्त दोनो को एक ही छद मे मिश्रित कर दें। इस धारणा की पुष्टि इससे भी हो जाती है कि केशव ने एक स्थल पर एक ही छद के सवैया और कवित्त दोनों नाम दिए हैं, यथा :— (छंद २५, पृ० ८३-८४)।	

(ओ) वर्ण-मुक्त-वृत्त

१११.	कवित्त	केशव—३१ वर्ण (प्रत्येक चरण मे ८, ८, ८, ७ अथवा १६, १५)।[7] यह छंद इन सभी कवियों को बहुत प्रिय था। भूषण की अधिकाश कविता इसी छद मे हुई है। पद्माकर ने इसका प्रयोग जगद्विनोद मे किया है। जोधराज ने केवल एक ही छंद लिखा है। सूदन ने ६४ स्थानों पर इसका नाम कवित्त और एक स्थान पर घनाक्षरी दिया है। वीरसिंह-देव-चरित मे (पृ० ३७ पर) छद ६३ कवित्त है और उसके नीचे की पक्तियाँ चौपई हैं, जिनका अलग से नाम नहीं दिया गया है।	भूषण, श्रीधर, सदानद, सूदन, गुलाब, पद्माकर, जोधराज,

[1] छंद-प्रभाकर, पृ० २०३ [2] सुजानचरित्र, छं० १२-४, पृ० १६२-३ [3] छंद-प्रभाकर, पृ० २०३ [4] ना० प्र० प०, नवीन-संस्करण, भा० १०, १९८६ वि०, छं० ५७, पृ० २८८ [5] छद-प्रभाकर, पृ० ३०४, सुजानचरित्र, छ० २५, पृ० २०७ [6] छद-प्रभाकर, पृ० २०३; सुजानचरित, छं० २८-३८, पृ० १००-३, छं० ७७-९१, पृ० २५६-६०, [7] छंद-प्रभाकर पृ० २१३-६

क्र० स० छ० कवि— विवरण

मान—मान ने कवित्त नाम का प्रयोग छप्पय के लिए किया है, जिसका उल्लेख छप्पय के अन्तर्गत किया जा चुका है।

मतिराम

घनाक्षरी सूदन।

शृंगार, वदना, वीरता, दान, हाथी-घोडे, बीभत्स रस आदि सभी विषयों के लिए इस छंद का प्रयोग हुआ है, जिनके उदाहरण उक्त सभी कवियों के ग्रथों मे भरे पडे हैं।

११२. सर्वकल्यान-सदानंद—३१ वर्ण (१६, १५)। यह छंद कवित के समान है, पर सदानंद के छंद ८० की तीसरी पंक्ति मे १४, १६ तथा छंद ६८ की प्रथम पंक्ति मे १७, १५ पर यति है, शेष चरण कवित्त के समान है।[1]

सर्वकल्याण

११३. रूपघना सदानंद—(३२ वर्ण अन्त्य लघु)।[2] सूदन ने बत्तीसा कवित्त नाम रूपघनाक्षरी के लिए प्रयुक्त किया है। उनके इन छंदों मे से छंद १३ रूपघनाक्षरी के समान है और छंद १४ मनहरण के अनुकूल।[3]

बत्तीसा कवित्त सूदन (रूपघनाक्षरी)

११४. कवित्त-घनाक्षरी सूदन—सूदन ने एक छंद मे कवित्त तथा रूपघनाक्षरी दोनों का रूपक बाँधा है, जिसका विवरण इस प्रकार है :—

रूपक

प्रथम चरण १७, १४=३१ अन्त मे लघु,
द्वितीय ,, १८, १४=३२ अन्त मे लघु,
तृतीय ,, १७, १४=३१ अन्त मे लघु,
चतुर्थ ,, १८, १४=३२ अन्त मे लघु।[4]

(३) अनिश्चित छंद

(औ) मात्रिक

११५. रसावल मान—१० मात्रा अन्त मे ल ग।

जोधराज १० मात्रा अन्त मे ग।

रसाउलो जटमल। प्रथम चरण मे १६ मात्रा तथा द्वितीय मे १०, अन्त मे ग ल।

११६. विराज मान—१० मात्रा अन्त मे ल ग ग।

११७. बगहस सूदन—प्रति चरण मे १२ मात्रा।

११८ अधमा श्रीधर—१४ मात्रा।

११९. अर्धक श्रीधर—१४ मात्रा। अन्त मे एक चरण (पंक्ति ६५६) को छोडकर शेष स्थलों पर ल ग है। इरविन ने पंक्ति ६४७-६५६ को दोहरा माना है, जो ठीक नही है।[5]

---

[1] ना० प्र० प०, नवीन संस्करण, भा० ५, १९८१ वि०, पृ० १२७-३० [2] छंद-प्रभाकर, पृ० २१६-७ [3] सुजानचरित, पृ० १५ [4] वही, छं० २७, पृ० ७५ [5] जंगनामा, पंक्ति ६४७-६५, पृ० २७; ज० ए० सो० बं०, संख्या LXIX, १९०१ ई०, पृ० २

क्र० सं०	छं०	कवि	विवरण
१२०.	गुणाबेलि	मान	—१४ मात्रा अत मे ग। नख-शिख-वर्णन।[1]
१२१.	दडक दंडका	मान	१४ मात्रा अंत मे ग ल ल अथवा ल ल ल।
१२२.	दडमाली	मान	१४ मात्रा अत मे ग ल ग। नगर वर्णन।[2]
१२३.	नूफा	सूदन	१४ मात्रा अत मे ग ल। युद्ध-वर्णन।[3]
१२४.	हनूफाल	सूदन,	१४ मात्रा अत मे ग ल।
		मान	१२ मात्रा अत मे ग ल।
		जोधराज	१२ मात्रा अत मे ग ल। वीररस-वर्णन।
		गुलाब	१४ मात्रा अत मे ग ल।
१२५.	विश्रद्धरी	मान	१६ मात्रा अत मे ग ल ल अथवा ल ल ल।
	वियक्खरी	जोधराज	१७ मात्रा अत मे ल ग ग।
१२६.	मनोरमा	सूदन	१७ मात्रा अत मे ग तथा १० वर्ण (त त त ग)।[4] यह छद भानु द्वारा दिये हुए मात्रिक तथा वर्णिक मनोरमा छद से भिन्न है।[5]
१२७.	वैतवै	सूदन	१६ मात्रा अंत मे ग ग। भरतपुर की प्रति मे इसका नाम कैतव मिलता है।[6]
१२८.	सादरा	सूदन	२० मात्रा आदि मे ल ल और अंत मे ल ग ल।
१२९.	कामुकी बातांण	मान	२० मात्रा अंत मे ग।
१३०.	अनुगीत	सूदन	२६ मात्रा अत मे ग ल।
१३१.	गीतामालती गीतिमालती	मान	२८ मात्रा अत मे ल ग। कवि ने इस छद मे युद्ध का अच्छा वर्णन किया है।
१३२.	हसचार	मान	३२ मात्रा अत मे ल ल ग।

(अं) वर्णिक

१३३.	विज्जूमाला विद्युन्माला	मान	८ वर्ण (म म ग ग=४, ४) मान ने इस छद मे प्रायः (न न ग ग) का प्रयोग किया है। इस प्रकार यह छद भानु द्वारा दिये हुए लक्षणों से भिन्न है।[7]

टिप्पणी —छद सख्या ११५ से १३३ तक के छदों की परीक्षा नही की जा सकी है क्योंकि आवश्यक लक्षण ग्रथों की प्राप्ति नही हो सकी। जिन लक्षण

---

[1] राजविलास, छं० ६-२२, पृ० १०४-६ [2] वही, छं० ९५-१००, १-१५, पृ० १५-७ [3] सुजानचरित, छंद ७, पृ० ११३ [4] वही, छं० ५, पृ० २२५, [5] छद-प्रभाकर, पृ० ४७, १६७ [6] भरतपुर की प्रति, पृ० ८८, [7] राजविलास, छं० २-२३, पृ० ८०-२; छं० १२-२८, पृ० २२०-१; छंद-प्रभाकर, पृ० १२९

क्र० सं०	छं०	कवि—	विवरण
			ग्रथों की सहायता ली जा सकी है उनमे इनके लक्षण नही मिलते है। अतएव उक्त छदों की नामावली के साथ कवि द्वारा प्रयुक्त उनके रूपो का विश्लेषण कर दिया गया है जिससे उनका रूप समझने मे सहायता मिल सके।
		वचनिका	उपर्युक्त छदों के अतिरिक्त आलोच्यधारा मे वचनिका। (वार्ता) का भी प्रयोग मिलता है। इसके प्रयोग-कर्त्ता जोधराज है। उन्होंने इसके वार्त्ता, वचनिका, वार्त्तिक आदि नामों का प्रयोग किया है। उन्होने इसमे ऋतु-वर्णन, हम्मीर-जन्म आदि का वर्णन किया है।[1]

[1] रघुनाथ रूपक गीताँरो, पृ० २४२-५; हम्मीररासो, पृ० १८, ३२-३, ३४, १८०, १८२, १८५-६।

*

*

अध्याय ७

प्रकृति-चित्रण

सामान्य परिचय—हिंदी साहित्य मे प्रकृति का आलबन रूप अपेक्षाकृत बहुत कम और उद्दीपन तथा अप्रस्तुत-स्वरूप प्राचुर्य से मिलता है। गिनी-गिनाई वस्तुओं के नाम लेकर अर्थ-ग्रहण-मात्र कराना हिंदी कवियो का अधिकतर काम रहा है। उन्होंने सूक्ष्म रूप विवरण और आधार-आधेय की सश्लिष्ट-योजना के साथ बिंब-ग्रहण नही कराया है।

इसके साथ ही राज-सभाओं मे प्रचलित समस्यापूर्त्ति की परिपाटी के परिणामस्वरूप कवि उपमा, उत्प्रेक्षा आदि की बे-सिर पैर की अद्भुत उक्तियों द्वारा वाहवाही लूटते थे। जो कल्पना पहले भावों और रसों की सामग्री जुटाया करती थी वह अब बाजीगर का खेलवाड़ करने लगी थी।

केशव के पीछे रीतिकालीन परपरा मे एक प्रकार से प्रबध काव्यों का बनना बद सा हो गया था। आचार्य बनना प्रमुख समझा जाने लगा, कवि बनना नही। अलकार और नायिका-भेद के लक्षण-ग्रंथ लिखकर अपने रचे हुए उदाहरण देने मे ही कवियों ने अपने कार्य की समाप्ति मान ली थी। ऐसे फुटकर पद्य रचयिताओं की परिमित कृति मे प्राकृतिक दृश्य ढूँढना ही व्यर्थ है। शृगार के उद्दीपन के रूप मे षट्ऋतु का वर्णन अवश्य मिलता है, पर उसमे बाह्य-प्रकृति के रूपों का प्रत्यक्षीकरण मुख्य नही होता, नायक-नायिका का प्रमोद या सताप ही मुख्य होता है। आख्यान-काव्य में दृश्य-वर्णन को बहुत कम स्थान दिया गया है। यदि कुछ वर्णन परपरा-पालन की दृष्टि से है भी तो वह अलकार प्रधान है। उपमा, उत्प्रेक्षा आदि की भरमार इस बात की स्पष्ट सूचना दे रही है कि कवि का मन दृश्यों के प्रत्यक्षीकरण मे लगा नही है। वह उचट उचट कर दूसरी ओर जा रहा है। भक्ति-धारा के कवियों मे तुलसी तथा सूर ने जो प्रकृति-चित्रण किए वे भी परपरा का अनुसरण मात्र समझे जाने चाहिए।[1]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि हिंदी मे प्रकृति-चित्रण प्रायः उपेक्षित रहा है। वह एक बँधी हुई परपरा के अंतर्गत चलता रहा है। मध्य-युगीन वीर-काव्यधारा उसी परिपाटी का अनुकरण करती रही है। आचार्य केशव उस परपरा के सचालक एव पोषक हुए हैं।

अतएव यह कहना अनुचित न होगा कि आलोच्य वीर-काव्य-धारा मे प्रकृति प्रायः उपेक्षित रही है। उसका जो कुछ भी थोडा-बहुत रूप मिलता है, वह एक परपरागत शैली का अनुकरण मात्र है। इन कवियों मे से कुछ—केशव, भूषण, पद्माकर आदि आचार्य और रीति-कवि। अतएव अलकार, चमत्कार आदि की प्रवृत्ति से उनके प्रकृति-चित्रण आक्रांत हो गये थे। इस धारा के कवियो ने प्रकृति-शैली के पौराणिक रूढिगत ढग को भी अपनाया है। उन्होंने उसे विचित्र विचित्र

---

[1] चिन्तामणि, भाग २, पृ० १-४६; हिन्दी-काव्य मे प्रकृति, पृ० २०-४४; हिस्ट्री ऑव् संस्कृत लिटरेचर, भाग १, भूमिका, पृ० CXXVI-CXXIX

कल्पनाओं से सजाया और सँवारा है। प्रकृति को उद्दीपन के रूप मे ही उन्होंने देखा है। प्रकृति के सहचरण-रूप को प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति को इन कवियों ने बहुत कम अपनाया है। सस्कृत-काव्य-परपरा की आम-शैली के प्रभाव से प्रकृति का उद्दीपन-विभाव रुढिवाद होकर मध्ययुग की विभिन्न परंपराओं मे उद्दीपन की विभिन्न प्रवृत्तियो से युक्त फैला हुआ है। प्रकृति नितात अस्वाभाविक स्थिति तक पहुँची हुई है। इसके प्रभाव से प्रस्तुत काव्य-धारा भी अछूती नही रह सकी है। ऋतु-वर्णन अपने दोनों रूपो–उत्तापक और उत्तेजक से युक्त है। तथा ऋतु के अवसर पर विलास एव ऐश्वर्य सबंधी क्रिया-कलापो की योजना की गई है, जिसका प्रकृति से कोई संबंध नहीं रह जाता है। उदाहरणार्थ 'हम्मीर रासो' का प्रकृति-चित्रण इस संबंध मे देखा जा सकता है। साथ ही आरोप के क्षेत्र मे स्थूलता तथा वैचित्र्य की ओर अधिक प्रवृत्ति पाई जाती है।

इस क्षेत्र के मुक्तक ग्रथो मे परिमित क्षेत्र रहने के कारण प्रकृति को अधिक प्रधानता नहीं मिली है साथ ही प्रबध-काव्यों मे राज-दरबारों के प्रभाव के कारण प्रकृति को अधिक प्रधानता नही मिली है। दोनों ही प्रकार के ग्रथों पर ऐश्वर्य-विलास, युद्ध-वर्णन, नायक की प्रशसा, शौर्य-चित्रण, युद्ध-सामग्री, वीरों तथा अन्य वस्तुओं की लबी सूचियों के कारण भी इन ग्रथों मे प्रकृति उपेक्षित रही है। इन कवियों की प्रवृत्ति ठाटबाट की ओर अधिक थी। अपभ्रश कवियों की साहित्यिक परम्परा मे धार्मिक वातावरण और सामन्ती कवियों मे शृगारिक भावना अधिक है। इसका भी प्रभाव इस धारा पर स्पष्ट रूप से वर्तमान है।

इन्हीं कारणो से इस धारा मे प्रकृति प्राय: उपेक्षित रही है। उसका जो कुछ भी उल्लेख किया गया है वह केवल परम्परा का अनुकरण मात्र है। पर कुछ कवियों ने प्रकृति के अच्छे उदाहरण भी अपने ग्रथो मे रक्खे हैं, जिनका यथास्थान विवेचन कर दिया गया है। ये उदाहरण इस बात के द्योतक हैं कि इन कवियो में प्रकृति-चित्रण सबधी मौलिकता तथा स्वाभाविकता का एकदम अभाव न था, पर परम्परा, राजनैतिक उथल-पुथल तथा अन्य परिस्थितियों ने उन्हे ऐसा विवश बना दिया था कि प्रकृति की ओर देखने का उन्हे अवसर ही न मिल सका। इन्हीं कारणों से इस धारा मे प्रकृति का वह स्वरूप मिलता है जिसकी ओर ऊपर सकेत किया जा चुका है।

नीचे प्रत्येक कवि द्वारा निश्चित प्रकृति का सक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है, जिससे इस काव्य धारा के प्रकृति-चित्रण का वास्तविक ज्ञान पाठक को हो सके।

केशव

केशव सस्कृत के प्रकांड पडित तथा हिंदी के आचार्य थे। इसीलिए अपनी आचार्यत्व-भावना के वशीभूत होकर संस्कृत-लक्षण-ग्रथों के आधार पर उन्होंने कवि-प्रिया मे वर्ण्यों की एक तालिका उपस्थित की है। उसमे उन्होंने उन वस्तुओं के नाम गिना दिए हैं, जिनका वर्णन कवि को करना चाहिए। अपने इन्हीं लक्षणों के अनुसार परवर्ती सस्कृत-कवियों की शैली के अनुकरण पर केशव ने प्रकृति-चित्रण किए हैं। यद्यपि 'कवि-प्रिया' की रचना उनके आलोच्य ग्रंथों के पश्चात् हुई है, पर उसका आधार सस्कृत-लक्षण-ग्रथ थे, जिनके सिद्धात आलोच्य ग्रथ निर्मित करते समय केशव के मस्तिष्क मे वर्तमान थे। इसीलिए 'कवि-प्रिया' मे कथित प्रकृति-वर्णन संबधी विभिन्न उदाहरणों को देते हुए आगे के पृष्ठों मे केशव के आलोच्य ग्रथों के प्रकृति-चित्रण का विवेचन किया जा रहा है, जिससे उनके प्रकृति-वर्णन सबधी विचार स्पष्ट रूप से पाठक के समक्ष स्पष्ट हो सके।

'वीरसिंहदेव-चरित्र' मे सूर्योदय, वेतवा, सगम, वर्षा तथा शरद्-ऋतु के वर्णन मिलते हैं। इन पर नीचे क्रमानुसार विचार किया जा रहा है :—

सूर्योदय—केशव ने सूर्योदय का वर्णन करने के लिए अरुणता, पय-पावनता, मुनिकृत शंख-शब्द, वेद-ध्वनि पथ पर, यात्रियो का आना-जाना, कोक, कोकनद के सताप का दूर होना, कुवलय, तारा आदि के दु:ख का उल्लेख करना माना है।[1]

वीरसिंहदेव-चरित्र मे वर्णित सूर्योदय के कतिपय छंद रामचन्द्रिका मे ज्यो के त्यों मिलते हैं।[2] इनका यह सूर्य-वर्णन आलकारिक है। एक ही पद्य मे कतिपय अलकारों का मिश्रण करके केशव ने वर्णन को गौण बना दिया है। उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक, सदेह, श्लेप आदि अलकारों के फेर मे पड़कर कवि कहीं पर सूर्य को "अरुण मुखवाला वानर" और कहीं गगन की अरुणिमा को "बडवानल ज्वाल" की अद्भुत चमत्कारपूर्ण कल्पना करने मे अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ बैठता है।[3] "इस प्रसग मे वह स्वतः सम्भावी कल्पना के आधार पर कालिदास और भारवि का अनुसरण करते हुए प्रतीत होता है। इस वर्णन मे माघ से श्रीहर्ष की ओर जाने की कवि की प्रवृत्ति है। इन समस्त शैलियों के सम्मिश्रण का कारण यही है कि केशव ने इसे सभी संस्कृत कवियो से लेने का प्रयास किया है और साथ ही अलकारवादी भी हैं।"[4] इस कथन को समझने के लिए सूर्योदय-वर्णन का यह छद देखिए :—

"अरुन-गात अति प्रात पद्मिनी-प्राननाथ भय।
जनु केसव ह्वै गये कोकनद कोक प्रेममय॥
किधौ सक्र को छत्र मढ़यौ मानिक-मयूप-पट।
परिपूरन सिंदूर पूर कैधौं मंगल घट।
सुभ सोभित कलित कपाल के किल कापालिक काल को।
ललित लाल कैधौ लसत दिग भामिनि के भाल को॥"[5]

इस छद मे सूर्य-वर्णन की इतनी प्रधानता नहीं है जितनी होनी चाहिए थी। कवि ने रूपक तथा संदेह से पुष्ट उत्प्रेक्षा का प्रयोग करने के लिए चमत्कारपूर्ण उक्तियो की ओर अधिक ध्यान दिया है।

नदी-वर्णन—केशव ने नदी के चित्रण के प्रसग मे ये वर्ण्य वस्तुयें मानी हैं :—

"जलचर हय गय जलज तट, यज्ञ कुंड मुनिवास।
न्हान दान पावन नदी, वरणी केसौदास॥"[6]

इसी के आधार पर इन्होने 'वीरसिंहदेव-चरित' मे प्रयाग के सगम और बेतवा नदी का वर्णन किया है।

संगम-वर्णन—केशव ने सगम-वर्णन मे नरनारी के स्नान, आरती, वीरसिंहदेव द्वारा किए गए राजसी दान तथा दानार्थ लाए गए सुसज्जित हाथी को जल मे प्रविष्ट कराने के पश्चात् विविध उत्प्रेक्षापूर्ण, उक्तियाँ कही हैं।[7] यथा :—

---

[1] कवि-प्रिया, छं० २२-३, पृ० ५२ [2] वीरसिंहदेवचरित्र, छं० २२-६, पृ० ६८-६; रामचंद्रिका, पूर्वार्द्ध, छ० ८-१४, पृ० ५७-६ [3] वीरसिंहदेव-चरित, छं० २६-७, पृ० ६६ [4] काव्य और प्रकृति, पृ० ३६७, [5] वीरसिंहदेव-चरित, छं० २४, पृ० ६८-६ [6] कवि-प्रिया, छं० १२, पृ० ५० [7] वीरसिंहदेवचरित, छं० १२-४३ पृ० ३०-२

"सुभ कैलास सिला के माँह, मानहु सजल जलद की छाँह।
सूरज सेत सेज मन हरै, तापर जनु शनि क्रीड़ा करै॥"[1]

केशव ने सम्भवतः कालिदास का अनुकरण करते हुए सगम का वर्णन किया है। कालिदास का सगम वर्णन उपमा प्रधान होने पर भी अधिक स्वाभाविक है।[2] केशव का यह चित्रण परिपाटी का अनुसरण मात्र, नगर निकट संबधी नदी की शोभा एव राजसी ठाट-बाट से युक्त और अलकार-प्रधान है।

वेतवा-वर्णन—केशव के वेतवा नदी[3] और रामचद्रिका के गोदावरी[4] चित्रण मे बहुत कुछ साम्य है। इस वर्णन मे भी धार्मिक भावो एवं अलकारों का प्राधान्य है।

वर्षा-वर्णन—केशव ने वर्षा-वर्णन के लिए यह आदर्श माना है :—

"वर्षा हंस पयान बक, दादुर, चातक मोर।
केतक, कंज कदंब जल, सौदामिनि घनघोर॥"[5]

इसी आधार पर उन्होंने वर्षा का चित्रण किया है। वीरसिहदेव-चरित[6] का वर्षा-वर्णन 'रामचन्द्रिका'[7] के वर्णन के समान है। दोनो मे एक ही भावना को प्रधानता दी गई है। पुराणों में वर्णित वर्षा के समान, अलकार, उद्दीपन तथा नायिका-वर्णन के आभास से वह युक्त हे, जैसा कि नीचे के उदाहरण से सिद्ध होता है :—

"कुसल कालिका सी सोहियैं। नीलकंठ तन मन मोहियैं।
परकीया सी अभिसारिनी। सतमारग की विध्वंसिनी॥'[8]

शरद्-वर्णन—केशव का शरद्-वर्णन भी परपरा के संकीर्ण मार्ग मे आबद्ध है। इन्होंने इस ऋतु के ये वर्ण्य विषय माने हैं :—

"अमल अकाश प्रकाश शशि, मुदित कमल-कुल कास।
पंथी पितर पयान नृप, शरद सुकेशवदास"॥[9]

इसी आदर्श के आधार पर इन्होंने शरद्-ऋतु का वर्णन किया है। वीरसिंह-देवचरित[10] तथा रामचंद्रिका[11] का शरद्-वर्णन एक ही है। यह वर्णन भी अलंकारों पर आश्रित है। शरद् के विविध रूपकों का प्रयोग किया गया है, जैसे सुंदरी युवती तथा नारद-मति आदि, तथा :—

"चिकुर चौंर, रुचि चंदाननी। कुंद दंत दुति मदमोचनी।
भृकुटि कुटिल सुरधनु दुति सनी। खजरीट चचल लोचनी॥
बिंबाधर शुक नासा बनी। तिलक चिलक रुचि जाति न भनी।
अंबर लीन पयोधर धरै। जलज हार मनु हरपित करै॥"[12]

---

[1] वीरसिंहदेव-चरित्र पृ० ३१ [2] रघुवंश, सर्ग १३, श्लोक ५४-७, पृ० ४१६-२०, [3] वीरसिंहदेव-चरित, छं० ३०-४, पृ० ६६-७० [4] रामचन्द्रिका, पूर्वार्द्ध, छं० २३-६, पृ० १७१-३, [5] कवि-प्रिया, छं० ३१, पृ० ५४ [6] वीरसिंहदेव-चरित, छं० १-१५, पृ० ६७-८ [7] रामचन्द्रिका, पूर्वार्द्ध छं० ६-२२, पृ० २०४-११ [8] वीरसिंहदेव-चरित, पृ० ६७ [9] कवि प्रिया, छं० ३३, पृ० ५४ [10] वीरसिंहदेव-चरित, छं० १५-२१, पृ० ६८ [11] रामचन्द्रिका, पूर्वार्द्ध, छं० २३-७, पृ० २११-२ [12] वीरसिंहदेव-चरित, छं० १६-७, पृ० ६८,

इससे प्रत्यक्ष है कि केशव के ऋतु-वर्णन भी उसी प्रकार के हैं, जिस प्रकार के अन्य वर्णन। इन्होंने कहीं पर भी ऋतुओं संबंधित स्वाभाविक प्राकृतिक रमणीयता का काव्योचित वर्णन नहीं किया है, अतएव यह स्पष्ट हो जाता है, कि उनका मन प्रस्तुत प्राकृतिक विषयों की रम्यता में मग्न होना नहीं जानता था। वे अप्रस्तुतों की कौतूहलपूर्ण योजना में लगे रहते थे। विविध अलंकारों, उद्दीपन, नीति आदि की दृष्टि से किए गये 'भागवत' और 'मानस' के समान उनके प्रकृति-चित्रण मिलते हैं। केशव परंपरा के पूरे अनुयायी एवं बाण आदि संस्कृत कवियों से पूर्णरूपेण प्रभावित थे। डा० बड़थ्वाल का यह मत कि 'प्रकृति के बीच में वे आँखें बंद करके जाते थे'[1] ठीक ही है। 'वीरसिंहदेव-चरित' तथा 'रामचंद्रिका' में एक ही प्रकार के अधिकांश प्राकृतिक चित्रणों का पारस्परिक साम्य इस बात की पुष्टि करता है, कि कवि एक ही परंपरा एवं भावना के वशीभूत था। इसीलिए उक्त ग्रंथों में उससे इस प्रकार की आवृत्ति बन पड़ी है। प्राकृतिक दृश्यों के सौंदर्य की विभिन्न दृष्टियों से प्राप्त अनुभूति का हृदय की रागात्मिका वृत्ति से सामंजस्य स्थापित करके मनोरम प्राकृतिक-चित्रण उपस्थित करने की उनमें लेशमात्र भी क्षमता न थी।

भूषण

भूषण ने भी इस क्षेत्र में अन्य कवियों के समान कवि-परम्परा का अनुकरण किया है। "शिवराजभूषण" में विविध अलंकारों के उदाहरण देते समय उन्होंने प्रकृति का उल्लेख किया है, पर उसे वास्तविक प्रकृति-चित्रण नहीं कहा जा सकता। अपने नायक का यश-सौरभ-विकीर्ण करना ही उनके काव्य का मुख्य उद्देश्य था। उनके प्रकृति वर्णन उद्दीपन एवं अलंकार शैली के अन्तर्गत ही माने जाने चाहिए। उनके रायगढ़ वर्णन में राजसी ठाट-बाट, एवं शृंगारिक वर्णन ही प्रधान हैं, यथा :—

"भूषन भनत जहँ परसि कै मनि पुहुप रागन की प्रभा।
प्रभु-पीतपट की प्रकट पावत सिंधु, मेघन की सभा॥
मुख नागरिन के राजही कहुँ फटिक-महलन संग मै।
विकसंत कोमल-कमल मानहुँ अमल-गंग-तरंग मै॥"[2]

इसी प्रसंग में उपवन का वर्णन करते हुए भूषण ने वृक्षों, लताओं तथा पक्षियों के नाम गिनानेवाली परिपाटी का अनुकरण किया है। उनके नाम गिनाकर उन्होंने अपने कार्य की इतिश्री समझी है। वे वृक्षादि वहाँ उत्पन्न होते हैं या नहीं इससे उन्हें कोई प्रयोजन नहीं है। दाख, दाड़िम सेव आदि उत्तरी भारत के वृक्ष दक्षिण में लगाकर उन्होंने देश-दोष एवं अपने अज्ञान का परिचय दिया है। परम्परागत लकीर का पीटना ही उन्होंने प्रधान कर्त्तव्य माना है, जैसा कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है :—

"कहुँ केतकी कदली करौंदा कुंद अरुन करवीर है।
कहुँ दाख दाड़िम सेब कटहल तूत अरु जंभीर हैं॥
कितहूँ कदंब-कदंब कहुँ हिंताल ताल तमाल हैं।
पीयूष ते मीठे फले कितहूँ रसाल रसाल हैं॥

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग १०, ११८६ वि०, पृ० ३६४ [2] भूषण-ग्रंथावली, छं० १८, पृ० ४

लसत बिहंगम बहु लवनित बहु भाँति बाग महँ।
कोकिल कीर कपोत केलि कल-कल करंत तहँ॥
मंजुल महिर मयूर चटुल चातक चकोर-गन।
पियत मधुर मकरंद करत झंकार भृंग घन॥
भूषन सुवास फल फूल जुत छहुँ रितु बसत बसंत जहँ।
इम राजदुग्ग राजत रुचिर, सुखदायक सिवराज कहँ॥"[1]

इन उदाहरणों से इस कथन की पुष्टि हो जाती है कि भूषण ने आचार्यों की बतलाई हुई आप्त वाक्य वाली परिपाटी का अनुसरण किया है।

अप्रस्तुत-पद्धति—उनके द्वारा चित्रित प्रकृति के रूप अलकार-परम्परा के अन्तर्गत आते हैं। विविध अलंकारों के उदाहरणों के लिए शिवाजी के गुणों को चुनकर भूषण ने उपमान आदि प्रकृति से लिए हैं। इस शैली मे भूषण ने प्रथम प्रतीप, चतुर्थ प्रतीप, पचम प्रतीप, उपमेयोपमा, ललितोपमा, रूपक (कलियुग-रूपक, जलधि-रूपक) परिणाम, शुद्धापह्नुति, गम्योत्प्रेक्षा, भाविक, अत्युक्ति, अपह्नुति, यमक, [illegible], उपमा, विरोधाभास, उदाहरण आदि अलकारों को लिया है।[2] इतने अलकारों के उदाहरणों के लिए प्रकृति के विभिन्न उपमानों का ग्रहण करना कवि की इस क्षेत्र मे असाधारण प्रतिभा का परिचायक है।

भूषण वीर रस की अनेकरूपता को परिपूर्ण करने के लिए सश्लिष्ट-योजना का सहारा ले सकते थे। पर उन्होने सब स्थानो पर स्फुट योजना ही का आश्रय ग्रहण किया है। प्रबध-काव्यों मे ही नही, स्फुट पद्यों मे भी सश्लिष्ट-चित्रण सफलतापूर्वक किए जा सकते हैं। यद्यपि यह सत्य है कि मुक्तक-रचना मे क्षेत्र सीमित रहता है। भूषण ने रीति-कालीन शृगाररस के प्रभाव से ऊँचे उठकर वीररस प्रधान काव्य-रचना की, पर प्रकृति-चित्रण मे उन्होने केवल परपराभुक्त-शैली का ही अनुकरण किया, उसमे नवीन योजना कही-नही की। केवल इतना ही उनके पक्ष मे कहा जा सकता है कि अपने नायक का यशगान, अलकार का प्राधान्य, मुक्तक-शैली तथा परम्परागत परिपाटी के कारण प्रकृति उनके काव्य मे उपेक्षित तथा सकुचित सीमा के भीतर प्रयुक्त हुई। पर परिपाटी के अनुसार प्रकृति-चित्रण करने मे वे अपनी धारा के एक प्रमुख कवि हैं।

मान

ऋतु-विलास वर्णन—मान कवि ने अपने 'राज-विलास' मे ऋतु-विलास[3] का वर्णन किया है, जो अत्यन्त प्रसिद्ध है, पर इस वर्णन मे इस कवि ने नाम गिनाने की परिपाटी का ही अनुकरण किया है, यथा :—

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० २१-३, पृ० ४-५, (अन्य उदाहरणों के लिए देखिए छं० १६, २०, २२) [2] वही, छं० ४२, पृ० ७, छं० ४८, पृ० ८; छं० ५०, पृ० ८-९; छं० ५४, पृ० ९ छं० ५९, पृ० १०, छं० ६१, पृ० १०-१, छं ६९, पृ० १२ छं० ८१, पृ० १५, छं० १०६, पृ० १९, छं० ३३३-४, पृ० ५९-६०, छं० ३४२ पृ० ६१, शिवा बावनी, छं० २४, पृ० ७८, छं० २६-७, पृ० ७९, छं० ३८-९, पृ० ८३-४, छं० ४५, पृ० ८५-६, फुटकर, छं० ९, पृ० ९४ [3] राजविलास, वि० ४, छं० १-२३, पृ० ७९-८४

"अंबर बिलगि अंब, करनी बहु कदंब । आंबिली तरु असोक, थठ्ठे सु अज्ञान थोक ॥५॥
आँविली अगछि अैंन, चंपकइ दोप चैन । अखि अखरोट अति, चारु चार जीह चखि ॥६॥
केतकी रु कचनार, केवेरा प्रमोद कार । पारिक पिंड पजूर, भाषिये अगूर भूरि ॥८॥
ज्योजा तूत नालिकेर, गुलतररा गिर मेर । चंदन महकक चारु, दारिम सु देव दारु ॥१०॥"[1]

कवि ने इस वर्णन मे दूरदर्शिता से काम नही लिया है और कदब, अशोक, अखरोट, पिड-खजूर, अगूर, चंदन, देवदारु आदि वृक्षो को उदयपुर के उपवन मे लाकर लगा दिया है। इससे आगे के पद्यों मे बादाम, सुपारी आदि का उल्लेख भी मान की असावधानी का परिचायक है। इस कोरी नामावली को परंपरानुसार न गिनाकर कवि उनका बिंब-ग्रहण करा सकता था, पर उस ओर से उसने अपनी आँखें एकदम बंद कर ली है।

उस वाटिका के पक्षियों का वर्णन भी परिपाटी के अनुसार ही हुआ है पर चिडियो के स्वभाव सबंधो कुछ अच्छी उक्तियाँ इस कवि से बन पडी है, यथा :—

"काबरि कपोत-पोत कोरि, तू ती फरू लेत तोरि ।
लावारु तीतर लख, चंचु चारु मेवा चख ॥१७॥"[2]

इससे आगे चलकर महल, हाथी, घोडा, बगला आदि का उल्लेख करके इस कवि ने राजसी ठाट-बाट को ही प्रधानता दी है। मान कृत यह सपूर्ण प्रकृति-वर्णन परंपरा का अनुकरण मात्र होते हुए भी अलंकार एव चमत्कारपूर्ण शैली से सर्वथा मुक्त है। वह राजसी उपवन का चित्रण है। इस दृष्टि से विचार करने पर विदित होता है कि इस उपवन-चित्रण मे केवल उन्ही उपकरणों का उल्लेख किया गया है, जिनके ऐसे अवसरों पर उल्लेख करने की परंपरा चली आती थी। इस प्रसंग मे पक्षियो के कलरव, पुष्पा के प्रफुल्लित होने, शीतल-मंद-सुगंध वायु के प्रसरण, ऋतु-वर्णन आदि के द्वारा बिंब-ग्रहण कराया जा सकता था, पर मान कवि ऐसा करने मे असफल रहे हैं।

वर्षा-वर्णन—'राज विलास' मे एक स्थल पर वर्षा-वर्णन अत्यत स्वाभाविक एवं मनोरम बन पडा है।[3] आसाढ मे आकाश मे उठते हुए मेघों का चित्र अंकित करते हुए कवि कहता है :—

"अति पावस उल्हरिय करिय कंठल धुरकाली ।
आसा बंधि असाढ़ हरप करसणि कर हाली ॥
बद्दलं दल बिथ्थुरिय चारु चपला चमकंतह ।
गज्ज घोप गम्भीर मोर गिरि सोर मचंतह ॥
आदीत सोम छवि आवरिय घण आयौ घमसाण घण ।
बरसंत बुन्द बड-बड़ विमल जलधर बल्लभ जगत जण ॥३१॥"[4]

कहीं-कहीं पर मान ने प्रकृति-चित्रण सूक्ष्म-निरीक्षण एव विस्तृत विश्लेषण की प्रतिभा का भी परिचय दिया है, यथा :—

---

[1] राजविलास, पृ० ८० [2] वही, पृ० ८१ [3] वही, छं० ३८-४७, पृ० ८-१०
[4] वही, पृ० ८

"जल बहत जोर पलहलत खाल, पय धार पतत दगगग प्रनाल।
पप्पीह चीह पिउ पिउ पुकार, भूरूह विहस्सि अट्ठार भार ॥४३॥
× × ×
टपकंत बुंद तरु पव्व डाल, मंडव सुकीन द्रुम बल्लि माल।
बग टग लगाय पावस बइट्ठ, दारा सु बकी पतिव्रता दिट्ठ ॥४२॥
सारंग करत गायन सुजान, रीझंत जेह सुनि राय राण।
मल्हार घटत माचंत मेह, नर नारि चित्त बाधंत नेह ॥४७॥"[1]

इस सपूर्ण वर्णन द्वारा मान ने वर्षा का बिंब-ग्रहण कराने मे पूर्ण सफलता प्राप्त की है और उसके प्रायः सभी प्रमुख अंगों की विवेचना करके अपनी सूक्ष्म बुद्धि का परिचय दिया है।

पुराणों मे वर्णित कृष्ण द्वारा गोवर्द्धन उठाने के कथानक को लेकर मान कवि ने वर्षा का रूपक बाँधा है। इसका परिगणन परम्परागत पौराणिक ऋतु-वर्णन के अतर्गत ही किया जाना चाहिए।[2] इसी प्रकार राजसर प्रसंग मे वर्षा का केवल उल्लेख भर किया गया है, उसका विस्तृत एवं स्वाभाविक वर्णन नही।[3]

देवमूर्त्ति-अर्चना मे चंपक, गुलाब आदि सुरभित पुष्पों का चढाया जाना और उन पर भौरों का मडराना दिखलाया जाना, कुछ अस्वाभाविक सा लगता है। अच्छा होता यदि भौरो का उल्लेख किसी वाटिका के प्रसंग म किया गया होता। देवालय प्रसग मे यह कुछ अस्वाभाविक तथा परिपाटी-पालन का परिचायक है।[4]

कवि मान ने चित्रकोट-वर्णन[5] मे सरोवरो, कुण्डों आदि; उदयपुर[6] के सुंदर वर्णन; राजसरोवर[7] के बनवाने के प्रसग मे नदी तथा पर्वत आदि का उल्लेख किया है, पर वह सभी प्रासगिक एव परपरागत है। कवि का ध्यान प्रकृति-चित्रण की ओर अधिक नही गया है। ऐसा विदित होता है कि उन प्रसगों मे उनकी बुद्धि अपने प्रधान विषयों—उदयपुर, राजसरोवर की नीव, बाँध बाँधने तथा महल बनवाने आदि मे अधिक रमी है, क्योंकि उन्होंने इन सभी का वर्णन सूक्ष्म-विस्तारयुक्त किया है।

मान प्रकृति के कोमल एव मधुर रूप का वर्णन करने मे जितने सिद्धहस्त थे, उतने ही चतुर उसके उग्र एवं रूक्ष स्वरूप के चित्रण से भी। मरुभूमि के निवासी इस कवि के लिए यह स्वाभाविक भी था। दुर्भिक्ष[8] का वर्णन करते समय उन्होंने प्रकृति के इसी उग्र रूप को लिया है। वर्षा के न होने से मरुस्थल की दशा नीचे के पद्य मे देखिए :—

"पश्चिम पवन प्रचंड बजत—अहिनिसि सु बंध बिनु।
अथिर उतारु आभ प्रात-प्रहरेक बहत पुनि ॥
क्रूर अधिक करि किरन तपत मध्यानहि तापन।
प्रचलित पश्चिम पहुर अनिल शीतल असुहावन ॥

---

[1] राजविलास, पृ० ६-१०; (देखिए अध्याय ५, अलंकारांतर्गत रूपक का उदाहरण, पृ० १०८) [2] राजविलास, छं० ५८, पृ० १२८ [3] वही, छं० १४६, पृ० १४२ [4] वही, छं० ८१-२, पृ० १३२ [5] वही, छं० २-३, पृ० १६ [6] वही, छं० ६०-१४७, पृ० ४३-५४ [7] वही. छं० १०५-११. पृ० १३५-६

निशि तार नक्षत्र निर्म्मल निखरि बद्दल विद्युत गाज बिन ।
भय भीत चिन्ह दुरभक्ष के देखि सकल जग भौ दुमन ॥"[1]

मान ने 'नख-शिख' वर्णन मे प्रकृति से उपमान लेने की पद्धति का भी अनुकरण किया है, जैसा कि इस उदाहरण से स्पष्ट है :—

"अरबिद पुष्प कि मीन अक्ष सु मचल षंजन पेषियं ।
सारंग शिशु दृग सरिस सुन्दर रेह अंजन रेषियं ॥
संभृत्त जुग जनु सुधा संपुट विश्व सकल विहारनी ।
अद्भुत अनूप मराल आसनि जयति जय जगतारनी ॥२४॥"[2]

सेना के प्रयाण मे हाथियों की उपमा मेघों से देना, सेना को भादौ की मेघ-माला मानना, तथा मद चूते हुए हाथियों के पास भौरों का गुजारना आदि परंपरागत-अप्रस्तुतो का प्रयोग भी मान कवि ने किया है।[3]

अप्रस्तुत मे अतिशयोक्ति के प्रयोग का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है :—

"महियल जितै मंडान देखियें जिते दिगन्तह ।
सूर जिते संचरैं पवन जिते पसरत्तह ।
जिते दीप अरु जलधि जानि ससि तारक जहँ लग ।
जिते वृष्टि जलधार जिते नर नारि रूप जग ॥
इल जितीक अष्ट कुली अचल बसुमति देखिय सम विषम ।
कवि मान कहे, दिट्ठो न कहुँ सरवर राज समुद्द सम ॥१७२॥"[4]

उपर्युक्त सक्षिप्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि कवि मान ने प्रकृति के विविध रूपों को विभिन्न दृष्टियों से देखने और समझने का प्रयत्न किया है। इन्होंने परम्परागत नाम गिनाने की परिपाटी, नखशिख-वर्णन मे प्राकृतिक उपमान, अप्रस्तुत-पद-योजना, प्रकृति के उग्र-रूप तथा आलबन आदि सभी स्वरूपो को अपनाया है। पर उनके द्वारा चित्रित प्राकृतिक विवरण अधिकांश परम्परागत ही है। किंतु, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, उनमे सश्लिष्ट योजना की योग्यता थी, जिसका इन्होंने यथाअवसर परिचय भी दिया है। परम्परा के अनुकरण मे उन्होंने केशव और भूषण की अलंकार-प्रधान शैली को नही अपनाया है। इन कवियों ने जिस अलकृत पद्धति का अनुकरण किया है, उसमें अलकारो के दुर्वह भार से दबकर प्रकृति का रूप विकृत हो गया है। मान ने उनके विपरीत अपनी सीधी-सादी, सरल शैली मे प्रकृति-चित्रण किया है और ऊहात्मक काल्पनिक उडान का प्रायः कम आश्रय लिया है। इतना होते हुए भी यह कहना ही पडेगा, कि यह कवि अपने ग्रंथ मे प्रकृति को अधिक स्थान दे सकता था, पर उसने ऐसा नहीं किया। सम्भवतः इसका कारण यह हो कि वह चरित्र-काव्य लिख रहा था, प्रकृति-चित्रण उसका प्रधान विषय नहीं था। तो भी उसके कथानक मे ऐसे अनेक अवसर आए है, जहाँ पर प्रकृति

---

[1] राजविलास छं० ११८, पृ० १३६ [2] वही, पृ० ५; (अन्य उदाहरणों के लिए देखिए, छं० १५-३०, पृ० ३-६; छं० ६-२२, पृ० १०४-६) [3] वही, छं० ८७, पृ० १६१-१; छं० ७, ३०, पृ० १८६ [4] वही, पृ० १४८

के सुन्दर चित्र चित्रित किए जा सकते थे, जिनकी ओर से कवि प्रायः उदासीन रहा है। इन दोषों और अभावों के होते हुए भी प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से मान अपनी धारा मे एक प्रमुख कवि हैं, इसके मानने मे किसी को सकोच नही हो सकता।

श्रीधर

श्रीधर ने अपने छोटे से काव्य 'जगनामा' मे प्रकृति की उपेक्षा की है। यत्र-तत्र सेना और युद्ध के वर्णन मे प्रचलित वर्षा, मेघ, घटा आदि के रूपक लेकर उसने अप्रस्तुत की आयोजना की है, यथा :—

"बखतर पोस पखरैत फील स्वारन की,
कारी घटा भारी ज्यों पयोद प्रलै काल को।
श्रीधर भनत गोला बान सर झर भर,
बरखत थाँभै को करैरी तरबाल को॥"[१]

श्रीधर ने हाथियों का वर्णन करते समय उत्प्रेक्षा की सहायता से अप्रस्तुत का सुदर आयोजन नीचे दी हुई पंक्तियों मे किया है :—

"गडादार घेरे सिरी कट्ट बंटा। गजे मेघ मानों बजें घोर घंटा॥"[२]

तथा

जनु घटा असाढी फौजे वाढ़ी फतह सु ठाढ़ी पुर गाजैं।"[३]

एक स्थल पर श्रीधर ने युद्ध मे स्रवित होते हुए रक्त को झरना और नदी का रूपक देकर अच्छी उत्प्रेक्षा सबधी उक्ति कहीं है :—

"मदभरे भ्रमत खरे अघाइ अघाइ करिवर थरि अरै।
सिर सरत श्रोनित धार मानहुँ पहार सों झरना झरै॥
बढ़ि चली लोहुन की नदी लहरैं लखे कहि को तरै।
तेहि तीर दलदल मास को बल ठान काहू को परै॥"[४]

अन्त में श्रीधर के सबध मे केवल इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इन्होंने प्रकृति की अवहेलना की है और जो कुछ प्रासगिक रूप से उसका उल्लेख किया है वह परिपाटी का अनुसरण-मात्र है।

सूदन

सूदन ने अपने काव्य मे प्रकृति-चित्रण, ऋतु-वर्णन आदि को कोई विशेष स्थान नहीं दिया है। इस ग्रथ मे प्राकृतिक वर्णन के अभाव का कारण कथानक की इतिवृत्तात्मकता तथा युद्ध-वर्णन की प्रमुखता है। यद्यपि सूदन ने अन्य क्षेत्रों मे अपनी रुचि-वैचित्र्य तथा बहुज्ञता का परिचय दिया है, पर प्रकृति के प्रति उन्होंने उपेक्षा-भाव ही प्रदर्शित किया है। इन्होंने प्रासगिक ढंग से परम्परागत अप्रस्तुत-योजना तथा नख-शिख-वर्णन मे प्रचलित उपमानो को ही सुजान चरित्र में अपनाया है।

---

[१] जंगनामा, पंक्ति १४६१-६४, पृ० ६०-६१ [२] वही, पंक्ति ५४१-२, पृ० २३ [३] वही, पंक्ति १२०८, पृ० ४६ [४] वही, पंक्ति १४०१-४, पृ० ५७

सेना के प्रयाण तथा युद्ध-वर्णन में वर्षा-मेघ आदि के प्रचलित रूपक का उत्प्रेक्षा आदि के साथ सूदन ने बहुत प्रयोग किया है, यथा :—

"जब कूच कियौ इस वीर सनं। तब पीत पताकन सोभ बनं॥
जनु चचल दामिन सोभ घनं। हय टापन सौं कहुँ होत ठनं॥
+ + +
बहु सेनु दरेरनु देति चली। मनु सावन की सरिता उम्ली॥
अहि सैल मनौ मुख काढ़ि रहे। अरु ढालनु कच्छप रूप गहे॥
× + ×
जल जोरि तुरंगम देखि रहे। मनु मीन जहाँ धुज देह लहे॥
द्रुम ज्यौं द्रुम ढाहति आवत है। इन सैन नदी सु कहावत है॥"[1]

युद्ध-वर्णन मे प्रयाग के रूपक का कतिपय स्थलो पर इन्होंने सुंदर प्रयोग किया है।[2]

युद्ध-क्षेत्र को काल की वाटिका मानकर कवि ने एक अत्यत सुदर एव स्वाभाविक उत्प्रेक्षा-युक्त रूपक बाँधकर प्रकृति-वर्णन किया है।[3]

युद्ध मे बसत ऋतु की कल्पना भी कवि ने उत्तम ढग से की है, यथा :—

"गोली भौंर सी भननात। पिक ज्यौं गाल कुहकत जात॥
धूवां त्यौं पराग उड़ात। गंधक गंध सौरभ गात॥
टुट्टत तरवरन की डार। लोई होतु है पतझार॥
देखैं ए उदीपन साज। गढ़ ज्यौं सदन है रितुराज॥
तासौं ह्वै सकाम सरीर। धाए सामुहैं जदुवीर॥
गढ़ की भूमि सो नव नारि। भूषन वस्त्र शस्त्र विचारि॥
बुरजै उरज ही के भाइ। तिनकौं गह्यौ चाहतु धाइ॥"[4]

कहना न होगा कि युद्ध के वर्णन मे प्रकृति का पुट देकर उद्दीपन की दृष्टि से कवि द्वारा यह छंद लिखा गया है। अन्यत्र श्लेष की सहायता से बसंत का रूपक भी अच्छा बन पड़ा है।[5]

कृष्ण-रूप-वर्णन मे इस कवि ने परम्परागत प्राकृतिक उपमानों को अपनाया है, यथा :—

"लोचन नील कमल से सोहैं भौंहैं अलि-अवली सी।
जो ब्रज वधू निहारति उर मैं सो रहि जात छली सी॥"[6]

"तहां कूप कासार बापी जु सूझै। सबै मानसर की प्रभा कौं न बूझै॥

---

[1] सुजानचरित्र, छं० १०, पृ० ४६, (वर्षा सबंधी रूपक तथा उत्प्रेक्षा के अन्य उदाहरणों के लिए देखिए छं० ६, पृ० २४; छं० ७, पृ० ३२, छं० ४, पृ० ७१, छ० १३, पृ० १८७; छं० १२, पृ० १६२; छं० १३, पृ० २०३; छं० २४, पृ० २०६) [2] देखिए अध्याय ५, अलंकारांतर्गत रूपक का प्रथम उदाहरण, पृ० ११४ [3] वही, पृ० वही, उदाहरण द्वितीय, (अप्रस्तुत रूप में प्रकृति के प्रयोग के अन्य उदाहरण देखिए छं० ४, पृ० ८; छं० ३, पृ० ६३; छं० १०, पृ० ६६, छं० ७, पृ० १००; छं० १, पृ० २२४ [4] वही, छं०७, पृ० ११४ [5] वही, छं० ३५, पृ०२२३ [6] वही, छं० ३७, पृ० २२६; (अन्य उदाहरणों के लिए देखिए छं० ३६-४०, पृ० २३०, छं० ८०, पृ० २५५)

सूदन ने ब्रज का वर्णन भी किया है, पर उसमे भी परम्परा का अनुकरण किया है। उन्होने नाम गिनाने की साधारण परिपाटी ही अपनाई है। उस वर्णन मे नगर, दुर्ग आदि के चित्रण की ही प्रधानता है, पर उसमे कुछ पंक्तियाँ उत्तम भी बन पडी है, जैसे :—

तहाँ कूप कासार बापी जु सूझै। सबै मानसर की प्रभा कौ न बूझै॥
जहाँ आठहुँ भाँति के कंज फूलै। मनौ नीर आकाश तारे अडूलैं॥
तहा हंस हंसी चकी चक्क डोलै। किते अंड-जाती करै है कलोलैं॥
तटैं बाग है राग के भौन मानौ। फूलै फूली दैवी जिन्हे जी सुहानौ॥"[1]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि कवि का मन अधिकतर युद्धवर्णन मे ही रमा है। उसी के लिए उसने परम्परागत अप्रस्तुत की सहायता ली है। रूप-वर्णन मे भी परिपाटी अपनाई गई है। पर उसने केशव और भूषण की अलकार-प्रधान शैली को नही लिया है। उसके सभी प्राकृतिक वर्णन स्वाभाविक तथा परम्परागत और रस-विकास मे सहायक है। बँधी हुई सीमा के भीतर ही उसने प्राकृतिक चित्रों को सजाया है।

पद्माकर

पद्माकर के अन्य ग्रथों के देखने से विदित होता है कि उन्होने प्रकृति-वर्णन मे शृंगारी कवियों की शैली अपनाई है। उनके ऋतु-वर्णन मे वर्षा और वसत का चित्रण उत्तम हुआ है। पर उनके वीर रस के ग्रथो मे प्रकृति-चित्रण नगण्य है। सेना और युद्ध-वर्णन मे इन्होंने वर्षा के सुदर रूपक बाँधे हैं।[2] निम्नलिखित उदाहरण से इस कथन की पुष्टि होती है :—

"दिसि दिसन दादुर से उमगि सुनकीव दूँदि मचावही।
कलकीर कोकिल से तहाँ ढाढ़ी महाधुनि छावही॥
रन रङ्ग तुंग तुरङ्ग गण सत्वर उडत मयूर से।
तहँ जगमँगानी जामगी जुगनू नहूँ के पूर से॥८१॥"[3]

'हिम्मतबहादुर-विरुदावली' मे उन्होंने अन्य स्थलो पर हाथियो, अस्त्र-शस्त्रों आदि युद्ध-सामग्री तथा वर्षा के विविध उपकरणों से उपमान लेकर तथा उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक, संदेह तथा भ्रम आदि की सहायता से युद्ध-वर्णन किए है, जिनके उदाहरणों के लिए ये छद देखे जा सकते हैं।[4]

प्रकृति-वर्णन की दृष्टि से पद्माकर को इस धारा के कवियों मे विशेष महत्त्व नहीं दिया जा सकता। उन्होंने प्रचलित अप्रस्तुतों का प्रयोग करके पिष्ट-पेषण का ही कार्य किया है। इसका एक कारण ग्रंथ का सक्षिप्त आकार भी हो सकता है। पर उनके शृ गार-रस-सबधी ग्रथों के प्रकृति-वर्णन से स्पष्ट है, कि वे परम्परा-मुक्त कवि थे। मानव-स्वभाव आदि के चित्रण की ओर ही उनका ध्यान अधिक जाता था।

---

[1] सुजान-चरित्र, छं० ६०, पृ० २३५, (अन्य उदाहरण के लिए देखिए छं० ५६, पृ०२३३-४
[2] देखिए अध्याय ५, अलंकारातर्गत रूपक का उदाहरण, पृ० ११७, [3] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० ८१, पृ० ८१ [4] वही, छं० ४१, पृ० ७, छं० ४७-६, पृ० ८, छ० ६४, पृ० ११, छं० ७३, पृ० १४, छं० ७६, पृ० १५, छ० ८२-३, पृ० १६, छ० ११५, पृ० २२, छं० १४७, पृ० २६, छं० २१०, पृ० ४४

जोधराज

जोधराज ने 'हम्मीररासो' मे ऋतु-वर्णन किया है। उन्होने बसत-ऋतु से आरभ करके षट्-ऋतु-वर्णन करके पुनः वसत का चित्रण किया है।[1] इस सपूर्ण वर्णन मे उर्वशी द्वारा पद्म ऋषि को च्युत करने के प्रयत्न दिखलाए गए है। अतएव इस वर्णन का मुख्य उद्देश्य उद्दीपन ही है। इस वर्णन को देखकर पृथ्वीराजरासो के 'इकसठवे' समय कनवज्ज-समय मे वर्णित षट्-ऋतु का स्मरण हो आता है।[2] जोधराज ने ऋतुओं का वही क्रम रक्खा है, जो चंद का है। दोनो ग्रथों के वर्णन उद्दीपन प्रधान हैं। पर चंद के वर्णन अधिक विस्तृत हैं। यह विशेषता जोधराज मे नही आने पाई है। ऐसा विदित होता है कि जोधराज चद के ऋतु-वर्णन से परिचित थे।

वसत-ऋतु के वर्णन मे उद्दीपन के ही उपकरण गिनाए हैं, जैसे :—

संगीत भाव गावैं अनन्त। सुर नर सुनन्त बसि होत मंत ॥
वन उपवन फुल्लहि अति कठोर। रहे जोंर भौंर सर अंब मौर ॥१०२॥[3]

इन्होंने अन्यत्र वसत-वर्णन[4] के बहाने से उर्वशी के नख-शिख एव शृगारिक चेष्टाओं का उत्प्रेक्षा आदि की सहायता से चित्रण किया है। कुछ उदाहरण ये हैं :—

"कपोल गोल आदसं, कि भौह भौर सादसं।
प्रफुल्लि कंज लोचनं, मृगाछि गर्व्व मोचनं ॥१३७॥
सुहंत स्याम अल्लकं, भ्रमत भौर वल्लकं।
अरुन्न रेख बेसयं, पियूष कोस देखयं ॥१४०॥"[5]

ग्रीष्म-ऋतु-वर्णन मे उसकी प्रखरता आदि का विवेचन न करके एक आश्रम की कल्पना करते हुए उष्णता से बचने तथा उद्दीपन के उपकरणों का उल्लेख किया है, यथा :—

"इक आश्रम सुंदर अति अनूप। तिय गान करत सुंदर सरूप ॥
सौरभ अपार मिलि मंद पौन। मृग मद कपूर मिल करत गौन ॥१०७॥
श्रीखंड मेद केसर उशीर। तिहि परिस ताप मिट्टत सरीर ॥
गंधर्व और किन्नर सुबाल। मिलि अंग रंग पहरे सुमाल ॥१०८॥"[6]

वर्षा-वर्णन मे भी उपर्युक्त प्रवृत्ति लक्षित होती है, जैसे —

"घने घोर गज्जंत वर्षत पानी, कलापी पपीहा रहै भूरि बानी।
तहाँ बाल झूलंत गावंत झीनी, रही जाय आश्रम भई काम भीनी ॥११२॥"[7]

शरद्-ऋतु-वर्णन भी उद्दीपन प्रधान है। प्रारम्भ तो प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से ठीक किया है, यथा :—

"बहु खंजन रंजन भृंग भ्रमै, कल हंस कलानिधि बेद भ्रमैं।
बसुधा सब उज्जल रूप कियं, सित वासन जानि बिछाय दियं ॥११७॥"[8]

---

[1] हम्मीररासो, छं० १००-२६, पृ० २०-७ [2] पृथ्वीराजरासो, छंद १-७२, पृ० १५७७-८८ [3] हम्मीररासो प० २१, (अन्य उदाहरण के लिए देखिये अध्याय ५, अलंकार प्रकरणांतर्गत अनुप्रास का उदाहरण, पृ० ११८) [4] वही, छं० १३०-६३, पृ० २७-३२ [5] वही, पृ० २८ [6] वही, पृ० २२ [7] वही, पृ० २३ [8] वही, पृ० २४

पर आगे चलकर बाला के हाव-भाव वर्णित किए गए हैं।[1] हेमन्त तथा शिशिर-वर्णन में भी उसी एक भाव की प्रधानता है, जैसे :—

बहै बहु भाँति त्रिबिद्धि समीर, रहै नहिं धीरज होत अधीर।
लता तरु भेटत संकुज भूरि, भए तृण गुल्म हरे जड़ मूरि॥"[2]

अलाउद्दीन के आखेट[3] तथा राव हम्मीर के वाटिका-वर्णन[4] मे जोधराज ने नाम गिनाने की परम्परागत शैली ही का अनुकरण किया है। आखेट-वर्णन मे उद्दीपन भाव की भी प्रधानता है। उनकी इस प्रवृत्ति के कुछ उदाहरण ये है :—

"कहूँ रहे केवरा जुही जाय, संदुप्प ओर संभो सु आय।
आचीन नगगस और असोक, पाटल सचमोलिय बोलि कोक॥"
एला लवंग अंगूर बेलि, माधुज्ज लता माधुरी झेलि॥"
तरु ताल तमाल रुताल ओर, ता मध्य कमल अरु कुमुद भौर॥३६०॥"[5]

युद्ध तथा सेना के वर्णन मे पावस, वर्षा आदि के प्रचलित रूपकों का प्रयोग करके उत्प्रेक्षा आदि के उदाहरण भी इस कवि ने दिए है।[6]

इस प्रकार जोधराज ने परम्परागत प्रकृति-वर्णन को ही अपनाया है। सम्पूर्ण धारा मे जोधराज ही ने सभी ऋतुओं का वर्णन किया है, पर उनमे परिपाटी-पालन तथा उद्दीपन की ही अधिक प्रधानता है। उसके संपूर्ण प्रकृति-वर्णन मे कोई नवीन बात नही, परिपाटी का अनुकरण-मात्र है।

अन्य कवि

प्रकृति-वर्णन की दृष्टि से इस धारा के अन्य कवियों का स्थान अत्यंत साधारण है। इनमे से केवल गोरेलाल ही उल्लेखनीय है। उन्होंने स्वामी प्राणनाथ के उपदेशान्तर्गत प्रकृति-चित्रण की ओर कुछ ध्यान दिया है, पर यह वर्णन भी भागवत के उपदेशात्मक ढंग पर लिखा गया है। इस मे नख-शिख, शृगार तथा जुगलकिसोर-किसोरी के कुञ्ज-विहार की ही प्रधानता है।[7]

शेष कवियों—जटमल, मतिराम (केवल आलोच्य छंदों मे), सदानंद तथा गुलाब का इस संबंध मे कोई विशेष महत्व नही है। इन कवियों की रचनाओं मे प्रासंगिक रूप से यत्र-तत्र प्रकृति के उल्लेख आ गये हैं, जो उद्दीपन एव अप्रस्तुत-पद-योजना के ही अंतर्गत माने जाने चाहिए।

साराश यह है कि इन कवियों ने प्रकृति की ओर से एकदम आँखे बंद कर ली थीं। यही कारण है कि यहाँ पर इनके काव्य पर अलग से विचार नहीं किया गया है।

---

[1] हम्मीररासो, छं० ११८-२१, पृ० २४-५ [2] वही, पृ० २६ [3] वही, छं० १६७-२०६, पृ० ४०-३ [4] वही छं० ३५५-३७६, पृ० ७२-३ [5] वही, पृ० ७२-३ [6] वही छं० ४८०, पृ० ६७; छं० ५४०, पृ० १०६; छं० ७३३-४, पृ० १४५; छं० ७७०, पृ० १५१, छं० ८५८, पृ० १६६
[7] छत्रप्रकाश, पृ० १५३–१५४।

*

अध्याय ८

शैली और भाषा

सामान्य-परिचय— आलोच्य ग्रथों के अवलोकन से विदित होता है, कि इस धारा मे विविध प्रकार की काव्य-शैलियाँ प्रचलित थीं। विभिन्न कवि प्रबध और मुक्तक दोनों प्रकार की शैलियाँ अपनाया करते थे।

अधिकतर कवियों ने वर्णनात्मक-शैलियों का प्रयोग किया है, पर संवादों का समावेश करके इन्हे सरसता प्रदान करने की भी चेष्टा की गई है। कुछ कवियों ने शीघ्रातिशीघ्र छदों में परिवर्तन करके अपने ग्रथों को रोचक बनाया है। जिन कवियों ने ऐतिहासिक घटनावली को अधिक प्रधानता दी है उनकी रचनाओं मे गद्यवता का भी समावेश हो गया है।

कुछ कवियों ने सयुक्ताक्षर एव नादात्मक शैली का वहिष्कार किया है। पर अधिक संख्या उन कवियों की है, जिन्होंने उक्त शैलियों का प्रचुरता से प्रयोग किया है। परिणाम यह हुआ है कि उनकी रचनाओ के वे अंश नीरस और अरुचिकर हो गए है। कतिपय कवियों ने वस्तुओं की लम्बी-लम्बी सूचियों तथा व्यक्तियों के नामों की आवृत्ति स्वतंत्रतापूर्वक की है, जिसके कारण उन ग्रथो मे शुष्कता का समावेश हो गया है। कुछ ऐसे भी ग्रंथ मिलते हैं जिनमे आश्रयदाताओं की अतिशयोक्तिपूर्ण ढग से प्रशसा की गई है। ऐसी रचनाओं मे अस्वाभविकता का अधिक सम्मिश्रण हो गया है। गोरेलाल जैसे कवियों ने प्रेममार्गी पद्धति का आश्रय लेकर दोहे, चौपाई मे अपनी रचना की है। जोधराज आदि ने 'पृथ्वीराजरासो' तथा 'रामचरितमानस' आदि ग्रथों की शैलियों से भी लाभ उठाया है।

कुछ कवि प्रलोभन के वशीभूत होकर अपने काव्य का चरित्र-नायक साधारण व्यक्ति को ही चुन लिया करते थे। इसका परिणाम यह होता था कि न तो रस का परिपाक ही हो पाता था था और न शैली ही प्रभावोत्पादक बन पाती थी, जैसा कि 'हिम्मतबहादुर-विरुदावली' से सिद्ध होता है।

भाषा की दृष्टि से प्रायः इन सभी ने ब्रज को ही अपनी रचना का साधन बनाया है। उसमें अधिकाश कवियों ने फारसी, अरबी तथा तुर्की आदि विदेशी तथा बुदेलखडी, बैसवाडी, अंतर्वेदी, एव मराठी राजस्थानी आदि सभी भाषाओं के शब्दों का स्वतत्रतापूर्वक प्रयोग किया है। तत्सम और तद्भव दोनों ही प्रकार के शब्दों का उपयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त बोल-चाल के स्थानीय शब्दो को भी अपनाया गया है।

प्राचीन अप्रचलित शब्दों के भी प्रयोग किए गए हैं। जिन कवियों ने संयुक्ताक्षर और नादात्मक शैली को अपनाया है अथवा प्रशंसात्मक पद्धति का प्रयोग किया है, उनकी भाषा में अस्वाभाविकता और शब्दों की तड़क-भड़क अधिक मिलती है। शब्दों की तोड़-मरोड़ भी इन कवियों द्वारा की गई है।

इन रचनाओं में मुहावरों और लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया गया है, जिसके कारण से भाषा की शक्ति अधिक बढ गई है।

अधिकाश कवियों ने 'सु' तथा 'जु' जैसे निरर्थक शब्दों का उपयोग करके अपनी रचनाओं को अधिक अरोचक बना दिया है। भूषण आदि कुछ कवियों की भाषा मे खड़ी बोली के रूप भी मिलते हैं।

ऊपर जो कुछ लिखा गया हैं उससे हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि इस धारा की शैली और भाषा पर तत्कालीन प्रचलित सभी साहित्यिक शैलियों का प्रभाव है। इन कवियों मे से अधिकतर दरबारी एव लोभी कवि थे, जिन्होंने अपनी बँधी-बँधाई परिपाटी का ही अनुकरण किया है। कुछ ऐसे भी कवि थे, जो अपने पाडित्य-प्रदर्शन और चमत्कार के जाल में बुरी तरह से फँसे हुए थे। इनकी रचनाओं मे शैली और भाषा संबंधी संकीर्णता और नीरसता का वर्तमान रहना स्वाभाविक था। पर कुछ ऐसे कवि भी थे जो इन प्रलोभनों और संकीर्णताओं से ऊँचे उठ सके थे। उनकी कविताओं मे शैली और भाषा का अधिक निखरा हुआ सरस और परिमार्जित रूप दृष्टि-गोचर होता है। भूषण और गोरेलाल के नाम इस दृष्टि से लिये जा सकते हैं।

'वीरसिंहदेव-चरित' तथा 'रत्नबावनी'

केशव ने 'वीरसिंहदेव-चरित' मे वर्णनात्मक शैली का अनुकरण किया है, पर उसमे सवादों की भी प्रधानता है। इन संवादों के कुछ स्थल व्यर्थ के तर्क और उपदेश से परिपूर्ण हैं।[1] जहाँ पर कवि ने उपदेशात्मकता का बहिष्कार किया है, वहाँ पर नाटकीय त्वरा का समावेश हो जाने के कारण ग्रथ सरस हो गया है।

सबसे बडी विशेषता केशव की शैली की यह है कि उन्होंने वीर-काव्य की परपरागत सूची गिनाने की पद्धति का बहिष्कार किया है, जिसके फलस्वरूप ग्रथ नीरस नही होने पाया है। पर इतिहास की इतिवृत्तात्मकता के कारण 'वीरसिंहदेव-चरित' मे शुष्कता का समावेश अवश्य हो गया है।

इस ग्रथ मे केशव ने न तो सयुक्ताक्षर-शैली का अधिक अनुकरण किया है और न 'राम-चद्रिका' के समान अलंकार, चमत्कार आदि के फेर मे बुरी तरह से पडे हैं। इसी कारण 'वीर-सिंहदेव-चरित' की स्वाभाविक सरसता की बडी सीमा तक रक्षा हो गई है। बीच-बीच मे शृंगार आदि के रूपक बाँधकर केशव ने इसे सरस बनाने की भी चेष्टा की है।[2]

पर 'रत्नबावनी' में 'वीरसिंहदेव-चरित' की अपेक्षा रस-परिपाक की दृष्टि से केशव अधिक सफल हुए हैं। उन्होंने 'रत्नबावनी' मे सयुक्ताक्षर-शैली का प्रयोग करके उसे शब्दावली की तड़क भडक से युक्त करने की भी चेष्टा की है।[3] साथ ही युद्धक्षेत्र मे कुमार और विप्र के लबे वार्त्तालाप भी कुछ अस्वाभाविक हो गये हैं।[4]

केशव ने अपनी रचना ब्रजभाषा मे की है। इनकी काव्य-भाषा पर बुदेलखंडी का अधिक प्रभाव है। भाषा की दृष्टि से 'वीरसिंहदेव-चरित' को एक साधारण ग्रंथ मानना ही समीचीन होगा।

---

[1] वीरसिंहदेव-चरित्र, पृ० २-१४ [2] वही, पृ० ७३-४ [3] केशव-पंचरत्न, रतन-बावनी छं० ३७, पृ० ६ [4] वही, वही, छं० ६-२०, पृ० २-५

यद्यपि इस ग्रंथ मे ऐसे स्थलों का अभाव नहीं है, जहाँ पर भाषा के साहित्यिक रूप के दर्शन[१] होते हैं, पर कवि की भाषा सबधी नीति इस ग्रथ की सरलता की ओर अधिक झुकी हुई है। अधिकांश स्थानों पर भाषा गद्य का रूप लिए हुए है।

'वीरसिंहदेव-चरित्र' मे सरल संस्कृत-शब्दावली का भी प्रयोग किया गया है, पर लम्बे-लम्बे समस्त-पद बहिष्कृत किए गये है। केशव ने इस ग्रथ मे लोकोक्तियों को भी यथास्थान प्रयुक्त किया है, जैसे :—

बिहना फूल्यौ अंग न माइ,[२] अगिहाई जरै,[३] ओली ओड,[४] गाइ न जानै नाचि माँगि आवै नहि मोही।[५]

इस ग्रथ मे फारसी-अरबी के शब्द अपेक्षाकृत कम प्रयुक्त हुए हैं। भाषा-प्रयोग की दृष्टि से केशव 'रत्न-बावनी' मे अधिक सफल हुए हैं। उनकी इस रचना मे भाषा और शैली का अधिक निखरा हुआ और ओजस्वी रूप देखने मे आता है। नादात्मक निरर्थक पदावली से रहित शैली और भाषा का स्वाभाविक दर्शन इनकी इस रचना मे मिलता है।

उपर्युक्त विवेचन का अभिप्राय यह है कि आलोच्य वीर-काव्यों मे केशव की शैली और भाषा क्लिष्टता और कृत्रिमता के अस्वाभाविक दोषों से रहित है। यद्यपि 'वीरसिहदेव' में कवि को इन दृष्टियों से उतनी सफलता प्राप्त नही हुई है, जितनी होनी चाहिए थी, पर 'रत्न-बावनी' मे वे पर्याप्त मात्रा मे सफल हुए हैं, इसमे किसी को सदेह नही हो सकता।

गोराबादल की कथा

जटमल ने 'गोराबादल की कथा' मे प्रचलित वीर-काव्य शैली का प्रयोग किया है, पर नाम गिनाने, नादात्मक और द्वित्व-वर्ण वाली पद्धति को प्रयः नहीं के बराबर अपनाया है। ऐसा करने से ग्रथ की रोचकता में वृद्धि हुई है। पर अनुप्रास के फेर मे पडने के कारण 'गोराबादल की कथा' कहीं-कही पर नीरसता और अरोचकता से युक्त हो गई है।[६] जहाँ पर जटमल ने नाम गिनाने[७] की चेष्टा की है, वहाँ पर भी काव्य-गत गुणो की न्यूनता वर्तमान है। कहीं-कही पर शब्दों की तडक-भड़क ही के जाल मे दृष्टि फँस जाती है, यथा :—

"सुभट सुभट सूँ लड़गि, पडगि जहँ खड़ग भड़ाभड।
जुडगि जुडगि तहँ जुडगि जुडगि तहँ खड़ग धडाधड॥
मुड़गि मुडगि जहँ मुडगि, मुड़गि कोउ अंगन मोडिग।
गहर गहर गजदन्त, भजत भुइपति गहतो डिग॥
संग्राम राम रावण सु परि, जुडे जान ऐसी जुगति।
सलसले सेस सायर सलल, धडहड कप्यो धवल हरि॥"[८]

इस ग्रथ मे व्रजभाषा का प्रयोग हुआ है, पर उस पर सर्वत्र राजस्थानी का प्रभाव वर्त्तमान है। यदि यह कहा जाये कि 'गोराबादल की कथा' की भाषा कतिपय स्थलों पर राजस्थानी के भार

---

[१] वीरसिंहदेव-चरित्र, पृ० ७३-४ [२] वही छं०, ६, पृ० ३६ [३] वही, छं० ६३, पृ० १० [४] वही, छं० ५०, पृ० ६० [५] वही, छं० ७, पृ० ७७ [६] गोराबादल की कथा, छ० ४८-५५ [७] वही, छ० ७२ [८] वही, छं० १३५

से इतनी दब गई है कि उसके वास्तविक स्वरूप का जानना कठिन हो गया है, तो अनुचित न होगा।

जटमल ने संस्कृत की शब्दावली के अपभ्रंश रूपों का भी प्रयोग किया है, जैसे खेत (क्षेत्र),[1] लक्खण (लक्षण),[2] प्रापत (प्राप्त),[3] इत्यादि। इसके साथ ही फारसी-अरबी आदि के अमली (शासक),[4] हरम,[5] दीदार,[6] आदि शब्दों का भी प्रयोग किया गया है।

इस प्रकार जटमल की शैली और भाषा कतिपय दोषों और त्रुटियों से युक्त होते हुए भी काव्योचित गुणों से ओत-प्रोत है। उसमें ऐसे स्थलों का अभाव नहीं है, जहाँ पर कवि को अपने काव्य के कला-पक्ष में पूर्ण सफलता मिली है।

ललित ललाम

"मतिराम की रचना की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसकी सरसता अत्यंत स्वाभाविक है, न तो उसमें भावों की कृत्रिमता है, न भाषा की। भाषा शब्दाडम्बर से सर्वथा मुक्त है—केवल अनुप्रास के चमत्कार के लिए अशक्त शब्दों की भरती कहीं नहीं है। जितने शब्द और वाक्य हैं वे सब भाव-व्यंजना में ही प्रयुक्त हैं। रीति ग्रंथ वाले कवियों में इस प्रकार की स्वच्छ, चलती और स्वाभाविक भाषा कम कवियों में मिलती है, पर कहीं-कहीं वह अनुप्रास के जाल में बेतरह जकड़ी पाई जाती है। साराश यह है कि मतिराम की सी रस-स्निग्ध और प्रसादपूर्ण भाषा-रीति का अनुसरण करनेवालों में बहुत ही कम मिलती है।

रीतिकाल के प्रतिनिधि कवियों में पद्माकर को छोड़ और किसी कवि में मतिराम की-सी चलती भाषा और सरल व्यंजना नहीं मिलती।"[7]

मतिराम की वीरकाव्य संबंधी रचना में उपर्युक्त प्रायः सभी विशेषताएँ वर्तमान हैं।

भूषण-ग्रंथावली

भूषण की रचना-शैली मुक्तक है। उसमें प्रबंध-काव्य की सी वर्णनशैली की आशा करना भूषण के साथ अन्याय करना होगा। फिर भी संपूर्ण काव्य में शिवाजी के जीवन की प्रमुख एवं विस्तृत घटनाओं का समावेश हो जाने के कारण फुटकर काव्य होते हुए भी, उसमें वर्णन की विविधता के लिए पर्याप्त अवसर प्राप्त हो गया है।

साधारणतः भूषण की शैली विवेचनात्मक तथा संश्लिष्ट है। विवरणात्मक-प्रणाली का इन्होंने बहुत ही कम उपयोग किया है। रायगढ़ के वर्णन[8] में भूषण ने इसी शैली का प्रयोग किया है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि दरबारी और मुक्तक-रचना करनेवाले कवि होने के नाते भूषण ने विवरणात्मक-शैली का बहुत कम प्रयोग किया है, पर जितना उन्होंने इस प्रणाली का अनुसरण किया है, उसमें इन्हें अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई है।

भूषण की सबसे अधिक मँजी हुए शैली विवेचनात्मक है। इसके उदाहरण 'शिवराज-भूषण' में प्रचुर मात्रा में वर्त्तमान हैं।[9]

---

[1] गोराबादल की कथा, छं० २ [2] वही, छं० ४५ [3] वही, छं० ३२ [4] वही, छ० ३ [5] वही, छ० ६१ [6] वही, छं० ६३ [7] रामचन्द्र शुक्ल, हिंदी-साहित्य का इतिहास, नवीन संस्करण, पृ० २५२-३, मतिराम-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० ७२-८६ [8] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० १५-२३ [9] वही छं० ६३, ७३, २८०

इसी प्रकार भूषण को सश्लिष्ट शैली का प्रयोग करने मे भी पूर्ण सफलता मिली है।[१] इनकी इस प्रकार की शैली से इनके ग्रथ भरे पडे हैं।

इनकी रचनाओं मे अलकार अनायास आते गये हैं। इनके कारण भाषा और भाव के प्रवाह मे कोई बाधा नही पडी है, वरन् वे भाव अधिक स्पष्ट करने के लिए ही आये हैं। भूषण ने युद्ध के बाहरी साधनों का ही वर्णन करके संतोष नहीं कर लिया है, वरन् मानव हृदय मे उमंग भरने वाली भावनाओं की ओर उनका सदैव लक्ष्य रहा है। शब्दों और भावो का सामंजस्य भूषण की रचना का विशेष गुण है।[२]

भूषण ने अपने समय मे प्रचलित साहित्य की सामान्य काव्य-भाषा ब्रज का प्रयोग किया है। यह स्मरण रखना चाहिये कि भूषण ने विदेशी शब्दों का अधिक प्रयोग मुसलमानों के ही प्रसंग मे किया है। साथ ही दरबार के प्रसग मे भाषा का खड़ा रूप भी देख पडता है।

इन्होंने विदेशी शब्दों से क्रियापद अवश्य बनाये हैं, पर उनके प्रयोग प्रायः परम्परा-मुक्त ही हैं। क्रियाओ के नये प्रयोग उन्होंने कम रक्खे है। भूषण ने विदेशी शब्दो मे भाषा के प्रत्यय तो लगाये हैं, पर सस्कृत के प्रत्यय बहुत कम दिखाई देते हैं। मुगलेटे, पठनेटे, आदि शब्द भूषण ने बनाये हैं। संस्कृत प्रत्यय या उपसर्ग लगाकर 'अनचैत' आदि शब्द कही लिखे हैं। विदेशी प्रत्यय देशी शब्दों मे भी कही-कहीं देखे जाते हैं जैसे :—'दलदार'।

भूषण ने अरबी-फारसी और तुर्की के शब्द अधिक प्रयुक्त किये हैं। ऐसा करने मे उन्होंने तत्कालीन मराठी की प्रवृत्ति को ग्रहण किया है। बेदिल, गैरमिसिल आदि शब्द भूषण की भाषा मे मराठी से हो होते हुए आये हैं। भूषण ने बुन्देली के शब्दों का भी प्रयोग किया है यथा :—

'धीर *धरबी* न धरा कुतुब के धुर की।'

इन्होंने बैसवाडी एवं अतर्वेदी शब्दो का भी कही-कही प्रयोग किया है जैसे :—

(क) *कालिह* के जोगी *कलींदे* को खप्पर।'
(ख) 'गजन की ठेल-पेल सैल *उसलत* है।'
(ग) 'तेरी तरवार स्याह नागिन ते *जासती*।'

भूषण की भाषा का रूप साहित्यिक दृष्टि से बहुत परिष्कृत और ग्राह्य तो नही है, पर व्यावहारिक दृष्टि से बुरा भी नही कहा जा सकता। ऐसा प्रतीत होता है कि महाराष्ट्र देश-वासियों के लिए अपनी कविता को बोधगम्य बनाने के उद्देश्य से ही भूषण ने ऐसी भाषा का प्रयोग किया है।

कहीं-कहीं पर भूषण ने अप्रचलित शब्द रख दिये हैं, जिनका अर्थ साधारण जनता नही जान सकती। साथ ही उन्होंने विदेशी शब्दों को तोडा-मरोडा भी है, उदाहरणार्थ फारसी के तकिया (आश्रय), तनाब (तनाब=डोर), बगार (बलगार=दुर्गम घाटी) आदि शब्द; अरबी के सरजा (शरजः=सिंह) तथा अबस (व्यर्थ) एवं तुर्की के तुरमती आदि प्रस्तुत किये जा सकते हैं। भूषण ने तत्सम शब्दों का प्रयोग कम किया है। उनकी रचना में तद्भव रूप ही अधिक मिलते हैं।

---

[१] विश्वनाथप्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ३८, ६८ [२] वही, छं० ५१, ५६, ६६, ८१, १६१

पर कहीं-कहीं पर ऐसे तद्भव एवं ठेठ शब्दों का प्रयोग भी मिलता है, जैसे—ओत (आश्रय), गारो (गर्व) आदि। कहीं-कहीं पर दो-एक क्रियाएँ संस्कृत के मूल रूप से भी ले ली गई हैं :— जैसे, 'सिदति है' आदि।

अपभ्रंश-काल से पुरानी हिन्दी मे कुछ शब्द प्रयुक्त होते रहे हैं। उनका प्रयोग भूषण ने बहुत कम किया है। उन्होंने जो ऐसे शब्द लिये है, वे बहुत चलते हैं, जैसे बयन, पैज आदि। इससे स्पष्ट है कि भूषण की भाषा मिश्रित भाषा है।

इन्होंने शब्दों को अपेक्षाकृत कम तोडा है, यथा :—

'महिमावान' को 'महिमेवाने', 'अंबरीष' को 'अंबरीक।'

भूषण की कविता मे ओज पर्याप्त मात्रा मे है। प्रसाद का भी अभाव नहीं है। 'शिवराज-भूषण' के आरम्भ के वर्णन में और शृगार के छंदों मे माधुर्य बहुत है।

भूषण ने मुहावरो का कम प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं :—

मुहावरे—(क) मीरन के अवसान गए मिट।

(ख) नाह दिवाल की राह न धाओ।

लोकोक्ति—(ग) सौ सौ चूहे खाय कै बिलाई बैठी जप के।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् यह धारणा स्थिर हो जाती है, कि यद्यपि भूषण की भाषा साहित्यिक दृष्टिकोण से उखडी हुई है, पर उसके इस विकृत रूप के अनिवार्य कारण है। अवसर के अनुरोध और समय के प्रभाव से भाषा को यह रूप जान-बूझकर दिया गया है। भूषण की भाषा बहुत मुहावरेदार एवं परिष्कृत न होने पर भी अव्यावहारिक नही है।[1]

साराश यह है कि शैली तथा भाषा की दृष्टि से भूषण को जितनी सफलता मिली है, उतनी इस धारा के अन्य कवियों को अपेक्षाकृत कम प्राप्त हुई है।

राजविलास

मान ने 'राज-विलास' मे दरबारी कवियों की अतिशयोक्तिपूर्ण शैली का अवलम्बन किया है। इसीलिये उसने कतिपय घटनाओं का बहुत बढा-चढा कर चित्रण किया है। मान की कविता में रीति-कालीन-दरबारी कवियों की सारी विशेषताएँ विद्यमान हैं। इसीलिये इनके वर्णन प्रायः अस्वाभाविक हो गये हैं।

सूची परिगणन की प्रथा मे यह सूदन से पीछे नही रहे हैं। घोडों,[2] लूट की सामग्री[3], बाजार की वस्तुओं[4] तथा अस्त्र-शस्त्रो[5] आदि की लम्बी-लम्बी सूचियों की ग्रथ मे अनेक स्थलों पर भरमार है।

कहीं-कहीं पर शब्द-नाद के कृत्रिम प्रयोगों तथा अलकारों के बलात् दिग्दर्शन से भी 'राज-

---

[1] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, भूमिका पृ० ६०-७०, ८३-६, हिंदी-भवन लाहौर, वही, वही, पृ० ८४-१०४, मिश्रबंधु, वही, वही, पृ० ६०-७८, ब्रजरत्नदास, वही, वही, पृ० १२२-६, भगीरथप्रसाद दीक्षित, भूषण-विमर्श, पृ० १३४-५७, उदयनारायण तिवारी, वीर-काव्य, पृ० २६७-७०; रामचन्द्र शुक्ल, हिंदी-साहित्य का इतिहास, पृ० २५६-७ [2] राजविलास, छं० ८-१०, पृ० ६७ [3] वही, छद ३५, पृ० १०१ [4] वही, छं० ६६-१४७, पृ० ४७-५४ [5] वही, छं० २७ पृ० ६६-१००

विलास' में अस्वाभाविकता का समावेश हो गया है, जैसा कि नीचे की पंक्तियों से सिद्ध होता है :—

"ठनकि गज घंटा सु ठननन भनकि भेरि नफेरि भननं।
पनकि पग्ग उनग्ग वननन, झनकि ज्यों झल्लरी झननं॥"[1]

'राजविलास' के अध्ययन से ज्ञात होता है कि कवि को शृंगार तथा शांत रसात्मक स्थलों पर वीररसात्मक स्थानों से अधिक सफलता मिली है।[2] इसमे कुछ ऐसे स्थल हैं, जहाँ पर भावोत्कर्ष उत्कृष्ट कोटि का बन पडा है।[3]

कहने की आवश्यकता नहीं है, कि 'राजविलास' में ऐसे स्थल बहुत कम है, जहाँ पर कवि को अपनी प्रतिभा निर्दोष रूप से दिखाने का अवसर मिला है, अन्यथा यह ग्रंथ अरुचिकर पद्यों से भरा पड़ा है। व्यक्तियों के नामों की सूचियों ने इसे और भी नीरस बना दिया है।[4]

'राज-विलास' की भाषा ब्रज है, जिसमे राजस्थानी के शब्दोंकी भरमार है। उसने संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रचुरता से प्रयोग किया है।[5] साथ ही स्थान-स्थान पर अपनी रचना को ओजस्विनी बनाने के लिये कवि ने कृत्रिम डिंगल का भी प्रयोग किया है।[6]

'राज-विलास' मे अरबी-फारसी के शब्दो की सख्या अत्यल्प है। मान ने 'सु' का प्रयोग अधिक किया है, यहाँ तक कि शब्द के बीच मे भी कही-कही पर 'सु' लगा दिया है, यथा :—

माधव 'सु' सिंह चौडा मरद। रावर सु बोलि जस करन रग।[7]

मान की रचना मे लोकोक्तियों का बहुत कम प्रयोग हुआ है, जैसे कि :—

कोटिक किए कलाप। दूध फट्टो न होय दहि॥[8]

'राजविलास' के देखने से विदित होता है कि मान ने कही-कही पर दूसरे कवियों के छदों से भी लाभ उठाया है, विशेष कर तुलसी के 'रामचरित-मानस' से जैसा कि नीचे दिए हुए छदों से स्पष्ट होता है :—

मान :— "मनु मद पीबो मक्वडहि, डसि वृश्चिक लसि भूत।
किं किं कौतुक ना करै, सो दिल्लीपति सूत॥"[9]

तुलसी :— ग्रह ग्रहीत पुनि बातबस तेहि पुनि बीछी मार।
तेहि पिआइअ बारुनी कहहु कौन उपचार॥[10]

ऊपर किये गये विवेचन के पश्चात् यह परिणाम निकलता है कि शैली और भाषा की दृष्टि से मान की कविता सदोष होते हुए भी शुद्ध कवित्व-शक्ति, भाषा-सौष्ठव, ओज तथा स्वाभाविकता से ओत-प्रोत है। अतएव इस दृष्टि से इस धारा के कवियो मे मान का एक विशेष स्थान है।

---

[1] राजविलास, छं० १०६, पृ० ३० [2] वही, छं० १४, पृ० ३ [3] वही, छं० ८०, पृ० १६० [4] वही, छं० ५५-६८, पृ० ११३-५, वही, छं० ८१-५, पृ० १६८-६ [5] वही, छ० ३१, पृ० ७ [6] वही, छं० २४, पृ० २१५-६ [7] वही, छं० ५६, पृ० १६३ [8] वही, छं० ६२, पृ० १५६-७ [9] वही, छ० ११०, पृ० २०२ [10] डा० माताप्रसाद गुप्त; श्री रामचरितमानस, दो० १८०, पृ०२५६

छत्रप्रकाश

गोरेलाल ने 'छत्र-प्रकाश' की रचना जायसी के 'पद्मावत' और तुलसी के 'रामचरित-मानस' की दोहे-चौपाई की शैली मे की है। इसमे वर्णन की विशदता तथा प्रसाद गुण की प्रधानता है। उन्होंने टकार-डकारादि लोमहर्षक वर्णों को अस्वाभाविक रूप मे प्रयुक्त करने का प्रयत्न नहीं किया है। सरल से सरल और स्वाभाविक से स्वाभाविक रचना द्वारा भावों का समुचित उत्कर्ष दिखलाने मे गोरेलाल पूर्णरुप से सफल हुए हैं।

इस प्रकार की सफलता कवि को चौपाइयों की अपेक्षा दोहो मे अधिक मिली है। वस्तुओं की सूची परिगणन के अनावश्यक वर्णन-विस्तार मे यह नही पडे हैं। पर युद्ध-क्षेत्र मे व्यक्तियों के नामों की दीर्घ सूची के कारण अवश्य अरुचि उत्पन्न होती है।[1]

लाल कवि ने निम्न कोटि के शब्द-नाद का प्रयोग केवल वैचित्र्य लाने के लिये नही किया है। बहुत थोडे ही ऐसे स्थल हैं जहाँ पर ऐसे प्रयोग मिलते हे, किन्तु उनसे किसी प्रकार की कृत्रिमता नहीं प्रकट होती है, यथा :—

'छूटे बान कुहु-कुहु बोला। नभ गजनाइ उठे गुरू गोला।[2]

तथा 'झिलझिल फौज ठिलाठिल धावै।[3]

दोहा-चौपाई मे रचना करने वाले प्रायः सब कवियों ने अवधी को अपनाया है, परतु लाल कवि ने ब्रज-भाषा मे रचना की है और उसमे बुंदेली का भी पर्याप्त मिश्रण मिलता है।[4]

इसके अतिरिक्त उसमे अरबी शब्दों के हीसा (हिस्सा=भाग),[5] तगीरी (तगयीरी=तबादला),[6] तथा फारसी-अरस (अर्श=आकाश)[7] आदि, अपभ्रंश रूप भी मिलते हैं। संस्कृत के अन्यत्र से अत (दूसरे स्थल पर)[8] जैसे प्रयोग भी वर्त्तमान है। गोरेलाल ने मुहावरों और कहावतों का भी प्रचुर मात्रा मे उपयोग किया है, यथा :—

खेत खपाये,[9] बल दीन्हो, हाहा करना,[10] चूमन लगे सबन की दाढी,[11] पानी रखना[12] तथा आनन मनौ मजीठन माजे[13] इत्यादि।

इसके फलस्वरूप भाषा अधिक प्रौढ और भाव अधिक स्पष्ट हो गये है। कही-कही पर लाल ने तुलसी का भी अनुकरण किया है, यथा :—

लाल— 'रन रस फूल भीम छबि लूटी। करकर करी कवच की टूटी।[14]

तुलसी— 'एतना कहत नीतरस भूना। रनरस बिटपु पुलक मिस फूला॥[15]

इस ग्रंथ मे कहीं-कही पर खडी बोली के भी दर्शन होते हैं, यथा :—

जान प्रवीन तुम्है हम भेजा। तुम तौ दिया जलाइ कलेजा।[16]

इस प्रकार शैली और भाषा के विचार से लाल कवि अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं।

---

[1] छत्रप्रकाश पृ० १०१-२०, १२५, १२८ १३३-४ [2] वही, पृ० ५६ [3] वही, पृ० ५६ [4] वीरकाव्य, पृ० ३१०-१६, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ० ३३३-४ [5] छत्रप्रकाश, पृ० ५ [6] वही, पृ० ४६ [7] वही, पृ० १६ [8] वही, पृ० ५८ [9] वही, पृ० ६ [10] वही, पृ० ३३ [11] वही, पृ० ४६ [12] वही, पृ० ६५ [13] वही, पृ० १३३ [14] वही, पृ० १३४ [15] श्री रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, पृ० २७७ [16] छत्रप्रकाश, पृ० १२४

रीति और चारण-शैली को न अपना कर उन्होंने अपना मार्ग अलग ही निश्चित किया है, जिसमें उन्हे पूर्णरूप से सफलता मिली है।

जगनामा

श्रीधर ने 'जंगनामा' की रचना के लिये वीररसात्मक काव्य-पद्धति को अपनाया है। वीर-रस के उपयुक्त छदों के अतिरिक्त अन्य प्रकार के छदों का भी उसने प्रयोग किया है। छदों की इस विविधता और परिवर्तनशीलता के कारण 'जगनामा' मे किन्हीं अशों मे सरसता का समावेश हो गया है।

श्रीधर ने युद्ध मे सम्मिलित होने वाले अमीरों और नवाबो की लम्बी-लम्बी सूचियाँ दी हैं,[1] जिनमे उनके नामों तथा गुणों की बार-बार आवृत्ति की गई है। इसका परिणाम यह हुआ है कि यह ग्रथ उन स्थलों पर नीरस और शुष्क हो गया है।

इसके अतिरिक्त सयुक्ताक्षर एव नादात्मक वर्ण-प्रयोग[2] के कारण 'जंगनामा' का अधिकाश भाग शैली की दृष्टि से निरर्थक, अरुचिकर तथा अत्यत साधारण श्रेणी का हो गया है। सौभाग्य की बात है, कि श्रीधर ने इस प्रकार के शब्द-नाद का अधिक उपयोग नही किया है। इन त्रुटियों के रहते हुए भी श्रीधर ने कहीं-कहीं पर अच्छी शैली का[3] प्रयोग किया है, जिसके फलस्वरूप काव्य सरस और सौष्ठवपूर्ण हो गया है।

'जंगनामा' की भाषा परिष्कृत तथा व्याकरण-सम्मत व्रज है, पर उसमे डिगल और बुन्देली के शब्दो का भी प्रयोग मिलता है। इसकी भाषा मे अवधी का भी पुट पाया जाता है। इनकी भाषा अधिकाश स्थलों पर अधिक गम्भीर और प्रभावशाली हो गई है।[4]

उपर्युक्त कथन का सार यह है कि बहुत सी त्रुटियों के वर्त्तमान रहते हुए भी 'जगनामा' मे ऐसे अधिकाश स्थल हैं, जिनसे यह सिद्ध हो जाता है कि श्रीधर मे शैली और भाषा का सफल प्रयोग करके अपनी कविता को उत्तम एव निर्दोष बनाने की अनुपम प्रतिभा वर्त्तमान थी। प्रशसात्मक शैली को छोडकर यदि वे स्वतत्र-रूप से कविता करते तो उन्हे 'जंगनामा' मे शैली और भाषा की दृष्टि से अधिक सफलता प्राप्त हुई होती।

रासा भगवन्तसिह

सदानन्द को अपने काव्य 'रासा भगवन्तसिह' मे शैली और भाषा की दृष्टि से अपेक्षाकृत अधिक सफलता मिली है। उनकी यह कृति, यद्यपि आकार मे छोटी है, तथापि छदों की अधिक सख्या प्रयुक्त होने के कारण उसमे रोचकता का सम्मिश्रण हो गया है। वीररस की रचना होते हुए भी उसमे संयुक्ताक्षर शैली का नही के बराबर प्रयोग हुआ है। साथ ही नादात्मक शैली का तो कवि ने एक दम बहिष्कार किया है। परिणाम यह हुआ है कि यह ग्रंथ सरस और प्रभावोत्पादक बना रहा है।

---

[1] जंगनामा, पंक्तियाँ ५२-६०, ७४-८२, १७४-२१२, २३३-३४५, ४१३-३४, ८६७-१२४६ [2] वही, पंक्तियाँ १४२१-५०, १५६३-७४ [3] वही, पंक्तियाँ ६७४-९० [4] वीरकाव्य, पृ० ३३७-४२; जरनल ऑव् रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, संख्या LXIX, १९०० ई०, पृ० १-२

इसके अतिरिक्त पात्रों के संवादों के कारण उनमें नाटकीय त्वरा का समावेश हो गया है। कवि ने पात्रों के अनुरूप भाषा का रूप बदलने का भी प्रयास किया है।

मुसलमान पात्रों के वार्त्तालाप में इनके द्वारा उर्दू-प्रधान भाषा का प्रयोग कराया गया है।[१]

यद्यपि इस कवि ने ब्रजभाषा का प्रयोग किया है तथापि उसमें संस्कृत तथा फारसी आदि के प्रचलित शब्दों के प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में मिलते हैं, यथा :—

संस्कृत—बारन[२] आदि।

फारसी—खत[३] आदि।

इसके अतिरिक्त इस रचना में फारसी शब्दों के अपभ्रंश रूप भी मिलते है, जैसे—बकसीस।[४] उसमें कहीं-कहीं पर साधारण बोलचाल के प्रयोग भी मिलते है, यथा :—

तिसै।[५]

ऊपर के संक्षिप्त विवेचन का सार यह है कि शैली और भाषा दोनों के विचार से सदानंद का अपनी धारा के कवियों में एक विशिष्ट स्थान है।

सुजान-चरित्र

सूदन ने 'सुजान-चरित्र' में केशव की 'रामचंद्रिका' के समान विविध प्रकार के छंदों का प्रयोग किया है। छंदों में शीघ्रता से परिवर्तन करने के कारण ग्रंथ की शैली में रोचकता का समावेश हो गया है। उसने प्रत्येक अंक के अंत में इस हरिगीतिका छंद की आवृत्ति की है :—

"भूपाल-पालक-भूमिपति बदनेस नंद सुजान हैं। जानै दिलीदल दक्खिनी कीने महाकलिकान हैं॥
ताकौ चरित्र कछूक सूदन कह्यौ छंद बनाइ कै। कहि देव ध्यान कवीस नृप-कुल प्रथम अंक सुनाइ कै॥[६]"

प्रत्येक स्थान पर इस छंद के प्रथम तीन पद वही रहते हैं, पर चतुर्थ पद अध्याय की वर्णित कथा के अनुसार बदलता गया है।

सूदन ने विविध वस्तु सूची[७] और व्यक्तियों[८] के नामों को गिनाने की शैली को अधिकता से अपनाया है; जिसके कारण 'सुजानचरित्र' के उक्त स्थल नीरस एवं शुष्क हो गए हैं।

इसके अतिरिक्त सूदन ने संयुक्ताक्षर[९] तथा नादात्मक [१०]शैलियों का जी खोलकर प्रयोग किया है, जिसके फलस्वरूप वे स्थल शब्दों की तडक-भडक से परिपूर्ण हो गये है। इन स्थानों पर कवि की शैली के प्रति पाठक को विवश होकर उदासीनता प्रदर्शित करनी पडती है। इन स्थलों पर भाव और विषय अस्पष्ट और भाषा बच्चों का खेलवाड हो गई है। डिंगल की इस पद्धति पर लिखे गये काव्य में बाहरी उमंग की ही प्रधानता है।

---

[१] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग ५, १९८१ वि०, छं० २०-३, पृ० ११७ [२] वही, वही, छं० ७, पृ० ११५ [३] वही, वही, छं० ६, पृ० ११४ [४] वही, वही, छं० ४७, पृ० १२२ [५] वही, वही, छं० १९, पृ० ११६ [६] सुजान-चरित्र, छं० ३४, पृ० ७ [७] वही, छं० ३१-४८, पृ० १७१-९ [८] वही, छं० १३, पृ० ४६-७, छं० ४०, पृ० ५३-४; छं० २८, पृ० ७५-६, छं० २-६, पृ० १२०-४, छं० ६, पृ० १३२-३, छं० ९-१२, पृ० १३४-५, इत्यादि [९] वही, छं० ४, पृ० २१-२; छं० १८, पृ० ३५, छं० ७, पृ० ८९-९१ [१०] वही, छं०, २ पृ० २०-१, छं० १४, पृ० १३५-७; छं० १९, पृ० १४३, छं० ११ पृ० १८५-७

सूदन ने अपने ग्रंथ मे विभिन्न भाषाओं का प्रयोग किया है। इस संबध मे दिल्ली की लूट-वाला अंश[1] विशेष उल्लेखनीय है। नाना देश की स्त्रियों का विविध प्रकार की भाषाओं में विलाप बड़ा मनोरंजक हो गया है। पर इस प्रकार का भाषा के साथ खिलवाड कही-कही सीमा का भी अतिक्रमण कर गया है, जिससे कृत्रिमता दृष्टिगोचर होने लगती है।

इसके अतिरिक्त सूदन ने अपनी कविता मे 'जु' और 'सु' का निरर्थक प्रयोग अत्यधिक किया है। यहाँ तक कि नामों के दो खड करके उनके बीच मे भी 'सु' अथवा 'जु' भिडा दिया है। यथा'–

'फर्रुक जु सेर' (फर्रुखसियर), 'मीराँ जु साहि'[2] 'सु पाइक'।[3]

इस प्रकार के प्रयोगो के कारण ग्रंथ मे शैथिल्य दोष का समावेश हो गया है। कही-कही पर तो इसके कारण अर्थ का अनर्थ हो गया है।

सूदन की भाषा साहित्यिक ब्रज-भाषा है, यद्यपि उसमे अन्य भाषाओं का पुट भी यत्र-तत्र मिलता है। इनके अधिकाश कवित्तो तथा सवैयों मे ब्रजभाषा का सौदर्य स्वभावत: निखर आया है, परन्तु भुजगप्रयात, भुजगी और कडखा इत्यादि छदो मे जहाँ शब्द नाद की उद्भावना की चेष्टा की गई है, वहाँ डिंगल और मारवाडी के रूप घुस आये हैं और भाषा की स्वाभाविक मृदुता नष्ट हो गई है। इनकी भाषा मे ब्रजभाषा का पूर्ण प्रभाव रहते हुए भी पंजाबी,[4] मारवाडी[5], बैस-वाडी तथा पूर्वी[6] के प्रयोग प्रचुर परिमाण मे आ गये हैं। साथ ही उर्दू-मिश्रित-भाषा[7] का प्रयोग भी सूदन ने अधिकता के साथ किया है।[8]

सूदन की भाषा की उपर्युक्त विशेषताओं के अतिरिक्त एक उल्लेखनीय गुण यह भी है, कि उन्होंने मुहावरों का प्रचुरता से प्रयोग किया है, जिससे भाषा अधिक प्रौढ और व्यापक बन गई है, यथा :—

'डाढ़ी की लाज,'[9] 'करत किसान खेत ज्यौं लाई'[10] 'बिस्वा बीस'॥[11]

कही-कही पर 'सुजान-चरित्र' मे आल्हा की शैली का भी प्रयोग किया गया है।[12] इसके कुछ वर्णनों को देखकर भूषण की शैली का स्मरण हो आता है।[13] साथ ही उसमे ग्रामीण प्रयोग भी मिलते है, जैसे :—

'नगीच',[14] 'लोग बाग',[15] 'तिस',[16]।

ऊपर के विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सूदन ने विविध शैलियों और विविध प्रकार की भाषाओं को अपनी रचना मे स्थान दिया है। बहुत सी त्रुटियों के होते हुए भी उन्हे इस क्षेत्र मे आशातीत सफलता मिली है। इस दृष्टि से उनका स्थान बडे महत्त्व का है।

---

[1] सुजानचरित्र, छं० १६-३०, पृ० १६७-७१ [2] वही, छं० १२ पृ० १५६ [3] वही छं० ६, पृ० ३७ [4] वही, छं० २२, पृ० १६८ [5] वही, छं० २३, पृ० वही [6] वही, छं० २७, पृ० १६६-७० [7] वही, छं० २६, पृ० १६६ [8] वीरकाव्य, पृ० ३८४-६०, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ० ३६३-४, मिश्र-बंधु विनोद, द्वितीय भाग, पृ० ७०६, ७१४-७, सुजानचरित्र, कवि-परिचय, पृ० १, ४-६ [9] वही, छं० २६, पृ० १६२ [10] वही, छं० ३, पृ० १६३ [11] वही, छं० ५, पृ० १८२ [12] वही, छं० ११, पृ० २१४ [13] वही, छं० ४७, पृ० १५२, भूषण-ग्रंथावली, शिवा-बावनी, छं० २० [14] सुजान-चरित्र, छं० ३३, पृ० ६८, छं० १६, पृ० ७३ [15] वही, छं० ३७, पृ० ३६ [16] वही, छं० १६, पृ० १४०

'करहिया को रायसो'

गुलाब कवि ने अपने 'करहिया को रायसो' नामक काव्य मे वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया है। छदों के बार-बार परिवर्तित करने के कारण इसमे रोचकता आ गई है। इस ग्रंथ मे यत्र-तत्र नाम गिनाने की प्रवृत्ति का भी अनुकरण किया गया है।[1]

इस कवि ने अधिकाश स्थानों पर चारणों की संयुक्ताक्षर शैली का प्रयोग किया है। इस कारण कही-कही पर शैली और भाषा बच्चों का खेलवाड़ बन गई है, जैसा कि इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है :—

"झुंडडुडुरिंग प्रचंड डिंडढ करि भुंड ड्डरिपिय। भुस्सुं डुिढ करि तुंडु डुभ कि भ चमंडुड डुगरिय॥ रुढढुरिन अरिंद डुडुरिय अरंभग्भुज पर। रंभग्गन किय भग्गग्गति चल कद्दसिवर॥[2]

हर्ष की बात यह है कि उक्त रचना मे इस प्रकार के स्थल अपेक्षाकृत कम हैं।

गुलाब ने अपनी कविता ब्रजभाषा मे की है। भावानुकूल भाषा जुटाने मे उन्हे यथेष्ट मात्रा मे सफलता प्राप्त हुई है। उन्होंने फारसी आदि भाषाओ के शब्दो का भी प्रयोग किया है, यथा- जग, जालिम।[3]

सारांश यह है कि शैली और भाषा की दृष्टि से गुलाब कवि को यथेष्ट मात्रा में सफलता मिली है।

'हिम्मतबहादुर-विरुदावली'

पद्माकर की 'हिम्मतबहादुर-विरुदावली' की शैली वर्णनात्मक है। इस ग्रथ के देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने इसे कतिपय अध्यायों मे विभाजित किया है। प्रत्येक अध्याय के अन्त मे सूदन के समान पद्माकर ने एक हरिगीतिका छद की आवृत्ति की है, जिसकी प्रथम दो पक्तियाँ विषयानुसार परिवर्तित होती गई हैं और अन्तिम दो पक्तियाँ प्रत्येक स्थान पर समान रही हैं।[4] पर इस छद की आवृत्ति करने मे इस कवि ने कथावस्तु के समुचित अनुपात से विभाजन का ध्यान नहीं रक्खा है और न इस ग्रथ के किसी भी संस्करण मे इस प्रकार के वर्गीकरण का सकेत ही है।

पद्माकर की इस कृति मे नाम गिनाने की शैली[5] के कारण काव्य के सौंदर्य का रूप विकृत हो गया है। साथ ही संयुक्ताक्षर और द्वित्व वर्णात्मक[6] प्रयोग करके इन्होंने चारण-परपरा-गत शैली का अनुकरण किया है, जिसके कारण शब्दों की तड़क-भड़क के दर्शन तो हो जाते हैं, पर उससे काव्य की आत्मा का हनन हो गया है। इसके अतिरिक्त इस ग्रंथ में यत्र-तत्र नादात्मक पंक्तियों के भी प्रयोग[7] मिलते हैं, जिनका प्रयोग किसी भी दृष्टि से काव्यानुकूल नहीं माना जा सकता। इस सबध में केवल इतना ही कहा जा सकता है, कि पद्माकर ने केवल परिपाटी मात्र का अनुसरण करके ही इसका उपयोग किया है। सौभाग्य की बात यह है कि इस प्रकार की शैली के उदाहरण अपेक्षाकृत कम ही हैं।

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग १०, १९८६ वि०, छं० २१, २२, पृ० २७९-८० [2] वही, वही, वही, छं० ४७ पृ० २८७ [3] वही, वही, वही, छं० ५ पृ० २७७ [4] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं० २, ४६, ६२, ७७, १८१, २१२ [5] वही, छं० २७ ३७, १९२-९ [6] वही, छं० ७, ६१ [7] वही, छं० १३०, १८६

पद्माकर के वीर-काव्य की भाषा ब्रज है। भाषा की दृष्टि से इन्हे अधिक सफलता मिली है। इनकी भाषा में विभिन्न भाषाओं के अपभ्रंश शब्दों के प्रयोग मिलते है, यथा :—

अरबी शब्द—कस्त (क़स्द), कहर (क़ार=गहराई), हैरत, नब्जै।[1]

फारसी शब्द—खिलवतिन (खिलवती=अंतरग सखा), महूम (मुहिम्म=आक्रमण), गलीम (गनीम=शत्रु), फते (फतह=विजय)।[2]

बुंदेलखंडी—खडी (=चौथ), पसर करना (=आक्रमण करना), पैरी (=पीढी), कुहचान (=हाथ की कलाई)।[3]

अन्तर्वेदी—हरबरे, बुट्टै (=भाग जाते हैं), उराउ (=उत्साह)।[4]

उपर्युक्त कतिपय उदाहरणों से ज्ञात होता है कि पद्माकर ने कई भाषाओं के शब्दों का प्रयोग करके तथा उसको अधिक व्यापकता प्रदान करने की चेष्टा करके भाषा-प्रयोग संबधी संकीर्णता का परित्याग किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'सु' जैसे व्यर्थ के शब्द को भी अपनी कविता मे स्थान दिया है।[5]

ऊपर किए गये विवेचन से स्पष्ट है कि कवि पद्माकर ने प्रचलित शैली[6] का अनुकरण करते हुए भी भाषा को अधिक उदारतापूर्वक प्रयुक्त किया है। विषय-प्रतिपादन की दृष्टि से उन्हे इतनी सफलता नहीं मिली है, जितनी भाषा की दृष्टि से। व्यग्यपूर्ण-उक्तियों और उत्साहपूर्ण सवादों का 'विरुदावली' में सर्वथा अभाव है। इसमें कवि ने बाह्याडम्बरों का आश्रय लिया है। यह होते हुए भी भाषा प्रयोग की दृष्टि से पद्माकर अपना एक विशिष्ट स्थान रखते हैं।

'हम्मीररासो'

शैली और भाषा की दृष्टि से जोधराज का एक विशिष्ट स्थान है। उन्होंने अपने काव्य की रचना के लिये 'पृथ्वीराजरासो' की शैली को अपनाया है, पर एकदम उसी का अनुकरण न करके अपनी मौलिकता का भी परिचय दिया है। विषय और भाव के अनुरूप उन्होंने शैली और भाषा में परिवर्तन करके अपने काव्य को सरस और रोचक बनाने मे यथेष्ट मात्रा में सफलता प्राप्त की है। सबसे अधिक महत्व की यह बात है कि वीर-काव्य की संयुक्ताक्षर शैली और द्वित्व वर्णात्मक शैली का इन्होंने नहीं के बराबर प्रयोग किया है।[7] इस प्रकार की शब्दों की भडाभड और तडातड से युक्त शब्दावली का बहिष्कार करके अपने विषय का प्रतिपादन करने मे जोधराज को पर्याप्त सफलता मिली है।

जोधराज के ग्रंथ को देखने से विदित होता है कि वे गोस्वामी तुलसीदास की शैली से भी बहुत बडी सीमा तक प्रभावित हुए हैं। कतिपय स्थलों पर तो तुलसीदास की कुछ पक्तियाँ ज्यों की त्यों हम्मीररासो मे मिलती हैं, यथा :—

---

[1] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, देखिये क्रमशः छंद ६५, ६६, १२६, १८७, (पाद टिप्पणियों सहित) [2] वही, देखिये क्रमशः छंद १२ १४, १५, २०६, (पाद-टिप्पणियों सहित) [3] वही, वही छंद १६, ६२, १०७, ११३ (पादटिप्पणियों सहित) [4] वही, वही, छंद १६, ७१, १५४ (पाद-टिप्पणियों सहित) [5] वही, छंद ८३, १२४ [6] वीरकाव्य, पृ० ४५३-७, काव्य-साधना, पृ० ६७-७३, पद्माकर-पंचामृत, आमुख, पृ० ६६-१२। [7] हम्मीररासो, छंद १३०-४१, ३६८, ४८०-३

(क) जोधराज—"का नहिं पावक जरि सकै, का नहिं सिंधु समाय।
का न करै अबला प्रबल, किहि जग काल न खाय॥"[१]
तुलसी—"काह न पावक जारि सक, का न समुद्र समाइ।
का न करइ अबला प्रबल, केहि जग कालु न खाइ॥"[२]

(ख) जोधराज "सुनि वजीर के बचन सुहाये। मीर जमालखान बुलवाये"।[३]
"सुनि गभरू के बचन सुभाये। महिमा फूल खेत मे आये"।[४]
तुलसी "जामवंत के वचन सुहाये। सुनि हनुमंत हृदय अति भाये"।[५]

(ग) जोधराज "चारि दरा घाटी जितो। कीने घाटा रोह"।[६]
तुलसी "अस बिचारि गुह ज्ञाति सन कहेउ सजग सब होहु।
हथ वासहु बोरहु तरनि कीजिए घाटा रोह"॥[७]

इसी प्रकार के अन्य उदाहरण भी दिये जा सकते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि हम्मीररासो की रचना करते समय कवि ने 'रामचरितनानस' तथा अन्य ग्रथो की ज्यों की त्यों उक्तियों को स्वतत्रतापूर्वक स्थान ही नही दिया है, वरन् उनकी शैली का प्रभाव उसके ग्रंथ के अधिकाश अंश पर वर्त्तमान है।

जोधराज ने बीच-बीच मे गद्य की वचनिका का प्रयोग किया है, जिससे उसमें रोचकता आ गई है।

'हम्मीररासो' मे व्रज-भाषा के साहित्यिक रूप के दर्शन होते हैं, पर कहीं-कही पर उसने बोल-चाल की भाषा का रूप धारण कर लिया है। उसकी भाषा में कोमल-कात-पदावली के भी दर्शन होते हैं। विशेषकर शृगाररस वर्णन मे।[८]

जोधराज ने फारसी के शब्दो का तद्भव रूप मे प्रयोग किया है, जैसे—हुरम (फा० हरम)[९] उज्जीर (वजीर)।[१०] इसी प्रकार संस्कृत के 'स्यदन' के लिए सिदन,[११] कुवर के लिए 'कौर'[१२] का उसने प्रयोग किया है। इस कवि ने कहावतों और मुहावरो का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा मे किया है, जिनके कुछ उदाहरण ये हे—

विश्वा बीस,[१३] अहि ज्यूँ गहि छछूदरी[१४]।

इस प्रकार के प्रयोगों द्वारा उसने भाषा को अधिक सबल, व्यापक एव प्रौढ शक्ति प्रदान करने की चेष्टा की है। कही-कही पर सवरे (सब)[१५] सुद्धा' (सहित)[१६] जैसे ग्रामीण शब्दों के प्रयोग भी मिलते है। साथ ही 'सु'[१७] जैसे निरर्थक शब्दो को भी इस रचना मे स्थान दिया गया है।

इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि जोधराज अपने समय तक की प्रचलित शैलियों से प्रभावित हुए हैं। भाषा पर जोधराज का पूर्ण अधिकार था, इसी कारण भावानुकूल भाषा जुटाने में उसे पर्याप्त मात्रा मे सफलता मिली है।

---

[१] हम्मीररासो, छंद १५८ [२] डा० माताप्रसाद गुप्त : श्री रामचरितमानस' अयोध्याकांड, दो० ४७, पृ० १९९ [३] हम्मीररासो छद ५३७ [४] वही, छंद ८३५ [५] श्रीरामचरितमानस, सुंदरकाण्ड, पृ० ३७१ [६] हम्मीररासो, छं० ७६१ [७] श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकांड, दो० १८९, पृ० २६९ [८] हम्मीररासो, छद २४१-२, [९] वही, छंद २४९ [१०] वही, छंद ३१९ [११] वही, छंद ४४३ [१२] वही, छंद ५१९ [१३] वही, छंद ६४४ [१४] वही, छंद ६४५ [१५] वही, छंद ६४१ [१६] वही, वचनिका, पृ० १८२ [१७] वही, छं० ३५१, ४२६

द्वितीय-खंड

ऐतिहासिक अध्ययन

सामान्य परिचय

ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन किये गए ग्रंथो पर विचार करने से विदित होता है कि इन ग्रंथकारों की विभिन्न प्रकार की ऐतिहासिक प्रवृत्तियाँ थी। सर्वप्रथम इस बात का पता चलता है कि घटनाओं की तिथियों के उल्लेख की ओर बहुत कम कवियों का ध्यान गया है। जिन कवियों ने घटनाओं की तिथियों का उल्लेख किया है, उनमे से अधिकाश तिथियाँ अशुद्ध है और इतिहास ग्रथों मे दी हुई तिथियों से मेल नही खाती है। इनमे से कुछ ऐसे कवि भी है, जिन्होंने तिथियो की प्रामाणिकता और शुद्धता का समुचित ध्यान रक्खा है।

अपने आश्रयदाताओं के वश और उनके पूर्वजो का विवरण देने मे भी इन कवियो ने दो प्रकार की परपराओं का परिचय दिया है। कुछ ऐसे कवि है जिन्होने इस सबध मे पौराणिक दत-कथाओं, चारण-परंपराओं तथा काल्पनिक घटनाओं का निःसंकोच भाव से प्रयोग किया है। इसके विपरीत कुछ ऐसे भी ग्रंथकार मिलते हैं, जिन्होंने इस सबध मे शुद्ध ऐतिहासिक घटनावली का ही आश्रय लिया है।

पात्रों की दृष्टि से जब इन ग्रथों की जाँच की जाती है, तो ज्ञात होता है, कि कुछ ग्रथों मे पात्रो की सख्या अत्यधिक न्यून है, तथा कुछ मे उनके नामो की भरमार है। कुछ ग्रथों को छोडकर अधिकाश रचनाओं मे प्रयुक्त पात्रों के नाम ऐतिहासिक एव प्रामाणिक हैं। यहाँ पर यह भी स्मरण रखना चाहिए कि इन ग्रथों मे स्त्री-पात्रो का न्यूनतम उल्लेख किया गया है।

घटनावली का वर्णन करने मे कुछ कवियों ने ऐतिहासिक प्रामाणिकता और इतिवृत्तात्मक घटना-चित्रण के ऊपर अधिक ध्यान दिया है। ऐसे ग्रथो का भी अभाव नही है, जिनमे घट-नाओं का रूप स्वतत्रतापूर्वक विकृत किया गया है तथा मनगढन्त काल्पनिक घटनावली का पुट दिया गया हैं।

यही बात सेनाओं की सख्या के संबध मे भी कही जा सकती है।

यह सब होते हुए भी ऐतिहासिक दृष्टि से इस धारा का विशेष महत्त्व है। इन ग्रथों में से कुछ ऐसे हैं जो अपने चरित्र-नायकों के जीवन से सबधित विस्तृत एव सूक्ष्म विवरण देने मे सफल हुए हैं। यदि क्षीर-नीर-विवेक से इन ग्रंथों का अध्ययन किया जाये, तो इन ग्रथो मे से बहुत कुछ नवीन एव मौलिक ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त हो सकती है, जिसकी सहायता से तत्कालीन ऐसी घट-नायें, जो अभी तक अधकार-गर्त मे निहित है, प्रकाश में आ सकती हैं। इस दृष्टि से इस धारा का विशेष महत्त्व है। आगे के पृष्ठों मे अध्ययन किये गये ग्रथों पर अलग-अलग सविस्तर विचार किया जा रहा है, जिससे ऐतिहासिक दृष्टि से इनका वास्तविक मूल्याकन हो सके।

अध्याय—१

वीरसिंहदेव-चरित

नीचे के पृष्ठों मे 'वीरसिंहदेव-चरित' की ऐतिहासिकता पर विचार किया जा रहा है। सर्व प्रथम बुंदेल-वशोत्पत्ति और पात्रों पर विचार करने के पश्चात् ग्रथ के प्रकाशों के क्रम से अन्य घटनाओं का ऐतिहासिक विवेचन किया गया है।

बुंदेल-वंशोत्पत्ति

केशव के मतानुसार सूर्यवशावतस भगवान् राम के पुत्र कुश के वंशज एक राजकुमार ने आकर काशी में अपने राज्य की स्थापना की।[1]

काशी के उक्त राज्य-संस्थापन की तिथि निश्चित करना कठिन है। इसके संबंध में बाबू ब्रजरत्नदास का मत है कि काशी के गहरवार राज्य की स्थापना का समय ११६४ ई० मे मुसलमानों के हाथों कन्नौज के प्रतापी गहरवार वश का राज्य नष्ट हो जाने के पश्चात् से मानना चाहिए।[2] ब्रजरत्नदास के इस अनुमान का क्या आधार है, यह ज्ञात नहीं। इसके अतिरिक्त ११६४ ई० में चदवार और इटावा के मध्य राठौरों की सेना को पराजित करने के अनन्तर मुसलमानों ने काशी पर भी विजय प्राप्त कर ली थी।[3] ऐसी दशा मे वहाँ पर गहरवार क्षत्रिय कुमार अपने राज्य की स्थापना कर सका होगा, इसमें सदेह है। उनका यह कथन कि 'अयोध्या से ११६२-११६६ ई० के उपरात भाग कर आए हुए राजकुमार को काशी के गहरवारों ने सजातीय समझकर राजा मान लिया होगा'[4] कोरा अनुमान ही लगता है। प्रथम तो यह कि काशी पर उस समय तक मुसलमान अपना अधिकार स्थापित कर चुके थे। दूसरे, छीना-झपटी के उस युग मे सजातीयता के ही कारण किसी अपरिचित कुमार को राजा चुन लेना साधारण समझ मे आने वाली बात नही प्रतीत होती है। इसके अतिरिक्त केशव के कथन से यह भी स्पष्ट नही होता है कि अयोध्या के राज्य के नष्ट हो जाने से उसका अभिप्राय हिदुओं द्वारा नष्ट कर देने से है अथवा मुसलमानों के हाथों से। ऐसी परिस्थितियो मे केवल इतना ही कहा जा सकता है, कि काशी के गहरवार क्षत्रिय अपने को सूर्यवशी मानते थे और अयोध्या से आकर उन्होंने वहाँ अपना राज्य स्थापित किया था।

निश्चित-पात्र

हिंदू-पात्र—*वीरभद्र*-इसका विशेष विवरण उपलब्ध नहीं हैं। गहरवार शाखा के अंतिम शासक का नाम चैत-कर्ण बतलाया जाता है, जिसको कृष्ण नारायण ने वीरभद्रसिंह सज्ञा दी है।

---

[1] वीरसिंहदेव-चरित्र, प्र० २, छं० ८५-७, पृ० १४ [2] नागरी प्राचारिणी पत्रिका, नवीन सस्करण, भा० ३, १९७९ वि०, पृ० ४१४-५ [3] डा० ईश्वरीप्रसाद, हिस्ट्री ऑव मेडीवल इंडिया, पृ० १३६ [4] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ३, १९७९ वि०, पृ० ४१५

बुंदेल-चरित्र में इसके राज्य की आय एक करोड रुपए बतलाई गई है। 'छत्रप्रकाश' मे इसके पिता का नाम अर्जुनदेव दिया है।[1]

वीर—केशव ने वीरभद्र के पुत्र का नाम वीर माना है। छत्रप्रकाश तथा अन्य इतिहास ग्रंथों के अनुसार वीरभद्र के पुत्र पचम के लडके का नाम वीर बुदेला था। इन विद्वानों के मत मे १२१४ ई० मे पंचम की मृत्यु हो जाने पर वीर बुदेला राजा बना। उसने १२३१ ई० मे कालपी, मुहौनी और कालिजर के भोजवर्मन चदेल को जीता। उसका राज्य रीवाँ, अवध और दो-आब तक फैला हुआ था। उसकी विजयों का विस्तृत विवरण बुदेल-चरित्र मे दिया है।[2]

करन (कर्ण)—"यह वीर बुदेल के पश्चात् गद्दी पर बैठा। इसने नीमराणा के चौहान राजा की पुत्री से विवाह किया और बनारस मे कर्ण-तीर्थ मदिर बनवाया।"

अर्जुनपाल—"यह १२५६ ई० मे मुहौनी मे आए और गढ-कुडार को विजय किया और और ग्वालियर के तुँवर (तोमर) राजा की पुत्री से विवाह किया।"[3] केशव के अनुसार सर्व प्रथम इन्होंने ही मुहौनी को राजधानी बनाया, पर ऊपर बतलाया जा चुका है कि विद्वानों के मतानुसार वीर बु देला ने मुहौनी को जीता था। इन्होंने मऊ, कालपी आदि पर शासन किया था।

साहनपाल—(सहनपाल, सोहनपाल) इन्होंने अपने पिता की आज्ञा से कटेरागढ़ विजय किया और अपना विवाह गनेशखेरा के धंधेरा की पुत्री से किया। इसने करहरा के जागीरदार की सहायता से नाग राजा को आमंत्रित करके छल से मार कर गढ कुडार पर अपना अधिकार लिया"।[4] स्मिथ का अनुमान है कि गढ़ कु डार और महोबे पर बुदेलों का अधिकार १३४३ ई० (१४०० वि०) मे हुआ।"[5] ऊपर कहा जा चुका है कि केशव के मत से गढ़ कुंडार को इसके पिता अर्जुनपाल ने जीता था।

सहजहन्द्र—(सहजेन्द्र) "१२९९ ई० मे गद्दी पर बैठे।
नौनगदेव—(नोनिकदेव) १३२६ ई० में राजा बने।
पृथ्वीराज—(पृथीराज) १३६० ई० मे इनका राज्याभिषेक हुआ।"[6]

उक्त शासक के उपरांत 'कवि-प्रिया'[7] और 'छत्रप्रकाश'[8] मे रामसिह और रामचद्र दो शासकों के नाम मिलते हैं, पर 'वीरसिहदेव-चरित्र' मे उक्त दोनों नामों का उल्लेख नहीं हैं। इस सबध मे ब्रजरत्नदास का कथन है कि "शायद एक चौपाई के दो चरण ही नहीं हैं, क्योंकि प्रत्येक चौपाई के चार चरण होने चाहिए सो इसमे कहीं नहीं हैं।"[9] संभव है कि ऐसा ही हो, पर

---

[1] सिलब्रेड : जरनल ऑव् ऐशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, सं० LXXI, भा० १, अंक २, १९०२ ई०, पृ० १०१; छत्रप्रकाश, पृ० ४, पॉगसन : हिस्ट्री ऑव् दी बुन्देलाज़, पृ० ५ वीरसिंहदेव-चरित, प्र० २, पृ० १४। [2] वीरसिंहदेव-चरित, पृ० वही, छत्रप्रकाश, पृ० ७-८, ज० ए० सो० ऑव् बंगाल, सं० LXXI, भा० १, १९०२ ई० पृ० १०५ [3] वही, वही, पृ० वही [4] वही, सं० वही, भा० वही, पृ० १०५-६ [5] वही, १८८१ ई०, पृ० ४७ [6] वही, सं० LXXI, भा० १, १९०२ ई०, पृ० १०६ [7] कविप्रिया, छं० १२, पृ० ३ [8] छत्रप्रकाश, पृ० १० [9] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भा० ३, १९७९ वि०, पृ० ४२३

जब तक 'वीरसिंहदेव-चरित' की अन्य प्रति प्राप्त न हो तब तक इस मत को अनुमान ही मानना पड़ेगा।

रामसिंह—यह १३९६ वि० (१३३९ ई०) मे गद्दी पर बैठा और १४३२ वि० (१३७५ ई०) मे इसकी मृत्यु हुई।

रामचद्र—इसने १३७५ ई० से १४५१ वि० (१३९४ ई०) तक राज्य किया।

मेदिनीमल्ल (मेदिनीपाल)—१४०० ई० मे गद्दी पर बैठे।

अर्जुनदेव—इन्होंने १४४३ ई० से १४७५ ई० तक शासन किया।

मलखान (मलखान)—यह १४७५ ई० मे राजा बने। इन्होंने १४८२ ई० मे बहलोल लोदी (१४५१-१४८८ ई०) से युद्ध किया था। इनकी मृत्यु १५०७ ई० मे हुई थी।

प्रताप-रूद्र (रुद्रप्रताप)—ब्रजरत्नदास के अनुसार प्रतापरुद्र १५०१ ई० मे और सिलब्रेड के विचार से १५०७ ई० मे गद्दी पर बैठे। इन्होने १५३०-१५३१ ई० मे ओडछा की नीव डाली। १५३१ ई० मे यह परलोकवासी हुए।

भारतीचंद—प्रतापरुद्र के मरने के उपरान्त यह १५३१ ई० मे सिहासनारूढ हुए। इन्होंने शेरशाह के पुत्र सलीमशाह से १५४५ ई० मे कालिंजर-दुर्ग छीना था। २३ वर्ष राज्य करने के पश्चात् १५५४ ई० मे इनकी मृत्यु हुई।[1]

मधुकर साहि (मधुकरशाह)—'भारतीचद के निस्सतान मरने पर उसके द्वितीय भ्राता मधुकरशाह राजा बने। इन्होने मुगलो के सरदार नियामत खाँ को पराजित किया। इनके पुत्र रामसाहि ने अलीकुली खाँ को हराया था। इसके पश्चात् इन्होंने जामकुली खा को चेलरा पर हराया और १५६८ ई० मे शेखकुली खाँ को पराजित किया। सन् १५७४ ई० मे सैय्यद मुहम्मद बारहा ने आक्रमण करके मधुकरसाहि को पराजित किया और ग्वालियर से सिरौज तक मुगलों का आधिपत्य स्थापित कर दिया। कुछ समय के उपरान्त इन्होंने अपने खोए हुए राज्य को पुनः प्राप्त कर लिया। अकबर ने पुनः आसफरन, कासिम अली खाँ तथा सादिक अली खाँ की अध्यक्षता मे सेना भेजी। युद्ध हुआ और राजकुमार होरिल मारे गए। मधुकरसाहि ने पुनः ओड़छा पर अधिकार कर लिया। इसके पश्चात् सैय्यद राजे बारा खाँ के साथ सेना आई, पर वह हारकर भाग गया। १५८४ ई० में मुराद आदि ओडछा के निकट पहुँचे। भयंकर युद्ध के उपरात दोनों मे सधि हो गई। १५९२ ई० मे इनकी मृत्यु हुई। कुछ विद्वानों ने इनकी मरण-तिथि १५८३ ई० मानी है। इनके आठ पुत्र थे।'[2]

रामसाहि—मधुकरसाहि के मरने के उपरान्त उनके ज्येष्ठ पुत्र रामसाहि गद्दी पर बैठे। १६०७ ई० मे यह पकड़कर जहागीर के दरबार मे लाए गए और इनका राज्य वीरसिंहदेव को दे

---

[1] बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास, पृ० १२३-३४, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भा० ३, १९७९ वि०, पृ० ४२३-५, जरनल ऑव् ए० सो० ऑव् बं०, संख्या LXXI, १९०२ ई०, पृ० १०७ ८, लेटर मुग्लस्, भा० २, पृ० २१७-८ [2] मेआसिरूल् उमरा, भा० १, पृ० २७५-९, अकबरनामा, भा० ३, फेसीकुलस IV, अध्याय XLI, पृ० ३२४-६, वही, वही, अध्याय XLV, पृ० ३७९; वही, वही, अध्याय XCV, पृ० ८०३, ज०ए० सो० बं०, १९०२ ई०, पृ० १०८-१०

दिया गया। इन्होंने १६०६ ई० मे अपनी पुत्री का विवाह जहाँगीर के साथ कर दिया। १६२० ई० मे यह स्वर्गवासी हुए।[1]

होरिलराय—यह मधुकरसाहि के द्वितीय पुत्र थे। यह बडे वीर थे। ऊपर मधुकरसाहि के विवरण मे बतलाया जा चुका है कि सन् १५७८ ई० मे सादिक् खाँ का सामना करके इन्होंने वीर-गति प्राप्त की थी। फारसी इतिहासो मे इनका नाम हौदलराय भी लिखा मिलता है।[2]

रत्नसेन—यह भी मधुकरसाहि के पुत्र थे। १५८२ ई० मे अकबर की सेना बगाल का विद्रोह शात करने के लिए भेजी गई थी। सम्भवतः इसी अवसर पर रत्नसेन भी साथ गये थे और वहीं उनकी मृत्यु हुई थी।[3]

इंद्रजीत—यह रत्नसेन के भाई थे। कछोवा की जागीर इन्हे मिली था। केशव इन्ही के दरबार मे रहते थे।[4]

वीरसिंहदेव—यह मधुकरसाहि के सब से छोटे पुत्र थे। इनसे युद्ध करते हुए अबुल्फजल् मारा गया। यह अकबर के जीवन-पर्यन्त उसके दाँत खट्टे करते रहे। जब जहाँगीर दिल्ली का सम्राट् बना तो उसने वीरसिंहदेव को १६०७ ई० मे सपूर्ण बुंदेलखड का शासक नियत कर दिया। इनकी मृत्यु १६२७ ई० मे हुई। इनके ग्यारह पुत्र थे।[5]

जुझारसिंह—यह वीरसिंहदेव के सबसे बडे पुत्र थे। अपने पिता की मृत्यु पर यह राजा बने। शाहजहाँ के राजत्वकाल मे इन्होंने विद्रोह किया। महाबत खा इन्हे पकडकर सम्राट् के सामने लाया। प्रार्थना किए जाने पर वे क्षमा कर दिए गए। कुछ समय के पश्चात् जुझारसिंह ने चौरागढ के भीमनारायण पर आक्रमण करके उसे मार डाला। इस पर शाहजहाँ ने पुनः उसके विरुद्ध सेनाएँ भेजी। यह इधर-उधर जंगलो मे मारे-मारे फिरते रहे। अन्त मे गोंडो ने इनको १६३५ ई० मे मार डाला।[6]

पहाड़सिंह—यह वीरसिंहदेव के पुत्र थे। एक बार यह अपने भाई जुझारसिंह के विरुद्ध अबदुल्लाह खा के साथ भेजे गए थे। शाहजहाँ के शासन काल के तीसरे वर्ष इन्हे राजा की पदवी दी गई थी। दौलताबाद, परेदा आदि के युद्धों मे इन्होंने बडी वीरता प्रदर्शित की थी। सम्राट् (शाहजहाँ) के शासन के १५वे वर्ष इन्हे चंपतिराय के विरुद्ध भेजा गया। चपतिराय इनसे मिलने आए। बलख और बदख्शा की लडाई मे इन्होंने बडी वीरता प्रदर्शित की। २४वें वर्ष यह चौरागढ का जागीरदार नियत हुआ। १६५४ ई० मे इसकी मृत्यु हो गई।[7]

अमरसिंह—राणा अमरसिंह मेवाड के वीर महाराणा प्रतापसिंह के पुत्र थे। यह १५९७ ई० मे यह गद्दी पर बैठे। कुछ समय तक जहाँगीर का सामना करते रहे। अन्त मे उसकी आधीनता स्वीकार कर ली।[8]

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ३, १९७९ वि०, पृ० ४३१ [2] देखिये पृ० १७६, मआसिरुल उमरा, भा०१, पृ०२७८ (पाद-टिप्पणी २) [3] वही, वही, पृ० २७९ (पाद-टिप्पणी) [4] वही, वही, पृ० वही [5] वही, पृ० ३९६-९ [6] वही, वही, पृ० १८४-७, इलियट, हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ७, पृ०६-७, १०,४७-५२; सरकार, औरगज़ेब, भा० १, पृ० १६-२८, लेटर मुगल्स्, भा० २, पृ० २२०-२ [7] मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० २२४-८ [8] कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भाग ४, पृ० १५८

जगन्नाथ—केशव ने संभवतः यह नाम राजा भारमल के पुत्र के लिए प्रयुक्त किया है। अकबर के शासन के २१वें वर्ष प्रताप के विरुद्ध इन्होंने बड़ी वीरता प्रदर्शित की और जयमल के पुत्र रामदास को मार डाला। २६वें वर्ष इसने राणा का कोष लूट लिया। ३६वें मे यह मुराद के साथ दक्षिण गया। जहाँगीर के शासन के ४ थे वर्ष इसने पाँच हज़ारी ३००० सवार का मसब पाया।[1]

टोडरमल—यह लाहौरी खत्री थे। अकबर की कृपा से चार हजारी मंसब और अमीरी और सरदारी की पदवी तक पहुँचे। १६वें वर्ष यह बङ्गाल मे मुनइम खाँ की सहायता के लिए नियत हुए। इन्होंने बङ्गाल, गुजरात आदि के सुप्रबन्ध मे बड़ी निपुणता प्रदर्शित की थी। २७वें वर्ष में टोडरमल प्रधान आमात्य नियत हुए थे। १५६० ई० मे इनकी मृत्यु हुई।[2]

तिपुर—(विक्रमाजीत रायरायाँ) फारसी इतिहास ग्रंथों मे रायरायाँ पतरदास विक्रमाजीत का जो विवरण मिलता है, उसका वीरसिंहदेव से सबंधित अंश केशव कथित विवरण से बिल्कुल मिलता-जुलता है। ऐसा विदित होता है कि इसका नाम वास्तव मे तिपुर ही था। फारसी लिपि से अँगरेजी मे अनुवाद करते समय तिपुर (दास) को पतरदास पढ़ लिया गया हो, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है, क्योंकि फारसी लिपि मे दोनों तिपुर (تپر) और पतर (پتر) एक ही प्रकार से लिखे जाते हैं। ईलियट ने इस नाम को हरदास पढ़कर वैसा ही अनुवाद कर दिया है। इसका जीवन चरित्र नीचे दिया जाता है।

यह जाति का खत्री था। १२वें वर्ष मे चित्तौड़ गढ़ दुर्ग के घेरे मे यह बादशाही मोर्चे का प्रबंधक हुआ। यह क्रमशः बङ्गाल और बिहार का दीवान रहा। इसने बांधव दुर्ग जीता। यह कई वर्ष तक बीरसिंहदेव से युद्ध करता रहा। ४६वें वर्ष पाँच हजारी मसब और राजा विक्रमाजीत की पदवी पाकर सम्मानित हुआ। जहाँगीर के समय मे यह तोपखाने का मुख्य अध्यक्ष नियत हुआ।[3]

बलबीर—(वीरबल)—महेशदास उपनाम वीरबल अकबर के नवरत्नों में से थे। यह बड़ी अच्छी कविता करते थे। यह अपने वाक्चातुर्य और हँसोड़पन के लिए प्रसिद्ध थे। यह १५८६ ई० मे एक युद्ध मे मारे गए।[4]

बासकि, बासकी—(राजा बासू)—यह मऊ और पठानकोट का जमींदार था। आरंभ में यह अकबर का स्वामिभक्त सेवक था। कालांतर मे इसने कई बार विद्रोह किया पर दबा दिया गया। फिर यह सलीम की शरण मे चला गया। ४६वें वर्ष सलीम के साथ आगरे तक आया। शाहजादा के पकड़े जाने का समाचार ज्ञात होने पर यह भाग गया। बादशाह बनने पर जहाँगीर ने इसे साढ़े तीन हजारी मसब दिया। १६१२ ई० मे इसकी मृत्यु हुई।[5]

भारामल—यह पृथ्वीराज कछवाहा के पुत्र और आमेर के शासक थे। राजपूतों में यह प्रथम राजा थे, जिन्होंने अकबर की आधीनता स्वीकार की थी। इन्होंने अपनी पुत्री अकबर को

---

[1] मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० १४६-५१ [2] वही, वही, पृ० १६०-६ [3] वही, वही, पृ० २८०-२ [4] वही, वही पृ० २४४-५० [5] वही, वही, पृ० २२४-७

दी। अकबर ने उसे पाँच हजारी मसब प्रदान करके सम्मानित किया था। इनकी मृत्यु १५६९ ई० के लगभग हुई थी।[1]

भगवानूदास—(भगवतदास)—यह भारामल कछवाहा के पुत्र थे। १५७२ ई० में सरनाल के युद्ध मे इन्होंने अच्छी वीरता प्रदर्शित की थी। अकबर के राज्य काल के २३वें वर्ष यह पञ्जाब का सूबेदार नियुक्त हुए। २९वें वर्ष इनकी पुत्री का विवाह सलीम के साथ हुआ। १५८९ ई० में इनकी लाहौर मे मृत्यु हो गई।[2]

भारथवीर (भारतसाहि) बुंदेला—यह रामसाहि बुदेला का पौत्र था। इसके पिता का नाम संग्रामसाहि था। जहाँगीर के शासन काल के ७वें वर्ष (१६१२ ई०) मे उसे योग्य पद और राजा की पदवी से सम्मानित किया गया। जहाँगीर की मृत्यु हो जाने पर शाहजहाँ ने इसका मसब ५०० सवार बढाकर तीन हजारी २५०० सवार का करके झडा और घोड़ा प्रदान किया। यह इटावा का फौजदार नियत हुआ था। तेलिंगाना आदि के आक्रमणों मे इसने बडी वीरता प्रदर्शित की थी। १३६४ ई० मे तेलिंगाना की सीमा पर इसकी मृत्यु हुई।[3]

मानसिंह—यह भगवतदास के भाई जगत्सिंह के पुत्र थे। निस्सतान होने के कारण आमेरपति भगवंत ने इन्हे गोद ले लिया था। यह अकबर के राज्य के स्तम्भों और सरदारों के अग्रणी थे। १५७६ ई० के अन्त में यह महाराणा प्रताप को दंड देने के लिए नियत हुए। फिर यह काबुल के शासक नियुक्त हुए जहाँ इन्होंने बडी वीरता प्रदर्शित की। ३४वे वर्ष मे इनके पिता की मृत्यु होने पर इन्हे राजा की पदवी और पाँच हजारी मसब मिला। अकबर ने इन्हे क्रमशः बिहार और बङ्गाल का सूबेदार नियुक्त किया था। इन्होंने उक्त सूबों मे बडी योग्यतापूर्वक शासन किया था। बङ्गाल से लौटने पर राजा मानसिंह सात हजारी ७००० सवार का मसब पाकर सम्मानित हुए। जहाँगीर के शासन के ६वें वर्ष (१६१४ ई०) मे इनकी मृत्यु हुई।[4]

आसकरन—यह आमेर के राजा भारामल के भाई थे। अकबर के राज्यकाल के २२वें वर्ष यह सादिक खाँ के साथ राजा मधुकर (साहि) को दड देने के लिए नियुक्त हुआ था। २४वें वर्ष में राजा टोडरमल के साथ बिहार मे नियत हुआ। ३०वे वर्ष इसे हज़ारी मंसब मिला। ३३वें वर्ष में शहाबुद्दीन अहमदखाँ मे साथ राजा मधुकर को दंड देने गया और लौटते समय इसकी मृत्यु हो गई।

राजा राजसिंह कछवाहा—यह उक्त आसकरन का पुत्र था। बहुत दिनों तक दक्षिण की चढाई में नियत रहा। ४४वें वर्ष यह ग्वालियर के दुर्गाध्यक्ष नियुक्त किए गए। ४७वें वर्ष मे रायान पतरदास (तिपुर) के साथ वीरसिंह देव बुदेला का पीछा करने पर नियत हुए। ५०वें वर्ष में इनका मंसब चार हजारी ३००० सवार तक पहुँच गया और डका भी मिला। १६१४ ई० में इनकी मृत्यु हो गई।

रामदास—यह राजा राजसिंह कछवाहा के पुत्र थे। इनको हज़ारी ४०० का मसब मिला। जहाँगीर के १२वें वर्ष मे इन्हे राजा की पदवी भी प्राप्त हो गई। उसी वर्ष के अत में इनका मसब बढकर डेढ हज़ारी ७०० सवार का हो गया।[5]

---

[1] मआसिरुल उमरा, भाग १, पृ० ३६४-७ [2] वही, वही, पृ० २५३-६ [3] वही, वही, पृ० २६१-३ [4] वही, वही, पृ० २९१ ३०३ [5] वही, वही, पृ० ३२६-७

भोज—यह राय सुर्जन हाडा का छोटा पुत्र था। यह बहुत समय तक मानसिंह के आधीन रहा। शेख अबुल्फज़्ल् के साथ नियुक्त होकर दक्षिण के युद्धों मे साहस का कार्य करता रहा। १६०८ ई० मे इसकी मृत्यु हो गई।[1]

केसवदास, (केसौदास)—संभवतः वीरसिंहदेव-चरित के रचयिता ने इस नाम से अपनी ओर संकेत किया है।[2]

मुस्लिम पात्र — अकबर, जलालुद्दीन—(जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर) यह सम्राट् हुमायूँ का पुत्र था। इसका जन्म १५४२ ई० मे हुआ था। इसने १५५६ ई० से १६०५ ई० तक भारतवर्ष पर शासन किया। यह अत्यत प्रसिद्ध मुगल शासक था, जिसके कार्य-कलापों का विवरण इतिहास विदित है।[3]

सलीम, जहाँगीर—यह अकबर का ज्येष्ठ पुत्र था। यह ३० अगस्त १५६९ ई० मे उत्पन्न हुआ था। अकबर की मृत्यु के उपरांत इसने १६०५ ई० से १६२७ ई० तक शासन किया।[4]

खुसरो सुलतान—सुलतान खुसरो सम्राट् जहाँगीर का ज्येष्ठ पुत्र था। इसकी मृत्यु जनवरी १६२२ ई० को हुई थी।[5]

मुरादसाहि—शाहजादा मुराद सम्राट् अकबर का द्वितीय पुत्र था। इसका जन्म ७ जुलाई सन् १५७० ई० को हुआ था। यह अधिक समय तक दक्षिण मे युद्ध करता रहा और वही १२ मई १५९९ ई० मे इसकी मृत्यु हुई।[6]

अबुल्फजल्—अल्लामी फ़हामी शेख अबुल्फजल् शेख मुबारक नागौरी का द्वितीय पुत्र था। इसका जन्म १४ जनवरी, १५५१ ई० को हुआ था। यह अकबर का प्रमुख अमीर, मित्र, आज्ञाकारी एव विश्वास-पात्र सेवक था। ४३वें इलाही वर्ष मे यह दक्षिण भेजा गया। इसने दक्षिण में बडी वीरतापूर्वक कई युद्ध किये। सलीम के विद्रोह के अवसर पर अकबर ने इसे आगरे बुलाया। लौटते समय मार्ग मे अगस्त १६०२ ई० को इसकी मृत्यु हुई।[7]

कुतुबुद्दीन खाँ—आईन-इ-अकबरी मे इस नाम के दो व्यक्तियों का उल्लेख मिलता है। इस नाम का एक व्यक्ति शाहजादा सलीम का अतालीक था। दूसरे फ़तहपुर सीकरी के शेख खूबू को कुतुबुद्दीन खाँ-इ-चिश्ती की उपाधि मिली थी।[8] यह निर्णय करना कठिन है कि केशव ने किस व्यक्ति विशेष की ओर संकेत किया है।

बैरमषा (खानखानान बैराम खाँ) यह हुमायूँ के प्रमुख सरदारों मे से था। यह अकबर का शिक्षक और सरक्षक था। पानीपत के द्वितीय युद्ध मे इसने हैमू बक्काल को पराजित

---

[1] मआसिरुल उमरा, भाग १, पृ० २७३-४ [2] विशेष विवरण के लिए देखिए प्रथम खण्ड, अध्याय १, पृ० २१-२ [3] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ४, पृ० ३६, ६७-१५३ [4] वही, भा० वही, पृ० १०२; १४४, १४५-५३, १५५-८२ [5] वही, भा० वही, पृ० १५०, १५२, १५६-८, १६०-१, १६४-५, १६८-७० [6] वही, भा० वही, पृ० १०२, १२७-८, १४०-४ [7] मआसिरुल् उमरा; भा० २, पृ० ४३-५६ [8] आईन-इ-अकबरी, भा० १, पृ० ३३३-४ (संख्या २८), वही, भा० वही, पृ० ४९६-७ (सं० २७५)

किया। कालांतर मे अकबर से अनबन हो जाने के कारण वह नौकरी से हटा दिया गया। इस पर उसने विद्रोह किया। अकबर से पराजित होकर वह मक्का के लिए चला पर मार्ग मे मार डाला गया।[1]

खानखाना, नवाब (ख़ानख़ानान नवाब अबदुर्रहीम)—यह बैरामखाँ के पुत्र और अकबर के नवरत्नों मे से थे। वह बहुत दिनों तक दक्षिण मे युद्ध-सचालन करते रहे थे। यह हिंदी के प्रसिद्ध कवि थे।[2]

सरीफ खान—शरीफ खाँ नामक एक व्यक्ति अतगह खाँ का भाई था। यह अकबर के समय में पजाब, कन्नौज, मालवा, गजनी आदि मे शासक रहा।[3] यह कहना कठिन है कि केशव ने अपने ग्रंथ मे इन्ही का उल्लेख किया है अथवा अन्य किसी पुरुष का।

अबदुल्लह खाँ खोजा—(अबदुल्ला खाँ फीरोज जग) इसका नाम ख्वाजा अब्दुल्ला था। इलाहाबाद मे शाहजादा सलीम ने इसे मसब और खाँ की पदवी दी। अकबर ने इसे सफदरजंग की पदवी दी। जहाँगीर के समय मे यह गुजरात का अध्यक्ष नियत हुआ। दक्षिण मे यह कई बार सेना लेकर भेजा गया। शाहजहाँ के शासन काल मे इसने जुझारसिंह के ऐरछ गढ पर अधिकार कर लिया। यह लगभग सत्तर वर्ष की अवस्था मे ७ दिसम्बर, १६४४ ई० को मर गया।[4]

अनिश्चित पात्र

निम्नलिखित पात्रों का प्राप्य इतिहास ग्रथों मे विशेष विवरण उपलब्ध नही है :—

हिंदू पात्र—राइसेन, पूरनमल्ल, नरसिंहदेव, प्रतापराव, हरिसिंहदेव (हरसिंह), सग्रामसाहि, राव भूपाल, उग्रसेन, हरदौन, बाघराज, दुर्जनसाल, चद्रभान, भगवानराय, नरहरिदास, कृष्णदास, माधवदास, तुलसीदास (तुरसीदास), हरीसिंह, बसतराय, खाडेराय, आमनदास, आनदी पुरोहित, इद्रजीत, ईश्वर राउत, कृपाराम, कन्हर, खड्गराइ, खरगसेन, गुमान खवास, गोविददास मिश्र, गिरधरदास, बड़गूजर-सुत-चपतराइ जगमनि (जगमोहन पुरोहित), जुगराज, जादौं (जादौ राइ), बलवत, जसवत, ताराचद, देवाराइ (देवा), दुर्गादास, दमोदर (दामोदर), दुर्गा राउ, पवार भगवान, पैमु परधान, बाली, बसत, मंगद, मलखान, मारू, मुकुट गौर, मिश्र उदीन, मयाराम, रामसिंह कछवाहा (रामदास), हरिवंस, हरदौल पँवार, होरिलराव (होडिलराव), सुदर, स्यामदास, सुजानसाहि, रनजीत लोधी, सकतसिंह कछवाहा, हरधौर, सूरज (सूरज नाई), बकसराइ, देवा पायक।

स्त्री-पात्र—कल्यान दे रानी।

मुसलमान पात्र—सैद मुजफ्फर खान (मुदफ्फर खाँ), दौलत खाँ पठान, समाइची खाँ, असरफ खाँ, आलम खान, खान जहान, कुतुबुद्दीन खान, आजम खान, जमल, जमान खाँ, फरीद खान, नाजिम खान, जामकुली, नवाब मुसरफ, यादगार, बाजिद, हसनपान (हसन खान), बहादुर अली, हकीम, दरिया खाँ, साहिम खाँ, अलीकुली खाँ।

---

[1] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ४, पृ० २०, ३६, ४०, ४२, ६७ ८, ७१-८ [2] वही; भा० वही, पृ० २०, ७८, १३३, १३७, १४१-३, १४५, १५१, १५७, १५६, १७१-२, १७३, २६०, २६३, ५५२, ५६२ [3] आईन इ-अकबरी, भा० १, पृ० ३८३ (सं० ६३) [4] मआसिरुल् उमरा, भा० २, पृ० १३६-४६

प्रकाश ३

वीरसिंहदेव की प्रारम्भिक विजय—वीरसिंहदेव ने बड़ौन की जागीर मिल जाने के उपरान्त कई स्थानों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। आशकरन, रामसाहि और जगमनि की सेनाओं से भयकर युद्ध किया। दौलत खाँ से सधि करके उसके साथ दक्षिण की ओर चल दिए पर वे मार्ग से ही लौट आए और बडौन पर पुनः अपना अधिकार स्थापित कर लिया।[1]

केशव द्वारा वर्णित उक्त घटनाओं का इतिहास मे विस्तृत विवरण अप्राप्य है। पर यह निश्चित है कि महान् महत्वाकाक्षी वीरसिंहदेव चुप बैठनेवाले व्यक्ति न थे। उन्होंने यह युद्ध अवश्य लडे होगे। स्थानीय घटनायें होने के कारण इतिहास मे उनका लेखकों ने उल्लेख करने की ओर ध्यान नही दिया होगा। यह भी सम्भव है कि इनमे से अधिकाश युद्धों मे मुसलमानों की पराजय होने के कारण मुसलमानों ने उनका विवरण नही दिया हो।

प्रकाश ४

मुराद की मृत्यु और अकबर की यात्रा—केशव ने मुराद की मृत्यु और अकबर की दक्षिण यात्रा का चौथे प्रकाश मे उल्लेख किया है।[2]

इतिहास-ग्रंथो से विदित होता है कि शाहजादा मुराद दक्षिण मे शाही सेना का सचालन कर रहा था। वहीं पर २ मई १५९९ ई० को उसकी मृत्यु हुई। इस दुःखद घटना के पश्चात् अकबर अस्सी सहस्र अश्वारोहियों के साथ दक्षिण को रवाना हुआ। (२९ सितम्बर, १५९९ ई०)[3]

इस ऐतिहासिक विवरण से स्पष्ट है कि मुराद की मृत्यु के कई मास के उपरान्त अकबर दक्षिण-यात्रा प्रारम्भ कर सका था। केशव ने दोनों घटनाओं का चलता हुआ वर्णन साथ-साथ ही कर दिया है। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि केशव ने अपने ग्रंथ की घटनावली को अग्रसर करने के लिए उक्त दोनों घटनाओं का एक साथ सांकेतिक वर्णन कर दिया है, क्योंकि उनका विस्तृत वर्णन करना केशव का लक्ष्य नही था।

इन घटनाओं के पश्चात् केशव ने राममाहि की अकबर से भेंट, रामसाहि और राजसिंह के वीरसिंह से विविध युद्धों आदि का वर्णन किया है।[4] इन घटनाओं का इतिहास मे वर्णन अप्राप्य है।

प्रकाश ५

सलीम का मेवाड़ मे लौटना, विद्रोह, और अकबर का दक्षिण से आगरे आना—केशव ने सलीम और मानसिह के मेवाड से लौटने तथा अकबर के क्षुब्ध होकर दक्षिण से आगरे आने की घटना का वर्णन पाँचवे प्रकाश मे किया है।[5]

---

[1] वीरसिंहदेव-चरित्र, पृ० १७-२३ [2] वही, पृ० २३ [3] ईलियट एंड डाउसन, हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ६, पृ० ९७, अकबरनामा, पृ० ८०३, तुज़क-इ-जहाँगीरी, भा० १, पृ० ३४, केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ४, पृ० १४४-५; अकबर दी ग्रेट, पृ० २७१, जहाँगीर, भा० १, पृ० ४४ [4] वीरसिंहदेव-चरित, पृ० २३-८ [5] बीरसिंहदेव-चरित, पृ० २८-९

उक्त घटनाओं का इतिहास मे यह विवरण मिलता है :—

सलीम और राजा मानसिंह मेवाड के विरुद्ध युद्ध कर रहे थे। सलीम ने अपनी सेना युद्ध-भूमि में भेज दी थी और स्वयं अजमेर मे पडा रहा था। बङ्गाल मे अफ़गानो ने विद्रोह किया। वहाँ शाति स्थापित करने के लिए मानसिंह को जाना पडा। मेवाड-युद्ध मे सलीम को विशेष सफलता नहीं मिली। वह महाराणा को केवल पार्वतीय प्रदेश को भगा सका था। अत मे सलीम ने विद्रोह करने का निश्चय किया। वह जुलाई, १६०० ई० मे आगरा होता हुआ प्रयाग जा पहुँचा और एक स्वतत्र दरबार की स्थापना की। इन सब समाचारों के ज्ञात होने पर अकबर दक्षिण से लौटकर २३, अगस्त, १६०१ ई० को आगरे पहुँचा।[1]

केशव ने उक्त घटनाओं के वर्णन मे सलीम और मानसिंह के मेवाड से एक साथ लौटने का उल्लेख किया है। यह उनकी भूल है। इतिहास के ऊपर दिए हुए उद्धरण से स्पष्ट है कि मानसिंह बङ्गाल को पहले ही चले गये थे और सलीम उसके पश्चात् लौटा था।

वीरसिंहदेव की सलीम से भेट—उस समय अकबर की दक्षिण और मेवाड मे लडाइयाँ हो रही थीं। अकबर और मानसिंह मे वैमनस्य था और सलीम ने विद्रोह का झंडा खडा कर दिया था। अकबर को इस प्रकार विपत्ति-ग्रस्त देखकर वीरसिंहदेव ने प्रयाग मे पहुँचकर सलीम से मित्रता स्थापित की।[2] इनमें से वीरसिंहदेव और सलीम की भेट के अतिरिक्त शेष घटनाओं का ऊपर के ऐतिहासिक विवरण से आभास मिल जाता है। वीरसिंहदेव ने सलीम से अवश्य ही मैत्री स्थापित की होगी इसमें कोई सदेह नही होना चाहिए।

अबुल्फ़ज़ल् की हत्या—"सलीम के विद्रोह करने पर अकबर ने अबुल्फजल् को दक्षिण से बुलाया। सलीम ने वीरसिंहदेव को, उसे जीवित पकड लाने अथवा मार डालने की आज्ञा देकर, रवाना किया। वीरसिंहदेव और सैय्यद मुजफ़्फ़र साथ-साथ इस कार्य को सम्पादित करने के लिए गए। पराइछे के निकट अबुल्फजल् की सेना से युद्ध हुआ। गोला लगने से शेख की मृत्यु हो गई। उसका शिर चपतराय बडगूजर के हाथ प्रयाग भेज दिया गया। प्रसन्न होकर सलीम ने वीरसिंहदेव को राजा घोषित कर दिया।"[3]

असद्बेग ने, जो अबुल्फजल् के साथ दक्षिण से सिरौंज तक आया था और जिसने अकबर की आज्ञा से इस घटना के सबध मे जॉच की थी, 'विकाया-इ असद्बेग' मे इस घटना के सबंध मे लिखा है :—

वह महान् व्यक्ति सराय बरार नामक स्थान पर शुक्रवार १६ अगस्त, १६०२ ई० को मारा गया। जब हम (अबुल्फज़ल्, असद्बेग आदि) सिरौज पहुँचे तब गोपालदास (नकटा) ने दक्षिण से साथ आई हुई सेना को आराम करने और असद्बेग के साथ सिरौंज मे इद्रजीत बुदेला से युद्ध करने के लिए छोड़ देने और उसकी सेना को अपने साथ रक्षार्थ ले जाने के लिए उसे फुसला लिया। जब वह चलने के लिए प्रस्तुत हुआ तो मैं भी सवार हुआ। पर उसने मुझे ऐसा करने से रोका। जब वह सराय-बरार मे आया तो एक साधु ने कहा कि आगामी दिन उस पर नरसिंह

---

[1] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, पृ० १४६-८, अकबर दी ग्रेट, पृ० ३०१-४, जहाँगीर, भा० १, पृ० ४४-५ [2] वीरसिंहदेव-चरित, पृ० २६-३३ [3] वही, पृ० ३३-७

(वीरसिंह) बुंदेला द्वारा आक्रमण किया जानेवाला था, पर उसने उसे पुरस्कार देकर विदा कर दिया। दूसरे दिन शुक्रवार को ज्यों ही वह चलने को उद्यत हुआ त्योंही सराय के पीछे से बुंदेलों की सेना उस पर टूट पड़ी। शेख के साथियों ने द्रुतगति से चलने की सम्मति दी, पर उसने न माना। नरसिंह (वीरसिंह) की सेना के लगभग पाँच सौ अश्वारोही निकट आ पहुँचे। गदाई खाँ वीरता से युद्ध करता हुआ मारा गया। उसी समय एक साथी ने कहा "लुटेरे सशस्त्र हैं और आपके साथी निहत्थे हैं। हम लोगों को पहाड़ी की ओर चले जाना चाहिए, सभव है कि प्राणों की रक्षा हो जाय।" ऐसा कहकर उसने शेख के घोड़े की बाग पकड़ी और लौट पड़ा। उसी समय लुटेरे प्रत्येक मनुष्य को भाले से मारने लगे। एक राजपूत ने पीछे आकर शेख को भाला मारा जो उसके वक्षस्थल से होकर निकला। पास ही एक नाला था। शेख ने उसे पार करना चाहा, पर वह इस प्रयत्न में गिर पड़ा। जब्बार ने, जो एक दम पीछे था, उस राजपूत को मार डाला। फिर घोड़े के नीचे से शेख को निकालकर सड़क से एक ओर ले गया, परतु वह घाव घातक था। शेख पृथ्वी पर गिर गया।

उसी समय अन्य राजपूतों के साथ नरसिंह (वीरसिंह) आया अतः जब्बार एक वृक्ष के पीछे छिप गया। जैसे ही नरसिंह (वीरसिंह) ने उसे देखा, वह घोड़े से उतरा और उसके शिर को अपने घुटने पर रखकर अपने वस्त्र से उसके मुख को पोंछने लगा। यह देखकर कि नरसिंह (वीरसिंह) का हृदय द्रवित हो चला था, जब्बार ने आगे आकर प्रणाम किया। उसी समय शेख ने अपने नेत्र खोले। नरसिंह (वीरसिंह) ने बैठे ही बैठे अभिवादन किया और अपने साथियों से फ़रमान (आज्ञापत्र) लाने को कहकर शेख से नम्रतापूर्वक कहा "सर्व-विजेता-स्वामी (सलीम) ने आपको कृपापूर्वक बुला भेजा है।" शेख इससे क्षुब्ध हुआ। नरसिंह ने उसे सलीम के पास सुरक्षित स्थान पर ले जाने का शपथपूर्वक आश्वासन दिया। शेख ने सक्रोध उसे अपशब्द कहने आरंभ कर दिए। तब नरसिंह (वीरसिंह) के साथियों ने उससे कहा कि उसके (शेख के) घाव घातक थे, अतः उसको ले जाना असंभव था। यह सुनते ही जब्बार ने अपनी तलवार खींची और कई राजपूतों को मारकर, नरसिंह (वीरसिंह) के निकट तक जा पहुँचा। उसी समय उन्होंने उसको मारकर गिरा दिया। फिर नरसिंह(वीरसिंह) शेख के शिर पर से उठा और उसके साथियों ने उसे समाप्त करके उसका शिर काट लिया। तदुपरांत अन्य किसी को छेड़े बिना, यहाँ तक कि बन्दियों तक को भी छोड़कर वे लोग चले गए।[1]

उक्त उद्धरण और केशव-कथन की तुलना करने पर स्पष्ट हो जाता है कि उन दोनों मे बहुत साम्य है। शेख के साथ वीरसिंह के दूत गुप्त वेश में आ रहे थे, इसकी ओर केशव ने संकेत किया है और असद्बेग का नकटा प्रसग से भी यही अभिप्राय है। केशव ने भी एक मनुष्य द्वारा उसके घोड़े की बाग पकड़ने का उल्लेख किया है और असद्बेग का भी यही मत है। केशव के वर्णन मे भी शेख को पकड़ लाने अथवा मार डालने का उल्लेख किया गया है और घायल शेख से वीरसिंह की बातचीत द्वारा असद्बेग ने भी यही सिद्ध किया है। इसीलिए फ़रमान लाने की बात लिखी गई है। वीरसिंह के द्रवीभूत होने, अपने रूमाल से उसके मुख को पोंछने आदि

[1] हिस्ट्री आव् इंडिया, भा० ६, पृ० १५४-६०; अकबर दी ग्रेट, पृ० ३०४-७; जहाँगीर, भा० १, पृ० ५२-४

से उनकी द्रवणशीलता और शेख की दयनीय दशा को देखकर दुःखी होने का आभास मिलता है। यदि जब्बार उस समय उतावलेपन और अदूरदर्शिता का परिचय न देता, तो सम्भव था कि शेख के प्राणों की रक्षा हो जाती। केशव ने शेख की मृत्यु गोला लगने से तथा असद्बेग ने वीरसिंह के साथी के भाले से घायल होने और शिर काटे जाने से मानी है। इस प्रकार वीरसिंह ने अन्तिम समय तक शेख को जीवित पकडने का प्रयत्न किया पर दुर्भाग्यवश उसकी मृत्यु हो गई। ऐसी परिस्थितियाँ आ उपस्थित हुई कि और कोई उपाय रह ही नही गया था। इस प्रकार केशव और असद्बेग दोनों के वर्णनों मे बहुत साम्य है। साथ ही वीरसिंह ने अपने हाथ से शेख को नही मारा। अत उसके ऊपर उसकी हत्या का दोषारोपण नहीं किया जा सकता। ईलियट ने वीरसिंह के स्थान पर नरसिंह लिखा है, जो फारसी लिपि की कृपा का दुष्परिणाम है।

अबुल्फ़ज़ल् की मृत्यु के सबंध मे जहाँगीर का कथन भी विचारणीय है। वह लिखता है कि, 'मेरे पूज्य पिता (अकबर) के शासन के अन्तिम वर्षों मे शेख अबुल्फ़ज़ल् ने, जो बुद्धिमता एवं विद्वत्ता मे भारतीय शेखज़ादों मे अद्वितीय था, स्वय को स्वामि-भक्ति-रत्न के बाह्य रूप से देदीप्यमान कर लिया था और उस रत्न को अकबर के हाथो अत्यधिक मूल्य पर बेचा था। मेरे प्रति दुष्कृत भावना रखने के कारण वह एकान्त तथा प्रकट मे मेरी निन्दा किया करता था। उसे दक्षिण से बुलाया गया था। इस समय, जब कि विद्वेषाग्नि-प्रज्वलित-कर्त्ताओं की कृपा से मेरे पिता के विचार मेरे विरूद्ध हो गए थे, यह निश्चित था कि यदि वह उससे (अकबर) भेंट कर लेता तो इससे झगडा बढ जाता और मैं अपने पिता के दर्शनों से वंचित रह जाता। उसका दरबार-प्रवेश रोकना नितान्त आवश्यक हो गया। वीरसिंहदेव का प्रदेश उसके मार्ग मे पड़ता था और वह उस समय एक विद्रोही था। मैंने उसके पास यह संदेशा भेजा कि यदि वह उस विद्रोही (अबुल्-फजल्) को रोक कर मार डालेगा तो वह मेरी प्रत्येक कृपा को प्राप्त करने का अधिकारी होगा। ईश्वर की कृपा से, जब शेख अबुल्फजल् वीरसिंहदेव के देश से होकर निकल रहा था, राजा ने उसका मार्ग रोका और साधारण युद्ध के पश्चात् उसको मार डाला। उसने उसका शिर मेरे पास इलाहाबाद भेजा।[1]

सलीम ने अपने कथन द्वारा सारा दोष शेख ही के मत्थे मढा है। सच बात तो यह है कि इस अपराध के लिए सलीम भी एक बडी सीमा तक उत्तरदायी था। सलीम के विवरण से यह भी विदित होता है कि उसने शेख को मारने का सदेश वीरसिंहदेव के पास भेजा था पर केशव का मत है कि दोनो ने प्रयाग मे मिलकर सारी योजना बनाई थी।

तकमील-इ-अकबरनामा के लेखक तथा केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया के अनुसार वीरसिंहदेव कुछ समय तक सलीम की नौकरी मे रहा था।[2] पर वीरसिंहदेव-चरित्र, विकाया-इ-असद्बेग तथा तुज़ुक-इ-जहाँगीरी से उक्त कथन की पुष्टि नही होती है।

उपर्युक्त विवेचन का परिणाम यह निकलता है कि केशव का इस घटना-सबधी विवरण ऐतिहासिक है। साथ ही वीरसिंहदेव को अबुल्फ़ज़ल् की हत्या के लिए एकदम दोषी नहीं ठह-

---

[1] तुज़ुक-इ-जहाँगीरी, भा० १, पृ० २४-५ [2] अकबरनामा, अध्याय CL, पृ० १२१७, केम्ब्रिज हिस्ट्री आव् इंडिया, भा० ४, पृ० १४६, हिस्ट्री आव् इंडिया, भा०६, पृ० १०७

राया जा सकता। उन्होंने अकबर को हानि पहुँचाने, और भारत के भावी सम्राट् जहाँगीर(सलीम) को प्रसन्न करने के लिए एक सच्चे मित्र और दूरदर्शी राजनीतिक के समान इस कार्य मे हाथ डाला और अंतिम समय तक इस बात के लिए प्रयत्नशील रहे कि अबुल्फ़ज़ल् के प्राणों की रक्षा हो जाये और उसे जीवित ही पकडकर सलीम के पास भेज दें; पर परिस्थितिवश उसकी मृत्यु हो गई।

प्रकाश ६

वीरसिंह देव और अकबर मे युद्ध —अबुल्फ़ज़ल् की मृत्यु का समाचार सुनकर अकबर अत्यन्त शोक विह्वल हुआ। उसने प्रतिशोध-भावना से प्रेरित और क्रुद्ध होकर विशाल सेना भेजी। इस पर सलीम के परामर्श से वीरसिंहदेव दतिया चले गए। शत्रुओं के वहाँ पहुँचने पर यह ऐरछ जा पहुँचे फिर वहाँ से भी निकल भागे और 'दूनी' होते हुए दतिया में सलीम से जा मिले। इंद्रजीत को ऐरछ गढ देकर रायरायाँ आगरे चले गए। अन्त मे इंद्रजीत भी आगरे को रवाना हो गए।[1]

इस घटना के विषय में इतिहास का विवरण निम्नलिखित है :—

अबुल्फ़ज़ल् की मृत्यु का समाचार ज्ञात होने पर अकबर अत्यन्त शोकाकुल हुआ। वह तीन दिन तक दरबार मे नही आया। उसने क्रुद्ध होकर रायरायाँ की अध्यक्षता मे एक सेना वीरसिंह को दड देने के लिए भेजी। उसने वीरसिंहदेव का भाडेर तक पीछा किया। वह वहाँ से बेतवा नदी के किनारे पर स्थित ऐरछ गढ मे चले गए। वह बाहर निकले पर पुनः दुर्ग मे खदेड़ दिए गए। इस पर वे रात्रि के समय दीवार काटकर जगल की ओर निकल भागे। उनका हाथी मार डाला गया पर वे बच गए। इन युद्धों मे अकबर की सेना के प्रमुख संचालक रायरायाँ (पतरदास = तिपुर), अब्दुर्रहमान तथा ग्वालियर के राजा राजसिंह कछवाहा आदि थे।[2]

ऊपर दिए गए केशव और इतिहास के विवरणों मे अत्यधिक साम्य है। दोनो का मत है कि ऐरछ गढ मे वीरसिंहदेव घिर गए थे, पर निकल भागे थे। इस प्रकार वे एक स्थान से दूसरे को भाग जाते और शत्रु के हाथ नही आते थे। प्रमुख सेनापतियो के नाम भी दोनों विवरणों मे प्रायः एक ही हैं। दोनो मे ही अकबर के दुःखी एवं क्रुद्ध होने का उल्लेख है। अतः केशव कथित उक्त विवरण ऐतिहासिक ही मानना चाहिए।

प्रकाश ७

केशव ने इस प्रकाश मे सलीम के आगरे जाने, खडगराय की मृत्यु, सलीम के प्रयाग चले जाने, तिपुर को विक्रमाजीत की उपाधि देकर वीरसिंह के विरुद्ध भेजने, बेगम खाँ की मृत्यु, सलीम के पुनः आगरे आने, अकबर द्वारा उन्हे पीडा देने तथा वीरसिंह के अन्य युद्धों का वर्णन किया है।[3]

---

[1] वीरसिंहदेव-चरित, पृ० ३८-४४ [2] हिस्ट्री आव् इंडिया, भा० ६, पृ० १६०-२; वही, भा० वही, पृ० १०८-११३; मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० ३२६-७, केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ४, पृ० १४६-५०; जहाँगीर, भा० १, पृ० ५४-५; अकबर दी ग्रेट, पृ० ३०७
[3] वीरसिंहदेव-चरित पृ० ४४-६

उक्त घटनाओं के संबंध में ऐतिहासिक उल्लेखों का सार नीचे दिया जाता है :—

सलीम का आगरे में आगमन—सुलताना सलीमा बेगम, अकबर की सम्मति से सलीम को मनाने के लिए प्रयाग पहुँची। उसके प्रयत्न से सलीम आगरे आने को प्रस्तुत हो गया। उसने अप्रैल १६०३ ई० में आगरे पहुँच कर अपने पिता से क्षमा-याचना की। इस प्रकार दोनों में सन्धि हो गई।

१४ अक्टूबर, १६०३ ई० मे अकबर ने सलीम को मेवाड के युद्ध को पूरा करने के लिए वहाँ जाने की आज्ञा दी। अन्यमस्क होकर सलीम फतेहपुर सीकरी के आस-पास पडा रहा। उसने मेवाड़-आक्रमण के लिए अपनी अपरिमित आवश्यकताएँ बतलाईं, जिनकी पूर्ति करना अकबर को समझ में व्यर्थ था। अन्त में अकबर की आज्ञा से वह प्रयाग लौट गया। (१०नवम्बर, १६०३ ई०)।

मरीयम मकानी की मृत्यु और सलीम का पुनः आगरा आगमन—केशव ने बेगम खाँ किया है, उससे उनका अभिप्राय अकबर की मृत्यु का जो उल्लेख की माता के देहावसान से है, ऐसा प्रतीत होता है। अकबर की माता हमीदा बानू बेगम उपनाम मरीयम मकानी की मृत्यु २६ अगस्त १६०४ ई० को हुई थी। इस दुर्घटना से अकबर को महान् शोक हुआ था और सारे दरबार मे उदासी छा गई थी। इस समाचार को सुनकर सलीम अत्यन्त दुःखी हुआ और अपने पिता के साथ सवेदना प्रदर्शित करने की इच्छा से वह ६ नवम्बर, १६०४ ई० को आगरे पहुँचा। अकबर ने दश दिन पर्यन्त उसे कारागार में रखने के उपरात छोड दिया। इस अवसर पर मऊ का राजा, जो सलीम का साथी था उसके बन्दी होने का समाचार सुनकर, भाग गया। आगरे आते समय वह प्रयाग का कार्य भार शरीफ खाँ को सौंप आया था।

१६०४ ई० मे अकबर ने रायरायाँ को विक्रमाजीत की उपाधि से विभूषित करके वीरसिंह-देव के विरुद्ध भेजा पर उन्होंने युद्धो मे लकीर पीटने के अतिरिक्त और कुछ नहीं किया।[1]

उपर्युक्त ऐतिहासिक विवरण और केशव के वर्णन मे एकदम समानता है। केवल एक घटना के संबध मे कुछ मतभेद है। केशव के मतानुसार शरीफ़ खाँ भाग गया था पर इतिहास से स्पष्ट है कि सलीम उसे प्रयाग का प्रबध सौंप आया था। सभव है कि सलीम के बन्दी होने के समाचार को सुनकर वह प्रयाग से इधर-उधर चला गया हो। यह तो निर्विवाद ही है कि सलीम के कारा-गार में डाल दिए जाने के समाचार के ज्ञात होने पर उसके सभी सहायक अपनी रक्षा की चिन्ता करने लगे थे।

इस प्रकाश की अन्य घटनाओं का उल्लेख इतिहास के पृष्ठों मे अप्राप्य है, पर वे सभी अवश्य ही घटित हुई होंगी। उनमे से अधिकांश का सबध वीरसिंहदेव और अकबर की सेना के विविध युद्धों से है। सभी इतिहास लेखक यह स्वीकार करते हैं कि मुग़ल सेना वीरसिंहदेव को अन्त तक न पकड़ सकी थी। इन्हीं विस्तृत विवरणों का उल्लेख केशव ने किया है। इसी के आधार पर उनकी सत्यता और वास्तविकता का अनुमान लगाया जा सकता है।

---

[1] जहाँगीर, भा० १, पृ० ५५-८, ६३, ६८-६, अकबर दी ग्रेट, पृ० ३१०-२, ३१७, ३१६; केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया भा० ४, पृ० १४६-५१

प्रकाश ८

वीरसिंह और मुगल सेना का ओड़छा-युद्ध—अकबर की आज्ञा से विक्रमाजीत वीरसिंह को दबाने के लिए रवाना हो गया था यह बात ७वें प्रकाश मे बतलाई जा चुकी है। उसकी सहायता के लिए अबदुल्लाह खाँ और राजसिंह कछवाहा भी उसके साथ थे। इस युद्ध मे शाही सेना को हारना पडा था।[1]

केशव कथित उक्त युद्ध के संबध मे फारसी इतिहासों से विदित होता है कि शेख अब्दुर्रहमान और ख्वाजा अबदुल्लाह ने यह समाचार भेजा कि ओड़छा जीत लिया गया और वीरसिंहदेव को जंगल की ओर भगा दिया गया है। थोडे समय के पाश्चात् इन्हीं व्यक्तियों से फिर यह समाचार आया कि शत्रुओं ने कुओं में विष डलवा दिया है और ज्वर से पीड़ित होकर एक सहस्र मनुष्य मर चुके हैं, अतः हमे ओडछा छोडने के लिए विवश होना पडा है। अंत मे राजा जयसिंह ने उसका पीछा करके उसके बहुत से साथियों को मारकर उसे घायल कर दिया तो भी वह निकल भागा।[2]

तकमीला-इ-अकबरनामा के आधार पर दिये हुए उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि इन्हीं घटनाओं का वर्णन केशव ने अपने ग्रंथ के उक्त प्रकाश मे किया है। थोडे से अतर के साथ प्रायः सभी बातों मे परस्पर समानता है।

प्रकाश ९

अकबर की मृत्यु और जहाँगीर का राज्याभिषेक—नवें प्रकाश मे केशव ने लिखा है कि उक्त पराजय का समाचार ज्ञात होने पर अकबर ने उसके विरुद्ध और सेना भेजी। इसके कुछ समयोपरात अकबर का देहात होने पर सलीम जहाँगीर के नाम से सम्राट् बना।[3]

इतिहास से ज्ञात होता है कि वीरसिंहदेव के सौभाग्य से १७/२७ अक्टूबर, १६०५ ई० को अकबर की मृत्यु हो गई और उसके स्थान पर सलीम जहाँगीर के नाम से सिंहासनारूढ हुआ। (२४ अक्टूबर, १६०५ ई०)।[4]

वीरसिंहदेव जहाँगीर द्वारा सम्मानित—इस प्रकार अबुल्फजल् की मृत्यु (अगस्त १६०२ ई०) से लेकर अकबर के मरने के समय तक मुगल सेना वीरसिंहदेव को दड देने के लिए प्रयत्न करती रही। जहाँगीर ने सम्राट् बनते ही उसे आगरे बुलाया। वीरसिंहदेव के आगरे पहुँचने पर जहाँगीर ने उसका बडा आदर-सत्कार किया। वह संपूर्ण बुन्देलखंड का राजा घोषित कर दिया गया। इसके फलस्वरूप वीरसिंहदेव और रामसिंह मे विद्वेष और वैमनस्य की ज्वाला धधकने लगी।[5]

जहाँगीर द्वारा वीरसिंहदेव के सम्मानित किये जाने के प्रसंग मे इतिहास लेखकों का कथन है कि अकबर की मृत्यु के पश्चात् बनों से निकलकर वीरसिंह बुदेला ने आगरे मे उपस्थित होकर तीन हजारी मंसब प्राप्त किया तथा अपने संरक्षक पर अपना पर्याप्त प्रभाव भी डाला। वीरसिंह-

---

[1] वीरसिंहदेव-चरित, पृ० ४६-५५ [2] हिस्ट्री आव् इंडिया, भा० ६, पृ० ११३-४ [3] वीरसिंहदेव-चरित, पृ० ५५-६ [4] जहाँगीर, भा० १, पृ० ७५, १३०, अकबर दी ग्रेट, पृ० ३१६ [5] वीरसिंहदेव-चरित, पृ० ५६-६१

देव जहाँगीर का विशेष कृपा-पात्र था इस कारण से उसका ज्येष्ठ भ्राता रामचद्र बुन्देला विद्रोही बन गया।[1]

उपर्युक्त ऐतिहासिक विवरण को ही केशव ने अपने ग्रथ के इस प्रकाश मे अधिक विस्तार से लिखा है।

प्रकाश १०

शाहज़ादा खुसरो का विद्रोह—वीरसिंहदेव और रामसाहि की पारस्परिक शत्रुता भयकर रूप धारण कर रही थी कि उसी समय शाहजादा खुसरो ने विद्रोह किया और जहाँगीर उसके पकड़ने के लिए उसके पीछे लगा।[2]

उक्त घटना के विषय मे इतिहास मे यह उल्लेख मिलता है :—

खुसरो के विद्रोह के विशेष कारण थे। अकबर के शासन के अतिम दिनों मे राजा मानसिंह और अजीज कोका ने खुसरो को अकबर का उत्तराधिकारी बनाने के विफल प्रयत्न किये थे। उसी समय से जहाँगीर और खुसरो—पिता और पुत्र-में शत्रुता थी। ६ अप्रैल, १६०६ ई०को खुसरो सिकन्दरे मे अकबर की समाधि की पूजा करने के बहाने से निकल गया और फिर न लौटा। दूसरे दिन जहाँगीर स्वय उसका पीछा करने के लिए आगरे से चल पडा। इधर-उधर भागने के पश्चात् खुसरो २७ अप्रैल, १६०६ ई० को पकड़ा गया। जहाँगीर ने उसे निबिड़तम बदीगृह मे डाल दिया।[3]

इसी ऐतिहासिक घटना की ओर केशव ने खुसरो सबंधी विवरण मे सकेत किया है।

प्रकाश १०-१४

अबदुल्लाह खाँ का ओडछा पर आक्रमण—वीरसिंह और रामसाहि की शत्रुता उग्र रूप धारण करती गई। दोनों में बडी-बडी राजनीतिक चालें चली गईं। परस्पर आये दिन युद्ध भी होते रहते थे। जब बात बहुत बढ गई तो अबदुल्लाह खाँ ने वीरसिंहदेव की सहायतार्थ ओडछे पर आक्रमण कर दिया। भयकर युद्ध के उपरात अबदुल्लाह ने रामसाहि को बंदी बना लिया और वह उन्हे जहाँगीर के पास ले गया। राज्य की उचित व्यवस्था करके वीरसिंहदेव रामसाहि को छुडाने के लिए आगरे को गए और उन्हे मुक्त कराने मे वे सफल हुए।[4]

केशव द्वारा लिखे गये उक्त विवरण के संबध मे जहाँगीर लिखता हैं :—

इस समय यह समाचार मिला कि विजया दशमी के अवसर पर कालपी के जागीरदार अबदुल्लाह खाँ ने बुंदेलखड पर आक्रमण करके बडी वीरता दिखलाई और मधुकर के पुत्र रामचद्र (रामसाहि) को बदी बनाकर कालपी ले गया क्योंकि उसने बहुत समय से उस दुर्गम प्रदेश को अशाति और विद्रोह का केन्द्र बना रक्खा था। .(२७ जिल्क़दा १०५० हि० = १५ मार्च, १६०७ ई०) को अबदुल्लाह रामचद्र बुंदेला को हथकड़ियाँ पहनाकर मेरे पास लाया। मैंने उसकी बेडियाँ

---

[1] जहाँगीर, भा० १, पृ० १३४ ५, तुजुक-इ-जहाँगीरी, भा० १, पृ० २४ [2] वीरसिंहदेव-चरित, पृ० ६२-३ [3] तुज़ुक-इ-जहाँगीरी, भा० १, पृ० ५१-७२, जहाँगीर, भा० १, पृ० ६८-७३, १३८-५५, केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ४, पृ० १५२, १५६-७ [4] वीरसिंहदेव-चरित, पृ० ६३-८७

दूर करने की आज्ञा दी और वस्त्रादि से सम्मानित करके उसे राजा बासुदेव को सौंप दिया कि वह उसे तथा उसके अन्य सबंधियों को, जो पकडे गए थे, अपने उत्तरदायित्व पर मुक्त कर दे। यह मेरी अनुकम्पा और दयालुता के कारण हुआ। जैसी कृपा दिखलाई गई उसकी उसे आशा नहीं थी।[1]

जहाँगीर द्वारा दिए हुए इस विवरण से रामसाहि के विद्रोह का पता चलता है। केशव ने रामसाहि को छुड़ाने के लिए वीरसिंहदेव के जाने का उल्लेख किया है, पर जहाँगीर के कथनानुसार उसन अपनी दयालुता से प्रेरित होकर उसे राजा बासुदेव को सौंप दिया था। हो सकता है कि वीरसिंहदेव के आगरे पहुँचन से पूर्व ही जहाँगीर ने रामसाहि को मुक्त कर दिया हो। यह भी सम्भव है कि वीरसिंहदेव आगरे को जहाँगीर से मिलने के लिए गए हों और केशव ने कल्पना करके रामसाहि को छुडाने के लिए उनके वहाँ जाने का कारण बतला दिया हो। इस प्रसंग मे वर्णित अन्य घटनाओं—बुन्देलखड मे होने वाले स्थानीय युद्ध आदि— का वर्णन इतिहास-ग्रथों मे अप्राप्य है। पर वे अवश्य ही लडे गए होंगे, क्योंकि उस समय वीरसिंहदेव और रामसाहि में शत्रुता और फूट अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी।

वीरसिंह का बुन्देलखंड मे पुनः लौटना—वीरसिंहदेव के आगरे चले जाने पर बुन्देलखण्ड मे पुनः अशान्ति और अव्यवस्था फैल गई, पर जब वे फिर लौट आए तो सारी परिस्थितियाँ सुधर गई। वे ओडछा के राजा घोषित कर दिए गए। उन्होंने ओडछा का नाम जहाँगीरपुर रक्खा और मधुकरशाहि का सारा राज्य उन्हे दे दिया गया। उन्होंने ओडछा को अपनी राजधानी बनाया।[2]

केशव के इस कथन की परीक्षा करने के लिए ऐतिहासिक सामग्री अप्राप्य है।

इस प्रकार केशव विरचित वीरसिंहदेव-चरित की ऐतिहासिकता पर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि उसमे वर्णित प्रायः सभी विवरण ऐतिहासिक हैं। डाक्टर बेनीप्रसाद[3] जैसे इतिहास विशेषज्ञ का इस ग्रथ को ऐतिहासिक दृष्टि से एक दम हेय एव तुच्छ, अतः त्याज्य मानना न्याय-सगत नहीं प्रतीत होता। सच बात तो यह है कि नीर-क्षीर-विवेक से कवित्व को इतिहास से पृथक् कर देने पर 'वीरसिंहदेव-चरित' नवीन मौलिक एव महत्वपूर्ण प्रचुर ऐतिहासिक सामग्री पाठको के सामने रखता है जिसका दिग्दर्शन अन्यत्र दुर्लभ प्रतीत होता है। इस दृष्टि से अध्ययन करने पर इस ग्रथ-रत्न का मूल्य बहुत बढ जाता है।

---

[1] तुज़ुक-इ-जहाँगीरी, भा० १, पृ० ८२-७ [2] वीरसिंहदेव चरित, पृ० ८७-८ [3] हिस्ट्री ऑव् जहाँगीर, भा० १, पृ० ५३ (पाद-टिप्पणी)

अध्याय २

गोरा बादल की कथा

आगामी पृष्ठों मे जटमल कृत 'गोराबादल की कथा' मे वर्णित युद्ध-समय, रत्नसेन के वंश का नाम, पात्र, आलाउद्दीन का सिंहल की ओर प्रस्थान, चित्तौड पर आक्रमण के कारण, युद्ध-वर्णन, युद्ध का अन्त, सैन्य-सख्या, सिंहल-द्वीप, पद्मावती की कथा, आदि की ऐतिहासिकता पर विचार किया गया है।

युद्ध का समय—जटमल ने युद्ध तिथि का उल्लेख नही किया है। उसने केवल इतना ही लिखा है कि अलाउद्दीन चित्तौड को बारह वर्ष तक घेरे पडा रहा।[1]

जायसी ने इस युद्ध का समय आठ वर्ष बतलाया है।[2] पर अमीर खुसरो, जो इस लडाई मे सुलतान के साथ था, अपनी 'तारीख-इ-अलाई' मे लिखता है कि ८ जमादि-उस्सानी हि० स० ७०२ (वि० सं० १३५६ माघ सुदि ६=ता० २८, जनवरी ई०सन् १३०३) को सुलतान अलाउद्दीन चित्तौड़ लेने के लिए रवाना हुआ...सोमवार ता० ११ मुहर्रम हि० स० ७०३=वि० स० १३६०, भाद्रपद सुदि १४=ता० २६ अगस्त, ई० सन् १३०३ को किला फतह हुआ।"[3] इसके अनुसार चित्तौड का युद्ध लगभग सात मास तक होता रहा। फ़रिश्ता लिखता है कि छः महीने के घेरे के उपरान्त चित्तौड पर अलाउद्दीन का अधिकार हो गया।[4]

अतएव जटमल द्वारा दिया हुआ बारह वर्ष का समय इतिहास के प्रतिकूल ठहरता है।

राणा रत्नसेन के वश का नाम—जटमल ने राणा रत्नसिंह को चहुँबाण (चौहान) राजपूत माना है।[5] जायसी ने भी इन्हे चौहान ही लिखा है।[6]

श्री ओझा जी मेवाड़ राजवंश के सबध मे लिखते हैं कि फिर उस वश मे (कुश के वंश मे) वि० स० ६२५ (ई० सन् ५६८) के आसपास मेवाड मे गुहिल नामक प्रतापी राजा हुआ, जिसके नाम से उसका वंश गुहिल वंश कहलाया.... ....पीछे से इस वश की एक शाखा सीसोदा गॉव में रही जिससे उस शाखा वाले उस गॉव के नाम पर सीसोदिया कहलाए। इस समय इसी सीसोदिया शाखा के वंशधर उदयपुर के महाराणा हैं।

उदयपुर का राजवंश वि० स० ६२५ (ई० सन् ५६८) के आस-पास से लगाकर आजतक समय के अनेक हेर-फेर सहते हुए उसी प्रदेश पर राज्य करता चला आ रहा है।[7]

उक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि चित्तौड के महाराणा 'गुहिल' अथवा 'सीसोदिया' कुल के सूर्य-वशी राजा हैं, न कि चौहान-कुल के।

श्री ओझाजी मेवाड के शासक राव जैत्रसिंह (शासन काल १२१३ १२५२ ई०) के नाडौल के चौहानों के साथ के युद्ध का विवरण देते हुए कहते हैं.....

---

[1] गोरा बादल की कथा, छं० ७४, पृ० १६ [2] जायसी-ग्रंथावली, पृ० २७१ [3] उदयपुर का इतिहास, खं० २, पृ० ४८५ [4] वही, खड वही, पृ० ४८७ [5] गोराबादल की कथा, छं० २५, पृ० ७ [6] जायसी ग्रंथावली, पृ०१३० [7] राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० ३६६-७१

नाडौल के चौहानों के वशज कीतू (कीर्त्तिपाल) ने मेवाड को थोडे समय के लिए ले लिया था। जिसका बदला लेने के लिए जैत्रसिंह ने नाडौल पर चढाई की हो।[1]

सम्भव है कि चौहानों के चित्तौड़ पर इस अल्पकालीन अधिकार हो जाने ही के कारण यह प्रवाद चल पडा हो कि वहाँ के शासक चौहान वश के हैं। पर उक्त जैत्रसिंह से पहले से ही वहाँ पर गुहिल-राजपूतों का राज्य था। अतएव राव रत्नसिंह (१३०३ ई०) गुहिल अथवा सीसोदिया था, न कि चौहान।

चारणों आदि मे प्रचलित उक्त प्रवाद से ही प्रभावित होकर जायसी तथा जटमल ने उक्त भूल कर डाली है। जटमल की यह ऐतिहासिक भूल है। उन्होंने सुनी सुनाई घटना का ही आश्रय लिया है। उसमे नाम-मात्र को भी तथ्य नही है।

निश्चित पात्र

हिन्दू-पात्र—रत्नसिंह—यह रावल समरसिंह के पुत्र थे। यह १३०३ ई० मे सिंहासनारुढ हुए। इन्हे शासन करते हुए थोडे ही महीने हुए थे, कि इतने ही मे अलाउद्दीन ने आक्रमण करके इन्हे मारकर चित्तौड पर अधिकार कर लिया। मेवाड के कुछ ख्यातों, राज-प्रशस्ति महाकाव्य तथा टाड के राजस्थान मे रत्नसिंह का नाम तक नही दिया है। पर कुम्भलगढ के शिलालेख (१४६० ई०) और एकलिंग महात्म्य से सिद्ध है कि वह समरसिंह के पुत्र थे और उस युद्ध मे मारे गए थे।[2]

गोरा बादल—जटमल ने गोरा बादल को दो विभिन्न सामन्त माना है। उनके मतानुसार बादल गाजण-सुत था और गोरा उसका चाचा था।[3]

जायसी ने बादल को गोरा का पुत्र मानकर दोनों को रत्नसिंह का विश्वासपात्र सरदार बतलाया है।[4]

टाड के मत मे गोरा पद्मिनी का चाचा और बादल गोरा का भतीजा था।[5]

श्री ओझाजी ने इन वीरों के इतिहास के सबध में नवीन प्रकाश डालने का, जो प्रयत्न किया है, उसका साराश नीचे दिया जाता है :—

उदयपुर राज्य के छोटी सादडी गॉव से दो मील दूर एक पहाडी पर के 'भमरमाता' मन्दिर से प्राप्त एक शिलालेख से विदित होता है कि 'गौर' वशीय शासक यशगुप्त ने जनवरी, के ४६१ ई० को पहाड पर अपने माता पिता के पुण्य के निमित्त देवी का मन्दिर बनवाया। इस लेख से विदित है कि 'गौर' नामक क्षत्रिय वंश वि० सवत् छठी शताब्दी के मध्य मे मेवाड मे विद्यमान था और छोटी सादड़ी के आस-पास के प्रदेश पर उसके वश वालों का राज्य था। महाराणा रायमल के समय में (१८८८ ई० में) वर्त्तमान गौर वशीय क्षत्रिय उक्त माहाराणा की सेवा

---

[1] राजपूताने का इतिहास, खं० २, पृ० ४६१-२ [2] वही, खं० वही, पृ० ४८४ [3] गोराबादल की कथा, छं० ७, पृ० २, छं० ६६, पृ० २४ [4] जायसी-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० २७; वही, गोरा बादल-युद्ध-खंड, पृ० ३२७ [5] वही, भूमिका पृ० २६, टाड, राजस्थान, भा० १, पृ० २०३

में थे और बडी वीरता से लडे थे। विक्रमीय संवत् की १४वी शताब्दी मे गौर वशीय राजपूत मेवाड के राजाओं की सेना में थे। चित्तौड़ के किले पर पद्मिनी के महलों से दूर दक्षिण पूरब में दो गुबजदार मकान हैं जिनको लोग गोराबादल के महल कहते हैं।

··· ··जायसी के पद्मावत (रचना-काल १५४० ई०) और जटमल कृत गोरा बादल की कथा (रचनाकाल १६२३ ई०) मे गोरा और बादल को दो भिन्न व्यक्ति माना है परन्तु ये दोनों पुस्तके गोरा बादल की मृत्यु से क्रमश: २३७ और ३२० वर्ष पीछे बनी हैं। इतने दीर्घ काल मे नामों मे भ्रम होना सभव है। गोरा और बादल दो पुरुष नहीं, किंतु एक ही पुरुष का नाम होना संभव है, जैसा कि राठौर दुर्गादास, सीसोदिया पत्ता आदि, जिसका पहला अंश (गोरा) वश-सूचक और दूसरा अश (बादल) व्यक्तिगत नाम है। गोरा-बादल का वास्तविक अभिप्राय गौरा (गोर) वंश के बादल नामक पुरुष से हो सकता है। वश सूचक गौर नाम अज्ञात होने के कारण पिछले लेखको ने भ्रम से दो नाम अलग-अलग मान लिए होंगे।[1]

उपर्युक्त उद्धरण पर गभीरतापूर्वक विचार करने से विदित होता है, कि ओझा जी ने गोरा-बादल के सबध मे हमारे सामने एक नवीन सुझाव रक्खा है। उनके उक्त निर्णय का आधार 'गौर-वश' सबंधी उक्त शिलालेख है। पर उस शिलालेख मे गोरा-बादल सबधी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप मे कोई उल्लेख नहीं आया है। आदरणीय ओझा जी का उक्त निश्चय गौर वश के परिचय तथा अन्य व्यक्तियों के नाम-साम्य पर ही अवलम्बित है। अतएव उनका उक्त निर्णय नवीन और सभावित होते हुए भी, ठोस प्रमाणों के अभाव मे, सत्य तथा अन्तिम निर्णय नहीं माना जा सकता।

फारसी इतिहास लेखकों तथा इतिहासों बरनी, इसामी, अमीर- खुसरो, इब्न बतूता, 'तारीख-इ-मुहम्मदी', एव 'तारीख-इ-मुबारक-शाही', फरिश्ता, हाजीउद्दवीर आदि मे भी गोरा बादल सबधी विशेष विवरण नही मिलता है और न अभी तक कोई ऐसा शिलालेख ही मिला है जो उनके जीवन पर विशेष प्रकाश डाल सके।

ऐसी परिस्थितियों मे केवल इतना ही स्वीकार किया जा सकता है कि गोरा बादल चित्तौड़ राज्य के विश्वास-पात्र तथा स्वामि-भक्त सामत थे, जो राणा रत्नसिह के साथ शत्रु का सामना करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए थे।

पद्मिणी—(पद्मिनी) पद्मिनी का जो कुछ भी विवरण गोरा बादल की कथा तथा अन्य काव्य-ग्रंथों मे मिलता है उसम से अधिकाश काल्पनिक है। केवल इतना ही निश्चय के साथ कहा जा सकता है कि वह चित्तोड के राव रत्नसिह की एक रानी थी।[2] उसके सबंध मे अधिक प्रामाणिक विवरण देना कठिन है।[3]

मुसलमान-पात्र अल्लावदी—(अलाउद्दीन)।[4]

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन-संस्करण, भा० १३, १९८९ वि०, पृ० ७११ [2] उदय पुर राज्य का इतिहास, भा० २, पृ०४११ [3] पद्मिनी कथा के विस्तृत ऐतिहासिक विवेचन के लिए देखिए पृ० १९६-२०२ [4] देखिए, अध्याय ११ के अन्तर्गत हम्मीररासो की ऐतिहासिकता में अलाउद्दीन का विवरण

अनिश्चित पात्र

हिंदू-पात्र—गाजण, वीरभाण, राघव चेतन, परभावती (प्रभावती)।

अलाउद्दीन का सिंहल की ओर प्रस्थान—जटमल ने पद्मिनी की प्राप्ति के लिए अलाउद्दीन के सिंहल की ओर प्रस्थान करने का उल्लेख किया है।[1] कहने की आवश्यकता नहीं है कि कवि का यह विवरण एक दम काल्पनिक है।

आक्रमण का कारण—जटमल के मतानुसार पद्मिनी की प्राप्ति की इच्छा से प्रेरित होकर अलाउद्दीन ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया था।[2] इतिहासज्ञ इस बात से भली प्रकार परिचित हैं कि अलाउद्दीन एक महत्त्वाकांक्षी, उद्दंड और दूरदर्शी सुलतान था। दिल्ली मे शांतिपूर्वक शासन करने के लिए यह आवश्यक था कि वह राजपूताने पर विजय प्राप्त करके अपने राज्य को विस्तृत एव निष्कंटक बनाए। यही कारण था कि उसने राजस्थान के विविध राज्यों पर आक्रमण किये। उसे शनैः शनैः अपने उद्देश्यों मे सफलता भी मिलती गई। सफलता से प्रोत्साहित होना मानव स्वभाव है। रणथभौर जैसे अजेय दुर्ग को अधिकृत करने से उसका उत्साह अधिक बढ गया। अतः राजस्थान मे नवीन विजय-प्राप्ति की कामना से प्रेरित होकर अलाउद्दीन ने चित्तौड पर अपनी सेनायें भेजीं।[3] इससे स्पष्ट है कि जटमल ने चित्तौड पर आक्रमण का जो कारण बताया है वह एकदम काल्पनिक और निराधार है।

युद्ध-वर्णन—चित्तौड़ के युद्ध के विस्तृत विवरण का अभाव है। इस दुर्ग के घेरे के अवसर पर बहुत से भयंकर युद्ध लड़े गए होंगे और राजनीतिक चालें चली गई होंगी। पर इनका विस्तृत वर्णन किसी भी तत्कालीन अथवा उत्तरकालीन इतिहास लेखक ने नही किया है। घेरा अधिक समय तक पड़ा रहा था। इसी से यह सिद्ध हो जाता है कि राजपूतों ने एक भी प्राणी जीवित रहने के समय तक उसकी रक्षा करने का निश्चय कर लिया होगा।

चित्तौड दुर्ग की भव्यता का वर्णन करते हुए अमीर ख़ुसरो कहता है कि "दुर्ग जो एक पहाड़ी को काटकर बनाया गया था, अद्भुत था। अपने वीर नेता रत्नसेन के नेतृत्व मे शूर राजपूत आठ मास पर्यन्त आक्रकणकारियों का सामना करते रहे। 'राय' भाग गया परंतु पीछे से स्वयं शरण मे आया और तलवार की बिजली से बच गया। तीस हजार हिन्दुओं को कत्ल करने की आज्ञा देने के पश्चात् उस (सुलतान) ने चित्तौड़ का राज्य अपने पुत्र खिज्र खाँ को दिया और उस चित्तौड़ का नाम ख़िज्राबाद रक्खा।" जिया बरनी अपकी 'तारीख़-इ-फीरोजशाही' मे लिखता है कि "सुलतान अलाउद्दीन ने चित्तौड घेरा और थोडे ही अरसे मे उसे आधीन कर लिया। घेरे के समय चातुर्मास मे सुलतान की फौज को बड़ी हानि पहुँची।" आस-पास के सरदारों ने इस युद्ध मे भाग लिया अथवा नहीं इसका कोई भी उल्लेख नहीं मिलता है। परंतु तत्कालीन पारस्परिक वैमनस्य एवं उदासीनता-भाव को देखते हुए यह अनुमान लगाया जा सकता है कि चित्तौड़ के राजा को अकेले ही युद्ध करना पड़ा होगा। संवत् १५१७ वि० (१४६० ई०) के एक शिलालेख मे,

---

[1] गोराबादल की कथा, छं० ६१-६, पृ० १५-७ [2] वही, छं० ६६-७०, पृ० १७
[3] अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी, पृ० ८१

जो उदयपुर म्युज़ियम मे सुरक्षित है, लिखा है कि सीसोदिया जागीर के महाराणा लक्ष्मणसिंह अपने सात पुत्रों के साथ इस युद्ध मे मारे गए। इसी से स्पष्ट है कि चित्तौड का युद्ध बहुत भयंकर हुआ था। सभी मुसलमान इतिहास लेखकों ने भी इसको स्वीकार किया है।

गढ के ऊपर मुसलमानों का अधिकार होने से पूर्व राजपूत रमणियों ने जौहर-व्रत द्वारा अपने सतीत्व की रक्षा की। रत्नसिंह इस युद्ध मे मारा गया और खिज़्रखाँ वहाँ का शासक नियुक्त हुआ।[1]

सेनायें

राव रत्नसिंह की सेना—जटमल ने इनकी सेना का उल्लेख नहीं किया है; पर 'गोरा बादल की मत्रणा' के प्रसंग में पाँच सौ डोलियों मे दो-दो वीरों के बैठने और चार-चार शूरों के कन्धा लगाने का उल्लेख आया है।[2] इसके अनुसार उनकी सेना की सख्या तीन सहस्र मानी जा सकती हैं। इस संख्या को प्रामाणिक नही माना जा सकता। मुसलमान लेखकों ने भी राव की सेना की संख्या का उल्लेख नहीं किया है। पीछे बतलाया जा चुका है कि अमीर खुसरो ने 'तारीख़ इ-अलाई' में अलाउद्दीन द्वारा 'तीस सहस्र' हिदुओं के कत्ल करने का उल्लेख किया है।[3] हो सकता है कि यह संख्या संग्राम मे काम आने वाले वीरों की हो। छः मास तक लडे गए युद्ध मे सहस्रों राजपूत वीर काम आए होंगे। जटमल द्वारा दी हुई उक्त सख्या को काल्पनिक मानना चाहिए। यह भी हो सकता है कि गोरा बादल के साथ जानेवाली सेना की यह सख्या रही हो। यह भी सभव है कि परंपरानुगत परिपाटी के अनुसार जटमल ने अपने चरित्र-नायक के शौर्य और वीरत्व को द्विगुणित करने के लिए राजपूत सेना की सख्या कम और मुसलमानों की अत्यधिक बतला दी हो।

अलाउद्दीन की सेना—अलाउद्दीन की सेना का वर्णन करते हुए जटमल ने दो स्थानों पर दो भिन्न-भिन्न सख्याएँ दी हैं। सिहल की ओर प्रयाण करती हुई सेना की संख्या उन्होंने 'नौ लाख त्रिगुण तुरग तथा सोलह सहस्र मैगल (हाथी)' बतलाई है।[4] उसके पश्चात् ही चित्तौड़ की ओर चल पड़ने पर उसकी सख्या तीन लाख अश्वारोही तथा हाथियों के पचान हलके (झुड) मानी है।[5]

इतिहास के साक्ष्य से सिद्ध है कि अलाउद्दीन की स्थायी सेना पौने पाँच लाख थी।[6] जटमल द्वारा दी हुई दो विभिन्न संख्याएँ इस बात का पर्याप्त प्रमाण हैं कि वह उसके संबंध में संदिग्ध थे। इसके अतिरिक्त उनके द्वारा दी हुई प्रथम संख्या अत्युक्तपूर्ण है तथा दूसरी सख्या

---

[1] उदयपुर राज्य का इतिहास, खं० २, पृ० ४८४-६; ईलियट, हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ३; पृ० ७६-७, १८६, आर्क्यालॉजीकल सर्वे रिपोर्ट, १९२५-२६ ई०, पृ० १४६, अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी, पृ० ८१-६ [2] गोराबादल की कथा, छं० ६८, पृ०२५ [3] देखिए पृ० १६४, राजपूताने का इतिहास, भा० २, पृ० ४८५ [4] गोराबदल की कथा, छं० ६५, पृ० ६१ [5] वही, छंद ७२, पृ० १७-८ देखिए अध्याय ११, हम्मीररासो की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत अलाउद्दीन की सेना का विवरण।

भी ठीक नहीं मानी जा सकती। सन् १३०३ ई० मे अलाउद्दीन को सेना का एक भाग बङ्गाल की ओर भेजना पडा और उसका कुछ भाग राजधानी मे भी रखना पडा होगा। इतनी विशाल सेना चित्तौड भेज देने पर उसकी सेना उक्त स्थानों के लिए कम रही होगी। पर साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि चित्तौड पर एक विशाल सेना लेकर अलाउद्दीन ने आक्रमण किया होगा। इस प्रकार कवि जटमल द्वारा दी हुई दोनों सख्याओं को प्रामाणिक नही माना जा सकता।

सिंहल द्वीप—जटमल ने पद्मिनी को सिहल द्वीप का माना है और सिंहल की स्थिति उदधि के पार बतलाई है।[1] इस सबंध मे आचार्य रामचद्र शुक्ल का कथन है "पद्मिनी क्या सचमुच सिहल की थी? पद्मिनी सिहलद्वीप की नहीं हो सकती। यदि 'सिंहल' नाम ठीक मानें तो वह राजपूताना या गुजरात का कोई स्थान होगा।"[2]

इस सबंध में श्री ओझा जी का मत है कि "चित्तौड़ से करीब चालीस मील पूर्व मे सिंगोली नाम का प्राचीन स्थान है, जिसके विस्तृत खंडहर और प्राचीन किले के चिह्न अब तक विद्यमान हैं। अतएव पद्मिनी का पिता सिंगोली का स्वामी होगा। सिंगोली और सिहल (सिहल द्वीप) नाम परस्पर मिलते हुए होने के कारण 'पद्मावत' और 'गोराबादल की कथा' के रचयिताओं ने भ्रम मे पडकर सिंगोली को सिंहल (सिहल द्वीप) मान लिया हो, यह संभव है। रत्नसिंह के राज्य करने का जो अल्प समय निश्चित है उसमे यही माना जा सकता है कि उसका विवाह सिहल द्वीप अर्थात् लंका के राजा की पुत्री से नही किन्तु सिंगोली के सरदार की कन्या से हुआ हो।"[3]

सिहल द्वीप की स्थिति के सबध मे श्रद्धेय ओझा जी ने उक्त लेख द्वारा प्रकाश डालने का पर्याप्त प्रयत्न किया है। पर विचारपूर्वक देखने से विदित होता है कि उनके निष्कर्ष अधिकतर नाम-साम्य के अनुमान ही पर निर्भर हैं। जब तक और सामग्री न मिले तब तक उक्त सुझाव से सतोष करते हुए भी उसे एकदम ठीक एव अतिम निर्णय नहीं माना जा सकता।

उपर्युक्त संक्षिप्त ऐतिहासिक परीक्षा के उपरांत 'गोरा बादल की कथा' के संबध मे यही कहा जा सकता है कि जटमल ने उसमे जायसी कृत पद्मावत के समान बहुत सी सुनी-सुनाई तथा प्रचलित बातों को स्थान दिया है, पर जायसी के पद्मावत और इसमे कई बातों मे भेद है। कवि जटमल ने अपनी रचना मे चारणों द्वारा प्रचलित की हुई अनैतिहासिक बातों को भी स्थान दे दिया है। यह सब होते हुए भी यह मानना पडता है कि इस कवि ने चारणों के समान अत्यधिक कल्पना से काम नहीं लिया है। उसने ऐतिहासिक घटनावली मे परिवर्तन किए हैं और कल्पना की भी पर्याप्त सहायता ली है। पर यह सब कुछ होने पर भी यह स्वीकार करना पडेगा कि यह सक्षिप्त काव्य वीररस की एक ऐसी कृति है जिसका कलेवर ऐतिहासिक एवं तथ्यपूर्ण घटनावली के आधार पर अवलंबित है। अतएव यह अपने ढग की एक अत्यत महत्त्वपूर्ण रचना है।

(अ) पद्मिनी की कथा की ऐतिहासिकता

नीचे के पृष्ठों मे 'गोरा बादल की कथा' मे उल्लिखित पद्मिनी की कहानी की वास्तविकता और ऐतिहासिकता पर विचार किया जा रहा है :—

---

[1] गोरा बादल की कथा, छं० ६४; पृ० १६ [2] जायसी-ग्रन्थावली, भूमिका, पृ० ३३ [3] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग १३, १९८९ वि०, पृ० १४-६

अब तक के अनुसंधानों के आधार पर इसका प्रथम रूप हिंदी मे पद्मावत (रचना-काल १५४० ई०) मे मिलता है।[1] इसके पश्चात् दूसरा साहित्यिक रूप जटमल की गोरा बादल की कथा है।[2]

फ़रिश्ता ने अपनी पुस्तक 'तारीख़-इ-फरिश्ता' मे चित्तौड का विवरण दो स्थानो पर दिया है। प्रथम स्थल पर चित्तौड के शासक का नाम नही दिया है और दूसरे स्थान पर हि० स० ७०४ (१३०४ ई०) के प्रसग मे लिखता है कि 'इस समय चित्तौड का राजा राय रत्नसेन, जब से सुलतान ने उसका किला छीना तब से कैद था, अद्भुत रीति से भाग गया। अलाउद्दीन ने उसकी एक लडकी के अलौकिक सौदर्य और गुणों का हाल सुनकर उससे कहा कि भाई तू अपनी लडकी मुझे सौंप दे तो तू बधन से मुक्त हो सकता है। राजा ने, जिसके साथ कैद मे सख्ती की जाती थी, इस कथन को स्वीकार कर अपनी राजकुमारी को सुलतान को सौंपने के लिए बुलाया। राजा के कुटुम्बियों ने इस अपमानसूचक प्रस्ताव को सुनते ही अपने वश के गौरव की रक्षा करने के लिए राजकुमारी को विष देने का विचार किया, परतु उस राजकुमारी ने ऐसी युक्ति निकाली जिससे वह अपने पिता को छुडाने तथा और अपने सतीत्व की रक्षा करने को समर्थ हो सकती थी। तदनुसार उसने अपने पिता को लिखा कि आप ऐसा प्रसिद्ध करदें कि मेरी राजकुमारी अपने सेवकों सहित आ रही है और अमुक दिन दिल्ली पहुँच जायेगी। उसकी युक्ति यह थी, कि अपने वंश के राजपूतों मे से कई एक को चुनकर डोलियों मे सुसज्जित बिठला दिया और राजवश की स्त्रियों की रक्षा के योग्य सवारों तथा पेदलों के दल-बल के साथ वह चली. उसकी सवारी दिल्ली पहुँची। उस समय रात पड गई थी, सुलतान की खास परवानगी से उसके साथ की डोलियाँ कैदखाना मे पहुँची और वहाँ के रक्षक बाहर निकल आए। भीतर पहुँचते ही राजपूतों ने डोलियों से निकलकर अपनी तलवारें सम्हालीं और सुलतान के सेवकों को मारने के पश्चात् राजा सहित वे तैयार रक्खे हुए घोडो पर सवार होकर भाग निकले। सुलतान की सेना आने न पाई, उसके पहले ही राजा अपने साथियों सहित शहर से बाहर निकल गया और भागता हुआ अपने पहाडी प्रदेश मे पहुँच गया, जहाँ उसके कुटुम्बी छिपे हुए थे। इस प्रकार अपनी चतुर राजकुमारी की युक्ति से राजा ने कैद से छुटकारा पाया और उसी दिन वह सुसलमानों के हाथ मे रहे हुए अपने मुल्क को उजाडने लगा। अत मे सुलतान ने चित्तौड को अपने अधिकार मे रखना निरर्थक समझ खिज्र खा को हुक्म दिया कि किले को खाली कर उसे राजा के भाजे (मालदेव सोनगरा) को सुपुर्द कर दे।[3]

पद्मावत की कथा से फरिश्ता के उक्त कथन की तुलना करने पर स्पष्ट हो जायेगा कि इसका मुख्य आधार वही कथा है। फरिश्ता ने उसमें कुछ घटा बढा करके ऐतिहासिक रूप मे उसे रख दिया है और पद्मिनी को रानी न कहकर बेटी बतलाया है।

---

[1] इसके कथानक के लिए देखिए रामचन्द्र शुक्ल द्वारा सम्पादित, जायसी-ग्रंथावली, भूमिका पृ० १६-२८ [2] देखिए गोरा बादल की कथा, भूमिका, पृ० ४-५ [3] राजपूताने का इतिहास, भा० २, पृ० ४६२-३

...पद्मिनी के दिल्ली जाने की बात ही निर्मूल है। दूसरी बात यह भी है कि अलाउद्दीन जैसे प्रबल सुलतान की राजधानी की कैद से भागा हुआ रत्नसिंह बच जाय तथा मुल्क को उजाड़ता रहे और सुलतान उसको सहनकर अपने पुत्र को चित्तौड़ खाली करने की आज्ञा दे दे यह असभव प्रतीत होता है। वि० स० ७०४ (वि० सवत् १३६१=ई० सन् १३०४) मे खिज्र खाँ के किला छोड़ने और मालदेव को देने की बात भी निर्मूल है।[1]

श्री ओझा जी का यह कथन कि "अलाउद्दीन जैसे प्रबल सुलतान की राजधानी की कैद से भागा हुआ रत्नसिंह बच जाय तथा मुल्क को उजाड़ता रहे और सुलतान उसको सहनकर अपने पुत्र को चित्तौड़ खाली करने की आज्ञा दे दे असभव प्रतीत होता है।" कुछ विशेष महत्त्वशाली नहीं लगता। अलाउद्दीन एक शक्तिशाली एव उद्दण्ड सुलतान था इसमें किसी को सन्देह नही हो सकता, पर रणथभौर, चित्तौड तथा अन्य गढों के युद्धों से वह राजपूतों की वीरता का लोहा मानने लगा था, यह स्पष्ट है। उसके पश्चात् उससे अधिक शक्ति-शाली सम्राट् अकबर दिल्ली की गद्दी पर बैठा। वह महाराणा प्रताप को वश मे न कर सका और आजन्म वे उसे नाकों चने चबाते रहे। औरगजेब जैसे शक्तिशाली एव कूटनीतिज्ञ सम्राट् के बधन से आगरे से छूटकर शिवाजी सकुशल दक्षिण जा पहुँचे। ये दो प्रमाण इस बात को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं कि सुलतान पर राजपूतो का आन्तक अवश्य छागया होगा। अतः ओझा जी का यह कथन अधिक ठीक नही है। पर उन्होंने अपने कथन की प्रामाणिकता मे जो अन्य प्रमाण दिए हैं, वे ठोस हैं।

हाजीउद्दबीर ने गुजरात मे रहकर अपनी पुस्तक जफरुलवली की रचना की थी। उसमे उसने लिखा है कि "चित्तौड-विजय के पश्चात् वहाँ के हिन्दू-राजा को चित्तौड के सुरक्षित स्थान पर बदी बनाकर अलाउद्दीन ने दिल्ली से उसके पास यह सदेश भेजा कि यदि वह सुलतान के पास अपनी रानी (जिसमे कुछ गुण थे) को भेज दे तो उसे मुक्ति मिल सकती है।[2] ऐसी स्त्री को पद्मिनी कहते हैं।" दूसरे स्थल पर इस अरबी इतिहास लेखक ने लिखा है कि चित्तौड छोडने से पहले अलाउद्दीन ने पद्मिनी लेने और बदले मे उसे छोडने की आज्ञा दी। इस प्रकार यह संभव है कि जब सुलतान देहली को लौट रहा था तो राजा कदाचित् उसके साथ था।

हो सकता है कि उस समय राजा ने उससे उसको मेवाड देश मे छोड दिए जाने की प्रार्थना की हो, जिससे वह उसके लिए अपनी पत्नी भेज सकता और वह उसे उस मनुष्य को सौप देता जिसके लिए बादशाह आज्ञा देता, और फिर सुलतान के रक्षकों के साथ वह देहली चला आता। रानी पाने की कामना से सुलतान ने उसको वहाँ मुक्त कर दिया और स्वयं देहली को चला गया। राजा ने अपने विश्वस्त सामन्तों और नौकरों को गोपनीय आज्ञायें भेज दीं और वे २५०० की सख्या मे पालकियों मे आए और उन सैनिकों से लडे जिन्हे सुलतान ने राजा की रक्षा के लिये, नियुक्त किया था। वह भाग गया। यह सुनकर अलाउद्दीन ने चित्तौड-राणा को भानजी (बहिन की पुत्री), जिसका विवाह सुलतान के साथ हुआ था, को दे दिया, पर वह राजा के मन्त्री के

---

[1] राजपूताने का इतिहास भा० २, पृ० ४६३ [2] हाजीउद्दवीर ने यहाँ पद्मिनी का व्यक्ति वाचक के रूप में नहीं वरन् अलौकिक गुण संपन्न स्त्री के विशेष्य के रूप में प्रयोग किया है (क़ब्बाज़ा)।

द्वारा शीघ्र ही मारी गई। इसके बाद वह हिंदू-राजा अपने देश को लौट आया और वहाँ पर अपनी सत्ता स्थापित की। यह दशा हि० स० ६४१ में गुजरात के शासक बहादुर बिन मुजफ्फर द्वारा इस प्रदेश के जीते जाने तक रही।[1]

कर्नल टॉड ने, प्राचीन परम्परा, भाटों और चारणों के कथन के आधार पर पद्मिनी का जो विवरण दिया है, उसका साराश यह है :—

"स० १३३१ (ई० सन् १२७४) मे लखमसी (लक्ष्मणसिंह) चित्तौड की गद्दी पर बैठा। उसका चाचा भीमसी (भीमसिंह) उसका रक्षक बना। भीमसी ने सिंहल द्वीप (सीलोन, लका) के राजा हमीरसिंह चौहान की पुत्री पद्मिनी से विवाह किया जो बडी रूपवती और गुणवती थी। अला-उद्दीन ने उसके लिए चित्तौड पर चढाई कर दी, परन्तु उसमे सफल न होने से उसने केवल पद्मिनी का मुख देख कर लौटना चाहा और अंत मे दर्पण मे पडा हुआ उसका प्रतिबिम्ब देखकर लौट जाना तक स्वीकार कर लिया। वह थोडे से सिपाहियों के साथ किले मे चला आया और पद्मिनी के मुख का प्रतिबिंब देखकर वह लौट गया। लौटते समय दुर्ग के नीचे मुसलमानों ने छलकर भीमसी को पकड़ लिया और पद्मिनी के सौंपने पर उनको छोडना चाहा। यह समाचार सुनकर पद्मिनी के चाचा गोरा और उसके पुत्र बादल की सम्मति से ७०० डोलियाँ तैयार की गईं जिनमे से प्रत्येक मे एक एक वीर राजपूत सशस्त्र बैठ गया और कहारों का वेष धारण किए शस्त्रयुक्त छः छः राजपूतों ने प्रत्येक डोली को उठाया। सुलतान के डेरों पर पहुँचने पर पद्मिनी को अपने पति से अंतिम भेंट करने के लिए आधा घंटा दिया गया। कहारों का भेष धारण किए कई राजपूत भीमसिंह को डोली मे बिठाकर वहाँ से चल पडे. . . . . डोलियों मे से वीर राजपूत निकल आए और युद्ध करने लगे। अलाउद्दीन ने फिर चित्तौड घेरा, परंतु उसे हारकर लौटना पडा। कुछ समय के अनतर वह नई सेना के साथ चित्तौड़ के लिए दूसरी बार चढ आया और राजपूतों ने भी वीरता से उसका सामना किया। अत मे जब उन्होंने यह देखा कि क़िला छोड़ना ही पडेगा, तब जौहर करके रानियों तथा अन्य राजपूत-स्त्रियों को अग्नि के मुख में अर्पण कर दिया। फिर वे मुसलमानों पर टूट पडे और वीर-गति को प्राप्त हुए। अलाउद्दीन ने चित्तौड को आधीन कर लिया, परंतु जिस पद्मिनी के लिए उसने इतना कष्ट उठाया था, उसकी तो चिता की अग्नि ही उसे दृष्टिगोचर हुई।"[2]

"कर्नल टाड ने यह कथा विशेषकर भाटों के आधार पर लिखी है और भाटो ने उसको विशेषकर 'पद्मावत' से किया है। भाटो की पुस्तकों मे समरसिंह के पीछे रत्नसिंह का नाम न होने से टॉड ने पद्मिनी का सबंध भीमसिंह से मिलाया और उसे लखमसी (लक्ष्मणसिंह) के समय की घटना मान ली। ऐसे ही लखमसी का बालक और मेवाड का राजा होना भी लिख दिया, परतु लखमसी न तो मेवाड का कभी राजा हुआ और न बालक था, किंतु सीसोदे का सामन्त (सरदार) था और उस समय बृद्धावस्था को पहुँच चुका था, क्योंकि वह सात पुत्रों सहित अपना नमक अदा करने के लिए रत्नसिंह की सेना का मुखिया बनकर अलाउद्दीन के साथ की लड़ाई में

---

[1] अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी, पृ० २५६ [2] टाड, राजस्थान, जि० १, पृ० ३०७-११, राजपूताने का इतिहास, भाग २, पृ० ४६३-४

मारा गया था, जैसा कि वि० स० १५१७ (ई० सन् १४६०) के कुभलगढ के शिलालेख में बताया गया है।"[1] "इसी प्रकार भीमसी (भीमसिह) लखमसी (लक्ष्मणसिह) का चाचा नहीं कन्तु दादा था, जैसा कि राणा कुभकर्ण के समय के 'एकलिगमहात्म्य' से पाया जाता हैं। ऐसी दशा मे कर्नल टाड का कथन विश्वास योग्य नही हो सकता।"[2]

"फरिश्ता ने चित्तौड के शासक का नाम नही लिखा है क्योंकि उसका आधार अमीर .खुशरो था जिसने स्वय उसका नाम नहीं दिया है। फरिश्ता को यह निश्चय नहीं था कि पद्मिनी रत्नसिह की पुत्री थी अथवा पत्नी"[3]। उसने एक स्थान पर (पृ० ११५ पर) लिखा है :—

"ब समअः बादशाह रसानीदन्द कि दरमियाने जनाने राजा-इ-चित्तौर जनेस्त पद्मिनी नाम"

जिसका लक्षण मे यह भाव होता है कि वह रत्नसेन की रानी थी। इसके पश्चात् कतिपय स्थानों पर उसने "जन" शब्द का प्रयोग किया है पर बाद को लिखता है कि राय की लड़की (जिसका उसने नाम नहीं दिया है) (दुख्तर राय की ब फहम व अक्ल मशहूर .खेश व कबील-इ-खुद बबूद)"ने एक अद्भुत उपाय निकाला। वह देहली को गई और अपने पिता को बचाया।

हाजीउद्दवीर का पद्मिनी का विवरण भी भ्रमात्मक है। उसने रत्नसेन के नाम का उल्लेख नही किया है। "पद्मिनी" से उसका अभिप्राय विशेष-गुण-सम्पन्न स्त्री से है न कि किसी प्रमुख व्यक्ति से। राजा की मुक्ति का उपाय उसने राजा के चातुर्य को माना है न कि पद्मिनी की बुद्धिमत्ता को। उसके मतानुसार राय को बदी बनाकर देहली मे नही रक्खा गया था और उसे यह भी निश्चय नही था कि चित्तौड़ पर विजय हो जाने से पूर्व अथवा सुलतान द्वारा रत्नसिह के बन्धन मे डाले जाने के पश्चात् पद्मिनी की माँग की गई थी। उसने खिज्रखाँ का नाम नहीं दिया है, यद्यपि तत्कालीन लेखकों के मतानुसार चित्तौड पर अधिकार हो जाने के पश्चात् वह वहाँ का शासक नियुक्त किया गया था।

इस प्रकार फरिश्ता, हाजीउद्दवीर तथा अन्य फारसी इतिहास लेखकों एवं राजपूताने के भाटों द्वारा कथित पद्मावती की कथा मे बहुत कुछ साम्य है। यत्र-तत्र केवल साधारण सा अन्तर है तथा जायसी कृत पद्मावत पर आधारित है। यहाँ तक कि जायसी के "पद्मावत" मे १६००, फरिश्ता मे ७००, हाजीउद्दबीर मे ५०० तथा जटमल मे ५०० डोलियों का उल्लेख है। जायसी और फरिश्ता के अनुसार राजा देहली मे बन्दी था। पर हाजीउद्दबीर एव जटमल के मतानुसार वह चित्तौड़ मे, उसके डेरों मे ही कैद था, जिससे वह पद्मिनी को अलाउद्दीन के पास जाने के लिए फुसला सकता। जायसी और जटमल के अनुसार पद्मावती की बुद्धिमत्ता से राजा का छुटकारा हुआ। फरिश्ता के अनुसार वह रत्नसिंह की पुत्री थी और हाजीउद्दवीर के मत मे राणा ने स्वय ही उपाय निकाला था। अतः केवल थोडी से सूक्ष्म अन्तरों के अतिरिक्त सभी भाटों, चारणों एव फारसी लेखकों की दी हुई कथा जायसी की दी हुई कथा से मिलती है।"[4]

'पद्मावत' लिखते समय जायसी का यह उद्देश्य नही था कि वह रत्नसेन अथवा पद्मावती की जीवनी लिखे। उसने "कथा की समाप्ति पर" सारी कथा को एक अन्योक्ति बतलाकर लिखा है:—

---

[1] राजपूताने का इतिहास, भाग २ पृ० ४८४ [2] वही, भा० २ पृ० ४६४-५ [3] बाँकीपुर पुस्तकालय में 'बे हरूलनज' नाम के हस्तलिखित इतिहास (१८वीं शताब्दी की कृति, में भी इसका उल्लेख है। [4] अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलज़ी, पृ० २६०-६२

"चौदह भुवन जो तर उपराहीं, ते सब मानुष के घट माहीं ।
तन चितउर, मन राजा कीन्हा, हिय सिंघल, बुधि पद्मिन चीन्हा ।
गुरू सुआ जेह पंथ दिखावा, बिनु गुरु जगत को निरगुन पावा ।
नागमती यह दुनिया धंधा, बाँचा सोइ न एहि चित बंधा ।
राघव दूत सोई सैतानू, माया अलादीन सुलतानू ।
प्रेम कथा एहि भाँति बिचारहु, बूझि लेहु जौ बूझै पारहु ।"[1]

उक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि जायसी कृत 'पद्मावत' एक अन्योक्ति है, न कि ऐतिहासिक ग्रथ । "यह हो सकता है कि जायसी के समय मे सन् १५३४ ई० मे गुजरात के शासक बहादुर शाह के चित्तौड़ पर किए गए आक्रमण के अवसर की हृदय-विदारक जौहर का उन पर कुछ प्रभाव पडा हो । भारतीय मुसलमान इतिहास लेखकों ने जायसी कृत इस कहानी को बिना सकोच के अपनी पुस्तकों मे लिख दिया जैसा कि उन्होंने अन्य फारसी इतिहासों की प्रतिलिपि ज्यों की त्यों अपनी रचनाओं मे कर ली। चित्तौड के आक्रमण के २३७ वर्ष और अलाउद्दीन की मृत्यु के २२४ वर्ष पश्चात् जायसी के ग्रथ 'पद्मावत' की रचना हुई । इससे पूर्व किसी भी इतिहास लेखक—फ़ारसी अथवा राजस्थानी—ने पद्मिनी के विषय मे नही लिखा ।"

"मेवाड की परम्परा के अनुसार यह कहानी बहुत प्राचीन है... ..कहा नही जा सकता कि जायसी से पूर्व यह कहानी प्रचलित थी अथवा उसके पश्चात् इसकी प्रसिद्धि हुई । हो सकता है कि चित्तौड़ के भयकर युद्ध से प्रभावित होकर जायसी को पद्मावत के कथानक की उसी प्रकार सूझ प्राप्त हो गई हो जैसी कि फ्रास की राज्य-क्राति के अवसर पर डिकिस् को 'ए टेल ऑव् टू सिटीज्' के कथानक की प्राप्ति हो गई थी । एक बार इस प्रकार की कथाओं का प्रचार होना आरम्भ हो जाता है तो जनता घटा बढा कर उसका प्रचार करने लग जाती है । इसका विस्तार एवं प्रचार इतना बढा कि न केवल फरिश्ता और हाजीउद्दबीर वरन् 'मनूची' तक अकबर के चित्तौड़ के आक्रमण के प्रसंग मे उल्लेख करते हुए कहता है कि 'पद्मावती राजा जयमल की रानी थी जिसको डोलियों के उपाय द्वारा सम्राट् के कारागार से छुडाया गया ।" इसके विपरीत तत्कालीन इतिहास-लेखकों, कवियों तथा यात्रियों-बरनी, इसामी, अमीर खुसरो, इब्नबतूता तथा "तारीख-इ-मुहम्मदी" एव "तारीख-इ-मुबारक शाही" ने पद्मावती के विषय मे कुछ भी उल्लेख नहीं किया है । "चित्तौड की इस घटना के विषय मे जान बूझकर मौन धारण करने का दोषी इन सबको नही ठहराया जा सकता.....पद्मावती की कथा केवल जायसी कृत पद्मावत, (गोराबादल की कथा), परम्परागत विवरणों एव उन इतिहासों और रचनाओं मे मिलती है, जो इनके ऊपर अवलम्बित हैं । पद्मिनी की कथा की परम्परा की प्राचीनता का वास्तविक ज्ञान हमे अभी तक नहीं हैं । केवल इसी तर्क के आधार पर कि यह बहुत प्राचीन परम्परागत कथा है इसे सत्य नहीं माना जा सकता ।"[2]

'पद्मावत' मे वर्णित कथा की अनैतिहासिकता का विवेचन करते हुए ओझा जी लिखते हैं .—

"उसके (रत्नसिह के) समय मे सिहल द्वीप का राजा गधर्वसेन नहीं, किन्तु राजा कीर्त्ति-

[1] जायसी-ग्रंथावली, पृ० ३४१ [2] अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी, पृ० २६२-३

निश्शंकु देव पराक्रमवाहु चौथा (या भुवेकवाहु तीसरा) होना चाहिए। सिंहलद्वीप मे गंधर्वसेन नाम का कोई राजा ही नही हुआ। उस समय तक कुभलनेर (कुम्भलगढ) आबाद ही नहीं हुआ था, तो देवपाल वहाँ का राजा कैसे माना जाय ?"[1] इस सबध मे उनका यह कथन सत्य प्रतीत होता है कि "पद्मावत की कथा का कलेवर इन ऐतिहासिक तथ्यों पर खडा किया गया है कि अलाउद्दीन ने चित्तौड़ पर चढाई कर छः मास के घेरे के अनंतर उसे विजय किया, वहाँ का राजा रत्नसिंह इस लडाई मे लक्ष्मण सिंह आदि कई सामन्तों सहित मारा गया, उसकी रानी पद्मिनी ने कई स्त्रियों सहित जौहर की अग्नि मे प्राणाहुति दी, इस प्रकार चित्तौड़ पर थोडे से समय के लिए मुसलमानों का अधिकार हो गया। बाकी की बहुधा सब बातें कल्पना से खडी की गई हैं।"[2]

[1] राजपूताने का इतिहास भा० २, पृ० ४६१ [2] वही, भाग वही, पृ० ४६५

अध्याय ३

भूषण-ग्रथावली की ऐतिहासिकता

नीचे भूषण के ग्रथों में वर्णित वश, पात्र तथा घटना-चित्रण आदि पर ऐतिहासिक दृष्टि से विचार किया जा रहा है :—

राजवंश-वर्णन—भूषण ने शिवा जी के पूर्वजों का वर्णन करते हुए लिखा है कि "दिन-राज-वश मे कंस-मथन-प्रभु बार-बार अवतीर्ण हुए। उसी वश के एक राजा ने ईश को शीश देकर सीसोदिया विरद प्राप्त किया।"[१]

भूषण ने शिवाजी को सूर्य-वशावतस बतलाया है। कसारि-श्रीकृष्ण ने यदु-कुल में जन्म धारण किया था। यादव चद्र-वशी-क्षत्रिय हैं। भूषण ने कस-सहारक प्रभु का बार-बार उसी कुल मे अवतार लेना माना है। इस कथन से उनका केवल यही अभिप्राय प्रतीत होता है कि श्रीकृष्ण, श्रीराम आदि अवतार एक ही सता-विष्णु के रूप थे, अन्यथा उनका उक्त कथन इतिहास विपरीत ठहरेगा।

शिर देने के कारण सीसोदिया नाम पड़ने का उल्लेख करके भूषण ने चारण-कथित परंपरा को स्वीकार किया है, जो इतिहास के प्रतिकूल एवम् भ्रमात्मक है। वास्तव मे सीसोदिया-वंश का नाम सीसोदे-निवासी होने के कारण पड़ा था।[२]

भौंसिले नामकरण—भूषण ने मालमकरद के 'रन-भू-सिला' होने के कारण भौंसिला नाम पडने की कल्पना की है।[३] इतिहास को ज्ञात होता है कि "सज्जनसिह अथवा सुजानसिह (मृत्यु १३५०ई०) की ५वीं पीढी मे उग्रसेन का जन्म हुआ जिनके कर्णसिंह और शुभ-कृष्ण नामक दो पुत्र थे। कर्णसिंहात्मज भीमसिह के वशधर 'घोरपदे' तथा शुभ-कृष्ण के वशज 'भोंसले' कहलाए'। कुछ विद्वानों के मतानुसार 'भोंसले' शब्द द्वारसमुद्र के शासक 'होयसाल' राज-वंश का विकृत रूप है। यह होयसाल यादव क्षत्रियों की एक शाखा थे। जीजाबाई यदुवंशीय थीं और यादवों की उसी शाखा मे पाणिग्रहण नहीं हो सकता, अतः भोंसला उत्पति की यह कल्पना निराधार है।"[४] कहने की आवश्यकता नहीं है कि भूषण का कथन इस विवरण के एकदम प्रतिकूल पड़ता है।

भूषण ने मालोजी की अन्य उपाधियों सरजा तथा खुमान का भी उल्लेख किया है।[५]

---

[१] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ४-५ [२] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ४, राज-विलास की ऐतिहासिकता के अंतर्गत वंश-नाम शीर्षक [३] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ८ [४] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भाग १, पृ० ४५-७ (पृ०४६ पर दी हुई पाद टिप्पणी २ के सहित) [५] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ८

पात्रों की ऐतिहासिकता

निश्चित-पात्र

हिंदू-पात्र मालमकरंद, मालोजी—यह बाबा जी भोंसले के पुत्र थे। इनका जन्म १२५२ ई० में हुआ था। देवगिरि के प्राचीन राज-वश के उत्तराधिकारी लूख जी उन दिनों अहमदनगर के निज़ाम-शाह की सेवा मे रहते थे। इन्होंने उन्हीं के यहाँ नौकरी कर ली। ४ फरवरी, १६१६ ई० को रोशनगाँव मे मलिक अंबर की अध्यक्षता मे निजाम-शाही सेना ने मुगलों का सामना किया। मालो जी भी इस युद्ध मे सम्मिलित हुए थे। १६१७ ई० मे यह युद्ध समाप्त हुआ। इसमें मुगल विजयी हुए। १६२१ ई० मे पुनः शाहजहाँ चढ आया पर मार्च १६२२ ई० मे संधि करके लौट गया।

निज़ामशाह ने मालोजी को पूना और सूपा की जागीर प्रदान की। इनकी मृत्यु १६२० ई० मे हुई।[1]

मालोजी प्रारभ मे कतिपय वर्ष तक लाखूजी की सेवा मे रहे। अत मे उसके मुग़लों से मिल जाने पर भी वे निज़ामशाह के प्रति स्वामि-भक्ति प्रदर्शित करते रहे। अतः भूषण का यह कथन कि वे देवगिरि के आधार-स्तम्भ और निजामशाह के मित्र थे[2] सत्य और ऐतिहासिक है।

साहिजी—यह मालोजी के पुत्र थे। इनका विवाह लखूजी जाधव की पुत्री जीजाबाई से ५ नवम्बर, १६०५ ई० को हुआ था। १६२५ ई० के लगभग शाहजी निजामशाह की नौकरी छोडकर आदिलशाह की सेवा मे चले गए। नवम्बर, १६३० ई० से मार्च १६३३ ई० तक शाहजी शाहजहाँ की सेवा मे रहे। इसके उपरात वे फिर बीजापुर की नौकरी मे चले गए। १६३६ ई० मे मुगलों और बीजापुर मे संधि हो जाने पर यह अकेले ही मुगल-शत्रु रह गए। अक्तूबर, १६३६ ई० में इन्होंने बीजापुर की सेवा मे रहना फिर स्वीकार कर लिया। शनिवार २३ जनवरी, १६६४ ई० को शाह जी का देहान्त हो गया[3]

शिवा, सिवराज, सिवराजसिंह—यह शाहजी के पुत्र थे। जीजाबाई के छः लडके उत्पन्न हुए जिनमे से केवल दो—शंभाजी और शिवाजी जीवित रहे। शंभाजी का जन्म १६१६ ई० में और शिवाजी ६ अप्रैल, १६२७ ई० (अथवा १६, फरवरी, १६३० ई०) को हुआ था। इनकी मृत्यु ३ अप्रैल, १६८० ई० को हुई थी।[4]

संभाजी—(शंभूजी)—ये शिवाजी के पुत्र थे। उनकी मृत्यु के पश्चात् यह गद्दी पर बैठे। औरगजेब के राज्य के ३०वें वर्ष शंभाजी पकडे गए और ३१वे वर्ष मार डाले गए।[5]

साहू—ये महाराज शंभाजी के पुत्र थे। इनका लालन-पालन औरगजेब के दरबार मे हुआ था। औरंगजेब की मृत्यु के अनतर यह अपने देश गए। इनके मत्रियों ने मुगलों के राज्य मे लडाई और लूट-मार प्रारभ कर दी। साहू १७४७ ई० मे निस्सतान मर गए।[6]

---

[1] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भाग १, पृ० ४७ ४६-५१, ५३ [2] भूषण ग्रंथावली, शिवराज-भूषण छं० ७ [3] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भाग १, पृ० ५३, ५५, ५६, ६५, ८४ [4] वही, भाग वही, पृ० ५३, ८७, २५६, मआसिरुल् उमरा, भाग, १, पृ० ४११ ८ [5] वही, भाग वही, पृ० ४१८ ६ [6] वही, भाग वही, पृ० ४१६-२१

बाजीराव—यह प्रथम पेशवा बालाजी विश्वनाथ के पुत्र थे। पिता के मरने पर यह पेशवा नियुक्त हुए। इसने क्रमशः १७३३ ई० और १७३४ ई० में उत्तरी भारत पर आक्रमण किए। मुगलों ने इसे मालवा का प्रबंध सौप दिया। इसके उपरात इसने भदावर को जीता। समय पाकर इसने दिल्ली और आगरे पर भी आक्रमण किए थे। १७४० ई० मे इसकी मृत्यु हो गई।[१]

बीरबर (बीरबल), भगवत (भगवान्दास), मान (मानसिह)।[२] चंपति (चपतिराय), छत्रसाल (छत्रसालसिह, छत्ता), जयसिह (मिर्जा राजा जयसिह), जसवत (जसवतसिह), छत्रसाल हाडा, सुजानसिह,[३] भगवतराय।[४]

भाऊ—यह राव छत्रसाल हाड़ा के पुत्र थे। इन्होंने शुजा के युद्ध तथा दक्षिण मे महाराज जसवंतसिह, मिजा राजा जयसिह, दिलेरखॉ आदि के साथ रहकर बडी वीरता प्रदर्शित की थी। १६७७ ई० मे इसकी मृत्यु हुई।[५]

राव-बुद्ध—यह राव भाऊसिह के भाई भगवतसिह के पौत्र और कृष्णसिह के पुत्र अनिरुद्ध सिंह के आत्मज थे। औरगजेब के मरने पर उत्तराधिकार युद्ध मे इन्होने बहादुरशाह की सहायता की थी। इससे प्रसन्न होकर बादशाह ने इन्हे मोमीदाना और कोटा की जागीरे दीं।[६]

अमरसिह चंद्रावत—रामपुरा के राव दुर्गा सिसोदिया के प्रपौत्र, राव चद्राभान के पौत्र तथा हरिसिह के पुत्र थे। यह १७०७ वि० (१६५० ई०) मे शाहजहॉ की सेवा मे आया। औरंगजेब के साथ कधार गया। धर्मत के युद्ध मे महाराज जसवतसिह के साथ था, पर बिना युद्ध किए स्वदेश लौट गया। शुजा का पीछा करने पर नियुक्त हुआ। १७२३ वि० (१६६६ ई०) मे सलेहरि-युद्ध मे मारा गया।[७]

मोहकमसिह—यह उक्त अमरसिह चद्रावत का पुत्र था। सलेहरि-युद्ध मे बदी हुआ। कुछ समय पश्चात् छूटने पर राव की पदवी मिली। १६६० ई० के लगभग इसकी मृत्यु हुई।[८]

किशोरसिह—कोटा-नरेश माधोसिह के पॉच पुत्रों मे यह सबसे छोटे थे। धर्मत युद्ध मे जसवतसिंह का साथ दिया और घायल हुए। १७२६ वि० (१६६६ ई०) मे गद्दी पर बैठे। यह दक्षिण ही मे बराबर नियुक्त रहे। १७२२ वि० (१६८५ ई०) मे अरकाट दुर्ग के घेरे के समय मारे गए।[९]

करन—(राव कर्ण) यह बीकानेर के राजा थे। अपने पिता राव सूरसिह भुरटिया के मरने पर यह १६३१ ई० मे गद्दी पर बैठे। परेदा, दौलताबाद, बीजापुर, जवारि आदि दुर्गों के जीतने मे इन्होंने पर्याप्त वीरता प्रदर्शित की थी। यह १६६५ ई०मे पुरधर के घेरे मे जयसिह के साथ वर्त्तमान थे। औरगाबाद मे इनकी मृत्यु हुई।[१०]

---

[१] मआसिरुल् उमरा, भाग १, पृ० ४२२-४ [२] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय १, वीरसिहदेव-चरित की ऐतिहासिकता, पृ० १७८-१७६ [३] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ५, छत्रप्रकाश की ऐतिहासिकता के अंतर्गत पात्रों का ऐतिहासिक विवरण [४] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ७, रासा भगवंतसिह की ऐतिहासिकता के अंतर्गत पात्रों का विवरण [५] मआसिरुल् उमरा, भाग १, पृ० २५७-६ [६] वही, वही, पृ० २५६-६० [७] ब्रजरत्नदास, भूषण-ग्रंथावली, परिशिष्ट (च) पृ० १०२ [८] वही, वही, परिशिष्ट वही, पृ० १२१ [९] वही, वही, पृ० १०७ [१०] वही, वही, वही, पृ० १०५-६; मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० ८५-६

रामसिंह—यह मिर्ज़ा राजा जयसिंह के पुत्र थे। १६६७ ई० मे पिता की मृत्यु पर राजा हुए। उसी वर्ष यह आसाम में नियुक्त हुए जहाँ से नौ वर्ष के अनन्तर लौटने पर १६७६ ई० में इनकी मृत्यु हो गई।[1]

जगत्सिंह—यह आमेर के राजा मानसिंह कछवाहा के सबसे बडे पुत्र और अकबर के एक प्रसिद्ध सेनापति थे। १५९९ ई० मे यह बङ्गाल के सहकारी प्रांताध्यक्ष नियुक्त हुए, पर आगरे से चलने से पहले ही युवावस्था ही मे मर गए।[2]

महासिंह—यह उक्त जगत्सिंह के पुत्र थे। पिता की मृत्यु के अनन्तर इन्हे बङ्गाल भेजा गया। मदिरा पान की अधिकता के कारण युवावस्था मे इनकी मृत्यु हो गई।[3]

उदैभान—उदयभानसिंह कोंदाना (सिंहगढ) का दुर्गाध्यक्ष था। यह राठौर था। १६७० ई० के आरंभ मे तानाजी मालुसरे से युद्ध करते हुए मारा गया।[4]

मुसलमान-पात्र बब्बर (बाबर)—इसने १५२६ ई० मे मुगल-साम्राज्य की नींव डाली। १५३० ई० मे इसका देहात हो गया।[5]

हिमायूँ (हुमायूँ)—यह बाबर का ज्येष्ठ पुत्र था। १५३० ई० मे गद्दी पर बैठा। १५५६ ई० मे इसकी मृत्यु हुई।[6]

अकब्बर (अकबर), जहागीर[7], साहजहा (शाहजहा), औरगजेब, दारा, मुराद, शाहशुजा तहवरखान (तहव्वर खान)।[8]

अफ़ज़ल ख़ाँ—इसका नाम अब्दुल्ला खाँ भटारी पठान था। यह बीजापुर का एक बड़ा सरदार था। यह १६५९ ई० मे शिवाजी के हाथ से मारा गया।[9]

अबूबास—शाह अब्बास द्वितीय फारस का बादशाह था। औरगजेब के सिंहासनारुढ होने पर इसने उसको बधाई दी थी। इसका राजदूत २२ मई, सन् १६६१ ई० को प्रथम बार मुग़ल दरबार मे पहुचा। इस बादशाह ने औरगजेब को फटकार से पूर्ण एक पत्र भी लिखा था जो उसे सितम्बर, १६६६ ई० को मिला था।[10]

एदिल साहि (आदिलशाह)—बीजापुर के आदिलशाही वंश की उपाधि आदिलशाह थी। ४ नवम्बर १६५६ ई० से ४ दिसम्बर, १६७२ ई० तक अली-आदिलशाह द्वितीय राज्य करता रहा। इसके पश्चात् सिकन्दर आदिलशाह गद्दी पर बैठा।[11]

---

[1] ब्रजरत्नदास, भूषण-ग्रंथावली, परिशिष्ट (च), पृ० १२२; मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० ३४२-५ [2] वही भाग वही, पृ० १४३-४, ब्रजरत्नदास, भूषण-ग्रंथावली, परिशिष्ट (च), पृ० ११० [3] मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० १४४ [4] ब्रजरत्नदास, भूषण-ग्रंथावली, परिशिष्ट (च), पृ० १०५ [5] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ४, पृ० १-२० [6] वही, भा० वही, पृ० २१-४४ [7] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय १, वीरसिंहदेव-चरित की ऐतिहासिकता, पृ० १८० [8] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ५, छत्रप्रकाश की ऐतिहासिकता के अंतर्गत पात्रों का विवरण [9] ब्रजरत्नदास, भूषण-ग्रंथावली, परिशिष्ट (च), पृ० १०१-२ [10] विश्वनाथप्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, पृ० २४७ [11] वही, वही, पृ० २४९; केम्ब्रिज हिस्ट्री आव् इंडिया, भा० ४, पृ० २०१, २५३-५, २७०-५, २८६

कुतुबसाह—यह गोलकुडा के शासकों की उपाधि थी। अब्दुल्लाह कुतुबशाह के २४ फरवरी, १६६७ ई० को मर जाने पर अबुल्हसन कुतुबशाह गोलकुंडा का शासक बना।[1]

ख़वासखाँ—(दौलतखाँ)—यह बीजापुर का एक सरदार था। वह बीजापुर के अल्पवयस्क शासक सिकन्दर आदिलशाह का सरक्षक बना (४ दिसम्बर, १६७२ ई०)। अन्त मे यह मार डाला गया।[2]

ख़ान दौरा-नवसेरी ख़ान (नौशेरी खाँ)—नौशेरी खाँ अथवा नसीरी खाँ 'खानदौराँ' उपाधि से विभूषित किया गया था। यह दक्षिण का मुग़ल सूबेदार था। १६५७ ई० मे अहमद-नगर के पास शिवाजी से इसका घोर युद्ध हुआ था।[3]

तलबखाँ (कारतलब खाँ उजबक)—१६५७ ई० मे जुनेर के पास थानेदार नियुक्त हुआ। ३ फरवरी, १६६१ ई० को शिवाजी ने इसे पराजित किया। १६७० ई० मे इसे खिलअत, घोड़ा, जमधर, आदि मिले।[4]

दलेज़खान, दिलेर महमद (दलेरखाँ)—इसका नाम जलाल खाँ था और यह दाऊदजई अफ़गान था। १६६४ ई० मे यह जयसिंह के साथ दक्षिण मे नियत हुआ और पुरधर तथा रूद्रमाल दुर्गों को विजय किया। १६६७ ई० मे शाहजादा मुअज्जम के साथ नियत हुआ। १६८३ ई० मे उसका देहान्त हुआ।[5]

बहलोल खान, बहलोलिया—(बहलोल खाँ) यह बीजापुरी पठान सेनापति था। १६७३ई० के आरभ मे इसने प्रताप राव गूजर को परास्त किया। पर उसी वर्ष के अन्त मे प्रतापराव गूजर ने उसे मार भगाया। इसके अनन्तर आनन्द राव ने इसे फिर पराजित किया। इसके पश्चात् वह बीजापुर का प्रधान आमात्य हुआ (१६ नवम्बर, १६७५ ई०)। २३ दिसम्बर, १६७७ ई० को इसकी मृत्यु हुई।[6]

बहादुर ख़ाँ, बहादुर खान (खान जहाँ बहादुर)—यह गुजरात का सूबेदार था। औरग-जेब ने बहादुर खाँ को दिलेरखा के साथ दक्षिण भेजा था। शिवाजी ने इन दोनों को मार भगाया। (१६७२ ई०)। बगलाना से हार कर वह गुजरात चला गया। कुछ समय के उपरान्त वह दक्षिण का सूबेदार नियुक्त किया गया।[7]

---

[1] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया भाग ४, पृ० १६६, २५३, २५४-५ २६१, २६६, २६६, २७०, २७३, २७४, २७६, २७७, २८६, २८७, २६० [2] वही, भा० वही, पृ० १८८, १६०, १६५, १६६, २७४, २७५; न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भाग १, पृ० १५१, १५२, २१६, २४७ [3] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, पृ० २५५; केम्ब्रिज हिस्ट्री आव् इंडिया, भाग ४, पृ० १६४, २६६, २६७, २६८ [4] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, पृ० २५३, ब्रजरत्नदास, वही, परिशिष्ट (च), पृ० १०६, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ० १३७-६ [5] ब्रजरत्नदास, भूषण ग्रंथावली; परिशिष्ट (च), पृ० ११२-३, मआसिरुल् उमरा, भा० ३, पृ० ४५६-७० [6] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज, भा० १, पृ० १३०, १८२ २०२, २०३, २१६, २४७, २४६; विश्वनाथप्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, पृ० २६८, ब्रजरत्न-दास, वही, परिशिष्ट (च), पृ०११५-६ [7] वही, वही, परिशिष्ट वही, पृ०११६; विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वही, पृ०२६६; केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ४, पृ० २२३, २२७, २५३, २५५, २५६, २७५-८

बादरखान—भूषण ने यह नाम संभवतः उक्त बहादुर खाँ के लिए ही प्रयुक्त किया है।

फत्ते खान(फतेह खाँ)—यह जजीरा के सादियों का एक सरदार था। शिवा जी से कई बार परास्त होने पर उनसे संधि की बातचीत कर रहा था, कि उसके सत्कारियों ने उसे मार डाला और वे औरंगज़ेब से संधि करके उसके अधीनस्थ सरदार बन गए (१६७४ ई०)।[1]

फ़तेह खाँ—इस नाम का एक बीजापुरी सेनापति भी था जिसे शिवाजी ने १६४९ ई० मे पराजित किया था। संभव है भूषण ने इसी व्यक्ति की ओर संकेत किया हो।[2]

रुस्तमे जमा—इसका वास्तविक नाम "रनदौला" था। बीजापुर की ओर से उस राज्य के दक्षिण-पश्चिम भाग का सूबेदार था। इसकी राजधानी मिराज थी। अफ़ज़ल खाँ के मारे जाने पर इसने शिवाजी पर चढ़ाई की। परनाला (पन्हाला) के स्थान पर वह पराजित हुआ (२८ दिसम्बर, १६५९ ई०)।[3]

निज़ाम साहि बहरी—(निजाम शाह)—यह अहमदनगर के सुल्तानों की पदवी थी। इनकी बहरी अर्थात् समुद्री भी उपाधि थी। कुछ विद्वानों का कथन है कि निजामुल्मुल्क बहमनी राज्य के बहरी (शिकारी बाजो) की देख रेख किया करता था, इसी से उसे 'बहरी' उपाधि मिली थी। १६३३ ई० मे इस राज्य का अत हो गया और अंतिम निजाम शाह हुसेन कारागार मे मरा।[4]

साइतखान, साइत खाँ, सासतखाँ, सइस्तखान—(शाइस्ता खा)—इसका वास्तविक नाम अबूतालिब मिर्जा मुगद था। यह शाहजहाँ के प्रधान मत्री आसफ खाँ का पुत्र तथा मुमताज महल बेगम का भाई था। १६४१ ई० मे यह मत्री नियत हुआ। १६५९ ई० मे यह दक्षिण का सूबेदार नियुक्त हुआ। १६६३ ई० मे शिवाजी पूना मे इसके महल मे घुस गए। यह भयभीत होकर भाग गया। इसके अनतर यह बगाल की सूबेदारी पर भेज दिया गया। ३१ मई, १६९४ ई० को ६३ वर्ष की अवस्था मे इसका देहात हुआ।[5]

अनवरखाँ—यह मुगल दरबार मे एक सरदार था, जो छत्रसाल के विरुद्ध भेजा गया था। वह युद्ध मे हारकर भाग गया। बहादुरशाह तथा फर्रूखसियर के समय मे यह बुरहानपुर का फौजदार था। यह उसी नगर का एक शेखजादा था।[6]

अमीं खाँ—(अमीन खाँ मुहम्मद)—औरगजेब के समय तथा उसके पश्चात् के दो प्रसिद्ध अमीन खाँ ज्ञात हैं :—

(१) मुहम्मद सैय्यद मीर जुमला का पुत्र जो पाँच हजारी मंसबदार था। गुजरात के अहमदाबाद मे १६८२ ई० मे इसका मृत्यु हुई।

(२) निजामुल्मुल्क आसफजाह के भाई बहाउद्दीन का पुत्र था, जो औरगजेब के समय

[1] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, पृ० २६६-७, ब्रजरत्नदास, वही परिशिष्ट (च), पृ० ११४ [2] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ० १०३ [3] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, पृ० २७७, ब्रजरत्नदास, वही, परिशिष्ट (च), पृ० १२२-३, न्यू हिस्ट्री ऑव्दी मराठाज़, भा० १, पृ० १२१, १३१, १३८ [4] ब्रजरत्नदास, भूषण-ग्रन्थावली, परिशिष्ट (च), पृ० ११३ विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वही, पृ० २६४ [5] वही, वही, पृ० २७८ ९; ब्रजरत्नदास, वही, परिशिष्ट (च), पृ० १२३ [6] वही, वही, पृ० १०१ विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वही, पृ० २४६

मे दरबार आया। सैय्यद भ्राताओं के मारे जाने पर यह मुहम्मदशाह का प्रधान-मत्री हुआ, पर कई महीने के पश्चात् इसकी मृत्यु हो गई।[1]

अबदुल्ल समद, समद, अब्दुस्समद (सैफ़ुद्दौला नवाब अबदुस्समद खाँ बहादुर दिलेर जंग)—इसने सिक्खों के विरुद्ध बडी वीरता प्रदर्शित की थी। क़सूर के एक विद्रोही अफ़गान हुसेन खाँ को परास्त करके मार डाला था। इसने बुदेलखड पर चढाई की थी, पर वहाँ सफल-प्रयत्न नही हो सका था।[2]

महमद बंगस (मुहम्मद खाँ बंगश)—यह अफगान था। फर्रुखसियर के समय मे फर्रुखाबाद को अपनी राजधानी बनाया। १७२५ ई० मे इलाहाबाद का सूबेदार नियुक्त हुआ। १७२७ ई० मे बुदेलो के विरुद्ध उसे कई सफलतायें मिलीं, पर १७२९ ई० मे छत्रसाल ने बाजीराव की सहायता से उसे पराजित किया। इसी प्रकार उसे मालवा से भी मुँहकी खानी पड़ी। वह इलाहाबाद का पुनः सूबेदार नियुक्त किया गया। यह अपने समय का एक प्रसिद्ध सेनापति एवम् राजनीतिज्ञ था।[3]

सहादत—(बुर्हानुलमुल्क सआदत खाँ)।[4]

दाऊद खाँ—यह १६५४ ई० मे दक्षिण मे नियत हुआ। पुरंधर के घेरे मे यह उपस्थित था। १६७० ई० मे यह बानी डिडोरी युद्ध मे मराठों से परास्त हुआ। १६७२ ई० मे राजधानी चला गया।[5]

महाबत खाँ—इसका पिता जमानाबेग बिन गोरबेग काबुली था, जिसे महाबत खाँ की पदवी मिली थी। इसी ने जहाँगीर को बंदी बनाया था। इसकी मृत्यु के आठ वर्ष के अनन्तर इसके द्वितीय पुत्र लहरास्प को सन् १६३४ ई० मे महाबत खाँ की पदवी मिली। यह दो बार काबुल का सूबेदार हुआ। १६७० ई० के अत मे यह दक्षिण का प्रधान-सेनापति नियुक्त हुआ। सन् १६७२ ई० के मध्य मे यह उत्तर लौटा। १६७४ ई० मे इसकी मृत्यु हुई।[6]

सेर खाँ लोदी (शेर खाँ लोदी)—बीजापुरी करनाटक का दक्षिणी आधा भाग शेर खाँ लोदी के अधिकार मे था। यह एक पठान था। इसकी राजधानी वालीगडपुरम् (वर्त्तमान पांडुचेरी जिले मे) थी। तीरूवाडी के पास शिवाजी ने इसे पराजित किया। ५ जुलाई १६७२ ई० को इसने शिवाजी से संधि कर ली।[7]

---

[1] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली पृ० २४७-८, ब्रजरत्नदास, वही, परिशिष्ट (च) पृ०१०२-३, मआसिरुल् उमरा, भ० ,पृ० २३४-४ [2] वही, भा० वही, पृ० २१०, ब्रजरत्नदास; भूषण-ग्रन्थावली, परिशिष्ट (च), पृ०१२४; विश्वनाथप्रसाद मिश्र, बही, पृ० २८० [3] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इ डिया, भा० ४, पृ०३५२-३, ३५४; ३५५, ३५६, ३८२, ४०२, ४२६, बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास, पृ० २०६, २१०, २११, २१२, २१३, २१४, २१५, २१६, २१७, २१८, २३७, २४०-२४१, जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी आव् बंगाल, भा० XLVII, १८७८ ई०, पृ० २८४-३०२ [4] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ७, रासा भगवन्त सिंह के पात्रों की ऐतिहासिकता [5] ब्रजरत्नदास : भूषण-ग्रन्थावली, परिशिष्ट (च), पृ० ११२, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र : वही, पृ० २४६, २६२, मआसिरुल् उमरा, भा० ३, पृ० ४०६-१० [6] ब्रजरत्नदास, भूषण ग्रंथावली, परिशिष्ट (च), पृ०११६, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र : वही, पृ० २७४ [7] वही, वही, पृ०२७६-८०

सिरजे खाँ (शरजा खाँ) —यह बीजापुर का एक प्रसिद्ध सरदार था। २४ दिसंबर १६६५ ई० को इसका शिवाजी के साथ युद्ध हुआ था।[१]

अनिश्चित पात्र

हिन्दू-पात्र—अमरेस, अनिरुद्ध, रुंडी-खुंडी (?), हृदयराम-सुत-रुद्र, अवधूतसिंह।

मुसलमान पात्र—आकुस (अंकुश खाँ), अल्लि फते, आकुत (याकूत खाँ एक बीजापुरी सरदार), सफ़जग (सभवतः किसी की उपाधि),[२] सैद अफगन, सेर अफगन, बहलोत (निश्चित पात्रों में जिस बहलोत खाँ का उल्लेख किया गया है, उससे यह भिन्न है), सुतरुदीन, निजाम बेग, तुराब खान।[३]

जावली-विजय (१६५५ ई०)—भूषण ने शिवाजी द्वारा जावली पर अधिकार करने का उल्लेख कतिपय छंदों में किया है।[४] इतिहास-ग्रथों से विदित है कि जावली सतारा प्रान्त के उत्तर पश्चिम कोने मे स्थित है। १६वीं शताब्दी मे मोर नामक मराठा परिवार ने बीजापुर के शासक से यह राज्य प्राप्त किया था। यहाँ के शासक की परपरागत उपाधि चंद्रराव थी। संस्थापक से आठवी पीढी मे कृष्णजी बाजी हुए, जो १६५२ ई० मे गद्दी पर बैठे।

शिवाजी ने रघुनाथ बल्लाल कोरडे को चंद्रराव के पास उसकी लडकी का अपने साथ विवाह करने के प्रस्ताव को लेकर भेजा। एकांत मे कोरडे ने चंद्रराव को मार डाला। यह समाचार पाकर शिवाजी ने आक्रमण कर दिया। चंद्रराव के परिवार के सदस्य बदी कर लिए गए। सम्पूर्ण जावली पर शिवाजी का अधिकार हो गया (अक्टूबर, १६५५ ई०)। जावली से दो मील पश्चिम मे शिवाजी ने प्रतापगढ दुर्ग को बनवाकर वहाँ पर भवानी की मूर्ति स्थापित की।[५]

अहमदनगर एवं जुन्नार की लूट तथा खाँ दौरा नौसेरी, (नौशेर खाँ)-पराजय—इसके अनंतर शिवाजी ने अहमदनगर को लूटा तथा खाँ दौरा नौशेरी खाँ को पराजित किया।[६] इन घटनाओं के सबंध मे इतिहास का कथन है कि 'अवसर पाकर शिवाजी ने मुगल-दक्षिण में लूट मार आरंभ कर दी। उनके सेनापति मिनाजी भोंसले और काशी ने अहमदनगर तक के भागों को लूटा (मार्च, १६५७ ई०)। इसी समय एक रात्रि को शिवाजी रस्सों की सीढी से जुन्नार मे प्रविष्ट हुए, पहरेदारों को काट डाला और बहुत सी लूट की सामग्री अपने साथ ले गए।

फिर वह अहमदनगर को लूटने लगे। मई, १६५७ ई० के अन्त तक नसीर खाँ आ पहुँचा। उसने शिवाजी की सेना को घेर लिया। बहुत से मराठे मारे गए, बहुत से घायल हो गए और शेष भाग खडे हुए। मुगल सेना ने थके होने के कारण उनका पीछा नहीं किया। शिवाजी लूट मार का अवसर ताकते रहे और मुगल भी सतर्क रहे। अन्त मे जनवरी, १६५८ ई० मे शिवाजी और नसीर खाँ मे संधि हो गई।[७]

---

[१] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण ग्रंथावली, पृ० २८२ [२] वही, वही, पृ० २८०; ब्रजरत्नदास : वही, परिशिष्ट (च), १२४ [३] द्वितीय खंड, अध्याय ७, रासा भगवंतसिंह के पात्रों की ऐतिहासिकतांतर्गत 'अनिश्चित पात्र-सूची [४] भूषण-ग्रन्थावली, शिवराज-भूषण, छं० ६३, ६८, २०७; वही, शिवा बावनी, छं० ३४, ३७ [५] सरकार, शिवाजी, पृ० ५०-७; औरंज़ेब, भा० ४, पृ० २६-३०; म्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ० १११-४ [६] भूषण-ग्रन्थावली, शिवराज-भूषण, छं० १०२, ३०८; शिवा-बावनी, छं० ३७ [७] शिवजी, पृ० ५६-६७

उपर्युक्त ऐतिहासिक विवरण में शिवाजी के भागने की बात का उल्लेख किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि ऐतिहासिकों ने अतिशयोक्ति से काम लिया है। शिवाजी खुले मे आकर युद्ध नहीं करते थे। छिपकर शत्रु को मारना और उसके आने पर अपनी रक्षा के लिए स्थान खोजना यही उनकी नीति थी। इस बात को ध्यान मे रखने से भूषण का वर्णन इतिहासानुकूल सिद्ध हो जाता है।

शिवाजी और अफ़ज़ल् खाँ-बध—इस घटना का वर्णन भूषण ने इस प्रकार किया है :—

"आदिलशाह ने जावली मे अफ्जल् .खां को भेजा। जावली के पार प्रतापगढ के नीचे दोनों मे मिलना निश्चित हुआ। शिवाजी उससे भेट करने के लिए वहाँ पर जा पहुँचे। शिवाजी उससे वैर करना चाहते ही थे कि उसने कटार से उन पर चोट की। वे क्रुद्ध होकर उस पर टूट पडे। शिवाजी के द्वारा चलाए गए बिछुआ के घाव से क्षत-विक्षत होकर अफ्जल्खां गिर पडा। शिवाजी उसकी छाती पर जा बैठे और उसको मार डाला। यह देखकर उसके साथी आकुत (याकूत .खाँ) और अकुश (आँकुश खाँ) वहाँ से भाग गए। उनके इस कार्य का यश दूर-दूर तक फैल गया।[1]

उक्त घटनाओं के संबध में इतिहास-वेत्ताओं का जो मत है, वह नीचे दिया जाता है :—

"अबदुल्लाह भटारी उपनाम अफ्ज़ल् खाँ बीजापुर के शासक मुहम्मदशाह का अनौरस पुत्र एव प्रथम श्रेणी का सरदार था। उसका स्वभाव अत्यन्त दुष्टतापूर्ण था। बीजापुर के अल्पवयस्क शासक आदिशाह की माता, बडी साहिबा, ने उसे कृत्रिम-मैत्री-प्रदर्शन द्वारा शिवाजी के पकड लाने अथवा मार डालने की आज्ञा दी।

उचितानुचित सभी उपायों द्वारा शिवाजी को अधीनस्थ करने का दृढ निश्चय करके अफ्जल् खाँ सितम्बर, १६५९ ई० मे बीजापुर से चल पड़ा और प्रतापगढ़ से १६ मील पर 'वाई' नामक स्थान पर पहुँचकर अपना डेरा डाल दिया।

उधर शिवाजी उसकी गति-विधि से अपने को भली प्रकार अवगत करते रहे। गगन-चुम्बी-पर्वत-मालाओं और अगम्य उपत्यकाओं से परिपूर्ण वाई और जावली के निकटवर्ती प्रदेशों मे अफ्जल्खाँ का सामना करने का निश्चय करके वे महाबलेश्वर के पश्चिम में पारघाट नामक पर्वतीय मार्ग के ऊपर अवस्थित प्रतापगढ दुर्ग में निवास करने लगे।

अफ्ज़ल् खाँ ने कृष्णजी भास्कर को शिवाजी के पास एकान्त में भेंट करने के लिए आमत्रित करने के उद्देश्य से भेजा। उसकी बातों से वे अफ्ज़ल् खाँ के गुप्त षडयत्र को ताड गए।

अंत में प्रतापगढ दुर्ग के नीचे बाह्य प्राचीर के निकट दोनों में भेंट होने का निश्चय किया गया। वाई से प्रतापगढ तक सघन बन मे एक मार्ग निर्मित हुआ। स्थल-स्थल पर अफ्ज़ल् खाँ की सेना के लिए पेय एव खाद्य सामग्री का आयोजन किया गया। महाबलेश्वर पठार के बंबई-बिंदु के नीचे रत्तौंदी दर्रे से चलकर अफ्ज़ल् खाँ प्रतापगढ के नीचे दक्षिण ओर अवस्थित 'पार'

---

[1] भूषण-ग्रन्थावली, शिवराज-भूषण, छं०४२, ६३ ६८, १२६, १६१, १७४, २०७, २४१, २५३, ३१३, ३३६, वही, शिवा-बावनी, छं० ३४, ३७; वही, फुटकर, छं० ३६; वही, फुटकर, संदेहात्मक, छं० ४, ५, ७, ६

ग्राम मे पहुँचा और कोइना नदी के उद्गम के निकट गभीर घाटी में यत्र-तत्र उसकी सेना ने डेरा डाला।

गुरुवार १० नवंबर, १६५६ ई० दोनों की मिलन-तिथि निश्चित हुई। शिवाजी ने अपने वस्त्रों के भीतर लौह कवच और पगडी के नीचे शिरस्त्राण धारण किए। उन्होंने वाम कर मे वघनखा और दक्षिण हस्त मे बिछुआ लेकर ऊपर से दीर्घ बाहों वाला ढीला ढाला श्वेत अगरखा पहिना, जिससे गुप्त अस्त्र-शस्त्र दिखलाई न पड़ें। अपनी माता से आशीर्वाद लेकर और जीवमहल एवं शंभू जी काबजी नामक अगरक्षकों के साथ वे चल पडे।

उधर अफ्जलखाँ एक सहस्त्र से अधिक सैनिकों को कुछ व्यवधान पर छोडकर, दो सैनिक तथा गोपीनाथ और कृष्ण जी को साथ में लेकर मिलन स्थान पर पहले से ही शिवाजी की प्रतीक्षा कर रहा था।

थोड़ी देर में शिवाजी निःशस्त्र विद्रोही के समान अफ्जल् खाँ के सामने जा पहुँचे। खान की कटि पर उस समय भी एक तलवार लटक रही थी। आगे बढकर शिवाजी ने उसे अभिवादन किया। वह अपने स्थान से उठा और आगे बढकर शिवाजी से भेटने के लिए अपनी प्रलंब भुजायें प्रसारित कीं। बात की बात मे उसने शिवाजी को कस लिया, वाम हस्त से उनकी ग्रीवा को दृढतापूर्वक पकड़ा और सीधी धारवाली कटार से उन पर प्रहार किया, पर शिवाजी के गुप्त कवच ने उनकी रक्षा की। दम घुटने के कारण उन्हे पीडा का अनुभव होने लगा। परंतु, तुरत ही सँभलकर उन्होंने अपना बायाँ हाथ अफजल् खाँ की कमर मे डालकर वघ-नखा से उसकी आँते बाहर निकाल दीं। फिर दायें हाथ से उसके बिछुआ भोंक दिया। घायल अफ्जल् ने उन्हे छोड दिया। वे चबूतरे से कूदकर अपने साथियों की ओर भाग गए। खान के अगरक्षक शिवाजी की ओर झपटे पर वे मार डाले गए। अफ्जल खाँ के सेवक उसको पालकी मे रखकर ले जाने को प्रस्तुत हुए पर उनका काम तमाम कर दिया गया। शिवाजी के साथियों ने अफजल् खाँ के शिर को काट लिया और उसको ले जाकर दुर्ग मे गुम्बज के ऊपर बाँस पर लटका दिया।

प्रतापगढ मे पहुँचकर शिवाजी ने तोप दागी। उसको सुनते ही झाडियों मे छिपे हुए शिवाजी के सैनिक शत्रु-सैन्य पर टूट पडे। खान के लगभग तीन सहस्त्र व्यक्ति काट डाले गए। अफ्ज़ल् का पुत्र फजल अपने साथियों के साथ भाग गया। रुस्तम-इ-ज़मा आदि पकड़ कर छोड़ दिए गए।[1]

उपर्युक्त ऐतिहासिक विवरण से स्पष्ट है कि अफ्ज़ल् खाँ क्रूर, धूर्त्त, विश्वास-घातक एव शक्तिशाली सैनिक था। शिवाजी को जीवित पकड़ना अथवा मार डालना ही उसका एक मात्र लक्ष्य था। इसी उद्देश्य की सफलता के लिए कपट-मैत्री-प्रदर्शन द्वारा एकान्त मे भेटने का उसने जाल फैलाया था।

शिवाजी एक चतुर एवं दूरदर्शी राजनीतिज्ञ वीर थे। वे अफ्ज़ल् खाँ की धूर्त्तता से भली प्रकार परिचित थे। इसी कारण से अपनी रक्षा के लिए उन्होंने कवच, शस्त्र आदि धारण किए थे।

---

[1] शिवाजी, पृ० ६८-८२; औरंज़ेब, भा० ४, पृ० ३३-४०; न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़् भा० १, पृ० १२३-३०

आत्म-रक्षा करते समय उन्हे अफ़्ज़ल् पर प्रहार करने पड़े जिसके फलस्वरूप उसके प्राण-पखेरू उड गए।

भूषण के कथन का भी यही अभिप्राय है। उन्होंने भी अफ़्ज़ल् के दुष्ट स्वभाव की ओर संकेत किया है। उनके मत में भी शिवाजी ने अपनी रक्षा के उद्देश्य से ही शत्रु पर चोट की थी। उनके कथन से यह भी विदित होता है कि शिवाजी और अफ़्ज़ल् खाँ दोनों ही अपनी-अपनी घात में थे, पर शिवाजी के समक्ष आत्मरक्षा का प्रश्न प्रमुख था। इस प्रकार भूषण का उक्त कथन ऐतिहासिक तथ्य की भित्ति पर ही अवलम्बित है, इसमे कोई सदेह नहीं है।

कुछ विद्वानों के विचार में अफ़्ज़ल् खाँ निर्दोष था और वह शिवाजी को मार डालने के उद्देश्य से नहीं आया था। ऐसे बुद्धि-मार्तडों के विचारार्थ मिर्जा राजा जयसिंह द्वारा औरंगजेब के प्रधान-मंत्री जफरखाँ को, १६६६ ई० मे शिवाजी के आगरे से निकल भागने के पश्चात् लिखे गए, पत्र का सक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है। यद्यपि इस पत्र का प्रस्तुत घटना से प्रत्यक्ष सबध नहीं है, पर अप्रत्यक्षरूप से इसको पुष्ट करने मे सहायक होगा। पत्र लिखते समय राजा जयसिंह कहते हैं :—

"मैं एक ऐसा आयोजन करने वाला हूँ जिससे शिवाजी मुझसे मिलने आयेगा। उसके आते अथवा जाते समय मार्ग मे, सुअवसर पाकर, मेरे साथी उसकी हत्या कर देगे। यदि सम्राट् स्वीकृति दें तो मैं प्रशंसा अथवा निदा की चिंता न करके शाहशाह के प्रति अपनी अगाध स्वामि-भक्ति प्रदर्शनार्थ, अपने पुत्र का विवाह शिवाजी की पुत्री से करने का प्रस्ताव रक्खूँगा। शिवाजी नीच जाति का है। हम उसका स्पर्श किया हुआ भी नहीं खा सकते (विवाह सबध तो दूर की बात है) वह इस प्रस्ताव को अवश्य स्वीकार कर लेगा।"

इस पत्र से १७वीं शताब्दी के राजनैतिक आचार-विचार पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। स्वय को पवित्र और उच्च कुलीन समझने वाले राजा जयसिंह एक सजातीय बधु को जाल मे फँसाने और विधर्मी औरंगजेब के प्रति स्वामि-भक्ति प्रदर्शित करने के लिए अपने परिवार की परंपरागत प्रतिष्ठा नष्ट करने के लिए प्रस्तुत थे,[1] तो भला, अफ़्ज़ल् खाँ जो बीजापुर के शासक का निकट संबधी भी था, अपने स्वामी के कल्याणार्थ एक शक्तिशाली हिंदू-शत्रु को नष्ट करने की कामना से प्रेरित होकर नहीं आया था, यह बात साधारण समझ से बाहर की प्रतीत होती है।

इस प्रसग मे भूषण ने आकुत (याकूत खाँ) का जो उल्लेख किया है उसे कुछ विद्वान् अनैतिहासिक बतलाते हैं। उनके ऐसा मानने का कारण यह है कि "जजीरा के सिद्दियों को याकूत खाँ की उपाधि १६७० ई० के पश्चात् मिली थी। परतु 'शिवा-चरित्र-निबन्धावली' तथा 'शिवाजी निबन्धावली' आदि ग्रथों से सिद्ध होता है कि उक्त घटना के अवसर पर प्रतापगढ से याकूत खाँ, आकुश खाँ आदि योद्धा भागे थे। वे पुनः रूस्तम-इ-जमाँ के साथ कोल्हापुर के पास परास्त हुए थे।"[2] इसके अतिरिक्त एक बात और भी विचारणीय है। 'शिवराज-भूषण' की रचना २६ अप्रैल, सन् १६७३ ई० को हुई थी।[3] उस समय तक जंजीरा के सिद्धियों को याकूत खाँ की

---

[1] शिवाजी, पृ० ११७-८ [2] विश्वनाथ प्रसाद मिश्र; भूषण-ग्रंथावली, भूमिका, पृ० २७६ [3] देखिए प्रथम खंड, अध्याय १, शिवराज-भूषण की रचना-तिथि, पृ० २५-६

उपाधि मिल चुकी थी। इतिहास से सिद्ध होता है कि जंज़ीरा का शासक फतेह खाँ १६५६ ई० मे मराठों के विरुद्ध गया था, पर अफ़्ज़ल् की दुर्दशा का समाचार ज्ञात होने पर वह लौट गया था।[१] सभव है कि भूषण ने इसी घटना की ओर सकेत करते समय फतेह खाँ के वास्तविक नाम का उल्लेख न करते हुए, 'शिवराज-भूषण'-रचना के समय तक प्रचलित जजीरा के शासकों की उपाधि याकूत् खाँ, जो उन्हे १६७० ई० के पश्चात् मिल चुकी थी, से ही पुकारा हो। यह भी सभव है, कि भूषण का अभिप्राय जंजीरा के सिद्दियों से न हो। हो सकता है, कि अफ़्ज़ल् खाँ की सेना में याकूत खाँ नाम का कोई अन्य सैनिक रहा हो।

भूषण ने इस घटना का स्थान जावली और प्रतापगढ को बतलाया है। इसकी पुष्टि उपर्युक्त ऐतिहासिक उल्लेख से हो जाती है। 'जावली' बम्बई प्रातान्तर्गत सतारा जिले मे उत्तरी ताल्लुका है और १७° ३२' तथा १७° ५६' उ० एवं ७३° ३६' और ७३° ५६' पूर्व के मध्य में अवस्थित है। प्रतापगढ दुर्ग जावली ताल्लुके मे १७° ५५' उ० और ७३° ३५' पूर्व मे महाबलेश्वर के दक्षिण-पश्चिम मे आठ मील पर स्थित है। जावली नगर से प्रतापगढ दो मील पश्चिम मे है।[२]

उपर्युक्त विवेचन के अनन्तर यह निष्कर्ष निकलता है कि भूषण ने इस घटना का जो विवरण दिया है वह सक्षिप्त किन्तु इतिहासानुकूल, सजीव एवं तथ्यपूर्ण है।

रुस्तमे ज़माँ पराजय—(उक्त घटना के कुछ समय के पश्चात्) रुस्तमे-जमाँ शिवाजी से पराजित होकर भागा।[३] अफ़्ज़ल्खाँ की मृत्यु के उपरात उसका पुत्र फजलखाँ और रुस्तम-इ-ज़मां (रनदौला) शिवाजी का सामना करने के लिए आये। उन्होंने इन दोनों को पन्हाले के स्थान पर २८ दिसम्बर, १६५९ ई० को पराजित करके बीजापुर के फाटक तक खदेडा।

इस युद्ध से पूर्व ही (२८ नवबर, ६५९ ई०) शिवाजी के भेजे हुए आँना जी दत्तो पन्हाला पर अपना अधिकार स्थापित कर चुके थे। रुस्तम-इ जमाँ की पराजय के उपरात आदिलशाह ने सिद्दी जौहर (सलावत खाँ), रुस्तम-इ-जमाँ, आदि के साथ सेना भेजी (मई, १६६० ई०)। लगभग चार मास तक घेरा पडा रहा। शिवाजी और सलावत खाँ के मध्य गुप्त सधि हो जाने के समाचार को सुनकर आदिलशाह स्वयं पन्हाला की ओर चला। यह समाचार ज्ञात होने पर दुर्ग के पिछले फाटक से निकलकर शिवाजी बीसलगढ की ओर चले गए और पन्हाले पर आदिलशाह का अधिकार हो गया (२५ अगस्त, १६६० ई०)।

इस समय से पन्हाला बीजापुर के अधिकार में ही बना रहा। कालांतार मे आनाजी दत्तो के प्रयत्न से ६ मार्च, १६७३ ई० मे शिवाजी का पन्हाला पर पुनः अधिकार हो गया।[४]

इस प्रकार परनाला (पन्हाला) पर शिवाजी ने दो बार विजय प्राप्त की। प्रथम विजय के

---

[१] देखिए इसी अध्याय में आगे वर्णित फ़तेह खाँ- पराजय [२] इम्पीरियल गज़ेटियर, भा० १४, पृ० ८५; वही, भा० २०, पृ० २१६-७; शिवाजी, पृ० ५५ [३] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण छं० २४१ [४] वही, छं० १०६, १७१, २०५, २०८, ३५९, शिवा-बावनी, छं० २१, ३७; शिवाजी, पृ० ८६-९०, २२७; न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज, भा० १, पृ० १३०-३, २०१-२

उपरांत पन्हाला उनके अधिकार मे लगभग छः सात मास तक रहा। भूषण ने शिवाजी के इन्ही परनाले (पन्हाले) के युद्धों की ओर संकेत किया है। यह कहना कठिन है कि भूषण ने उक्त दोनों विजयो मे से किसका उल्लेख किया है, पर सभावना यही प्रतीत होती है कि उनका अभिप्राय प्रथम युद्ध से ही है। कुछ भी हो, घटना ऐतिहासिक है।

तलब खाँ (कारतलब खां) को लूटना—शिवाजी ने कारतलब खाँ को युद्ध मे मार भगाया था।[1] शाइस्ता खाँ के आदेश से कारतलब खाँ पूना से जनवरी,१६६१ई० मे शिवाजी के विरुद्ध चला। उसने लोहागढ निकटस्थ उबर-खड मे तग मार्ग से पश्चिमी घाट को पार किया। जब मुगल सेना इस मार्ग को पार कर रही थी तब शिवाजी की सेना ने इसके दोनों द्वारों को घेर लिया। कारतलब खाँ के सैनिक दम घुटने और प्यास के कारण मरने लगे। बचने का कोई उपाय न पाकर उसने शिवाजी से रक्षा करने की प्रार्थना की। मराठों ने उससे बहुत सा धन लेकर मार्ग छोड दिया। मुगल मरणासन्न अवस्था मे पूना पहुँचे।[2]

सिंगारपुर (शृगारपुर)-विजय—उक्त घटना के कुछ समयोपरांत शिवाजी ने शृगारपुर के सूर्यराव सूरवे पर आक्रमण किया। यह समाचार ज्ञात होते ही वह अपने प्राणो की रक्षा करने के लिए भाग गया। शिवाजी ने शृगारपुर पर अपना अधिकार कर लिया (२६ अप्रैल, १६६१ ई०)।[3]

रायगढ-वर्णन—भूषण ने रायगढ का वर्णन करते हुए लिखा है कि "शिवाजी ने रायगढ को राजधानी बनाया। यहाँ पर उनके मणि-खचित गगनचुबी राजप्रासाद शोभित होते हैं। मणि-मालाओं, मुक्ताओं, हीरा, पुष्पराग आदि मणियों की छटा से वह नगर देदीप्यमान हो रहा है। विविध प्रकार के सर, कूप, वृक्ष तथा पुष्प आदि उसकी शोभा को द्विगुणित कर रहे हैं।"[4]

उक्त दुर्ग के संबध मे अन्य ग्रथों से यह विवरण उपलब्ध होता है :—

"रायगढ का प्राचीन नाम रायरी है। यह कोलाबा जिले के महाद ताल्लुके मे, पूना से ३२ मील दक्षिण-पश्चिम मे स्थित है। इसकी ऊँचाई सागर की सतह से २,८५१ फीट है। १६४८ ई० मे इस पर शिवाजी का अधिकार हो गया था। १६६२ ई० मे इसका नाम रायगढ रखकर शिवाजी ने इसे अपनी राजधानी बनाया। इसमे विविध प्रकार के लगभग तीन सौ पाषाण-निर्मित भवन थे। १६६४ ई० मे सूरत की लूट के धन से यह नगर और भी धन-धान्यपूर्ण हो गया था। इसी दुर्ग में १६७४ ई० मे शिवाजी का राज्याभिषेक हुआ था।[5]

इस विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि भूषण ने रायगढ के ऐश्वर्य एव वैभव का जो उल्लेख किया है वह यथातथ्य है। इस वर्णन मे इन्होंने कल्पना से अधिक काम नही लिया है।

शिवाजी और शाइस्ता खाँ—(५ अप्रैल, १६६३ ई०) भूषण लिखते हैं कि "शाइस्ता खाँ दक्षिण को दबाकर पूना मे जा बैठा। शिवाजी ने दो सौ साथियों को लेकर सौ सहस्र के मनसबदार के महलों मे महाभारत मचा दिया। इस घटना के अवसर पर शाइस्ता खाँ ने अपना एक

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छ० १०२ [2] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज, भा० १, पृ० १३७ ८ [3] वही, पृ० १३८-६, भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० २०७, वही, शिवाबावनी, छ० ३७ [4] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छ० १५-२४, २८६ [5] इंपीरियल गज़ेटियर ऑव् इंडिया, भा० २१, पृ० ४७-८, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ० ८३

पुत्र और एक हाथ गँवा दिया। वह अपने प्राण बचा कर भाग गया और पूना पर शिवाजी का अधिकार हो गया।"[1]

"जुलाई, १६५६ ई० मे शाइस्ता खाँ दक्षिण का सूबेदार नियुक्त हुआ। २५ फरवरी, १६६० ई० मे वह अहमदनगर से चला और पूना आदि पर अधिकार कर लिया (मई, १६६० ई०)। वहाँ से चाकन पर आक्रमण करके पुनः वह पूना को लौट गया और शिवाजी के राज-प्रासाद मे डेरा डाला (अगस्त, १६६० ई०)।

सिंहगढ से चलकर शिवाजी रात्रि मे पूना पहुँच गए और वे मुगल शिविर मे प्रविष्ट हुए। नवाब की पाकशाला की ओर से दीवार मे द्वार बनाकर शाइस्ता खाँ के शयनागार मे जा पहुँचे। शाइस्ता खाँ जाग गया। शिवाजी ने अपनी तलवार से उसका अँगूठा काट डाला। उसी समय किसी स्त्री ने दीपक बुझा दिया। इस अधकार मे शाइस्ता खाँ की दासियाँ उसे सुरक्षित स्थान मे ले गईं, पर मराठे वहाँ पर बडी देर तक मार काट करते रहे। उधर अन्तःपुर के बाहर बाबाजी बापूजी ने शेष दो सौ सैनिकों के साथ पहरेदारों को बड़ी सख्या मे मार डाला। शाइस्ता खाँ का एक पुत्र, अबुलफतेह, अपने पिता की सहायता के लिए आया पर मारा गया। सारी सेना के जग जाने और सजग हो जाने के कारण अपने साथियों को एकत्रित करके के शिवाजी वहाँ से चल दिए।

इस आक्रमण मे मराठों के केवल छः वीर मारे गए। शिवाजी ने शाइस्ता खाँ के एक पुत्र, एक सेनापति, चालिस सेवक, छः पत्नियाँ एव दासियाँ जान से मार डालीं तथा उसके दो पुत्रों, आठ अन्य स्त्रियो और स्वय शाइस्ता खाँ को घायल कर दिया।

शाइस्ता खाँ खिन्न-मनः और लज्जित होकर औरंगाबाद को चला गया। औरंजेब ने अप्रसन्न होकर उसको बगाल के लिए स्थानान्तरित कर दिया।"[2]

ऊपर दिए हुए भूषण एव इतिहास के विवरणों मे परस्पर बहुत समता है। उस समय शाइस्ता खाँ पूना मे था। शिवाजी उसके अन्तःपुर मे प्रविष्ट हुए; शाइस्ता खाँ की उँगली कट गई, उसका एक पुत्र मारा गया और वह पूना को अरक्षित स्थान समझकर औरंबाद को चला गया आदि सभी बाते समान हैं अतः ऐतिहासिक हैं। शाइस्ता खाँ अमीर-उल्-उमरा था, इसी-लिए भूषण ने अत्युक्ति के साथ उसे सौ सहस्र का मनसबदार माना है।

शिवाजी और जसवंतसिंह—भूषण कहते है कि "शिवाजी ने जसवंतसिंह को दुःशासन के के समान समझकर पराजित किया।"[3]

"जिस समय शिवाजी शाइस्ता खाँ पर आक्रमण करने के लिए पूना गए उस समय पूना से कुछ दूर दक्षिण मे सिंहगढ की ओर जानेवाली सडक के उस पार महाराज जसवतसिंह पडे हुए थे। शिवाजी उस सडक से निकले पर जसवन्तसिंह मे उधर कुछ ध्यान नही दिया। शाइस्ता

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ३५, ७७, १०२, १७४, १९०, ३२५, ३३९, ३४०, ३६६ [2] शिवाजी, पृ०८६, ९०, १०४; औरंज़ेब, भा० ४, पृ०४३-५१, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ० १४२-४ [3] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ३५, ७७, ३६६; शिवा-बावनी, छं० ४०

खाँ के लौट जाने पर ये राजकुमार मुअज्जम के साथ दक्षिण मे नियुक्त हुए। इन्होंने नवम्बर, १६६३ ई० में सिहगढ घेर लिया। यह छः मास तक घेरा डाले पडे रहे। इस युद्ध मे इनके बहुत से सिपाही मारे गए परन्तु दुर्ग हाथ नहीं आया। अन्त मे जून, १६६४ ई० मे घेरा उठा लिया गया और वह औरगाबाद को लौट गये।"[1]

ऊपर दिए हुए ऐतिहासिक विवरण से स्पष्ट है कि जसवन्तसिह ने शाइस्ता खाँ प्रसग मे तटस्थता की नीति का अनुसरण किया था। अतः भूषण का उस घटना से अभिप्राय नही प्रतीत होता वरन् उनका कथन जसवतसिह के सिहगढ के घेरे मे असफल होने की ओर संकेत करता है, ऐसा जान पडता है।

शिवाजी और भाऊसिह हाडा-पराजय—"शिवाजी ने भाऊ को द्रोण के समान समझकर पराजित किया।"[2] इतिहास से ज्ञात होता है कि भाऊ सिह हाडा शिवाजी से लडने के लिए दक्षिण भेजे गए थे। सिहगढ के उपर्युक्त घेरे मे (नवम्बर, १६६३ ई०–जून, १६६४ ई०) असफलता मिलने के कारण जसवंतसिह और भाऊ सिह मे पराजय के उत्तरदायित्व पर अनबन हो गई थी। अंत मे वे महाराजा जसवतसिंह के साथ औरगाबाद चले गए।[3] भूषण ने अपने वर्णन मे सभवत उक्त घटना की ही ओर संकेत किया है।

शिवाजी और सूरत की लूट—भूषण लिखते मैं "शिवाजी ने सूरत पर आक्रमण करके दिल्ली की सेना को मार भगाया। इन्होंने सूरत को लूटकर जलाया और नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। उस नगर की सारी शोभा जाती रही। लाखों की मूल्य के हीरा और मणि-माणिक्य मकानों की मूल को खोदकर वे ले गए। होली के समान जलाकर सारे नगर को बिगाड दिया, और भिलाये को मिट्टी मे मिला दिया। नगरवासी भडौच को भाग गए। इस पराजय के कारण औरगजेब का मुख कलक-कालिमा से कलकित हो गया और वह रात-दिन उस नगर को शिवा-सैन्य से घिरा हुआ समझने लगा।"[4]

शिवाजी ने सूरत को दो बार लूटा था। उनका प्रथम आक्रमण ६ जनवरी से १० जनवरी, १६६४ ई० तक रहा था। उन दिनों सूरत एक सर्व-सपन्न बदरगाह था। ५ जनवरी १६६४ ई० को शिवाजी के आगमन की सूचना पाकर वहाँ के निवासी ताप्ती नदी को पार करके भागने लगे। वहाँ का मुगल सूबेदार इनायत खाँ तथा अन्य धनाढ्य व्यक्ति दुर्ग मे जा छिपे। बुधवार ६ जनवरी, १६६४ ई० को प्रातःकाल ११ बजे शिवा जी सूरत जा पहुँचे। नगर मे प्रविष्ट होते ही मराठों ने लूटना और आग लगाना आरंभ कर दिया। चार दिन तक सर्वनाश का यह कार्य होता रहा। परिणामस्वरूप सहस्त्रों घर जलकर भस्म हो गए और दो-तिहाई नगर नष्ट हो गया। एक अंगरेज़ चैप्लेन (Chaplain) के शब्दों मे "गुरुवार और शुक्रवार की रात्रियाँ अग्नि दाह की दृष्टि से अत्यंत भयकर थीं। अग्नि ने रात्रि को उसी प्रकार दिन मे परिवर्तित कर दिया था, जिस

---

[1] शिवाजी, पृ० ८८-९, १०२-३; न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ० १४४, १५० [2] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ३५, ७७, ३४८ [3] न्यू हिस्ट्री आव् दी मराठाज, भा० १, पृ० १४४ [4] भूषणग्रंथावली; शिवराज-भूषण, छं० २०१, ३३६, ३५६, वही, फुटकर, छं० ११, ३३, ३४, ३५, फुटकर संदेहात्मक, छं० २

प्रकार पहले दिन के समय धूम ने घने मेघ-खंड का रूप धारण कर सूर्य को आच्छादित करके दिवस को रात्रि में परिणत कर दिया था।"

इस लूट मे शिवाजी को एक करोड़ रूपए के मूल्य का सोना, चाँदी, मोती, हीरे आदि प्राप्त हुए। उनके इस आक्रमण का मुख्य उद्देश्य लूट मार करना, औरंगजेब से प्रतिशोध लेना तथा विदेशी व्यापारियों को किसी प्रकार की हानि न पहुँचाना था। रविवार, ११ जनवरी, १६६४ ई० को शिवा जी कोंकण की ओर चले गए।

सूरत की दूसरी लूट—(अक्टूबर, १६७० ई०) शिवाजी की प्रथम लूट तथा उसके पश्चात् की अन्य स्थानों की विजयों का सूरत पर बहुत आतंक छा गया था। ता० ३ अक्टूबर, १६७० ई० को शिवाजी ने सूरत पर दूसरी बार आक्रमण किया। नगर के भारतीय व्यापारी और सरकारी कर्मचारी पहले ही भाग चुके थे। अँगरेजी, डच, और फ्रांसीसी फेक्ट्रियों आदि को छोडकर सारे नगर पर मराठों का अधिकार हो गया।

मराठों ने बडे-बडे घरों को लूटा और सर्वत्र आग लगाई। फलस्वरूप लगभग आधा नगर जलकर मिट्टी मे मिल गया। ५ अक्टूबर को शिवाजी सूरत से लौट पडे, यद्यपि मुग़ल सेना के आगमन की कोई भी सभावना न थी।

इस बार की लूट मे शिवाजी लगभग ६६ लाख रुपए का माल अपने साथ लेते गए। इस लूट के परिणामस्वरूप सूरत का व्यापार प्रायः नष्ट हो गया। शिवाजी के चले जाने के पश्चात् एक मास तक वहाँ न कोई शासक था और न कोई सरकार। कतिपय वर्षों तक शिवाजी के आगमन की आशंका से सूरत काँप उठता, व्यापारी अपना सामान जलयानों पर भेज देते और नगरवासी ग्रामों को भाग जाते थे।[1]

भूषण ने सूरत की लूट का जो सजीव चित्र अंकित किया है, वह सूरत की दोनों लूटों के ऐतिहासिक विवरण से बहुत कुछ साम्य रखता है। नगर का लूटना, आग लगाना, मकानों की जड़ें तक खोद डालना, नगर-निवासियों का ताप्ती के उस पार भड़ोच आदि को भागना, विदेशी व्यापारियों का भयभीत रहना, शिवाजी के पुनः आक्रमण की आशका एव भय आदि के वर्णन मे अत्यधिक साम्य है। अतएव भूषण का सूरत की लूट का वर्णन ऐतिहासिक ही नही अपितु सजीव एवं वास्तविक भी है।

भूषण ने दोनों लूटों मे से किसका वर्णन किया है, इस प्रश्न का उत्तर देना कठिन है। भूषण कृत प्रथम लूट का वर्णन और उक्त अँगरेजी चैप्लेन का विवरण परस्पर अत्यधिक साम्य रखते हैं। वैसे तो उक्त दोनों लूटों के अवसरों पर सूरत की भारी दुर्दशा हुई थी, पर प्रथम लूट के समय उस नगर को अधिक हानि उठानी पडी थी। भूषण का वर्णन दोनों बार की घटनाओं के सामूहिक रूप का चित्रण करता हुआ सा प्रतीत होता है। सभव है उन्होंने दोनों ही घटनाओं को एक ही मानकर उनका वर्णन किया हो। यद्यपि उनका वर्णन प्रथम लूट से अधिक समता रखता है, पर निश्चयात्मक रूप से यह कहना, कि उन्होंने उसी का वर्णन किया है, कठिन है। सभवतः भूषण

---

[1] शिवाजी, पृ० १०४-१८, २१६-२८; न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा०१, पृ० १४४-६, १६२-४

ने दोनों बार की लूटें देखी थीं अथवा उनके विस्तृत विवरण से वे भली भाँति परिचित थे, इसी-लिए वे इतना सजीव और वास्तविक चित्रण कर सके।

शिवाजी और ख़वास खाँ—भूषण का कथन है कि "ख़वास खाँ ने शिवाजी से वैर किया और वह कुडाल नामक स्थान पर आया। शिवाजी ने उसका सामना किया और वह पराजित हुआ।"[1] इस घटना के संबंध मे इतिहास से ज्ञात होता है कि "अली आदिलशाह ने शिवाजी के विरुद्ध इख़लास खाँ के नेतृत्व मे एक विशाल सेना भेजी थी। साथ ही अपने मत्री ख़वास खाँ को उसकी सहायता से लिए रवाना किया था। खानापुर नामक स्थान पर शिवाजी ने वीरतापूर्वक उसका सामना किया। ख़वास खाँ के बहुत से वीर मारे गए। वह घायल होकर बीजापुर को भाग गया (दिसम्बर, १६६४ ई०)।[2] इन्ही युद्धों के अवसर पर शिवाजी का वेदनूर मे आतक छा गया था और उन्होंने उसी वर्ष वेदनूर पर आक्रमण भी किया था।"[3] भूषण ने इन्हीं ऐतिहासिक घटनाओं का ऊपर दिये हुए प्रसगों मे उल्लेख किया है, जो इतिहासानुकूल है।

शिवाजी द्वारा जयसिंह को दुर्ग-समर्पण—भूषण के कथनानुसार "शिवाजी ने बेदर (बीदर), कल्यान (कल्याण), परेभा (परेंडा ?) आदि दुर्ग आदिलशाह से जीते और कुतुबशाह से भाग-नगरी (हैदराबाद) एव रामगिरि लिए। उक्त जिन पैंतीस दुर्गों को शिवाजी ने बात की बात मे जीता था, उनको उन्होंने जयसिंह को यश-प्राप्त करने की कामना से निस्सकोच भाव से समर्पित कर दिया।"[4]

ऐतिहासिक ग्रथों से विदित होता है कि "मिर्जा राजा जयसिंह एक विशाल सेना लेकर १० फ़रवरी, १६६५ ई० को औरगबाद और ३ मार्च, १६६५ ई० को पूना पहुँचे थे। उन्होंने वहाँ पहुँचते ही शिवाजी के विरुद्ध अनवरत युद्ध प्रारम्भ कर दिया। मराठों के कतिपय स्थान उनके अधिकार मे आ गए। अप्रैल के मध्य मे दिलेर खाँ ने पुरधर का घेरा डाला और उसे दो मास तक घेरे पडा रहा। उसके साथ राव कर्ण भी विद्यमान थे। मराठों ने बडा वीरता प्रदर्शित की। दुर्ग की रक्षा होना असभव समझकर शिवाजी ने आत्मसमर्पण करने का निश्चय किया। जय-सिंह और दिलेर खाँ ने बडे सम्मान के साथ उनसे पुरधर की सधि की (१५ जून, १६६५ ई०)। इसके अनुसार शिवाजी ने मुगलों को ४ लाख वार्षिक आय के २३ दुर्ग, (१) रुद्रमल (वज्रगढ), (२) पुरंधर, (३) कोन्दन, (४) रोहिर, (५) लोहागढ, (६) ईसागढ, (७) टाकी, (८) तिकोना (कोणकण मे), (९) माहुली, (१०) मुरजन, (११) खीर-दुर्ग (क्षीरदुर्ग), (१२) भडार-दुर्ग, (१३) तुलसी-खूल, (१४) नर-दुर्ग, (१५) खैगढ अथवा अकोला, (१६) मार्ग गढ अथवा अत्रा, (१७) कोटज, (१८) बसंत, (१९) नग, (२०) करनला, (२१) सोनगढ, (२२) मानगढ, और (२३) खद-कला (कोदन के निकट) समर्पित किए। राजगढ सहित बारह दुर्ग जिनकी आय एक लाख हुन थी, शिवाजी के पास छोड दिए गए।"[5]

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० २०७, २५५, ३१३, ३३० [2] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ० १२१-२ [3] सरकार, शिवाजी, पृ० २५४-५ [4] भूषण-ग्रथावली, शिवराज-भूषण, छं० ११६, २१३, २१४, ३६६; शिवा-बावनी, छं० ३२; फुटकर, छं० १०, १८, २४ [5] शिवाजी, पृ० १२०, १२१, १३७-५७, औरंगज़ेब, भा० ४, पृ० ५९-८०; न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ० १५४-६१

उपर्युक्त भूषण कथित और ऐतिहासिक विवरण में परस्पर बहुत वैषम्य है। इतिहास के अनुसार उक्त सधि के अवसर पर शिवाजी के पास कुल पैंतीस दुर्ग थे, जिनमे से उन्होंने २३ दुर्ग मुगलो को देकर शेष अपने पास रख लिए थे। भूषण ने सभवत: पैंतीस दुर्ग से शिवाजी के कुल दुर्गों की सख्या की ओर सकेत किया है। यदि उनका अभिप्राय उन दुर्गों की सख्या से है, जो शिवाजी ने जयसिंह को दिए थे, तो उनका कथन इतिहास के प्रतिकूल पड़ता है।

इसके अतिरिक्त जयसिंह को समर्पित किए गए जिन दुर्गों के नामों का भूषण ने उल्लेख किया है, वे इतिहास में दिए हुए नामों से मेल नहीं खाते। भूषण कथिक उक्त नामधारी दुर्ग उस समय शिवा जी के अधिकार मे थे, यह निर्णय करने वाली सामग्री का भी अभाव है। केवल इतना ही ज्ञात है, कि शिवाजी ने कल्याण को २६ जनवरी, १६५६ ई० (अथवा २४ अक्तूबर, १६५७ ई०) को लूटा था। रामगिरि औरगजेब को गोलकुडा से १६६५ ई० में प्राप्त हुआ था (न कि शिवाजी से)। बेदर (बीदर) पर मुगल-सम्राट् १६५७ ई० मे अपना अधिकार स्थापित कर चुका था। परेझा नाम से भूषण का क्या अभिप्राय है, यह निर्णय करना दुष्कर है। भागनगरी (हैदराबाद) भी उस समय शिवाजी के अधिकार मे नही था।[1]

भूषण का यह कहना कि शिवाजी ने यश प्राप्त करने के लिए प्रसन्नतापूर्वक, उक्त दुर्ग जयसिह को दिए, असंगत है। उस समय दक्षिण मे शिवाजी के जितने शत्रु थे वे सब मुगलों की सहायता कर रहे थे। उनकी सम्मिलित सेना का सामना करना असम्भव समझ कर, पुरधर मे घिरे हुए मराठा परिवारों और बचे हुए राज्य की रक्षा करने की कामना से प्रेरित होकर ही उन्होंने आत्म-समर्पण किया था। हाँ, यह सधि दोनों ओर से सम्मानपूर्वक की गई थी। इस सधि को स्वीकर करने मे शिवाजी ने अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया था। भूषण के सबध मे केवल इतना ही कहना पर्याप्त है कि वे पुरंधर की सधि से कुछ परिचित अवश्य थे। अपने नायक की उक्त पराजयों को अतिशयोक्तिपूर्ण ढग से प्रशसा के रूप मे उन्होंने वर्णित किया है, पर उनके कथन का अधिकाश अश इतिहास के विवरण के विपरीत पडता है।

शिवाजी और कर्ण—भूषण एक स्थल पर लिखते हैं कि "शिवाजी ने कर्ण को कर्ण सदृश्य समझकर पराजित किया।"[2] उनके इस कथन से यह स्पष्ट नही होता कि उन्होंने अपने वर्णन में किस घटना की ओर संकेत किया है। इतिहास बतलाता है कि १६६५ ई० के पुरंधर के घेरे में राव कर्ण जयसिह की सेना के दक्षिण भाग मे युद्ध कर रहे थे।[3] यदि भूषण ने इसी घटना की ओर सकेत किया है तो यह स्वीकार करना पडेगा कि उनका उक्त कथन इतिहास के विपरीत पडता है, क्योंकि, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, पुरधर के घेरे के अवसर पर शिवाजी ने आत्म-समर्पण कर दिया था।

शिवाजी और सरजे खां—भूषण के काव्य से विदित होता है कि शिवाजी ने सरजे खाँ

---

[1] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इडिया, भा० ४, पृ० २५२, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० २५२, २६५, २७१, २७२, २७६ [2] भूषण-ग्रंथावली; शिवराज-भूषण, छं० ३५, ७७ [3] शिवाजी, पृ० ११६

नामक एक वीर को युद्ध मे पराजित किया था।[1] शिवाजी और मिर्जा राजा जयसिह मे पुरधर की संधि हो जाने के उपरांत मुगल सेना ने बीजापुर पर आक्रमण किया था। बीजापुर की सेना ख़वास खॉ एव शरजा खॉ के सेनापतित्व में मुग़लों का सामना करने के लिए आई। दिलेर खॉ और शिवाजी ने बीजापुरी सेना को पराजित करके पीछे लौटा दिया (२४ दिसम्बर, १६६५ ई०)।[2] भूषण ने शिवाजी और शरजे खॉ के इसी युद्ध की ओर सकेत किया है, ऐसा ज्ञात होता है।

शिवाजी और औरगज़ेब में भेट—भूषण शिवाजी और औरंजेब की भेट का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि "शिवाजी को लाकर औरगजेब के दरबार मे पॉच हज़ारी मंसबदारों के बीच खडा किया गया था। इस अपमान से क्रुद्ध होकर उन्होंने औरगजेब को न तो अभिवादन किया और न उसकी कोई आज्ञा ही स्वीकार की। उन्होंने रामसिंह के समझाने पर भी कुछ ध्यान नहीं दिया। उस समय उनके पास अस्त्र-शस्त्र नही थे। इसीलिए औरगजेब के प्राणों की रक्षा हो गई। अन्त मे सरदारगण समझा बुझाकर उन्हे दरबार से बाहर ले गए।"[3]

इस भेट के प्रसग में उनके कुछ पद्यों मे ऊपर दिए हुए विवरण के विपरीत उल्लेख भी मिलते हैं, जिनका सार यह है :—

"शिवाजी से भेंट करते समय औरगजेब ने राजा जसवंतसिंह आदि को अपनी रक्षार्थ अपने पास खडा कर लिया था। शिवाजी को छः हजारी मंसबदारों के मध्य खड़ा किया गया था। इससे क्रुद्ध होकर शिवाजी ने (तलवार की) मूठ पर हाथ रक्खा, जिससे औरंगजेब का मुख श्याम और सेना का पीला पड गया।[4] दिल्ली-दरगाह मे जाकर शिवाजी ने औरंगजेब से शत्रुता कर ली।[5]

इतिहास से ज्ञात होता है कि औरगजेब से मिलने के लिए शिवाजी ने १६६६ ई० की मार्च के तृतीय सप्ताह मे उत्तर भारत की यात्रा आरभ की थी और वे ६ मई को आगरे के निकट पहुँचे थे।

१२ मई, १६६६ ई० को औरंगजेब की ५०वी वर्षगाठ थी। आगरा दुर्ग का दीवान-इ-आम सर्वोत्तम ढङ्ग से सुसज्जित किया गया था। सहस्रों की सख्या मे अमीर एवं अन्य पदाधिकारी अपने-अपने पद के अनुकूल श्रेणी बद्ध खडे थे।

दीवान-इ-आम मे कुँवर रामसिह ने शिवाजी, उनके पुत्र शंभूजी, तथा दस पदाधिकारियों को साथ लाकर उपस्थित किया। उनकी ओर से १५०० मोहर भेट और छः सहस्र रुपए न्यौछावर मे दिए गए। औरगजेब ने सौजन्यतापूर्वक कहा 'शिवाजी राजा आओ' सिंहासन के निकट पहुँच कर उन्होंने तीन बार अभिवादन किया। फिर सम्राट् के सकेत पर वे तृतीय श्रेणी के सरदारों की पंक्ति में ले जाए गए, दरबार का कार्य आरभ हो गया और वे भुला दिए गए।

शिवाजी इस प्रकार के उपेक्षापूर्ण रुक्ष व्यवहार के लिए प्रस्तुत नहीं थे। सर्व प्रथम नगर के बाहर २५०० के मसबदार रामसिंह तथा मुख़लिस खॉ जैसे साधारण पदाधिकारियों ने उनका

---

[1] भूषण ग्रथावली, फुटकर, छं० ३१ [2] शिवाजी, पृ० १५८-६६, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़्, भा० १, पृ० १६१-२ [3] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छ० ३४, ३८, ७१, १८७, १९९, २०५, २१०, २६६, ३१०, ३११ [4] वही, शिवा-बावनी, छं० ४०, ४१, ४२ [5] वही, फुटकर, छं० २०५

स्वागत किया। सिंहासन के सामने नतमस्तक होने के उपरांत न पुरस्कार अथवा उपाधि दी गई और न मृदु शब्द ही बोले गए। उन्हें अमीरों की कई पंक्तियों के पीछे खड़ा किया गया। रामसिंह से शिवाजी को ज्ञात हुआ कि वे पाँच हजारी मंसबदारों में खड़े किए गए हैं। यह सुनते ही वे चिल्लाने लगे कि मेरा पुत्र और नेता जी दोनों पाँच हजारी मंसबदार हैं। क्या मैं इतनी दूर इतने छोटे पद की प्राप्ति के लिए आया हूँ? अपने सामने राजा जयसिंह के अधीनस्थ रायसिंह सीसोदिया§ को खड़ा जानकर भी वे क्रोध में आ कर बड़बड़ाने लगे और आत्म हत्या करने की सोचने लगे*। उनको शांत करने के लिए रामसिंह के सारे उपाय असफल हुए। क्रोध और दुःख की अधिकता के कारण वे मूर्च्छित होकर गिर पड़े। दरबार में खलबली मच गई। सम्राट् के पूछने पर रामसिंह ने चातुर्यपूर्ण उत्तर दिया कि चीता जंगली पशु है। तपन की अधिकता के कारण बीमार हो गया है। उन्हें दरबार के शिष्टाचार से अपरिचित बतलाकर सम्राट् से क्षमा-प्रदान करने की भी प्रार्थना की गई। औरंगजेब की आज्ञा से वे पास के एक कमरे में ले जाए गए। वहाँ गुलाब जल छिड़क कर उनकी मूर्च्छा भंग की गई। तब दरबार बंद होने से पूर्व ही वे अपने निवास-स्थान को भेज दिए गए।"[1]

भूषण और इतिहास के उल्लेखों से स्पष्ट होता है कि शिवाजी और औरंगजेब की भेंट विशेष सजधज के साथ हुई थी। उस समय बादशाह ने विशाल दरबार किया था। रामसिंह शिवाजी के साथ थे। भूषण का यह कहना कि उन्होंने सम्राट् को अभिवादन नहीं किया, अत्युक्ति-पूर्ण लगता है। शिवराज-भूषण का यह मत कि 'वे पाँच हजारी मंसबदारों की पंक्ति में खड़े किए गए थे ठीक जान पड़ता है।' इस संबंध में शिवा-बावनी की छः हजारी मंसबदारों की पंक्ति में उन्हें खड़े किए जाने की उक्ति इतिहास विरुद्ध लगती है। दरबार में औरंगजेब के अपमान-जनक व्यवहार से क्रुद्ध होकर कटु वचन कहने लगना शिवाजी जैसे वीर-पुंगव के लिए अत्यन्त स्वाभाविक रहा होगा। शिवा-बावनी का मूठ पर हाथ रखने वाला उल्लेख इतिहास के विपरीत ज्ञात होता है। संभवतः उस समय शिवाजी के पास हथियार नहीं थे, अन्यथा उनके लिए यह कार्य भी दुष्कर न होता।

जयपुर के तत्कालीन पत्रों के आधार पर इस घटना के विषय में सर देसाई लिखते हैं :—

"औरंगजेब और शिवाजी की भेंट दीवान-इ-खास में हुई थी। शिवाजी को राजा रायसिंह के सामने ताहिर खाँ के स्थान पर खड़ा किया गया था। सम्राट् की वर्ष-गाँठ के उपलक्ष्य में बँटे हुए पानों में से एक शिवाजी को भी मिला। शाहजादों, वजीर जफर खाँ तथा जसवंतसिंह को खिलअत दी गई। इस पर क्रुद्ध होने के कारण शिवाजी के नेत्र रक्त-वर्ण हो गए। कुंवर रामसिंह को भला बुरा कहकर सिंहासन की ओर पीठ फेर कर चले गए। कुँवर ने उनका हाथ पकड़ा, पर उन्होंने

---

§मराठों के मतानुसार वे जसवंतसिंह थे, पर वे सप्त हजारी मंसबदार होने के कारण दो पंक्ति आगे खड़े किए गए होंगे। अन्य स्थान पर वह राठौर कहे गए हैं।

*सभासद (४६) के अनुसार उन्होंने जसवंतसिंह को मारने के लिए रामसिंह से कटार माँगी।

[1] शिवाजी, पृ० १६६-७७

झटक कर छिना लिया और एक ओर आकर बैठ गए। कुँवर ने आकर उन्हे समझाना चाहा पर उन्होंने एक न सुनी और जसवतसिह से नीचे खडे किए जाने आदि अपमानों की ओर सकेत करते हुए कटु शब्दों द्वारा चिल्लाने लगे।"[1]

इस कथन मे शिवाजी के मूर्च्छित होने का उल्लेख नही किया गया है। सम्भव है कि उन्होंने दरबार से बाहर जाने के विचार से मूर्च्छित बनकर राजनीतिक चाल चली हो। मूर्च्छा-प्रसग के सबध मे भूषण भी मौन हैं। सरकार ने दोनों की भेंट का स्थान दरबार-इ-आम और सर देसाई ने दरबार-इ-खास माना है। भूषण ने गुसलखाना (गोसलखाना) शब्द का प्रयोग किया है, जो दरबार-इ-खास का पर्यायवाची प्रतीत होता है।

शिवराज भूषण के एक छद से यह विदित होता है कि उक्त भेट दिल्ली मे हुई थी।[2] इस प्रकार का भ्रमात्मक कथन प्राचीन मौलिक 'सभासद' का आश्रय लेकर रानाडे तथा ग्रॉड डफ ने भी अपनी पुस्तकों मे मान लिया था। आधुनिक अनुसधानों से यह सिद्ध हो गया है कि यह ऐतिहासिक मिलन आगरे मे हुआ था, न कि दिल्ली मे। उस समय आगरा और दिल्ली दोनो ही भारत की राजधानी माने जाते थे। २२ जनवरी, १६६६ ई० को शाहजहाँ की मृत्यु हो जाने के उपरान्त औरंजेब सर्व प्रथम १२ मई, १६६६ ई० को आगरे के किले मे सिहासनारूढ हुआ था। उससे पूर्व वह दिल्ली से ही राज्य-कार्य-सचालन करता रहा था। ऐसी परिस्थितियों मे राजधानी-वार्त्ता चलाते समय व्यक्तियों को दिल्ली का नाम अनायास ही स्मरण हो आता होगा। सम्भवत: भूषण ने इसी प्रकार की उक्ति का आश्रय लेकर 'दिल्ली-दरगाह' शब्द का प्रयोग कर दिया है। कुछ भी हो, उनका उक्त कथन इतिहास के विपरीत है।

उपर्युक्त विवेचन के उपरात यह सार निकलता है कि भूषण के ये कथन—शिवाजी और औरङ्गजेब का आगरे के दरबार-इ-खास मे मिलना, पाँच हजारी मसबदारों के मध्य शिवाजी का खडा किया जाना, अपमानित होने के कारण क्रोधोन्मत्त होकर उनका मनमानी बाते कहने लगना, औरंगजेब का अपनी रक्षा के लिए विशेष प्रबंध कर रखना आदि इतिहासानुकूल हैं और शेष-दिल्ली मे भेंट होना, छ: हजारी मसबदारों की श्रेणी मे खडा किया जाना आदि बाते इतिहास के प्रतिकूल हैं।

शिवाजी का आगरे से लौटना—आगे चलकर भूषण लिखते हैं कि "शिवाजी आगरे के दरबार में रग मे भंग डालकर, पहरेदारों से घिरे हुए नगर और चौकियों को पार करके अपने घर लौट आये और नर्मदा नदी को अपने राज्य की सीमा बनाया।"[3]

इस घटना के संबंध मे इतिहास बतलाता है कि "शिवाजी को आगरे के जयपुर-भवन मे बदी बनाकर रक्खा गया था। अवसर पाकर उन्होंने बीमारी का बहाना कर दिया। प्रत्येक दिन सध्या समय वे टोकरियों मे मिठाई भेजने लगे, जो साधुओं और ब्राह्मणों को बाँटी जाती थी। १६ अगस्त, १६६६ ई० (सर देसाई के मतानुसार १६ अगस्त, १६६६ ई०) को वह स्वय और उनका पुत्र दो टोकरियों मे बैठकर मिठाई की अन्य टोकरियों के साथ चले गये। आगरे से बाहर टोक-

---

[1] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़ भा० १, पृ० १७०-१ [2] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० २०५ [3] वही, वही, छं० ७६

रियों से निकलकर भस्मधारी साधुओं के वेश मे मथुरा की ओर चल पडे। दूसरे दिन तीन बजे के लगभग पहरेदारों को वास्तविकता का पता चला। औरगजेब ने शिवाजी को पकड़ने के लिए चारों ओर सेना दौडाई। वे मथुरा, प्रयाग, काशी, गया, पुरी, गोलकुडा आदि स्थानों पर होते हुए १६६६ ई० के दिसंबर के अत मे (सर देसाई के मत से १२ सितबर, अथवा २० नवम्बर) राय-गढ पहुँचे।"[१]

भूषण ने इसी घटना का वर्णन किया है, जो संक्षिप्त होते हुए भी इतिहासानुकूल है।

सिंहगढ़-विजय—आगरे से लौटने के कुछ वर्षों के उपरात शिवाजी ने सिंहगढ विजय किया था। भूषण ने इसी का उल्लेख इन शब्दों द्वारा किया है :—

"राठौर वीर उदयभानसिंह सिंहगढ के स्वामी थे। शिवाजी रात्रि के अधकार मे दुर्ग पर चढ़ गए। घोर युद्ध हुआ। उदयभानसिंह अपने साथियों के सहित मारे गये और दुर्ग पर शिवाजी का अधिकार हो गया।"[२]

इतिहास कहता है कि "सिंहगढ (कोनदन) सर्व प्रसिद्ध दुर्ग था। जून १६६५ ई० मे शिवा जी से मिलने के पश्चात् जयसिंह ने यह दुर्ग कीर्त्तिसिंह को सौप दिया था। १६७० ई० मे उदय-भानसिंह राठौर इस दुर्ग की रक्षा कर रहे थे।

कुछ कोली पथ-प्रदर्शकों को साथ लेकर तानाजी मालुसरे अपने तीन सो मावली साथियों के साथ जनवरी के अतिम दिनों मे (सरदसाई के मतानुसार चार फरवरी), १६७० ई० को रात मे कल्याण फाटक के निकट से रस्सियों की सहायता से चढ गए और प्रहरियों को मारकर दुर्ग में प्रविष्ट हुए। घोर युद्ध हुआ। तानाजी मालुसरे और उदयभानसिंह दोनों मारे गए। पर तानाजी के भाई सूर्याजी मालुसरे ने फाटक खोल दिया जिससे सेना ने प्रवेश करके दुर्ग पर अधिकार कर लिया। विजेताओं ने अश्वारोहियों के छप्परों मे आग लगा दी। उसकी लपटों से वहाँ से नौ मील दक्षिण मे स्थित राजगढ दुर्ग मे शिवाजी को इस विजय की सूचना मिल गई। सिंह सदृश्य वीर तानाजी के नाम पर इस दुर्ग का नाम सिंहगढ रक्खा गया।"[३]

भूषण के कथन से यह ध्वनि निकलती है कि शिवाजी ने स्वय सिंहगढ पर सैन्य-सचालन किया था, पर इतिहास मे तानाजी मालुसरे सेना-नायक माने गए हैं। भूषण ने ऐसा सभवत: इस कारण से लिखा है कि शिवाजी के आदेशानुसार ही उनके सेना-नायक मालुसरे ने सिंहगढ पर आक्रमण किया था। अतएव भूषण के कथन का हमे यही अर्थ लेना चाहिए। ऐसा मान लेने पर उनका इस घटना विषयक कथन इतिहासानुकूल सिद्ध हो जाता है।

लोहगढ़-विजय—सिंहगढ पर अधिकार स्थापित हो जाने पश्चात् "शिवाजी ने लोहगढ़ नामक दुर्ग को राठौरों से छीनकर अपने आधिपत्य मे कर लिया।"[४]

सलेहरि-युद्ध—उक्त विजय के कुछ समयोपरांत "शिवाजी को मुग़लों से एक भयङ्कर युद्ध

---

[१] शिवाजी, पृ० १७७-६, १८३-६, १६१-२, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़्, भा० १, पृ० १६२, १७२, १७५-८० [२] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ६६, १५५, २६०, २८६ [३] शिवाजी, पृ० २०४, २०६-६, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़्, भा० १, पृ० १६०-१ [४] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० २६०

करना पड़ा। यह युद्ध सलेहरि नामक स्थान पर हुआ था। मुग़लों की एक विशाल सेना किशोर-सिंह, मोहकमसिंह, इखलास ख़ाँ आदि के नेतृत्व में शिवाजी का सामना करने को आई थी। शिवा जी ने मुग़ल-दल की भयङ्कर मार काट की और उक्त सभी सेना-नायकों को पकड़ लिया। इस युद्ध मे अमरसिंह चन्दावत खेत रहे और विजय-श्री शिवाजी के हाथ लगी।"[1]

भूषण कथित सलेहरि-युद्ध के उक्त विवरण के सबध मे इतिहास से विदित होता है कि "प्रतापराव की अध्यक्षता मे मराठों की एक सेना बरार मे करिजा को लूटती हुई सलेहरि के निकट पहुँची और दूसरी मोरो त्रियबक पिगले के साथ खान्देश और बगलाना को रौंदती हुई सलेहरि पहुँची। इन दोनों सेनाओं ने सलेहरि मे डेरा डाल दिया। दाऊद खाँ मुलेहरि तक आकर रुक गया, क्योंकि उसके बहुत से साथी अभी तक नहीं आने पाये थे। दूसरे दिन वह सलेहरि की ओर चल दिया, पर उसके वहाँ पहुँचने से पूर्व ही मराठों ने सलेहरि पर अधिकार कर लिया। वह निराश होकर वहाँ से लौट गया। इस दुर्ग मे शिवाजी रस्सी की सीढ़ी से दीवारों पर चढ़े थे। फतेहुल्ला ख़ाँ के मारे जाने पर यह दुर्ग उन्हें सौंप दिया गया था (५ जनवरी, १६७१ ई०)।

औरगजेब ने महावत .खाँ की विफलता और अकर्मण्यता से असंतुष्ट होकर १६७१ ई० के शीतकाल में बहादुर .खाँ और दिलेर खाँ को दक्षिण भेजा। उन्होंने बगलाना मे प्रविष्ट होकर सलेहरि का घेरा डाला, जो उस समय मराठों के अधिकार मे था। वहाँ पर इखलास .खाँ मियाना, राव अमरसिंह चदावत और कुछ अन्य सेना पक्तियों को छोडकर वह अहमदनगर की ओर चला गया।

शिवाजी ने एक भारी सेना के साथ शत्रु पर आक्रमण कर दिया। भयंकर युद्ध के उपरान्त इखलास .खाँ और मोहकमसिह घायल होकर प्रमुख तीस व्यक्तियों के साथ पकड़े गए। राव अमर-सिह, अन्य सेना नायक एव सहस्रों सैनिक मारे गए। शत्रुओं के डेरों पर शिवाजी का अधिकार हो गया। कुछ समयोपरात शिवाजी ने बदियों को छोड़ दिया (जनवरी अथवा फ़रवरी, १६७२ई०)।"[2]

भूषण और इतिहास दोनों के विवरणों मे परस्पर बहुत साम्य है। मोहकमसिह तथा इख़-लास .खाँ का घायल होकर पकड़ा जाना और मुक्त होना, दिलेर .खाँ का पराजित होना, अमर-सिह आदि की मृत्यु तथा मुगलों की भयकर मारकाट आदि सभी ऐतिहासिक घटनायें हैं।

फत्ते (फ़तेह) ख़ाँ-पराजय—भूषण के उल्लेख से ज्ञात होता है कि शिवाजी ने बीजापुर के वज़ीर फतेह .खाँ को युद्ध में पराजित किया था। अन्त में उसने शिवाजी से सधि कर ली थी।[3] इस घटना के सबध मे इतिहास का जो विवरण उपलब्ध है, उसका सार नीचे दिया जा रहा है :—

"बम्बई से ४५ मील दक्षिण में जन्जीरा द्वीप मे १६वीं शताब्दी मे अबीसीनियनों का राज्य स्थापित हो चुका था। १६३६ ई० मे बीजापुर ने पश्चिमी घाट मे इन्हे अपना प्रतिनिधि एव मन्त्री मान लिया था।

---

[1] भूषण ग्रन्थावली, शिवराज-भूषण, छं० ९६, १०२, १०६, १९१, २२७, २९६, ३३३, ३५७, ३५८; शिवा बावनी, छं० १०, १३, ३३, ३४ [2] शिवाजी, पृ० २३४-५, २४१-३; न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़्, भा० १, पृ० १९५-७ [3] भूषण-ग्रंथावली, शिवाराज-भूषण, छं० ११६, २४१, शिवा-बावनी, छं० २०, ३१, ३२, ३४, फुटकर, छं० १२, २४, ४० घ, ४० ङ

१६४८ ई० में शिवाजी ने सिद्दियों से रायरी (रायगढ़) आदि कई दुर्ग छीन लिए थे।

१६५५ ई० में फतेह खाँ जन्जीरा का शासक हुआ। १६५६ ई० में अफ़ज़लू खाँ के शिवाजी पर आक्रमण के समय यह भी मराठों के विरुद्ध चला, पर बीजापुर की सेना के सर्वनाश का समाचार सुनकर वह शीघ्रतापूर्वक लौट पड़ा। आगामी वर्ष, जब अली आदिलशाह द्वितीय ने शिवाजी को पन्हाला में घेर कर उनके विरुद्ध युद्ध आरम्भ किया तब फतेह खां ने कोणकण पर आक्रमण कर दिया। घोर संग्राम के पश्चात् शिवाजी के सेनापति बाजीराव पसालकर मारे गए और मराठों को पीछे हटना पड़ा। इसके अनन्तर शिवाजी ने पुनः रघुनाथ बल्लाल अत्रेय की अध्यक्षता में सेना भेजी जिसने उडा-राजपुरा के दुर्ग पर १६६१ ई० की जुलाई अथवा अगस्त में अधिकार करके जन्जीरा की ओर अपनी तोपों का मुँह फेर दिया। निराश होकर सिद्दी ने उडा-राजपुरी दुर्ग समर्पित करके सन्धि करता।

१६६६ ई० में शिवाजी ने जञ्जीरा पर पुनः आक्रमण किया। लगातार युद्ध होता रहा। १६७० ई० में शिवाजी ने इस युद्ध में अपनी सारी शक्ति लगा दी। अविराम युद्ध होने, प्रजा की दुर्दशा और बीजापुर से अपर्याप्त सहायता मिलने के कारण फतेह खाँ ने शिवाजी के उत्कोच और जागीर के बदले में जञ्जीरे के समर्पण के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। पर उसके साथियों ने उसे बंदी बनाकर आदिलशाह तथा मुगलों से सहायता माँगी। उन्होंने उनकी प्रार्थना स्वीकार की। मुगल जञ्जीरा की नाविक-सेना के स्वामी माने जाने लगे। इस समय से नाविक प्रधान-सैनिक को याकूत खाँ की उपाधि दी गई। यह घटना १६७१ ई० की जनवरी अथवा फरवरी में घटित हुई थी। इस युद्ध में शिवाजी की नौ सेना को भारी क्षति उठानी पड़ी थी।"[1]

इस ऐतिहासिक विवरण से स्पष्ट है कि शिवाजी और फतेह खाँ में कई युद्ध हुए थे जिनमें दोनों पक्ष कई बार हारे और अन्य अवसरों पर पीछे हटे। १६५६ ई० में फतेह खाँ पराजित हुआ, १६६० ई० में मराठे हारे, १६६१ ई० में फ़तेह खाँ ने संधि कर ली और १६६६-१६७१ ई० में जंजीरावालों ने मराठों से संधि करने के पक्षपाती फतेह खाँ को बंदी-गृह में डाल दिया और मराठे पराजित-प्राय रहे। भूषण का वर्णन मराठों की किसी एक विजय से सम्बंधित हो सकता है, संभवतः १६६१ ई० वाले युद्ध से उनका अभिप्राय हो, तो कोई आश्चर्य नहीं है।

बहादुर खाँ-पराजय—सलेहरि के युद्ध के प्रसंग में उल्लेख किया जा चुका है कि औरंगज़ेब ने बहादुर खाँ को दक्षिण में सेनापति बनाकर भेजा था। वह भी शिवाजी का कुछ नहीं बिगाड सका था, वरन् उसे लेने के देने पड़ गए थे। कालांतर में उसको महावत खाँ तथा मुअज्जम के स्थान पर दक्षिण का सूबेदार एवं प्रधान सेनापति नियुक्त किया गया (जनवरी, १६७२ ई०)। फिर वह स्थायी सूबेदार के पद पर जनवरी, १६७३ ई० से १६७७ ई० तक रहा था। भूषण ने इसी बहादुर खाँ के शिवाजी द्वारा पराजित किए जाने का उल्लेख कतिपय पदों में किया है, जो इतिहासानुकूल ही है।[2]

जबारि (जवाहर) तथा रामनगर-विजय—इस प्रकार शिवाजी एक के अनंतर दूसरी विजय

---

[1] शिवाजी, पृ० ३३०-४४ [2] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ७७, ३२२, ३४०, ६५७; फुटकर, छं० २६, शिवाजी, पृ० २४४

प्राप्त करते रहे। उन्होंने ५ जून, १६७२ ई० को मोरो त्र्यिबक की अध्यक्षता में जवाहर पर एक सेना भेजी। मराठों की इस सेना ने वहाँ के कोली राजा विक्रमशाह को पराजित करके जवाहर पर अधिकार कर लिया।

इस जीत के अनतर मराठों ने रामनगर पर आक्रमण किया। शत्रुओं के आगमन की सूचना पाते ही वहाँ का कोली राजा सपरिवार चिकली नामक स्थान को भाग गया (१६ जून, १६७२ ई०)। यह समाचार पाते ही, कि दिलेर खाँ आक्रमण करने के लिए एक बडी सेना एकत्रित कर रहा था, मराठे रामनगर से लौट गए। कुछ समय पश्चात् मोरोपंत आक्रमण करने के लिए पुनः लौट आया और जुलाई के प्रथम सप्ताह मे रामनगर को जीत लिया। भूषण ने शिवाजी की इन्ही विजयों का कई छंदों मे उल्लेख किया है।[1]

तिलगाना-विजय—रामनगर की जीत के पश्चात् शिवाजी ने तिलगाना पर आक्रमण किया।[2] जुलाई, १६७२ ई० मे शिवाजी की सेना ने नासिक और अक्टूबर, १६७२ ई० मे बरार और तिलंगाना मे प्रवेश किया। रामगिरि आदि स्थानों को लूटते हुए मराठे आगे बढते चले गए।[3] उक्त लूटमार के अवसर पर शिवाजी की सेना को कतिपय स्थानों पर पीछे भी हटना पडा था, पर तिलगाना मे वे अपने उद्देश्य मे सफल हुए थे।

बहलोल खाँ-पराजय—भूषण लिखते हैं कि एक बार बहलोल खाँ शिवाजी के सामने आ डटा, पर शिवाजी ने उसे युद्ध मे मार भगाया।[4]

इस घटना के विषय मे इतिहास से ज्ञात होता है कि १६७३ ई० नवबर-दिसंबर में शिवाजी कनारा मे युद्ध कर रहे थे। इसी अवसर पर बीजापुर से बहलोल खाँ १२,०००सेना लेकर मिराज-कोल्हापुर की रक्षार्थ निकल पड़ा। मराठा सेनापति प्रतापराव गूजर उसका सामना करने के लिए भेजे गये।। उन्होंने उमरानी के निकट बहलोल की सेना को घेरने का प्रयत्न किया। दिन भर भयकर युद्ध होता रहा। दोनों ओर के बहुत से वीर मारे गए। संध्या समय बहलोल ने प्रतापराव को अस्थायी संधि करने के लिए उद्यत कर लिया और स्वय शिवाजी के विरुद्ध कोई भी शत्रुता-कार्य के करने का वचन दिया। परिणामस्वरूप मराठा सेना वहाँ से लौट गई।

फरवरी, १६७३ ई० मे बीजापुरी सेना पुनः पन्हाला प्रात मे आ उपस्थित हुई। प्रतापराव उक्त युद्ध के पश्चात् गोलकुडा, तिलगाना और बरार प्रातों को लूटता हुआ लौटकर आया तो उसे बहलोल के इस आक्रमण की सूचना मिली।

उसने बहलोल खाँ को दो पर्वतों के मध्य तग मार्ग मे जसारी पर जा घेरा। प्रतापराव अपनी सेना को पीछे छोडकर और केवल छः साथियों के साथ बहलोल पर जा टूटा। वे सबके सब वीरतापूर्वक युद्ध करते हुए मारे गए।

तदनन्तर शिवाजी ने आनदराव को हम्मीरराव की उपाधि से विभूषित करके प्रतापराव के

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, शिवा राज-भूषण, छं० १७३, २०७, शिवाजी पृ० २४४-५; न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़्, भा० १, पृ० २०० [2] भूषण-ग्रंथावली, शिवाराज-भूषण, छं० ३५६, शिवा-बावनी, छं० ३०, फुटकर, छं० ६ [3] शिवाजी, पृ० २४८-५२ [4] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ११६, १६१, १७४, २४१, ३५८, ३६०, ३६१

स्थान में सेनापति बनाया। वह बहलोल की खोज में गया। इस समाचार को सुनते ही दिलेर खाँ अपने अफग़ान भाई बहलोल खाँ की सहायतार्थ आगे बढा। इतनी बडी दो सेनाओं का सामना करना उचित न समझकर हम्मीर वहाँ से लौट पड़ा। इस पर बहलोल खाँ कोल्हापुर को ओर दिलेर खाँ पन्हाले को चलें गए।

इसके कुछ समयोपरांत हम्मीरराव ने बकापुर से चौबीस मील पर स्थित पेंच स्थान से १५०,००० हुन की संपत्ति लूट ली। बहलोल और खिज्र खाँ ने बंकापुर के पास उसका मार्ग-अवरोध किया, पर खिज खाँ के भाई के मारे जाने पर वे भाग खडे हुए। हम्मीरराव ने बीजापुरी सेना को लूट कर बहुत सा सामान प्राप्त किया।

पर बहलोल ने पुनःआक्रमण करके मराठों को पराजित कर दिया। वे हार कर भाग गए। हम्मीर राव लूट का माल शिवाजी के साम्राज्य मे रखकर पुनः अप्रैल मास में बालाघाट मे प्रविष्ट हुआ।[१] इसी वर्ष शिवाजी ने सतारा पर भी अपना अधिकार जमा लिया। (सितम्बर, १६७३ ई०)।[२]

उपर्युक्त ऐतिहासिक विवरण से स्पष्ट है कि मराठों और बहलोल खाँ मे पन्हाला, जसारी, गढचाँदा आदि स्थानों पर कई बार मुठभेढ हुई थी। इन युद्धों मे कभी मराठे जीतते तो कभी बहलोल खाँ। भूषण ने शिवाजी की केवल विजयों और लूटों का उल्लेख किया है और उनकी पराजयों के संबंध मे वे मौन रहे हैं।

इसी प्रकार शिवाजी ने बेदनूर में लूट मार १६६४ ई० से ही आरभ कर दी थी पर उस पर उनकी वास्तविक विजय १६७५ ई० मे हो सकी थी।[३]

शिवाजी और करनाटक-विजय—शिवाजी द्वारा करनाटक की बिजय के सबध मे भूषण लिखते हैं कि "उन्होंने करनाटक में कतिपय दुर्ग विजय किए और शेर खाँ को पकड लिया। शिवाजी ने करनाटक तक का सब देश धर दबाया। करनाटकवासी शिवा के नाम से सदैव भय-भीत एव आतकपूर्ण रहने लगे।[४] इसी अवसर पर उन्होंने चिजी (जिर्जी), मधुरा (मदूरा) तथा चिजाउर (तजौर) आदि मे भी युद्ध किए थे।"[५]

शिवाजी के करनाटक पर किए गए आक्रमण के सबध मे इतिहास से विदित होता है कि "राज्याभिषेक (१६७४ ई०), तत्पश्चात् के युद्धों (१६७४-१६७५ ई०) और १६७६ ई० की शिवाजी की बीमारी के कारण उसका कोष रिक्त हो चला था। अतः शिवाजी धन-प्राप्त करने के लिए उपाय सोचने लगे। सूरत, कोली-प्रदेश, कनारा, बीजापुर आदि के गत-युद्धों और लूटों के पश्चात् उनसे अधिक धन प्राप्ति की आशा करना दुराशा मात्र थी। अतएव उनका ध्यान करनाटक की ओर गया।

---

[१] शिवाजी, पृ० २५६-६२, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ० २०२-३ [२] भूषण-ग्रंथावली, शिवा-बावनी, छं० १४, शिवाजी, द्वितीय संस्करण, पृ० २८४-५ [३] भूषण-ग्रंथावली, शिवा-बावनी, छं० ३३, शिवाजी, द्वितीय-संस्करण, पृ० २३६ [४] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ११६, २०८, २६२, वही, शिवा-बावनी, छं० २१, ३०, वही, फुटकर, छं० ६, २५, ३७, ४० ङ, [५] वही, शिवा-बावनी, छं० ३३

उक्त प्रदेश पर विजय-प्राप्ति की अभिलाषा से शिवाजी जनवरी, १६७७ ई० में रायगढ़ से चले और फरवरी मे हैदराबाद पहुँचे। वहाँ पर एक मास तक रहकर कुतुबशाह से करनाटक-युद्ध-विषयक सधि की। तदुपरांत मार्च में, वहाँ से प्रस्थान करके वे अप्रैल मे करनाटक मे प्रविष्ट हुए।

करनाटक में वे एक के पश्चात् दूसरी विजय प्राप्त करते गए। उन्होंने जिजी के स्वामी रऊफ खाँ और नासिर मुहम्मद खाँ को रुपए एव अन्यत्र जागीर देकर उस दुर्ग पर अपना अधिकार कर लिया।

तत्पश्चात् शिवाजी ने वेलौर पर आक्रमण किया। वहाँ का शासक अबदुल्लाह खाँ था। इस दुर्ग के घेरे का भार अपने सैनिकों पर छोडकर शिवाजी शेर खाँ लोदी के विरुद्ध बढे। वेलौर का युद्ध २२ जुलाई, १६७८ ई० तक चलता रहा, तब उस पर मराठों का अधिकार हुआ।

शेर खाँ ने तिरुआबादी नामक स्थान पर शिवाजी का सामना किया। अन्त मे शेर खाँ लोदी ने पराजय स्वीकार की और शिवाजी से मिलने वह स्वय आया (५ जुलाई, १६७७ ई०)। शिवाजी ने उसके राज्य को अपने अधिकार मे करके उसे छोड दिया। साथ ही बीस सहस्र हुन (एक प्रकार का सिक्का) सैनिक व्यय के लिए उससे लिए। इस प्रकार शिवाजी ने बडी सरलता से तुग-भद्रा से कावेरी नदी तक के करनाटक के भूभाग पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया।

शेर खाँ लोदी को पराजित करने के पश्चात् शिवाजी ने मदुरा के नायक से छः लाख हुन दंड-स्वरूप प्राप्त किए (१६ जुलाई, १६७७ ई०)। तजोर से १० मील उत्तर मे स्थित तिरुमलवादी नामक-स्थान पर शिवाजी के सौतेले भाई व्यानकोजी इनसे मिलने आए (जुलाई के तृतीय सप्ताह मे)। यहाँ से व्यॉनकोजी शिवाजी की आज्ञा लिए बिना ही भाग गये। इस पर असतुष्ट होकर शिवाजी ने जग देव गढ, चिदम्बरम् और बृद्धाचलम् पर अधिकार करके कोलर का घेरा डाल दिया।

अन्त मे शिवाजी ने कोलर्न नदी के दक्षिण मे तजौर की सीमा व्यानको जी के लिए छोड़ दी और उक्त नदी के ऊपर मे सम्पूर्ण करनाटक पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। उनके अधिकृत करनाटक की वार्षिक आय बीस लाख हुन थी और उसमे लगभग सौ दुर्ग थे।

कतिपय स्थानों पर होते हुए शिवाजी मार्च के अन्त (अथवा अप्रैल के आरंभ), १६७८ ई० मे अपने राज्य मे पुनः लौट आए।"[1]

भूषण तथा इतिहास के ऊपर दिये गये विवरणों पर ध्यानपूर्वक विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि उक्त कवि ने जिन युद्धों का उल्लेख किया है वे ऐतिहासिक हैं। इस संबध मे एक बात और विचारणीय है। भूषण ने शिवराज-भूषण के जिन छदों मे करनाटक का उल्लेख किया है उनसे उस प्रदेश के शिवाजी द्वारा विजय किये जाने का आभास नहीं मिलता है। उनसे केवल यही ध्वनि निकलती है. कि वहां पर शिवाजी का आतक छाया हुआ था। ऐसा होना स्वाभाविक भी था, क्योंकि करनाटक की सीमा तक शिवाजो कतिपय अन्य प्रदेशों पर कई बार आक्रमण कर चुके थे। अतः उनकी धाक दूर-दूर तक फैल चुकी थी। इस प्रकार शिवराज-भूषण की रचना-तिथि

---

[1] शिवाजी, पृ० ३६३-५, ३७२-३, ३८१, ३८४-६०, ३६२, ३६४-४०३, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ० २२५-४४

और करनाटक-विजय की विषमता का परिहार हो जाता है। फुटकर आदि अन्य जिन छंदों में करनाटक का उल्लेख हुआ है, उनसे अवश्य उस भू-भाग की शिवा द्वारा विजय का स्पष्टतः आभास मिलता है।

बीजापुर-रक्षण—करनाटक से लौटने के कुछ मासोपरान्त शिवाजी को मुग़ल सेनापति दिलेर खा से लोहा लेना पडा। दिलेर खाँ ने १८ अगस्त, १६७६ ई० को भीमा नदी पार करके बीजापुर पर आक्रमण किया। बीजापुर के सरक्षक मसऊद की प्रार्थना पर शिवाजी ने दश सहस्र अश्वारोही बीजापुर की रक्षार्थ भेजे। साथ ही दो सहस्र बैलों पर लादकर खाद-सामग्री वहाँ विक्रयार्थ भेजी जिससे सेना को कष्ट न हो। शिवाजी स्वयं भी ससैन्य बीजापुर गए। बीजापुर से दिलेर खाँ का ध्यान हटाने के लिए उन्होंने मुगल-सीमा मे लूट-मार प्रारंभ कर दी। उन्होंने कई स्थलों पर दिलेर की सेना का सामना किया। अंत मे, दिसम्बर, १६१६ ई० में पराजित और हतोत्साहित होकर दिलेर बीजापुर का घेरा छोडकर लौट पडा और शिवाजी पन्हाला चले गए।[1]

भूषण ने शिवा जी द्वारा बीजापुर-रक्षण सम्बन्धी पद्य मे इसी घटना का उल्लेख किया है[2], जो ऐतिहासिक है।

शिवाजी का आतंक—भूषण ने कतिपय छन्दों मे शिवाजी की धाक, आतंक आदि का वर्णन करते हुए कुछ विदेशी एवं भारतीय प्रदेशों और स्थलों का उल्लेख किया है। उनमे से काबुल[3], क़न्धार[4], खुरासान,[5] बलख[6], बुखारा,[7] तूरान,[8] रूम,[9] अरब,[10] मक्का,[11] चीन,[12] साम,[13] सिंहल,[14] आदि स्थानों मे से अधिकाश के वीर सैनिक मुगल सेना मे रहा करते थे। वे मराठों से कई बार पराजित हुए थे। भूषण ने अधिकाश स्थलो पर उक्त नामों का उल्लेख करके मुग़ल सेना के उन वीरों की ही ओर सकेत किया है। इसके अतिरिक्त उक्त प्रदेशों से भारत-वर्ष का व्यापार हुआ करता था और मक्का आदि की तीर्थ-यात्रा के लिए भारतीय मुसलमान बाहर जाया करते थे। इन्ही व्यापारियों एवं यात्रियों द्वारा शिवाजी की वीरतापूर्ण गाथायें उक्त देशों में पहुँचा करती थी। उनको सुनकर वहाँ के निवासियों का आश्चर्य, आतक, धाक एव विस्मय-परिपूर्ण होना स्वाभाविक रहा होगा। भूषण ने अपने उक्त पद्यों मे इन्ही भावनाओ की ओर सकेत

---

[1] शिवाजी, पृ० ४१५-८, ४२१-५, औरंज़ेब, भा० ५, पृ० १५८ ६३, १६५-७; न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० १, पृ०२५१-२ [2] भूषण-ग्रंथावली, फुटकर, छं०३७ [3] वही, शिवा-बावनी, छं० १५; वही, फुटकर, छं०६ [4] वही, शिवा-बावनी छं० १५ [5] वही, वही, छं० १२, वही, फुटकर, छं०४० घ [6] वही, शिवराज-भूषण, छं० ११६, २६४, वही, शिवा-बावनी, छं०२०, ३१, ३५, वही, फुटकर, छं० ६, १२ [7] वही, शिवा-बावनी, छं० ३१, ३५ [8] वही, फुटकर, छं० ४०घ [9] वही, शिवराज-भूषण, छं० ११६; वही, शिवा-बावनी, छ० ३१, ३५; वही, फुटकर, छं० ६, ४० घ [10] वही, शिवा-बावनी, छं० १५ [11] वही, शिवराज-भूषण, छ० १७४ [12] वही, शिवा-बावनी, छं० १५, वही, फुटकर, छं० ४० घ [13] वही, वही, छं० ३१, ३५ [14] वही, फुटकर, छं० ३, १२

किया है। साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि उन्होंने कहीं-कहीं पर अतिशयोक्ति से भी काम लिया है, उदाहरणार्थ ईरान-पति का शिवाजी को भेंट भेजना आदि।[1]

जब विदेशों तक मे शिवाजी का आतत छाया हुआ था, तो भारतीय-प्रदेशों काश्मीर,[2] दिल्ली,[3] आगरा,[4] मालवा, उज्जैन,[5] भेलसा,[6] गोडवाना,[7] रुहेलखड,[8] सिरौज,[9] कलिग,[10] बग,[11] कलकत्ता,[12] कालिंजर, कन्नौज, मिनार, माडव, कौसिलापुरी,[13] ग्वालियर,[14] गुजरात,[15] भख्खर,[16] आदि स्थानों का इनका नाम सुनते ही भयभीत रहना अत्यन्त स्वाभाविक था। शिवाजी के विरुद्ध युद्ध मे पराजित होने पर मुगल सूबेदार एवं सेनापति दक्षिण से स्थानातरित करके अन्य सूबों मे भेज दिए जाते थे और उनके स्थान पर नवीन पदाधिकारी मराठों का सामना करने के लिए नियुक्त होते थे। इस कारण से भी शिवाजी की ख्याति भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक फैल गई थी। ऐसी दशा में भूषण का उक्त स्थानों के निवासियों का भयपूर्ण वर्णन, किन्हीं अशों मे अत्युक्तिपूर्ण होने पर भी, वास्तविकता पर अवलम्बित है। वह सजीव एव वीरतापूर्ण वर्णन है।

जब विदेशों तथा उत्तरी भारत के प्रदेशों में शिवाजी का इतना अधिक आतक व्याप्त था तो दक्षिण भारत के बीजापुर[17], चालुकुड[18] (१६६६ ई० मे पराजित) द्रविड[19], भागनेर[20] गढनेर[21] बेदर[22], मल्लीर (मालाबार)[23] गोलकुडा[24], देवगिरि[25], आदि राज्यों एवं प्रदेशो का इनकी धाक से भयभीत रहना अत्यन्त स्वाभाविक था। शिवाजी ने इनमे से अधिकाश के राज्यों के बडे भागों पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। उनकी सेनायें प्राय: प्रत्येक वर्ष नियमित रूप से यथावसर दक्षिण के राज्यों के प्रदेशो मे लूट मार किया करती थीं। ऐसी परिस्थितियों मे उन प्रदेशों के शासक और प्रजा का भयाक्रान्त होना निश्चित था। भूषण ने उनकी इसी भयभीत दशा का वर्णन अधिकाश छदो मे किया है; जो किंचित् अतिरजित होने पर भी तथ्यपूर्ण और वास्तविक है।

शिवाजी तथा पाश्चात्य जातियाँ—भूषण ने कतिपय छदों मे शिवाजी, अंगरेजों, पुर्त्त-

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज भूषण छं० २२८, ३६२ [2] वही, शिवा-बावनी, छं० ३१; फुटकर, छं० ६ [3] वही, शिवाबावनी, छं० १५, २०, २१, २२, २३, ३०, ३१, ३२ [4] वही, वही, छं० २२, ३० [5] वही, वही, छं० ३० [6] वही, वही, छं० ३० [7] वही, वही, छं० ४१ [8] वही. वही, छं० वही [9] वही, वही, छं० वही [10] वही, शिवाराज-भूषण, छं० ३५६, फुटकर, छं०६ [11] वही, फुटकर, छं०वही [12] वही, वही, छं० वही [13] वही, वही, छं० ११ [14] वही, वही, छ० १० [15] वही, फुटकर, सदेहात्मक, छं० २ [16] वही, वही, छं०३४ [17] वही, शिवा-बावनी, छं० २०, २१, ३०, ३१, ३२ [18] वही, वही, छं० ३३ [19] वही, वही, छं०वही वही, फुटकर, छं० ६ [20] वही, शिवराज-भूषण, छं० ११६, २१४; शिवा-बावनी, छं० ३२ [21] वही, शिवराज-भूषण छं० ११६ [22] वही, फुटकर, छं० १०, १८ [23] वही, शिवा-बावनी, छं० ३३ [24] वही, शिवराज-भूषण, छं० १३, ६३, ६६, ७२, २२८ वही शिवा-बावनी, छं० २०, २१, ३०, ३३, ३४, वही, फुटकर, छं० १२, ३७ [25] वही, वही, छं० १०

गालियों, फरासीसियों तथा डचों के पारस्परिक सबधों का उल्लेख किया है। नीचे क्रमानुसार इन्हीं की ऐतिहासिकता पर विचार किया जा रहा है।

भूषण के कथनानुसार शिवाजी ने जलयानों को उलटकर अगरेजों, फ़िरगियों, फ्रासीसियों को मार डाला। उनकी धाक से भयभीत होकर पुर्त्तगाल उन्हे भेंट भेजता था। शिवाजी की धाक से उक्त देशों मे सदैव, भय छाया रहता था।[1]

इतिहास से ज्ञात होता है कि "शिवाजी के समय मे अगरेजों, पुर्त्तगालियों तथा फ्रासीसियों की दक्षिण के प्राय: सभी प्रमुख नगरों मे कोठियाँ थी। व्यापार के अतिरिक्त वे भारत की तत्कालीन राजनीति मे भी भाग लिया करते थे। फलस्वरूप शिवाजी को अनेक बार अंगरेजों और पुर्त्तगालवासियो के विरुद्ध कडी कार्यवाही करनी पडी थी। उदाहरणार्थ "अफज़ल् खाँ की सेना को पराजित करने के उपरान्त शिवाजी ने रत्नगिरि प्रान्त मे प्रवेश किया। वहाँ के भागे हुए बीजापुरी सूबेदारों ने राजापुर मे शरण ली। इन्ही को अधिकार मे रखने के ऊपर शिवाजी तथा अगरेजों मे तनातनी हो गई। इसके अतिरिक्त पन्हाला के घेरे के अवसर पर अंगरेजों ने बीजापुरियों की सहायता की। परिणामस्वरूप दिसम्बर, १६६० ई० मे शिवाजा ने राजापुर पर आक्रमण किया और वहाँ के चार अंगरेज फेकट्री के अधिकारियों को पकडकर रामगढ ले गए।

इसी प्रकार अक्टूबर १६६८ ई० मे शिवाजी ने गोआ के विभिन्न नगरों में छद्म वेशधारी मराठा सैनिकों को भेजा, पर पुर्त्तगाल मे सूबेदार ने उन्हे अपने राज्य की सीमा के बाहर निकाल दिया। शिवाजी ने दिसम्बर, १६६८ ई० मे भी गोआ पर आक्रमण करने की चेष्टा की थी। डामन के निकट से जाते समय शिवाजी के नौ सेना-नायक ने पुर्त्तगाल के एक जहाज को पकड़ लिया था। इस पर पुर्त्तगालियों ने इनके बारह जहाज पकडकर बसीन पर छोड दिए और शेष मराठा बेडे का पीछा किया, पर वह बेडा दाभोल पर सुरक्षित पहुँच गया (नवम्बर-दिसम्बर, १६७० ई०)।[2]

इसके अतिरिक्त सूरत की प्रथम लूट मे शिवाजी तथा अग्रेजों मे कुछ तनातनी हो गई थी। सूरत की दोनों लूटों के अवसर पर अगरेजों, फ्रासीसियों और डचों ने अपनी अपनी फेक्ट्रियों की रक्षा का प्रबन्ध कर लिया था। फ्रासीसियों ने शिवाजी को बहुमूल्य भेंटें देकर अपनी ओर मिला लिया था। अगरेजों ने भी तलवार, चाकू आदि भेट देकर इनसे संधि कर ली थी। सूरत से १० मील पश्चिम मे ताप्ती नदी पर स्थित स्वाली बन्दरगाह पर उन दिनों अधिक भय छाया था। अगरेजों के जहाज उन्हे ले भागने के लिए प्रस्तुत खडे थे।"[3]

भूषण तथा इतिहास कथित उक्त विवरणों के तुलनात्मक अध्ययन से प्रकट हो जाता है कि शिवाजी और उक्त विदेशी व्यापारियों मे परस्पर कई बार सघर्ष हुए थे। ये व्यापारी शिवाजी को भेट भी भेजा करते थे। भूषण ने अपने वर्णन में इन्हीं घटनाओं की ओर संकेत किया है। कहीं-कहीं पर उनके ये वर्णन अतिशयोक्तिपूर्ण अवश्य हो गए हैं, पर उनमे ऐतिहासिक सत्य का अभाव

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० ११६, १८१, २६२; वही, शिवा-बावनी, छ० २०, ३०, ३१, ३२, ३४; वही, फुटकर, छं० १२, ४० घ [2] शिवाजी, पृ० २६३-३०१, ३१५, ३१६, ३४४ [3] वही, पृ० १०४-१८, २१६-२८

नहीं है। इस सम्बन्ध में यह न भूलना चाहिए कि उनके ये वर्णन भारत-स्थित उन जातियों से ही सम्बन्धित हैं, न कि यूरोप स्थित से। साथ ही यह भी ध्यान मे रखना चाहिए कि उक्त जातियों पर छाए हुए शिवाजी के आतक का भूषण ने सजीव चित्रण किया है।

औरंगज़ेब सम्बन्धी घटनायें—भूषण ने अपने ग्रन्थों मे कुछ ऐसी घटनाओं का उल्लेख किया है, जिनसे शिवाजी का सीधा कोई सम्बन्ध नहीं है। ये घटनायें औरगजेब से सम्बन्धित हैं। उनका शिवाजी से अप्रत्यक्ष रूप से केवल इतना ही सम्बन्ध है, कि कवि ने उनका वर्णन शिवाजी के यश, गौरव एव प्रताप आदि की महत्ता प्रदर्शित करने के लिए किया है, कि ऐसे शक्तिशाली औरंगजेब को शिवाजी ने अनेकों बार पराजित किया। नीचे इन्हीं पर विचार किया जा रहा है।

औरंगजेब १६४५ से १६४७ ई० तक गुजरात का सूबेदार रहा।[1] यहाँ से वह काबुल होता हुआ बलख को गया जिसका वह २१ जनवरी से १ अक्टूबर, १६४७ ई० तक घेरा डाले पड़ा रहा।[2] सम्भवतः इसी अवसर पर उसने ख़ुरासान पर भी आक्रमण किया था।[3] औरजेगब ने कन्धार पर दो बार (जनवरी से दिसम्बर, १६४६ ई०) और (मार्च से जुलाई, १६५२ ई०) आक्रमण किए थे।[4] इन दोनों बार मुगलों को मुँह की खानी पड़ी थी। क-बार-विजय सम्बन्धी भूषण का कथन निराधार है। सम्भवतः इसी अवसर पर उसने गोर (अफगानिस्तान का एक नगर) को जीता था।[5]

दक्षिण की सूबेदारी के अवसर पर औरगजेब ने बेदर (बीदर) २६ मार्च, १६५७ ई० को और कल्यान (कल्याण) २७ अप्रैल, १६५७ को अधिकृत कर लिए थे।[6]

औरंगज़ेब का उत्तराधिकार-युद्ध—भूषण ने औरगजेब के उत्तराधिकार युद्ध की प्रमुख घटनाओं—छत्रसाल हाड़ा का दारा की ओर से युद्ध, मुराद के साथ औरगज़ेब का विश्वासघात, खजुआ के स्थान पर शुजा की पराजय, दारा का हार कर भागना और अन्त मे आगरे के चौक मे उसका चुनवा दिया जाना एव शाहजहाँ का बन्दीगृह मे डाल दिया जाना आदि का उल्लेख किया है।[7]

उक्त घटनाओं मे से अधिकांश की ऐतिहासिकता पर अन्यत्र विचार किया जा चुका है।[8] औरगजेब ने शाहजहाँ को, जून, १६५८ ई० मे आगरे के किले मे बन्दी बनाया था।[9] दारा के सम्बन्ध मे भूषण की यह उक्ति कि वह आगरे की दीवार मे चुनवाया गया था, असत्य है।

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० १२६; औरंगज़ेब (१६२५ ई० का संस्करण), भा० १, पृ० ६६-७२ [2] भूषण-ग्रंथावली, फुटकर, छं० ६, २४, औरंगज़ेब (१६२५ ई० का संस्करण भा० १, पृ० ७३-१०० [3] भूषण-ग्रंथावली, शिवा-बावनी, छं० ४७, वही, फुटकर, छ० ६, २४ [4] वही, शिवा-बावनी, छ० ४७, औरंगज़ेब (१६२५ का संस्करण) भा० १, पृ० १११-१२० [5] भूषण-ग्रथावली, शिवराज-भूषण, छं० १२६ [6] वही, फुटकर, छं० २४, औरंगज़ेब (१६२५ ई० का संस्करण) भा० १ पृ० २३६-४२, २४४-५० [7] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० २१८, वही, शिवा-बावनी, छं० ३६, ४६, वही, फुटकर, छ० ५८, ५६, ६० [8] देखिए द्वितीय खड, अध्याय ५, छत्रप्रकाश की ऐतिहासिकता के अंतर्गत अध्याय ६-७ का ऐतिहासिक विवरण [9] औरंगज़ेब भा० २, पृ० ७१-८६

वस्तुतः वह देहली में मरवाया गया था। शेष घटनाओं के सम्बन्ध मे उक्त कवि का विवरण इतिहासानुकूल है।

सम्राट् होने के पश्चात् औरंगजेब ने पलाऊँ (पालामऊ) को जीता (१३ दिसम्बर, १६६१ ई०)। इसके अनन्तर उसने मोरंग पर दो बार १६६४ ई० तथा १६७६ ई० मे आक्रमण किए।[१] इसके पश्चात् उसने १६६५ ई० मे कुमाऊँ पर अपनी सेनायें भेजी। इस युद्ध मे श्रीनगर (गढवाल) ने मुगलों की सहायता की थी। औरंगजेब ने १६७३ ई० मे कुमाऊँ के शासक को क्षमा-प्रदान कर दी।[२] जैसा कि अन्यत्र कहा जा चुका है, उसके सैनिकों ने १६७१ ई० में हबसान (जजीरा के शासकों)[३] से सन्धि करके उन्हे याकूत की उपाधि दी थी।

औरंगज़ेब की धार्मिक सकीर्णता एव कट्टरता के कारण देश के एक कोने से दूसरे कोने तक मन्दिर तोडे गए और उनके स्थान पर मस्जिदें बनी। उसकी इस नीति के कारण काशी और मथुरा को सबसे अधिक हानि उठानी पड़ी। औरंगज़ेब की आज्ञा से काशी का विश्वनाथ-मन्दिर (२ सितम्बर, १६६९ ई०) तथा मथुरा का केशवराय का देहरा (जनवरी, १६७० ई०) को नष्ट कर दिए गए। यही नही इन नगरों की सारी कला और शोभा नष्ट हो गई।[४]

बाँधव, बावनी, बवजा,[५] झारखंड, खंडहर,[६] निजामशाही,[७] ढुंढहार (जयपुर), नव-कोटि, मारवाड, मेवाड[८] आदि मे से कुछ मुगल राज्य के सूबे थे तथा अन्य करद एवं स्वामि-भक्त अधीनस्थ राज्य थे। राजस्थान के मारवाड़ आदि से जसवन्तसिंह की मृत्यु (१६७८ ई०) के पश्चात् औरंगजेब के युद्ध प्रारम्भ हो गए थे। बुन्देलखड मे औरंगजेब शाहजहाँ के शासन-काल मे बुन्देलों को पराजित कर चुका था।[९] उसके शासन-काल मे ओडछा के शासक उसके अधीन रहे, पर चम्पतिराय तथा छत्रसाल आजन्म मुगलों को कष्ट ही देते रहे। नैगाल[१०] एक स्वतन्त्र मित्र-राज्य था।

छत्रसाल संबंधी घटनायें—भूषण ने महाराज छत्रसाल बुंदेला के अनेक युद्धों का उल्लेख किया है। इनके कथनानुसार छत्रसाल ने तहवर खाँ[११], अनवर खाँ[१२] सुतरदीन[१३], अब्दुसमद[१४], बहलोल खाँ[१५], सैद अफगन (शेर अफगन)[१६] आदि को विविधि युद्धों में पराजित किया था। इन युद्धों के ऐतिहासिक विवरण अन्यत्र दिए गए हैं।[१७]

---

[१] भूषण-ग्रथावली, शिवा-बावनी, छं० ४७, औरंगजेब भा० ३, पृ० ३०-६, ४१ [२] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छ० १११; वही, शिवा-बावनी, छं० ४७, औरंगजेब, भा० ३, पृ० ४१-२ [३] भूषण-ग्रंथावली, फुटकर; छं० २४, देखिए फ़तेह खाँ-पराजय, पृ० २२५-२६ [४] भूषण-ग्रंथावली, शिवा-बावनी, छ० ३६, ४८, ४६, ५०, औरंगज़ेब, भा० ३, पृ० २६६-७, २८१-३ [५] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छ० १११, वही, शिवा बावनी, छं० ४७ [६] वही, शिवराज-भूषण, छं० १५६ [७] वही फुटकर, छं० २४ [८] वही, शिवराज-भूषण छं० १११, वही, शिवा-बावनी छं०४७ [९] वही, शिवराज-भूषण, छं०१११, वही, फुटकर, छं० २४ [१०] वही, शिवराज-भूषण छं०१११ [११] वही, छत्रसाल-दशक, छं०६, फुटकर, छं०४२ [१२] वही, छत्रसाल-दशक, छं० ६ [१३] वही, वही, वही, [१४] वही, वही, छं० ३, ५, ६, [११] वही, वही, छं० ६ [१६] वही, वही, छं० ८, ६ [१७] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ५, छत्रप्रकाश की ऐतिहासिकता के अंतर्गत छत्रप्रकाश के अध्याय १६ का अंतिम भाग तथा अध्याय १७-२३ का ऐतिहासिक विवरण।

मुहम्मद अमी .खाँ विषयक घटना का वर्णन करते हुए भूषण लिखते हैं कि छत्रसाल ने जगल मे उस उद्दण्ड की सेना और कोष को लूट लिया।[1] छत्र-प्रकाश के १६वें अध्याय मे दिल्ली को जाते हुए मुग़लों के १०० गाडी कोष को छत्रसाल द्वारा लूटने का वर्णन आया है।[2] लाल कवि ने उक्त प्रसग मे कोष के साथ जाते हुए सेनापति का नाम नहीं दिया है। सम्भवतः भूषण का अपने वर्णन से इसी घटना की ओर सकेत है।

आगे चलकर भूषण ने छत्रसाल और मुहम्मद .खाँ के युद्ध का वर्णन किया है।[3] बुंदेले मुगलों के साम्राज्य मे सदा लूटमार करते रहते थे। सन् १७१६-१७२० ई० मे उन्होंने कालपी को लूटा। इस पर मुहम्मद .खाँ बंगश के आदेशानुसार देलर खाँ ने बुदेलों को दड देने का निश्चय किया। १३ मई, १७२१ ई० को छत्रसाल ने उसका सामना किया। इस युद्ध मे दिलेर मारा गया। उसकी मृत्यु के उपरान्त बुदेलखड मे मुहम्मद खाँ बंगश विजय-प्राप्ति की विफल आशा करता रहा। अन्त मे बाजीराव पेशवा की सहायता से छत्रसाल ने मुहम्मद खाँ बगश को पराजित करके, इस दीर्घकालीन युद्ध का अन्त किया और इस प्रकार अपने प्रदेश की रक्षा की (अगस्त, १७२९ ई०)।[4]

इसके अनन्तर भूषण द्वारा कथित छत्रसाल विषयक दक्षिण के नाह (सम्भवतः बीजापुर का कोई सरदार)[5], तथा रूंडी-खुडी[6] के युद्धों का विवरण सहायक ऐतिहासिक ग्रथों में अप्राप्य है। इस कवि ने कतिपय छदों मे छत्रसाल की युद्ध-कुशलता और आतक का भी उल्लेख किया है।[7] भूषण ने एक छद मे छत्रसाल द्वारा साहू को एक हाथी भेट करने का भी वर्णन किया है।[8]

भूषण और बाजीराव—भूषण ने बाजीराव (प्रथम) का विवरण देते हुए उसके द्वारा छत्रसाल बुन्देला की जो सहायता की गई थी, उसका उल्लेख किया है।[9]

बाजीराव और छत्रसाल की उक्त घटना का ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, अतः उसके ऐतिहासिक वर्णन के यहाँ दिए जाने की आवश्यकता नही है।

भूषण और साहू—भूषण ने कुछ छदों मे साहू के आतक, वैभव और वीरता का वर्णन करते हुए उनके एक आध युद्ध का भी उल्लेख किया है।[10] इतिहास से ज्ञात होता है कि साहू ने कई युद्धों मे भाग लिया था। जिनमें से कुछ मे वह विजयी हुआ और कुछ मे उसे पराजित होना पडा था।[11]

भूषण का साहू संबधी वर्णन अतिशयोक्तिपूर्ण है। उसमे ऐतिहासिक तथ्य का इस कवि ने कम आश्रय लिया है।

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, छत्रसाल-दशक, छं० ३ [2] छत्रप्रकाश, पृ० १०६ [3] भूषण-ग्रंथावली, छत्रसाल-दशक, छं० ६; फूटकर, छ० ४२ [4] जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बगाल, संख्या XLVII, १८७८ ई०, पृ० २८४-३०२, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़्, भा० २, पृ० १०४-८ [5] भूषण-ग्रंथावली, छत्रसाल-दशक, छं० ४ [6] वही, वही, फुटकर, छं० ४२ [7] भूषण-ग्रंथावली, फुटकर संदेहात्मक छं० ४, ५, ६, ८ [8] वही, फुटकर, छं० ४१ [9] वही, वही, छं० ४७, ४८ [10] भूषण-ग्रंथावली, वही, छं० ४३-६ [11] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़्, भा० २, पृ० १४, ४१, ७३, ७८, ८६, १००, १०८, १४३, १४५, १७७।

भूषण तथा अन्य राजा गण—भूषण ने कतिपय छन्दों मे चित्र-कूट-पति हृदय-राम-सुत-रुद्र[1], सुलंकी युद्ध-प्रयाण[2], अवधूतसिंह की युद्ध-यात्रा[3] जयपुराधीश भगवंत सुत-मानसिंह, जगत्सिंह, महासिंह, जयसिंह तथा रामसिंह की दानशीलता एवं वीरता[4], महाराज अनिरुद्ध[5], राव-बुद्ध के आतंक[6], गढवाल नरेश की कीर्ति[7] तथा कुमाऊँ नरेश के हाथियों[8] का वर्णन किया है। उक्त वर्णनों मे से अधिकांश के विवरण प्राप्त सहायक ऐतिहासिक ग्रंथों मे अप्राप्य हैं। साथ ही ये विवरण किसी विशेष घटनावली की ओर संकेत भी नहीं करते हैं, अपरंच वे साधारण ढग पर प्रशस्ति के रूप में कहे गए हैं।

भूषण सम्बन्धी सन्देहात्मक छन्दों मे भगवंतराय तथा तुराब खाँ के युद्ध, भगवंतराय की दानशीलता और मृत्यु का उल्लेख मिलता है।[9] इन घटनाओं के ऐतिहासिक विवरण का उल्लेख अन्यत्र किया गया है।[10]

सेनायें

(अ) शाइस्ता ख़ाँ के विरुद्ध शिवाजी की सेना—भूषण के कथनानुसार शिवाजी २०० आदमियों को साथ लेकर सौ हजार के असवार (शाइस्ता खाँ) को पराजित करने मे सफल हुए।[11]

इस सम्बन्ध मे इतिहात ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि शिवाजी शाइस्ता खाँ के विरुद्ध एक सहस्र सैनिकों के साथ सिंहगढ से चले थे। पूना में पहुँचने पर शेष सेना को पीछे छोडकर और केवल चार सौ साथियों को लेकर वे मुग़ल-शिविर मे प्रविष्ट हुए। उनमे से २०० सैनिकों को लेकर वे शाइस्ता खाँ के शयनागार मे घुस गए और अन्य २०० सैनिकों को लेकर बाबाजी बापू ने अन्तः-पुर के बाहर पहरेदारों को बड़ी सख्या में काट डाला।[12]

उक्त ऐतिहासिक विवरण से शिवाजी के सैनिकों की पुष्टि हो जाती है। साथ ही यह कह देना भी असंगत न होगा, कि शाइस्ता खाँ मुग़ल साम्राज्य का अमीरुल्-उमरा था इसीलिए भूषण ने उसे सौ सहस्र का असवार कहने में अत्युक्ति की सहायता ली है।

(आ) अफ़ज़ल् ख़ाँ की सेना—भूषण के अनुसार बीजापुर का यह सरदार बारह हज़ार असवार साथ मे लेकर शिवाजी के विरुद्ध आया था।[13]

सरकार[14] के मतानुसार अफ़जल् खाँ की सेना १० सहस्र और सर देसाई[15] की सम्मति में उसके साथ पदाति के अतिरिक्त १२ सहस्र अश्वारोही थे।

(इ) बीजापुर के विरुद्ध मुग़ल-सेना—भूषण ने लिखा है कि पठान सरदार (दिलेर खाँ) चालीस हज़ार सैनिक लेकर बीजापुर के विरुद्ध आया था।[16]

---

[1] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० २८ [2] वही, फुटकर, छं० ४६ [3] वही, वही, वही, छं० ५० [4] वही, वही, छं० ५१, ५२ [5] वही, वही, छं० ५३ [6] वही, वही, छं० ५४, ५५ [7] वही, वही, छं० ५७ [8] वही, वही, छं० ५६ [9] वही, वही, संदेहात्मक पद्य छं० १०, ११ [10] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ७, रासा भगवंतसिंह की ऐतिहासिकता के अंतर्गत युद्ध-वर्णन [11] भूषण-ग्रंथावली, शिवराज-भूषण, छं० १६० [12] शिवाजी, पृ० ६०-१०४, औरङ्गज़ेब, भा० ४, पृ० ४३-५१; न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़् भा० १, पृ० १४२-४ [13] भूषण-ग्रंथावली, फुटकर, छं० ३६ [14] शिवाजी, पृ० ६८ [15] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़्, भाग १, पृ० १२४ [16] भूषण-ग्रंथावली, फुटकर, छं० ३७

इतिहास से मालूम होता है कि जब दिलेर बीजापुर दुर्ग का घेरा डाले हुए पड़ा था उस समय उसके साथ २० सहस्र सेना थी।[1] अतएव भूषण द्वारा कथित उक्त सैन्य-सख्या अतिशयोक्तिपूर्ण है।

इस प्रकार भूषण कृत रचनाओं पर ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने के पश्चात् यह परिणाम निकलता है कि उन्होंने अपने काव्य के लिए ऐतिहासक घटनावली का ही आश्रय लिया है। उन्होंने मुक्तक रचना की है इसलिए घटनाओं के क्रम मे व्यतिक्रम आ गया है। साथ ही एक ही छद मे कई घटनाओं का एक ही साथ उल्लेख कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त घटनाओं की बार-बार आवृत्ति भी हो गई है, पर ऐसा होने पर भी कविता की सरसता एवं रोचकता की सर्वत्र रक्षा हुई है। भूषण ने घटनाओं की तिथियों का उल्लेख नहीं किया है, पर इतिहास की सहायता से उन घटनाओं का क्रमानुसार वर्णन करने से ऐतिहासिक ज्ञान के क्रमिक विकास की जानकारी हो जाती है। यद्यपि कवि ने कुछ चुनी हुई विशेष घटनाओं को ही अपना काव्य-विषय बनाया है, पर उससे हमारे ऐतिहासिक ज्ञान की पर्याप्त मात्रा मे अभिवृद्धि होती है। साथ ही उससे नवीन सामग्री भी प्रचुर-मात्रा मे प्राप्त होती है।

ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर भूषण की कविता की घटनावली अपेक्षाकृत अत्यधिक समय में फैली हुई मिलती है। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि उनकी कविता मे कुछ कवियों ने प्रक्षिप्त अश मिला दिए हैं। यदि इनके पाठ का समुचित रूप से सशोधन हो जाये तो इनकी कविता प्रमुखरूप से शिवाजी और महाराज छत्रसाल विषयक होने के नाते उन्हे शिवाजी का समकालीन सिद्ध करने मे सफल होगी।

इस प्रकार भूषण की रचनायें ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण, रोचक तथा नवीन सामग्री मे परिपूर्ण होने के साथ ही उनके जीवन सबंधी समस्याओं पर भी पर्याप्त प्रकाश डालती हैं।

---

[1] औरंगज़ेब, भा० ५, पृ० १६५

अध्याय ४

राजविलास की ऐतिहासिकता

तिथियाँ—नीचे मान द्वारा प्रयुक्त प्रमुख तिथियों की प्रामाणिकता पर विचार किया जा रहा है :—

(अ) बापा द्वारा नागद्रहा की स्त्रियों की रक्षा की तिथि—सम्वत् ४१६ विक्रमी चैत्र सुदी (१)[1] =७६५ ई०।

कहने की आवश्यकता नहीं है कि उक्त तिथि अशुद्ध है, क्योंकि इतिहास मे बापा का वर्तमानत्व ७५३ ई० मे पाया जाता है।[2]

(आ) रतनसेन (रत्नसिह) का समय—सम्वत् १०३० विक्रमी[3] =६७३ ई०।

मान कवि द्वारा दी हुई उक्त तिथि अशुद्ध है, क्योंकि रावल रत्नसिह की मृत्यु १३०३ ई० मे हुई थी।[4] अतएव उनका १०३० विक्रमी मे वर्तमान होना असभव है।

(इ) राहप का समय– सम्वत् १३१५ विक्रमी[5] =१२५८ ई०।

यह तिथि अशुद्ध है।

(ई) कुंभा राणा की तिथि—सम्वत् १५०५ विक्रमी (१)[6] =१४४८ ई०।

इतिहास मे कुम्भा राणा का शासन-काल १४३३ ई० से १४६८ ई० तक माना गया है,[7] अतः कवि मान द्वारा दी हुई उक्त तिथि सदिग्ध है।

(उ) राजसिह की जन्म-तिथि—सम्वत् १६८६ कार्त्तिक कृष्ण २, बुधवार।[8]

कार्त्तिक अमाचन्द्र का मध्यन्य समाप्ति काल	२ सितम्बर	७. ४५
१ तिथि का समस्त व्याप्ति काल	१६+१ / १६	१६. ७३ / २४. १८

=बृहस्पतिवार, २४ सितम्बर, १६२६ ई०।

असभव नहीं है कि कृष्ण पक्ष की द्वितीया की तिथि की पूर्णरूप से गणना करने पर .१८ दिवस की काल शुद्धि निकल आये और फल बुधवार आ जावे।

अतएव कवि द्वारा दी हुई उक्त तिथि को ठीक माना जा सकता है अर्थात् महाराणा राजसिंह का जन्म बुधवार, २४ सितम्बर, १६२६ ई० को हुआ होगा।

---

[1] राजविलास, छं० ५८, पृ० २४ [2] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ४१०-४ [3] राजविलास, छं० १५, पृ० ३७ [4] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ४८३ [5] राजविलास, छं० २३, पृ० ३८ [6] वही, छ० ३२, पृ० ३६-४० [7] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ५६१, ६३४ [8] राजविलास, छं० १४८, पृ० ५४

श्री ओझा जी ने भी इनके जन्म की तिथि विक्रमी संवत् १६८६, कातिक वदि (ई० स० १६२६, तारीख २४ सितम्बर) राज-प्रशस्ति-महाकाव्य के आधार पर स्वीकार की है।[1]

(ऊ) मालपुरा की लूट की तिथि—संवत् १७१५, ज्येष्ठ मास[2] = १६५८ ई०, मई।

ओझा जी ने महाराणा के द्वारा शाही मुल्क को लूटने की तिथि विक्रमी सवत् १७१५ ई० वैशाख सुदि १० (ई० स० १६५८, ता० २ मई) मानी है।[3] अतः मान द्वारा दी हुई उक्त तिथि को निकटतम ठीक मान लेने में कोई हानि नहीं है।

(ए) दुर्भिक्ष-तिथि—संवत् १७१७, भाद्रपद[4] = ईस्वी सन् १६६०, अगस्त।

(ऐ) राजसमुद्र निर्माण-तिथि—सवत् १७१७ पौष ८ मंगलवार[5] = ई०स०१६६०, फरवरी।

श्री ओझा जी के मतानुसार राजसमुद्र की नीव की खुदाई वि० स० १७१८ माघ वदि ७ (ई० स० १६६२, ता० १ जनवरी) को प्रारभ हुई थी।[6]

(ओ) राजसमुद्र की प्रतिष्ठा-तिथि—सवत् १७३२ माघ दशमी[7] = ई० सन् १६७५, जनवरी।

इतिहात मे राजसमुद्र की प्रतिष्ठा की तिथि विक्रमी सवत् १७३२ माघ सुदि ६ (ई० सन् १६७६, ता० १४ जनवरी) मानी गई है।[8]

(ओ) औरंगज़ेब के राजपूताने पर आक्रमण की तिथि—सवत् १७३६, भाद्रपद शुक्ल द्वितीया[9] = ई० सन् १६७६, अगस्त ५।

इतिहास से विदित होता है कि "बादशाह (औरगजेब) ने हि० स० १०६० ता० ७ शाबान (वि० स० १७३६, भाद्रपद सुदि ८ = ई० स० १६७६ ता० ३ सितम्बर) को महाराणा से लड़ने के लिए एक बड़ी सेना के साथ दिल्ली से अजमेर की ओर प्रस्थान किया था।"[10]

(अं) महाराजकुमार जयसिंह के युद्ध की तिथि—सवत् १७३७, आषाढ[11] = ई० स० १६८०, जून-जुलाई।

तिथियों संबधी उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि मान द्वारा दी हुई अधिकाश तिथियाँ ऐतिहासिक तिथियों से मेल नही खाती हैं।

वश-नाम—मान ने मेवाड़ के शासकों रवि-वंशी[12] रघु-वशी,[13] सीसोदिया,[14] आदि नामों से पुकारा है, जो ऐतिहासिक दृष्टि से उचित ही है।[15]

---

[1] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८४१-२ (पाद टिप्पणी १ सहित) [2] राज-विलास, छं० २, पृ० ६६ [3] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८४६ [4] राजविलास, छं० ११३-४, पृ० १३६ [5] वही, छं० १४०, पृ० १३६ [6] राजपूताने का इतिहास तीसरा खंड, पृ० ८८१ (पाद टिप्पणी २ सहित) [7] राजविलास, छं० १५४-७, पृ० १४३-४ [8] राज-पूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८८२(पाद टिप्पणी ५ सहित) [9] राजविलास, छं १६६-७०, पृ० १७५ [10] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६५ [11] राजविलास, छं० १-२, पृ० २४३ [12] वही, छं० ७, पृ० १, छं० १६८, पृ० १४७, छं० १८५, पृ० १७६ [13] वही; छं० १८, पृ० १७; छं० २१, पृ०१८, छं० २४, पृ० १८-६, छं० २६, पृ० १६ [14] वही छं० १७, पृ० १७, छं० ६५, पृ० ७६, छं० ६६, पृ० ७१ [15] देखिये द्वितीय खंड, अध्याय २, गोरा बादल की कथा की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत राणा रत्नसेन के वंश का नाम, पृ०१६१-६२

इस स्थल पर यह निर्णय भी कर लेना समीचीन प्रतीत होता है कि मान का यह कथन कि "बापा रावल के समय से ही गुहिल वशीय मेवाडाधिपति सीसोदिया कहलाए"[1] कहाँ तक इतिहास-सम्मत है। कहने की आवश्यकता नही है कि इस कवि का उक्त कथन नितान्त भ्रामक है। वास्तव मे इस वश का सीसोदिया नाम बापा के बहुत पीछे पड़ा। "बापा की वंश-परम्परा में-कई पीढी के उपरान्त-रणसिह (कर्णसिह, कर्ण) हुए। उससे दो शाखाये—एक रावल नाम की और दूसरी राणा नाम की—फटीं। रावल शाखा वाले मेवाड़ के स्वामी और राणा-शाखा वाले सीसोदे के जागीरदार रहे और सीसोदे मे रहने के कारण सीसोदिए कहलाए। रावल शाखा की समाप्ति ई० स० १३०३ में हुई। इससे कुछ वर्ष बाद सीसोदे के राणा हम्मीर ने चित्तौड़ पर अपना अधिकार जमा कर मेवाड मे सीसोदिया (राणा) शाखा का राज्य स्थापित किया।"[2]

इससे स्पष्ट है कि इस वंश को सीसोदिया नाम बहुत बाद को दिया गया था, न कि बापा के समय मे, जैसा कि मान ने माना है।

निश्चित-पात्र

हिन्दू-पात्र--गुहादित्य (गुहिल, गुहदत्त)—यह मेवाड राज-वंश के प्रवर्त्तक माने जाते हैं। इनका इतिहास अन्धकार के गर्त्त मे निहित है। ओझा जी इनका वर्त्तमानत्व विक्रमी सम्वत् ६२३ (ई० स० ५६६) के लगभग मानते हैं।[3]

बापा रावर--(बापा रावल) मान कवि ने बापा को गुहादित्य का पुत्र माना है, पर ओझा जी बापा को गुहादित्य से आठवीं पीढी मे हुआ मानते हैं।

विद्वान् गण इस बात पर एक मत हैं कि बापा वास्तविक नाम नही था, वरन् यह सम्मान सूचक शब्द था। ओझा जी का मत है कि कालभोज द्वितीय का नाम बापा था। उसका शासन काल वि० स० ७६१ से ८१० (ई० स० ७३४-५३) तक रहा होगा।[4]

अल्लू रावर (अल्लट)—यह भर्तृभट द्वितीय का पुत्र था। यह वि० स० १००८ (ई० स० ६५१) में वर्तमान था।[5]

श्रीनर—इस नाम से मान कवि का अनुमानतः नरवाहन से अभिप्राय है। नरवाहन अल्लट का पुत्र था। यह बड़ा शक्तिशाली एव योग्य शासक था।[6]

सारिबाहन--कवि ने इस नाम से शालिवाहन की ओर संकेत किया है। मान ने इसको श्रीनर (नरवाहन) का पूर्वज माना है, पर ओझा जी उसे नरवाहन का उत्तराधिकारी मानते हैं। इसने बहुत थोडे वर्ष राज्य किया था। यह शालिवाहन शक सम्वत् के प्रवर्त्तक, पैठण के प्रसिद्ध आध्र वशी शालिवाहन से भिन्न व्यक्ति था।[7]

मान ने इसे 'शक बधिय' शाका चलानेवाला माना है, जो उसकी भूल है।

संकुतकुमार—मान कवि ने सम्भवतः इस नाम से शक्तिकुमार की ओर सकेत किया है यदि उसका अभिप्राय उक्त शक्तिकुमार से है तो उसका इसे श्रीनर (नरवाहन) का पूर्वज मानन

---

[1] राजविलास छं० ८०, ८३, पृ० २६ [2] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ ४४६-७ [3] वही, पहला भाग पृ० ४००, वही, दूसरा खंड पृ० ४०१-२ [4] वही, पहला भा० पाद-टिप्पणी १, पृ० ३६५, वही दूसरा खंड,पृ० ४०४-२० [5] वही, भाग वही, पृ० ४२६-३ [6] वही, भा० वही, पृ० ४२८-३० [7] वही, वही, पृ० ४३०-३३

भूल है। शक्तिकुमार शालवाहन का पुत्र था। यह वि० सं० १०३४ (ई० स० ९७७) में वर्त्तमान था।[1]

अंब पसाउ (अब पसाव)—यह नाम अनुमानतः अंबाप्रसाद के लिए प्रयुक्त हुआ है। शक्तिकुमार के पीछे उसका पुत्र अंबाप्रसाद मेवाड़ का स्वामी हुआ है। कहीं-कहीं पर उसका नाम 'आम्रप्रसाद' भी लिखा है।[2]

रावल हंस—मान ने हसपाल नामक राजा के लिए यह नाम प्रयुक्त किया है। वैरट के पीछे हसपाल राज्य का स्वामी हुआ। भेराघाट से मिले हुए ११५५ ई० के एक शिलालेख में इसका वर्णन मिलता है। कहीं-कहीं पर इसका नाम वंशपाल भी दिया है।[3]

वैरसिंघ (वैरिसिंह)—"यह हसपाल का पुत्र था। यह बड़ा शक्तिशाली राजा था। इसने आहाड़ नगर का नया कोट बनवाया था।"[4]

करन (कर्ण, कर्णसिंह, रणसिंह)—"यह विक्रमसिंह का पुत्र था। इसको कर्णसिंह, करणसिंह, कर्ण अथवा रणसिंह नाम से भी पुकारा जाता था। इससे दो शाखायें—एक 'रावल' नाम की दूसरी 'राणा' नाम की-फटीं। रावल शाखावाले मेवाड़ के स्वामी और 'राणा' शाखावाले सीसोदे के जमीदार रहे। 'रावल' शाखा की समाप्ति रत्नसिंह के साथ १३०३ ई० मे हुई। इसके कुछ समय बाद सीसोदे के राणा हम्मीर ने चित्तौड़ पर 'राणा' शाखा का राज्य स्थापित किया।"[5]

रावल महणसीह—यह नाम मथनसिंह का पर्य्यायवाची प्रतीत होता है। "कुंभल गढ़ के शिलालेख में महणसिंह नाम लिखा है। यह कुमारसिंह का पुत्र था। अपने पिता के पश्चात् राजा बना।"[6]

पदमसीह (पद्मसिंह)—"मथनसिंह (महणसिंह) का उत्तराधिकारी उसका पुत्र पदमसीह हुआ।

जैतसीह—(जैत्रसिंह) पद्मसिंह के पीछे उसका पुत्र जैत्रसिंह मेवाड का राजा हुआ। उसने गुजरात के राजा त्रिभुवनपाल को पराजित किया (१२४२-३ ई०), नाडौल के चौहानों तथा मालवे के परमारों से युद्ध किया। वह १२१३ से १२५३ ई० तक मेवाड़ का राजा था। जैत्रसिंह की मृत्यु १२५३ और १२६१ ई० के बीच किसी वर्ष हुई होगी।

तेजसिंह—यह जैत्रसिंह का पुत्र था। अपने पिता के मरने पर मेवाड़ का स्वामी हुआ। इसका देहान्त १२६७ और १२७३ ई० के बीच किसी वर्ष हुआ होगा।

समरसीह (समरसिंह)—तेजसिंह के पीछे उसका पुत्र समरसिंह राजा हुआ। उसके शिलालेखों से इतना स्पष्ट है कि वि० सं० १३३० (ई० स० १२७३) से १३५८ (ई० स० १३०२) माघ सुदि १० तक तो रावल समरसिंह जीवित था और इसके पीछे कुछ समय और भी जीवित रहा हो तो कोइ आश्चर्य नही। उसके पीछे उसका पुत्र रत्नसिंह राजा हुआ, जो अलाउद्दीन खिलजी

---

[1] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ४३३-८ [2] वही, वही, पृ० ४३८-९ [3] वही, वही, पृ० ४४३ [4] वही, वही, पृ० ४४४ [5] वही, वही, पृ० ४४६-७ [6] वही, वही, पृ० ४५८-९

के साथ की चित्तौड़ की लड़ाई मे वि० सं० १३६० (ई० स० १३०३) में मारा गया, इसलिए समरसिह का देहान्त वि० सं० १३५६ (ई० स० १३०२) होना चाहिए।"[1]

रतनसेन (रत्नसिह)।[2]

माहब (माहप)—"माहप और राहप दोनो भाई थे, और कर्ण से निकली हुई सीसोदे की

और राहप—राणा-शाखा का पहला सरदार माहप हुआ। माहप को बागड़ (डूगरपुर) के राज्य का सस्थापक मानना भूल है। ये दोनो भाई एक दूसरे के बाद सीसोदे के सामन्त रहे। मोकल से 'राणा' का खिताब (उपाधि) छीन कर (रावल) राहप को देने की बात भी निर्मूल ही है।"[3] मान कवि ने इन दोनों के नामों को मेवाड के शासकों की सूची मे रखकर भयकर भूल की है।

भाणसी (भुवनसिंह)—मान ने अनुमानतः इस नाम का प्रयोग भुवनसिह के लिए किया है। "पृथ्वीमल्ल के पीछे उसके पुत्र भुवनसिह ने सीसोदे की जागीर पाई।

भीम (सी)—भुवनसिह का उत्तराधिकारी भीमसिह हुआ, जिसकी स्त्री पद्मिनी होना कर्नल टाड ने लिखा है, जो भ्रम ही है।

लषन सीह (लक्ष्मणसिह)—यह जयसिह के पीछे सीसोदे का राणा हुआ। रत्नसिंह और अलाउद्दीन के चित्तौड़ के युद्ध मे (१३०३ ई०) मे यह अपने सात पुत्रों के सहित लडकर मारा गया।

अरसी (अरिसिह)—यह लक्ष्मणसिह का ज्येष्ठ पुत्र था। अपने पिता के साथ उस युद्ध में इसने भी वीरगति प्राप्त की थी।

अजयसी (अजयसिह)—यह लक्ष्मणसिह का कनिष्ठ पुत्र था। उक्त युद्ध मे घायल होकर जीता घर गया और अपने पिता की जगह सीसोदे का राणा हुआ।"[4]

माहप से लेकर अजयसी तक के शासक सीसोदे के स्वामी रहे। वे कभी भी मेवाड़ की गद्दी पर नही बैठे। उनके नामों को मेवाड़ के शासकों की सूची मे रखकर मान कवि ने अपनी अनभिज्ञता का परिचय दिया है। रत्नसिह की मृत्यु के साथ रावल शाखा का अन्त हो गया। तब सीसोदे के शासक हम्मीर ने पुनः चित्तौड़ मे अपने वश का शासन स्थापित किया था।

हम्मीर—"यह अरसी (अरिसिह)—का पुत्र था। अपने चाचा अजयसिंह की मृत्यु के पश्चात् यह सीसोदे की जागीर का स्वामी बना। इसने १३२६ ई० के आसपास गुहिल वंशियों की राजधानी चित्तौड को अपने हस्तगत कर लिया। इसने मुहम्मद तुगलक की सेना को पराजित किया। हम्मीर का देहान्त ई० स० १३६४ मे होना माना जाता है।"[5]

लषण सी (लक्ष्मणसिंह; लाखा)—महाराणा क्षेत्रसिंह के पीछे उसका पुत्र लक्ष्मणसिंह (लाखा) ई० स० १३८२ मे चित्तौड के राज्यसिहासन पर बैठा। इसका स्वर्गवास वि० स० १४७६ और १४७८ (ई० स० १४१६ और १४२१) के बीच किसी वर्ष हुआ होगा।"[6]

---

[1] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ४५६-८३ [2] देखिए द्वितीय खण्ड, अध्याय २, गोरा बादल की कथा की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत पात्रों का विवरण, पृ० १६२ [3] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ५०८-१० [4] वही, वही, पृ० ५१०-२ [5] वही, वही, पृ० ५१३-५, ५४५-५५ [6] वही, वही, पृ० ५७१-८२

मोकल—"महाराणा लाखा का स्वर्गवास होने पर उसका पुत्र मोकल सिंहासनारूढ हुआ। १४३३ ई० मे यह चाचा और मेरा के हाथ से मारा गया।"[1]

कुंभ (कुंभकर्ण, कुंभा)—"महाराणा मोकल के पीछे उसका ज्येष्ठ पुत्र कुम्भकर्ण १४३३ ई० मे चित्तौड़ के राजसिंहासन पर बैठा। १४६८ ई० मे उसके पुत्र ऊदा (उदयसिंह) ने उसे कटार से मार डाला।"[2]

रायमल—"यह अपने भाई उदयसिंह (ऊदा) से राज्य छीनकर १४७३ ई० मे मेवाड़ की गद्दी पर बैठा। २४ मई, १५०९ ई० को अनुमानत: २६ वर्ष राज्य करने के पश्चात् यह स्वर्ग सिधारा।"[3]

संग्राम (संग्रामसिंह, सांगा)—"यह रायमल का पुत्र था। इसका जन्म १२ अप्रैल, १४८२ ई० को हुआ था। सागा का राज्याभिषेक २४ मई, १५०९ ई० को हुआ। मेवाड के महाराणाओं मे यह सबसे अधिक प्रतापी और प्रसिद्ध हुआ। यह उस समय का सबसे प्रबल हिन्दू राजा था। उसने गुजरात के सुलतान तथा दिल्ली के शासक इब्राहीम लोदी से कई लड़ाइयाँ लड़ी थीं। उसने खानवा के स्थान पर बाबर का सामना किया था, पर वह हार गया। ३० जनवरी, १५२८ ई० को उसका स्वर्गवास हो गया।"[4]

उदय सिंघ (उदय सिंह)—"यह सागा का पुत्र था। १५३७ ई० मे सरदारों ने उदयसिंह को मेवाड का स्वामी मान कर राजगद्दी पर बैठाया। जब अकबर ने चित्तौड पर चढाई की तो यह जयमल को वहाँ की रक्षा का भार सौप कर अन्यत्र चला गया और अकबर का चित्तौड़ पर अधिकार हो गया। २८ फरवरी, १५७२ ई० को इसकी मृत्यु हुई।"[5]

प्रताप (प्रतापसिंह)—"यह उक्त उदयसिंह के पुत्र थे। इनका जन्म ९ मई, १५४०ई० को हुआ था। पिता के मरने पर यह गद्दी पर बैठे। यह आजन्म अकबर से लोहा लेते रहे। इनका स्वर्गवास वि० स० १६५३ माघ सुदि ११ (ई० स० १५९७, ता० १९ जनवरी) को हुआ था।"[6]

अमर (अमरसिंह)—यह महाराणा प्रतापसिंह के पुत्र थे। इसका जन्म वि० स० १६१६ चैत्र सुदि ७ (ई० स० १५५९, ता० १६ मार्च) को और राज्याभिषेक वि० स० १६५३ माघ सुदि ११ (ई० स० १५९७, ता० १९ जनवरी को हुआ था। वि० सं० १६७६ माघ सुदि २ बुधवार (ई० स० १६२० ता० २६ जनवरी) को महाराणा अमरसिंह का उदयपुर मे देहात हुआ।"[7]

करण (कर्णसिंह)—महाराणा कर्णसिंह का जन्म वि० स० १६४० माघ सुदि ४ (ई० स० १५८४ ता० ७ जनवरी) को और राज्याभिषेक वि० स०१६७६ माघ सुदि २ (ई०स० १६२० ता० २६ जनवरी) को हुआ। उनका देहात ई० स० १६२८, मार्च मे हुआ।[8]

जगतसिंघ (जगत्सिंह)—महाराणा जगत्सिंह का जन्म ई० स० १६०७ ता० १४ अगस्त, और राज्याभिषेक ई० स० १६२८ मार्च मे हुआ था। इनका राज्याभिषेक उत्सव २८ अप्रैल, १६२८ ई० को मनाया गया था। इनकी मृत्यु १० अप्रैल, १६५२ ई० को हुई थी।[9]

---

[1] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खड, पृ० ५८२-९१ [2] वही, वही, पृ० ५९१-६३६ [3] वही, वही, पृ०५३९-६५८ [4] वही, वही पृ० ६५८-९९ [5] वही, वही, पृ० ७१४-३५ [6] वही, वही, पृ० ७३५-६, वही तीसरा खंड, पृ० ७३७ ८७ [7] वही, वही, पृ० ७८७-८२१ [8] वही, वही, पृ० ८२२-३० [9] वही, वही, पृ० ८३०-४१

राजसिंघ (राजसिंह)—महाराणा जगत्सिंह के पुत्र महाराणा राजसिंह का जन्म वि० सं० १६८६ कार्तिक वदि २ (ई० स० १६२६ ता० २४ सितंबर) को और राज्याभिषेक १० अक्टूबर, १६५२ ई० को हुआ। इनकी मृत्यु २२ अक्टूबर, १६८० ई० को हुई।[1]

अरिसिंह—यह महाराणा जगत्सिंह के पुत्र तथा राजसिंह के भाई थे। अरिसिंह के वश में तीरोली का ठिकाना है।[2]

जय सीह (महाराणा जयसिंह)—यह महाराणा राजसिंह का पुत्र था। इसका जन्म ५ दिसंबर, १६५३ ई० को हुआ था। अपने पिता के मरने पर यह राणा बना। इसका देहान्त २३ सितंबर, १६९८ ई० को हुआ।[3]

भीमसिंह—यह महाराणा राजसिंह का पुत्र था। यह बड़ा वीर था। राजसिंह और औरंगज़ेब की लड़ाइयों में यह बहुत लडा था। औरगजेब से जयसिंह की सन्धि हो जाने पर वह बादशाह के पास अजमेर चला गया। ८ अक्टूबर, १६९४ ई० को इसका देहान्त हो गया।[4]

जस (यश कर्ण, जसवन्तसिंह, जसराज)—यह डूङ्गरपुर का स्वामी था।[5]

भावसिंघ (भावसिंह)—संभवतः यह महाराणा अमरसिंह के तीसरे पुत्र सूरजमल का तीसरा पुत्र था।[6]

मनोहरसिंह (महाराज मनोहरसिंह)—यह महाराणा कर्णसिंह के कुँवर गरीबदास का पुत्र था।[7]

दलसिंह—यह महाराणा कर्णसिंह के छोटे कुँवर छत्रसिंह का पुत्र था।[8]

भगवंतसिंह, सुभागसिंह, फतहसिंह, गुमानसिंह—ये चारों भाई महाराणा राजसिंह के कनिष्ठ भ्राता अरिसिंह के पुत्र थे।[9]

राव सबलसिंह चौहान—यह बेदले (एक ठिकाना) वालों का पूर्वज था।[10]

झालाचंद्र सैन—यह बडी सादडी (मेवाड का प्रथम श्रेणी का एक ठिकाना) वालों का पूर्वज था।[11]

रावत केसरीसिंह सगतावत (शक्तावत); केसरीसिंह शक्तावत—यह बानसी (मेवाड का एक ठिकाना) वालों का पूर्वज था।

गङ्गादास—यह उक्त रावत केसरीसिंह का पुत्र था।[12]

---

[1] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८४१-४१ [2] वही, खंड वही, पृ० ८३९ (पाद टिप्पणी २ सहित) [3] वही, खंड वही, पृ० ८९१-९०५ [4] वही, खंड वही, पृ० ८८८ (पाद टिप्पणी ३ सहित) [5] वही, खंड वही, पृ०८९६ (पाद टिप्पणी २ सहित) [6] वही, खंड वही, पृ०वही (पाद टिप्पणी ३ सहित) [7] वही, खंड वही, पृ० वही, (पाद टिप्पणी ४ सहित) [8] वही, खंड वही, पृ० वही (पाद टिप्पणी ५ सहित) [9] वही खंड वही, पृ० वही [10] वही, खंड वही, पृ० वही (पाद टिप्पणी ६ सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ८७४-७५ [11] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६६ (पाद टिप्पणी ७ सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ८७१, ८७३ [12] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६६ (पाद टिप्पणी ८ सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ९१७

झाला जैत (सिंह)—यह देलवाडे का स्वामी था।[1]

पँवार बैरिसल्ल (प्रमार बैरिसाल)—यह बीजोलियाँ का निवासी था।[2]

महासिंह – रावत महासिंह बेगूँवाले काशीमेघ का पौत्र तथा राजसिंह का पुत्र था।[3]

रावत रतनसेन (रत्नसिंह) चौडांवत—यह सलूंवर के रावत रघुनाथ सिंह चूंडावत का पुत्र था।[4]

सांवलदास कमध्वज्ज—यह प्रसिद्ध राव जयमल का वंशधर और बदनोर के मनमनदास का पुत्र तथा मेड़तिया राठौर था।[5]

रावत मानसिंघ (रावत मानसिंह)—यह कानोड़ वालों का पूर्वज था।[6]

रावत केसरीसिंह चौहान (केहरी सिंह चौहान)—यह पारसोली का स्वामी था।[7]

महकमसिंह (महकर्मसिंह)—यह महाराणा प्रताप के भाई शक्तिसिंह के वशज पूर्णमल्ल का पोता तथा सबलसिंह का पुत्र और भीडर का स्वामी था।[8]

सोनिंगदेव राठौड़—"मारवाड के रिडमल (रणमल) के पुत्र चाम्पा से राठौडों की चांपावत शाखा चली। चाम्पा का प्रपौत्र, माडल का पौत्र, और गोपालदास का पुत्र विट्ठलदास था। महाराजा जसवन्तसिंह के समय उसकी जागीर मे ३५,००० रुपयों की सालाना आय के पाली आदि ३३ गाँव थे। उसके कई पुत्रों मे से एक सोनिग था। महाराज जसवन्तसिंह की मृत्यु के पीछे दुर्गादास के साथ महाराजा अजीतसिंह को लेकर महाराणा राजसिंह के पास आया। सम्वत् १७३८ वि० (१६८१ ई०) मे इसकी मृत्यु हुई।"[9]

विक्रम (विक्रमादित्य)—यह सोलकी सरदार रूपनगर वालों का पूर्वज था।[10]

रुषमांगद (रुक्मांगद)—"यह रणथम्भौर के हम्मीर का वशज तथा कोठारिया का स्वामी था।

---

[1] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ०८६६ (पाद-टिप्पणी १ सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ०८१७, ८१८ [2] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६६ (पाद-टिप्पणी १० सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ०८८७-८ [3] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ०८६६(पाद-टिप्पणी ११सहित), उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ८१२, ८१४ [4] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६६ (पाद-टिप्पणी १२ सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ८७१, ८८३ [5] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६६ (पाद-टिप्पणी १३ सहित), उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ११३, ११५-६ [6] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६६ (पाद टिप्पणी १४ सहित), उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० १०४,१०५,१०७ [7] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६६ (पाद-टिप्पणी १५ सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ११६-२१ [8] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खड, पृ० ८६६ (पाद-टिप्पणी १६ सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ११०, १११ [9] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६६ (पाद-टिप्पणी १८ सहित) [10] वही, खंड वही, पृ० ८६६, ८६७ (पाद-टिप्पणी १ सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० १७४, १७५

उदयभानसिंह (उदयकरण)—यह उक्त रक्मांगद का पुत्र था।[1]

जसवन्तसिंघ झाला (जसवन्तसिंह झाला)—यह गोगूदे के कान्हसिंह का पुत्र था[2]

राठौर गोपीनाथ—यह घाणेराव का स्वामी था।[3]

गरीबदास—यह महाराणा राजसिंह का राज-पुरोहित था।[4]

महेजा अमरसिंह (महेचा अमरसिंह)—यह नीमड़ी का शासक था।[5]

ओझा जी ने अन्य स्थल पर अमरसिंह के पुत्र भीमसिंह का महाराणा राजसिंह की मालपुरे की लूट मे तथा उसके उत्तराधिकारी मेघराज का औरगजेब के विरुद्ध के युद्ध में वर्त्तमान होना लिखा है।[6]

दयाल साह (दयाल दास)—महाराजा राजसिंह का मन्त्री दयालदास ओसवाल जाति के संघवी (सघपति) तेजा का प्रपौत्र, गजू का पौत्र और राजा का चतुर्थ पुत्र था।[7]

माधवसिंह चोडा (चूडावत)—यह सुप्रसिद्ध रावत पत्ता का चौथा वशधर (छोटी शाखा मे) था।[8]

कन्हा सगताउत (कान्हा शक्तावत)—शायद यह महाराणा प्रतापसिंह के भाई शक्तिसिंह के प्रपौत्रों मे से हो। इसके वशजों के अधिकार मे चीताखेडे की जागीर थी।[9]

खीची राव रतनसेन—अकबर के समय खीची (चौहान) बडे शक्तिशाली थे। बादशाह अकबर और जहाँगीर के विरुद्ध युद्धों मे हार कर खीची निर्बल होगए और वे उदयपुर चले गए, जिन को वहाँ जगीरें मिलीं। यह इन्ही के वशधर थे।[10]

गजसिंह—यह राजा सूरजसिंह राठौर के पुत्र थे। अपने पिता की मृत्यु पर जहाँगीर के १४वें वर्ष मे राजा की पदवी पाई। गद्दी पर बैठते समय (१६७६ वि० कुआर सुदी ६) मे इनकी अवस्था २४ वर्ष थी। सं० १६६५ ज्येष्ठ शुक्ल ३ को इनका स्वर्गवास हुआ। यह महाराजा जसवतसिंह के पिता थे।[11]

जसवंतसिंह—छत्रसाल हाडा,[12] भावसिंह हाडा,[13] मानसिंह।[14]

---

[1] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६७ (पाद-टिप्पणी २ सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ८७७, ८७८ [2] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६७ (पाद-टिप्पणी ३ सहित); उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ६०२, ६०३ [3] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८६७ (पाद-टिप्पणी ४ सहित) [4] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड पृ० ८६७ [5] वही, खंड वही, पृ० वही (पाद टिप्पणी ५ सहित) [6] उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ६८४, ६८५ [7] राजपूताने का इतिहाहस, तीसराखड, पृ० ८६७ (पाद-टिप्पणी ६ सहित), उदयपुर राज्य का इतिहास, दूसरी जिल्द, पृ० ६६४-६ [8] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८७८ (पाद टिप्पणी ५ सहित) [9] वही, खंड वही, पृ० ८७६ (पाद-टिप्पणी १ सहित) [10] वही खंड वही, पृ० ८७८ (पाद टिप्पणी ४ सहित) [11] मआसिरुल् उमरा, भाग १, पृ० १०८-११ [12] देखिए द्वितीय खण्ड, अध्याय ५, छत्रप्रकाश की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत पात्रों का ऐतिहासिक विवरण [13] वही अध्याय ३, भूषण-ग्रन्थावली की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत पात्रों का विवरण, पृ० २०५ [14] वही, अध्याय १, वीरसिंहदेव-चरित की ऐतिहासिकता, पृ० १७६

जसवंतसिंह-सुनन्दन (अजीतसिंह) —यह महाराजा जसवतसिंह का पुत्र था। लाहौर में वि० स० १७३५, चैत्र वदी ४ को इनका जन्म हुआ था। इनकी मृत्यु आषाढ सुदी १३ स० १७८१ वि० को हुई थी।[1]

दुर्गादास राठौर—यह महाराजा जसवंतसिंह के मत्री तथा दुनेरा के स्वामी आसकरण के पुत्रों में से एक था। यह महाराजा अजीतसिंह के अधिकारों की रक्षा के लिए २५ वर्ष तक अविरल युद्ध करता रहा। इसने शाहजादा अकबर को दक्षिण मे सुरक्षित रूप से पहुँचाया था।[2]

रूपसिंह राठौर—यह राजपूताने के किशनगढ के सस्थापक किशनसिंह राठौर (कृष्णसिंह राठौर) के पुत्र भारमल्ल का पुत्र था। अपने चाचा हरिसिंह के निस्सन्तान मरने पर यह गद्दी पर बैठा (१६४४ ई०)। सामूगढ के युद्ध मे यह दारा के हरावल मे था। उसी युद्ध मे लड़ते हुए यह मारा गया (१६५८ ई०)। इसने बवेरा स्थान पर रूपनगर बसाया था।[3]

मानसिंह राठौर—यह उक्त रूपसिंह राठौर का पुत्र था। औरगजेब के राजत्व-काल मे तीन हजारी मंसब तक पहुँकर ३५वें वर्ष जुल्फिकार खां के साथ दुर्ग जिंजी की विजय को गया। इसकी मृत्यु १७०६ ई० मे हुई।[4]

अन्य-पात्र —कवि मान ने प्रसगवशात् सोम चहुआन, पृथ्वीराज (पृथ्वीराज) चौहान, विक्रमादित्य,[5] जयचन्द पग, कालिदास आदि ख्याति-लब्ध नामों का भी उल्लेख किया है।

स्त्री-पात्र —पदमनि (पद्मिनी)।[6]

रानि जनादे—यह मेड़तिया राठौर राजसिंह की पुत्री तथा मेवाड़ाधिपति महाराणा राजसिंह सीसोदिया की माता थी।[7]

रूप-पुत्ति रट्ठवरि—(रूप-पुत्री राठौर) यह कृष्णगढ के शासक तथा रूपनगर के संस्थापक रूपसिंह राठोर की पुत्री एव मानसिंह राठौर की बहिन थी। चारुमती इसका नाम था।[8]

पृथा-बाई—इसे पृथ्वीराज तृतीय की बहिन बतलाना मान का भ्रम है। यदि पृथा-बाई की कथा किसी वास्तविक घटना से सबध रखती है, तो यही माना जा सकता है कि अजमेर के चौहान राजा पृथ्वीराज दूसरे (पृथ्वीभट) की बहिन पृथाबाई[9] का विवाह मेवाड के रावल समर सी (समरसिंह) से हुआ होगा।[9]

मुसलमान-पात्र—अलावदी (अलाउद्दीन),[10] अबदुल्ला नवाब (ख्वाजा अबूदुल्लाह खां फीरोज़ जंग), अकबर (सम्राट्), जहाँगीर,[11] औरंगजेब, दारा, मुरादि साहि (मुराद शाह), साहि सूजा (शाह शुजा), साहिज़ादा (शाहजादा) अकबर।[12]

---

[1] मआसिरूल् उमरा, भाग १, पृ० ५५-६२ [2] औरंगज़ेब (१९२१ का संस्करण), भाग ३, पृ० ३३१-२ [3] मआसिररूल् उमरा, भाग १, पृ० ३६८-७० [4] वही, भाग, वही, पृ०३७० (पाद-टिप्पणी २ सहित) [5] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ११, हम्मीररासो के पात्रों की ऐतिहासिकता [6] वही, अध्याय २, गोरा बादल की कथा के पात्रों की ऐतिहासिकता, पृ० १९३ [7] राजपूताने का इतिहास, तीसरा भाग, पृ०८४१-२ (पाद-टिप्पणी २ सहित) [8] वही, वही, पृ० ८५१-२ [9] वही, दूसरा खंड, पृ० ४२७-८ [10] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ११, हम्मीररासों के पात्रों की ऐतिहासिकता [11] वही, अध्याय १, वीरसिंहदेव-चरित के पात्रों की ऐतिहसिकता, पृ० १८० [12] वही, अध्याय ५, छत्रप्रकाश के पात्रों की ऐतिहासिकता

अल्लि हुसेन—(हसन अली खाँ)—राजपूताने की लड़ाइयों मे यह औरगज़ेब का एक प्रमुख सेनाध्यक्ष था। शाहज़ादा अकबर की सेना के हरावल मे रहकर इसने राजपूतों से मेवाड़ में युद्ध किया था।[१]

अनिश्चित पात्र

हिन्दू-पात्र—(क) नीचे उन पात्रों के नाम दिए जाते हैं जो निश्चित रूप से मेवाड के शासक हुए, पर उनका ऐतिहासिक विवरण अप्राप्य है :—

माहेन्द्र—(महेन्द्र)—इस नाम के दो राजा मेवाड के शासक हुए पर किसी का भी विवरण उपलब्ध नहीं है।[२] मान ने केवल एक ही नाम का उल्लेख किया है।

पुमाण—(खुम्माण)—इस नाम के तीन राजा हुए, पर उनका इतिहास अप्राप्य है।[३] मान ने केवल एक ही नाम दिया है :—

जोगराज (योगराज), **चोंड** (चोडसिंह।[४]

(ख)—निम्नलिखित पात्रों को मान ने मेवाड का शासक माना है, पर ये कभी भी वहाँ की गद्दी पर नहीं बैठे। ये सब सीसोदे के राजा थे। इनका ऐतिहासिक विवरण अप्राप्य है :—

नरपति, दिनकर, जसकरन, पुन्यपाल, पीथड (पेथड, पृथ्वीपाल)—[५]

(ग)—नीचे दिए हुए पात्रों को मान ने मेवाड के गुहिल वश का शासक माना है, पर ओझा जी के इतिहास से इन नामों के मेवाड़ के राजा होने की पुष्टि नहीं होती है :—

कुवर, त्रिपुर सीह, गोविन्द, धवल कीरति, धारमसिघ (धर्मसिंह), रावल गात्र, भट्टू रावल, भटेवरा नृप, करम सीह, चूड रावर, सजन सेन, डूगर सी, रावल पुंजा, नर पुज, प्रताप सीह*, राणा खेतल।

अन्य-पात्र—प्रोहित गिरिवर (पुरोहित गरीबदास ?), बषत सीह (बखतसिंह), डोड (डोडिया) महासिह, चित्रागद मोरी, नृप चित्रंगि (चित्रंगी), सग्राम सी सोलषी, मानधाता, अजगैब, छत्रसाहि (गौड़ देश का सासक)।

स्त्री-पात्र—धनवती।

मुसलमान-पात्र—अबूमलिक अजेज (अबूमलिक अजीज), रूहिल्ला खान, सैद हासा नवाब।

विलास १

चित्तौड-दुर्ग-निर्माण—मान कवि ने मेदपाट भू-खंड में मौर्य्य शासक चित्राग द्वारा चित्र-कोट (चित्रकूट, चित्तौड़) दुर्ग की स्थापना तथा उक्त राजा के द्वारा १८ प्रान्तों पर शासन करने का उल्लेख किया है।[६]

---

*निश्चित पात्रों में दिए हुए महाराणा प्रताप से यह भिन्न व्यक्ति था।

[१] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८७०, ८७१, ८७२, ८७३, ८७६; औरंगज़ेब, भाग ३, पृ० ३३६, ३४०, ३४१, ३४३, ३४४, ३४५ [२] राजपूताने का इतिहास, दूसरा भाग, पृ० ४०२, ४०४ [3] वही, वही, पृ० ४२०, ४२२-४ [४] राजपूताने का इतिहास, दूसरा भाग, पृ० ४३३, ४४६ [५] वही, वही, पृ० ५१० [६] राजविलास, छं० १६, पृ० १८, छं० २१, २२, पृ० १८

इस सम्बन्ध मे श्री ओझा जी का मत है कि "प्राचीन समय में उदयपुर राज्य-प्रदेश पर मेद (मेव अथवा मेर) जाति का अधिकार रहने के कारण इसका मेद-पाट नाम पड़ा। उसी से यह मेवाड कहलाया। मौर्य्य राजा चित्रांग के नाम पर ही उनका बनवाया हुआ गढ चित्रकोट (चित्रकूट, चित्तौड़) पुकारा गया।"[1] चित्रांग तथा उसके वशजों का शासन-विवरण सहायक ग्रथों मे अप्राप्य है। इस सम्बन्ध मे केवल इतना ही कहा जा सकता है कि उक्त राजा अवश्य ही अत्यन्त शक्ति-शाली एव प्रभावशाली रहा होगा क्योंकि उसने एक ऐसे अजेय दुर्ग की सस्थापना की जो अपने ढग का एक विचित्र एव अनुपन गढ़ है।

गृहादित्य और बलभी-राज्य—मान के मत मे बाप्पा के पिता गृहादित्य सोरठ-प्रदेश के बल्लिका-नगर (बलभी) के निवासी थे।[2]

ओझा जी का कहना है कि यह कथन निराधार है, क्योंकि "मेवाड की किसी ख्याति, शिलालेख और दानपत्र से इसका समर्थन नहीं होता है तथा वि० स० १७३२ (ई० स० १६७५ ई०) के बने हुए 'राजप्रशस्ति' महाकाव्य के समय तक भी मेवाड़ के राजाओं का बलभी पुर से आना कोई जानता ही नहीं था।" अबुल्फजल् के विचार मे शत्रु द्वारा परनाला विजय कर लेने पर बापा नामक छोटे लडके को लेकर उसकी माता मेवाड़ मे चली आई थी। इसके अतिरिक्त मुँहणोत नैणसी ने अपनी ख्यात (रचना काल १६४९ ई०) मे मेवाड़ के राजाओं का दक्षिण में नासिक-त्र्यबक की ओर राज्य करना लिखा है। साराश यह कि उस समय (१६४९ ई०) तक भी इनका बलभी से आना कोई नहीं जानता था।[3]

ऐसा प्रतीत होता है कि जैन विद्वानों द्वारा उपर्युक्त भ्रामक धारणा प्रचारित की गई। जैनों को बलभी का परिचय था क्योंकि उनमे यह बात प्रसिद्ध थी कि वीर संवत् ९८० (वि० स० ५१०= ई० स० ४५३) मे बलभी मे जैन सघ एकत्र हुआ जहाँ के देवर्धिगणि क्षमाश्रमण ने जैन-सूत्रों (सिद्धातों) का नया सस्कार किया।

जैन ग्रन्थ 'प्रबन्ध-चिन्तामणि' (रचना-काल वि० सं० १३६१=ई० स० १३०४) तथा धनेश्वर सूरि कृत 'शत्रुजय-माहात्म्य' मे राजा शीलादित्य के विषय की कथा मिलती है। पर उससे बलभी के शीलादित्य से अभिप्राय है न कि मेवाड के शासक से। मेवाड के शीलादित्य वि० सं० ७०३ (ई० स० ६४३) मे हुए थे (सामोली के लेख के अनुसार)। गुहिल (गृहादित्य) उसका पाँचवाँ पूर्व पुरुष था अतः उसका समय वि० स० ६२५ (ई० स० ५६८) के आस-पास स्थिर होता है। बलभी का नाश वि० स० ८२६ (ई०स० ७६९) मे सिन्ध के अरबों ने किया और ऊपर दिए हुए 'शत्रुजय' ग्रथ मे मेवाड़ के राजाओं के मूल पुरुष का बलभीपुर से मेवाड़ जाना नहीं लिखा है।

ऐसी दशा में गुहिल को बलभी के अन्तिम शीलादित्य का पुत्र मानना असभव है। वास्तव मे मेवाड़ के राजाओं का बलभी से कोई सम्बन्ध नहीं।[4]

---

[1] राजपूताने का इतिहास, पहली जिल्द, पृ० ९५, ३०५ (पाद-टिप्पणी १) [2] राज-विलास, छ० २४-२६, पृ० १८-९ [3] राजपूताने का इतिहास, पहली जिल्द, पृ० ३८५ [4] वही, जिल्द वही, पृ० ३८५-९

प्रसंग वशात् यहाँ पर एक बात और कह देना उचित प्रतीत होता है। मान के राज-विलास का आश्रय लेकर टॉड महोदय ने लिखा है "राणा राजसिंह (प्रथम) के राज्य की यादगार मे बनी हुई एक पुस्तक के प्रारम्भ मे लिखा है कि पश्चिम मे सोरठ (सौराष्ट्र) देश प्रसिद्ध है। जगली लोगों ने उस पर चढाई करके 'बाल-को-नाथ' को परास्त किया और परमार राजा की पुत्री के सिवा, सब बलभी के पतन मे मारे गए।"[1] इससे सबन्धित मान कवि की निम्न पंक्तियाँ हैं :—

"पच्छिम दिशा प्रसिद्ध देश सोरठ धर दीपत।
नगर वल्लिका नाथ जगर करि आसुर जीपत॥"[2]

ऊपर दी हुई पक्तियों पर विचार करने पर स्पष्ट हो जाता है कि बल्लिका-नाथ ने राक्षसों को परास्त किया, न कि वे स्वय पराजित हुए (जैसा कि टॉड महोदय मान बैठे हैं)। साथ ही परमार राजा की पुत्री के सिवा सब के मारे जाने की बात का राज-विलास में कही भी उल्लेख नहीं है। इसी प्रसंग मे ओझा जी लिखते हैं कि "राजविलास मे आगे यह भी लिखा है कि वहाँ के राजा का रघुवशी पुत्र गुहादित्य (गुहदत्त, गुहिल) मेवाड़ मे आया और नागद्राह (नागदा) नगर मे उसने सोलकी सग्रामसी की पुत्री धनवती के साथ विवाह किया। यह भी जैनों की पिछले समय की कपोल-कल्पना है। बल्लिका अर्थात् बलभीपुर का नाश होने के बाद वहाँ के राजवश का यहाँ आना सम्भव नहीं है।"[3]

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि राजविलास में मेवाड़ और बलभी संबंधी उल्लेख अप्रामाणिक है। उस पर जैन-धर्म में प्रचलित तत्सबधी विचार-धारा का प्रभाव है। मान कवि स्वयं जैन यति थे, अतएव वे अवश्य ही इन परम्परागत दन्तकथाओं से परिचित रहे होंगे। उन्होंने उन्हीं का उल्लेख अपने ग्रथ मे कर दिया है।

बापा रावल का विवरण—मान कवि ने बापा के पिता का नाम गुहादित्य (गुहिल) माना है, पर ओझा जी, शिलालेखों के आधार पर बापा को गुहादित्य से आठवीं पीढ़ी में हुआ मानते हैं।[4] जब बापा ११ वर्ष के हुए तो उनकी भेंट हारीत मुनि से हुई। इन मुनि ने बापा को वरदान दिया।[5] इन कथाओं से मिलती जुलती दो कथायें मुहणोत नैणसी ने अपनी ख्याति मे लिखी हैं।[6] सम्भवतः राज-विलास के रचयिता ने उक्त ख्यात से ही अपनी कथा ली है।

"इस कथा मे कुछ ऐतिहासिक तत्व नही दिखलाई पडता। इस के विषय मे केवल इतना ही कहा जा सकता है कि बापा की राजधानी नागदा के निकट उनके इष्टदेव एकलिग जी का मदिर था और वहाँ के मठाधिपति तपस्वी हारीत पर बापा की विशेष श्रद्धा रही होगी। इसी के आधार पर यह कथा गढी गई है, ऐसा प्रतीत होता है।"[7]

---

[1] राजपूताने का इतिहास, पहली जिल्द, पृ० ३८८ [2] राजविलास, छं० २४, पृ० १८ [3] राजपूताने का इतिहास, पहली जिल्द, पृ० ३८८, राजविलास, छं० २८-३०, पृ० १९-२० [4] वही, छ० ३१-४३, पृ० २०-१; राजपूताने का इतिहास, पहली जिल्द, पृ० ३९५ (पाद-टिप्पणी) [5] राजविलास, छं० ४४-५७, पृ० २२-४ [6] मुँहणोत नैणसी की ख्यात, पत्र १, पृ० २; पत्र ३, पृ० १ [7] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ४१६-९

"मान द्वारा वर्णित नागद्राह में होने वाले बापा के विवाह की कथा भी ऐतिहासिक नहीं प्रतीत होती है।[1] नागदा में भीमसी सोलंकी के राज्य होने की कथा अप्रामाणिक है। बापा या गुहिल के समय मे मेवाड पर सोलकियों के राज्य होने का कोई प्राचीन प्रमाण अब तक नही मिला है। बापा से आठवीं पीढी पूर्व पुरुष गुहिल के समय से ही मेवाड आदि पर इनका राज्य चला आ रहा था और नागद्राह (नागदा) इनकी राजधानी थी, जहाँ का राजा सोलकी नहीं था।[2]

इसी प्रकार बापा द्वारा चित्रकोट के शासक चित्रागद की सातवीं पीढी मे उत्पन्न चित्रंग मोरी से चित्तौड़ छीनने की बात मान की मन-गढंत कल्पना है।[3] उस दुर्ग पर बापा ने अपना अधिकार अवश्य कर लिया था, पर उसने उसे 'मनुराज' (मान) नामक राजा से लिया था। जैसा कि 'राजप्रशस्ति' महाकाव्य के इस कथन से स्पष्ट है :—

"ततः स निर्जित्य नृपं तु मोरी-जातीय भूपं मनुराजसंज्ञम्।
गृहीतवांश्चित्रित चित्रकूटं, चक्रेत्र राज्यं नृप चक्रवर्ती॥ सर्ग ३, श्लोक १८४"

उक्त कथन का 'मनुराज' राजा मान का ही सूचक है।"[4] "इसके अतिरिक्त चित्तौड़ के दुर्ग के निकट पूठोली गाँव के पास के मानसरोवर, जिसको मान मोरी (मौर्य्य) ने बनवाया था, से वि० सं० ७७० (ई०स० ७१३) का राजा मान का शिलालेख, उस समय तक मोरी के अधिकार मे चित्तौड़ का रहना, सिद्ध करता है।"[5]

इस सं ध मे निश्चय पूर्वक कुछ कहना कठिन है, पर उपर्युक्त प्रमाणों से ऐसा अनुमान होता है कि बापा ने चित्तौड मान ही से छीना था, चित्रग से नही, जैसा कि मान ने माना है।

आगे चलकर मान ने अपने ग्रथ मे लिखा है कि जब बापा चित्तौड के स्वामी हो गए तब सात दिवसोपरान्त हारीत मुनि ने उन्हे स्वप्न मे आकर रावल की पदवी प्रदान की।[6]

गुहिलों के शिलालेख आदि से पाया जाता है कि गुहिल से करण (कर्णसिह, रणसिंह) तक मेवाड़ के राजाओं की उपाधि राजा होनी चाहिए। कर्णसिंह के पुत्र क्षेमसिह (या उसके किसी उत्तराधिकारी) ने राजकुल या महाराजकुल (रावल या महारावल) उपाधि धारण की।[7] आरम्भ से ही इन्हे रावल कहना भ्रम है।

यद्यपि बापा के समय का इतिहास अन्धकार के गर्त में निहित है, तथापि सीमित प्राप्त सामग्री के आधार पर ऊपर जो कुछ विवेचन किया गया है, उससे सिद्ध हो जाता है कि मान के उक्त विषयक विवरण प्रायः काल्पनिक एवं अनैतिहासिक हैं। इसी प्रकार इस विलास की अन्य घटनाओं को भी समझना चाहिए।

विलास २

द्वितीय विलास में बापा के वंशजो का उल्लेख करते हुए मान कवि ने रावल समरसीह

---

[1] राजविलास, छं० ५८-७६, पृ० २४-६, छं० ८२-८, पृ० २७ [2] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ४१६ (पाद-टिप्पणी २ सहित) [3] राजविलास, छं० ८६-१३१, पृ० २७-३३ [4] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड पृ० ४१२ (पाद टिप्पणी १) [5] वही, खड वही, पृ० ४१३ [6] राजविलास, छं० १३५-८, पृ० ३४ [7] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खड, पृ० ४०४ (पाद-टिप्पणी २)

(रावल समरसिंह) के सम्बन्ध मे लिखा है कि "उन्होंने साँभर के सोम चहुआन की पुत्री पृथा से अपना विवाह किया और जयचन्द पंग की सेना का सहार करके पृथ्वीराज को दिल्ली का राज दिलाया।"[१] कहने की आवश्यकता नही है कि मान ने उक्त विवरण के लिए पृथ्वीराजरासो का आश्रय लिया है। इतिहास से विदित है कि "पृथ्वीराज की मृत्यु ११९२ ई० मे तथा समरसिंह का देहान्त १३०२ ई० मे हुआ था। अतएव मान कवि का उक्त कथन एकदम अनैतिहासिक है।"[२]

आगे इसी प्रकार मान ने रत्नसेन द्वारा अलाउद्दीन को पराजित किये जाने का उल्लेख करके अपनी असावधानी का परिचय दिया है।[३]

रत्नसिंह के बाद के राजाओं का वर्णन करते हुए यथास्थान मान कवि ने कुभा के द्वारा कुंभलमेर आदि के बसाने का उल्लेख किया है।[४] इतिहास से ज्ञात होता है कि "राणा कुम्भकरण ने कुम्भलगढ की प्रतिष्ठा कराई। उसने उस किले के चार दरवाजे बनवाये। इसी प्रकार उसने अन्य किले, मन्दिर आदि बनवाये थे।"[५] अतएव मान का उक्त कथन पर्य्याप्त मात्रा मे इतिहास-सम्मत है।

मान कवि ने राजा सग्रामसिंह का विवरण देते हुए लिखा है कि उन्होंने नरवर दुर्ग जीता।[६] उसके इस कथन से सभवतः राणा सागा के उन युद्धों से अभिप्राय है, जो उन्होंने मालवा के मुसलमान शासकों से लड़कर उन पर विजय प्राप्त की थी।[७] आगे चलकर कवि मान ने उदयसिंह द्वारा उदयपुर की स्थापना करने का उल्लेख किया है।[८] महाराणा ने इस नगर की नीव १५५९ ई० के लगभग डाली थी।[९]

मान के इस कथन की कि 'प्रताप ने अबदुल्लाह को मारा'[१०] इतिहास से साक्ष्य नही मिलती। वास्तव मे अब्दुल्लाह को जहाँगीर ने जून, १६०६ ई० मे फीरोज जंग की उपाधि देकर मेवाड़ पर भेजा था। उस समय मेवाड़ के सिंहासन पर महाराणा प्रताप के पुत्र महाराणा अमरसिंह विराजमान थे। उसने १६११ ई० मे राणपुर की घाटी के पास राजपूतों पर आक्रमण किया जिसमे वह पराजित हुआ।[११] अतएव मान कथित तद्विषयक उक्त कथन निराधार है।

आगे चलकर यथास्थान मान ने महाराणा जगत्सिंह के गुणों की प्रशसा की है। "यह महाराणा प्रजा-पालक, साहसी, वीर था और हेम आदि का तुलादान किया करता था।"[१२] इस सबंध में ओझा जी द्वारा दिये गये विवरण का साराश निम्नलिखित है :—

"महाराणा जगत्सिंह बडा दानी था। सिहासनारूढ होने के समय से ही प्रतिवर्ष एक चाँदी

---

[१] राजविलास, छं० ११-१३, पृ० ३६ [२] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ४८३ (पाद-टिप्पणी १) [३] विशेष विवरण के लिए देखिए द्वितीय खंड, अध्याय २, गोराबादल की कथा की ऐतिहासिकता, पृ० १९४ ९५ [४] राजविलास, छं० ३२, ३३, पृ० ३९-४० [५] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ६२०-५ [६] राजविलास, छ० ३४, पृ०४० [७] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ६६५-८, हरबिलास सारडा; महाराणा सांगा, पृ० ५८-७० [८] राजविलास, छं० ३५, पृ० ४० [९] राजपूताने का इतिहास, दूसरा खंड, पृ० ७२०-१ [१०] राजविलास, छं० ३५, ३६, पृ० ४० [११] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ७९५-७ [१२] राजविलास, छ० ३८-६०, पृ० ४१-३

की तुला किया करता था और १६४८ ई० से प्रतिवर्ष, सुवर्ण की तुला करने लगा। वह अपनी जन्म-गाँठ के दिन बडे-बडे दान दिया करता था। उसने वि० स० १७०४ (ई० स० १६४७) मे महाकाल और ओंकारनाथ की यात्रा की और वहाँ (ओंकारनाथ मे) ज्येष्ठवादि अमावस्या को सूर्य ग्रहण के समय फिर सुवरण-तुला दान किया।"[१]

ऊपर दिये हुए ऐतिहासिक विवरण से स्पष्ट है कि मान कवि ने महाराणा जगत्सिंह की दानशीलता का जो उल्लेख किया है, वह यथातथ्य है।

आगे चलकर राजविलास के रचयिता ने उदयपुर नगर की शोभा, राज सभा आदि का वर्णन किया है, जो वास्तविकता एवं सुन्दरता से ओतप्रोत है।[२]

राज सिंहजन्म—"महाराणा जगत्सिंह की महारानी जनादे के गर्भ से राणा-राजसिंह का जन्म हुआ था। बाल्यावस्था मे महाराज कुमार का लालन-पालन बडी सावधानी के किया गया था। यह बडे कुशाग्र-बुद्धि थे। ११ वर्ष की आयु प्राप्त करते समय तक वे अस्त्र-शस्त्र-सचालन आदि विद्याओं मे विशेष कुशल एवं चतुर हो गए थे।"[३] महाराणा राजसिंह के बाल्यकाल का जितना विस्तृत विवरण मान ने दिया है, उतना अन्यत्र अप्राप्य है।

विलास–३

महाराणा-राजसिंह का बूँदी मे विवाह—"महाराणा राजसिंह का प्रथम विवाह बू दी-नरेश राव छत्रसाल हाडा की ज्येष्ठ राजकुमारी के साथ हुआ था। उनकी छोटी राजकुमारी का विवाह जोधपुराधीश जसवन्तसिंह के साथ निश्चित किया गया था। प्रथम विवाह संस्कार राजसिंह का हुआ, तदनन्तर जसवन्तसिंह का।"[४]

श्री ओझा जी ने राजसिंह के इस विवाह के विषय मे कोई उल्लेख नहीं किया है; पर जसवन्तसिंह के जोधपुर-सिंहासनारुढ होने के सम्बन्ध में वे लिखते है :—

"पिता की मृत्यु के समय वह(जसवन्तसिंह) बूँदी मे विवाह करने के लिए गया हुआ था, जहाँ दुःखद समाचार (महाराजा गजसिंह की मृत्यु) पहुँचने और बादशाह की आज्ञा प्राप्त होने पर वह तत्काल सीधा शाही दरबार में उपस्थित हो गया। महाराज गजसिंह की मृत्यु ६ मई, १६३८ ई० को आगरे मे हुई और उसके पश्चात् महाराज जसवन्तसिंह का राज्याभिषेक हुआ।"[५] अतएव जसवन्तसिंह का विवाह १६३८ ई० मे हुआ था।

यदि मान के उक्त कथन को सत्य माना जाये तो महाराणा राजसिंह का यह विवाह भी १६३८ ई० मे हुआ होगा। ऐसी दशा में विवाह के अवसर पर राजसिंह की आयु ६ और जसवन्त सिंह की ११ वर्ष की रही होगी।

इस स्थल पर एक प्रश्न विचारणीय है कि जसवन्तसिंह आयु मे राजसिंह से २ वर्ष बडे थे तब बूंदी की बड़ी राजकुमारी का विवाह जोधपुर मे न होकर मेवाड में क्यों हुआ? सम्भवतः

---

[१] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खड, पृ०८३५-७ [२] राजविलास, छं० ६१-१४५, पृ० ४३-५४ [३] वही, छं० १४६-२१२, पृ० ५४-६१ [४] वही, छं० १-७६, पृ० ६१-७६ [५] राजपूताने का इतिहास, चौथी जिल्द, पहला भाग, पृ० ४०७, ४१३, ४६८; पं० विश्वेश्वर नाथ रेउ, मारवाड़ का इतिहास, प्रथम भाग, पृ० २१० (पाद-टिप्पणी १ सहित)

मेवाड़ की मान-मर्यादा और प्रतिष्ठा की निष्कलकता ही के कारण ऐसा किया गया था। इसके अतिरिक्त महाराणा जगतसिंह की एक कुमारी (राजसिंह की बहिन) का पाणिग्रहण बूंदी के राव छत्रसाल हाड़ा के पुत्र भावसिंह के साथ हुआ था।[1] सभव है कि इस सबध का भी उक्त विवाह-सम्बन्ध पर कुछ प्रभाव पडा हो।

अन्त में इस विषय मे केवल इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि मान का उक्त कथन ऐतिहासिक ही प्रतीत होता है।

विलास—४

महाराणा राजसिंह ने अपने कुंवरपदे के समय 'सर्व ऋतु-विलास' नामक महल और बावड़ी बनवा कर एक बाग लगवाया था।[2] मान ने इसका विस्तृत वर्णन किया है।

विलास—५—७

महाराणा राजसिंह का राज्याभिषेक—महाराणा जगत्सिंह की मृत्यु के उपरान्त २३ वर्ष की अवस्था मे १० अक्टूबर, १६५२ ई० को महाराणा राजसिंह सिंहासनारुढ हुए और राज्याभिषेकोत्सव १६५३ ई० ४ फरवरी को मनाया गया। उस अवसर पर उनके भाई, पुत्र आदि वर्त्तमान थे। कवि ने उन सभी के गुणों का उल्लेख किया है,[3] उस समय महाराणा के कुँवर भीमसिंह का वर्त्तमानत्व दिखलाकर मान ने अपनी अनभिज्ञता का परिचय दिया है। वास्तव मे कुवर भीमसिंह का जन्म वि० सं० १७११, श्रावण वदी अमावस्या मगलवार (१६५४ ई०) को हुआ था। ऐसी परिस्थिति मे उनका उक्त उत्सव के समय वर्त्तमान रहना अविश्वसनीय है।[4]

"राज्याभिषेक के उपरान्त टीकादारी की प्रथा के अनुसार महाराणा राजसिंह दिग्विजय के लिए निकले। उन्होंने ७ दिन तक मुगल राज्यान्तर्गत मालपुरे को लूटा। मुग़ल सेना पराजित होकर भाग गई और इनका यश अधिक विस्तृत हो गया।"[5]

इतिहास लेखकों ने मालपुरे की लूट के कुछ और ही कारण बतलाए हैं। उनके मत मे "मुगल सम्राट् द्वारा चित्तौड़ दुर्ग की मरम्मत बन्द करवा कर बुर्ज और कँगूरे गिरवा देने (१६५४ ई०) तथा मंडलगढ, जहाज़पुर आदि परगनों को शाही सीमा मे मिला लिए जाने के कारण महाराणा बदला लेने का अवसर ढूँढ रहा था। शाहजहाँ की बीमारी के अवसर पर उत्तराधिकार-युद्ध में मुगल-साम्राजय की शक्ति को संलग्न देखकर महाराणा ई० स० १६५८,२ मई को चित्तौड से चलकर मालपुरे पर पहुँचा और वहाँ ६ दिन तक रहकर उसे लूटा। यहाँ बडी समृद्धि उसके हाथ लगी। तदनन्तर अन्य स्थानों को लूटता हुआ चातुर्मास के पूर्व ही वह उदयपुर लौट आया।"[6]

महाराणा का राज्याभिषेक १६५२ ई० मे हुआ था और उन्होंने छः वर्षों के उपरान्त मालपुरा को लूटा। ऐसी दशा में मान कवि कथित टीकादारी की प्रथानुसार उस स्थान को लूटना इतिहास के विरुद्ध ठहरता है।

---

[1] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८३६ (पाद टिप्पणी ४ सहित) [2] वही, खंड वही, पृ० ८८५; राजविलास, छं० १-२३, पृ० ७६-८२ [3] वही, छं० १-६३, पृ० ८२-६५, राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८४२ [4] वही, वही, पृ०८८८ (पाद-टिप्पणी २) [5] राजविलास, छं० १-३६, पृ० ६६-१०३ [6] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८४३-४

महाराणा राजसिंह और रूपकुमारी का विवाह—"मारवाड़ मंडलातर्गत रूपनगर नामक स्थान मे रूपसिंह राठौर के पुत्र मानसिंह राज्य करते थे। औरंगजेब ने उसकी बहिन रूपकुमारी से विवाह करना चाहा। पर राजकुमारी ने एक विप्र द्वारा महाराणा राजसिंह के पास पत्र भेजा। इस पत्र को पाकर महाराणा ने रूपनगर मे पहुँच कर रूपकुमारी से विवाह किया।"[1] इस घटना का वर्णन करते हुए ओझा जी ने मानसिंह की राजधानी का नाम कृष्णगढ और उसकी बहिन का नाम चारुमती माना है।[2] रूपसिंह राठौर ने रूपनगर नामक नगर की स्थापना की थी, अतः मान द्वारा उसे वहा का शासक बतलाना ठीक है। शेष घटनाएँ मान तथा ओझा जी के ग्रथों में समान हैं अतएव मान का उक्त कथन ऐतिहासिक मान लेने मे कोई हानि नहीं है। यह घटना १६६० ई० की है।

विलास ८

राजसमुद्र-निर्माण—"एक बार महाराणा राजसिंह चतुर्भुज नामक तीर्थ-स्थान की यात्रा करने के लिए गए। वहाँ से लौटते समय उन्होंने गोमती नामक नदी को देखा। वहीं पर उसका बाँध बँधवाने का निश्चय करके वे उदयपुर लौट आए।

१७१७ वि० (१६६० ई०) मे राजस्थान में भयङ्कर दुर्भिक्ष पडा। प्रजा की असह्यावस्था चरम सीमा को पहुँच गई। महाराणा राजसिंह ने प्रजा-कष्ट निवारणार्थ गोमती नदी का बाँध बँधवाना प्रारम्भ कर दिया। सात वर्षोपरांत वर्षा होने पर नदी जलधि सदृश्य प्रतीत होने लगी। महाराणा ने वहाँ पर एक महल तथा एक विष्णु-मदिर भी निमित कराए। उन्होंने १७३२ वि० (१६७५ ई०) माघ मास में मूर्ति की प्रतिष्ठा कराई। इस अवसर पर महाराणा ने तुलादान तथा अन्य प्रकार के दानादि धार्मिक कृत्य किए। उस सरोवर का नाम राजसमुद्र रक्खा गया।"[3]

राज-सरोवर के सबंध मे श्री ओझा जी ने, 'रणछोडराय' कृत 'प्रशस्ति-महाकाव्य' के आधार पर, जो विवरण दिया है, उसका सारांश इस प्रकार है :—

"राज्य पाने के पश्चात् (१६६१ ई०, नवम्बर मे) रूपनारायण के दर्शन को जाते समय महाराणा ने राजनगर के पास की पहाडियों के मध्य बहती हुई गोमती नदी को देखा और वहाँ पर एक तालाब बनवाने का निश्चय किया।

इस तालाब के बनवाने के कई कारण प्रचलित हैं। कुछ लोगों के मतानुसार (कुँवरपदे में) विवाह के लिए जयसलमेर जाते समय नदी के वेग के कारण राजसिंह को वहाँ दो तीन दिन तक रुक जाना पडा। इसीलिए उन्होंने नदी को रोक कर उस तालाब को बनवाने का विचार किया। कुछ व्यक्तियों का कथन है कि महाराणा ने एक पुरोहित, एक रानी, एक कुँवर और एक चारण को मारा, जिनकी हत्या से मुक्त होने के लिए यह तालाब बनवाया। कुछ विद्वानों का कहना है कि दुर्भिक्ष के कारण प्रजा की सहायता करने के लिए यह तालाब बनवाया। सभव है कि अकाल पीड़ितों को सहायता देने और तालाब के जल से पैदावार बढ़ाने के लिए ही यह बनवाया गया हो।

---

[1] राजविलास, छं० १-१०७, पृ० १०३-१८ [2] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८५१-२ [3] राजविलास, छं० १-१७२ पृ० ११८-४८

रामनगर के अलग-अलग बाँधों की खुदाई प्रारम्भ हुई (१ जनवरी, १६६२ ई०)। १७ अप्रैल, १६६५ ई० को आधार-शिला रखवाकर चुनाई का काम प्रारम्भ हुआ। १४ जनवरी, १६७६ ई० को प्रतिष्ठा का कार्य प्रारम्भ हुआ। महाराणा ने नवमी (वि० सं० १७३१ श्रावण सुदी) के दिन सपरिवार मडप मे प्रवेश करके पूजन, हवनादि का कार्य किया। उसी दिन उन्होंने रात्रि-जागरण किया। पाँच दिन मे १४ कोस की नगे पैर परिक्रमा समाप्त करके पूर्णिमा के दिन महाराणा ने प्रतिष्ठा की पूर्णाहुति दी। उस दिन राजसिंह ने तुलादान करते समय अपने पौत्र अमरसिंह को भी अपने साथ बिठा लिया। उसी दिन सप्त सागर आदि अनेक दान दिये गये। इस तालाब के बनवाने मे एक करोड़ पाँच लाख सात हजार छः सौ आठ (१०५०७६०८ रुपये) व्यय हुए।

यह झील उदयपुर नगर से ४० मील उत्तर में है। गोमती नदी इसमे गिरती है और जल के निकास के लिए तीन स्थान रक्खे गये हैं। वहाँ पर महाराणा राजसिह के बनवाये हुए महल हैं जो इस समय टूटी-फूटी अवस्था मे हैं।"[1]

राजसरोवर सम्बन्धी मान और श्री ओझा जी द्वारा कथित ऊपर जो विवरण दिये गये हैं उनके तुलनात्मक अध्ययन से यह सार निकलता है :—

मान ने महाराणा की तीर्थ-यात्रा मे चार भुजा (चतुर्भुज) और ओझा जी ने रूपनारायण का उल्लेख किया है। यहाँ पर यह बतला देना आवश्यक है कि "काकडोली से अनुमान १० मील पश्चिम के गडबोर गाँव मे चारभुजा का प्रसिद्ध विष्णु-मन्दिर है। चारभुजा से ३ मील के लगभग सेवंत्री गाँव में रूपनारायण का प्रसिद्ध विष्णु-मन्दिर है।"[2] ऐसी दशा मे महाराणा राजसिह एक तीर्थ-स्थान को जाते समय दूसरे को भी अवश्य ही गये होंगे, क्योंकि दोनों स्थानों मे केवल तीन मील का व्यवधान है। अतएव मान का चारभुजा का उल्लेख करना ठीक प्रतीत होता है। ऊपर कहा जा चुका है कि इस तालाब के बनवाने के अनेक कारणों मे से दुर्भिक्ष से पीडित प्रजा का कष्ट-निवारण करना ही अधिक सभावित कारण लगता है।

मान कवि के अनुसार बाँध के बनने मे सात वर्ष और राजप्रशस्ति-महाकाव्य के मत मे चौदह वर्ष के उपरान्त पूर्णाहुति एवं प्रतिष्ठा संस्कार हुआ था।

राजविलासकार ने बाँध के पानी को सुखाये जाने और महल बनने मे होने वाले व्यय की सख्या क्रमश. एक लाख दीनार तथा नौ लाख रुपये मानी है। प्रशस्ति-महाकाव्यकार ने इसके बनवाने में एक करोड़ पाँच लाख, सात हजार छः सौ आठ रुपये व्यय होना लिखा है।

शेष विवरण मे कोई विशेष अन्तर नहीं है। इतने विशाल कार्य के लिए भृत्य, शकट, बैल आदि की मान द्वारा उल्लिखित सख्या अत्युक्ति पूर्ण होने पर भी वास्तविक के बहुत निकट पहुँच जाती है, ऐसा अनुमान लगाना अनुचित नहीं है। प्रत्येक विभाग का ब्यौरेवार विस्तृत विवरण मान कवि की प्रतिभा का विशेष परिचय देता है।

विलास–९

औरंगज़ेब का उत्तराधिकार-युद्ध—इस विलास के आरम्भ में मान कवि ने, शाहजहाँ

---

[1] राजपूताने का इतिहास, पहली जिल्द, पृ० ३१०-१; वही, तीसरा खड, पृ० ८७६-८४

[2] वही, पहली जिल्द, पृ० ३४०-१

के बीमार पडने के अवसर उसके शाहजादों में, जो उत्तराधिकार-युद्ध हुआ था, उसकी प्रमुख घटनाओं—उज्जैन मे औरगजेब द्वारा जसवन्तसिंह राठौर का पराजित किया जाना, धौलपुर के स्थान पर शाह शुजा का हार कर नदी पार भाग जाना, औरगजेब का ईश्वर को साक्षी करके मुराद से मित्रता करना और अंत मे उसे मरवा डालना, दारा की हत्या करा देना तथा उसके द्वारा अपने पिता शाहजहाँ को बन्दीगृह मे डाल देना आदि का उल्लेख किया है।[1] इन घटनाओं से सम्बन्धित ऐतिहासिक विवरण अन्यत्र दिया जा चुका है।[2] यहाँ उसके आधार पर मान कथित घटनाओं के तथ्यातथ्य का उल्लेख कर देना ही पर्याप्त होगा।

औरंगजेब और जसवन्तसिह मे युद्ध उज्जैन मे नहीं वरन् उसके निकट धर्मत नामक स्थान पर हुआ था, जिसमे जसवन्तसिह पराजित हुए थे।

मान का यह कथन कि औरगजेब ने धौलपुर के निकट शुजा को हराया भ्रमात्मक है। यह युद्ध सामूगढ मे हुआ था। उस स्थल पर वास्तव मे दारा पराजित हुआ था। शुजा को औरगजेब ने खजुआ नामक स्थान पर हराया था। इसी स्थल पर महाराजा जसवन्तसिह रात्रि के समय शाही सेना को छोड़कर बिना युद्ध किए ही, चले आए थे और २३ जनवरी, १६५९ ई० को जोधपुर पहुँचे थे।

उपर्युक्त मे से शेष घटनाओं सम्बन्धी मान के विवरण में कोई उल्लेखनीय ऐतिहासिक व्यतिक्रम नही है।

इसी प्रसग मे मान ने औरगजेब और दारा के मध्य अजमेर मे होने वाले युद्ध का उल्लेख किया है।[3] तत्सम्बन्धी ऐतिहासिक विवरण का सार इस प्रकार है :—

"सामूगढ के युद्ध में पराजित होने के पश्चात् दारा आगरा, देहली आदि स्थानों पर होता हुआ इधर-उधर भागता फिरा। कालान्तर मे कच्छ होता हुआ वह अहमदाबाद में शाहनवाज़ खाँ से धन एवं अन्य सामग्री प्राप्त करके दक्षिण जाने और जसवन्तसिंह से मिलने के उपाय सोचने लगा। यह समाचार पाते ही औरगजेब अजमेर की ओर चल पडा। महाराजा जयसिंह की मध्यस्थता से बादशाह ने जसवन्तसिह को क्षमा कर दिया। इस कारण महाराज जसवन्तसिह ने दारा से मिलने का विचार त्याग दिया। सब ओर से निराश होकर दारा ने देवराय (दौराई) के निकट की पहाड़ियों का आश्रय लिया, जहाँ से वह कई दिन तक औरगजेब का सामना करता रहा। पर, अन्त में पराजित होकर यह भाग खड़ा हुआ। राजा जयसिह उसके पीछे रवाना किए गए। जसवन्तसिंह इस युद्ध के अवसर पर वहाँ नहीं थे।"[4]

मान और इतिहास मे दिए हुए उक्त विवरणों में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

औरंगज़ेब का आतंक—इसके आगे मान कवि ने औरगजेब द्वारा गोंडवाना और दौलताबाद की विजय का उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त उसने औरगज़ेब के प्रभुत्व और आतंक

---

[1] राजविलास, छं० ६-१४, १६, पृ० १४६ ५० [2] देखिए द्वितीय खंड अध्याय ३, भूषण ग्रंथावली की ऐतिहासिकता के अंतर्गत औरंगज़ेब के उत्तराधिकार युद्ध का विवरण, पृ० २३३-३४; वही, अध्याय ५, छत्रप्रकाश की ऐतिहासिकता, के अन्तर्गत उत्तराधिकार-युद्ध का विवरण [3] राजविलास, छं० १५, पृ० १५० [4] राजपूताने का इतिहास, चौथी जिल्द, पहला भाग, पृ० ४४४-८

प्रदर्शनार्थ पूना, बीजापुर, दक्षिण, आसाम, काश्मीर, पंजाब आदि पर उसके अधिकार एवं आतंक का उल्लेख किया है।[1] इतिहास से विदित होता है कि औरंगजेब के समय मे उक्त सभी स्थानों पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मुगल सम्राट् का आधिपत्य अथवा आतंक वर्तमान था, चाहे वह थोडे ही समय के लिए क्यों न रहा हो।

औरंगज़ेब और जसवतसिंह—मान के कथन से विदित होता है कि औरंगजेब जसवतसिंह से अप्रसन्न था क्योंकि उन्होंने उत्तराधिकार-युद्ध मे उसका विरोध किया था। वह उसके दरबार में कभी नहीं गए। औरंगजेब ने प्रतिशोध-भावना से प्रेरित होकर उन्हे मरवा डालने के षड्यन्त्र रचे थे।[2]

इतिहास से ज्ञात होता है कि औरंगजेब ने जसवतसिंह को मार्च, १६५६ ई० मे गुजरात का सूबेदार नियुक्त किया, जहाँ वह १६६२-६३ ई० तक रहा। फिर वह शाइस्ता खाँ के साथ शिवाजी के विरुद्ध दक्षिण भेजा गया। वहाँ वह १६६५ ई० तक मराठों से युद्ध करता रहा। तदुपरान्त औरंगजेब ने उसे आगरा बुला लिया। १६६६ ई०मे वह ईरान के विरुद्ध भेजा गया। इसी बीच शाह ईरान की मृत्यु हो जाने पर वे मार्ग मे लाहौर से ही वापस बुला लिए गए। वे १० मार्च, १६६७ ई० को आगरे पहुँचे। इसके पश्चात् इसे दक्षिण भेज दिया गया। वहाँ १६७० ई० तक रहकर वह मराठों से सधि-विग्रह करता रहा। यह १६७० ई० से १६७३ ई० के आरभ तक पुन. गुजरात का सूबेदार रहा। सितम्बर-अक्टूबर, १६७३ ई० मे शाही आज्ञा से वह काबुल की ओर चला। वहीं २८ नवम्बर, १६७८ ई० मे उसका देहांत हो गया।[3]

ऊपर दी हुई महाराजा जसवतसिंह की सक्षिप्त जीवनी से विदित होता है कि उनका सारा जीवन मुगल-सम्राट् की सेवा में व्यतीत हुआ। वे जोधपुर में प्राय: नहीं के बराबर रहे। समय-समय पर जागीर पुरस्कार आदि देकर औरंगज़ेब उन्हे सम्मानित करता रहा। ऐसी दशा में मान कवि का यह कथन कि वे कभी भी औरंगज़ेब के दरबार मे नही गए, एकदम निराधार है। औरङ्गज़ेब उनकी सेवाओं के उपलक्ष्य मे उन्हे पुरस्कृत किया करता था, न कि अपने जाल में फँसाने के लिए।

हाँ, एक बात अवश्य थी। औरंगजेब महाराजा जसवंतसिंह से असतुष्ट था। वह उनको सदैव संदेह की दृष्टि से देखा करता था कि वे शिवाजी से मैत्री-भाव रखते थे। वह उनसे प्रतिशोध लेना चाहता था और सदैव अवसर की प्रतीक्षा मे रहता था। वह उनकी शक्ति से भी परिचित था। इसी कारण से उन्हे वह दूरस्थ सूबों—दक्षिण, गुजरात, काबुल आदि—में रखता था जिससे वे राजधानी के निकट रहकर उसके विरुद्ध कोई षड्यन्त्र न कर बैठें। इस सबंध मे खफ़ी खाँ का कथन विचारणीय है। वह लिखता है कि "वह (औरंगजेब) धर्मत युद्ध, खजुआ का विश्वासघात और देवराई पर जसवंतसिंह की डॉवाँडोल नीति को भूला न था, वरन अवसर पाकर उसके उत्तराधिकारी से बदला लेने की सोचता रहा।"[4] और उसने ऐसा किया भी, जैसा कि आगे

---

[1] राजविलास, छं० १८-३०, पृ० १५०-२ [2] वही, छं० ३१-३५, पृ० १५२-७
[3] राजपूताने का इतिहास, चौथी जिल्द, पहला भाग, पृ० ४४८-५६, ४५८-६१, ४६४, ४६६-७
[4] औरंगज़ेब, भाग ३, पृ० ३६८

चलकर लिखा जायेगा। अतएव मान कवि का प्रतिशोध आदि संबंधी कथन तथ्यपूर्ण एवं मनोवैज्ञानिक है।

जसवन्तसिंह और बूँदी-नरेश अन्तिम समय तक औरगज़ेब के प्रति स्वामि-भक्त रहे। वह उन्हें कूट-नीति से अपनी ओर मिलाए रहा जिससे जोधपुर, मेवाड़, और बूँदी ऐक्य स्थापित करके उसकी सत्ता को भारी धक्का न पहुँचावें। अतएव उक्त तीनों राज्यों की सगठित शक्ति से औरगजेब के आशंकित रहने की मान कथित बात को कोरी कल्पना नही कहा जा सकता।

औरंगज़ेब का जोधपुर पर अधिकार—मान के कथनानुसार जसवतसिंह के मरने पर मुग़ल-सम्राट् ने उसके एक वर्षीय युगल पुत्रों से बदला लेना चाहा। औरगजेब ने शाहज़ादा (अकबर) को जोधपुर भेजा। राजपूतों ने रात्रि मे छापा मार कर शाहज़ादे को मार भगाया। तब औरगजेब ने राठौरों के पास सन्धि-प्रस्ताव भेजा। वे एक वर्षीय पुत्र को लेकर उससे अजमेर में मिले। सम्राट् उसको लेकर दिल्ली चला आया। अन्त मे राठौरों ने दिल्ली मे भयकर मार काट मचा दी। वे राजकुमार को लेकर जोधपुर सकुशल जा पहुँचे। इस पर औरंगजेब ने स्वयं जोधपुर की ओर प्रस्थान किया।"[1]

उक्त घटनाओं से सबन्धित ऐतिहासिक विवरण का उल्लेख अन्यत्र दिया जा चुका है।[2] यहाँ पर उसके आधार पर तुलनात्मक अध्ययन संबंधी निष्कर्षों का उल्लेख करना पर्याप्त होगा :—

मान कवि ने उक्त घटनाओ के वर्णन में क्रम एव वास्तविकता का ध्यान नही रक्खा है। उसका यह कहना कि जसवन्तसिंह के दोनों पुत्र एक वर्ष के थे, अनर्गल है। इन दोनों राजकुमारों का जन्म १९ फरवरी, १६७९ ई० को हुआ था। उस समय औरगजेब अजमेर में था। उन कुमारों मे से एक की मृत्यु हो चुकी थी। कवि का यह कथन कि राठौर सरदार अजीतसिंह को लेकर औरंगजेब से अजमेर मे मिले, इतिहास-विरुद्ध है। अजमेर मे सम्राट् को अजीतसिंह के जन्म की केवल सूचना ही मिली थी। उसने कुमारों को सीधा दिल्ली बुलवाया था। औरगज़ेब अजमेर से लौटकर २५ मई, १६७९ ई० को देहली पहुँच गया था और अजीतसिंह वहाँ जून, १६७९ ई० में पहुँचे थे।

इसी प्रकार इस अवसर पर शाहज़ादा (अकबर) का जोधपुर मे जाकर पराजित होकर भागना ऐतिहासिक विवरण के प्रतिकूल पड़ता है। वास्तव में उस समय शाहज़ादा औरगजेब के पास अजमेर मे ही रहा था तथा जोधपुर को अन्य सेनापति भेजे गए थे। मान का यह कथन कि मुगल जोधपुर से हारकर भाग आए, इतिहास के विपरीत पड़ता है। सच बात तो यह है कि उस समय मुग़लों ने जोधपुर पर अपना अधिकार कर लिया था। औरगजेब द्वारा राठौरों के पास सन्धि प्रस्ताव भेजे जाने की बात भी काल्पनिक प्रतीत होती है। शेष बातें—मारवाड पर शाही सेना का आक्रमण, देहली मे राठौरों द्वारा मारकाट मचा कर अजीतसिंह की रक्षा करना—आदि घटनायें इतिहास-सम्मत हैं।

---

[1] राजविलास, छं० ६६-१७०, पृ० १२७-७५ [2] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ५, छत्रप्रकाश की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत जोधपुर पर औरंगज़ेब का आक्रमण, (तथा राजपूतानें का इतिहास, चौथी जिल्द, प्रथम खंड, पृ० ४६९, वही, वही, भाग द्वितीय, पृ० ४७७-४८३, ४८७-८; पं० विश्वेश्वरनाथ रेउ; मारवाड़ का इतिहास, प्रथम भाग, पृ० २४८-५४)

अजीतसिंह का महाराणा राजसिंह के पास जाना—"जोधपुर पर औरंगजेब के आक्रमण करने पर राठौरों ने सिरोही के विजेता तथा अन्य गुण-सम्पन्न महाराणा राजसिंह की शरण में बालक अजीतसिंह को भेजा। अजीतसिंह ने महाराणा को एक हाथी, ११ अश्व, एक तलवार, एक कटार और एक बहुमूल्य हीरा भेंट किया। महाराणा ने उन्हें १२ गाँव की जागीर देकर कैलवाडा में निवास स्थान दिया।"[1]

महाराणा राजसिंह के यहाँ अजीतसिंह के रहने के सम्बन्ध में इतिहास से ज्ञात होता है कि "देहली से आकर अजीतसिंह का पालन-पोषण आबू की एकान्त कन्दराओं मे होने लगा। औरंग-जेब की हिंदू-धर्म-संहारिणी नीति का विरोध करने के लिए सीसोदिया और राठौर परस्पर मिल गये। अजीतसिंह की माता मेवाड की राजकुमारी थी। राजसिंह अपना सम्बन्धी होने अथवा एक सच्चा

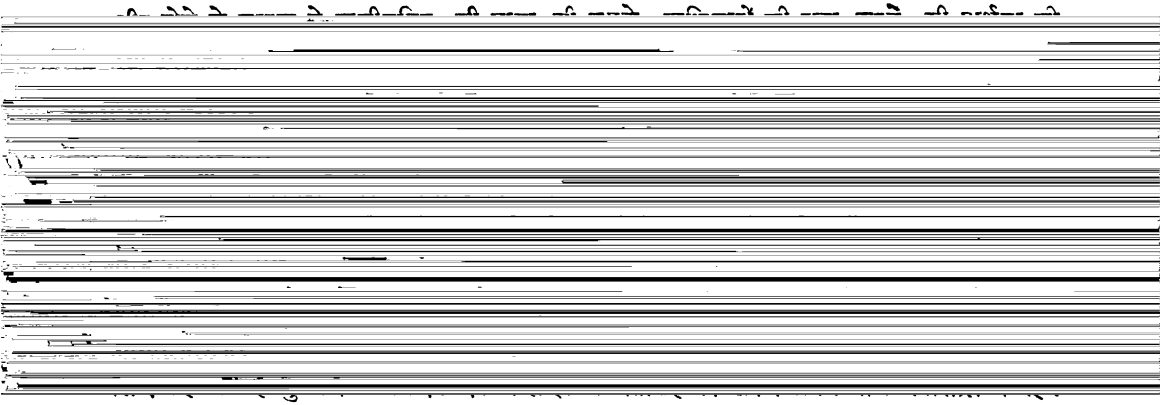

लगी।"[4] ध्यानपूर्वक विचार करने पर रेउ महोदय के उक्त कथन का वैषम्य स्पष्ट हो जाता है। एक ओर तो सिरोही के राव अजीतसिंह को रखने के लिए प्रस्तुत नही हुए और दूसरी ओर उन्हें एक ब्राह्मणी गुप्त रूप से छिपाये रही। किसी को इसका पता न लगना आश्चर्यजनक लगता है। औरंग-जेब ने उनका पता लग ने के लिए प्राणपण से प्रयत्न किया होगा। अतएव अजीतसिंह को एक ही स्थान पर न रखकर इधर-उधर अवश्य ले जाया गया होगा। इस समय अजीतसिंह को एक शक्तिशाली सरक्षक की आवश्यकता थी। महाराणा राजसिंह से बढकर कौन उनका हितैषी, निकटस्थ संबधी और सहायक हो सकता था। अतएव उनका मेवाड जाना, चाहे वह अल्प काल ही के लिए क्यों न रहा हो, निर्विवाद है।

इसी प्रसंग में रेउ महोदय ने मान द्वारा वर्णित अजीतसिंह की ओर से महाराणा को जो भेट दी गई थी उसका भी खंडन किया है। उन्होंने लिखा है "कि मुगलो द्वारा मारवाड़ पर अधिकार कर लेने और स्वर्गीय महाराणा जसवन्तसिंह का सारा सामान सम्राट् द्वारा छीन लेने के कारण अजीतसिंह उक्त भेट देने मे असमर्थ थे।"[5]

---

[1] राजविलास, छं० १७१-२०६, पृ० १७५-८३ [2] औरंगज़ेब, भाग ३, पृ०३७८, ३८१-४ [3] राजपूताने का इतिहास, जिल्द ४, भाग २, पृ० ४८८-९ (पाद-टिप्पणी १, २ सहित) [4] मारवाड का इतिहास, प्रथम भाग, पृ० २५४-६ (पाद-टिप्पणी ५, ६ सहित) [5] वही, वही,

इस सम्बन्ध में यह बात विचारणीय है कि उस समय से आगामी तीस वर्ष पर्य्यन्त राठौर वीर युद्ध में मुग़लों के दाँत खट्टे करते रहे। इतनी लम्बी एवं भयंकर लडाई के लिए उन्हें महान् कोष तथा अन्य साधनों की आवश्यकता पडी होगी। इन दिनों मारवाड में अशान्ति थी। उस पर मुगलों का अधिकार हो चुका था। उक्त प्रदेश मे धनोपार्जन करना अथवा सरलतापूर्वक वहाँ से धन प्राप्त करना कठिन था। तो भी वे इतने बडे युद्ध का व्यय जुटाने में सफल हुए थे। इसके लिए उनके पास पैतृक धन अवश्य ही रहा होगा, यद्यपि महाराजा जसवन्तसिह की अत्यधिक सम्पत्ति को औरजेब ने अपने अधिकार मे कर लिया था। साथ ही अन्य साधनों से भी राठौरों ने धन प्राप्त किया होगा। अतएव महाराणा से मिलते समय उन्होंने कुछ न कुछ अवश्य ही उन्हे भेंट-स्वरूप प्रदान किया होगा। हाँ, यह हो सकता है कि उक्त भेंट में दी गई सम्पत्ति का कवि ने अत्युक्तिपूर्ण वर्णन कर दिया हो।

अतः मान का यह कथन—अजीतसिह का मेवाड़ जाना और महाराणा को भेंट देना—एक दम निराधार नहीं माना जा सकता।

इस विलास मे प्रसगवशात् मान कवि ने महाराणा राजसिंह को सिरोही-विजेता कहा है।[1] "यह घटना वि० सं० १७२० (ई० स० १६६३) की है। उदयभान अपने पिता अखैराज को बन्दी बनाकर स्वय सिरोही का स्वामी बन गया था। महाराणा राजसिंह ने राणावत रामसिंह को ससैन्य भेजकर उदयभान को निकाल कर अखैराज को पुनः सिहासनारुढ कराया था।"[2] इस प्रसग मे जिन अन्य घटनाओं का उल्लेख कवि ने किया है, उनका विवरण यथास्थान दे दिया गया है।

विलास १०-१८

महाराणा राजसिंह और मुग़लों मे युद्ध—मान के कथनानुसार "औरंगजेब दिल्ली से चलकर अजमेर पहुँचा। उसने अजीतसिह को मागा पर महाराणा ने उन्हे देने से मना कर दिया। युद्ध की तैयारी करके महाराणा पार्वतीय प्रदेश की ओर चले गए और 'नेनबारा' दुर्ग मे जाकर रहने लगे।

औरंगजेब की सेना अजमेर से चलकर उदयपुर के निकट पहुँची। सम्राट् की आज्ञा से शाहज़ादा अकबर आगे बढा। उसने चित्तौड़ आदि स्थानों पर अपना अधिकार कर लिया। महाराणा ने भी उसका सामना करने के लिए सेना भेजी।

'देवसूरी' नामक स्थान पर राजपूतों ने मुग़लों की सेना को मार भगाया और राजपूतों की एक टुकड़ी ने उदयपुर मे वीरतापूर्वक युद्ध करके शत्रु को पराजित किया।

'नेनबारा' के निकट पराजित होकर मुग़ल सेना के अली हुसेन, सादुल्लाह खाँ, अकबर आदि लगभग पच्चीस कोश तक भागे।

रावत केशरीसिह के पुत्र गंगासिंह सगताउत ने चित्तौड़ पर आक्रमण करके मार्ग में जाते हुए औरंगजेब के सौ हाथियों में से दश-बीस अच्छे हाथी छीन लिए। उन्होंने वे हाथी महाराणा को भेंट किए।

औरंगज़ेब कई वर्षों तक चित्तौड़ में छावनी डाले पड़ा रहा। महाराणा के राजकुमार

---

[1] राजविलास, छं० १७५, पृ० १७७ [2] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड०, पृ० ८५३-४

भीमसिंह ने औरंगजेब के सूबा गुजरात पर आक्रमण किया। सब से प्रथम उन्होंने ईडर को लूटा। महाराणा के बुला लेने पर वे ईडर, बड़नगर, सिद्धपुर आदि स्थानों को लूटकर वापस लौट आए।

उधर बधनोर पर रुहेला खा रुहेला की अध्यक्षता मे आक्रमण करने वाली सेना को बधनोर के स्वामी सॉवलदास ने मार भगाया।

साथ ही महाराणा के मत्री दयालशाह ने मालवा पर आक्रमण करके बहुत सा धन प्राप्त किया।

शाहज़ादा अकबर चित्तौड़ में पड़ा था। महाराज कुमार जयसिंह ने अन्य वीरों को लेकर उस पर आक्रमण किया। घोर सग्राम के पश्चात् शाहजादा अकबर अजमेर भाग गया। राजपूतों ने उसके डेरे आदि लूटकर बहुत सा धन प्राप्त किया। विजयी होकर महाराजकुमार जयसिंह अपने घर को लौट गए।"[1]

उक्त युद्धों के विषय मे इतिहास के विवरण का सार यह है :—

"बादशाह (औरंगजेब) ने बड़ी सेना के साथ ता० ३ सितम्बर, १६७९ ई० को महाराणा के विरुद्ध प्रस्थान किया। उसने उसी दिन अकबर को अजमेर में पहुँचने के लिए रवाना किया। वह स्वयं १३ दिन में वहाँ पहुँचा।

महाराणा ने देववारी के पहाड़ी मार्ग को बन्द कर दिया और चित्तौड-दुर्ग को युद्ध-सामग्री से ठीक किया। वह सप्रजा पर्वतों पर चला गया। औरजेब ने ४ जनवरी, १६८० ई० को देववारी पर अधिकार करके उदयपुर ले लिया।

मुगलों ने चित्तौड पर भी अपना अधिकार कर लिया। औरगजेब वहाँ फरवरी के अन्त मे गया। वह २२ मार्च को अजमेर लौट आया। शाहज़ादा अकबर चित्तौड़ पर भारी सेना लिए पड़ा रहा।

महाराणा अर्वली की चोटी पर अपना अधिकार जमाए हुए थे और अवसर पाकर मुग़लों पर छापा मारते थे।

मेवाड़ मे बुरी तरह पराजित होकर औरंगज़ेब चिन्तित हो उठा। उसने अधिक सतर्कता से कार्य लेना आरंभ कर दिया। उसने शाही सेना के तीन भाग किए। मेवाड की पहाड़ियों को घेरने के लिए चित्तौड़ की ओर आजम देवारी के मार्ग से, उत्तर से शाहजादा मुअज्जम और पश्चिम मे देवसूरी की ओर से अकबर भेजे गए। जून मे अकबर मारवाड़ को भेज दिया गया। वह सितम्बर के अन्त में नाडौल पहुँचा। अकबर ने तहव्वर खा को देवसूरी की ओर भेजा (२७, सितम्बर)। महाराणा के द्वितीय पुत्र भीमसिंह ने उस पर आक्रमण किया। दोनों पक्षों को भारी हानि उठानी पड़ी (सितम्बर, १६८० ई०)।

मार्च, १६८० ई० में औरंग जेब मेवाड़ से अजमेर चला गया। इसके पश्चात् राजपूतों ने मुसलमानों की चित्तौड़स्थ सेना को तंग करना आरम्भ कर दिया। वे आक्रमण करते, रसद छीन लेते और मुगल चौकियों पर छापा मारते। भयभीत होकर मुगल सेनापतियों ने आगे बढ़ने से मना कर दिया।

---

[1] राजविलास, पृ० १८४-२६३

अप्रैल, १६८० ई० में गोपालसिंह ने जफरनगर पर धावा बोला। आगामी मास के मध्य में चित्तौड़ में अकबर की सेना पर रात्रि में आक्रमण करके राजपूतों ने क़त्ल कर दिया। इधर बेदनोर पर महाराणा धावा मारता था। हसन अली खाँ तक ने पहाड पर चढ़ने मे आनाकानी की। मई के अन्त में महाराणा ने अकबर पर छापा मारकर उसे भयंकर हानि पहुँचाई। भीमसिंह की आधीनता में राजपूतों ने खुले आम मुगलों पर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया। समतल भूमि पर आगे बढने से मुग़ल सेना ने एकदम मनाकर दिया। अकबर की असफलता से अप्रसन्न होकर औरगजेब ने उसे मारवाड़ भेज दिया और शाहजादा आज़म को चित्तौड़ का सेनापति बनाया (२६,जून १६८० ई०)।

भीमसिंह की अध्यक्षता मे राजपूत सेना अर्वली से उतर कर गुजरात में फैल गई। उसने बादनगर, वीसलनगर आदि स्थानों पर धावा मारकर लूटमार की।

ईडर के राव ने राजपूतों की सहायता से अपनी राजधानी मुग़लों से छीनी।

महाराणा के दयालदास नामक वैश्य-मन्त्री ने मालवा पर आक्रमण करके धार को लूटा तथा शाही हाथी, घोडे आदि को खदेड़ कर ले गया।

गुजरात और मालवा की लूट की घटनाओं की तिथि के संबध मे प्रोफेसर सरकार लिखते है कि 'मिरात-इ-अहमदी तथा ईश्वरदास के अनुसार उक्त दोनों आक्रमण उस समय हुए थे जब सम्राट् चित्तौड़ में ठहरा हुआ था (फरवरी, १६८० ई०), पर अन्तिम लेखक (ईश्वरदास) महाराणा राजसिंह की मृत्यु (२२ अक्टूबर, १६८० ई०) के पश्चात् उक्त घटनाओं का होना मानता है। ऐसी परिस्थिति में वे दिसम्बर, १६८० ई० से पूर्व घटित न हो सकी होगीं.....राजविलास के आधार पर अवलम्बित टॉड महोदय द्वारा दी हुई तिथि (जनवरी-फ़रवरी, १६८० ई०) उन्हें मान्य नहीं है।'[1]

ऊपर दिए हुए मान तथा इतिहास के विवरणों के तुलनात्मक अध्ययन के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है :—

मान कवि ने औरगजेब की चढाई, महाराणा राजसिंह की युद्ध-मंत्रणा, उनका पर्वत की ओर प्रस्थान, उदयपुर तथा चित्तौड पर मुगलों के अधिकार का सविस्तर वर्णन किया है। सरदारों के नामों की विस्तृत सूची तथा युद्ध सबधी अन्य वर्णन विस्तीर्ण एव अत्युक्तिपूर्ण होने पर भी इतिहासानुकूल हैं।

मान कवि ने घटनाओं के वर्णन में काल-क्रम का ध्यान नही रक्खा है। काल-दोष की उनके घटना-वर्णन में प्रधानता है।

मान कवि तथा इतिहासकार समान रूप से इस बात को स्वीकार करते हैं कि मेवाड़ में मुग़लों की बड़ी दुर्दशा हुई थी। उनकी हार पर हार होती थी। मुगलों को राजपूत काल के समान दृष्टिगोचर होते थे। फारसी इतिहास लेखकों ने युद्धों का जो विवरण दिया है मुग़लों को

---

[1] औरगज़ेब, भाग ३, पृ० ३८४-९२, ३९४-९; ४१९-२० (पृ० ४२० की पाद-टिप्पणी सहित); राजपूताने का इतिहास, तीसरा खंड, पृ० ८३९-७२,(पाद-टिप्पणी २), ८७८ (पाद-टिप्पणी २, ३, सहित)

उससे कहीं अधिक हानि उठानी पडी होगी। मुसलमानों की पराजय से सम्बन्धित युद्धों का विस्तृत वर्णन जितना राजविलास में उपलब्ध होता है, उतना फारसी इतिहासों में नहीं।

पर मान कवि ने कहीं-कहीं पर कल्पना से अवश्य काम लिया है। उदाहरणार्थ उनका यह कहना कि शाहज़ादा अकबर युद्ध मे पराजित होकर अजमेर भाग गया, अत्युक्तिपूर्ण है। वस्तुतः युद्ध मे असफल होने के कारण वह मेवाड़ से हटा कर मारवाड़ भेज दिया गया था। इस घटना वर्णन में से कवित्व को अलग कर देने पर ऐतिहासिक तथ्य स्पष्ट हो जाता है।

यद्यपि मान कवि ने गुजरात और मालवा की लूट की तिथियों का उल्लेख नहीं किया है पर वे अवश्य ही महाराणा राजसिंह के समय मे ही घटित हुई होंगी, इसमे कोई भी सन्देह नहीं है।

शेष घटनाओं के सम्बन्ध मे उक्त दोनों—मान तथा इतिहास के विवरणों-मे कोई विशेष अन्तर नहीं है।

सेनाये

नीचे मान द्वारा दी हुई सेनाओं की संख्याओं का उल्लेख किया जाता है। उनके साथ ही प्राप्त ऐतिहासिक प्रमाण भी दे दिया गया है :—

(क) **चित्रांगद मोरी की सेना**—तीन लाख अश्व, तीन सहस्र सिंधुर (हाथी), एक सहस्र रथ तथा असख्य पदाति।[1]

(ख) **बापा रावल की सेना**—मान के अनुसार बापा के पास पाँच लाख घोडे, दश सहस्र हाथी तथा पन्द्रह लाख पायक थे।[2]

(ग) **मालपुरे की लूट के अवसर पर राजसिंह की सेना**—एक लाख अश्व।[3]

(घ) **महाराणा राजसिंह की औरंगज़ेब के विरुद्ध सेना**—मान के अनुसार राजसिंह के साथ बीस सहस्त्र तुरग, तथा पच्चीस सहस्र पैदल थे।[4]

सरकार ने उदयपुर की सेना की सख्या बारह सहस्त्र अश्वारोही स्वीकार की है।[5]

(ङ) मान के अनुसार इस युद्ध मे महाराणा के चौदह सामन्त, दश सहस्त्र अश्व लेकर शत्रु के विरुद्ध रण क्षेत्र मे उतरे थे।[6]

(च) **राठौडों की सेना**—मान ने लिखा है कि शाहजादा अकबर का सामना करनेवाली जोधपुर के राठौडों की सेना की संख्या बत्तीस सहस्त्र थी।[7]

(छ) **जयसिह की सेना**—शाहज़ादा अकबर का सामना करते समय महाराणा के पुत्र जयसिह के साथ ग्यारह सहस्र सेना थी।[8]

---

[1] राजविलास, छं० २१, पृ० १८ [2] वही, छं० १३८, पृ० ३४ [3] वही, छं० १२, पृ० ६७, छं० २८, पृ० १०० [4] वही, छं० ८१, पृ० १६८ [5] औरंगज़ेब, (१६२१ ई० का संस्करण), भाग ३, पृ० ३४३ [6] राजविलास, छं० १२३, पृ० २०५ [7] वही, छं० ६५, पृ० १६३ [8] वही, छं० ७५, पृ० २५६

मुग़लों की सेनायें

(ज) महाराणा प्रताप के विरुद्ध सम्राट् अकबर की सेना—मान ने लिखा है कि अकबर ने महाराणा के विरुद्ध ७२ सहस्र सेना भेजी थी।[1]

इतिहास से ज्ञात होता है कि महाराणा प्रताप के विरुद्ध मानसिंह के साथ ५ सहस्र सवार भेजे गए थे।[2] इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि मान द्वारा कथित सेना की उक्त सख्या अतिशयोक्तिपूर्ण है।

(झ) सम्राट् बनने के अवसर पर औरंगज़ेब की सेना—मान के अनुसार जब औरंगजेब सम्राट् बना तब उसकी सेना में ६ लाख अश्व तथा ५ सहस्र हाथी थे।[3]

(ञ) जोधपुर के विरुद्ध औरंगज़ेब की सेना—मान का कहना है कि औरङ्गजेब ने जोधपुर के विरुद्ध ३ लाख अश्व, ३ सहस्र हाथी, ७० खान और ७२ उमराव भेजे थे।[4] अन्यत्र वह लिखता है कि अजमेर में सम्राट् के पास सवा लाख अश्व थे।[5]

(ट) शाहज़ादा अकबर की सेना—मान ने शाहजादा अकबर की सेना के विषय में भिन्न-भिन्न सख्याओं का उल्लेख किया है। उसके अनुसार जोधपुर पर अकबर ने ७० सहस्र सेना के साथ आक्रमण किया था।[6] जब शाहज़ादा अकबर ने महाराणा के विरुद्ध प्रस्थान किया, तब उसके साथ ५० सहस्र अश्व और एक सहस्र हाथी थे।[7] पर्वतमाला में प्रविष्ट होते समय शाहज़ादा के साथ ३२ सहस्र अश्व थे।[8]

इतिहास से विदित होता है कि उक्त युद्ध मे अकबर के सेनापतित्व मे केवल १२ सहस्र सेना थी।[9] पर जब उसने अपने पिता के विरुद्ध विद्रोह का झंड़ा खड़ा किया था, तब उसके साथ ७० सहस्र सैनिक थे।[10]

इस प्रकार मान ने उक्त सेना की सख्या के सबंध मे कल्पना के साथ काम अवश्य लिया है, पर शाहज़ादे के विद्रोह के अवसर की ऐतिहासिक सख्या के आधार पर यह अनुमान लगाना असगत न होगा कि मान शाहज़ादे की सैन्य-सख्या से परिचित थे। भिन्न-भिन्न अवसरों पर विभिन्न सख्याएँ देने का यह कारण प्रतीत होता है कि शाहज़दा सपूर्ण सेना को अपने साथ न लेकर उसके एक भाग के साथ युद्ध विशेष मे गया होगा।

(ठ) रूमी की सेना—मान लिखता है कि देवसूरी नामक स्थान पर विक्रम सोलकी तथा गोपीनाथ कमध्वज्ज के विरुद्ध औरंगज़ेब का सेना-नायक रूमी १२ सहस्र सेना लेकर गया था।[11]

(ड) उदयपुर में शत्रु की सेना—राजविलास के रचयिता के अनुसार उदयपुर में उदय-भानसिंह चौहान का सामना करने के लिए मुग़लों की २५ सहस्र सेना थी।[12]

---

[1] राजविलास, छं० ३६, पृ० ४० [2] राजपूताने का इतिहास, तीसरा खं०, पृ०७४२ [3] राजविलास, छं० १७, पृ० १५० [4] वही, छं० ८७, पृ० १६१; छं० ८८, ९१, पृ० १६२, छं० १७०, पृ० १७५ [5] वही, छं० ९३, पृ० १६३ [6] वही, छं० ९४, पृ० १६३ [7] वही, छं० ११४, पृ० २०३; छं० ७, पृ० २४३ [8] वही, छं० २, पृ० २११ [9] औरंगजेब (१९२१ ई० संस्करण), भाग ३. पृ० ३४२; राजपूताने का इतिहास, तीसरा खं०, पृ० ८७१-२ [10] औरंगजेब (१९२१ ई० सस्करण) तृतीय भाग, पृ० ३५८ [11] राजविलास, छं०, २, पृ० २०६ [12] वही, छं० २, प० २०८

(ढ) रूहिल्ला ख़ाँ की सेना--मान के अनुसार बघनोर के सावल दास मेड़तिया के विरुद्ध रूहिल्ला ख़ाँ १२ सहस्त्र अश्व लेकर लड़ने के लिए आया था।[१]

(ण) मृतक सैनिक संबंधी मान द्वारा उल्लेख--मान ने औरंगजेब के उत्तराधिकार-युद्ध का उल्लेख करते हुए लिखा है कि उज्जैन में औरंगजेब का सामना करते समय महाराजा जसवत-सिंह के १० सहस्र वीर मारे गए थे।[२]

ऊपर दिए हुए सैनिक सबधी विवरण से सिद्ध हो जाता है कि मान ने सेना की सख्या देने में कल्पना शक्ति से प्रचुर मात्रा मे काम लिया है।

राजविलास के उपर्युक्त ऐतिहासिक विवेचन के उपरांत यह निष्कर्ष निकलता है कि उक्त ग्रंथ में दी हुई तिथियों, घटनाओं एव सेनाओं के वर्णन में कवि ने अतिशयोक्ति से अधिक काम लिया है। चारणों एव भाटों मे प्रचलित प्राय: सारी बातों का मान ने अपने ग्रंथ मे समावेश कर दिया है। घटनावली के क्रम आदि का उसने नाम मात्र को भी ध्यान नही रक्खा है। ऐसा होते हुए भी इस ग्रथ का अपना निजी महत्व है। युद्ध आदि विविध विषयों का जितना विस्तृत वर्णन मान कवि ने किया है, उतना इस प्रकार के बहुत कम कवियों ने किया है। इस दृष्टि से इस ग्रथ का मूल्य अधिक बढ़ जाता है। अतएव उक्त पुस्तक से कवित्व को अलग कर देने पर यह कृति इतिहास के लिए अधिक महत्त्व और मूल्य की हो जाती है।

---

[१] राजविलास, छं० ७, पृ० २३२ [२] वही, छं० १२, पृ० १४६

अध्याय-५

छत्रप्रकाश की ऐतिहासिकता

आगामी पृष्ठों मे छत्रप्रकाश में वर्णित तिथि, बुन्देल-जन्म-वर्णन, पात्र, चपतिराय तथा छत्रसाल के युद्धों आदि की ऐतिहासिकता पर ग्रंथ के अध्यायों के अनुसार विचार किया जा रहा है।

तिथि

छत्रसाल-जन्म-तिथि—लाल कवि ने 'छत्रप्रकाश' में केवल एक तिथि का उल्लेख किया है। उन्होंने लिखा है कि "छत्रसाल ने सम्वत् १७२८ वि० (१६७१ ई०) में २२ वर्ष की अवस्था में औरगजेब के विरुद्ध स्वातन्त्र्य-संग्राम आरम्भ किया था।"[1] इस कथन के आधार पर छत्रसाल की जन्म-तिथि १७०६ वि० (१६४९ ई०) ठहरती है।

अध्याय-१

बुन्देल-जन्म-वर्णन

लाल कवि ने अपने ग्रंथ मे "भगवान् राम के पुत्र कुश की वंशावली का उल्लेख करते हुए काशीराज द्वारा काशी मे राज्य-संस्थापन का वर्णन किया है। इनके वशज काशीश्वर कहलाए। काशीराज के पुत्र गहिरदेव के नाम पर इनके वशधर गहिरवार नाम से पुकारे जाने लगे। आगे चलकर इनके वश मे वीरभद्र पचम नामक पाँचवें पुत्र ने विंध्याचल पर विंध्यवासिनी देवी की नौ दिन पर्यन्त अर्चना करके अपना सिर काटकर उन पर चढाया, इससे प्रसन्न होकर देवी ने अमृत द्वारा उसे पुनः जीवित कर दिया। रक्त की बूँद देने के कारण यह बुन्देल कहलाए और इनका पुत्र बुन्देला। इसी से इनके कुल का नाम बुन्देला पडा।"[2]

छत्रप्रकाश मे वीरभद्र के जिन पूर्वजों के नाम दिए गए हैं उनका वीरसिंहदेव-चरित मे अभाव है। छत्रप्रकाश की रचना वीरसिहदेव-चरित से लगभग एक शताब्दी के पश्चात् हुई। ऐसा प्रतीत होता है कि इस दीर्घ काल में चारणों की कृपा से उक्त नामावली का बुन्देलों के पूर्वजों की वंशावली मे समावेश कर दिया गया है। संभवतः लाल कवि ने उसी परम्परा का अनुकरण करके उन नामों का अपने ग्रथ मे उल्लेख कर दिया है।

इसी प्रकार वीर बुदेल के पिता पंचम के नाम के सबध में भी विद्वानों को संदेह है। यह अपने पिता के पाँचवे पुत्र थे। सभवतः इसी कारण से "पचम पुत्र का पंचम शब्द रुढि कर लाल कवि ने उसका नामकरण कर दिया है।"[3] वस्तुतः छत्रप्रकाश के रचयिता इनके नाम से अपरिचित थे।

---

[1] छत्रप्रकाश, अध्याय १२, पृ० ८६ [2] वही, अध्याय १, पृ० १-८ [3] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग ३, १९७९ वि०, पृ० ४१८

छत्रप्रकाश की रचना के पश्चात् के ग्रंथकारों ने इसी कथा को घटा बढा कर अपनी रचनाओं में दे दिया है। प्रसगवशात् यहाँ पर उनका संक्षिप्त उल्लेख कर देना न्यायसंगत प्रतीत होता है।

हक़ीकतुल्-अकालीम का लेखक बुन्देलों की उत्पत्ति दासी से मानता है।[1] इस लेखक का यह कथन इसकी अज्ञानता एवं विद्वेष-भावना का परिचायक है।

टाड महाशय और मआसिरुल् उमरा के मत मे विध्यवासिनी देवी की उपासना करने के कारण यह बुन्देला कह लाए।[2]

उक्त सभी कथाओं का केवल इतना ही अभिप्राय प्रतीत होता है कि इस वंश के एक शक्तिशाली महापुरुष ने बनारस से चलकर मिर्ज़ापुर होते हुए बुन्देलखड मे जाकर वहाँ के तत्कालीन अफ़गान आदि निवासी तथा अन्य राजपूतों को पराजित करके अपने राज्य की नींव डाली। विन्ध्यवासिनी देवी के उपासक होने के कारण ये बुन्देले कहलाए और उस प्रदेश का नाम बुन्देलखंड विख्यात हुआ।[3] इसी विवरण को आधार मानकर बुन्देलों की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे विविध कथायें और किम्वदन्तियाँ प्रचलित हो गई हैं। कह नही सकते कि इन कथाओं का आरम्भ कब से हुआ। सम्भवतः चारणों मे यह कथाये मौलिक रूप मे पहले से ही प्रचलित थीं, पर केशव के पश्चात् ही उनका प्रचलन हुआ होगा, नही तो वे उनकी ओर अवश्य सकेत करते। उन्ही जनश्रुतियों के मौखिक-रूप को आधार मानकर गोरेलाल ने छत्रप्रकाश मे बुन्देल-वशोत्पत्ति सम्बन्धी उक्त रूपक बाँधकर अपनी कल्पना-शक्ति एवं वास्तविकता के प्रति उपेक्षा-भावना का परिचय दिया है।

पवार वंश (प्रमार वश)—लाल कवि ने लिखा है कि "छत्रसाल ने 'अग्निवंस के पवार कुलवार कुरी' के राजपूत की राजकुमारी से विवाह किया।"[4] प्रमारों को अग्निवशीय मानकर इन्होंने कवि-परम्परा का अनुकरण मात्र किया है। वास्तव मे प्रमार अग्निवंशीय क्षत्रिय नहीं हैं।[5]

निश्चित-पात्र

हिंदू-पात्र—वीरभद्र, पंचम, वीर बुन्देल, करन, अर्जुनपाल, सहनपाल, सहज-इन्द्र (सजेन्द्र) नौनिकदेव, पृथीराज (पृथ्वीराज), रामसिंह, रामचन्द्र, मेदिनीमल्ल, अर्जुनदेव, मल्लखान, रुद्रप्रताप (प्रतापरुद्र), भारतीचन्द, मधुकरसाहि, जुझारसिह, पहारसिह आसकरन।[6]

चंपतिराइ (चंपतिराय)—यह महेवा के शासक थे। जुझारसिह के मारे जाने और उसके राज्य के साम्राज्य में मिला लिए जाने पर उस प्रान्त में विद्रोह कर इन्होंने लूट मचा रक्खी थी। चपतिराय ने बहुत दिन तक वीरसिंहदेव और जुझारसिह की सेवा की थी। वह दाराशिकोह, आलमगीर आदि की सेवा में भी रहे। फिर बहुत समय तक मुग़लों को तंग करते रहे। १७२१ वि० (१६६४ ई०) में इनकी मृत्यु हुई।[7]

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन सस्करण, भाग ३, १९७९ वि०, पृ० ४१८-९, मेमाअर्स ऑव् दी हिस्ट्री, फ़ोकलोर एन्ड डिस्ट्रीब्यूशन ऑव् रेसेज़ ऑव् दी नार्थ-वेस्टर्न प्रार्विंसेज़ ऑव् इंडिया, भाग १, पृ० ४५ [2] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग ३, १९७९ वि०, पृ० ४१९-२०; मआसिरुल् उमरा, भाग २, पृ० ३१७ [3] औरंगज़ेब, भाग १, पृ० १५ [4] छत्रप्रकाश, पृ०७० [5] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ११, हम्मीररासो की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत अग्निकुलोत्पत्ति [6] वही, अध्याय १, वीरसिंहदेव-चरित के पात्रों की ऐतिहासिकता, पृ० १७४-८१ [7] बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास, पृ०१४१-६२, मआसिरुल् उमरा, भाग १,पृ०१३६-८

छत्रसाल—(छतारौ)—यह चम्पतिराय बुन्देला के पुत्र थे। छत्रसाल (जिसने छोटा मंसब पाया था) शिवाजी भौंसला के पास गया। वहाँ से लौट कर लूट-मार आरभ कर दी। २२वें वर्ष जसवन्तसिह बुन्देला उसे दमन करने गया। कई बार बादशाही नौकरी मे आकर अपने देश को लौट गया। इन्होंने बहुत सी विजय प्राप्त की थीं। १७३१ ई० में इनकी मृत्यु हुई।[1] देहावसान के समय इनकी आयु ८२ वर्ष की थी।

देवीसिंह—यह राजा रामचन्द्र के पौत्र, भारथसाहि के पुत्र थे। जुझारसिह के पराजित हो जाने पर सन् १६३५ ई० में यह ओडछा के शासक हुए। कुछ समय के उपरान्त वे शाहजहाँ के पास दक्षिण में चले गए और ओडछा खालसा कर लिया गया।[2]

सिवराज, सिवा।[3]

राजा इन्द्रमणि धंधेरा—यह सहरा के शासक थे। शाहजहाँ के शासन के १०वें वर्ष में यह बन्दी बनाया गया। १६५८ ई० में झडा और डका पाकर वह सम्मानित हुआ। शुजा के साथ युद्ध के अनन्तर बंगाल में इसकी नियुक्ति हुई जहाँ अपनी मृत्यु तक बादशाही कामों मे लगा रहा।[4]

जयसिंह (मिर्ज़ा राजा जयसिंह कछवाहा)– यह राजा महासिह (जयपुराधीश) के पुत्र थे। सन् १६१७ ई० मे १२ वर्ष की अवस्था मे मसब पाया। १६२८ ई० में शाहजाहाँ ने इनका विशेष आदर किया। विविध स्थानों पर इन्होंने बड़ी वीरता प्रदर्शित की। १६४४ ई० में यह दक्षिण के सूबेदार नियत हुए। औरंगजेब के राज्य के ७वें वर्ष शिवाजी को दंड देने के लिए नियुक्त हुए। १६६७ ई० मे बुर्हानपुर मे इनकी मृत्यु हुई।[5]

जसवन्तसिह—यह राजा गजसिंह (मारवाड) के पुत्र थे। १६४१ ई० में यह कधार में नियुक्त हुए। धीरे-धीरे इनके पद में वृद्धि होती गई। १६५८ ई० में दक्षिण से आगरे की ओर बढते हुए औरंगजेब का उज्जैन निकटस्थ धर्मत स्थान पर इन्होंने वीरतापूर्वक सामना किया, पर इसमे उन्हे भागना पड़ा। शुजा के युद्ध में यह सेना के दाहिने भाग मे नियुक्त हुए थे। मिर्ज़ा राजा जयसिंह की मध्यस्थता से क्षमा करके इन्हें अहमदाबाद की सूबेदारी मिली। १६६१ ई० में यह दक्षिण भेजे गए। वहाँ पर इन्होंने यथाशक्ति शिवाजी के दमन मे प्रयत्न किया। ६७८ ई० (पौष ब० १०, १७३५ वि०) को ५२ वर्ष की अवस्था में इनकी मृत्यु हुई।[6]

दुरगादास राठौर।[7]

इन्द्रमनि—(इन्द्रमणि) ओडछाधीश सुजानसिह के निस्संतान मरने पर शाहजहाँ ने उनके भाई इन्द्रमणि को ओड़छा का राजा बनाया। १६५८ ई० मे चंपतिराय का दमन करने के लिए ये नियुक्त हुए थे। १६६४ ई० दक्षिण से लौटने पर ओड़छा के राजा बनाये गये। १६७६ ई० में इनकी मृत्यु हो गई।[8]

---

[1] मआसिरुल् उमरा, भाग वही, पृ० १३६-६ [2] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग ३, १९७६ वि०, पृ० ४५४; मआसिरुल् उमरा, भाग १, पाद-टिप्पणी २, पृ० १३६ [3] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ३, भूषण-ग्रन्थावली की ऐतिहासिकता, पृ० २०४ [4] मआसिरुल् उमरा, भाग १, पृ०७६-८० [5] वही, भाग वही, पृ० १५४-६३ [6] वही, भाग वही, पृ० १६६-७५ [7] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ४, राजविलास की ऐतिहासिकता, पृ० २४७ [8] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग ३, १९७६ वि०, पृ० ४६२-३

प्राननाथ जी—यह महात्मा काठियावाड-प्रदेश के जामनगर नामक स्थान के निवासी थे। इनके उपदेशों का संग्रह "कुलजम" नाम से प्रसिद्ध है। इनके अनुयायी धामी कहलाते हैं। ये छत्रसाल के धर्म-गुरु थे। पन्ना मे इनकी समाधि एक बडे दिव्य और भव्य मन्दिर में है।[1]

सुजानसिंह—यह पहाड़सिंह बुन्देला का पुत्र था। शाहजहाँ का कृपा-पात्र होकर कामों पर नियुक्त हुआ। जलूस के २८वें वर्ष में इसको राजा की पदवी मिली। श्रीनगर, दक्षिण आदि में इसने बड़ी वीरता प्रदर्शित की। १६६८ ई० में इसकी दक्षिण मे मृत्यु हुई।[2]

छत्रसाल हाड़ा—(राव सत्रुसाल हाडा)—यह बूंदी के गोपीनाथ के पुत्र थे। १६३१ ई० में यह बूंदी के शासक हुए। बालाघाट, बलख, बदख्शाँ, कंधार आदि की चढाइयों में इन्होंने बड़ी वीरता प्रदर्शित की थी। उत्तराधिकार युद्ध में सामूगढ नामक स्थान में १६५८ ई० में दारा के हरावल मे लड़ते हुए औरंगज़ेब की सेना द्वारा यह मारे गए।[3]

मुसलमान-पात्र साहिजहाँ (शाहजहाँ)—यह जहाँगीर का पुत्र था। इसका वास्तविक नाम शाहज़ादा खुर्रम था। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् १६२७ ई०मे सिंहासनारूढ हुआ। १६५८ ई० में औरंगजेब ने इसे बन्दीगृह में डाल दिया। १६६६ ई० मे चौहत्तर वर्ष की अवस्था में इसका देहान्त हुआ।[4]

दारासाह (दाराशुकोह)—यह शाहजहाँ का सब से बड़ा पुत्र तथा उत्तराधिकारी था। इलाहाबाद, पंजाब, मुल्तान आदि सूबों का शासक रहकर उसने पर्याप्त अनुभव प्राप्त कर लिया था। शाहजहाँ उसे प्रायः अपने पास ही रखता था। १६५८ ई० के उत्तराधिकार-युद्ध मे वह हार-कर भागा। अन्त में पकडा गया और ३० अगस्त (अथवा ६ सितम्बर), १६५९ ई० को उसकी हत्या कर दी गई।[5]

सूजा (शाह शुजा)—यह शाहजहाँ का द्वितीय पुत्र और बंगाल का सूबेदार था। इसने विद्रोह किया तब राजा जयसिंह ने इसे पराजित किया। उत्तराधिकार-युद्ध मे आगरे पर अधिकार प्राप्त करने की कामना से बगाल से चल पडा, पर 'खजुआ' के युद्ध में पराजित हुआ। वहाँ से वह अराकान की ओर भाग गया और वहीं पर मार डाला गया।[6]

औरंगसाह, नौरंगसाह (औरंगज़ेब)—यह सम्राट् शाहजहाँ का तृतीय पुत्र था। इसने बुन्देलखड, दक्षिण आदि में विविध युद्धों मे बडी वीरता प्रदर्शित की थी। उत्तराधिकार-युद्ध मे विजयी होकर भारत का शासक बना और १६५८-१७०७ ई० तक राज्य किया।[7]

---

[1] छत्रप्रकाश, पाद-टिप्पणी २, पृ० १५०-२ [2] मआसिरुल् उमरा, भाग १, पृ० ४३५-६ [3] वही, भाग वही, पृ० ४०१-५ [4] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भाग ४, पृ० १६५, १६८, १६६-७३, १७६-७ १८३-२२१, २२३, २३२, २३३ [5] वही, भाग वही, पृ० १७४, २०१, २०६, २०७, २०६, २१०, २१३-५, २१७, २२०, २२२, २२३, २२६, २२७, २३० २३२, २७१, क़ानूनगो; दाराशुकोह-सम्पूर्ण; औरंगज़ेब, भा० पृ० १, २६३-६, २६६, ३०४, वही, भाग २, पृ० २७, ३३, ३५, ३८, ५६, ६८, १०१, १०६, १०७-८, ११३, १६३, १६४, १६६, १६८, १७२, १७३, १८८, १८६, २०६, २१०, २१६, [6] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भाग ४, पृ० १६४, २११, २१२, २१५, २१८, २२२, २२३, २२४-६, २३२, ४८०-१ [7] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भाग ४, पृ० १६६-७, १७४, १६५, १६८, २००, २०४, २०५, २०६, २०७, २०६-१५, २२२-३१८; सरकार, औरंगजेब, पाँचों भाग सम्पूर्ण।

मुरादसाह (मुराद बख़्श)—यह शाहजहाँ का चतुर्थ पुत्र और गुजरात का सूबेदार था। धर्मत और सामूगढ के युद्धों मे इसने बड़ी वीरता प्रदर्शित की। कालान्तर में औरंगजेब ने इसे बन्दी बनाकर ग्वालियर भेज दिया और वहीं पर वह १४ दिसम्बर १६६१ ई० को फाँसी पर लटका दिया गया।[1]

अकबर सहिजादो (अकबर शाहजादा)—यह औरंगजेब का पुत्र था। औरंगजेब ने इसे मारवाड़ और मेवाड के युद्धों में भेजा। वहाँ विद्रोही बनकर वह स्वयं सम्राट् बन बैठा। राजस्थान से भाग कर वह दक्षिण पहुँचा और अन्त मे फारस को चला गया।[2]

बहादुर साह (बहादुर शाह)—यह औरगजेब का पुत्र था। इसका वास्तविक नाम मुअज्जम शाह आलम बहादुर शाह था। औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् यह मार्च १७०७ ई० मे गद्दी पर बैठा। २७ फ़रवरी, १७१२ ई० को इसका देहान्त हुआ।[3]

बहादुर खान—लाल कवि ने सम्भवतः इस नाम से ख़ान-जहाँ (मलिक हुसेन) बहादुर ख़ाँ की ओर सकेत किया है।[4]

तहवर (तहव्वर खाँ)—यह औरंगजेब का एक प्रमुख अमीर तथा सेना-नायक था। मारवाड़ के युद्ध मे इसने बड़ी वीरता प्रदर्शित की थी।[5]

अबदुल्ला ख़ाँ—कवि ने सभवतः अब्दुल्लाह खाँ की ओर सकेत किया है।[6]

दलेल खान—यह सिहोंढा का शासक था। बुन्देलखंड मे प्रचलित परपरा के अनुसार दलेल ख़ाँ मुहम्मद ख़ाँ बगश का पुत्र बतलाया गया है, जिसका लालन-पालन छत्रसाल ने किया था। कुछ विद्वानों के मत मे वह चंपतिराय का मित्र था। वह मई, १७२१ में मरा।[7]

नौसेरी खाँ[8], अबदुलसमद।[9]

अनिश्चित पात्र

नीचे उन पात्रों के नाम दिए जा रहे हैं, जिनका ऐतिहासिक विवरण अप्राप्य है :—

हिन्दू-पात्र—सूर्य, मनु, रामचन्द्र, कुस, लव, कलस, हरिब्रह्म, महीपाल, उद्दित-भुवपाल, कमलचन्द, चित्रपाल, बुद्धिपाल, बिहंगराज, कासिराज (काशीराज)। गहिरदेव, विमलचंद, नाहुचंद, गोपचद, गोविंदचद, टिहनपाल, विंध्यराज, सोनिकदेव, बीकलदेव, अर्जुनवर्म, उदयाजीत,

---

[1] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भाग ४, पृ० १७३, २००, २०३, २११, २१२, २१३, २१४, २१५, २२२, २२८ [2] वही, भाग वही, पृ० २४८, २४६, २५०, २५१ २, २८०-१, २८२-४, ३३८, ३४०, [3] वही, भाग वही, पृ० ३१६-२४ [4] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ३, भूषण ग्रन्थावली की ऐतिहासिकता, पृ० २०७ [5] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ४, पृ० २४८, २५०, २५१, २५२ [6] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय १, वीरसिंहदेव चरित की ऐतिहासिकता, पृ० १८१ [7] जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, सं० XLVII, १८७८ ई०, पृ० ३६५-७१, बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास, पृ० २०३, २१०, २११, २३७ [8] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ३, भूषण-ग्रन्थावली की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत खान दौरां नौशेरी ख़ाँ का विवरण, पृ० २०७ [9] वही, वही, वही, पृ० २०६

कीरतसाहि, भूपतिसाहि, आमनदास, चंदनदास, दुर्गादास, घनस्याम, प्रागदास, भैरोदास, खाँडेराय, प्रेमचद, कुवरसेन, मानसाहि (मानसाह), भागवतराइ, खरगराइ, चद, सुजानराइ, सारवाहन, अगदराइ (अगद), रतनसाहि (रतनसाह, रतन), गोपाल, उगरसाह, बका, चौदहा मेघ (?) अजीतराइ (राइ अजीत), मनोला, हरो जजोधो, दलेल दोवा, साहिबसिंह धधेरा (साहिबराइ), सिबराम दोवा, गुपाल बारी, शानसाह, मान, धुरमगद, कुवर नरायनदास, गोविंदराइ पैतपुरवारे, सुन्दरमनि पमार, दलसिंगार, राममनि दोवा, मेघराज परिहार, किसोरो खगार, दलसाह मिश्र, हरकृष्ण (मिश्र हरिकृष्ण), लच्छे, राउत (रावत), राममनि, हरिबस, मेघो, परदोन, दयाले, फानु भाट, पंबल ढीमर, खरगे बारी, मोदो पतै, कुँवरराज रनधीर धधेरौ, केसरीसिंह धधेरा, आनंदराइ चौधरी, जैत पटैल, दासजी राइ मवासी, दागो केसौराइ मवासी, दीपसाह, अनन्द चौधरी, सबल साह, धारू, कीरति, रामजू, पृथीराज, दीप दिवान, माधोराइ, बसत, उदयभान, अमरसिंह, परताप, चन्द, कर्न (करन जू), इन्द्रमनि साहिगढ़ वारे, उग्रसैन, जगतसिंह, सकतसिंह, जामसाह, परबतसिंह (परबतसाह), रूपसाह, चन्द्रहस, चित्रांगद, जसवन्त, रामसिंह, जैसिंह, जादौराइ, गाजीसिंह, गुपालमनि, चिंतामनि सुरकी, बिसुनदास, बावराज परिहार, नन्दन छिपी (छीपी), कृपाराम, जगतेस, दुलची, परसराम सोलकी, बालकृष्ण, गङ्गाराम, मेघराज परिहार, अरिसाऊ, बरगीदास, हमीर धंधेरो, भावतराइ पमारु, सबदलराइ, भोज, दलसाइ मिश्र, किसुनदास, उदैकरन, हरजू (हरजूमल्ल), दयाल, गौतम, बले बैसु, भूपतिराय बैस, घनश्याम, जगतराइ, नवल, प्रेमसाह, राना रामदास, सुदरमनि, मल्ल सुजान, सभासिंह, उदैकरन, देवकरन, अमरसाह, राइ अमान, देवकरन, गजसिंह, खाडेराइ, माधौसिंह कटेरावारो, नद महाराजा, सुभकरन, बलदाऊ (बल दिवान, देव दिवान), अमर दिवान, भारतसाह, माधौराइ, हाड़ा दुरजनसाल (छत्रसाल हाड़ा ?), मुकुन्दसिंह हाड़ा।

स्त्री-पात्र—हीरादे रानी, लालकुँवरि, देवकुँवरि।

मुसलमान-पात्र—बाकी खान (बाको खाँ), भोर गौर, सहिबाज खाँ, फते खाँ, खानजहाँ, सैद महम्मद (सैय्यद मुहम्मद), कासिम खाँ, नामदार खाँ, फिदाई खाँ, महमद हाशिम, खालिक, सैद बहादुर, सैद मनौवर, रनदूलह, रूमी, सैद लतीफ, अधसेरी उमराव, सेख अनौर, सुतरदीन (सुतरदी*), हमीद खान, सैद लतीफ, नाहर खान, बहलोल खान मयानौ*, मुरादखान, साहकुली, सैद अफगन खान, सेर खाँ (शेरखाँ), फोजे मियाँ, बाकीखान बुन्देले (?), ईसफखान, अलीखाँ, खानखाना।

अध्याय २-४

छत्रप्रकाश के उक्त अध्यायों मे छत्रसाल के पूर्वजों, सारवाहन के चरित्र और छत्रसाल की बाल-लीलाओं का उल्लेख किया गयाहै।[1] इनमें से कुछ घटनाओं का पात्रों की ऐतिहासिकता पर विचार करते समय यथास्थान उल्लेख कर दिया गया है। शेष घटनाओं पर उचित सामग्री के अभाव में यहाँ पर विचार नहीं किया सका है।

---

* इन नामों का भूषण ने भी उल्लेख किया है। देखिये द्वितीय खड, अध्याय ३, भूषण-ग्रथावली की ऐतिहासिकतान्तर्गत अनिरिचत मुसलमान पात्र-सूची। पृ० २१०

[1] छत्रप्रकाश, पृ० १-२७

अध्याय ५

शाहजहाँ और बुन्देलखंड—लाल कवि ने इस अध्याय मे शाहजहाँ द्वारा बुन्देलखंड पर आक्रमण करने, जुझारसिंह के विद्रोह, पहाड़सिंह के राजा बनने आदि घटनाओं का उल्लेख किया है।[१]

उक्त घटनाओं के संबध में इतिहास ग्रथों से यह विवरण प्राप्त होता है:—

"जहाँगीर की मृत्यु से तीन-चार मास पूर्व वीरसिंहदेव ने मानव-लीला समाप्त की और उसका पुत्र जुझारसिंह उसका उत्तराधिकारी हुआ। शाहजहाँ के सिंहासनारूढ होते ही वह आगरा छोड कर ओडछा चला गया। खान .खानान महावत की अध्यक्षता मे विशाल सेना भेजी गई। अबदुल्ला खाँ ने ऐरछ मे दो सहस्र सैनिकों का संहार करके उस पर अधिकार कर लिया। ओड़छा पर भी आक्रमण हुआ। जुझारसिंह ने सधि कर ली।

कुछ समय के पश्चात् जुझारसिंह ने चौरागढ पर विजय प्राप्त कर ली। शाहजहां ने औरंगजेब के सेनापतित्व मे सैय्यद अब्दुल्लाह और खान-ए-दौरा आदि वीरों के साथ २,७००० सेना भेजी। इस सेना ने ओड़छा पर अधिकार करके देवीसिंह को वहाँ का राजा बनाया (४ अक्टूबर, १६३५ ई०)।

जुझारसिंह धामौनी से भागकर चौरागढ, देवगढ, चाँदा आदि स्थानों में होते हुए बनों में भटकते फिरे। अन्त मे गौंडों ने जुझारसिंह और विक्रमाजीत के शिरों को काटकर दिसम्बर, १६३५ ई० में शाहजहाँ के पास भेज दिया।

औरंगजेब की प्रार्थना पर शाहजहाँ दतिया और ओड़छा मे स्वयं गया (नवंबर, १६३५ ई०)। वहाँ से वे दोनों दौलताबाद को चले गए। (१४ जुलाई, १६३६ ई०)।

चपतिराय तथा अन्य बुन्देलों ने शाहजहाँ की आधीनता नहीं स्वीकार की। वे जुझारसिंह के अल्प-वयस्क पुत्र पृथ्वीराज को राजा बनाकर ओड़छा की सीमा मे लूटमार करते रहे। अब्दुल्लाह खाँ इस्लामाबाद में रहकर उस प्रदेश का शासन करता था। उसके एक सेना-नायक बाकी .खाँ ने १८ अप्रैल, १६४० ई० मे बुंदेलों को पराजित किया। चंपतिराय भाग गए और पृथ्वीराज बन्दी बनाकर ग्वालियर के कारागार में डाल दिया गया।

सन् १६३५ ई० मे छः वर्ष पर्यन्त प्रयत्न करने पर जब वहाँ पर शान्ति स्थापित न हो सकी तब १६४१ ई० में पहाड़सिंह को वह राज्य दे दिया गया।

इस प्रकार अबदुल्लाह खां, बाकी खा और बहादुर खा आदि चपतिराय को दबाने के लिए सतत प्रयत्न करते रहे, पर वे उसमें असफल रहे।"[२]

छत्रप्रकाश और इतिहास में वर्णित उक्त घटनाओं के विवरणों मे परस्पर बहुत साम्य है और उनमें कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं है।

---

[१] छत्रप्रकाश, पृ० २८-३४ [२] इलियट एंड डाउसन, हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा०७, पृ०६-७, १६, ४७-५२; औरंगज़ेब भा० १, पृ० १६-२६, २६, ३०; ३१; लेटर मुगलस्, भा० २, पृ० २२२-३, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ३, पृ० ४५४-७, मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० २२१

चंपतिराय की हत्या के लिए षड्यन्त्र—लाल कवि ने लिखा है कि चंपतिराय से भयभीत होकर पहाड़सिंह ने उनको विष देने तथा चोर द्वारा मरवा डालने की चेष्टायें की थीं।[1] फ़ारसी इतिहासकार इस सम्बन्ध मे मौन हैं, पर परिस्थितियों पर विचार करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है। यद्यपि पहाड़सिंह चम्पतिराय से सन्धि कर चुके थे[2] पर उनकी बढ़ती हुई शक्ति से वे अवश्य ही भयभीत हो गए होंगे। दूसरे, शाहजहाँ के संकेत पर उनका नाश कर के अपने राज्य को निष्कंटक करने की उन्होंने अवश्य ही चेष्टा की ही होगी। इसी उद्देश्य मे सफल होने के लिए "पहाड़सिंह ने ४ जून, १६४२ ई० मे अब्दुल्लाह खाँ के साथ सन्धि की थी कि वे चम्पतिराय और उसके साथियों का सर्वनाश करने मे सफल हों।"[3]

अपने प्रतिद्वन्द्वी को मार कर अपने राज्य को निष्कटक करने की घटनायें राजघरानों में अतीत काल से ही होती रही हैं। अतएव कवि द्वारा कथित चपतिराय की हत्या के लिए किए गए षड्यन्त्र सत्य प्रतीत होते हैं।

कंधार पर आक्रमण—आगे चलकर लाल कवि ने लिखा है कि "चम्पतिराय शाहजहाँ की सेवा मे चले गए। कुछ समयोपरान्त वे दारा के साथ कन्धार पर आक्रमण करने के लिए गए। वहाँ पर उन्होंने बडी वीरता प्रदर्शित की। फिर कौंच की जागीर के प्रश्न को लेकर दारा और चम्पतिराय में वैमनस्य हो गया। परिणामस्वरूप मसब त्याग कर वे स्वदेश लौट आए।"[4]

इतिहास से विदित होता है कि पहाड़सिंह को गद्दी मिल जाने पर चम्पतिराय ने मुग़लों से सन्धि कर ली और वे दारा की सेवा मे रहने लगे। (जून १६४२ ई०)[5]

उक्त कवि ने अपने वर्णन मे क़न्धार के तृतीय आक्रमण की ओर संकेत किया है। शाहजहाँ की आज्ञा से दारा एक विशाल सेना लेकर १६५३ ई० मे कन्धार की ओर गया था। उसके साथ पहाड़सिंह, चम्पतिराय आदि सैनिक भी थे। यह घेरा अप्रैल से सितम्बर, १६५३ ई० तक पड़ा रहा था। अन्त में असफलता के कारण यह घेरा उठा लिया गया और दारा ससैन्य आगरे लौट आया। शाहजहाँ ने शाहजहाँनाबाद मे दारा का राजसी स्वागत किया, और पुरस्कार वितरित किए जिससे दारा क़न्धार-आक्रमण की अपनी सारी असफलताओं को भूल गया (२६ दिसम्बर, १६५३ ई०)।[6]

दारा की असफलता पर भी राजधानी में इस प्रकार उत्सव मनाया गया था। सम्भव है कि राजधानी से दूरस्थ लाल कवि ने उक्त उत्सव सम्बन्धी विवरण को सुनकर यह समझ लिया हो कि क़न्धार पर मुगलों का अधिकार हो गया है। यह भी हो सकता है कि चम्पतिराय की वीरता एवं शौर्य की प्रशसा करने के लिए ही उन्होंने ऐसा वर्णन कर दिया हो। कुछ भी हो, यह स्पष्ट है कि क़न्धार-विजय सम्बन्धी उनका कथन इतिहास विरुद्ध है।

कौंच की जागीर के प्रसंग को लेकर पहाड़सिंह के बहकाने से दारा और चंपतिराय के मध्य अनबन होना स्वाभाविक हो सकता है, क्योंकि दारा की यह दुर्बलता थी कि वह दूसरों की निन्दा

---

[1] छत्रप्रकाश, पृ० ३४-७ [2] लेटर मुग़ालस्, भा० २, पृ० २२३ [3] वही, भा० वही, पृ० वही [4] छत्रप्रकाश पृ० ३७-४१ [5] औरंगज़ेब, भाग १, पृ० २७ [6] दाराशुकोह, पृ० ४५-६७, लेटर मुग़ालस्, भा० २, पृ० २२३ (पाद-टिप्पणी)

और बुराई को सुनता तथा उसका विश्वास कर लिया करता था।[1] इस प्रकार के वैमनस्य के उपरांत मंसब त्याग कर चंपतिराय महेवा चले गए होंगे।

अध्याय ६-७

उत्तराधिकार-युद्ध तथा अन्य घटनायें—उक्त घटनाओं के अनन्तर लाल कवि ने शाहजहाँ के पुत्रों के उत्तराधिकार-युद्ध, चंपतिराय-शौर्य, मुकुन्द हाडा और छत्रसाल हाड़ा की मृत्यु, सामूगढ-युद्ध, दारा तथा शुजा की पराजय, शुभकरण और चंपतिराय के युद्ध, सुजानराय की मृत्यु, छत्रसाल का ननिहाल जाना, नामदार खाँ और रतनसाह आदि का वर्णन किया है।[2]

इन घटनाओं के संबध मे इतिहास से विदित होता है कि "सितम्बर, १६५७ ई० मे शाहजहाँ बीमार पड़ा। उस समय उसके चारों पुत्र-दारा, शुजा, औरंगजेब तथा मुराद-क्रमशः आगरा, बङ्गाल, दक्षिण तथा गुजरात में थे। शाहजहां ने दारा को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। इस पर उसके अन्य भाइयों ने राज्य प्राप्ति के उपाय आरंभ कर दिए। मुराद ने स्वयं को सम्राट् घोषित कर दिया (५ दिसम्बर, १६५७ ई०)। शत्रु का नाश करके परस्पर राज्य-विभाजन करने का मुराद और औरंगजेब मे निर्णय हो गया। इसी प्रकार अपने को सम्राट् घोषित करके शुजा बङ्गाल से आगरे की ओर चल पडा और फरवरी, १६५८ ई० मे बनारस के निकट शाही सेना का सामना किया। मुराद २५ फरवरी, १६५८ ई० को अहमदाबाद से चलकर १४ अप्रैल, १६५८ ई० को दीपालपुर मे पहुँचा। औरंगजेब दक्षिण से रवाना होकर उक्त तिथि को दीपालपुर मे मुराद से जा मिला। वहा से वे दोनों उज्जैन की ओर चले और धर्मत पर पहुँचकर डेरा डाल दिया। इस स्थान पर जसवंतसिंह ने इन दोनों की सेना का सामना किया। मुकुन्दसिंह हाड़ा आदि जसवंतसिंह के अनेक वीर मारे गये। वह स्वय घायल होकर युद्ध-क्षेत्र से भाग गए। औरंगजेब ने विजयी होकर उस स्थान पर फतेहाबाद नगर बसाया।

इसी अवसर पर उज्जैन के निकट चंपतिराय आकर औरंगजेब से मिले (अप्रैल, १६५८ ई०)। वहाँ से चलकर औरंगजेब और मुराद २१ मई, १६५८ ई० को ग्वालियर पहुँचे। धौलपुर से लगभग चालीस मील पूर्व मे एक घाट को अरक्षित छोड़कर शेष सब घाटों को दारा ने अपनी तोपों से रोक रक्खा था। औरंगजेब उसी मार्ग से चंबल को २३ मई, १६५८ ई० को पार करके आगरे की ओर चल पड़ा। आलमगीरनामाकार तथा आक़िल खाँ ने क्रमशः इस स्थान का नाम 'भदौरिया' और 'भदावर' लिखा है। ईश्वरदास ने इसका नाम 'कनेरा' और भीमसेन ने 'गोरखा' बतलाया है। सम्भवतः वह स्थान भदौली था।

(छत्रप्रकाश), मनूची तथा भीमसेन के अनुसार इस मार्ग के बतलाने वाले मनुष्य का नाम चंपतिराय बुन्देला था। ईश्वरदास ने ग्वालियर की सरकार गोहद का ज़मींदार 'हाथीराज जाट' और आक़िल खाँ ने 'भदावर का ज़मींदार' लिखा है।[3]

मुग़ल राजकीय ऐतिहासिक ग्रथ इस मनुष्य के नाम के संबंध में मौन हैं। "सामूगढ़ के युद्ध में चंपतिराय औरंगजेब की सेना के दक्षिण भाग मे इस्लाम खाँ के नेतृत्व में सम्मिलित हुए थे।"[4]

---

[1] दाराशुकोह, पृ०४१६-७ [2] छत्रप्रकाश, पृ० ४२-५७ [3] औरंगज़ेब, भा० १, पृ०२६३-४, ३०२, ३०६-७, ३०६, ३३५, ३३८-६, ३७४-६; वही, भाग २, पृ० १-२५, २७, २६; वही, भा० ३, पृ० २७ [4] वही, भा० २, पृ० ४५

ससे प्रमाणित होता है कि चपतिराय उक्त युद्ध से पूर्व ही औरंगजेब की सेना से आ मिले थे। इन ानों की इस भेंट का स्थान उज्जैन के आस-पास ही रहा होगा, क्योंकि दक्षिण से उत्तर को आते मय अवंती प्रदेश, जो बुन्देलखड के बहुत निकट है, पड़ता है। दारा के प्रति पूर्व वैमनस्य का ारण करके प्रतिशोध-भावना से प्रेरित होकर चतुर राजनीतिज्ञ के समान चपतिराय अवश्य ही ौरगजेब से जा मिले होंगे और उन्होंने यह भेंट उसी समय की होगी जब औरगजेब की सेना देलखंड के निकट उज्जैन के पास मे पहुँची होगी। मुगल प्रायः राजपूत सेना को ही अग्रभाग रक्खा करते थे। इन सभी बातो से लाल कवि का यह कथन, कि चंपतिराय ने उस घाट का र्ग औरंगजेब को दिखलाया, सत्य प्रतीत होता है।

सामूगढ़-युद्ध—(२९ मई, १६५८ ई०)—यह भयकर युद्ध हुआ था। दारा की ओर के त्रसाल हाड़ा, रामसिंह राठौर आदि नौ राजपूत एव उन्नीस मुसलमान सेनापति मारे गए थे। रा पराजित होकर भाग गया। औरंगजेब विजयी हुआ और उसने आगरे पर अपना अधिकार र लिया (जून, १६५८ ई०)।

वह आगरे से १३ जून, १७५८ ई० को देहली के लिए रवाना हुआ। मार्ग मे उसने मुराद बन्दी बनाकर सलीमगढ भेज दिया (२५ जून, १६५८ ई०)। अन्त मे वह बुधवार, चार सम्बर, १६६१ ई० को ग्वालियर मे फाँसी पर लटका दिया गया।

ता० २१ जुलाई, १६५८ ई० को देहली नगर के बाहर शालामार उपवन मे औरंगजेब लमगीर नाम से सिहासनारूढ हुआ।

इधर-उधर भटकता हुआ दारा पकड कर देहली लाया गया, जहाँ २० अगस्त, १६५९ को उसकी हत्या कर दी गई।

देहली की ओर बढते हुए शुजा को औरगजेब ने खजुहा के स्थान पर ५ जनवरी, १६५९ को पराजित किया। इस प्रकार उसका राज्य निष्कंटक हो गया।[1]

छत्रप्रकाश और इतिहास के उक्त विवरणों की तुलना करने पर स्पष्ट हो जाता है कि लाल वि ने इन घटनाओं का सक्षिप्त किन्तु वास्तविक चित्रण किया है।

चंपतिराय और बहादुर खाँ का वैमनस्य एवं चम्पतिराय का स्वदेश लौटना—लाल कवि के मतानुसार युद्ध से भागे हुए बहादुर खाँ के लडके, का जो दारा की ओर लड़ा था, सामान चपतिराय के हाथ पड़ा था। माँगने पर उन्होंने नही लौटाया। इस पर दोनों मन-मुटाव हो गया। इस कारण से शाह शुजा के आक्रमण के अवसर पर चम्पतिराय अपने चले आए।

इतिहास से विदित होता है कि बहादुर खाँ औरंगजेब की ओर से युद्ध मे सम्मिलित हुआ। सामूगढ़ के क्षेत्र मे वह औरगजेब की सेना के मध्य भाग के वाम पक्ष मे लड़ा था। इस द्ध में वह बहुत घायल हुआ था और उसकी सेना के कतिपय सैनिक भी मारे गए थे।[2] अतएव

---

[1] औरगजेब भा० वही, पृ० ३२-६४, ७७, ८२, ८६-१००, १०७-८, १२९-५९, २०८-

[2] वही, भा० वही, पृ० ४८

उसका पुत्र भी औरंगज़ेब की ही ओर से लडा होगा, न कि दारा के पक्ष में। हो सकता है, कि उक्त युद्ध की भयंकरता से घबरा कर बहादुर खाँ की सेना और उसका पुत्र भाग खडे हुए हों और अवसर पाकर चम्पतिराय ने, जो औरंगज़ेब की सेना मे युद्ध कर रहे थे, उसके पुत्र के सामान को लूट लिया हो। पर इसके लिए कोई दृढ़ प्रमाण उपलब्ध नही है। दूसरे, औरंगज़ेब की सेना में उस समय इतनी अनियत्रणत. की कल्पना भी नहीं की जा सकती। लाल कवि के उक्त अनुमान का एक अन्य कारण हो सकता है। पराजित दारा के भाग जाने पर उसकी सारी युद्ध-सामग्री औरंगज़ेब की सेना के हाथ लगी थी। सम्भव है, इस सामान के कुछ अंश के ऊपर चम्पतिराय और बहादुर खाँ मे अनबन हो गई हो।

चम्पतिराय के बुन्देलखड को लौट आने के सम्बन्ध में इतिहास मे यह उल्लेख मिलता है :—

"सामूगढ के युद्ध की समाप्ति (६ जून, १६५८ ई०) पर औरगजेब ने चपतिराय को एक हाथी भेंट किया। फिर वह दारा का पीछा करने वाली सेना के साथ गये। जब औरंगज़ेब की सेना पजाब मे सराय जौहरमल मे पड़ी थी, उस समय चम्पतिराय तथा उसका दूसरा पुत्र अगद लाहौर के सूबेदार खलील उल्लाह खाँ की सेना मे भेजे गये। जनवरी, १६५९ ई० मे, जबकि शुजा खजुहा की ओर बढ रहा था और दारा गुजरात से होकर अजमेर की ओर जा रहा था, उस समय सारे साम्राज्य मे अव्यवस्था और अशान्ति फैली हुई थी। ऐसे अनुकूल अवसर को पाकर चपतिराय लाहौर से बुन्देलखड मे जाकर लूट-मार करके शक्ति सचय करने लगे।

शुभकरन-पराजय—उन्होंने मालवा के सारे मार्गों का अवरोध कर दिया। औरंगजेब ने दतिया के राजा शुभकरन बुन्देला तथा ओड़छा के राजा इद्रमणि को इनके विरुद्ध भेजा। आरंभ मे इन लोगों की सारी शक्ति क्षीण हो गई और वे चपतिराय को वश में न कर सके। उस प्रदेश के जगलों और पर्वतों ने चपतिराय की पूरी-पूरी सहायता की। वह बहुत समय तक इधर-उधर लूट-खसोट करते रहे और शाही सेना उनका कुछ न बिगाड़ सकी।

यह दशा देखकर औरगजेब ने चंदेरी के राजा देवीसिह को इनके विरुद्ध युद्ध के लिए भेजा। यह अप्रैल, १६६१ ई० से १६ अप्रैल, १६६२ ई० तक वहाँ रहे। मालवा के जागीरदार भी इनकी सहायता कर रहे थे। चपतिराय एक स्थान से दूसरे स्थान को चले जाते। मुग़ल सेना इनका पीछा करती पर वे हाथ नही आते थे। पकड़े जाने के भय से वे दिन मे छिपे रहते तथा रात्रि को अन्यत्र चले जाते। युद्धों में इतनी बडी हानि हो रही थी और इनके साथी भी कम होते जा रहे थे। बहुत से बुन्देला सरदारों ने इनके विरुद्ध शाही सेना की सहायता करनी आरंभ कर दी थी। चंपतिराय के भाई सज्जनराय के हाथ से वेदपुर दुर्ग निकल गया और उन्होंने पकड़े जाने के भय से आत्म-हत्या कर ली।"[1]

ऊपर दिए हुए ऐतिहासिक उद्धरण से स्पष्ट हो जाता है कि लाल कवि ने चंपतिराय के जिन युद्धों तथा सुजानराय आदि का विस्तृत उल्लेख किया है, वे ऐतिहासिक ही नहीं वरन् विस्तृत भी हैं।

---

[1] औरंगज़ेब, भा० ३, पृ० २८; लेटर मुगलस्, भा० २, पृ० २२४

इन अध्यायों की शेष घटनाओं—नामदार खां और रतनसाह-प्रसग, छत्रसाल का ननिहाल जाना आदि—को ऐतिहासिक सामग्री के अभाव मे भी सत्य ही समझना चाहिए।

अध्याय ८

इस अध्याय मे कवि ने चपतिराय के सहरा जाने, इद्रमणि की मृत्यु, साहबसिह द्वारा चपतिराय की सहायता, छत्रसाल का बहिन के घर जाना, चपतिराय की मृत्यु आदि घटनाओं का वर्णन किया है।[1]

इन्द्रमणि धंधेरा की मृत्यु—इतिहास के अनुसार इद्रमणि को शाहजहाँ के राज्य के आरभिक वर्षों मे सहरा की जागीर दी गई थी। फिर वह उसके राज्य के १० वे वर्ष (१६३७ ई०) में दुर्ग जूनेर मे बन्दी बना दिया गया। उत्तराधिकार-युद्ध के अवसर पर उत्तर को प्रस्थान करते समय १६५७ ई० मे औरगजेब ने इसे जूनेर से मुक्त करके शाहजादा मुहम्मद सुलतान के साथ आगे उत्तरी भारत को भेजा।[2]

औरगज़ेब और चम्पतिराय उत्तराधिकार-युद्ध के दिनों मे अप्रैल १६५८ ई० में उज्जैन के निकट मिले थे।[3] उस समय तक राजा इन्द्रमणि मुक्त हो चुके थे। ऐसी परिस्थिति मे लाल कवि का यह कहना कि 'चम्पतिराय ने उन्हे मुक्त कराया था' असंगत ठहरता है। यह सम्भव है कि औरगज़ेब-चम्पतिराय-मैत्री के दिनो मे इन्द्रमणि का सम्मान बढ़ाने मे चम्पतिराय का कुछ हाथ रहा हो।

लाल कवि के अनुसार यह राजा चम्पतिराय की मृत्यु से कुछ समय पूर्व मरा। पर सरकार के मत मे "वह चम्पतिराय से कुछ समय पूर्व ही नही मरा वरन् उसके पश्चात् वह कई वर्ष तक जीवित रहा।"[4] मआसिरुल् उमरा के अनुसार "राजा इद्रमणि शाह शुजा के युद्ध (१६५९ई०) के पश्चात् बगाल मे नियुक्त हुआ और अपनी मृत्यु के समय तक बादशाही कामों मे लगा रहा।"[5] अन्य प्राप्त विवरण से विदित होता है, कि "औरगज़ेब के शासन के आरम्भिक वर्षों मे अपने सबंधियों के व्यवहार के कारण इन्द्रमणि औरंगजेब की दृष्टि मे गिर गया।"[6] सम्भव है कि इसके परिणामस्वरूप इन्द्रमणि चम्पतिराय की मृत्यु (अक्टूबर, १६६१ ई०) के अवसर पर सहरा में वर्तमान रहा हो और उस समय युद्ध करते हुए मारा गया हो। पर इस विषय मे निर्णयात्मक ढग से कुछ कहना कठिन है।

चम्पतिराय की मृत्यु—(अक्टूबर, १६६१ ई०)—चम्पतिराय के देहान्त के सबंध मे आलमगीरनामा के आधार पर यह विवरण उपलब्ध होता है :—

"ओड़छा के राजा सुजानसिंह ने मुग़ल-दरबार मे चम्पतिराय की मृत्यु का सारा गौरव अपने ऊपर लिया। उन्होंने कहा कि उन्होंने चम्पतिराय का सहरा तक पीछा किया और उन्हे आत्म-समर्पण करने के लिए विवश किया। परन्तु सुजानसिंह के अपरिचित धधेरों ने चपतिराय का शिर दरबार मे भेजा, जो वहाँ ७ नवम्बर, १६६१ ई० को पहुँचा।"[7]

---

[1] छत्रप्रकाश, पृ० ५८-६५ [2] मआसिरुल् उमरा, भा०, १, पृ० ७६-८० [3] देखिए पृ० २७५-७६, [4] औरंगज़ेब, भा० ३, पृ० २६ (पाद-टिप्पणी) [5] वही, भा० १, पृ० ८० [6] लेटर मुग़लस्, भा० २, पृ० २२६ (पाद-टिप्पणी) [7] वही, भा०, पृ० २२८

लाल कवि के अनुसार रानी हीरा देवी (पहाड़सिंह की रानी)[१] चंपतिराय का पीछा करती हुई सहरा की ओर गई थीं। वह चम्पतिराय से शत्रुता रखती थीं। उनके विद्वेष के कारण ही धंधेरों को चंपतिराय के साथ विश्वासघात करने का अवसर प्राप्त हुआ था। अतः पहाड़सिंह बुन्देला के पुत्र सुजानसिंह बुन्देला[२] ने औरंगजेब की दृष्टि मे ऊँचा उठने के लिए चम्पतिराय की मृत्यु का दायित्व अपने ऊपर लिया हो, तो कोई आश्चर्य की बात नही है। अतएव आलमगीरनामा का उक्त कथन छत्रप्रकाश के इस विवरण का अप्रत्यक्ष रूप से समर्थन करता है।

चपतिराय के साथ ही उनकी पत्नी रानी लालकुंवरि (छत्रसाल की माता) ने भी आत्म-हत्या कर ली थी। सरकार[३] के मतानुसार छत्रसाल की माता का नाम रानी कालीकुमारी था।

छत्रसाल का बहिन के घर जाने, आदि घटनाओं का ऐतिहासिक विवरण अप्राप्य है। इन घटनाओं का उल्लेख करने मे सरकार[४] तथा इरविन[५] ने छत्रप्रकाश को ही प्रधान रूप से आधार माना है। इसलिए उक्त विवरण की सहायता इन घटनाओं की परीक्षा करने के लिए नही ली गई है। पर उक्त घटनायें ऐतिहासिक ही हैं, यह बात किसी को अमान्य नहीं हो सकती।

अध्याय ९-१०

लाल कवि ने इन प्रकरणों मे छत्रसाल के प्रथम विवाह, उनकी जयसिंह से भेंट, और शाही सेना द्वारा देवगढ विजय का उल्लेख किया है।[६]

जयसिंह-छत्रसाल-मिलन—इस घटना के सबंध मे इतिहास से यह विवरण उपलब्ध होता है, जो लाल कवि के विवरण से एक दम साम्य रखता है :—

"छत्रसाल और उनके ज्येष्ठ भ्राता अंगद ने मिर्ज़ा राजा जयसिंह से उन्हें नौकरी देने तथा शिवा जी के विरुद्ध शाही सेना मे साथ ले जाने के लिए बार-बार प्रार्थना की थी (१६६५ ई०)। जयसिंह ने उन्हे अपनी सेना मे भर्त्ती किया। इन दोनों युवकों ने पुरधर के घेरे मे विशेष योग्यता से कार्य किया (३ अगस्त, १६६५ ई)। वे उनके साथ बीजापुर के आक्रमण में भी रहे। (दिसम्बर १६६५ ई० से फरवरी, १६६६ ई० तक)।"[७]

देवगढ-विजय—छत्रप्रकाश के विवरण के अनुसार बहादुर खाँ के साथ छत्रसाल देवगढ-युद्ध में गए, जहाँ पर उनकी वीरता के फलस्वरूप बहादुर खाँ विजयी हुआ।

इतिहास से विदित होता है कि "औरंगजेब की आज्ञा से दिलेर खाँ ने देवगढ पर दो बार आक्रमण किए थे। प्रथम बार वह जनवरी, १६६७ ई० मे गौड-प्रदेश मे प्रविष्ट होकर २६ अप्रैल, १६६७ ई० को चादा की सीमा को पार करके देवगढ़ में पहुँचा। वहाँ के राजा कोकसिंह ने आत्म-समर्पण कर दिया। अगस्त, १६६६ ई० मे दिलेर खाँ पुनः देवगढ़ पर चढ़ आया। राजा सपरिवार मुसलमान हो गया और उसका राज्य उसे लौटा दिया गया।"[८]

छत्रप्रकाश के विवरण के अनुसार राजा जयसिंह ने देवगड़ पर आक्रमण करने वाली सेना के साथ छत्रसाल को भेजा। सरकार के विचार में यह कथन भ्रामक है, क्योंकि जयसिंह की

---

[१] मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० १३८ (पाद-टिप्पणी) [२] वही, भा० वही, पृ० ४३५ [३] औरंगज़ेब, भा० ३, पृ० ३० [४] वही, भा० ३, पृ० २६-३० [५] लेटर मुग़ाज़स् भा० २, पृ० २२७ [६] छत्रप्रकाश, पृ० ६६-७६ [७] औरङ्गज़ेब, भाग ५, पृ० ३६१-२ [८] वही, वही, पृ० ४०२-५

मृत्यु २ जुलाई, १६६७ ई० को हो चुकी थी। अतः वह इस सेना के भेजने वाले नहीं हो सकते।"[१]

ऊपर दिए हुए ऐतिहासिक विवरण से स्पष्ट है कि देवगढ़ पर दो बार आक्रमण किए गए थे। दिलेर खाँ ने देवगढ पर प्रथम आक्रमण २६ अप्रैल, १६६७ ई० को किया था और मिर्ज़ा राजा जयसिंह का देहान्त २ जुलाई, १६६७ ई०को हुआ था। ऐसी दशा में उन्होंने प्रथम आक्रमण के अवसर पर अवश्य ही दिलेर खाँ और उसकी सेना को देवगढ पर आक्रमण करने के लिए भेजा होगा। यदि लाल कवि का अभिप्राय देवगढ़ के इस प्रथम आक्रमण से है तो उसका कथन सत्य माना जा सकता है। ऐसा मान लेने मे एक कठिनाई आ उपस्थित होती है। फारसी इतिहासकारों के मतानुसार देवगढ के शासक ने प्रथम युद्ध में बिना विरोध किए ही आत्म-समर्पण कर दिया था। ऐसी दशा मे लाल कवि कथित छत्रसाल वीरता-चित्रण काल्पनिक एव निराधार ठहरता है। यह भी सम्भव है कि इस अवसर पर युद्ध लडा गया हो और इतिहासकारों ने उसका उल्लेख न किया हो।

यदि लाल कवि के वर्णन का अभिप्राय देवगढ के द्वितीय युद्ध से है, तो मिर्जा राजा जयसिंह दिलेर खाँ की सेना के प्रेषक नहीं माने जा सकते। इस सम्बन्ध मे एक बात और ध्यान देने योग्य है। उक्त प्रसग में आगे चलकर लाल कवि ने लिखा है कि देवगढ-युद्ध के पश्चात् खिन्न मनः होकर छत्रसाल ने मंसब त्याग दिया और उन्होंने शिवाजी से भेंट करने के लिए दक्षिण-यात्रा की। यदि उनके इस कथन को स्वीकार कर लिया जावे तो उनका यह वर्णन देवगढ के द्वितीय युद्ध का ही होना चाहिए।

इस सम्बन्ध मे एक बात और विचारणीय है। देवगढ पर आक्रमण करने वाली सेना का सेनापति छत्रप्रकाश में बहादुर खाँ माना गया है, पर फारसी इतिहासों में उसका नाम दिलेर खाँ मिलता है। सम्भव है कि इन युद्धों मे बहादुर खाँ नामक कोई अन्य उच्च पदाधिकारी भी दिलेर खाँ के साथ भेजा गया हो, और उसी का लाल कवि ने उल्लेख कर दिया हो तो कोई आश्चर्य नहीं है।

उपर्युक्त विवादास्पद परिस्थितियों एवं उचित साक्ष्य के अभाव मे किसी निर्णयात्मक निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन है। केवल इतना ही कहा जा सकता है कि छत्रसाल देवगढ युद्ध मे सम्मिलित हुए थे और उन्होंने बडी वीरता प्रदर्शित की थी। साथ ही बहादुर खाँ नामक कोई उच्च पदाधिकारी भी उस युद्ध मे सम्मिलित हुआ था।

छत्रप्रकाश के इस अध्याय में उल्लिखित छत्रसाल के विवाह आदि की घटनाओं के सम्बन्ध में फ़ारसी इतिहासकार मौन हैं।

अध्याय ११-१६

छत्रसाल और शिवाजी में भेंट—छत्रप्रकाश मे लिखा है कि मंसब त्याग कर छत्रसाल दक्षिण में जाकर शिवाजी से मिले और आज्ञानुसार स्वदेश मे लौटकर स्वातन्त्र्य-संग्राम छेड़ा।[२] इस कवि के इस कथन की पुष्टि इतिहास के इस विवरण से हो जाती है, "मुग़लों की सेना को

---

[१] औरंगज़ेब, भा० ४ पृ० १२७; वही, भा० ५, पृ० ३६२ (पाद-टिप्पणी २, ३)

[२] छत्रप्रकाश, पृ० ७७-८०

छोड़कर १६७०-७१ ई० के शरद् काल मे छत्रसाल अपनी रानी के साथ शिवाजी के दरबार में पहुँचे। शिवाजी ने उन्हें बुन्देलखड में जाकर स्वातन्त्र्य्-संग्राम छेड़ने के लिए आदेश देकर सम्मानपूर्वक विदा किया। तत्कालीन भीमसेन नामक इतिहास लेखक ने लिखा है कि छत्रसाल रायगढ से निराश लौटे, क्योंकि दक्षिण-वासियों की प्रान्तीयता की भावना उन्हें रुचिकर नहीं लगी। शिवाजी ने उत्तरी भारत के किसी भी मनुष्य को अपने यहाँ पद देना अथवा उसका विश्वास करना उचित न समझा।"[1]

भीमसेन बुर्हानपुर का निवासी था।[2] अतः उसका कथन सुनी सुनाई बातों पर अवलम्बित रहा होगा। इसलिए उसका विवरण उतना विश्वस्त नही हो सकता जितना गोरेलाल का, क्योंकि उसने छत्रसाल के दरबार मे रह कर अपने ग्रंथ की रचना की थी। यदि शिवाजी ने छत्रसाल के प्रति कथित प्रान्तीयता प्रदर्शित की होती तो गोरेलाल उसका अवश्य ही उल्लेख करते। साथ ही यह बात भी कल्पनातीत है कि शिवाजी जैसा उदार एव स्वाधीनता-प्रिय व्यक्ति छत्रसाल जैसे वीर-पुगव के प्रति उपेक्षा-भाव प्रदर्शित करे। वास्तविकता तो यह प्रतीत होती है, कि एक चतुर दूरदर्शी राजनीतिज्ञ के समान शिवाजी ने बुन्देलखंड मे स्वतन्त्रता घोषित करने का छत्रसाल को उपदेश दिया होगा, जिससे शत्रु की शक्ति विभाजित हो जाए और उन्हें अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त हो। और हुआ भी ऐसा ही। औरंगज़ेब को दक्षिण और बुन्देलखड दोनो देशों मे शान्ति-सस्थापनार्थ अलग-अलग सेनायें भेजनी पडी और शिवाजी की राजनीतिक चाल सफल हुई।

छत्रसाल-शुभकरन-मिलन—छत्रसाल और शुभकरण की भेंट तथा तत्सम्बन्धित अन्य घटनाओं के विवरण छत्रप्रकाश, सरकार और इरविन के ग्रंथों में एक से मिलते हैं जिनका सार यह है :—

"उन दिनों दतिया के राजा शुभकर्ण बुन्देला दक्षिण में मुगल सेना मे नौकरी कर रहे थे। शिवाजी से विदा लेकर छत्रसाल उनसे मिलने गए। उन्होंने छत्रसाल की स्वाधीनता-आयोजना का विरोध किया और उन्हे मुगल-सेना मे ऊँचा पद दिलाने का प्रलोभन दिया। छत्रसाल उसे अस्वीकार करके स्वदेश लौट आए।

छत्रसाल की प्रारम्भिक विजय—इन्हीं दिनों औरंगजेब ने अपनी धार्मिक कट्टरता से मदान्ध होकर हिन्दुओं के देवालयों को गिरवाना आरम्भ कर दिया (१६७० ई०)। परिणाम-स्वरूप बुन्देलखड और मालवा की हिन्दू-जनता ने अपने धार्मिक स्थानों की रक्षार्थ कमर कस ली। ग्वालियर के सूबेदार फिदाई ख़ाँ ने १६७०ई०में ओड़छा का मंदिर तोड़ने का प्रयत्न किया, पर धुरमगद ने उसे मार भगाया। औरगजेब की उक्त नीति के कारण उसके स्वामि-भक्त हिन्दू-सेवक उसके शत्रु बन गए। यहाँ तक कि ओड़छाधीश सुजानसिंह ने छत्रसाल के पास मैत्री-भाव-पूर्ण शुभ-कामना-सन्देश भेजा।

छत्रसाल ने नर्मदा पार करके १६७१ ई० (१७२८ वि०) में बुन्देलखंड में प्रवेश किया। बल्देव उनके सहायक हो गये। बाकी खाँ बुन्देला उनका मित्र बन गया। संभवतः यह एक अफ़-

---

[1] औरंगज़ेब, भा० ५, पृ० ३६३, शिवाजी, पृ० २३६-७; लेटर मुग़लस् भा०, २, पृ० २२८ [2] शिवाजी, पृ० ५०४

गान जागीरदार था।"[1] यह भी संभव है कि बाकी खाँ अथवा उसका कोई अन्य पूर्वज बुंदेला राजपूत से मुसलमान बन गया हो और बुंदेला शब्द अपने नाम के साथ प्रयुक्त करता रहा हो, जैसा कि वर्तमान समय में भी अधिकांश मुसलमानों के नामों के साथ उनकी जाति, वंश आदि के सूचक शब्द लगे रहते हैं।

"आरंभिक वर्षों में छत्रसाल ने धामौनी तथा उससे ६५ मील पश्चिम में अवस्थित सिरोंज के प्रदेशों को प्रत्येक वर्ष लूटा। धामौनी के मुगल फौजदारों ने उनको रोकने के लिए भरसक प्रयत्न किये, पर उन्हें मुँह की खानी पड़ी। हाशिम खाँ, सैयद बहादुर खालिक, कुशलराय बुन्देला, रणदूलह खाँ (संभवतः १६७३ ई० में धामौनी का रुहुल्लाह खाँ फौजदार), रुस्मी आदि इनका कुछ न बिगाड़ सके।"[2]

ऊपर दिए हुए युद्धों के विस्तृत विवरण के लिए फारसी इतिहासकार मौन हैं। इन युद्धों तथा छत्रसाल का अपने बन्धु-बांधवों से मिलकर स्वातन्त्र्य-प्राप्ति-योजनाओं को बनाकर कार्यरूप में परिणत करने आदि का विस्तृत एवं ऐतिहासिक वर्णन छत्रप्रकाश में सुरक्षित है।

जोधपुर पर औरंगज़ेब का आक्रमण—इसके आगे छत्रप्रकाश में जोधपुर पर औरंगजेब के आक्रमण और शाहजादा अकबर के विद्रोह का उल्लेख मिलता है।[3] इन घटनाओं के संबंध में इतिहास के विवरण का सार निम्नलिखित है :—

"अफगानिस्तान में युद्ध करते हुए ता० १०दिसम्बर, १६७८ ई०को जसवंतसिंह का देहावसान हो गया। ता० ६ जनवरी, १६७९ ई० को औरंगजेब अजमेर के लिए रवाना हुआ जिससे जोधपुर में सेना-संचालन कर सके। वह २ अप्रैल, १६७९ ई० को दहली लौट आया। जसवंत सिंह का परिवार अफगानिस्तान से चलकर फरवरी, १६७९ ई० में लाहौर पहुँचा। वहाँ उनकी दो रानियों से दो पुत्र उत्पन्न हुए जिनमें से एक मर गया और अजीतसिंह जीवित रहे। ये सब व्यक्ति जून में दहली पहुँचे। औरंगजेब ने अजीतसिंह को बंदी बनाना चाहा, पर वीर दुर्गादास वीरता पूर्वक युद्ध करते हुए २३ जुलाई, १६७९ ई० को मारवाड़ जा पहुँचे।

औरंगज़ेब ने मारवाड़ मुगल-साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया और सितंबर, १६७९ ई० में स्वयं अजमेर में जा उपस्थित हुआ।

अकबर का विद्रोह—कुछ समय के उपरांत महाराणा उदयपुर और दुर्गादास से संधि करके शाहजादा अकबर ने १ जनवरी, १६८१ ई० को अपने को सम्राट् घोषित करके विद्रोह कर दिया। वह १५ जनवरी, को अजमेर के निकट पहुँचा। औरंगजेब के जाली पत्र को पाकर दुर्गादास को यह भ्रम हो गया कि अकबर उन्हें धोखा दे रहा है। उसी रात को तहव्वर खाँ की मृत्यु हो जाने से उनके इस अनुमान की और भी पुष्टि हो गई (१५ जनवरी, १६८१ ई०)। अतएव उसे छोड़ कर चले गए। अकबर भी १६ जनवरी को अपने प्राण बचाकर भाग गया। अन्त में दुर्गादास ने अपनी भूल का अनुभव करके अकबर को पुनः अपनी शरण में लिया। उन्होंने उसे दक्षिण में सुरक्षित रूप से पहुँचा दिया।

---

[1] छत्रप्रकाश, पृ० ८०-९४; औरंगज़ेब, भा० ५, पृ० ३९३-५, लेटर मुगल्स, भा० २, पृ० २२८-९ [2] छत्रप्रकाश, पृ० ९४-१०८, औरंगज़ेब, भा० ५, पृ० ३९६; लेटर मुगल्स, भा० २ पृ० २२९ [3] छत्रप्रकाश, पृ० १०८

राजपूताने का युद्ध समाप्त होने के पश्चात् ३१ जुलाई, १६८१ ई० को शाहज़ादा आजम अकबर का पीछा करने के लिए रवाना हुआ। औरंगजेब स्वय ८ सितंबर को चलकर १३ नवंबर, १६८१ ई० को बुर्हानपुर पहुँचा और २२ मार्च, १६८२ ई० को औरङ्गाबाद में ठहरकर अकबर को पराजित करने का अवसर ताकने लगा।"[1]

ऊपर दिए हुए ऐतिहासिक विवरण से छत्रप्रकाश के उक्त घटना सम्बन्धी उल्लेख की पुष्टि हो जाती है। अन्तर केवल इतना है कि लाल कवि का वर्णन अत्यन्त संक्षिप्त एवं सकेतात्मक है।

तहव्वर पराजय—जिन दिनों छत्रसाल सावर में अपना विवाह रचा रहे थे उन्हीं दिनों तहव्वर खाँ ने बुन्देलखड पर आक्रमण किया। यह घटना उस समय की है जब औरङ्गजेब ने दक्षिण को प्रस्थान किया था।[2] यदि तहव्वर खाँ से लाल कवि का अभिप्राय उस तहव्वर खाँ से है जिसकी हत्या का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, तो उसका यह आक्रमण अकबर के विद्रोह (जनवरी, १६८१ ई०) और औरगजेब के दक्षिण को रवाना होने (८ सितंबर, १६८१ ई०) से पूर्व हुआ होगा। तहव्वर खाँ अगस्त, १६७६ ई० मे मारवाड-युद्ध में वर्त्तमान था और उसकी हत्या १५ जनवरी, १६८१ ई० को की गई थी। अतएव उसने बुन्देलखंड पर अपना आक्रमण या तो अगस्त १६७६ ई० से कुछ पूर्व किया होगा अथवा उक्त तिथि से कुछ समय उपरात वहाँ आक्रमण करके जनवरी, १६८१ ई० से पूर्व अजमेर मे जा उपस्थित हुआ होगा। ऐसी परिस्थिति मे लाल कवि का कथन इतिहास के प्रतिकूल पड़ता है। पर हाँ, यदि यह कोई अन्य व्यक्ति था तो उनका कथन सत्य माना जा सकता है। पर ऐसे निर्णय के लिए पर्याप्त सामग्री का अभाव है।

अन्य युद्धों के समान छत्रसाल इस युद्ध मे भी विजयी हुए थे और तहवर खां को हार कर भागना पड़ा था।

अध्याय १७–२२

राजा सुजानसिंह की मृत्यु और इंद्रमनि का राज्याभिषेक } लाल कवि ने सुजानसिंह की मृत्यु के उपरान्त इन्द्रमनि (इन्द्रमणि) के ओडछा के राजा बनने, छत्रसाल के प्रति उनके ईर्ष्या-द्वेष, छत्रसाल के उनके देश को लूटने और अन्त मे दोनों के मित्र बन जाने का उल्लेख किया है।[3]

"सुजानसिंह की मृत्यु सन् १६६८ ई० मे हुई।[4] इम्पीरियल गज़ेटियर जि० १६ पृ० २४४ में इनकी मृत्यु १६७२ ई० मे और सन् १८७२ ई० के जरनल ऑव् ऐशियाटिक सोसायटी मे सन् १६७१ ई० मे होना लिखा है। सुजानसिंह का १६६६ ई० तक जीवित रहना निश्चित ज्ञात होता है।"[5] इनकी मृत्यु के उपरात इंद्रमणि गद्दी पर आसीन हुए थे।

इन अध्यायों मे उल्लिखित छत्रसाल की विजयों की दीर्घ सूची,[6] तथा सुतरदीन-पराजय[7]

---

[1] औरंगज़ेब, भा०३, पृ०३२५,३२६, ३२८-६, ३३२-४, ३३५-६, ३५३-६८; वही, भा० ४, पृ० २५०-२ [2] छत्रप्रकाश, पृ० १०८-१३ [3] वही, पृ० ११७ [4] मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० ४३६ [5] वही, भा० वही, पाद-टिप्पणी २, पृ० ४३६-७ [6] छत्रप्रकाश, अध्याय १७, पृ० ११४-२० [7] वही, अध्याय १८, पृ० १२१-७

हमीद, सैद लतीफ बीस मवासी युद्ध,[1] अब्दुल समद-पराजय,[2] बहलोल खां मयानौ मरण,[3] और मौधा मठौध विजय,[4] आदि के परीक्षण के लिए उचित ऐतिहासिक सामग्री का अभाव है। पर ये घटनाएँ इतिहास के लिए नवीन एवं ठोस सामग्री उपस्थित करती हैं।

अध्याय २३-२५

सैद अफ़गन और छत्रसाल-युद्ध—लाल कवि ने सैद अफगन और छत्रसाल के युद्धों का वर्णन करते हुए अपने चरित्र-नायक की पराजय को भी स्वीकार किया है।[5] "मुग़ल समाचार-पत्रों से विदित होता है कि शेर अफगन और छत्रसाल में दो युद्ध हुए थे। प्रथम युद्ध मार्च, १६६६ ई० में सूरजमऊ के निकट हुआ, जब रनौद के फौजदार शेर अफ़गन ने छत्रसाल पर आक्रमण किया। छत्रसाल ने हारकर दुर्ग मे शरण ली। खान ने उसे घेर लिया, पर छत्रसाल वहाँ से निकल गए। छत्र-मुकुट बुन्देला मुगलों से जा मिला। फिर नवाब ने छत्रसाल के पुत्र गरीबदास से गागरौन छीन लिया।

दूसरे वर्ष २४ अप्रैल, १७०० ई० को झूना और बरना के निकट शेर-अफगन ने छत्रसाल पर आक्रमण किया। इस युद्ध मे छत्रसाल घायल हुए, पर खान भयङ्कर रूप से घायल हुआ जिसके फलस्वरूप वह मर गया। शाहमान धंधेरा के पुत्र देवीसिंह ने शाहबाद गढ छीन लिया, परन्तु अक्टूबर मे ग्वालियर के फौजदार ने उसे वापस ले लिया।"[6]

छत्रप्रकाश और इतिहास दोनो के विवरण प्रमुख बातों मे समान है यहाँ तक कि लाल कवि ने छत्रसाल की पराजय तक का उल्लेख कर दिया है। ऐतिहासिक विवरण मे उल्लिखित अलीकुली ही सम्भवतः छत्रप्रकाश का शाह कुली है।

छत्रप्रकाश मे उल्लिखित कतिपय अन्य युद्धों तथा प्राणनाथ शिक्षा,[7] कृष्ण-जन्म-वर्णन,[8] प्राणनाथ-वरदान[9] आदि घटनाओं के सम्बन्ध मे प्रामाणिक ऐतिहासिक सामग्री का अभाव है।

अध्याय-२६

इस अध्याय में औरगजेब के मरने के पश्चात् बहादुर शाह के सम्राट् बनने पर छत्रसाल के दिल्ली बुलाए जाने और उनके द्वारा लोहगढ (लोहागढ) विजय आदि का उल्लेख है।[10]

उक्त घटनाओं के सम्बन्ध से इतिहास से यह विवरण उपलब्ध होता है :—

बहादुर शाह का राज्याभिषेक—"अहमदनगर मे अपने डेरे में औरंगजेब ३ मार्च, १७०७ ई० को मर गया और उसके स्थान पर बहादुर शाह सिहासनारूढ हुआ। उसने खान-इ-ज़माँ मुनीम ख़ाँ को खान-खानान बहादुर जफरजङ्ग की उपाधि देकर अपना प्रधान-मन्त्री नियुक्त किया।

लोहागढ़-विजय—ता० ३० मई, १७०८ ई० को जब बहादुर शाह कामबख्श से युद्ध करने

---

[1] छत्रप्रकाश, अध्याय १६, पृ० १२८-६ [2] वही, अध्याय २० पृ० १३०-७ [3] वही, अध्याय २१, पृ० १३१-४० [4] वही, अध्याय २२, पृ० १४१-५ [5] वही, अध्याय २३, पृ० १४६-५० [6] औरंगज़ेब, भा० ५, पृ० ३६८-६ [7] छत्रप्रकाश, अध्याय २३, पृ० १४६, १४७, १५०-४ [8] वही, अध्याय २४, पृ० १५५-६ [9] वही, अध्याय २५, पृ० १६० [10] वही, अध्याय २६, पृ० १६१-३

के लिए दक्षिण को जा रहा था, तब छत्रसाल के हृदयशाह आदि पुत्रों ने उसकी सेवा में उपस्थित होकर मंसब प्राप्त किए थे। जब वह अपने शासन के चतुर्थ वर्ष में दक्षिण से उत्तर भारत को लौट रहा था, तब कोटा-प्रदेश में कारातीय नामक स्थान पर वह (छत्रसाल) स्वयं उपस्थित हुआ और सिक्ख गुरु गोविन्दसिंह के अनुयायी बन्दा को दबाने के लिए जाती हुई सेना के साथ हो लिया। वहाँ से चलकर बहादुरशाह अजमेर, रूपनगर, नारनौल, सोनपत, थानेश्वर (देहली को पर्याप्त व्यवधान पर छोडते हुए) आदि स्थानों पर होता हुआ लोहागढ के निकट पहुँचा। मुनीम ख़ाँ की सेना के अग्रभाग मे छत्रसाल बुन्देला और तोपखाने के सरदार इस्लाम ख़ाँ थे (१० दिसम्बर, १७१० ई०)। गुरु बन्दा भाग गया और दुर्ग पर मुसलमानों का अधिकार हो गया। पृथ्वी को खोदने पर लगभग बीस लाख की संपति शाही सेना के हाथ लगी (१६ दिसम्बर, १७१० ई०)।"[1]

दोनों विवरणों की तुलना करने पर लाल कवि का यह कथन, कि बहादुर शाह ने दिल्ली में रहकर छत्रसाल को लोहागढ जीतने के लिए भेजा, इतिहास के विरुद्ध ठहरता है। वास्तविकता तो यह थी कि सम्राट् दक्षिण से देहली को पर्याप्त दूरी पर छोडते हुए स्वय लोहागढ पहुँचा था और छत्रसाल मार्ग मे ही उसके साथ हो लिये थे। हाँ, यह अवश्य सत्य है कि उक्त युद्ध के अग्रभाग मे रहकर उन्होंने अभूतपूर्व वीरता प्रदर्शित की थी।

सेनायें

जुझारसिंह की सेना—छत्रप्रकाश से विदित होता है कि शाहजहाँ के आक्रमण का समाचार ज्ञात होने पर जुझारसिंह 'साठ सहस्र सुभट लेकर भाग गए।'[2] फ़ारसी इतिहासकारों के कथनानुसार 'जुझारसिंह की ओड़छा-स्थित सेना मे ५,००० अश्वारोही और १०,००० पैदल थे।'[3] इस ऐतिहासिक साक्ष्य के आधार पर लाल कवि का कथन अत्युक्तिपूर्ण ठहरता है।

चम्पतिराय और छत्रसाल की सेनाये—इन दोनों वीरों से सम्बन्धित विविध युद्ध-प्रसंगों की सेनाओं की संख्या का छत्रप्रकाश मे उल्लेख मिलता है, जो इस प्रकार है :—

(अ) 'सहरा के साहिबसिंह ने चम्पतिराय को सहायता के लिए दो सौ सैनिक भेजे।'[4]

(आ) 'छत्रसाल और बलदाऊ की प्रारम्भिक सेना में तीस अस्वार (असवार) और तीन सौ तुपक थी।'[5]

(इ) 'तहवर-पराजय मे १२ बुन्देले मरे और २७ सरदार घायल हुए।'[6]

(ई) 'जगत्सिंह ३००बन्दूकधारियों के साथ बहलोल ख़ाँ मयानौ के सामने जा डटे।'[7]

(उ) 'लोहागढ-युद्ध मे छत्रसाल के पन्द्रह सौ वीर काम आए।'[8]

उक्त उल्लेखों के अतिरिक्त लाल कवि ने यथास्थान छत्रसाल की उन्नति एव ख्याति के साथ सैन्य संख्या में होती हुई वृद्धि का भी उल्लेख कर दिया है। यद्यपि उक्त सैनिक-विवरणों के परीक्षण के साधन अप्राप्य है, पर उनकी प्रामाणिकता एकदम अस्वीकार नही की जा सकती।

---

[1] लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० १, ३६, १०४-१८, वही, भा० २, पृ० २२६-३०
[2] छत्रप्रकाश, पृ० २८ [3] हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ७, पृ० ४८; औरंगज़ेब, भा० १, पृ०२०
[4] छत्रप्रकाश, पृ० ५६ [5] वही, पृ० ८६, ६४ [6] वही, पृ० ११२ [7] वही, पृ० १३८
[8] वही, पृ० १६२

शाहजहाँ की सेना--लाल कवि ने लिखा है कि जुझारसिंह के विरुद्ध शाहजहाँ ने साठ सहस्र सेना भेजी।[1] उसने ओड़छा पर दो बार आक्रमण किए थे। प्रथम बार उसने ३४, ५०० सेना भेजी थी और दूसरे आक्रमण मे सभी सेना-नायकों की कुल मिलाकर २७,००० (अथवा २२, ५०० अथवा २०,०००) सेना थी।[2] छत्रप्रकाश मे दी हुई सैन्य-संख्या उक्त संख्या में से किसी से भी मेल नहीं खाती है। अतएव अत्युक्तिपूर्ण है।

छत्रसाल के प्रतिद्वन्दियों की सेनायें :—

(क) छत्रसाल के औरगजेब के यहाँ मसब स्वीकार कर लेने पर शाही सेना ने देवगढ़ पर आक्रमण किया। देवगढ़ के राजा ने सत्तर सहस्र वीरों को लेकर उसका सामना किया।[3]

(ख) ग्वालियर से फिदाई खाँ अठारह सहस्र सेना लेकर चला, जिसे धुरमगद ने मार भगाया।[4]

(ग) गढा कोटा के युद्ध में रणदूलह के साथ तीस सहस्र सेना थी।[5]

(घ) तहवर-पराजय मे ३०० मुसलमान मारे गए और २२० घायल हुए।[6]

(ङ) अनवर ने दस सहस्र सेना के साथ छत्रसाल पर आक्रमण किया।[7]

(च) धामौनी मे सुतरदीन सदैव तीस सहस्र सेना सन्नद्ध रखता था।[8]

(छ) बीस मवासो-पराजय मे छत्रसाल ने चार सहस्र शत्रु काट डाले।[9]

(ज) अब्दुल समद ने छत्रसाल पर दस सहस्र सिपाहियों को लेकर आक्रमण किया।[10]

(ज) बहलोल खाँ मयानी ने नौ सहस्र सेना लेकर बुन्देलों पर आक्रमण किया। जगत्सिंह ने चालीस तुरुक काट डाले।[11]

(ट) सिहुंडा में सहस्र पठानों के साथ मुराद मारा गया।[12]

(ठ) मठौध के युद्ध मे छत्रसाल ने सात सौ शत्रुओं को मार डाला।[13]

(ड) सैद अफ़गन छत्रसाल का सामना करने के लिए चार सौ सवार लेकर आया।[14]

(ढ) लोहागढ़ युद्ध मे छत्रसाल ने शत्रु के तीन सहस्र वीरों का सहार किया।[15]

छत्रसाल के प्रतिद्वन्दियों की ऊपर दी हुई सैन्य-सख्याओं की वास्तविकता की परीक्षा करने के लिए ऐतिहासिक सामग्री अप्राप्य है। अतएव निश्चयात्मक निर्णय पर पहुँचना कठिन है।

उपर्युक्त सैन्य-सामग्री पर विचार करने के उपरान्त यह धारणा निर्धारित की जा सकती है कि लाल कवि ने कुछ स्थलों पर छत्रसाल की वीरता प्रदर्शित करने के लिए शत्रु की सेना को अधिक और उनकी को कम बतलाकर चारण-परम्परा का अनुकरण किया है। यह कहना कि, उनके द्वारा दिए सभी आँकड़े काल्पनिक हैं, उनके प्रति अन्याय होगा। सच बात तो यह प्रतीत होती है कि लाल कवि ने अधिकांश स्थलों पर यथासम्भव सेना की वास्तविक संख्या का ही उल्लेख किया है।

---

[1] छत्रप्रकाश, पृ० २८ [2] हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा०७, पृ०४७; औरङ्गज़ेब, भा०१, पृ०१७, १६, २० [3] छत्रप्रकाश, पृ० ७३ [4] वही, पृ० ८२ [5] वही, पृ० १०५ [6] वही, पृ० ११२ [7] वही, पृ० ११८ [8] वही, पृ० १२१ [9] वही, पृ० १२६ [10] वही, पृ० १३० [11] वही, पृ० १३८ [12] वही, पृ० १४१ [13] वही, पृ० १४५ [14] वही, पृ० १४६ [15] वही, पृ० १६२

इस प्रकार ऐतिहासिक दृष्टि से विवेचन करने के उपरान्त यह परिणाम निकलता है, कि छत्रप्रकाश में केवल एक ही तिथि दी गई है, अन्यथा उसमें सन् संवतों का अभाव है। घटनाओं के क्रम में यत्र-तत्र व्यतिक्रम पाया जाता है। यद्यपि सभी घटनाओं की परीक्षा करने के लिए पर्याप्त सामग्री का अभाव है, तो भी जिन घटनाओं की परीक्षा की जा सकी है, उनमे से प्रायः सभी मूलरूप में इतिहासानुकूल हैं। चंपतिराय और छत्रसाल के समय की (दिसंबर, १७१० ई० तक की) साधारणतः प्रायः सभी प्रमुख और विशेषतः बुन्देलखड संबधी घटनाओं का इतना विस्तृत एव सूक्ष्म विवरण अन्यत्र मिलना दुष्कर है। इस ग्रन्थ से नवीन एवं प्रामाणिक ऐतिहासिक सामग्री प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध होती है। अतएव इस दृष्टि से छत्रप्रकाश का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

अध्याय ६

जंगनामा की ऐतिहासिकता

आगे के पृष्ठों मे 'जंगनामा' मे उल्लिखित तिथि, पात्र, घटना एव सेना की ऐतिहासिकता पर विचार किया जा रहा है।

तिथि

फर्रुखसियर और जहाँदारशाह की युद्ध तिथि :—

संवत् १७६६, पौष, पूर्णिमा बुधवार[1]

पौष अमा चद्र का मध्यन्य समाप्ति काल	३	दिसम्बर १६.६६
१५ तिथियों का समस्त व्याप्ति काल	१४ + १	१४ ७६
	१८	३१.७२

१८—१४=४=बुधवार, ३१ दिसम्बर १७१२ ई०

इस प्रकार गणना करने पर विदित होता है कि उक्त युद्ध बुधवार, ३१ दिसम्बर, १७१२ ई० को हुआ था।

इरविन महोदय ने जेकोबी के तिथि-चक्रों के आधार पर, श्रीधर द्वारा कथित उक्त तिथि, बुधवार, ११ जनवरी, १७१३ ई० मानी है।[2]

फारसी इतिहासकारों द्वारा दी हुई उक्त युद्ध की तिथि १३ ज़ुल्हिज्जा, ११२४ हि० (१० जनवरी, १७१३ ई०) से श्रीधर द्वारा कथित तिथि की तुलना करने पर केवल १० दिन का अन्तर पड़ता है।

श्रीधर ने उक्त युद्ध की हिज्री सन् मे १४ मुहर्रम, ११३३ तिथि मानी है।[3] उनकी यह तिथि भी अशुद्ध ठहरती है। "ऐतिहासिकों द्वारा दी हुई मान्य तिथि (१३ जुल्हिज्जा, ११२४ हि०) को गुरुवार अथवा शुक्रवार था, न कि बुधवार। संभव है कि 'जंगनामा' मे प्रतिलिपि-कर्त्ता की असावधानी से २३ के स्थान पर ३३ लिख गया हो। पर यह वर्ष (११२३ हि०) भी असभव है क्योंकि बहादुरशाह की मृत्यु एक वर्ष से अधिक समय (२१ मुहर्रम, ११२४ हि०) तक नहीं हुई थी।...साथ ही श्रीधर कथित उक्त हिज्री तिथि एवं सन्, विक्रमी सवत् तिथि से मेल नहीं खाते।

इसी प्रकार श्रीधर द्वारा दी हुई इलाही तिथि २२वीं अज़र भी ठीक नहीं है। यह तिथि उक्त कवि द्वारा दी हुई विक्रमी तथा हिज्री तिथि में से किसी से भी मेल नहीं खाती।"[4]

---

[1] जंगनामा, पंक्ति ८५४ [2] जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, १६००, पृ० ५५ (पाद-टिप्पणी) [3] जंगनामा, पक्ति ८५५ [4] वही, पंक्ति ८५६; जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, १६०० ई, पृ० ५४-५

अतएव श्रीधर द्वारा दी हुई तिथियाँ इतिहास मे कथित तिथि से भिन्न और अशुद्ध हैं।

पात्र

निश्चित पात्र

हिन्दू-पात्र—राजा छबीलेराम नागर—यह कडा-जहानाबाद का फौजदार था। इसने फर्रुखसियर की सहायता की, जिसके फलस्वरूप इसका मंसब पाँच हजारी हो गया और राजा की पदवी मिली। कालान्तर मे वह इलाहाबाद का सूबेदार नियुक्त होकर वहाँ गया। १७१६ ई० में वह मर गया।[1]

दयाबहादुर (दयाराम)—यह उक्त छबीलेराम का भाई था। यह अज़ीमुश्शान की सरकार मे तहसील का अफसर था। अजीमुश्शान की ओर से लडते हुए लाहौर मे मार्च १७१२ ई० में यह मारा गया।[2]

गिरधरलाल बहादुर—यह दयाबहादुर (दयाराम) का पुत्र और छबीलेराम का भतीजा था। इसे राजा गिरधर बहादुर की पदवी और अवध की सूबेदारी मिली। कुछ समय के पश्चात् यह मालवा का सूबेदार नियुक्त हुआ और वही पर १७२७ ई० मे होल्कर से युद्ध करते हुए मारा गया।[3]

मुसलमान पात्र—जलालदीं अकबर (जलालउद्दीन अकबर)[4], आलमगीर (औरगजेब), बहादुर शाह।[5]

मुइज़ुद्दीन जहाँदार शाह—यह बहादुर शाह का सबसे बडा लड़का था। इसका जन्म १० मई, १६६१ ई० को हुआ था और यह ११ फ़रवरी १७१३ ई० को मरा। इसने लगभग दश मास तक शासन किया था।[6]

ऐज़ुदीन (ऐज़ुद्दीन)—यह जहाँदार शाह का ज्येष्ठ पुत्र था। १२ दिसम्बर १७४४ ई० को इसकी मृत्यु हुई।[7]

फ़रुकशाह (फ़र्रुखसियर)—यह अजीमुश्शान का द्वितीय पुत्र था। इसका जन्म ११ सितम्बर, १६८३ ई० मे हुआ था। इसकी मृत्यु २७-२८ अप्रैल, १७१६ ई० को हुई।[8]

अब्दुल समद, अब्दुस्समद खाँ बहादुर दिलेर जंग, सैफुद्दौला—यह औरगजेब के समय में भारत आया और चार सदी मंसब पाया। बहादुरशाह के मरने पर उत्तराधिकार-युद्ध में यह ज़ुल-फिक़ार के साथ रहा और सुलतान जहाँशाह के मारने मे वीरता दिखलाई। फर्रुखसियर के समय मे दिलेर खाँ की पदवी सहित लाहौर का प्रान्ताध्यक्ष नियत हुआ। सिक्खों के दबाने में इसने बडी वीरता प्रदर्शित की। इस सेवा के लिए इसे सात हजारी ७००० सवार का मसब तथा सैफ़ुद्दौला की पदवी मिली। १७३७-३८ ई० में इसकी मृत्यु हुई।[9]

---

[1] मआसिरुल् उमरा, भा० १ पृ० १४०-१; लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ २०१, २१५, २२१ (पाद-टिप्पणी), २३०, २३१, २३२, २३३, २६२ [2] मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० १४०, १४१, १४२, ४२२; लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २०१ (पाद-टिप्पणी) [3] मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० १४१-२, लेटरमुगलस्, भा० १, पृ० २१५, २२१ (पाद-टिप्पणी) [4] देखिये द्वितीय खंड, अध्याय १ वीरसिंहदेव-चरित की ऐतिहासिकता, पृ० १८० [5] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ५, छत्रप्रकाश की ऐतिहासिकता, पृ० २७०, २७१ [6] लेटर मुग़लस्, भा०१ पृ०१४३, १४४, १८६-२४३। [7] वही, भा०वही, पृ० २४२ [8] वही, वही, पृ० २४४-२६४, ३६८-६ [9] वही, भा०वही, पृ०१८६-६०, २२६, २३०, २३६, २३७, २६१, मआसिरुल् उमरा, भा० २, पृ०२०८-१०

कुतुबुल्मुल्क सैय्यद अब्दुल्लाह ख़ाँ—इसका नाम हसन अली था। यह फ़र्रुख़सियर का प्रधान-मन्त्री था। बहादुरशाह के समय मे इसका मसब बढकर चार हजारी हो गया और यह क्रमशः अजमेर तथा इलाहाबाद का सूबेदार नियत हुआ। फर्रुखसियर के विजयी होने पर इसको सात-हज़ारी ७००० सवार का मसब, सैयद अब्दुल्लाह ख़ाँ कुतुबुल्मुल्क बहादुर यार वफ़ादार जफर जग की पदवी और प्रधान-मन्त्रित्व का पद मिला। कालांतर मे इसकी फर्रुख़सियर से अनबन हो गई। कुतुबुल्मुल्क तथा इसके भाई ने मिलकर १७ फरवरी, १७१६ ई० को सम्राट् फ़र्रुख़सियर को कैद करके रफीउद्दर्जात को बादशाह बनाया। इसी प्रकार यह लोग एक के पश्चात् दूसरा बादशाह बनाते रहे। अन्त मे कुतुबुल्मुल्क १७२३ ई० मे बन्दीगृह में विष पिला कर मार डाला गया।[1]

(सैय्यद) अबदुल्लाफ़्फार—यह सैय्यद सदर जहाँ सदरुस्सुदूर पिहानवी का वंशज था। जब मुहम्मद मुइज्जुद्दीन बादशाह हुआ तो उसन इसे इलाहाबाद का उप-शासक बनाकर भेजा। सैय्यद हसन अली ख़ाँ से युद्ध हुआ जिसमे यह विजयी होने के बाद फिर हारकर लौट गया।[2]

(अमीनुद्दौला) अमीनुद्दीन खाँ (बहादुर)—यह संभल का एक शेखजादा था। इसने जहाँदार शाह की सेवा आरम्भ की और फर्रुखसियर के समय मे यह एक यसावल नियत हुआ। मुहम्मद शाह के समय मे यह मीर-तुजुक के पद तक पहुँच गया। उसी राज्य-काल मे नादिरशाह के भारत से चले जाने पर यह मर गया।[3]

समसामुद्दौला अशरफ़ खाँ (खानदौराँ अमीरुल् उमरा ख्वाजा आसिम)—यह आरम्भ मे अज़ीमुश्शान के बालाशाही सवारों मे छोटे मंसब पर भर्ती हुआ। उत्तराधिकार-युद्ध के अवसर पर फ़र्रुख़सियर ने उसे दीवान-इ-खास का दारोग़ा नियत किया और अशरफ खाँ की पदवी दी। फर्रुखसियर के युद्ध मे विजयी होने पर इसने सात हजारी ७००० का मसब तथा समसामुद्दौला ख़ान दौराँ बहादुर मसूर जंग की पदवी पाई। कालान्तर मे यह नायब मीर बख्शी, बख्शी, तथा गुजरात के सूबेदार के पदों पर कार्य करता रहा। कुछ समय के पश्चात् इसे अमीरुल् उमरा की पदवी मिली और मीर बख्शी नियत हुआ। नादिरशाह की सेना से युद्ध करते समय वह घायल हुआ और मर गया।[4]

अज़ीमुश्शानी (अज़ीमुश्शान)—मुहम्मद अजीमुश्शान बहादुर शाह का तृतीय पुत्र था। इसका जन्म १६ दिसंबर, १६६४ ई० को हुआ था। उत्तराधिकार-युद्ध मे रावी नदी मे डूब गया। फ़र्रुख़सियर इसका पुत्र था।[5]

अरसला ख़ाँ (अर्सला ख़ाँ)—कवि का इस नाम से संभवतः उस अर्सला खाँ से अभिप्राय

---

[1] मआसिरुल् उमरा, भा०२, पृ०१६५-७२, लेटर मुग़लस्, भा १, पृ०३१, ३४, २०३-५, २०६, २१३, २१७, २२६-३४, २४७-८, २५५, २५८, २६४-३०१, ३२७-३७, ३४०, ३४८-५५, ३८१, ३८३, ३८६, ३८६, ३६०, ३६५, ४१६-७; वही, भा०२, पृ० १४, ५१, ५२, ६६; ७२, ७७, ६१-२, ६६, ६७-१०० [2] मआसिरुल् उमरा, भा० २ पृ० १६६; लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २०८ [3] मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० २४५, लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ०१८७, २४७, २६० [4] मआसिरुल् उमरा, भा० २, पृ० ४२३-७; लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० २२६ (पाद-टिप्पणी), २४८-६, २५१, २५२, २६०, २६२, २६४ [5] वही, भाग १, पृ०१४३, १४४, १७२-७

है जो औरङ्गजेब के ५वें वर्ष बनारस का फ़ौजदार हुआ। इसके अनन्तर यह सुलतानपुर बिलहरी का फ़ौजदार हुआ और दो हजारी ८०० सवार दो अस्पा सेह अस्पा का मसबदार हुआ। ४०वें वर्ष मे ५०० सवार बढे।[1]

आज़म ख़ाँ—(नवाब) इसका नाम मुहम्मद माह था। यह फिदाई ख़ाँ का पुत्र था।[2]

करूदीं ख़ाँ (कमरुद्दीन ख़ाँ बहादुर एतमादुद्दौला)—इसका वास्तविक नाम मीर मुहम्मद फाजिल था और यह एमादुद्दौला मुहम्मद अमीन खाँ बहादुर का पुत्र था। औरगजेब के राज्यकाल के अन्त में इसे यथोचित मसब और कमरुद्दीन खाँ की पदवी मिली थी। फर्रुखसियर के समय मे यह अच्छा मंसब पाकर अर्हदियों का बख्शी हुआ। शनैः शनैः यह प्रधान-मन्त्री के पद पर पहुँच गया। यह अहमद शाह दुर्रानी से युद्ध करने के लिए ससैन्य सरहिंद गया। वहीं गोला लगने से १७४८ ई० में इसकी मृत्यु हुई।[3]

गाजियुद्दीन खान (ग़ाज़ी उद्दीन ख़ाँ बहादुर ग़ालिब जंग)—यह सुलतान मुइज्जुद्दीन का धाय-भाई था और अहमद बेग के नाम से प्रसिद्ध था। उक्त सुलतान की सेना मे कुछ समय तक रहने के पश्चात् यह सुलतान अजीमुश्शान की सेवा में नियत होकर फर्रुखसियर के साथ बगाल गया। फर्रुखसियर ने उत्तराधिकार-युद्ध के अवसर पर इसको अच्छा मसब और गाजी उद्दीन खाँ की पदवी देकर सैन्य एकत्र करने को नियत किया। विजयी होने पर इसका मसब छः हजारी ५००० सवार हो गया तथा गाजीउद्दीन खाँ बहादुर ग़ालिब जग की पदवी और तीसरे बख्शी के पद से सम्मानित हुआ।[4]

जुल्फ़िक़ार ख़ाँ नसरत जंग—इसका नाम मुहम्मद इस्माइल था। यह असद खाँ आसफ़ुद्दौलाह का पुत्र था। ११वे वर्ष आलमगीरी मे इसने तीन सदी का मसब पाया। ३०वें वर्ष मे यह गुसुलखाने का दारोगा हुआ। ११०१ हिजरी मे इसे जुल्फ़िक़ार खाँ की उपाधि मिली। ३६वें वर्ष में बादशाह ने इसे पाँच हज़ारी ४००० का मसब और नसरत जङ्ग की पदवी दी। ४६वें वर्ष में यह मीर बख्शी के पद पर नियत हुआ। बहादुरशाह ने इसको सात हजारी ७००० सवार का मसब और समसामुद्दौलाह अमीरुल् उमरा बहादुर नसरत जङ्ग की पदवी देकर दक्षिण की सूबेदारी पर बख्शीगीरी के पद के साथ नियत किया। जब जहाँदार शाह बादशाह हुआ तब जुल्फ़िक़ार ने वजीरी और शाही प्रबन्ध का झडा उठाया। फर्रुखसियर से युद्धमे जहाँदार शाह के साथ हारने पर जुल्फ़िक़ार खाँ दिल्ली लौट गया। फ़र्रुखसियर ने उसको मरवा डाला।[5]

जा निसार ख़ाँ।[6]

---

[1] मआसिरुल् उमरा, भा० २, पृ० २७०, लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २५६ [2] जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, १६०० ई०, पृ० ५६; लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २१७, २२६ (पाद-टिप्पणी), २४६ [3] मआसिरुल् उमरा, भा० ३, पृ० १२-४; लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २५६ [4] वही, वही, पृ० २०१, २१०, २१२, २२६, २६०, २६६, २६७, मआसिरुल् उमरा, भा० ३, पृ० ३११-३ [5] वही, वही, पृ० ३२२-३४, लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० ६-१०, १८६, २२६ (पाद टिप्पणी सहित), २५६ (पाद-टिप्पणी सहित) [6] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ७, रासा भगवंतसिंह की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत पात्र-विवरण; मआसिरुल् उमरा, भा० ३, पृ० २७५-८; लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २२२-६ (पाद-टिप्पणी), २४५

ज़करिया ख़ाँ—श्रीधर ने इस नाम से सभवतः ज़िकरिया खाँ बहादुर हिज़्र जंग की ओर संकेत किया है, जो सैफुद्दौला अबदुस्समद खाँ का पुत्र था। यह अपने पिता के समय उसी के स्थान पर लाहौर का सूबेदार नियत हुआ। पिता की मृत्यु पर इसी के साथ इसे मुलतान की भी सूबेदारी मिल गई। १७४५ ई० मे यह मर गया।[1]

दिलावर ख़ाँ बहादुर—यह अब्दुल् अजीज़ दिलावर खाँ का पुत्र था और इसका नाम मुहम्मद नईम था।अपने पिता के मरने पर उसकी पदवी (दिलावर खाँ बहादुर) पाकर फ़र्रुखसियर के राज्यारंभ में यह निजामुल्मुल्क आसफजाह के साथ दक्षिण गया। ११३८ हि० (१७२६-२७ ई०) में इसकी मृत्यु हुई।[2]

निजामुद्दी अली ख़ां (नज़्मुद्दीन अली ख़ाँ बारह सैय्यद)—यह अबदुल्लाह खाँ सैय्यद मियाँ का पुत्र तथा कुतुबुल् मुल्क अब्दुल्लाह खाँ का कनिष्ठ भ्राता था। फर्रुखसियर का पक्ष लेकर यह मंसब की उन्नति पाकर सम्मानित हुआ। कुछ समयोपरात यह दिल्ली का सूबेदार बना। एक बार यह बन्दी-गृह मे डाल दिया दया। उससे मुक्त होकर यह क्रमशः गुजरात और ग्वालियर का शासक नियुक्त हुआ। ग्वालियर मे ही इसकी मृत्यु हुई।[3]

नूरुल्लाह ख़ाँ—ऐसा प्रतीत होता है कि इस नाम से कवि का अभिप्राय कादिर दाद खाँ बहादुर से है। इसका नाम शेख नूरुल्लाह खाँ था। यह शाहजहाँ के समय के रशीद खाँ अंसारी के पुत्र कादिर दाद खाँ का पुत्र था। इसे औरगजेब के समय चार सदी मसब और दक्षिण के दुर्गों मे से एक की सूबेदारी मिली। बहादुर शाह के समय इसका मसब एक हज़ारी हो गया और अपने पिता की पदवी पाकर खानदेश प्रात में जामवद का फौजदार नियत हुआ। फर्रुखसियर के समय में जब निजामुल्मुल्क आसफजाह दक्षिण का प्राताध्यक्ष नियत होकर वहाँ गया तब यह, जो उस सरदार की माँ की ओर से सगा सबधी था, भेंट करने आकर उसका साथी हो गया। धीरे-धीरे इसका मसब बढकर पाँच हजारी ४००० सवार हो गया। धोखे से यह एक नौकर के हाथ से मारा गया।[4]

महमद ख़ाँ बंगश (मुहम्मद ख़ाँ बगश)।[5]

ख़ां ज़मां अली असग़र ख़ाँ—यह कारतलब अंसारी का पुत्र तथा इटावा का फौजदार था। इसका जन्म १६७४-५ ई० मे और मृत्यु २६ जनवरी, १७४३ ई० को हुई थी। फ़र्रुखसियर ने इसे खाँ ज़माँ की उपाधि देकर बख्शी बनाया था।[6]

अफ़रासयाब ख़ाँ—यह मुहराब मिर्ज़ा अजमेरी नाम से विख्यात था। अफरासयाब खाँ बहादुर रुस्तम जंग इसकी उपाधि थी। यह गिरशास्प का पुत्र था। इसकी २१ अगस्त, १७१८ ई०

---

[1] मआसिरुल उमरा, भा० ३, पृ० ३१०-११ [2] वही, भा० वही, पृ० ४५३-४, [3] वही, वही, पृ० ५०५-७, लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० २०८, २२६ (पाद-टिप्पणी) [4] वही, भा० वही, पृ० २८ [5] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ३, भूषण-ग्रंथावली की ऐतिहासिकता, पृ० २०६; लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० २१६-२१७, २२६ (पाद-टिप्पणी), २३०, २३१, २३२, २३३ [6] वही, भा० वही, पृ० १०१ (पाद-टिप्पणी सहित), २१४, २२५, २३०, २३३

को देहली में मृत्यु हुई। इसने फ़र्रुख़सियर को कुश्ती लडने और धनुर्विद्या की शिक्षा दी थी। फ़र्रुखसियर ने इसे अपना तृतीय बख्शी नियुक्त किया था।[1]

अमीर ख़ाँ—श्रीधर ने इस नाम के दो व्यक्तियों का उल्लेख किया है जिनका विवरण इस प्रकार है :—

(१) अमीर ख़ाँ मीर मीरान—यह खलीलुल्ला खाँ यज़्दी का लडका था। शाहजहाँ के शासन काल में क्रमशः उन्नति करते-करते औरगजेब के राज्य के समय मे यह जम्मू के प्रान्त का फौजदार नियत हुआ। औरगजेब के १०वें वर्ष इसने यूसुफजई की चढाई मे बड़ी वीरता प्रदर्शित की। १६वें वर्ष में काबुल की चढाई मे यह साथ गया। २७ अप्रैल १६६८ ई० को यह मरा।[2]

(२) अमीर ख़ाँ—(मीर इस्हाक, उमद्तुल्मुल्क)—यह अमीर खाँ मीर मीरान का पुत्र था। इसने जहाँदार के युद्ध मे फ़र्रुख़सियर की अच्छी सेवा की, जिससे यह शस्त्राध्यक्ष और शिकारी चिडियाघर का दारोगा नियत हुआ। ११५२ हिजरी मे यह इलाहाबाद का सूबेदार बना। ११७६ हिजरी मे (५ जनवरी, १७४६-४७ ई०) यह एक नौकर द्वारा मार डाला गया।[3]

जैनदीं ख़ाँ (ज़ैनुद्दीन ख़ाँ बहादुर ख़ाँ)—यह गैरत खाँ का पुत्र और बहादुर खाँ दाऊद जई का पौत्र था। यह शाहजहाँपुर का एक निवासी था। इसने खजुआ के युद्ध में ऐजुद्दीन पर वीरतापूर्वक आक्रमण किया था। इसी युद्ध मे मुहम्मद माह आजम खाँ ने इसे घायल करके गिरा दिया था।[4]

कोकिलतास (कोकल ताश ख़ाँ)—अली मुराद खाँ जहाँ कोकल ताश ख़ाँ जहाँदार शाह का धाय-भाई था। जहाँदार शाह ने इसे अमीरुल् उमरा उपाधि देकर द्वितीय मन्त्री नियुक्त किया। फ़र्रुख़सियर के विरुद्ध युद्ध करते हुए यह छबीलेराम के हाथ से मारा गया।[5]

गाज़ीउद्दीन ख़ाँ चिकलीच ख़ाँ निज़ामुल्मुल्क—यह गाजीउद्दीन फीरोज जग का पुत्र था। इसका नाम मीर क़मरुद्दीन तथा चिकलीच ख़ाँ उपाधि थी। यह धीरे-धीरे उन्नति करता गया और जहाँदार शाह के शासन के अन्तिम दिनों मे यह आगरा का रक्षक नियत हुआ। वहाँ उसने फ़र्रुखसियर का साथ दिया। सिंहासनारूढ होने पर फ़र्रुखसियर ने इसे ख़ान ख़ानान निजामुल्मुल्क बहादुर फ़तह जङ्ग की उपाधि से विभूषित करके सम्पूर्ण दक्षिण का सूबेदार नियुक्त किया। इसका जन्म ११ अगस्त, १६७१ ई० और मृत्यु १७४८ ई० मे हुई थी।[6]

सैय्यद फ़तह अली ख़ाँ—सैय्यद फ़तह अली ख़ाँ सैय्यद अब्दुल्लाह ख़ाँ की बहिन का लड़का था। यह फ़र्रुख़सियर के तोपखाने का अध्यक्ष था। फ़र्रुख़सियर के उत्तराधिकार युद्ध में वीरतापूर्वक लड़ते हुए यह मारा गया। एक ऐतिहासिक के मतानुसार इसकी वीरता की

---

[1] लेटर मुगलस् भा० १, पृ०२१७, २३० (पाद-टिप्पणी), २५८ [2] मआसिरूल् उमरा भा० २, पृ० २५०-८ [3] वही, भा० वही, पृ० २४८-१, लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० १८७ (पाद-टिप्पणी सहित), २०७, २६० (पाद-टिप्पणी सहित) [4] वही, भा० वही, पृ०२११ (पाद-टिप्पणी सहित), २१७, २२५, २३०, २३१ [5] वही, वही, भा० १, पृ० १८६, १६७, २२१, २२६ (पाद-टिप्पणी सहित), २३०, २३३ [6] वही, भा० वही, पृ० १६४ (पाद-टिप्पणी सहित); २२१, २२६, २३२, २३३, २४४, २४५, २६२, २६८-७२; मआसिरुल् उमरा, भा० ३, पृ० ५५१-७

ख्याति से विद्वेष-भावना के वशीभूत होकर सैय्यद अब्दुल्लाह खाँ ने एक योरोपीय डाक्टर द्वारा फतह अली खाँ के घावों पर विषैली औषधियों का प्रयोग करवा करके इसे मरवा डाला।[1]

गुलाब अली खाँ (गुलाम अली खाँ) जुल्फिकार खाँ बहादुर—यह फर्रुखसियर के बाला-शाही में नौकर था। उत्तराधिकार-युद्ध में विजयी होने पर सम्राट् फर्रुखसियर ने इसे जुल्फिकार उपाधि से विभूषित करके तोपखाने का अध्यक्ष नियत किया।[2]

गैरति खाँ (गैरत खां)—यह अमीरुल् उमरा हुसेन अली खाँ का भानजा था और उसके सूबे अजीमाबाद-पटना (बिहार) में उप सूबेदार के पद पर नियुक्त था।[3]

दाऊद खाँ दुपट्टे बाज़—यह निर्णय करना कठिन है कि श्रीधर ने इस नाम से किस व्यक्ति की ओर संकेत किया है। इतिहास से विदित होता है कि "जब फर्रुखसियर दिल्ली की ओर जा रहा था, तो मार्ग में बिदकी नामक स्थान पर २७ नवम्बर, १७१२ ई० को हमीद खाँ कुरेशी का पौत्र हया खाँ शत्रु-पक्ष को त्याग कर फर्रुखसियर से आ मिला था। सम्राट् ने उसे दाऊद खाँ की उपाधि से विभूषित किया था।"[4] संभवतः कवि का इसी नाम से अभिप्राय है।

उमादतुल् मुल्क अमीरुल् उमरा बहादुर फीरोज़ जंग सैय्यद हुसेन अली खां—यह सैय्यद मियाँ अब्दुल्लाह खाँ का पुत्र और कुतुबुलमुल्क सय्यद अब्दुल्लाह खाँ का छोटा भाई था। औरङ्गजेब के शासन-काल में यह क्रमशः रणथम्भौर तथा हिंडौन-बयाना का शासक रहा। बहादुरशाह के मरने पर अपने भाई के साथ हुसेन अली खां ने फर्रुखसियर का साथ दिया। परिणामस्वरूप उसके सम्राट् बनने पर यह उसका मीर बख्शी बना। १७२० ई० में इसकी हत्या कर दी गई।[5]

इमत्याज़ खान (इम्त्याज़ खाँ)—फर्रुखसियर के उत्तराधिकार-युद्ध में इसने बड़ी वीरता प्रदर्शित की थी।[6]

जानी खाँ—यह जहाँदार शाह की हरावल में फर्रुखसियर के विरुद्ध था। वीरतापूर्वक युद्ध करते हुए इसने वीरगति प्राप्त की।[7]

ख्वाजा हुसेन- यह जहाँदारशाह के प्रमुख अमीरों में से था। कोकल ताश खाँ की पत्नी की भगिनी से इसका विवाह हुआ था। जहाँदार शाह ने इसे खानदौरां की उपाधि देकर अपना द्वितीय बख्शी बनाया। जब ऐजुद्दीन फर्रुखसियर का सामना करने के लिए भेजा गया था, उस अवसर पर यह उसकी सेना के प्रमुख अफसरों में से एक था। यह ऐजुद्दीन को बहला-फुसलाकर बिना युद्ध

---

[1] लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० २१७, २२६ (पाद-टिप्पणी); २३०, २३१ (पाद-टिप्पणी सहित) [2] वही, वही, पृ० २२६ (पाद-टिप्पणी), पृ० २६० [3] वही, भा० वही, पृ० २६२ [4] वही, भा० वही, पृ० २१८ [5] वही, भा०वही, पृ० २०३-५, २०६, २१७, २२७, २२६, २३०, २५८, २८२, २८७-६०, २६२, ३०२, ३०३, ३५७-६२, ३७४, ३७७-६, ३८५, ३६५, ४०७, ४१७, ४२२-६; वही, वही, पृ० १४, ३४, ४५, ५१, ५३, ५६-६२, १०० [6] वही, वही, पृ० २३० [7] वही, भा० वही, पृ० १८१, २२१, २२६ (पाद-टिप्पणी सहित), २३०-२३१, २३२

किये ही युद्ध-भूमि से भगा लाया था। फर्रुखसियर की विजय के अनन्तर देहली पहुँच कर सैय्यद अब्दुल्लाह ने इसको बन्दी बनाकर इसके सारे सामान को अपने अधिकार मे कर लिया था।[1]

ख्वाजा मुज़फ्फर अली खाँ ज़फर खाँ तोराबाज़ (तुर्राबाज़ खाँ)—ख्वाजा मुजफ्फर खाँ पानीपती को जफर खाँ की पदवी देकर फर्रुखसियर ने शस्त्रालय का अध्यक्ष नियुक्त किया था। यह तथा इसके साथी पगड़ी के ऊपर तुर्रा धारण करने के कारण तुर्राबाज़ (तोड़ाबाज़) कहलाते थे।[2]

मुज़फ्फर अली खाँ ख़ान-इ-जहाँ—यह म ना ैना खान दौरा ख्वाजा आसिम का भाई था। इसे खान जहाँ की उपाधि मिली थी। यह कुछ समय तक गुजरात का सूबेदार रह चुका था। नादिरशाह की सेना के साथ युद्ध करते हुए यह ११५१ हिजरी मे मारा गया।[3]

सैय्यद मुज़फ्फर अली खाँ—यह कुतुबुल्मुल्क अब्दुल्लाह खाँ का मामा था। फर्रुखसियर ने इसे सैय्यद खा जहाँ बहादुर की उपाधि से विभूषित करके अजमेर का सूबेदार नियुक्त किया था।[4]

खानाज़ाद खाँ शाइस्ता खाँ—इस व्यक्ति के सम्बन्ध मे निर्णय करना कठिन है। ऐतिहासिक ग्रन्थों से विदित होता है कि फर्रुखसियर के मामा का नाम ख्वाजा इनायतुल्लाह खाँ था, जिसे शाइस्ता खाँ की उपाधि मिली थी।[5] सम्भव है कि श्रीधर ने इसी की ओर सकेत किया हो। यह भी हो सकता है कि उक्त कवि ने फर्रुखसियर के मामा का अपने ग्रन्थ मे इनायतुल्ला, जिसका विवरण नीचे दिया जायेगा, नाम से ही उल्लेख किया हो और खानाजाद शाइस्ता खाँ नामक कोई अन्य अमीर उसकी सेना में रहा हो।

इनायतुल्लाह खाँ—इतिहास ग्रथों में फर्रुखसियर के समकालीन उक्त नामधारी दो व्यक्तियों का उल्लेख मिलता है। उनमे से एक फर्रुखसियर का मामा था, जिसका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। इस नाम का द्वितीय व्यक्ति इनायतुल्ला खाँ काश्मीरी था, जिसे जहाँदार शाह ने काश्मीर का सूबेदार नियत किया था। फर्रुखसियर के शासन के प्रारम्भ मे यह मक्का चला गया था और उसके राज्य-काल के मध्य मे लौटकर पुनः मसब प्राप्त करके काश्मीर का शासक नियुक्त हुआ था। ११३६ हिजरी मे इसकी मृत्यु हुई थी।[6]

श्रीधर द्वारा दिए गए इस नामधारी व्यक्ति के विवरण से ऐसा प्रतीत होता है कि उसने इनायतुल्ला खाँ काश्मीरी की ओर संकेत नहीं किया है। उसका अभिप्राय या तो फर्रुखसियर के मामा से है अथवा किसी अन्य व्यक्ति से।

लुतुफुल्लाह खाँ सादिक़—यह दिलेर दिल खा का भाई था। जहाँदार शाह ने इसे अपने बडे शाहजादे ऐजुद्दीन का दीवान नियत किया था। जब उक्त शाहज़ादा फर्रुखसियर का सामना करने के लिए सेना के साथ गया था उस समय यह अमीर उसके साथ था। युद्ध-भूमि से भागने के

---

[1] लेटर मुग़लस् भा० १, पृ० १८६, १६१, २१८, २४८ [2] वही, भा० वही, पृ० २६० (पाद-टिप्पणी सहित) [3] मआसिरुल उमरा, भा० २, पृ० ४२६ [4] वही, भा० १, पृ० २१६ (पाद-टिप्पणी सहित), २६१ [5] लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० १४४, ३०४ [6] मआसिरूल् उमरा, भा० २, पृ० ४४५-७; लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० १८७, २५६, २६१, ३३३, ३३४, वही, भा० २, पृ० १०५, १३८

लिए ऐजुद्दीन को परामर्श देनेवाले अमीरों में यह प्रमुख था। कालान्तर में इसने फ़र्रुखसियर का पक्ष ग्रहण किया। सिंहासनारुढ होने पर फ़र्रुखसियर ने लुतुफुल्लाह .खाँ बहादुर सादिक़ को दीवान-इ-तन नियुक्त किया।[१]

मुख़त्यार ख़ाँ—यह खान आलम बहादुर शाही का लड़का था। जहाँदार शाह की ओर से युद्ध करते हुए इसने वीरगति प्राप्त की थी।[२]

महमद बाकर (मुहम्मद बाक़िर)—कवि का इस नाम से सभवतः मुहम्मद बाकिर मौतमिद खाँ से अभिप्राय है। यह अमीर कुछ समय तक शाहजादा मुहम्मद आजमशाह का खान-इ-सामाँ रह चुका था। इसके अनन्तर यह शाहज़ादा जहाँशाह का दीवान रहा था। सिंहासनारूढ होने पर फ़र्रुखसियर ने इसे दीवान-इ-खालसा के पद पर नियुक्त किया था।[३]

तकर्रुब ख़ाँ—श्रीधर ने तकर्रुब .खाँ नाम से संभवतः मुहम्मद जफर .खाँ शीराजी तकर्रुब खाँ की ओर सकेत किया है। यह फर्रुखसियर का निजी मन्त्री था। आगरा की विजय के उपरात उक्त सम्राट् ने इसे खान-इ सामान नियुक्त किया। इसकी मृत्यु १ अप्रैल, १७१६ ई० को हुई।[४]

सैय्यद राजे खाँ (सैयद राजे मुहम्मद ख़ाँ)—यह इलाहाबादातर्गत मानिकपुर के गारदेजी परिवार का सैय्यद था। कहा जाता है कि इसका नाम हुसेन उद्दीन खाँ था और इसे सैय्यद राजे खाँ बहादुर दिलावर जंग की उपाधि मिली थी। फ़र्रुखसियर के युद्ध में यह जहाँदार शाह की ओर से लड़ा था।[५]

मीर जुमला—इसका वास्तविक नाम उबैदुल्लाह तथा इसके पिता का नाम मीर मुहम्मद वफ़ा था। इसका जन्म १६७०-७१ ई० मे हुआ था। यह क्रमशः बङ्गाल और बिहार में .काजी के पद पर रह चुका था। लाहौर से लौटते समय यह आगरे मे फ़र्रुखसियर से मिला। इसकी उपाधियाँ क्रमशः शरीअतुल्लाह खाँ, इबादुल्लाह .खाँ, बहादुर, मुजफ्फर जंग, मौतुमिदुल्मुल्क मुअज्ज़म .खाँ, खान .खानान, बहादुर मुजफ्फर जग, मीर जुमला, तरख़ानी, सुलतानी थीं। यह फ़र्रुखसियर का विशेष विश्वास-पात्र था।[६]

सरबुलन्द ख़ाँ—इसका वास्तविक नाम रफी सर बुलन्द खाँ था। यह फर्रुखसियर के पिता अजीमुश्शान का साला था। इसका जन्म १६७४ ई०में और देहावसान १६ जनवरी, १७४२ ई० को हुआ था। अजीमुश्शान ने इसे कड़ा-मानिकपुर का फौजदार नियुक्त किया था। विजयी होने पर फ़र्रुखसियर ने इसे अवध का सूबेदार बनाया।[७]

रशीद ख़ाँ—यह अफरासयाब .खाँ बहादुर, रुस्तम जग का बडा भाई था।[८]

---

[१] खेटर मुग़लस् भाग १ पृ० १८१, १८३, १८७, २१८, २१६, २४५, २५८, ३०१-२ [२] वही, भा० २२२, २३१, २३२, २३५ [३] वही, वही, पृ० २५८ [४] वही, भा० वही, पृ० २४६, २५० (पाद टिप्पणी सहित), २५३, २५५, २५६ [५] वही, भा० वही, पृ० १८६, २०७-८ (पाद टिप्पणी सहित), २२५, २२६ (पाद-टिप्पणी सहित), २३६ [६] वही, भा० वही, पृ० २२६, २४४ २४८, २४६, २५२, २५५, २५६ ६०, २६२, २६७-८, २७६, २६३, २६७, ३०१, ३३०, ३३१ ३३२, ३५२, ३५६ [७] वही, भा० वही, पृ० १६१, १६६-२०० (पाद-टिप्पणी सहित), २६२ [८] वही, भा० वही, पृ० १६६, २५६ (पाद-टिप्पणी)

सैय्यद शुजातुल्लाह खाँ—सैय्यद शुजातुल्लाह .खाँ कुतुबुल्मुल्क अब्दुल्लाह खाँ का भानजा था। विजयी होने पर फ़र्रुखसियर ने इसे दाग लगाने के विभाग (दाग़-ओ-तशीहा) का अध्यक्ष नियत किया था।[1]

शिकिन खान (सफ़ शिकन खाँ)—इसका वास्तविक नाम हसन बेग था। यह उड़ीसा का उप-सूबेदार था। उत्तराधिकार-युद्ध मे इसने फर्रुखसियर का पक्ष लिया और आगरा के युद्ध में बड़ी वीरता प्रदर्शित की थी।[2]

सादात .खाँ—इसका नाम मीर मुहम्मद तकी था। इसे क्रमशः हसन खाँ और सादात खाँ की उपाधियाँ मिली थीं। यह सादात खाँ का पुत्र था। यह हुसेनी जाति का था। .फारस का माजेंदरान प्रान्त इसके वंश का आदि निवास-स्थान था। कुछ दिनों तक इसफहान में रहने के पश्चात् इसके पूर्वज भारत मे आये थे। इसकी लडकी के साथ .फर्रुखसियर का विवाह हुआ था। सिंहासनारूढ होने पर सम्राट् ने इसे काश्मीर का सूबेदार नियुक्त किया। फर्रुखसियर के गद्दी पर से उतारे जाने के अवसर पर फरवरी, १७१९ ई० मे यह घायल हुआ और कुछ दिन के उपरान्त इसकी अस्सी वर्ष की अवस्था मे मृत्यु हो गई।[3]

अली नक़ी .खाँ—"यह उक्त सादात .खाँ का ज्येष्ठ पुत्र था। इसकी मृत्यु ६ रबी, ११२६ हि० को हुई।

फ़रज़द .खाँ—इसका वास्तविक नाम मुहम्मद मेहदी फरजंद खाँ था। यह सादात खाँ का द्वितीय पुत्र था। यह १८ शब्बान ११२८ हि० को ३३ वर्ष की आयु में मरा।

सैफ़ .खाँ—यह सादात खाँ का तृतीय लड़का था। ८ मुहर्रम ११५०हि० को इसका देहावसान हुआ।

सलावत खाँ—इसका नाम सलावत .खाँ जुल्फिकार जग था। यह सादात .खाँ का चतुर्थ पुत्र था। इसका शरीरान्त ११६६ हि० के पश्चात् हुआ।"[4]

सैफुल्लाह खाँ—सैफुल्लाह खाँ बहादुर .फर्रुखसियर के 'बालाशाही' सैनिकों मे से था। विजयी होने पर सम्राट् ने इसे जागीरों को ज़ब्त करनेवाले विभाग का अध्यक्ष बनाया था।[5]

सैय्यद सैफुद्दीन अली .खाँ—यह कुतुबुल्मुल्क का छोटा भाई था।[6]

सिराजुद्दीन अली .खाँ—यह अब्दुल्लाह .खाँ कुतुबुलमुल्क का छोटा भाई था। अब्दुल्-गफ़्फार का सामना करते हुए सराय-आलमचन्द के निकट इसकी मृत्यु हुई।[7]

हसन खाँ (दीवान प्रागी)—कवि का इस नाम से सभवतः सैय्यद हसन .खाँ से अभिप्राय है, जो सेय्यद हुसेन .खाँ का पुत्र था। यह अन्य अमीरों के साथ शत्रु-पक्ष को त्याग कर .फर्रुखसियर से जा मिला था।[8]

---

[1] लेटर मुगल्स् भा० १, पृ० २६० [2] वही, भा० वही, पृ०२११, २२६ (पाद-टिप्पणी) [3] वही, भा० १, पृ० २६१ (पाद-टिप्पणी सहित), ४००-१ [4] वही, भा० वही, पृ० ४०१ [5] वही, भा० वही, पृ० २३०, २५४, २६० [6] वही, भा० वही, पृ० २०८, २२६ (पाद-टिप्पणी) [7] वही, भा० वही, पृ० २०८, २०६ [8] वही, भा० वही, पृ० २१६

अफ़ज़ल खाँ—इसने फर्रुखसियर को कुरान पढाई थी। सिंहासनारूढ होने पर सम्राट् ने इसे सैय्यद अफ़ज़ल खाँ बहादुर सदर-जहाँ की उपाधि देकर सदारत-इ-कुल (अध्यक्ष दान-पुण्य-विभाग) नियत किया।[1]

मीर अशरफ़—यह मीर मुशरिफ का भाई था। फर्रुखसियर के उत्तराधिकार-युद्ध मे वीरता-पूर्वक शत्रु-सहार करते हुए इसने वीर-गति प्राप्त की।[2]

मीर मुशरिफ़—यह लखनऊ निवासी और उपर्युक्त मीर अशरफ का भाई था। यह फर्रुखसियर का समर्थक था।[3]

रफ़ीउलक़दर (रफ़ीउलक़द्र) रफ़ीसान (रफ़ीउश्शान)—शाहजादा रफीउलकद्र को रफ़ीउश्शसान की उपाधि से विभूषित किया गया था। यह सम्राट् बहादुर शाह का पुत्र और जहाँदार शाह का भाई था। इसका जन्म १०८१ हि० मे हुआ था। बहादुर शाह के मरने पर लाहौर के उत्तराधिकार-युद्ध मे जहाँदार शाह के विरुद्ध लडते हुए यह १७ मार्च, १७१२ ई० को मारा गया।[4]

अनिश्चित-पात्र

निम्नलिखित पात्रों के सम्बन्ध मे सहायक ऐतिहासिक ग्रन्थों मे विवरण अप्राप्य है। अतएव इनके सम्बन्ध मे निश्चायात्मक रूप से कुछ नही कहा जा सकता। पर सम्भावना यही है कि प्रायः ये सभी ऐतिहासिक व्यक्ति ही रहे होंगे :—

हिन्दू-पात्र—जयकृष्णदास (नज्मुद्दीन अली खाँ का दीवान), टीकाराम, बेनीराम नागर, भगौती राम (छबीलेराम का पुत्र), राउ दलपति, राजा रतनचन्द, राय भगवन्तराय दीवान (काकोरी निवासी), राजा गन्धर्वसिह, राय शिरोमणिदास, गुलाबराय (राजा छबीलेराम का दामाद), साहिब राय माथुर, सुबस राय (भगवन्तराय का पुत्र)।

मुसलमान पात्र—अब्दुल्लाह खाँ खोजा (ख्वाजाह अब्दुल्लाह खाँ), सैय्यद अनवर खाँ, असद अली खाँ, अकबर अली खाँ, अब्दुल् रसूल, अकरम मीर, अहमद खाँ सरबानी, आतस (आतश) खाँ, इलायची बेग (बहादुर दिल खाँ-उपाधि), इफतखार खाँ (इफ्तखार खाँ), इख्तियार खाँ, इनायत खाँ, इनायत शाह, इद्गार बेग, इबराहिम हुसेन (इब्राहीम हुसेन), क़ासिम बेग खाँ मिर्जा, खैरुद्दी अली खाँ, खोजा रहमतुल्लाह, गुलाब मेहदी खाँ, (गुलाम मेहदी खाँ) गुलाम मुईउद्दीन खाँ, जाँ बाज खाँ, जबरदस्त खाँ, जब्बर खाँ, तैयब, तैमूर खाँ, तौफेबाज, दरबार खाँ, दरबेश अली खाँ, सैयद, दरवेश मुहम्मद सैय्यद, दिल दिलावर खाँ, दिल दिलेर खाँ, दोस्त अली खाँ, नौशेरी खाँ (कोकल ताश खाँ का पुत्र), नेक नाम खाँ, पीरमुहम्मद (शेख) फतहुल्लाह खाँ, फकीरुल्लाह खाँ (मिर्जा), फ़िदाईखाँ, बैरम खाँ (बेरामखाँ), बासै खाँ (मुहम्मद बासेह खाँ—अफ़रासयाब खाँ का कनिष्ट भ्राता), मुसलेह खाँ, जफरजङ्ग खाँ (फ़िदाई खाँ का पुत्र) मुहम्मद साले (सालेह) खाँ (आज़म खाँ का भ्राता), मजूर (मिर्जा अथवा मियां), मुखलिस खाँ, मुहम्मद अमान बेग, महियार खाँ, मुहम्मद हयात खाँ सैय्यद, मुहम्मद अली सैय्यद, मीर मुहसिन

---

[1] लेटर मुगलस, भा० १, पृ० २६१ [2] वही, भा० वही, पृ० २३०, २३१, [3] वही, भा० वही, पृ०, वही [4] वही, भा० वही, पृ० ३६, १४३, १४५-६, १६१, १८४, १८५

खाँ, मुहम्मद शुजा (आजम खाँ का भाई), मुहम्मद हुसेन, मुमताज खाँ, मीर अजीज़ खां मिर्जा बहराम बेग (बरकंदाज खाँ का पुत्र), मीर खान (अमीरखाँ का पुत्र), मीर मुकर्रम, मुहम्मद अमीन खाँ, रहमरहमान खाँ, रुस्तम खा (रुस्तम दिल खाँ), रहमतुल्लाह खा (शेख), रहमतुल्लाह (ख्वाजाह), यादगार बेग, बली महम्मद, शुजातुल्लाह*, सादी (शादी खाँ), शुजायति अलीखान (शुजाअत अली खाँ), शेख रसूखियत ख़ाँ, (रसूखियत खाँ), सुलतान कुली ख़ाँ, शाकिर मुहम्मद (मीर), सैय्यद इमाम शेख, सैय्यद मुरुतजा खाँ, सुलतान बेग खाँ, बली खाँ मिर्ज़ा, हलीम खाँ दिला जाक, हेम खाँ, बहराम बेग (यह अपने पिता की उपाधि बरकन्दाज खाँ से विभूषित हुआ था), मियाँ निहाल (इतिमाद खाँ उपाधि), रहमत खाँ (मृतहव्वर खाँ उपाधि), शेख ख़ैरुल्लाह, रनदूल्लह, समुन्दर खान, हिज़बर खाँ, मदी अली ख़ाँ (मेहदी अली ख़ाँ) मुहम्मद असकरी (मियाँ), मुहम्मद इमाम, मुहम्मद वसी खाँ, सुलतान जहाँ (सैय्यद)।

फ़र्रुखसियर का अपने को सम्राट् घोषित करना—ता० २७ फरवरी, १७१२ ई० को बहादुरशाह की मृत्यु लाहौर मे हुई। उत्तराधिकार-युद्ध मे जुल्फिकार की सहायता से विजयी होकर जहाँदार शाह २६ मार्च, १७१२ ई० को सिंहासनारुढ हुआ। वह लाहौर से चलकर २२ जून, १७१२ ई० को दिल्ली पहुँचा।

बंगाल से आगरा को जाते समय अजीमाबाद-पटना मे फर्रुखसियर को उपर्युक्त सारी घटनाओं तथा उत्तराधिकार-युद्ध में अपने पिता अजीमुश्शान के मरण का समाचार ज्ञात हुआ। उसने वही पर अपने को सम्राट् घोषित कर दिया। साथ ही बिहार के सूबेदार हुसेन अली खाँ तथा उसके ज्येष्ठ भ्राता अब्दुल्लाह ख़ाँ को, जो उस समय प्रयाग का शासक था, विशेष रूप से सम्मानित करके अपनी ओर मिला लिया।[1]

कवि श्रीधर कथित विवरण तथा ऐतिहासिक उल्लेख समान हैं। उनमे कोई विशेष अन्तर नही है। श्रीधर द्वारा महाजनी चिट्ठी[2] के चलने का, जो उल्लेख किया गया है, वह भी सत्य है। महाजन अपने पत्रों मे तत्कालीन सम्राट् के नाम का उल्लेख किया करते थे। व्यापार के लिए दूर देशों में जाकर ये समाचार फैलाते थे। इसका उक्त घटना के सम्बन्ध मे तत्कालीन इतिहासलेखकों ने भी उल्लेख किया है, जैसा कि उनके आधार पर दिए गए इरविन के कथन से विदित होता है।[3]

यहाँ पर एक बात अवश्य विचारणीय है। श्रीधर ने फर्रुखसियर द्वारा अब्दुल्लाह खाँ को प्रयाग का सूबेदार नियुक्त करके भेजने का उल्लेख किया है। पर इतिहास से विदित होता है कि वह उस समय प्रयाग का सूबेदार था। अतएव उसका पटना मे पहुँचना असम्भव प्रतीत होता है। इरविन महोदय इस घटना को अनैतिहासिक बतलाते हैं।[4] इतिहास इस बात का

---

*यह निश्चित पात्रों में उल्लिखित सैय्यद शुजातुल्लाह खाँ से भिन्न व्यक्ति है।

[1] जंगनामा, पंक्ति ६-२६; लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० १३५, १५८-८६, १६०-२, १६८-६, २०५-६, दी सैर मुताख़रीन, भा० १, पृ० २२, ३४, ४१, ४४-५ [2] जंगनामा, पंक्ति ६ [3] लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० १८३ [4] जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, १६०० ई०, पृ० २

साक्षी है कि सैय्यद हुसेन अली खाँ तथा अब्दुल्ला खाँ को अपने-अपने सूबों की सूबेदारी फ़र्रुखसियर के पिता अजीमुश्शान की कृपा से ही प्राप्त हुई थी। साथ ही सिंहासनारुढ़ होते ही जहाँदार शाह अब्दुल्लाह ख़ाँ को प्रयाग की सूबेदारी से अलग करने की तैयारी कर चुका था।[1] ऐसी परिस्थिति मे श्रीधर के उक्त कथन का केवल यही अभिप्राय प्रतीत होता है, कि फर्रुखसियर ने अब्दुल्लाह खाँ को सम्मानित तथा अपनी ओर से प्रयाग का सूबेदार नियत करके सदेश भेजा था। अतः लक्षणा की सहायता से अर्थ लेने पर श्रीधर का कथन एकदम अनैतिहासिक नहीं माना जा सकता।

मीर ज़ुमला और जहाँदार शाह—श्रीधर के उल्लेख से ज्ञात होता है कि मीर जुमला मुईज़ुद्दीन की सेना मे रहकर फर्रुखसियर को सारा समाचार लिखता रहता था।[2]

पात्रों की ऐतिहासिकता पर विचार करते समय मीर जुमला के संबध मे लिखा जा चुका है कि लाहौर के युद्ध में अजीमुश्शान के मरने पर यह अमीर फर्रुखसियर से मिलने के लिए पूर्व की ओर चल दिया था। मार्ग मे जहाँदार शाह के व्यक्तियो ने इसे आगे नही बढने दिया। यह भी जहाँदार की सेना के तूरानी सरदारों को बहकाने मे सफल हुआ था। आगरे मे वह फ़र्रुखसियर से मिला था। इस बीच में यह जहाँदार शाह संबधी विवरण अवश्य ही अपने स्वामी के पास भेजता रहा होगा। अतएव श्रीधर का उक्त कथन सत्य है।

इरविन महोदय ने इस घटना को असत्य माना है।[3] उनके कथन की वास्तविकता जानने के लिए नीचे श्रीधर की पंक्तियाँ तथा इरविन कृत अँगरेजी अनुवाद दिया जा रहा है :—

"तहँ मीर जुमला मीर बुद्धि गंभीर बाहु विशाल।
मडि रह्यो मौजदीन की कटक गहि करवाल॥"[4]

इरविन के शब्दों मे :—

The Mir Jumlah, a noble, clever, deep, strong of arms, Fought Mauzuddin's army, grasping the sword."[5]

कहने की आवश्यकता नहीं है कि 'मडि रह्यो' का 'युद्ध करना' (fought) अनुवाद करने से इरविन महोदय को उक्त भ्रम हो गया है। इस शब्द का अर्थ 'सम्मिलित हो गया,' 'मिल गया' करने से उक्त भूल के लिए स्थान ही नहीं रह जाता है।

अतएव श्रीधर का उक्त कथन ऐतिहासिक है और उसके संबंध मे इरविन महोदय की धारणा एकदम निराधार है।

अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ और अबुल हसन का युद्ध—जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि जहाँदार शाह ने अबदुल्लाह ख़ाँ को प्रयाग की सूबेदारी से अलग कर दिया, उसके स्थान पर राजे मुहम्मद ख़ाँ को सूबेदार तथा सैय्यद अबदुल् ग़फ्फार को उप-सूबेदार नियुक्त किया।

अब्दुल ग़फ़्फ़ार कडा-मानिकपुर के निकट पहुँचा। अब्दुल्लाह ने अपने बख़्शी सैय्यद

---

[1] लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २०५-७ [2] जंगनामा, पंक्ति ३०-३; लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० २६७-८ [3] जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, १९०० ई०, पृ० २ [4] जंगनामा, पंक्ति ३०-१ [5] जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, १९०० ई०, पृ० ३२

अबुल् हसन खाँ को उसका सामना करने के लिए भेजा। सराय आलमचन्द (प्रयाग से २० मील उत्तर-पश्चिम) के निकट युद्ध हुआ। इस युद्ध मे अब्दुल्लाह ख़ाँ का भाई सिराजुद्दीन अली ख़ाँ मारा गया। अब्दुल्लाह ख़ाँ की विजय हुई। अब्दुल गफ्फार खाँ ने आगरे की ओर भागकर शहजादपुर (प्रयाग से लगभल ३५ मील उत्तर-पश्चिम) में दम लिया।[1]

सैर मुताखरीन मे अब्दुल्लाह खाँ के उस युद्ध मे मृत भाई का नाम नूरुद्दीन लिखा है, पर इरविन महोदय ने ख़फ़ी ख़ाँ आदि के आधार पर उसका नाम सिराजुद्दीन लिखा है जो श्रीधर के कथन का समर्थन करता है। इस प्रसग सबधी शेष सभी घटनाएँ इतिहास के विवरण से मेल खाती हैं।

फ़र्रुखसियर का प्रयाग पहुँचना—हुसेन अली के फ़र्रुखसियर के पक्ष मे हो जाने पर ग़ाजीउद्दीन ख़ाँ गालिब जङ्ग, ख्वाजा आसिम (अशरफ़ ख़ाँ) उससे पटना में मिले। सम्राट् ने सफ़शिकन को उड़ीसा का उप-सूबेदार और अशरफ ख़ाँ को दीवान-ख़ास का अध्यक्ष नियुक्त किया। इसी अवसर पर मीर मुशरिफ, जैनुद्दीन खाँ आदि अमीर भी उसके पक्ष मे आ गए।

१८ सितम्बर, १७१२ ई० को फर्रुखसियर ने अपना डेरा आगे भेज दिया। चार दिन के पश्चात् स्वयं पटने से चला। दानापुर, शेरपुर आदि स्थानों पर होते हुए वह बनारस के निकट छोटे मिर्ज़ापुर मे रमजान की तीसवी तारीख (३० अक्टूबर) को पहुँचा। वहाँ एक दिन आराम किया। इसके अनन्तर यात्रा पुनः आरंभ हुई। ५ नवम्बर, १७१२ ई० को फर्रुखसियर झूसी पहुँचा। उस स्थल पर उसने अब्दुल्लाह ख़ाँ को अपना प्रधान-मन्त्री बनाया और हुसेन अली खाँ को अमीर-उल्-उमरा की पदवी से विभूषित किया। तदनन्तर १२ नवम्बर को गङ्गा जी को पार करके फ़र्रुखसियर ने नए और पुराने प्रयाग के मध्य डेरा डाला।[2]

श्रीधर ने इस घटना संबंधी अपने विवरण मे फर्रुखसियर के पक्ष में आने वाले सरदारों की एक लम्बी सूची दी है। इनमे से अधिकाश के नाम इतिहास-ग्रथों मे मिल जाते हैं।

उक्त कवि ने बनारस मे फर्रुखसियर द्वारा ईद मनाने का उल्लेख किया है, जो ठीक ही प्रतीत होता है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि, वह बनारस के निकट ३० अक्टूबर को पहुँचा था और वहाँ पर आगामी दिन (३१ अक्टूबर) को आराम किया था। उस वर्ष ईद ३१ अक्टूबर, १७१२ ई० को पडी थी। तत्कालीन इतिहास लेखक कामूवर भी इसे स्वीकार करता है।[3]

पटना से प्रयाग की ओर चलने वाले अमीरों की दीर्घ सूची में श्रीधर ने मीर जुमला के नाम का उल्लेख किया है,[4] जो असत्य है। वास्तव में मीर जुमला उस समय उसके साथ नही था। बहादुरशाह के मरने पर लाहौर में जो उत्तराधिकार-युद्ध हुआ था, उसमें मीर जुमला फर्रुखसियर के पिता अर्जमुशशान के साथ था। अपने स्वामी के मारे जाने पर वह फ़र्रुखसियर से मिलने के लिए चला और उसके आगरे मे पहुँचने पर उससे भेट की थी।[5] अतः कवि श्रीधर का उक्त कथन इतिहास से विपरीत पड़ता है।

---

[1] जंगनामा, पक्ति ३४-१३०; लेटर मुगलस्, भा० १, पृ०२०७-६; दी सैर मुताख़रीन, भा० १, पृ० ४८ ६ [2] जंगनामा पं० १३१-३६२; लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २१०-३ [3] जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, १६०० ई०, पृ० ५४ [4] जंगनामा, पं० २०५ ६ [5] लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ०२२७, २६८-८

खजुआ का युद्ध और ऐजुद्दीन की पराजय—"जब जहाँदार शाह लाहौर से देहली को लौट रहा था तब उसे फ़र्रुखसियर के पटना पहुँचने का समाचार मिला था। उसने फ़र्रुखसियर की गति-विधि पर दृष्टि रखने के लिए ख्वाजा हुसेन खाँ दौराँ तथा लुतुफुल्लाह सादिक़ की सरक्षता में अपने बडे बेटे ऐजुद्दीन को आगरे भेजा।

अब्दुल् गफ्फार की पराजय का समाचार ज्ञात होने पर जहाँदार शाह ने ऐजुद्दीन को प्रयाग की ओर रवाना होने की आज्ञा दी। इटावा पहुँचने पर शाहजादे ऐजुद्दीन से अली असगर खाँ, जो फर्रुखसियर का सहायक था, मिला। वह नवम्बर, १७१२ ई० को कोडा पहुँचा। वहाँ पर उससे चकला-कड़ा-मानिकपुर का फौजदार (इजाद के अनुसार कोड़ा का फौजदार) छबीलेराम, जो गुप्त रूप से फ़र्रुखसियर का मित्र था, मिला। अन्त मे खजुआ पहुँचकर ऐजुद्दीन ने अपना डेरा डाला।

फ़र्रुखसियर भी प्रयाग से प्रस्थानित होकर हथगाँव, कुँवरपुर, रोशनाबाद आदि स्थानों पर होता हुआ अकिलाबाद में पहुँचा।

मार्ग में खमसरा घाट के निकट अपने भतीजे गिरधरलाल के साथ छबीलेराम फर्रुखसियर से जाकर मिला। कुँवरपुर नामक स्थान पर असगर खाँ उसके पास आया। बादशाह ने उसे खाँ जमाँ की उपाधि से विभूषित किया। अकिलाबाद मे मुहम्मद खाँ बगश आकर फर्रुखसियर के पक्ष में हो गया।

२४ नवम्बर, १७१२ ई० को रोशनाबाद से अब्दुल्लाह खाँ तथा हुसेन अली खाँ युद्ध-भूमि का निरीक्षण करने के लिए आगे बढे और एजुद्दीन की खाइयों के निकट तक जा पहुँचे। २६ नवम्बर को फर्रुखसियर की प्रधान सेना आधे मील आगे अकिलाबाद तक तथा २७ नवम्बर को बिंदकी तक बढ गई। इसी दिन शत्रु-पक्ष को त्याग कर हया खाँ फर्रुखसियर से जा मिला, जिसे दाऊद खाँ की उपाधि दी गई।

२८ नवम्बर, १७१२ ई० की रात्रि मे ख्वाजा हुसेन खाँ दौराँ तथा [illegible] खाँ के बहकाने से ऐजुद्दीन सपरिवार आगरे को भाग गया जहाँ वह एक सप्ताह मे जा पहुँचा।

प्रातःकाल होने पर फर्रुखसियर की सेना ने शत्रु की सेना की मन मानी लूट की।

खजुआ के स्थान पर शत्रु-पक्ष के आए हुए सैय्यद मुजफ्फर खाँ (अब्दुल्लाह खाँ के मामा), सैय्यद हसन खाँ, मुस्तफ़ा हुसेन, लुतुफुल्लाह खाँ आदि अमीर फ़र्रुखसियर से मिले।[1]

जंगनामा तथा इतिहास मे वर्णित उक्त घटना सम्बन्धी विवरण प्रायः एक से हैं। कुछ बातों के सबंध मे साधारण अन्तर अवश्य है। श्रीधर ने छबीलेराम के फर्रुखसियर से मिलने के स्थान का नाम कडा दिया है, पर इतिहास ग्रथों के अनुसार कड़ा से दो या तीन मंज़िल प्रयाग की ओर कोई अन्य स्थान था। इसी प्रकार हथगाँव मे अली असगर खाँ को खाँ जमाँ की उपाधि दिये जाने का श्रीधर ने उल्लेख किया है और इतिहास से विदित होता है कि वह बादशाह से कुँवर पुर में मिला था। फर्रुखसियर हथगाँव में १६ नवम्बर और कुँवर पुर मे २३ नवबर को

---

[1] जंगनानामा, पंक्ति ३७, ३६३-६६२; लेटर मुगलस्, भा० १, पृ०१६०-१, २१३-६; दी सैर मुताखरीन, भा० १, पृ७ ५०-१

पहुँचा था। इस प्रकार कवि श्रीधर और इतिहास मे कथित असगर के मिलने की तिथि में चार दिन का अन्तर पडता है। साथ ही उसको खाँ .जमाँ की उपाधि कई दिन के पश्चात् मकरन्द-नगर मे १३ दिसंबर को दी गई थी।

इसी प्रकार मुहम्मद .खाँ बगश के फर्रुखसियर से मिलने के संबध मे भी दोनों मे मत-भेद है। जगनामा के अनुसार यह अमीर .फर्रुखसियर से खजुआ के युद्ध के उपरान्त और इति-हास के मत से उस युद्ध से पूर्व मिला था।[1]

इस प्रसग मे एक बात और विचारणीय है। श्रीधर ने लिखा है कि उक्त युद्ध के अवसर पर .फर्रुखसियर ने शाहज़ादे को सेनाध्यक्ष बनाकर हरावल मे भेजा था।[2] यदि उसके इस कथन से फर्रुखसियर के पुत्र से अभिप्राय है तो उस समय उसके केवल एक ही बडा पुत्र मुहम्मद फर्खुन्दा-सियर जहाँगीर शाह था। उसका जन्म २७ दिसबर, १७११ ई० को पटना मे हुआ था और मृत्यु देहली मे १२ मई, १७१३ ई० को हुई थी।[3] इस प्रकार उस शाहजादे की उक्त युद्ध के अवसर पर अवस्था केवल ११ मास की थी। ऐसी परिस्थिति मे श्रीधर के कथन का केवल इतना ही अभिप्राय प्रतीत होता है कि उस बालक शाहजादे को केवल सेनाध्यक्ष घोषित कर दिया गया होगा। इति-हास से प्रकट होता है कि सम्राट् बनने के पश्चात् फर्रुखसियर ने अपने इसी अल्पवयस्क शाह-.जादे .फर्खुन्दाबख्त उपनाम जहाँगीर शाह को बगाल का सूबेदार नियुक्त करके मुर्शिद कुली खाँ को उसका उप सूबेदार नियत किया था। कुछ मास के उपरान्त उसकी मृत्यु हो गई थी।[4] अत-एव कवि का उक्त कथन तथ्यपूर्ण प्रतीत होता है।

श्रीधर ने इस युद्ध के अवसर पर दोनों पक्षों के वीरों की युद्ध की तैयारी, युद्ध तथा ऐजुद्दीन के भागने आदि का विस्तृत वर्णन किया है, पर इतिहास से ज्ञात होता है कि ऐजुद्दीन युद्ध किये बिना ही वहाँ से भाग खडा हुआ था।

श्रीधर के उक्त घटना सबधी शेष विवरण ऐतिहासिक हैं।

जहाँदारशाह और दिल्ली-दरबार—श्रीधर ने जहाँदारशाह के समय मे दिल्ली के राज-दरबार की जो दशा थी, उसका सजीव चित्रण किया है। इस वर्णन का समर्थन फारसी-ग्रन्थों के आधार पर लिखे गये इरविन के इतिहास से हो जाता है। दोनों विवरणों मे कोई विशेष अन्तर नहीं है। उनका सार इस प्रकार है :—

"जुलाई १७१२ ई० से जहाँदार शाह के दिसम्बर, १७१२ ई० में आगरा रवाना होने के समय तक पाँच मास दिल्ली मे भोग-विलास का साम्राज्य रहा। सर्वत्र अव्यवस्था छा गई। नगर मे प्रत्येक मास में तीन बार प्रकाश किया जाता था। अनाज बहुत महँगा हो गया था। जहाँदारशाह की प्रेयसी नर्त्तकी लालकुवरि के सम्बन्धी अमीर बनाकर उच्च पदों पर नियुक्त कर दिए गए थे। वे स्वच्छन्दतापूर्वक देहली की सडकों पर अवाछित कार्य करते फिरा करते थे। नीच व्यक्तियों को उच्च जागीर और अन्य सम्मान प्रदान कर दिए गए थे। रात्रि में

---

[1] जंगनामा, पंक्ति ७६१-५, लेटर मुगल्स्, भा० १, पृ० २१६-७, २२६ [2] जंगनामा, पंक्ति ४०६ १०, ४८० [3] लेटर मुगल्स्, भा० १, पृ० ४०२ [4] वही, भा० वही, पृ० २६२

नीच गायक राजप्रासाद में बादशाद के साथ मदिरा-पान करते और उन्मत्तावस्था मे जहाँदार शाह का अपमान करते, पर वह लालकुंवरि के भय से कुछ न कहता था।

इसके अतिरिक्त, प्रधान-मन्त्री जुल्फिकार खाँ तथा अमीर-उल उमरा कोकल ताश खाँ में झगड़ा खडा हो गया था। इस कारण राज्य-व्यवस्था भी गड़बड़ होने लगी थी। अभिप्राय यह है कि केन्द्र मे एकदम अव्यवस्था एव स्वेच्छाचारिता का साम्राज्य हो गया था।"[1]

जहाँदार शाह का आगरा पहुँचना—"तारीख २ दिसम्बर, १७१२ ई० को दिल्ली मे जहाँदार शाह को ऐजुद्दीन के खजुआ से भाग आने का समाचार ज्ञात हुआ। आगरे पहुँचकर शत्रु का सामना करने का उसने निश्चय किया। सोना, चाँदी तथा अन्य सामान बेचकर सेना को गत ११ मास का वेतन चुकाने का प्रयत्न किया गया। चिन किलिच खाँ को आगरे की रक्षा करने के लिए पहले से ही रवाना कर दिया गया।

६ दिसम्बर १७१२ ई० को जहाँदार शाह दिल्ली से चला। मार्ग मे उसे बहुत से अपशकुन हुए। देहली से आगरे तक जाते समय आकाश अविरल रूप से मेघाच्छन्न रहा, वर्षा होती रही, ठंडी वायु चलती रही और भारी कुहरा पडता रहा।

एक लाख सेना के साथ यात्रा करते हुए जहाँदार शाह ने २६ दिसम्बर को आगरे से ३ मील दक्षिण मे बाग दहरा में डेरा डाला। वहाँ पर शाहजादा ऐजुद्दीन ने जाकर बादशाह से भेंट की। तारीख ३० दिसम्बर को जहाँदार शाह आगरे के पूर्व लगभग ८ मील, यमुना किनारे सामूगढ नामक स्थान पर पहुँचा। वही पर उसने ७ जनवरी १७१३ ई० को ईद मनाई।"[2]

श्रीधर ने कहा है कि जहाँदार शाह अपनी सेना को दो मास का अग्रिम वेतन देकर दूसरे ही दिन आगरे की ओर चल पडा था, पर इतिहास से ज्ञात होता है कि उसने विगत मासों का वेतन चुकाया था और प्रस्थान करने मे उसे एक सप्ताह लग गया था। उस समय की दिल्ली की दुर्दशा को देखते हुए इतिहास का कथन अधिक मान्य प्रतीत होता है।

अपशकुन सम्बन्धी उल्लेख दोनों मे समान रूप से पाया जाता है।

श्रीधर के अनुसार ऐजुद्दीन जहाँदार शाह से सामूगढ़ मे और इतिहास के विचार मे वह उससे बाग दहरा मे मिला था। इस सबध मे निश्चयपूर्वक कुछ कहना कठिन है, पर ऐसा अनुमान लगाना अनुचित न होगा, कि देहली से आगरे को आते समय जहाँदार शाह बाग दहरा मे पहले पहुँचा था और सामूगढ मे बाद को। इसके अतिरिक्त बाग़ दहरा सामूगढ की अपेक्षा आगरे के अति निकट था। अतएव उन दोनों का बाग़ दहरा में मिलना ही अधिक स्वाभाविक लगता है।

फ़र्रुखसियर का आगरा पहुँचना—फ़र्रुखसियर १ दिसम्बर, १७१२ ई० को खजुआ से चलकर कोड़ा मे पहुँचा। वहाँ शेख बदरुद्दीन की दरगाह के दर्शन किए। वहाँ से चलकर अन्य स्थानों पर होता हुआ ६ दिसम्बर को मक्खनपुर* पहुँचा। दूसरे दिन उसने शाहमदार की दरगाह

---

* यह नगर कानपुर से ३४ मील उत्तर-पश्चिम को है (लेटर मुग़लस् भाग १, पृष्ठ २२५, पाद-टिप्पणी)।

[1] जंगनामा, पंक्ति ६७२-६२, लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० १६२-७ [2] जंगनामा, पंक्ति ६६८-७०३; लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० २१६-२५, दी सैर मुताख़रीन, भा० १, पृ० ५१-२

पर अर्चना की। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, तारीख १३ दिसम्बर को मकरन्दनगर में अली असगर ख़ाँ को ख़ाँ जमाँ की उपाधि देकर उसने आज़म खाँ के स्थान पर बख्शी बनाया। वहाँ से चलकर फर्रुखसियर ने कन्नौज, इटावा, शिकोहाबाद आदि स्थानों पर होते हुए २ जनवरी, १७१३ ई० को ऐतमादपुर* मे डेरा डाला।

४ जनवरी को वहाँ से चलकर वह ६ मील पर स्थित सरायबेगम नामक स्थान पर पहुँचा। यहाँ पर उसे ज्ञात हुआ कि मीर जुमला के बहकाने से तूरानी नेता चिन किलिच ख़ाँ तथा मुहम्मद अमीन खा जहाँदारशाह का पक्ष न लेकर युद्ध के अवसर पर तटस्थ रहेगे।

इसी प्रकार आगे चलते हुए उसने तारीख ८ जनवरी को रात्रि मे यमुना पार की। तदनन्तर उसकी सेना ने आगरा दुर्ग से ५ मील पश्चिम मे सिकन्दरे के पास सराय रोजबहनी पर डेरा डाला। खफी खाँ के मतानुसार उक्त सराय आगरे से ६ मील पश्चिम में थी। यहीया नामक लेखक के विचार में इसकी सेना सिकन्दरे मे ठहरी थी। श्रीधर के अनुसार सिकन्दरे से २ मील पर 'रोज़ बहासु' (रोजबहरी) स्थान था। इसी स्थान के मध्य से सेना नदी के पार उतरी थी। इसी स्थल पर ६ जनवरी को सेना ने आराम किया।[1]

इतिहास लेखकों के मतानुसार फर्रुखसियर को गाजीउद्दीन आदि अमीरों के फूटने की सूचना सराय बेगम नामक स्थान पर और श्रीधर के मत से शाहमदार (कोडा) मे मिली थी। शेष विवरणों मे दोनों मे कोई विशेष अन्तर नही है।

आगरा-युद्ध—"जब जहाँदारशाह को ज्ञात हुआ कि फर्रुखसियर ने यमुना नदी पार कर ली है, तब वह सामूगढ से हटकर ससैन्य सिकन्दरे के निकट पहुँचा। तारीख १० जनवरी, १७१३ ई० को दोनों पक्षों की सेनायें युद्ध-क्षेत्र मे आ डटी। प्रातःकाल से वर्षा होती रही। तीन बजे पानी बरसना बंद हुआ। तब युद्ध का श्री गणेश हुआ। छबीलेराम नागर और खाँ ज़माँ (अली असगर) शत्रु-पक्ष के जानी ख़ाँ की ओर बढे और जुल्फ़िकार खाँ फर्रुखसियर के सामने आने का प्रयत्न करने लगा। इसी प्रकार दोनों पक्ष के वीर अपने विपक्षियों पर आक्रमण करने लगे। अब्दुस्समद के साथियों ने घायल करके हुसेन अली ख़ाँ को गिरा दिया। मीर अशरफ (मीर मुशरिफ का भाई), सैयद फतह अली खाँ, जानी ख़ाँ, रजाकुली खा, इस्माइल ख़ा, कोकलताश ख़ा, मुर्तजा खा, मुख्त्यार खा, वजारत खाँ आदि वीरों ने वीरतापूर्वक युद्ध करते हुए वीरगति प्राप्त की।

(अन्त में पराजित होकर जहादारशाह दिल्ली को भाग गया और फर्रुखसियर विजयी हुआ।)"[2]

सेनाएँ

(अ) मुइज्जुद्दीन जहाँदारशाह की सेना—श्रीधर ने इसकी सेना की संख्या आगरे

---

*यह नगर यमुना नदी से ३ मील और सामूगढ़ से ५ मील उत्तर-पूर्व में है।

[1] जंगनामा, पंक्ति ६६३-७, ७७४-८३८; लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २२५-८, दी सैर मुताख़रीन, पृ० ५२-५३ [2] जंगनामा, पंक्ति ८३६-१६२०, लेटर मुग़लस्, भा० ६, पृ० २२८, २२६-४०; दी सैर मुताख़रीन, भा० १, पृ० ५३-५६

के युद्ध के अवसर पर तीन लाख मानी है।[1] इरविन के मतानुसार उसकी संपूर्ण सेना एक लाख थी।[2]

(आ) मुहम्मद ख़ाँ बंगश की सेना--बीस सहस्र।[3] 'ऐतिहासिकों के मत से वह चार अथवा पाँच सहस्र अफ़गानों को लेकर फ़र्रुखसियर के पक्ष में गया था।'[4]

(इ) मीर जुमला की सेना--दो लाख।[5] इस सेना की संख्या के संबंध में मुख्य सहायक ग्रथों में विवरण उपलब्ध नहीं है।

ऊपर के विवरण से सहज ही में यह अनुमान लगाया जा सकता है कि श्रीधर ने सेना के संबंध में अतिशयोक्ति तथा कल्पना से अधिक काम लिया है।

उपर्युक्त ऐतिहासिक विवेचन के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि जंगनामा में प्रयुक्त तिथि अशुद्ध है और अमीरों के नामों की दीर्घ-सूची की पुनः पुनः आवृत्ति के कारण ग्रंथ में रोचकता की मात्रा बहुत कम हो गई है। यह होते हुए भी श्रीधर का यह संक्षिप्त ग्रन्थ इतिहास संबंधी मौलिक एवं तथ्यपूर्ण सामग्री प्रचुर मात्रा में पाठकों के सम्मुख रखकर उनके ऐतिहासिक ज्ञान की श्रीवृद्धि करने में सहायक होता है।

---

[1] जंगनामा, पंक्ति ६७०, ८४६ [2] लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २२३ [3] जंगनामा, पंक्ति ७१२, ७१६ लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २१६-७ [4] जंगनामा, पंक्ति १२४१, १२४३, १२४६

अध्याय ७

रासा भगवंतसिंह की ऐतिहासिकता

निम्नलिखित पृष्ठों में रासा भगवन्तसिंह मे वर्णित युद्ध-तिथि, वश-नाम, पात्र, चर्चेंड़ी एवं पट्यो-विजय तथा भगवन्तराय और सआदत .खॉ-युद्ध की ऐतिहासिकता पर विचार किया जा रहा है।

युद्ध-तिथि

सदानन्द ने अपने ग्रंथ में युद्ध की तिथि इस प्रकार दी है :—

"सम्वत् सत्रह सौ सतानवे कार्तिक मंगलवार।
सित नौमी संग्राम भौ विदित सकल संसार॥"

अर्थात् संवत् १७९७, कार्तिक शुक्ल ९ मगलवार को यह युद्ध हुआ।[1]

कार्त्तिक अमा चन्द्र का मध्यन्य समाप्ति काल ५ — अक्टूबर ९.४८

९ तिथियों का समस्त व्याप्तिकाल। $\frac{८+१}{१४}$ — $\frac{८.८६}{१८.३४}$

=शनिवार १८ अक्टूबर, १७४०.

इतिहास से विदित होता है कि "सआॅदत खॉ भगवन्तराय को दड देने के अभिप्राय से ६ नवम्बर, १७३५ ई० मे कोड़ा पहुॅचा तथा भगवन्तराय को मारकर वह २२ नवम्बर, १७३५ ई० को दिल्ली मे जा उपस्थित हुआ था।"[2] अतएव यह युद्ध १७३५ ई०में ६ और २२ नवम्बर के मध्य किसी दिन हुआ था। ऐसी परिस्थिति मे यही स्वीकार करना पड़ता है कि सदानन्द द्वारा दी हुई उक्त तिथि इतिहास में कथित तिथि से मेल नहीं खाती है।

बा० ब्रजरत्नदास ने इस तिथि की अशुद्धि को दूर करने के लिए उपर्युक्त दोहे में 'सतानवे' के स्थान में 'बानवे' करके पाठ शुद्ध करने का प्रयत्न किया है। उनके इस पाठ परिवर्त्तन से उक्त घटना की तिथि सम्वत् १७९२, कार्त्तिक शुक्ल ९, मगलवार, तदनुसार सन् १७३५ ई०, अक्टूबर १४ मंगलवार पड़ती है। यह तिथि इतिहास में कथित तिथि के बहुत निकट पहुॅच जाती है।[3] पर इस प्रकार के पाठ परिवर्त्तन करना उसी समय उचित है जब उक्त ग्रंथ की किसी प्रामाणिक हस्तलिखित प्रति में ऐसा पाठ दिया हो। बा० ब्रजरत्नदास ने पाठ परिवर्त्तन के जो प्रमाण दिए हैं, वे इस आधार पर अवलंबित नहीं हैं। अतएव उनके द्वारा प्रस्तावित पाठ-परिवर्तन का प्रयत्न अनुचित है। प्रस्तुत अध्ययन से हमारा यही अभिप्राय है कि कवि द्वारा दी हुई तिथि ठीक है

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन-सस्करण, भा० ५, १९८१ वि०, पृ० १०८ [2] फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० ४९-५१, [3] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ५, १९८१ वि०, पृ० १०८-९,

अथवा नहीं। परीक्षा करने पर यही सार निकलता है कि कवि ने तिथि देने मे भूल करके अपनी असावधानी का परिचय दिया है।

वंश-नाम—सदानन्द ने भगवंतराय खीची के वश के लिए **'चौहान'** शब्द का प्रयोग किया है।[1] उनका यह कथन ठीक ही है। वास्तव मे खीची और चौहान एक ही राजपूत हैं। सभवत: मध्य-भारत के खीचीदरा अर्थात् राघवगढ मे रहने के कारण चौहानों की एक शाखा का नाम खीची पड़ गया है। ब्रजरत्नदास के कथनानुसार उक्त खीचीदरा के सन् १५४३ ई० मे देव-गजसिंह नामक एक चौहान क्षत्रिय अन्तर्वेदी मे यमुना के किनारे आकर बस गए थे। इन्हीं के वंश में भगवंतराय अवतीर्ण हुए थे।[2] अतएव इन्हें चौहान कहना इतिहासानुकूल ही प्रतीत होता है।

निश्चित पात्र

हिन्दू-पात्र - भगवतराय—यह असोथर के राजा अरारूसिह के पुत्र थे। इन्हीं भगवतराय के युद्ध का प्रस्तुत ग्रथ मे वर्णन है।[3]

मुसलान-पात्र :—मुहम्मदशाह—दिल्ली के मुगल शासक (१७१९-१७४८ ई०) थे।[4]

सहादत खाँ, सादति खाँ—(बुर्हानुल्मुल्क सआदत खाँ) यह अवध के प्रथम नवाब थे। इन्होंने ९ सितम्बर, १७२२ ई० से १९ मार्च, १७३९ ई० तक राज्य किया था।[5]

मनसूर—(अब्दुल मन्सूर खाँ सफदरजग मंसूर) यह सआदत खाँ के दामाद, दिल्ली के प्रधान-मन्त्री और अवध के द्वितीय नवाब थे।[6]

जा निसार खाँ—कोड-जहानाबाद का फौजदार जा निसार खाँ दिल्ली के प्रधान-मन्त्री कमरुद्दीन खाँ का बहनोई था।[7] कुछ स्थलो पर वह कमरुद्दीन खाँ का भाई भी लिखा मिलता है।[8]

अनिश्चित-पात्र

हिन्दू-पात्र - गौरासिह, जैसिह, तेजसिह, दलसिंह, दुर्जनसिंह, नोल, भवानी प्रसाद, मर्दनसिह।

मुसलमान-पात्र—अलीखान, तुराब खाँ, दीन मुहम्मद, नूर मुहम्मद, मीर मुहम्मद, मुहम्मद खाँ, सेर अली।

युद्ध-वर्णन

चचेंड़ी-विजय—(१७२९ ई०) सदानन्द ने सआदत खाँ द्वारा चचेंड़ी-विजय करने का

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन-संस्करण, भा० ५, १९८१ वि, छं० ७, पृ० ११५ [2] वही, पृ० १०९ [3] वही, वही, पृ० १०९-१०, फर्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० ४७, [4] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ८, सुजान-चरित्र की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत मुसलमान पात्रों का विवरण, [5] फर्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० ३०-७५ [6] वही, पृ० ७६ से पुस्तक के अन्त तक [7] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ५, १९८१ वि०, पृ० ११० [8] फतेहपुर डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर, पृ० १५६

उल्लेख किया है।[1] चचेडी नामक राज्य अवध की पश्चिमी सीमा पर स्थित था। यह नगर कन्नौज शाहदाबाद के पास है। उस समय वहाँ पर हिन्दूसिंह चदेल शासक थे। सन् १७२६ ई० में सआॅदत खाॅ ने गोपालसिंह भदौरिया को साथ लेकर चचेंड़ी पर आक्रमण कर दिया। राजा गोपालसिंह ने हिन्दूसिंह के पास जाकर यह प्रार्थना की कि यदि वह दुर्ग तीन दिन के लिए रिक्त करके सआॅदत खाॅ को दे दें तो वह पुनः उसे लौटा दिया जायेगा। हिन्दूसिंह बातों मे आ गया और दुर्ग उसे सौप दिया। अन्त मे वह दुर्ग उसे नहीं लौटाया गया। इस प्रकार सआदत खाॅ ने दुर्ग पर अपना अधिकार कर लिया। इस कवि ने उसके इसी विश्वासघात की ओर संकेत किया है।[2]

पठ्यो विजय—कवि सदानन्द ने अपनी रचना मे सआदत खाँ द्वारा पठ्यो नामक स्थान को जीतने की ओर सकेत किया है।[3] उक्त ग्रन्थ के सपादक ने पठ्यो से प्रतापगढ की पट्टी नामक तहसील से अभिप्राय लिया है।[4] सआदत खाॅ ने बैसवाडे के अन्तर्गत पाटन नामक स्थान पर विजय प्राप्त की थी।[5] सभव है कि सदानन्द ने इसी पाटन विजय की ओर सकेत किया हो, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

भगवन्तराय-युद्ध-वर्णन—(१७३२ ई० मे) सदानन्द ने भगवर्तराय द्वारा जाॅ निसार खाॅ के मारे जाने का उल्लेख किया है।[6] इस घटना के सबध मे इतिहास-ग्रन्थों से निम्नलिखित विवरण प्राप्त होता है :—

"दिल्ली के प्रधान मन्त्री का सम्बन्धी जाॅ निसार खाॅ कोड-जहानाबाद का फौजदार था। इसने किसी धार्मिक विषय पर भगवन्तसिंह से बिगाड कर लिया था। इससे क्रुद्ध होकर भगवन्त-सिंह ने विद्रोह का झडा खड़ा करके उसे तग करना आरम्भ कर दिया। जाॅ निसार खाॅ मार्च सन् १७३२ ई० को भगवन्तसिंह को दड देने के लिए कोडा से गाजीपुर की ओर चला। एक दिन जब कि फौजदार का डेरा चार मील पर था, भगवन्तसिंह उस पर टूट पडा। उसने जाॅ निसार खाँ को मार डाला और उसके सारे सामान को लूट लिया। इसके साथ ही कोडा- जहानाबाद का एक बड़ा भाग भी उसके अधिकार मे आ गया।"[7]

इस घटना के फलस्वरूप दिल्ली-सरकार भगवन्तराय से और भी असन्तुष्ट हो गई। इन्हे दंड देने और वश में करने के लिए अनेक बार सेनायें आईं, पर वे विफल होकर लौट गईं। अत मे "सन् १७३५ ई० मे मुहम्मद शाह ने अवध के सूबेदार सआॅदत खाँ को कोड़ा-जहानाबाद की

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ५, १९८१ वि०, छ० ३८, पृ० १२० [2] वही, पाद-टिप्पणी, पृ० १२०; फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ०४५-६ [3] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ५, १९८१ वि०, छं० ३९, पृ० १२०-१ [4] वही, पाद-टिप्पणी, पृ० १२०, [5] फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० ४१ [6] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ५, १९८१ वि० छं० ४२, पृ०१२१ [7] वही, पृ०११०-११; फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० ४७-९

फ़ौजदारी भी सौंप दी।"[1] सदानंद ने इस घटना की ओर भी सकेत किया है।[2] आगे चलकर उसने भगवन्तराय द्वारा नूर मुहम्मद फौजदार के लूटने, राजाज्ञा से सआँदत खाँ के दिल्ली जाते समय भगवन्तराय को दंड देने के लिए उसके राज्य पर आक्रमण करने, आदि का उल्लेख किया है।[3] इन मे से नूर मुहम्मद के लूटने की घटना का विवरण अप्राप्य है। पर यह निश्चित है कि अपने स्वभाव के अनुकूल भगवन्तराय ने उक्त नाम धारी कोड़-जहानाबाद के किसी नायब को लूटा अवश्य होगा। शेष घटनाओं के सम्बन्ध मे इतिहास से यह विवरण प्राप्त होता है :—

"शाही आज्ञा से दिल्ली को जाते समय प्रधान-मन्त्री कमरुदीन खाँ का एक पत्र सआदत खाँ को मिला, जिसमे भगवन्तसिह को दंड देने की उसे आज्ञा दी गई थी। वह तुरन्त ही पीछे लौटा, बाईं ओर को घूमा, गगाजी पार की और ६ नवम्बर, सन् १७३६ ई० को कोड़ मे पहुँच गया। उसके साथ चालीस सहस्र सेना थी।

उसके आगमन की सूचना मिलने पर भगवन्तसिह दश-बारह सहस्र सेना के साथ गाज़ीपुर* से निकल कर सआँदत खाँ पर टूट पडा। भगवन्तसिह ने नवाब की हरावल मे लड़ते हुए तुराब खाँ को भाले से मार डाला। अन्त मे शेख रुहुल अमी खाँ बिलग्रामी, शेख अब्दुल्लाह खाँ, दुर्जनसिह, अजमतुल्लाह खाँ आदि ने भगवन्तसिह को घेर लिया। दुर्जनसिह के भाले से वह मार डाला गया। दोनों ओर के लगभग पाँच सहस्र सैनिक खेत रहे। सआँदत के पक्ष के सोलह उच्च पदाधिकारी मारे गए तथा वह स्वय घायल हुआ। भगवन्तसिह का शिर दिल्ली भेज दिया गया। इसके उपरान्त सआँदत खाँ दिल्ली को चला गया, जहाँ वह २२ नवम्बर, १७३५ई० को पहुँचा।"[4]

उपर्युक्त ऐतिहासिक विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि भगवन्तराय के सम्बन्ध में सदानन्द ने जो भी कुछ लिखा है वह सत्य एवं प्रामाणिक है। उसने प्रमुख सैनिकों के जिन नामों का उल्लेख किया है उनमे और ऊपर के ऐतिहासिक उद्धरण मे आए हुए नामों मे प्राय: अन्तर है। ऐसा ज्ञात होता है कि इन नामों के वीर अवश्य ही इस युद्ध मे सम्मिलित हुए होंगे। यह एक भयंकर युद्ध हुआ था और बडे-बडे उच्च पदाधिकारी मारे गए थे। इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि ये नाम प्रामाणिक हैं।

इस प्रकार उक्त युद्ध-तिथि तथा अन्य कुछ छोटी-मोटी बातों के अतिरिक्त सभी प्रधान घटनाओं की ऐतिहासिकता प्रमाणित हो जाती है। सामग्री के के अभाव में जिन घटनाओं के विषय में निश्चायत्मक निर्णय नहीं हो सका है वे भी ऐतिहासिक ही होगीं, ऐसा अनुमान लगाना अनुचित न होगा। अत: भगवन्तराय की [illegible] समाप्त करने वाले उनके अन्तिम युद्ध से सम्बन्धित 'रासा भगवन्तसिंह' एक सक्षिप्त पर ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण कृति है, इसमें कोई भी सन्देह नही है।

---

*कानपुर के निकट एक नगर।

[1] फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० ४६ [2] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० ५, १९८१ वि०, छं० ४, पृ० ११४ [3] वही, छं० ४-१७, पृ० ११४-६ [4] फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० ४६-५१; नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन-संस्करण, भा० ५, १९८१ वि०, पृ० १११-२,

अध्याय ८

सुजान-चरित्र की ऐतिहासिकता

निम्नलिखित पृष्ठों में सुजान-चरित्र में प्रयुक्त तिथियों, वंश-नाम, पात्रों, युद्धों, सेना आदि की ऐतिहासिक प्रामाणिकता पर विचार किया जा रहा है :—

तिथियाँ—सूदन ने केवल हिंदी मासों और सवतों ही का उल्लेख किया है। उन्होंने तिथियाँ और दिन नही दिए हैं। ऐसी परिस्थिति मे पूर्ण गणना नही की जा सकती है। अतएव नीचे सूदन द्वारा कथित प्रत्येक घटना की तिथि देकर अगरेजी मास और सन् दे दिए गए हैं। साथ ही इतिहास की साक्ष्य से प्राप्त तिथियों का भी उल्लेख कर दिया गया है।

प्रथम जंग—सूरजमल द्वारा फ़तेह अली खां की सहायता की तिथि :—

अगहन, १८०२ वि०[1]=२८ अक्टूबर-२७ नवम्बर, १७४५ ई०।

सरकार ने अपने इतिहास मे उक्त युद्ध की तिथि नवम्बर, १७४५ ई० दी है।[2] अतएव सूदन कथित तिथि ठीक है।

द्वितीय जंग —सूरजमल द्वारा ईश्वरीसिंह की सहायता की तिथि :—

श्रावण, १८०४ वि०[3]=११ जुलाई-१० अगस्त, १७४७ ई०।

सरकार के विचार मे उक्त युद्ध बगरू-महल नामक स्थान पर हुआ था, जो १ अगस्त १७४८ ई० को प्रारम्भ होकर ६ दिन तक चलता रहा, तदुपरान्त सन्धि हो गई। इसके पश्चात् १० अगस्त को मराठे अपने देश को लौट गए।[4] क़ानूनगो ने इस संग्राम की तिथि २० अगस्त, १७४६ ई० मानी है।[5]

ऊपर दिए हुए विवरण मे प्रायः सभी लेखकों ने मास एक ही माना है। वर्ष के सम्बन्ध में तीनों विद्वानों मे मतभेद है।

तृतीय जग—सलावत खाँ-पराजय-तिथि :—

सित पक्ष, पौष, १८०५ वि०[6]=६ दिसम्बर-२४ दिसम्बर, १७४८ ई०।

सरकार ने इस युद्ध की तिथि १ जनवरी, १७५० ई० स्वीकार की है।[7] कानूनगो के मतानुसार यह युद्ध ११६२ हि० को हुआ।[8]

चतुर्थ जंग—पठानों के विरुद्ध सफ़दरजंग की सहायता की तिथि :—

भाद्रपद, १८०६ वि०[9]=दिए हुए इस सम्वत् मे दो भाद्रपद पडे थे। प्रथम भाद्र पद १८

---

[1] सुजान-चरित्र, छं० १, पृ० ७ [2] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० २, पृ० ४३४ [3] सुजान-चरित्र, छं० २, पृ० २८ [4] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १ पृ० २६४, २६५; वही, भा०२ पृ०४३४ [5] हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १ पृ० ६७ [6] सुजान-चरित्र, छं०२, पृ०४१, [7] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० ३०८; वही, भा० २, पृ०४३४-५ [8] हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० ७१ (पाद-टिप्पणी सहित) [9] सुजान-चरित्र, छं० २, पृ० ५६

जुलाई से १७ अगस्त तक तथा द्वितीय (शुद्ध) भाद्रपद १८ अगस्त से १७ सितम्बर १७४६ ई० तक रहा था। यह वर्ष १७४६ ई० था।

सरकार के अनुसार वे युद्ध, जिनका उल्लेख सुजान-चरित्र की इस जग मे मिलता है, क्रमशः सितम्बर, १७५० तथा फरवरी १७५१ ई० से अप्रैल १७५२ ई० तक हुए थे।[1]

कानूनगो ने उक्त युद्धों की तिथियाँ क्रमशः १३ सितम्बर, १७५० ई० और मगलवार २२ जनवरी, १७५१ ई० से २४ अप्रैल १७५१ ई० तक मानी हैं।[2]

पचम जग—राजा बहादुरसिंह-पराजय-तिथि :—

१३ गतागत मास (चैत्र[1]), १८०६वि०[3] = ३ अप्रैल—१८ अप्रैल, १७५३ ई०। सरकार ने इस युद्ध की तिथि २३ अप्रैल, १७५३ ई० स्वीकार की है।[4]

षष्ठ जग —दिल्ली की लूट की तिथि : -

वैशाख, १८१० वि०[5] = १८ अप्रैल—१७ मई, १७५३ ई०।

इतिहास मे दिए हुए विवरण से ज्ञात होता है, कि सूरजमल उक्त युद्धों के अवसर पर सफदरजङ्ग के पास १ मई, १७५३ ई० को पहुँचा था। युद्ध की समाप्ति पर सूरजमल ने दिल्ली के बादशाह से २५ अक्टूबर को तथा सफदर जङ्ग से ७ नवम्बर, १७५३ ई० को संधि की थी।[6]

सप्तम जग—बादशाही सेना तथा मराठों की भरतपुर पर चढ़ाई की तिथि :—

गोप मास (११) १८१० वि०[7] = १७५३ ई०।

इस जङ्ग से सबधित विविध घटनाओं की तिथिया इतिहास मे नवम्बर, १७५३ ई० से मई १७५४ ई० तक दी हैं।[8]

ऊपर तिथियों के सबध मे जो कुछ कहा गया है, उससे प्रकट होता है कि सूदन द्वारा दी हुई तिथियों मे से केवल एक ही —प्रथम जङ्ग की—तिथि इतिहास की तिथियों से मेल खाती है। शेष तिथियों के सबंध में सूदन तथा इतिहास-ग्रथों में बहुत अन्तर है।

बदनसिंह को राजा की उपाधि मिलना—सूदन ने सुजान-चरित्र मे कतिपय स्थलों पर बदनसिंह को 'कृष्ण-वशीय, यादव, यदुवशीय, महेन्द्र, ब्रजेश' आदि विशेषणों से सम्बोधित किया है।[9]

प्राचीन-परम्परा, महाभारत तथा पुराण आदि के आधार पर जाट अपने को चन्द्र-वंशीय एवं यदुवंशीय क्षत्रिय मानते हैं।[10]

---

[1] फ़ॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर भा० १, पृ० ३८०, ३८५, ३९२, ४०३, ४०७, ४१०; वही, भा० २, पृ० ४३५, ४८५, [2] हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० ८१, ८३ [3] सुजान-चरित्र, छं० २, पृ० १०५ [4] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० २, पृ० ४३६ [5] सुजान-चरित्र, छं० २, पृ० १५४ [6] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० ४७३, ४७८, ४८१, ४८३, ५०३, ५०४; वही, भा० २, पृ० ४३६, हिस्ट्री ऑव दी जाट्स भा० १, पृ० ८६; फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध पृ० २२३, २२४, २२८, २२९, २३१, २४२ [7] सुजान-चरित्र, छं० २, पृ० २२४ [8] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० ५१२, ५१३, ५१९, ५२०, ५२२; वही, भा० २, पृ० ४३७ [9] सुजान-चरित्र, छं० १२, १३, पृ० ४-५, छं० ३०, पृ० ६-७; छं० २९, पृ० २४२ [10] हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० ३३१-४०; देशराज, जाट-इतिहास, पृ० ५६-१०७; हाला, जाट-क्षत्रिय इतिहास, पृ० २८-९९, फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० २, पृ० ४१७-२२

बदनसिंह की राजा आदि उपाधियों के संबंध मे कानूनगो का कथन है कि "उसका (बदनसिंह का) ईप्सित उद्देश्य राजा की उपाधि प्राप्त करना था। इसके लिए वह शाही सिंहासन के समक्ष झुकने के लिए भी उद्यत था। पर उसे सफलता न मिली, संभवतः जयपुर के शासक की ईर्ष्या के कारण, क्योंकि वह जाटों को अपनी प्रजा मानता था। कदाचित् इसी समय से भरतपुर के राजवंश ने अपने को यादव वंशीय कहना प्रारंभ कर दिया और स्वयं को ब्रजराज की उपाधि से सम्बोधित करने लगे। यद्यपि प्राचीन परम्परा से सिद्ध न होते हुए भी, ब्रजमण्डल अथवा मथुरा पर अधिकार होने से वह न्याययुक्त था। मारवाड के शासक अजीतसिंह और अभयसिंह उसको राजा नाम से संबोधित करते थे। महाराजा सवाई जयसिंह ने उसे अश्वमेध यज्ञ में बुलाया था।"[1]

ऊपर के उदाहरण मे कानूनगो का यह कथन, कि बदनसिंह के राजा की उपाधि प्राप्त करने मे जयपुराधीश अडचन डालते थे, कोरा अनुमान लगता है। सवाई जयसिंह द्वारा उनको अश्वमेध मे बुलाया जाना ही, इस बात का यथेष्ट प्रमाण है, कि जयपुर-दरबार बदनसिंह को प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखता था। यही नहीं वरन् "जयसिंह ने बदनसिंह को टीका, निशान ढोल, पंच रंगीय ध्वजा और ब्रजराज की उपाधि से विभूषित किया था। पर वह स्वयं को सदैव जयपुर के अधीन ही मानता रहा।"[2]

उपर्युक्त कथन से प्रमाणित होता है कि बदनसिंह को 'ब्रजराज' की उपाधि जयपुर-दरबार द्वारा प्रदान की गई थी। २० अक्टूबर, १७५२ ई० मे दिल्ली के बादशाह ने भी इन्हे 'महेन्द्र' और 'राजा' की उपाधि से विभूषित किया था,[3] यद्यपि सम्पूर्ण ब्रजमंडल बदनसिंह के अधिकार मे नहीं था। मथुरा-प्रान्त का कुछ ही भाग उसके आधीन था। शेष भाग को सूरजमल ने जीता था।[4]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सूदन द्वारा बदनसिंह को 'यदुवंशीय' तथा 'ब्रजेन्द्र' आदि विशेषणों से सम्बोधित करना-इतिहास सम्मत है, क्योंकि उस समय तक जाट अपना सम्बन्ध यदुवंश से स्थापित कर चुके थे और बदनसिंह को राजा की उपाधि मिल चुकी थी।

पात्रों की ऐतिहासिकता

निश्चित पात्र

हिन्दू-पात्र—बदनसिंह—यह सूरजमल के पिता थे। इनके समय मे भरतपुर राज्य का पर्याप्त विस्तार हुआ था। इनकी मृत्यु ६ रमजान, ११६६ हि० (७ जून, १७५६ ई०) को हुई थी।[5]

सूरजमल, सुजानसिंह यह उक्त बदनसिंह का सबसे बडा पुत्र था। इसने भरतपुर राज्य का बहुत विस्तार किया। यही सुजान-चरित्र का नायक है। इनकी मृत्यु २५ दिसंबर, १७६३ ई० को हुई थी।[6]

---

[1] हिस्ट्री ऑव् दी, जाट्स भा० १, पृ० ६१-२ [2] फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० २, पृ० ४२८ [3] वही, भा० वही, पृ० ४३५ [4] वही, भा० वही, पृ० ४२८ (पादटिप्पणी) [5] हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स भा० १, पृ० ६०-४, फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० २, पृ० ४२४-३२, जाट इतिहास, पृ० ६३५, मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० १, २७-८ [6] फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० २, पृ० ४३३-५३; हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० ६४-१५८, जाट्स इतिहास, पृ० ६३६-४४, मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० १२८-३०

जवाहरसिंह—यह सूरजमल का ज्येष्ठ पुत्र था। सूरजमल के पश्चात् भरतपुर का शासक हुआ। मई, १७६८ ई० में इसकी मृत्यु हुई।[1]

रतनसिंह—यह सूरजमल का पुत्र था। अपने भाई जवाहरसिंह के मरने पर गद्दी पर बैठा। इसने मई १७६८ ई० से अप्रैल १७६९ ई० तक शासन किया।[2]

नवल (सिंह)—यह सूरजमल का पुत्र था। अपने भाई रतनसिंह के मरने पर उसके अल्पवयस्क पुत्र केहरीसिंह का घरेलू-युद्ध के पश्चात् सरक्षक बना। गुरुवार, १० अगस्त, १७७५ ई० को इसका देहावसान हुआ।[3]

चूरामणि—(१६९५-१७२१) यह सिनसिनी के भज्जासिंह का पुत्र और राजाराम का कनिष्ठ भ्राता था। इसने इधर-उधर लूटमार करके अपने राज्य का विस्तार अधिक बढा लिया था। जहाँदार शाह और फर्रुखसिर के युद्ध मे अवसर पाकर इसने दोनों ओर की सेनाओं को लूटा था। फर्रुखसियर के प्रधान-मन्त्री तथा अमीरुल् उमरा सैय्यद-भाइयो का चूरामणि विशेष विश्वास-पात्र बन गया था। उसने अपने भतीजे बदनसिंह को बन्दीगृह मे डाल दिया था, पर दूसरे जाटों के हस्तक्षेप करने पर उसे छोड़ दिया था। चूरामणि ने सितबर-अक्टूबर, १७२१ ई० मे आत्महत्या कर ली।[4]

मोहकमसिंह—यह चूरामणि का पुत्र था। आगरे के नाजिम सआदत खा बुर्हानुल्मुल्क ने इसे दबाने का प्रयत्न किया, पर वह असफल रहा। बदनसिंह और इसमें कुछ समय तक झगड़ा चलता रहा। अन्त मे उसने बदनसिंह की अधीनता स्वीकार कर ली।[5]

बल्लू (बलराम जाट)—यह देहली के निकटस्थ फरीदाबाद का चौधरी था। इसने आस-पास के ग्रामों को छीनकर उन पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। उसके विरुद्ध कई बार शाही सेना भेजी गई, पर प्रत्येक बार मुगलों को पराजित होना पडा। अन्त मे बल्लू ने प्रधान-मन्त्री सफदरजंग से सन्धि कर ली। उसने मिट्टी का एक दुर्ग बनाकर उसका नाम बल्लगढ रक्खा। अवसर पाकर उसने दिल्ली के निकटवर्ती सिकन्दराबाद को खूब लूटा। सफदरजग ने बल्लू को दंड देना चाहा, पर वह इसमें असफल रहा। अन्त मे २९ नवबर, १७५३ ई० मे मुगलों द्वारा उसकी हत्या कर दी गई।[6]

जयसिंह द्वितीय—यह १६९९ ई० मे जयपुर का शासक बना। उस समय इसकी अवस्था १८ वर्ष की थी। उसने शाहजादा बीदर बख्त के साथ दक्षिण मे मराठों के विरुद्ध युद्ध में बड़ी वीरता प्रदर्शित की थी। कालान्तर मे यह क्रमशः आगरा और मालवा का सूबेदार नियुक्त हुआ।

---

[1] फॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० २, पृ० ४५६-८०, हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० १५९-२२३; जाट इतिहास, पृ० ६४४-५६, मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० १३०-१ [2] हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ०२२४-६, जाट इतिहास, पृ० ६५६-७ [3] हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ०२२७-८३, जाट्स इतिहास, पृ० ६५७-८ [4] हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, पृ० ४५-५८, जाट इतिहास, पृ० ६३३-५, मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० ११९-२६ [5] वही, भा० वही पृ० १२६-७ [6] फॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० ३६९-७२, ५१०-२; दी हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० ७८-८०; जाट इतिहास, पृ० ७१६-७

१७३६ ई० में मालवा में मराठों से हारकर यह जयपुर चला गया। २१ सितंबर, १७४३ ई० को इसकी मृत्यु हो गई।[1]

ईसुरी सिंह (ईश्वरी सिंह)—यह सवाई जयसिंह द्वितीय के ज्येष्ठ पुत्र थे। पिता के मरने पर जयपुर के शासक नियुक्त हुए। इन्होंने ७ वर्ष राज्य किया। इनका कनिष्ठ भ्राता माधौसिंह राज्य पाने के लिए इनसे सदैव युद्ध करता रहा। ईश्वरीसिंह ने अपने भाई को कई युद्धों मे पराजित किया, पर यह बगरू-महल के युद्ध मे (अगस्त, १७४८ ई०) स्वय पराजित हुआ। अन्त में मराठों के भयकर आक्रमण का समाचार ज्ञात होने पर ईश्वरीसिंह ने १२ दिसबर, १७५० ई० को आत्म-हत्या कर ली।[2]

माधौसिंह (माधव सिंह)—यह उक्त ईश्वरी सिंह का कनिष्ठ भ्राता था। राज्य-प्राप्ति की लालसा से प्रेरित होकर यह सदैव अपने भाई से लडता रहा। ईश्वरी सिंह के मरने पर यह जयपुर का राजा बना। ६ मार्च, ७६८ ई० को इसकी मृत्यु हुई।[3]

नबलराय—यह सक्सेना कायस्थ था और इटावा परगना के एक क़ानूनगो परिवार से सम्बन्धित था। अवध के सूबेदार नवाब सफदरजग ने इसे अपनी नौकरी मे रक्खा। क्रमशः उन्नति करते-करते यह अवध की सेना का बख्शी नियत हुआ। इसके अनन्तर अक्टूबर, १७४३ ई० मे अवध का उप-सूबेदार बना। १७४८ ई० मे इलाहाबाद की सूबेदारी मिल जाने पर सफदरजग ने वह सूबा भी इसी को सौप दिया। जनवरी, १७५० ई० मे फर्रुखाबाद के नवाबों का राज्य भी इसी की देखरेख मे कर दिया गया। १३ अगस्त, १७५० ई० को फर्रुखाबाद के पठानों द्वारा इसकी हत्या कर दी गई।[4]

राव बहादुरसिंह बड़गूजर—यह चकला-कोयल (अलीगढ) का फौजदार था। इसको पराजित करके सूरजमल ने इस के दुर्ग घासेरा पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था।[5]

राजेन्द्रगिरि गोसांई—बुन्देलखडान्तर्गत झासी नामक स्थान का यह एक संन्यासी था। इसने झासी के मौठ परगने पर १७४५ ई०मे अधिकार करके एक दुर्ग बनवाया और शीघ्र ही ११४ ग्रामों का स्वामी बन बैठा। मराठा सूबेदार नरूशंकर ने, जो प्रारभ में इसका सरक्षक था, मौठ से १७४६-५० ई० मे इसे निकाल दिया। वहाँ से यह प्रयाग चला गया और वहाँ पर अपने पाँच सहस्र नागा सन्यासियों के साथ पुराने नगर और दुर्ग के मध्य मे डेरा डाला। जब नवाब अहमद खाँ बगश ने प्रयाग के दुर्ग पर आक्रमण किया, तब इसने दुर्ग की रक्षा के लिए युद्ध किया (सितंबर, १७५०-अप्रैल १७५१)। इस दुर्ग का घेरा उठ जाने के उपरान्त बका उल्लाह खाँ ने इसे वजीर सफदरजग के पास ले जाकर नौकर रखवा दिया। इसने रुहेलखड के आक्रमण के

---

[1] फ़ॉल ऑव दी मुगल् इम्पायर, भा० १, पृ० २४२-३, मआसिरुल् उमरा, भा०१, पृ० १६४-८ [2] वही, भा० वही, पृ० १६८; फॉल ऑव दी मुगल इम्पायर, भा० १, पृ० २८२-३०० [3] वही, भा० वही, पृ० २८२-३०५, ५०२, वही, भा० २, पृ० ५०६-६, ५११, ५१२, ५१३, ५१४ [4] फ़ॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा०१, पृ० ३८५; फ़र्स्ट ट्रू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० १५१, २७१-३ [5] वही, पृ० १५६, १६०, फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा०२, पृ० ४३६

अवसर पर सफदरजग और देहली सम्राट् के युद्ध मे लडते हुए १४ मई०, १७५३ ई० को इसके एक गोली लगी, जिसके फलस्वरूप दूसरे दिन इसकी मृत्यु हो गई।[1]

अनूपगिरि, उमरावगिरि[2], पृथ्वीराज।[3]

हिम्मतसिंह—यह भदावर-नरेश गोपालसिंह का पुत्र था। पिता के मरने के पश्चात् संवत् १८०० वि० (१७४३ ई०) मे गद्दी पर बैठा। इसके प्रमुख दुर्ग बाह, पिनाहट (दोनों स्थान आगरा जिले मे हैं), अटेर (चबल के दक्षिण किनारे पर) और भिड (अटेर से १६ मील दक्षिण-पूर्व) थे। इसने सफदरजग के विद्रोह के समय के युद्धों मे मुगल सम्राट् के विरुद्ध वजीर की सहायता की थी। १७५५ ई० मे इसकी मृत्यु हुई।[4]

मल्लार (मल्हार राव होल्कर)—यह एक वीर मराठा सरदार था। मार्च, १७३१ ई० मे गुजरात को जाते समय बाजीराव इसको नर्मदा के पास इसलिए छोड गया था कि वह निजामुल्मुल्क तथा अहमद खाँ बंगश, जो क्रमशः दक्षिण एव मालवा के सूबेदार थे, की गति-विधि पर दृष्टि रखता रहे। ५ जनवरी, १७४१ ई० को होल्कर ने धार के मुग़ल रक्षक को हराकर उस पर अधिकार कर लिया। नवबर, १७५० ई० मे यह एक विशाल सेना के साथ जयपुर मे प्रविष्ट हुआ। २ मार्च, १७५१ ई० को, उसने सफदरजग की पठानों के विरुद्ध सहायता करने के लिए, उससे सधि की। १७५४ ई० मे इसने कुम्भेर, भरतपुर आदि जाट दुर्गों पर घेरा डालने के लिए सेना भेजी। इसी प्रकार यह आजन्म सधि-विग्रह करते हुए उन्नति करता रहा। अन्त मे आलमपुर के निकट २० मई, १७६६ ई० मे इसकी मृत्यु हो गई।[5]

खंडू (खांडेराव होल्कर)—यह मल्हार राव होल्कर का पुत्र था। इसके पिता ने एक मराठा सेना इसके साथ दिल्ली को भेजी थी, जो वहाँ २१ नवम्बर, १७५३ ई० को पहुँची। २६ दिसम्बर, १७५३ ई० को खाडेराव ने मुगल सम्राट् से भेंट की। अपने पिता की आज्ञानुसार यह

---

[1] फ़ॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा०१, पृ० ४६०-२; फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० १६६ (पाद-टिप्पणी सहित), १७०, १७१, १८७, २०५, २०७, २१५, २२४, २२८, २२६, २३५, २५५, जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, भा०XLVIII, १८७६ ई०, पृ०७६ (पाद-टिप्पणी), ८० [2] देखिए द्वितीय ख०, अध्याय १०, हिम्मतबहादुर-विरुदावली के पात्रों की ऐतिहासिकता [3] देखिए द्वितीय खंड, अध्याय ११, हम्मीररासो के पात्रों की ऐतिहासिकता, [4] जरनल ऑव् एशियाटिक सोसायटी, ऑव् बंगाल, सं०XLVIII, १८७६ ई०, पृ०७२, फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० १५६, १५८, १५६, १६०, १६२ [5] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़ भा०२, पृ० १०१, १२६, १४५, १५३, १५७, १६४, २०१, २१६, २३५, २३८, २३६, ३२६, ३६१, ३७७, ३७६, ३८५, ३६६-७, ४००-१, ४०२, ४११, ४१२, ४२१,४२२, ४४२, ४४६, ४५१, ४६७,४७० ५०२, ५०५, ५०७, फ़ॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा०१, पृ०५१५, ५१६, ५१६, ५२१, ५२२, ५३७, वही, भा० २, पृ० १५५, १६६, २२४, २२८, २३३, २४८, ३२६, ३४३, ३६५, ४७१, ४७२, ५०५; हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० ६७, ८२, ८६, ६६, ११० (पाद-टिप्पणी), ११८ १२८, १३६, १४२. १७४, १७७, १८६, फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० ५५, ५६, १३५, १७६, १७६, १८४, १८६, १८७, १८८, १६०, २००, २०१, २०३, २०४, २३६, २४७, २४६,

होडल, मेवात आदि को लूटता हुआ जाटों के दुर्ग कुम्भेर के घेरे में अन्य मराठा सैनिकों के साथ जा पहुँचा। इसी घेरे मे १५ मार्च, १७५४ ई० को गोला लगने से इसकी मृत्यु हो गई। प्रसिद्ध अहिल्याबाई इसकी धर्मपत्नी थी।[1]

रघूबू (रघुनाथराव)—यह पेशवा बालाजी राव का कनिष्ठ भ्राता था। जाटों के दुर्ग कुमेर के घेरे मे यह वर्तमान था (फरवरी-मई १७५४ ई०)। सम्राट् अहमदशाह की हत्या के अवसर पर यह उपस्थित था। अब्दाली तथा नजीब खा के विरुद्ध इसे मुँह की खानी पडी थी। इसे अहिल्याबाई के सामने भी हारना पडा था। यह बन्दीगृह मे डाल दिया गया था, जहाँ से वह निकल भागा था।[2]

आपा (जयाजी अप्पा सिंधिया)—ग्वालियर के सिंधिया राज्य के प्रवर्तक रानो जी सिंधिया का यह ज्येष्ठ पुत्र था। ३ जुलाई, १७४५ ई० को अपने पिता के मरने पर यह उसका स्थानापन्न नियुक्त हुआ। १० जनवरी, १७५१ ई०को जयपुर मे राजपूतों ने इसकी लगभग तीन सहस्र सेना का सहार किया। पठानों के विरुद्ध इसने सफदरजंग की सहायता की (मार्च, १७५१ ई०)। जाट-दुर्ग कुमेर के घेरे के समय यह भी वहाँ पर ससैन्य वर्त्तमान था। २५ जुलाई, १७५५ ई० को यह नागौर नामक स्थान पर मार डाला गया।[3]

मुसलमान-पात्र अल्लावदीन (अल्लाउद्दीन),[4] बब्बर (बाबर), हिमाऊँ (हुमायूँ),[5] जलाल उद्दीन अकबर, जहागीर,[6] साहि जहां (शाहजहा), औरंगसाहि (औरगजेब), बहादुरसाह (बहादुरशाह),[7] मोजदी पातशाह (मुइजुद्दीन जहादार शाह), फर्रुकसेर (फर्रुखसियर),[8] शहादत खा (बुर्हानुलमुल्क सआँदत खा),[9] सफदरजंग मसूर,[10] सलावत खा।[11]

---

[1] फॉल् ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० १, पृ० ५१५, ५१६, ५१७, ५१८, ५१९, ५२०, ५२१, ५२२, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज, भा० २, पृ०२७७, हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० ८९, फर्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० १८३ [2] फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा०१, पृ०५१५, ५१६, ५१९, ५२०, ५२२, वही, भा०२, पृ०१३७-७०, हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा २, पृ०१९३, ३१२, ३७५-७, ३७९, ३८०-३, ३९१, ३९५, ३९७,३९९-४००, ४०१, ४०२, ४६५-७, ४७१, ४७३, ४७६, ४७९, ४८९, ४९०, ४९१, ५०७, ५०८, ५२१-५, ५२६, हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा ० १, पृ० ८८, ८९, ९६, १०७, १८९, १९१, २००, फर्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० २४७ [3] न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज़, भा० २, पृ०२३३, २३५, २३८, २३९, ३६१, ३६५, ३७५, ३७७, ३८३, ३८४, हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० ९०, ९१, ९६, फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ०१३५, १७६, १७९, १८६ १८७, १८८, २००, २०१, २३९, २४७ [4] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ११, हम्मीररासो के पात्रों की ऐतिहासिकता [5] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ३, पृ०२०६ [6] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय १, पृ० १८० [7] देखिए द्वितीय ख०, अध्याय ५, पृ०२७०, २७१ [8] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ६, पृ० २८९ [9] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ७,पृ० ३०८ [10] खं० वही, भा० वही, पृ० वही; मआसिरूल् उमरा, भा० २, पृ० ८७-९ [11] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ६, पृ० २९७

सहाब गौरी (शिहाबुद्दीन मुहम्मद गौरी)—यह गोर देश का शासक था। इसने भारत पर नौ बार आक्रमण किए थे।[1]

तैमूर—यह मध्य एशिया के समरकंद नामक स्थान का स्वामी था। फारस, अफगानिस्तान आदि स्थानों पर विजय प्राप्त करके उसने सिंध नदी पार की और १३९८ ई० में भारत पर आक्रमण किया। २८ फरवरी, १४०५ ई० को इसकी मृत्यु हुई।[2]

उमर सेख—(उमर शेख मिर्जा)—यह फरग़ना का स्वामी और बाबर का पिता था। इसकी मृत्यु १४९४ ई० में हुई थी।[3]

सेरसाहि (शेरशाह सूर)—इसका पिता हसन खाँ सहसराम (बिहार) का स्वामी था। शेरशाह का नाम फरीद खाँ था। पिता से अनबन होने के कारण इसने इब्राहीम लोदी के दरबार में जाकर दौलत खाँ के साथ नौकरी कर ली। इसके पश्चात् कुछ समय तक यह बाबर की सेवा में रहा। इसने चौसा के युद्ध में हुमायूँ को पराजित किया (२६ जून, १५३९ ई०)। उसने पुनः कन्नौज के युद्ध में उसे हराया (१७ मई, १५४० ई०)। इस प्रकार यह हुमायूँ को भारत से भगा कर देहली का शासक हो गया। २२ मई, १५४५ ई० को कालिंजर के घेरे के समय इसकी मृत्यु हो गई।[4]

सलेम साहि (सलीम शाह=इस्लाम शाह)—यह शेरशाह सूर का द्वितीय पुत्र था। इसका नाम जलाल खाँ था। अपने पिता के मरने पर यह इस्लाम शाह के नाम से गद्दी पर बैठा। कुछ इतिहास-लेखकों ने इसको सलीम शाह के नाम से पुकारा है, पर इसके सिक्कों से विदित होता है कि इसका नाम इस्लिम शाह अथवा इस्लाम शाह था। इसकी मृत्यु २२ नवंबर, १५५४ ई० को हुई थी।[5]

रफ़ी दरजाति साहि (रफ़ीउद्दर्जात)—यह रफीउश्शान का पुत्र था। यह फर्रुखसियर के स्थान पर २८, फ़रवरी, १७१९ ई० को सम्राट् घोषित किया गया। इसे ४ जून, १७१९ ई० को गद्दी से उतार दिया गया। इसके एक सप्ताह के उपरान्त इसकी मृत्यु हो गई।[6]

साह जहाँ (रफ़ी उद्दौलाह शाहजहाँ द्वितीय)—यह रफीउद्दर्जात का बड़ा भाई था। अपने भाई के पश्चात् यह ६ जून, १७१९ ई० को बादशाह बना। १७ जून, १७१९ ई० को इसकी मृत्यु हो गई।[7]

महमद साहि (मुहम्मद शाह)—यह १७१९ ई० में १७ वर्ष की अवस्था में दिल्ली के

---

[1] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ३, पृ० ३८-४८ [2] वही, भा० वही, पृ०८९, १८७, १९५-२००, २०५, २५१, २७९, २८० [3] वही, भा० ४, पृ० २ [4] वही, भा० वही, पृ० २१, २८, २९, ३०, ३३, ३४, ३५, ३६, ४५, ४६, ४७, ४९, ५०, ५१, ५२, ५४, ५५, ५६, ५७, ३५७, ४५६-८, ५२६-८ [5] वही, भा०वही, पृ० ५८, ५९, ६०, ६१, ६२, ६४, ५२८, ५३१ [6] वही, भा० वही, पृ० ३३९, ३४०, लेटर मुग़लस् भा० १, पृ० ३८९, ४१६, ४१८-२० [7] वही, भा० वही, पृ० ४२०, ४२८, ४३१, ४३२; केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ४, पृ० ३४०

सिहासन पर आरूढ हुआ। गद्दी पर बैठने से पूर्व यह सात वर्ष तक बन्दीगृह मे रहा था। इसने २८ वर्ष शासन किया। २५ अप्रैल, १७४८ ई० को इसकी मृत्यु हुई।[1]

अहमद साहि (अहमद शाह)—मुहम्मद शाह के देहावसान के पश्चात् उसका इकलौता पुत्र अहमद शाह २८ अप्रैल, १७४८ ई० को २१ वर्ष की अवस्था मे गद्दी पर बैठा। २ जून, १७५४ ई० को प्रधान-मन्त्री इमादुल्मुल्क ने इसे गद्दी से उतार कर बन्दी-गृह मे डाल दिया।[2]

काम बकस (मुहम्मद कामबख्श)—यह औरंगजेब का सबसे छोटा पुत्र था। इसका जन्म ता० ७ मार्च, १६७७ ई० को और मृत्यु १७०८ ई० मे हुई थी।[3]

अकबर अदल साहि (अकबर आदिल शाह)—जब अहमद शाह ने वजीर सफदरजंग को पदच्युत कर दिया (१३ मई, १७५३ ई०), तब वजीर ने एक अपरिचित युवक को काम-बख्श का पौत्र बतलाकर अकबर आदिल शाह के नाम से बादशाह घोषित कर दिया था।[4]

अहमद ख़ाँ पठान—यह फर्रुखाबाद के नवाब मुहम्मद खाँ बगश का पुत्र और कायम खा का भाई था। मुगल वजीर सफदरजंग द्वारा फर्रुखाबाद को अपनी जागीर में मिला लेने पर इसने उसके विरुद्ध सेना एकत्रित की। इसने प्रथम पठान-युद्ध (१७५० ई०) तथा द्वितीय-युद्ध (१७५१-५२ ई०) मे सफदरजग के विरुद्ध बडी वीरता प्रदर्शित की थी।[5]

इसमाइल (इस्माइल खाँ)—यह आरंभ मे एक गुलाम था, पर सफदरजग की कृपा से इसने विशेष उन्नति कर ली। यह अपने स्वामी का विशेष विश्वास-भाजन, प्रमुख कार्य-कर्त्ता तथा प्रधान-सेना-नायको मे से था। सफदरजग के युद्धों मे उसने बड़ी वीरता का परिचय दिया था।[6]

जलाल्लुद्दीन (जलालुद्दीन हैदर शुजाउद्दौलाह)—यह अहमद शाह सम्राट् के प्रधान-मन्त्री तथा नवाब-अवध सफदरजग का पुत्र था। इसकी उपाधि शुजाउद्दौलाह थी। सफदरजंग के पश्चात् यह नवाब-अवध बना।[7]

फ़तेह अली ख़ाँ—यह अलीगढ के प्रसिद्ध सूबेदार साबित खा का पुत्र था।[8]

महमूद आखवत (आक़िबत महमूद काश्मीरी)—यह अहमद शाह के मीर बख्शी इमादुल्-

---

[1] लेटर मुगलस्, भा० २, पृ० १-३७६, फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० १ पृ० १-३२७ [2] वही, भा० वही, पृ० ३२८-५४४ [3] लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० २, ५, १०, ११, ५३-५६, ५८, ६२, ६६, २५२, [4] फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० १, पृ० ४८३, ५०५ [5] वही, वही, पृ० ३८५-५६७, ४००-४११; फर्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० १५०, १५३, १५७, १५६ ६२, १६५-६, १६८-७३, १७५, १७६, १७८-६०, १६४ [6] वही पृ० १५६, १५८, १५६, १६०, १६२, १७५, २३३, २३४, २४१, २५५; फ्रॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० १, पृ० ३६०, ३६२, ३६३, ४७६, ४८८, ४६७ [7] वही, भा० वही, पृ० ३४०, ४५४, ४५८, ४६५, ४६६, ४८०; फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० १५, ३६, ७३, ११२, १५५, १६३, १७७, २१२, २१३, २१६, २२०, २२६, २४६, २५०, २५८ [8] फ्रॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० २, पृ० ४३४

मुल्क का एक प्रमुख पदाधिकारी था। इसने सफदरजंग के विरुद्ध बड़ी वीरता प्रदर्शित की थी। बल्लू जाट की हत्या करवाने मे भी इसी का प्रमुख हाथ था।[1]

मीर बक्शी—यह सफदरजंग की सेना मे एक प्रमुख पदाधिकारी था। अफ़गानों के विरुद्ध इसने सफदरजंग की सेना में रहकर कई युद्ध किये थे।[2]

रमज़ानी (रमज़ान ख़ाँ)—यह सफदरजंग की सेना मे बंगशों के विरुद्ध कई बार सेना के साथ गया था और बडी वीरता दिखलाई थी।[3]

नज़ीम ख़ाँ (नजीब ख़ाँ रुहेला)—यह रुहेलखंड का शासक था। सफदरजंग के विद्रोह-युद्ध में इसने अहमद शाह की ओर से युद्ध मे भाग लिया था।[4]

गाज़दी ख़ाँ, गजदिय खान } (शहाबुद्दीन, एमादुलमुल्क, ग़ाजी उद्दीन खाँ बहादुर, फीरोज जङ्ग, निजामुलमुल्क आसफ जाह) यह निजामुलमुल्क आसफजाह के लड़के अमीरुल् उमरा फारोज जङ्ग का पुत्र और एतमादुद्दौला क़मरुद्दीन खाँ का दौहित्र था। अपने पिता के मरने पर सफदरजंग की सहायता से यह मीर बख्शी नियत हुआ और पिता की पदवी पाई। जब अहमद शाह और सफदरजंग मे युद्ध प्रारम्भ हुआ, तब इसने सम्राट् की ओर से बडी तत्परता और संलग्नता के साथ कार्य करके सफदरजंग को पराजित किया था। युद्ध समाप्त होने पर यह बहुत दिनों तक मुगल साम्राज्य-सचालन मे सर्वे-सर्वा रहा।[5]

शमसामुद्दौलाह मीर—यह उस खाँ-दौराँ का पुत्र था, जो नादिरशाह से युद्ध करते हुए मारा गया था। अहमदशाह ने शमसामुद्दौलाह को ८ मई, १७५३ ई० मे मीर-आतिश नियुक्त किया था।[6]

शेर जंग—यह सफदरजंग की सेना मे एक प्रमुख पदाधिकारी था।[7]

सादिल ख़ाँ (शादिल ख़ाँ) रुहेला—यह अहमद खाँ बगश का सेनानायक था। सफदरजंग के विरुद्ध रुहेलों के युद्ध मे इसने कोडा के पास भाग लिया था। १७५१ ई० मे इसे अलीगढ से मराठों ने भगा दिया था। सफदरजंग के विद्रोह के अवसर पर इसने सम्राट् की ओर से भाग लिया था।[8]

---

[1] लेटर मुग़लस्, भा० वही, पृ० ४५४, ४७७, ४७८, ४८४, ५०३, ५०६, ५१०, ५११, ५१२, ५१७, ५२१, ५२४, ५२५, ५२६, ५२७, ५२८, ५३०, ५३१, ५३५, ५३६, ५४२, ५४३ [2] फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० १५५, १५८, १६० [3] वही, पृ० १५८, १६० [4] फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० १८४, १८७, २३१, २३४, २३८, २३९, २४१; फ़ॉल ऑव दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० ४८५, ४८६, ४९७, ४९८, ४९९ [5] वही, भा० वही, पृ० ४४६, ४५३, ४५४, ४५५, ४६४, ४७७, ४७८, ४८०, ४८३, ४८४, ४८६, ४८७, ४८८, ४९१, ४९७ ४९८, ४९९, ५००, ५०१, ५०२, ५०३, ५०४; मआसिरुल् उमरा, भाग २, पृ०५४६-५३ फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव अवध, पृ०२१३,२१८, २२२, २२४, २२५, २२६, २२७, २२८, २२९, २३१, २३२, २३४, २३५, २३६,२३७, २३८, २३९, २४०,२४१, २४२, २४३,२४४, २४६, २४७, २४८,२४९, २५३ [6] फ़ॉल आव् दी मुगल इम्पायर, भा० १ पृ० ४६९ (पाद-टिप्पटी), ४८०, ५४० (पाद-टिप्पणी सहित) [7] फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० ५५, ६३, ६६, ९१, १०४, १०६, १५८, १६०, २३६ [8] वही, पृ० १७१, १७७, १७८; फ़ॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० १, पृ०४००, ४०५

रुस्तम खाँ (अफ़रीदी) – यह अहमद खाँ बगश का मीर-बख्शी तथा प्रमुख सेना-नायक था। सफदरजंग के विरुद्ध युद्ध करते हुए इसकी मृत्यु हुई थी।[1]

अनिश्चित पात्र

नीचे उन पात्रों के नाम दिए जा रहे हैं, जिनके संबध मे प्राप्त ऐतिहासिक ग्रथों में विशेष विवरण उपलब्ध नहीं हैं :—

हिन्दू-पात्र—भूरे, रौरिया, पचै, सुन्दर, मदू, पृथ्वीराज, परवान (पृथ्वीपति), मकनि, खानचद, ब्रजराज (ब्रजसिह), भावसिह, प्रतापसिह, जोधसिंह, देवीसिंह, मेदसिह, भवानीसिंह अषैसिंह, सुलतान कुमार, सभा राम, बलराम, मानसिह, दलेल कुमार, वीर नराइन, खुस्यालसिंह, लाल सिंह, उदयसिह, नाहर, हरी (हरीसिह), बहादुरसिह, अटल बिहारी, अवधूत, अमर बाला सौगरिया, अजीतसिह, अनूपसिह, अमरसिंह, अमानसिंह, अरिसाल, उदयराम, उदयभान, उजागर, कृपाराम, गूजर राज, किसनेस (किशनसिंह), खिमानन्द, गोकुला (गोकुल राम गौर), गजसिंह, गगाराम, चंद्रभान, चैनसिंह, छतरसाल, जयकृष्ण, जालिमसिह, जैतसिह, ठाकुरदास सेंगर, तिरखाराम, तिलोकसिह तोमर, तोफाराम, थानसिह, दलेल, दयाराम, दयानाथ, दल्ला, दौकुला, दौलत राम, धनसिह गौर, नन्दनसिंह, परसोतमा, पाखरिया (पाखर मल), कूर्म प्रताप, पृथ्वीसिह, पैमसिह, प्रेमा, पहुपसिह, फतेहसिंह वैस, फौदा, बकस राय, बलसिह, बदलता, बलिराम, बाबूराय, बैरीसाल, भरतसिह, भीखाराम, भौपति भाट, भज्जू दीवान, मनसा राम, मतिवन्तसिह, महावीर, मस्तराम गौतम, मंझा, मन्धाता (मानधाता), मोहनसिंह, मोहनराम, मीर दुर्जन, मेदसिंह चौहान, रनसिंह, रामसिंह, राम बलै, राम सेवक, रतनसिह (मैडू-नरेश), रामचन्द्र तोमर, राउ बलोच अहीर, राजाराम गूजर, लक्ष्मणदास, लोकमन, विसनदास, श्यामसिह, श्रीराम चौधरी, सदाराम, सहीराम, सहजराम, समरसिंह सेंगर, समरसिंह चन्देल, सभू, साहिब राम, सार्दूलनंद, सुखराम, सूरतराम, सुदास सेंगर, हर सुख (द्विज), हठी सिंह ऑबारिया, हरनागर मिश्र, हरि नारायण, हाथीराम, रनजीत, मोदन मोदी, टीकैत, तांतिया, बहादुरसिह, मुहकमसिह (बैरीसाल-सुत)।

मुसलमान पात्र—असद खाँ, अली कुली, इसा खाँ, महमद पनाह, हकीम खाँ कुबरा, हवस खाँ (मुहम्मद अली का पुत्र), मीरॉ साहि, सुलतान मुहमद, अबूसैद (ये अन्तिम तीनों व्यक्ति तैमूर के वंशज थे)।

प्रथम जंग—सूदन कवि ने प्रथम जंग के अन्तर्गत सूरजमल द्वारा की गई मेवात, मालवा की राजधानी मॉडू को विजय तथा अलीगढ़ के शासक फतेह अली खाँ की सहायता का उल्लेख किया है।

उक्त युद्धों के संबंध में सरकार का कथन है कि "सूरजमल ने मेवात पर शनैः-शनैः अधिकार अवश्य जमा लिया होगा, क्योंकि निकटवर्ती इस राज्य को अधिकृत किए बिना भरतपुर का विस्तार असभव था।" मॉडू-विजय सबधी विवरण इतिहास में अप्राप्य है।

"नवंबर, १७४५ ई० मे अलीगढ के प्रसिद्ध सूबेदार साबित खाँ के पुत्र फ़तेह अली खाँ

---

[1] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ०३१३, ३१४, ३१७, फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० १४०, १४१, १४३, १४६, १६०

की सूरजमल ने सहायता की। इस युद्ध का कारण यह था कि असद खाँ खानाजाद ने फ़तेह अली खाँ की कुछ जागीर छीन ली थी। चंदौसी (चडौस) नामक स्थान पर भयङ्कर युद्ध हुआ, जिसमे असद खाँ मारा गया और जाट पूर्णरुपेण विजयी हुए।"[1]

द्वितीय जंग—मराठों के विरुद्ध जयपुराधीश की सूरजमल द्वारा सहायता—"जयपुर-नरेश जयसिंह द्वितीय के मरने पर उनके बडे पुत्र ईश्वरीसिंह उत्तराधिकारी हुए। (२१ सितंबर, १७४३ ई०), पर उनके कनिष्ठ भ्राता माधवसिंह मेवाड के राना और मराठों की सहायता से स्वयं राजा बनने का प्रयत्न करने लगे। इन दोनों भाइयों का झगडा इसी प्रकार चलता रहा।

अन्त मे मल्हारराव होल्कर, गंगाधर तॉतिया, मेवाड़, जोधपुर आदि सात शक्तियों की समवेत सेना ने जयपुर पर आक्रमण कर दिया। इस पर ईश्वरीसिंह ने सूरजमल से सहायता माँगी। बगरू (साँभर से २३ मील पूर्व) नामक स्थान पर दोनों ओर की सेनाओं का सामना हुआ। सीकर निवासी शिवसिंह के मारे जाने पर सूरजमल को जयपुर की सेना के हरावल मे रक्खा गया। वर्षा होते रहने पर भी भयङ्कर युद्ध होता रहा।

यह संग्राम छः दिन तक चलता रहा। मराठों ने सॉभर तक का देश उजाड़ दिया और ईश्वरीसिंह ने बगरू महल मे शरण ले रक्खी थी। अन्त मे युद्ध से तंग आकर संधि की चर्चा होने लगी। ईश्वरीसिंह ने अपने भाई को पॉच परगने और उम्मेदसिंह को बूँदी देना स्वीकार कर लिया। इस प्रकार सधि हो जाने पर मराठे अपने देश को और ईश्वरीसिंह अपनी राजधानी को लौट गए।"[2]

सूदन के मतानुसार माधवसिंह को दो और इतिहास के अनुसार पाँच परगने मिले थे। इस युद्ध के प्रसग मे सूदन ने मोती-डूँगरी नामक स्थान पर संग्राम होने का उल्लेख किया है। शेष विवरण के संबंध मे इस कवि और इतिहास के विवरणों में कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं है।

तृतीय जंग—सलावत ख़ाँ पराजय"—आगरा और अजमेर का सूबेदार मीर बख्शी सलावत खाँ मारवाड़ का सिंहासन प्राप्त कराने मे बख्त सिंह की सहायता करने के लिए अजमेर की ओर चला। मार्ग में उसने मेवात को लूटना आरभ कर दिया। राजा बदनसिंह ने उससे मेवात को नष्ट न करने की प्रार्थना की। इस पर बख्शी ने कहला भेजा कि मेवात उसकी जागीर के अन्तर्गत था। साथ ही उसने जाट राजा से दो करोड़ रुपये दडस्वरूप माँगे पर बदनसिंह ने इसे अस्वीकार कर दिया।

नारनौल से पाँच मील पूर्व में सराय शोभाचन्द के पास सूरजमल उसका सामना करने के लिए पहुँचे। यह जानकर मुगल सेना भाग खड़ी हुई। सूरजमल ने पीछा करके भयकर मारकाट मचा दी। हक़ीम खाँ खेशगी मारा गया तथा अली रुस्तम खाँ घायल हुआ। सूरजमल दो दिन तक शाही सेना को घेरे पड़ा रहा।

अन्त में फ़तेह अली के प्रयत्न से सन्धि हो गई। सूरजमल ने अजमेर सूबे की मालगुज़ारी का १५ लाख रुपया वसूल करके शाही कोष में भेजने का बचन दिया, जिसके बदले में बख्शी ने

---

[1] सुजान-चरित्र, पृ० ७-२७; फॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० २, पृ० ४३३-४
[2] सुजान-चरित्र, पृ० २८-४०; फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० २८२-३, २९१-८; वही, भाग २, पृ० ४३४; हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, पृ० ६६-७०

नारनौल से आगे न बढ़ने की प्रतिज्ञा की। साथ ही सूरजमल ने नौ लाख रुपए चन्दा देने और पांच सहस्र सैनिकों के साथ बख्शी की सेवा में रहने की स्वीकृत दी।

इस प्रकार सन्धि हो जाने पर सलावत खाँ अजमेर की ओर चला गया।"[1]

सूदन के मतानुसार उक्त युद्ध मे रुस्तम खाँ मारा गया और इतिहास-लेखकों के विचार मे वह घायल हुआ। इस युद्ध-विवरण सबधी अन्य सभी घटनायें दोनों मे समान रूप से वर्णित हैं। उनमे कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं है।

चतुर्थ जग में पठानों को परास्त करने में सूरजमल द्वारा सफ़दरजंग की सहायता करना--"नवंबर, १७४६ ई० में फ़र्रुखाबाद के क़ायम खाँ बगश ने रुहेलों पर आक्रमण किया। दौरी-रसूलपुर नामक स्थान पर दोनों सेनाओं मे युद्ध हुआ। इस सग्राम मे क़ायम .खाँ खेत रहा।

इस घटना का समाचार ज्ञात होने पर सफदरजङ्ग फर्रुखाबाद की ओर चला। वहाँ पहुँचकर उसने क़ायम .खां की माता बीबी साहिबा को कारागार मे डालकर और उसके लिए केवल १२ ग्राम छोड़कर-पठानों के शेष राज्य पर अपना अधिकार कर लिया। उसने .राजा नवल राय को वहा का सूबेदार नियुक्त किया। तदनन्तर वह दिल्ली को लौट गया।

बीबी साहिबा अपने चातुर्य से कन्नौज के कारागार से मुक्त होकर मऊ-रशीदाबाद पहुँची। साथ ही क़ायम .खा के भाई अहमद ने रात्रि मे आक्रमण करके नवल राय को मार डाला और कन्नौज को अफगानों ने अधिकृत कर लिया।

यह विदित होते ही सफदरजग फर्रुखाबाद की ओर चला। उसने एटा से अठारह मील उत्तर मे राम-चौतनी नामक स्थान पर पड़ाव डाला। इसी स्थल पर उसका अफगानों के साथ युद्ध हुआ। सफदरजग के दक्षिण पक्ष मे सूरजमल और वाम भाग मे इस्माइलबेग .खा थे। शत्रु-पक्ष का रुस्तम खाँ अफरीदी मारा गया। यह देखकर शत्रु सैन्य मे भगदड़ मच गई। सूरजमल तथा इस्माइल बेग ने उसे मीलों तक खदेड़ा। सफदरजग की सेना का अधिकाश भाग भागी हुई शत्रु-सेना का पीछा करता हुआ दूर तक निकल गया और सफदरजग थोडे से साथियों के साथ युद्ध-क्षेत्र मे रह गया। यह अवसर पाकर अहमद .खाँ बगश ने उस पर धावा बोल दिया। घोर संग्राम हुआ। सफदरजग का एक निकटवर्त्ती संबधी नासिरुद्दीन हैदर मारा गया। उसका महावत भी खेत रहा और वह स्वय मूर्छित होकर हौदे मे गिर पड़ा। जगत्नारायण उसके हाथी पर सवार होकर उसे सुरक्षित स्थान पर निकाल ले गया। मुहम्मद अली तथा अली नकी भी घायल हुए। मुग़ल सेनापति नज्मुद्दौलाह इशाक खाँ द्वितीय, मीर .गुलाम नवी तथा मीर अज़ीमुद्दीन बिलग्रामी इस युद्ध में काम आए।

इसके अनन्तर सफदरजंग तथा मुहम्मद अली खाँ लगभग दो सौ सैनिकों के साथ भागकर देहली चले गए। रुस्तम खाँ अफरीदी की सेना का दूर तक पीछा करने के पश्चात् लौटकर मुगल सेना ने अपनी सैन्य की दुर्दशा देखी। वजीर को वहाँ न पाकर वे भी पश्चिम की ओर चल पडे। २२ जनवरी (अथवा ११ फरवरी), १७५१ ई० को सफदरजंग पुनः अफ़ग़ानों पर आक्रमण करने

---

[1] सुजान-चरित्र, पृ० ४१-७८, फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भाग १, पृ० ३०७-१० (पृ० ३०६-१० की पाद टिप्पणी सहित); हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, पृ० ७०-४

के लिए दिल्ली से चला। मार्ग में उसके सहायक माधवराव होल्कर तथा सूरजमल उससे मिले।

मराठों ने कोयल (अलीगढ) और जलेसर के बगश नवाब शादिल खाँ पर आक्रमण किया। वह काली नदी और गगा पार फर्रुखाबाद की ओर भाग गया।

अहमद खाँ ने फतेहगढ दुर्ग मे रहकर शत्रु का सामना करने का निश्चय किया। मराठे एक मास तक उस गढ़ को घेरे पडे रहे। १६-१७ अप्रैल, (अथवा १५ मई को मराठे और जाट गगा पार करके दक्षिण किनारे पर पहुँचे। आगामी दिन मुठभेड हुई। पराजित होकर सादुल्लाह खाँ आंवले को तथा महमूद फतेहगढ को भाग गए। रात्रि मे अहमद खाँ भी छिपकर निकल भागा और आंवले में जाकर शरण ली। १६ अप्रैल को फतेहगढ पर मराठों का अधिकार हो गया।

बहुत समय तक युद्ध होता रहा। अन्त में मार्च, (अथवा अप्रैल) १७५२ ई० को सन्धि हो गई। सफदरजंग पर मराठों का जितना रुपया चाहिए था उसको चुकता करने के समय तक के लिए अहमद खाँ बगश का आधा राज्य मराठों को दे दिया गया। कुछ स्थान सफदरज ग ने अपने अधिकार में भी रक्खे।"[1]

इन युद्धों का ऊपर जो विवरण दिया गया है उसमे कायम खाँ के मरणोपरान्त सफ़दरजग का फर्रुखाबाद की ओर जाना, उसका बीबी साहिबा से मिलना, नवलराय की मृत्यु तदुपरान्त युद्ध, रुस्तम खाँ-मरण, अफगानों का युद्ध-भूमि से भागना, मराठों तथा जाटों द्वारा उनका पीछा किया जाना, ईसा खाँ-मरण, सफ़दरजग का भागना, सधि होने पर मराठो और वजीर द्वारा अफ़ग़ानों के राज्य का कुछ अश अपने अधिकार मे रख लेना, आदि प्रमुख घटनायें सूदन तथा इतिहास के विवरणों मे समान रूप से उल्लिखित हैं।

उक्त युद्धों में से प्रथम युद्ध सरकार के विचार मे रामचौतनी नामक स्थान पर, कानूनगो के मतानुसार पथरी मे, और सूदन के कथनानुसार नोलखा नामक स्थान पर हुआ था।

उपर्युक्त विवरणों मे अन्य कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं है।

पचम जग—सूरजमल और राव बहादुरसिह बडगूजर में युद्ध—"ऊपर वर्णित युद्धों के कुछ समयोपरात सूरजमल ने मुगल मत्री (सफदरजग) की सहायता से चकला कोयल (अलीगढ) के फौजदार राव बहादुरसिह बड़गूजर को हराया। यही नही, उसके पैतृक दुर्ग घासहरे (देहली से ४० मील दक्षिण) को तीन मास के घेरे के पश्चात् अधिकृत कर लिया। इस स्थल पर दुर्ग की दीवारों पर से गोली-वर्षा करके शत्रु ने पन्द्रह सौ जाटों को मार गिराया। अन्त मे निराश होकर बहादुरसिंह ने अपनी स्त्रियों को मारकर दुर्ग के कपाट खोल दिए और अपने पच्चीस साथियों के साथ बाहर निकल कर युद्ध करता हुआ मारा गया (२३ अप्रैल, १७५३ ई०)।

उस समय बहादुरसिह का पुत्र फतेहसिंह देहली मे होने के कारण मृत्यु-मुख से बच गया।

---

[1] सुजान-चरित्र, पृ० ५६-१०४; फॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० ३७८-८६, ३६२-७, ४०४-११; वही, भा०२, पृ०४३५; जरनल ऑव् रायल एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, संख्या XLVII, १८७८ ई०, पृ० ३७६-८३; वही, संख्या XLVIII, १८७६ ई०, पृ० ५०-७, ६०-८, ७१-५, पृ०८६-६६, १०२-११, १२०-३; फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ०१४३-६३, १७५-८६, हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, पृ०८०-३

उसने मुग़लों की सहायता से जनवरी,१७५४ ई० में घासहरे पर पुनः अपना अधिकार स्थापित कर लिया।"[1]

सूरजमल द्वारा बहादुरसिंह पर आक्रमण किया जाना, उसका घासहरे मे जाकर शरण लेना तथा जौहर करते हुए प्राण-विसर्जन करना एवं उसके पुत्र का दिल्ली में होना आदि घटनाएँ सूदन एव इतिहास मे समान रूप से मिलती हैं।

षष्ठ जग—"इस जग के प्रारभ में सूदन ने इन्द्रप्रस्थ के प्राचीन इतिहास का वर्णन किया है। महाभारत, पृथ्वीराज चौहान आदि के विवरण के उपरांत उसने अलाउद्दीन का उल्लेख करने के साथ ही देहली मे पठान-शासन की अवधि २०० वर्ष मानी है। देहली मे बाबर द्वारा मुगल-राज्य-सस्थापन से पूर्व मुसलमानों के पाँच वशों, ग़ुलाम, खिलजी, तुगलक, सैय्यद, लोदी ने ३२० वर्ष तक शासन किया था। यह पाँचों वंश इतिहास मे पठान नाम से विख्यात हैं। अतएव सूदन द्वारा कथित २०० वर्ष का समय ऐतिहासिक तथ्य के विपरीत ठहरता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि इस कवि ने तैमूर के आक्रमण काल (१३९८ ई०) से ही भारत में मुग़ल-साम्राज्य की नीव पड़ना माना है। यदि ऐसा होना तो उसका बतलाया हुआ २०० वर्ष का समय (वास्तविक २०८ वर्ष) ठीक माना जा सकता था। पर इतिहास से स्पष्ट है कि तैमूर केवल लूटमार करके स्वदेश को लौट गया था। भारत मे मुगल-साम्राज्य की नीव बाबर ने १५२६ ई० मे डाली थी। अतएव तैमूर से लेकर बाबर के पूर्व के जितने मुग़ल शासकों के नामों का उल्लेख सूदन ने किया है वे सब मध्य-एशिया मे शासक रहे थे, भारत मे नहीं।

इसके अनन्तर बाबर, हुमायूँ के शासन, सूर-वश के राज्य, पुनः हुमायूँ द्वारा राज्य-प्राप्ति का उल्लेख करने के पश्चात् अकबर से लेकर अहमद शाह के सिंहासनारूढ होने (२८ अप्रैल, १७४८ ई०) तक के समस्त मुगल शासकों के नामों तथा उनके शासन काल की अवधि (केवल वर्ष, तिथियाँ नहीं) का उल्लेख किया है।"[2] इन सम्राटों के नाम एवं शासन-काल इतिहास सम्मत एवं प्रसिद्ध हैं।

अहमद शाह तथा सफदरजंगद मे अनबन होने के कारण—"सिंहासनारुढ होते ही अहमद शाह ने सफदरजग को अपना प्रधान-मन्त्री और सआदत खाँ सैय्यद सलावत खाँ जुल्फिकार जग अमीरुल् उमरा को प्रधान बख्शी नियत किया। सफदरजग ईरानी था और अपने चारों ओर ईरानियों ही को इकट्ठा किया करता था।

तारीख ७ जून, १७५१ ई० को अहमद शाह ने अप्रसन्न होकर सलावत को पदच्युत करके निजामुल्मुल्क के पुत्र गाजीउद्दीन खाँ को अमीरुल्-उमरा की उपाधि देकर आगरे का सूबेदार नियुक्त किया। तूरानी जाति के इस बख्शी की नियुक्ति से सफदरजग के कार्यों पर नियन्त्रण रहने लगा।

कुछ समयोपरान्त गाजीउद्दीन खाँ का देहावसान हो जाने पर उसका पन्द्रह वर्षीय पुत्र

---

[1] सुजान चरित्र, पृ० १०२-२३, फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० २, पृ० ४३६ (पाद टिप्पणी सहित) [2] सुजान-चरित्र, पृ० १२४-७

शिहाबुद्दीन ग़ाजीउद्दीन खाँ बहादुर, फीरोज जंग अमीरुल् उमरा, इमादुल्मुल्क की उपाधियों से विभूषित करके मीर-बख्शी नियत किया गया (१२दिसबर १७५२ ई०)।

इमादुल्मुल्क प्रकट रूप से सफदरज ग का अनुयायी था पर गुप्त-रूप से वह उसको पद-च्युत कराने के लिए सदैव षड्यन्त्र रचता रहता था।

शनैः शनैः इन दोनों का वैमनस्य बढता ही गया। सफदरजग ने राज्य-प्रबन्ध की सारी शक्ति अपने हाथ मे ले ली थी। उसने अन्य अमीरों की जागीरें एवं अन्य अधिकार छीन लिए थे। अपनी अयोग्यता के कारण वह साम्राज्य की रक्षा करने में असमर्थ रहा था। वह जाटों और मराठों से मैत्री-भाव बनाए रखता था। इसी कारण से विरोधी अमीर इसके विरुद्ध सम्राट् के कान भरते रहते थे। परिणामस्वरूप बादशाह और सफदरजंग का वैमनस्य चरम सीमा को पहुँच गया था। अन्त मे सम्राट् से अवध जाने की अनुमति लेकर सफ दरजंग ने देहली से ब हर नूराबाद मे अपने डेरे डाले (२६ मार्च, १७५३)।

दिल्ली की लूट—देहली से निकल कर सफ़दरजग बाहर पडा रहा। उसकी सहायतार्थ सूरजमल, रुलावत खाँ, गोसाई राजेन्द्रगिरि आदि आ पहुँचे। मराठों ने शाही पक्ष का समर्थन किया।

इसके अनन्तर सफदरज ग के परामर्श से सूरजमल और राजेन्द्रगिरि ने पुरानी दिल्ली, विशेषकर शाहजहाँ के नगर के लाल फाटक से बाहर स्थित अनाज की मडी तथा मकानों को लूटा। नगर के इस भाग मे प्रायः मध्यम् एव निम्न श्रेणी के व्यक्ति रहते थे। मकानों को त्याग कर नगरवासी शरणार्थी नई दिल्ली में जा पहुँचे (६ मई, १७५३ ई०)। दूसरे दिन (१० मई) को जाटों ने सैय्यद द्वारा, बोजल मस्जिद आदि मुहल्लो मे मनमानी लूट की। 'उन्होने नगर को फाटक तक लूटा, लाखों की सम्पति लूटी गई। मकान गिरा दिए गए तथा सभी पुरे प्रकाश रहित कर दिए गए।' "पुरानी दिल्ली निवासियों के प्राण, सम्पत्ति, स्त्री-सतीत्व आदि का अपहरण किया गया।" "भागने मे असमर्थ बहुत से नागरिकों ने निराश होकर अपनी हत्या करली।" देहली की यह लूट बहुत समय तक जाट-गर्दी के नाम से देहली-वासियों द्वारा स्मरण की जाती रही।

जाटों ने पुरानी दिल्ली को नित्य लूटा। "वहाँ के सभी प्राणी नए नगर मे शरणार्थ जा छिपे। दिल्लीवासी एक मकान से दूसरे घर मे एक गली से दूसरी मे, निराश और विभ्रमग्रस्त, लहरों पर नाचते हुए भग्न-जलयान सदृश्य भटकते फिरने लगे। प्रत्येक व्यक्ति पागल, विभ्रमित, दुःखी और अपनी रक्षा मे असमर्थ होकर भागता फिर रहा था।" सभी बाजार, गलियां और मकान शरणार्थियों से भर गए थे। सरकारी मकान और बाटिकायें ऊँच, नीच सभी श्रेणी के मनुष्यों से भर गई थी।

सफदरजग का पद-च्युत होना—दिल्ली की लूट तथा प्रजा की अन्य प्रकार की दुर्दशा के एक मात्र कारण सफदरजंग को पद-च्युत करके अहमदशाह ने उसके स्थान पर इन्तजाम को क़मरुद्दीन खा बहादुर तथा एतमाद्उद्दौलाह की उपाधि से विभूषित करके प्रधान-मन्त्री बनाया (१३ मई, १७५३ ई०)। मीर बख्शी इमादुल्मुल्क को उसके बाबा की निजामुल्मुल्क तथा आसफ़ जाह की उपाधिया प्रदान की गईं। इसके प्रत्युतर मे सफदरजंग ने एक अपरिचित लड़के—सभवतः 'शुजाउद्दौलाह द्वारा कुछ समय पूर्व क्रीत एक नपुंसक—को कामबख्श का पोता घोषित करके अक-

बर आदिल शाह के नाम से सिंहासनारूढ कराया, स्वयं उसका मन्त्री हुआ और सलावत जंग को बख्शी नियुक्त किया।"[1]

ऊपर जिन घटनाओं का विवरण दिया गया है उनसे सम्बन्धित सूदन तथा इतिहास के वर्णनों में जो समानता तथा अन्तर है, वह सक्षेप मे नीचे दिया जा रहा है :—

अहमदशाह का बादशाह होना, सफदरजग का मन्त्री बनना, सलावत खॉ को पद से हटाकर इमादुल्मुल्क का मीर बख्शी के पद पर नियुक्त होना, अहमदशाह और सफदरजग के मनमुटाव आदि का वर्णन सूदन ने अपेक्षाकृत संक्षिप्त पर इतिहासानुकूल किया है। ईरानी एव तूरानी अमीरों की अनबन के कारण राज्य-व्यवस्था मे शैथिल्य आ जाना, सफ़दरजग का मराठों एवं जाटों से मैत्री-भाव, सफ़दरजङ्ग का अवध को प्रस्थान करना पर देहली के बाहर ही पडे रहना, जाटों का उसकी सहायता करना आदि घटनायें सूदन द्वारा यथास्थान उल्लिखित कर दी गई हैं। देहली की लूट और आग जलाने का जो सजीव एवं विस्तृत चित्रण सूदन ने किया है उसकी प्रामाणिकता इतिहास से सिद्ध हो जाती है। नगर मे व्यापार सम्बन्धी वस्तुओं के जलने, हाहाकार मचने, भगदड पड़ने, व्यक्तियों के त्राहि त्राहि पुकार कर इधर-उधर भटकने आदि का सूदन ने जो सजीव, रोमांचकारी, विशद एव यथातथ्य चित्रण किया है वैसा विवरण अन्यत्र, विशेषकर फारसी इतिहास ग्रन्थों मे कठिनता से मिलेगा।

सूदन के मतानुसार सूरजमल के प्रस्तावित करने पर सफदरजंग ने अकबर-आदिल शाह को सम्राट घोषित किया था, पर फ़ारसी इतिहास लेखकों के विचार में प्रथम अहमदशाह ने उसको मन्त्री-पद से च्युत कर दिया था तब सफ़दरजग ने अकबर-आदिल शाह को सम्राट् बनाया था। कुछ भी हो, यह तो निश्चित ही है कि सफदरजग ने अकबर आदिल शाह को सम्राट् बनाया और अहमदशाह ने उसके स्थान पर इन्तजाम को मन्त्री नियुक्त किया। सूदन ने गाजीउद्दीन खॉ को अहमद शाह का मन्त्री माना है, जो ठीक नही हैं। उसके नए मन्त्री का नाम इतजाम था और गाजीउद्दीन खॉ इमादुल्मुल्क उसका मीर बख्शी था, न कि मन्त्री। इसी प्रकार शम्सामुद्दौलाह को मीरबख्शी बतलाना भी सूदन की भूल है। वास्तव मे शम्सामुद्दोला को अहमदशाह ने शुजा के स्थान पर शाही तोपखाने का सेनापति (मीर आतश) बनाया था।[2] साथ ही सूदन का यह कहना कि इतजाम अहमद शाह के पास ही रहता था ठीक है। इतिहास से भी स्पष्ट है कि 'वह न तो स्वयं युद्ध-स्थल मे गया और न उसने सम्राट् को जाने दिया।'[3]

कोटरा (कोहतिला)-युद्ध—बहुत समय तक दोनों ओर की सेनाओं के पडे रहने के उपरान्त अन्त मे युद्ध करने का निश्चय किया गया। सफदरजग ने नई दिल्ली से तीन मील दक्षिण में कोहतिला पर अधिकार कर लिया (१७ मई)। वह पुरानी दिल्ली के काबुली दरवाजे में प्रविष्ट

---

[1] सुजान-चरित्र, पृ० १२७-८१ (छं० ३ तक), फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० १, पृ० ३४०-१, ३४१, ३५८-६, ४५३, ४५५, ४६०, ४६२, ४६४, ४६६-८, ४७३-६ ४७८-८३; फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० १२६-८, २१५-७, २१६-२४, २२८-३१ [2] फ़ॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० १, पृ० ४८० [3] वही, भा० वही, पृ० ४६६-५००

हुआ। सादल खाँ और देवीदत्त ने उसका सामना किया। उसने रात्रि में कोहतिला पर बन्दूकें चढाकर शाही दुर्ग पर गोली-वर्षा प्रारम्भ कर दी।

५ जून को सफ़दरजग के इस्माइल खा आदि सेनापतियों ने शहर की दीवार पर आक्रमण आरम्भ किया। साथ ही उसकी सेना ने रेती पर से भी धावा बोला। नजीब खाँ ने उसका सामना किया। फलस्वरूप मन्त्री की सेना तोपें छोडकर भागने लगी। पर जाटों ने आकर युद्ध को जारी रक्खा। नजीब अपने भाई सहित घायल हो गया और उसके तीन-चार सौ आदमी मारे गए। रात्रि भर युद्ध होता रहा। प्रातःकाल होने से कुछ पहले सफदरजग की सेना कोहतिला से हट गई। शाही सेना ने उसकी तोपों आदि को लेकर कोहतिला पर अधिकार कर लिया। वहाँ से शाही सेना सफदरजंग के दल पर गोली बरसाने लगी। विवश होकर सफदरजग ने अपने डेरे नगर से दूर हटा लिए।

इसके पश्चात् थोडा बहुत युद्ध नित्य-प्रति चलता रहा। सफदर की सेना इधर-उधर घूमती रहती और अवसर पाकर लूट खसोट कर लेती थी। साथ ही उसे प्रतिदिन हानि भी उठानी पडती थी। १२ जून की ईदगाह की लडाई मे जाटों को बहुत हानि सहनी पड़ी थी।

राजेन्द्रगिरि मरण—इसी प्रकार युद्ध चलता रहा। १४ जून को सूर्यास्त से ढाई घटे पूर्व सफदरजग की सेना और जाटों ने बादशाह की सारी खाइयों पर एक साथ धावा बोला, जिसके फलस्वरूप शाही सेना के बदख़शानी और मराठा सैनिकों को भारी हानि उठानी पडी। पर इमाद स्वय वहाँ पर आकर अपनी सेना को प्रोत्साहन देने लगा। अन्त मे शाही सेना की विजय हुई। इस युद्ध मे काली पहाडी पर आक्रमण करते समय राजेन्द्रगिरि के गोली लगी जिसके परिणाम-स्वरूप वह दूसरे दिन मर गया। इमाँद नामक इतिहास लेखक की धारणा है कि इस्माइल खाँ ने ईर्ष्यावश एक मनुष्य द्वारा राजेन्द्रगिरि को गोली से मरवा डाला था। इसके मरने से सफदरजंग अत्यन्त हतोत्साहित हुआ। इस घटना के पश्चात् वह स्वयं कभी युद्ध मे नहीं गया।

राजेन्द्रगिरि की मृत्यु के उपरान्त अनूपगिरि ने उसका स्थान ग्रहण किया।

गढ़ी-मैदान तथा बदरपुर-युद्ध—जैसे-जैसे कालयापन होता गया वैसे वैसे सफदरजग की सेना हतोत्साहित होती गई। वह पीछे हटता गया और मराठे उसकी सेना का पिछला भाग लूटते गए। कभी-कभी एक आध-मुठभेड़ भी हो जाती थी। १६ जुलाई तक सफदरजग दिल्ली से हट कर १५ मील दक्षिण में बदरपुर और फ़रीदाबाद के मध्य मे पहुँच गया। उसके छोडे हुए स्थल पर यमुना के पश्चिम मे कुतुबमीनार के निकट कालिका देवी तक शाही सेना ने अपनी मोर्चा-बन्दी करदी। मिट्टी की दीवार से वेष्टित 'गढी मैदान' गाँव का घेरा डाले हुए रुहेलों को जाटों ने वर्षा होते रहने पर भी बुरी तरह से नष्ट करके उनके अस्त्र-शस्त्र छीन लिए (२५ जुलाई)। १६ अगस्त को तुगलकाबाद तथा यमुना के मध्य के मोर्चे पर जाटों और रुहेलों में भयङ्कर युद्ध हुआ। दूसरे दिन शाही सेना ने बदरपुर पर अधिकार कर लिया। इस स्थान से केवल ४ मील पर दक्षिण में फ़रीदाबाद के पास सफदरजंग डेरा डाले पडा था। कुछ दिन के पश्चात् वह वहाँ से ६ मील और हटकर सीकरी (बल्लमगढ़ के ३ मील दक्षिण) तक हट गया तथा इमाद फ़रीदाबाद की ओर बढ़ा।

तारीख ६ सितम्बर को सफदरजग ने शत्रु की खाइयों पर आक्रमण किया, पर इमाद ने उसे पीछे खदेड़ दिया। जाटों ने दिल्ली और शाही खाइयों के बीच ग्यारह मील तक मनमानी

लूट की। इमाद के दिल्ली चले जाने पर सफ़दरजंग ने बदरपुर आदि स्थानों की चौकियों को लूटा। २२ सितम्बर को जाटों ने देहली की ओर से आक्रमण करके असंख्य व्यक्तियों को मार डाला। २६ सितम्बर को सूरजमल आदि ने मराठों की खाइयों पर भयङ्कर आक्रमण किया। बहुत से मराठे मारे गए। समाचार ज्ञात होने पर इमाद और नजीब उनकी सहायता के लिए आ पहुँचे। इमाद के हाथी के दाँत तोड दिए गए। तब वह घोडे पर चढ़ा और जाटों को ख़ूब मारा। भाला लगने से इस्माइल घायल हो गया। इमाद ने भागते हुए शत्रुओं का चार मील तक पीछा किया। दूसरे दिन विजेताओं ने बल्लमगढ के निकट तक उनका पीछा किया।

सन्धि—अहमदशाह ने अपनी सहायता के लिए आमेर-नरेश माधवसिंह को बुलाया। वह १० अक्टूबर को दिल्ली के दक्षिण मे यमुना किनारे नगला मे पहुँचे। उनने बादशाह की २५ अक्टूबर को सूरजमल से और ५ नवम्बर को सफदरजंग से सन्धि करवा दी सफ़दरजंग ७ नवम्बर को अवध को चला गया। माधवसिंह को रणथम्भौर दुर्ग दे दिया गया और वह अपने देश को लौट गए।"[1]

ऐसा प्रतीत होता है कि कोहतिला नामक युद्ध को ही सूदन ने कोटरा युद्ध नाम दिया है। सेना-सहार होते हुए देखकर वहाँ से सफदरजंग का हटना, राजेन्द्रगिरि की वीरतापूर्ण मृत्यु, सफदरजंग का शोकाकुल होना, उसके रिक्त स्थान पर अनूपगिरि की नियुक्ति, गढी-मैदान तथा बदरपुर के युद्धों की भयंकरता, गाजीउद्दीन खाँ का स्वयं सैन्य-संचालन, सफदरजंग का पीछे हटना, माधवसिंह द्वारा संधि कराना आदि घटनाओं के वर्णन मे सूदन ने न केवल ऐतिहासिक तथ्य की रक्षा ही की है, वरन् युद्ध-विद्या का कौशलपूर्ण विवेचन, सेनाओं के शौर्य एव चातुर्यपूर्ण संचालन का उन्होंने जो चित्रण किया है, वह अन्यत्र कठिनता से मिलेगा।

सप्तम जंग—बल्लू बध—"सफदरजंग से सधि हो जाने के पश्चात् देहली सरकार को बड़ी कठिनायों का सामना करना पडा। सरकारी कर्मचारियों एव सैनिकों को कई वर्षों से वेतन नहीं मिला था। रुहेले और मराठे अपना निश्चित रुपया माँगने मे बड़ी कठोरता प्रदर्शित कर रहे थे। विवश होकर इमाद ने देहली के दक्षिण के ग्रामों को जाटों से छीनकर भरतपुर पर आक्रमण करने का निश्चय किया।

इस निर्णय के अनुसार वह बख्शी की जागीर के फरीदाबाद प्रान्तान्तर्गत ग्रामों को बल्लू से छीनने के लिए मराठों की सेना के साथ आगे बढ़ा, कुछ युद्ध के उपरांत बल्लू ने संधि कर ली। इसके अनन्तर आकिबत पलबल की ओर बढ़ा पर पुनः बल्लमगढ़ के निकट आकर मिलने के लिए बल्लू को बुलाया। बल्लू अपने दीवान, एक पुत्र तथा २५० अंगरक्षकों के साथ आया। आकिबत के साथियों ने बल्लू, उसके पुत्र, दीवान तथा अन्य नौ व्यक्तियों को मार डाला (२६ नवबर, १७५३ ई०)। जाटों ने बल्लमगढ़ खाली कर दिया। आकिबत ने उस पर अधिकार करके उसका नाम निजामगढ़ रक्खा।

इसके अनन्तर आकिबत ने आगे बढ़कर पलबल तक के प्रदेश पर अपना स्वामित्व स्था-

---

[1] सुजान-चरित्र, पृ० १८१-२२३; फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भाग १, पृ० ४८८-९८, ५०१-५; फ़र्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, पृ० २३३-४५; हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, पृ० ८४-६

पित कर लिया। वह कुछ दिन के लिए देहली जाकर पुनः खाँडोजी होल्कर के साथ फ़रीदाबाद को लौट आया (२७ दिसम्बर), पर जाटों ने उससे सारे दुर्ग पुनः छीन लिए।

खाँडोजी ने होडल (पलवल से १७ मील दक्षिण) पर डेरा डाला और अपनी सेना आगे भेजी, जिसने बरसाना (१२ मील दक्षिण) और नन्दगाँव (१७ मील दक्षिण) से सूरजमल के लड़के को निकाल दिया (दिसम्बर का अन्त, १७५३)। इमाद भी बल्लमगढ होता हुआ पलवल की ओर बढा। उसने घासहरा पर फतेहसिंह (स्वर्गीय बहादुरसिंह के पुत्र) का अधिकार करा दिया। इसके फलस्वरूप मथुरा तथा आगरे के निकट तक इमाद का अधिकार हो गया। कोयल और जलेसर से भी जाट निकाल दिए गए। इस प्रकार जनवरी के मध्य, १७५४ ई० तक इस प्रदेश में पुनः शांति स्थापित हो गई।

मराठों द्वारा कुंभेर दुर्ग का घेरा—मराठों की एक सेना बूँदी, जयपुर और मारवाड़ से चौथ वसूल करने के लिए जयपुर की सीमा में दो मास से अधिक (६ नवंबर, १७५३ ई० से १५ जनवरी १७५४ तक) पड़ी रही थी। सूरजमल ने रूपराम कोठारी को मराठों के डेरे में भेजा। मल्हार ने उससे, यह कहकर कि सूरजमल ने दिल्ली की लूट मे बहुत सा धन एकत्रित किया है, दो करोड़ रुपये माँगे। रूपराम ने मुगलो से प्राप्त करके अतिरिक्त ४ लाख रुपये और देने चाहे, पर मल्हार ने इसे अस्वीकार करके जाट-राज्य पर आक्रमण करने का ही निश्चय किया। जाट भी उसका सामना करने के लिए तैयार हो गये।

मराठों ने दुर्ग डीग पर (१६ जनवरी, १७५४ ई०) तथा भरतपुर पर आक्रमण किया। जाटों ने उन्हें पीछे हटा दिया। मराठों की सख्या की अधिकता से पराजित सूरजमल ने कुंभेर दुर्ग मे जाकर शरण ली। मराठों ने उसका घेरा डाल दिया। उनके पास तोपें न थीं, अतः उन्होंने आस-पास के देश को लूट लिया। रघुनाथराव कुंभेर के सामने के मैदान में २२ मई तक पड़ा रहा। खांडेराव होल्कर अपनी ४ सहस्र सेना के साथ होडल से मेवात होता हुआ और मार्ग मे लूटमार करता हुआ कुंभेर पहुँचा।

मार्च में इमाद मथुरा से कुंभेर पहुँचा। वहीं आकिबत भी इससे मिला। १५ मार्च, १७५४ ई० को खाडेराव गोली लगने से मारा गया। शोकातुर मल्हार ने मथुरा में जाकर उसके अन्तिम संस्कार किये। सूरजमल, अहमदशाह आदि ने उसके साथ सवेदना प्रकट की।

कुंभेर का घेरा ४ मास तक पड़ा रहा। अन्त में मई के महीने में सन्धि हो गई। जाटों की ओर से रूपराम ने तीन वर्ष में तीस लाख रुपये दंड-स्वरूप देने का वचन दिया। इसके अतिरिक्त जाटों द्वारा, जो दो करोड रुपये देहली सम्राट् को दिये जाने वाले थे, वे इमाद तथा मराठों को दिए जायँ, यह निश्चय हुआ। अतएव घेरा समाप्त हुआ, इमाद १८ मई को और रघुनाथ राव २२ मई को मथुरा चले गये।"[1]

बल्लू चौधरी की हत्या के प्रसंग मे सूदन ने उसके साथ उसके दो पुत्रों के मारे जाने का उल्लेख किया है, पर इतिहास के अनुसार बल्लू के साथ उसका केवल एक पुत्र और एक दीवान मारे गये थे।

---

[1] सुजान-चरित्र, पृ० २२४-२६; फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० ५०६-१५, ५१६-२२, हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, पृ० ८७-६२, ६५-६

इस घटना के पश्चात् आकिबत का बल्लमगढ पर अधिकार करके ब्रज के होडल आदि स्थानों की ओर खांडेराव के साथ आगे बढना, सूरजमल के पुत्र जवाहरसिंह का उस समय ब्रजमण्डल में रहना आदि घटनायें सूदन एवं इतिहास की कृतियों में समान रूप से मिलती हैं।

उक्त प्रसंग में सूदन ने लिखा है कि खांडेराव और जवाहरसिंह दोनों को अपने-अपने पिता से यह आदेश मिला कि वे युद्ध न करें। संभवतः ऐसा लिखकर कवि ने या तो जाटों की बरसाने आदि पर हुई पराजय को छिपाने की चेष्टा की है अथवा इसके द्वारा कुभेर के युद्ध की ओर सकेत किया है।

आगे चलकर खाँडेराव द्वारा मेवात को लूटने, जाटों की युद्ध सबंधी विशद तैयारी, मल्हारराव होल्कर द्वारा रूपराम से रुपए माँगने आदि बातों का सूदन और इतिहास लेखकों ने समान रूप से वर्णन किया है। कुम्भेर-दुर्ग के घेरे, खाडेराव की मृत्यु आदि घटनाओं के सम्बन्ध मे सुजान-चरित्र की वर्तमान प्रति मौन है और उसमे उनके स्थल पर ब्रज-शोभा, कृष्ण-लीला आदि का उल्लेख किया गया है।

सेनाये

सूदन ने अपने ग्रथ मे विभिन्न युद्धों मे सम्मिलित होने वाली सेनाओं के जो आँकडे दिए हैं, उनमें से केवल प्रमुख सख्याओं की प्रामाणिकता पर नीचे विचार किया जा रहा है :—

(अ) फ़तेह अली की सहायता के समय सूरजमल की सेना—उक्त युद्ध मे सुजानसिंह के विभिन्न सेना-नायकों के साथ में जो सेना थी उसकी पूर्ण संख्या २,७०० थी।[1]

(आ) जयपुराधीश की सहायता के समय सूरजमल की सेना :—

अश्वारोही	१०,०००
पदाति	२,०००
बरछैत	२,०००
योग	१४,०००[2]

सरकार ने उक्त सेना की सख्या १० सहस्र अश्वारोही मानी है।[3]

(इ) सूरजमल की सलावत के विरुद्ध सेना—सूरजमल ने छः सहस्र सेना के साथ सलावत खाँ का सामना किया था, सूरजमल के आश्रित कवि सूदन का ऐसा मत है। इतिहास लेखक भी इसी संख्या को स्वीकार करते हैं।[4]

(ई) घासहरै के घेरे के अवसर पर सूरजमल की सेना चार सहस्र थी।[5]

(उ) विद्रोही सफ़दरजग की सहायतार्थ सूरजमल पन्द्रह सहस्र अश्वारोही के साथ युद्ध मे सम्मिलित हुआ था। सरकार ने भी उक्त सख्या का समर्थन किया है।[6]

---

[1] सुजान-चरित्र, छं० ३२, पृ० १६-२० [2] वही, छं० १०, पृ० २६ [3] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भाग २, पृ० ४३४ [4] सुजान-चरित्र, छं० १०, पृ० ४५-६; फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर भा० १, पृ० ३०८ [5] सुजान-चरित्र, छं० १६, पृ० ११०-११ [6] वही, छं० १७, पृ० १५६; फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० ४७८

(ऊ) खाडेराव की ब्रज पर आक्रमण करते समय सेना चार सहस्र थी। इतिहास में भी इसी संख्या को माना गया है।[1]

(ए) पठानों के विरुद्ध सफ़दरजंग की सहायता के लिए मल्हार राव की सेना पचास सहस्र आई थी।[2] इतिहास ग्रंथों से ज्ञात होता है कि उक्त अवसर पर होने वाले युद्धों में अलीगढ मे मराठों की केवल २० सहस्र सेना सम्मिलित हुई थी।[3]

(ऐ) **राव बहादुरसिंह की सेना**—सूदन ने घासहरै के राव बहादुरसिंह की सेना के संबंध में दो विवरण दिये हैं। एक स्थल पर उन्होंने उसकी सेना की संख्या आठ सहस्र मानी है तथा दूसरे पर पाँच सहस्र।[4] इसी युद्ध मे उसके साथ मरने वालों की संख्या क्रमशः ७०० तथा ४०० सैनिक उक्त कवि के द्वारा मानी गई है।[5]

(ओ) **असद ख़ाँ की सेना**—सूदन ने असद ख़ाँ की सेना की संख्या छः सहस्र मानी है।[6]

(औ) **सलावत ख़ाँ की सेना**—सूरजमल के राज्य पर आक्रमण करते समय मीर बख्शी सलावत के साथ ३० सहस्र सेना थी।[7] सरकार के विचार में उक्त अभियान मे सलावत की सेना अठारह सहस्र तथा कानूनगो के मत मे पन्द्रह सहस्र थी।[8]

(अं) **सफ़दरजग की अफ़गान-युद्ध में सेना**—जब सफ़दरजंग अफ़गानों के विरुद्ध दिल्ली से प्रस्थानित हुआ, उस समय उसके साथ दश सहस्र सेना थी। अलीगढ के पास उसके अन्य सहायक आकर उपस्थित हो गये थे, इसलिए उसकी सेना की संख्या चालीस सहस्र हो गई थी।[9] इतिहास से ज्ञात होता है कि राम-चौतनी के युद्ध मे सफदरजंग की सेना सत्तर, अस्सी हज़ार थी।[10]

ऊपर सूदन द्वारा उल्लिखित सैन्य-संख्याओं का जो विवेचन किया गया है, उससे ज्ञात होता है कि कवि कथित सेना के आँकड़ों मे से अधिकाश इतिहास लेखकों द्वारा दी हुई सख्या से मेल खाते हैं, पर कहीं-कही पर कवि ने इस प्रसग मे कल्पना से भी काम लिया है।

उपर्युक्त ऐतिहासिक विवेचन के पश्चात् यह सार निकलता है कि सुजान-चरित्र मे दी हुई अधिकांश तिथियाँ ऐतिहासिक तिथियों से मेल नही खाती, पात्र प्रायः सभी ऐतिहासिक हैं और घटनायें भी इतिहास-सम्मत हैं। इस प्रकार यह ग्रथ ऐतिहासिक दृष्टि से एक अमूल्य कृति है। वर्णित विषयों का जितना विस्तृत एव तथ्यपूर्ण वर्णन इस ग्रथ मे मिलता है, उतना उक्त विषय सम्बन्धी अन्य ग्रंथों मे सभवतः न मिल सकेगा। अतएव यह पुस्तक पाठकों के इतिहास-ज्ञान की वृद्धि करने मे विशेष रूप से सहायक होती है।

---

[1] सुजान-चरित्र, छं० ५, पृ० २३८; फ़ॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० १, पृ ५१५ [2] सुजान-चरित्र, छं० ३, पृ० १०० [3] फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० १, पृ० ४०५ [4] सुजान-चरित्र, छं० ४, ५, पृ० १११-२, ११३ [5] वही, छं० ३२, पृ० १४५ [6] वही छं० २८, पृ० १८ [7] वही, छं० ३, पृ० ४१-२ [8] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० ३०७, हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० ७१ [9] सुजानचरित्र, छं० ६, पृ० ६०; छं० ३, पृ० ७० [10] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० १, पृ० ३६३, हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भा० १, पृ० ८१

अध्याय ६

करहिया कौ रायसौ की ऐतिहासिकता

नीचे 'करहिया कौ रायसौ' में वर्णित तिथि, वंशोत्पत्ति, पात्र, युद्ध, सेना आदि की ऐतिहासिकता पर विचार किया जा रहा है :—

करहिया के युद्ध की तिथि – संवत् १८२४ भाद्रपद, असित ६, शनिवार[1]

श्रावण अमा चन्द्रमा का मध्यन्य समाप्तिकाल १		जुलाई २६.१०
२१ तिथियों का समस्त व्याप्तिकाल	२०	२०.६७
	२१	४६.७७

= शनिवार, १५ अगस्त, १७६७ ई०

गुलाब कवि द्वारा दी हुई तिथि गणना से ठीक निकलती है। अतएव यह युद्ध १८२४ वि० भाद्रपद कृष्ण पक्ष ६, शनिवार तदनुसार १५ अगस्त, १७६७ ई० को हुआ था।

वंशोत्पत्ति—इस कवि ने करहिया के प्रमारों को 'रवि वशिन-अंश'[2] तथा 'धारा-धनी'[3] लिखा है।

गुलाब ने प्रमारों को 'रवि वशीय' मानकर परंपरागत ऐतिहासिक सत्य का अनुकरण किया है। यह राजपूत वास्तव में सूर्यवंशीय ही हैं।[4]

करहिया के प्रमार मालवा प्रमार-शाखा के वशधर हैं। इस शाखा के खरगराय नामक व्यक्ति ने आश्वनि शुक्ल ४, सवत् १६३२ वि० (१५७५ ई०) में नखर से १६ मील उत्तर मे करहिया नगर को बसाया था, जो अब तक उनके वशधरों के अधिकार में है।[5] कुछ विद्वान् करहिया के प्रमार-वंश की स्थापना-तिथि १५६४ ई० मानते हैं।[6] अतएव मालवा शाखा के वशज होने के कारण करहिया के प्रमार 'धारा-धनी' कहलाने के अधिकारी हैं, क्योंकि इनके पूर्वजों के समय में धारा-नगरी प्रमारों की राजधानी थी, जो उस काल मे अत्यन्त प्रसिद्ध नगरी थी। इनको धारा-धनी विशेषण से युक्त करके गुलाब कवि ने अपने इतिहास ज्ञान का सच्चा परिचय दिया है।

निश्चित पात्र

जवाहरसिंह।[7]

---

[1] नागरी प्रचारणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० १०, १९८६ वि०, छं० १५, पृ० २७८ [2] वही, वही, छं० ६३ पृ० २८९ [3] वही, छंद १८, १९, पृ०२७९; छं०२५, पृ० २८०; छं० ३८, पृ० २८४, छं० ४३, पृ० २८५, छं० ४६, पृ० २८६; छं० ४८-५०, पृ० २८७; छं० ५२, ५७, पृ० २८८ [4] देखिए द्वितीय खण्ड, अध्याय ११, हम्मीररासो की ऐतिहासिकता के अन्तर्गत अग्नि-कुलोत्पत्ति-विवरण [5] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा० १०, १९८७ वि०, पृ० २७२-५ [6] ग्वालियर स्टेट गज़ेटियर, १९०८ ई०, भा० १, पृ० २५१ [7] देखिए द्वितीय खण्ड, अध्याय ८, सुजान-चरित्र के पात्रों की ऐतिहासिकता, पृ०३१४

रामसिंह—इनके सम्बन्ध में अधिक वृत्त उपलब्ध नहीं हैं। केवल इतना ही ज्ञात है, कि करहिया के उक्त युद्ध के अवसर पर नरवर की कछवाहा शाखा के यह राजा थे और उन दिनों करहिया इनके आधीन एक जागीर थी।[1]

अनिश्चित पात्र

निम्नलिखित पात्रों के विषय में ऐतिहासिक विवरण अप्राप्य है :—

उद्दोतसिंह, उदारसिंह, किसुनेस, कीरतसिंह, केसवराय, केहरीसिंह, खुमान, गजा छितपाल, घनसिंघ, दांदिक (?), दिमानसिंह, दुर्जनसिंह, देवीसिंह, धुरमंगद, धौकलसिंह, नवलेश, पचमसिंह, भीम, मान कुमार, माखनसिंह बुन्देल, मुहुकम, मुकुद, मोहनसिंह, मंगद, रघुनाथ, रतिभान, लछनेस, वृजभान, विग्यसिंघ (विज्ञसिंह), श्यामदास, सामंतसिंह, सिरदारसिंह, सुजानसिंह, सोनेसिंह, हरिसिंघ (हरिसिंह)।

युद्ध-वर्णन—गुलाब कवि ने अपने 'रायसौ' मे करहिया के युद्ध का जो विवरण दिया है, उसका उल्लेख इतिहास ग्रन्थों में नही मिलता है। पर इतिहास से यह स्पष्ट है कि भरतपुराधीश जवाहरसिंह ने बुन्देलखंड आदि पर विजय प्राप्ति की अभिलाषा से एक विशाल सेना के साथ आक्रमण करके कतिपय स्थानो पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया था। नीचे इन्ही युद्धों का अत्यन्त सक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है। इससे अप्रत्यक्ष रूप मे करहिया के युद्ध पर पर्याप्त प्रकाश पड़ जायेगा :—

"मराठों को पराजित करने (१७६६ ई०), अपने प्रतिद्वन्द्वी नाहरसिंह के मारे जाने (दिसंबर, १७६६ ई०), और उमरावगिरि आदि गोसाई विद्रोहियों की शक्ति क्षीण हो जाने से जवाहरसिंह अधिक शक्तिशाली हो गया। दादा और उनकी सेना के उत्तर से चले जाने पर (१६ मई, १७६७ ई०) को जवाहरसिंह सिरौज पहुँचा। वर्षा काल में (जुलाई-सितंबर) मे आक्रमण करके उसने कालपी तक मराठों के सभी राज्यों और जमीदारों को जीत लिया। केवल ग्वालियर और झाँसी मराठों के अधिकार मे रह गए। शेष सभी स्थलों—भदावर, कछवाहाधार, तोमरधार सिकरवार, आदि पर जाटों का अधिकार हो गया। जवाहरसिंह ने कालपी मे अपना राज्य स्थापित किया, दतिया और सेउँढा पर कर लगाया तथा नरवर के पुल तक जा पहुँचा। यहाँ से दक्षिण की ओर न बढकर वह वापस लौटा। ग्वालियर की ओर लौटते समय उसने मराठो से जिगनी छीनी। पिछौर और गोहद के राजा उनसे मिले। उसने उन्हे आश्वासन दिलाया कि यदि दक्षिण से और मराठा सेना न आ गई तो वह अक्टूबर में उनके राज्यों से मराठों को निकाल देगा।"[2]

ऊपर के उद्धरित ऐतिहासिक विवरण से स्पष्ट है कि जवाहरसिंह १७६७ ई० में जुलाई से सितंबर तक कालपी, नरवर, आदि के प्रदेश मे अपनी सेना के साथ वर्तमान था। गुलाब कवि के कथनानुसार करहिया के युद्ध की तिथि १५ अगस्त, १७६७ ई० आती है।[3] अतएव यह युद्ध अवश्य ही इसी अवसर पर हुआ होगा। इसके अतिरिक्त उक्त विवरण से यह भी ज्ञात होता है कि जवाहरसिंह नरवर के पुल तक पहुँच गए थे। करहिया राज्य उन दिनों नरवर के ही अन्तर्गत था।

---

[1] नागरी प्रचारिणी पात्रिका, नवीन संस्करण, भा० १०, १९८६ वि०, पृ० २७५ [2] फ्रॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर भा० २, पृ० ४७०-५, हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, पृ० १९१-२ [3] देखिए इसी अध्याय में ऊपर उल्लिखित करहिया-युद्ध की तिथि, पृ० ३३३

उसकी इस युद्ध-यात्रा में आनेवाले जिन प्रमुख स्थानों का उल्लेख किया गया है उनसे पता चलता है कि वह अवश्य ही करहिया की सीमा से होकर निकला होगा। अतः उसे अवश्य ही यह युद्ध करना पडा होगा। अतएव यह सिद्ध हो जाता है कि गुलाब कवि द्वारा कथित करहिया का युद्ध अवश्य ही हुआ था। एक स्थानीय जागीरदार द्वारा यह युद्ध लड़ा गया था। जवाहरसिंह को ऐसे ही अनेकों युद्ध लड़ने पडे होंगे, जिनका उल्लेख इतिहास ग्रथों में अप्राप्य है, पर उनकी सत्यता में संदेह करना अनुचित है।

इस स्थान से यह जाट शासक भरतपुर की ओर लौट पडा। कवि ने इसका कारण करहिया पर उसकी हार को माना है। उसने करहिया के प्रमारों को विजयी भी स्वीकार किया है। सभव है कि उसने इस सम्बन्ध मे कुछ अतिशयोक्ति से काम लिया हो, पर यह निर्विवाद है कि यह युद्ध हुआ था जिसमें प्रमारों ने वीरता प्रदर्शित करते हुए जौहर व्रत लिया था। इस युद्ध मे उन्होंने जाटों के अवश्य ही दाँत खट्टे किए होंगे। जवाहरसिंह चाहे अन्य ऐतिहासिक कारणों से वहाँ से लौटा हो, पर उसने इस युद्ध मे राजपूतों की आदर्श वीरता का अवश्य ही कटु अनुभव किया होगा।

सेनायें

(अ) **जवाहरसिंह की सेना**—गुलाब कवि ने जवाहरसिंह की सेना आठ सहस्र मानी है।[1] इतिहास-ग्रथों में सूरजमल की सेना के सम्बन्ध में विविध उल्लेख मिलते हैं उनसे जवाहरसिंह की सेना की सख्या जानने में सहायता मिल सकती है। इस विषय मे 'सिअॉर' का मत है कि "सूरजमल के तबेले मे बारह सहस्र घोडे उतने ही चुनींदा सवारों सहित थे।"[2] फॉदर वेंडिल लिखता है कि "सूरजमल ने अपने उत्तराधिकारी के लिए पॉच सहस्र घोडे, साठ हाथी, पन्द्रह सहस्र सवार पच्चीस सहस्र से अधिक पैदल, तीन सौ से अधिक तोपें, तथा.....अन्य युद्ध का सामान छोड़ा"।[3]

ऊपर दिये हुए 'सिअॉर' और फॉदर वेंडिल के विवरणों मे महान् अन्तर है। सम्भव है कि सिअॉर ने केवल अश्वारोहियों ही का उल्लेख किया हो और फॉदर वेंडिल ने उसकी संपूर्ण सेना का विवरण दे दिया हो। फॉदर वेंडिल द्वारा दी हुई सख्या गुलाब कवि द्वारा दी हुई संख्या के बहुत निकट पहुँच जाती है। स्मरण रहे कि सूरजमल की मृत्यु २५ दिसंबर, १७६३ ई० में हुई थी।[4] अतः फॉदर वेंडिल द्वारा दी हुई सैन्य-सख्या उसी वर्ष की माननी चाहिए।

"सन् १७६५ ई० मे जवाहरसिंह ने देहली पर आक्रमण किया। उस समय उनके साथ निजी आठ सहस्र पैदल सेना और सौ तोपें थीं"।[5] इस कथन से ऐसा प्रतीत होता है कि जवाहरसिंह ने धीरे-धीरे अपनी सेना को बहुत कुछ बढ़ा लिया था। इन विभिन्न विवरणों से अनुमान लगाया जा सकता है कि गुलाब कवि द्वारा दी हुई जवाहरसिंह की सेना की सख्या उसकी वास्तविक सेना की सख्या के बहुत निकट पहुँच जाती है।

---

[1] नागरी प्रचारिणी पात्रिका, नवीन संस्करण, भाग १०, १९८६ वि०, छं० १७, पृ०२७१; छं० ३२, पृ०२८१-२ [2] देशराज, जाट-इतिहास, पृ० ६४६ [3] वही, पृष्ठ वही [4] वही, पृष्ठ ६४३ [5] वही, पृष्ठ ६४७

(आ) **करहिया की सेना** —गुलाब कवि ने करहिया की सेना के संबंध मे लिखा है कि "इधर से सरोत्तर सहस जुआन दौडे।"[1]

संभवत: इससे उनका अभिप्राय एक सहस्र से अधिक सेना से है। करहिया की सेना की संख्या के जानने के लिए अन्य साधन उपलब्ध नहीं हैं।

ऊपर के विवरण से यह सार निकलता है कि 'करहिया कौ रायसौ' बहुत बड़ी सीमा तक ऐतिहासिक एवं प्रामाणिक ग्रंथ है। 'रायसौ' ग्रथ होते हुए भी 'पृथ्वीराजरासो', 'हम्मीर रासो' आदि के समान अनैतिहासिक तथा काल्पनिक विवरणों से यह ग्रथ एकदम अछूता है। यह रायसौ ऐतिहासिक एवं वास्तविक घटना पर अवलम्बित होने के कारण अपनी निजी विशेषता रखता है।

---

[1] नागरी प्रचारिणी पात्रिका, नवीन संस्करण, भा० १०, १९८६ वि०, छं० ३२, पृ० २८१-२

अध्याय १०

हिम्मतबहादुर-विरुदावली की ऐतिहासिकता

आगामी पृष्ठों में पद्माकर कृत 'हिम्मतबहादुर-विरुदावली' की तिथि, पात्रों और युद्ध विवरणों की ऐतिहासिकता पर विचार किया है जा रहा है :—

तिथि—पद्माकर ने अपने इस ग्रंथ में केवल एक ही तिथि—हिम्मतबहादुर और अर्जुनसिंह के युद्ध की—दी है। उन्होंने उक्त युद्ध का समय निम्नलिखित माना है :—

हिम्मतबहादुर तथा अर्जुनसिंह नोने के युद्ध की तिथि

सम्वत् १८४६, वैशाख वदी १२, बुधवार।[1]

	सप्ताह दिवस	मास मास-दिवस
वैशाख अमाचन्द्र का मध्यन्य समाप्ति काल	(५)	मार्च २२.९३
१२ तिथियों का समस्त व्याप्ति काल	२६ + १	२६.५८
	(३२)	४९.५१
क्रमशः चार सप्ताहों के दिवस तथा मार्च मास	२८	३१.००
	(४)	१८.५१

=बुधवार, १८ अप्रैल, १७९२ ई०

पॉगसन के मतानुसार "अलीबहादुर और हिम्मतबहादुर ने १७९० ई० मे बुन्देलखंड मे प्रविष्ट होकर अर्जुनसिंह को पराजित किया था।"[2]

ध्यानपूर्वक विचार करने से विदित होता है कि पॉगसन द्वारा दी हुई तिथि अलीबहादुर तथा हिम्मतबहादुर के बुन्देलखड मे प्रवेश करने की है। सन् १७९० ई० से १८०२ ई० तक ये लोग बुन्देलखड को लगातार पादाक्रान्त करते रहे थे। अर्जुनसिंह से युद्ध करने से पूर्व उन्हें मार्ग मे कुछ अन्य युद्ध भी करने पडे थे। अतएव पॉगसन की दी हुई तिथि ठीक नहीं प्रतीत होती। पद्माकर की मानी हुई तिथि गणना करने पर ठीक आती है। अतः उनकी दी हुई तिथि ही शुद्ध है।

निश्चित पात्र

राजेन्द्रगिरि।[3]

राजा हिम्मतबहादुर (अनूपगिरि)—पद्माकर ने इन्हें राजेन्द्रगिरि का पुत्र माना है[4], पर वे वास्तव मे उनके शिष्य थे। यह अवध के नवाब शुजाउद्दौलाह की सेना में चार सहस्र रुपए (सम्भवतः वार्षि क) वेतन पाने वाले एक उच्च पदाधिकारी थे। यह सदैव दस सहस्र वीरों के साथ नवाब की सेना के अग्र-भाग में रहा करते थे। उस समय के राजनीतिक क्षेत्र मे यह एक प्रमुख वीर व्यक्ति

---

[1] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छं०२२-३, पृ० ५ [2] हिस्ट्री ऑव् दी बुन्देलॉज़, पृ० ११६ [3] देखिए द्वितीय खण्ड, अध्याय ८, पृ० ३१५-१६ [4] हिम्तमबहादुर-विरुदावली, छं० ४५, पृ० ७

माने जाते थे। जहाँ कहीं भी युद्ध होता था वहाँ यह अवश्य ही भेजे जाते थे। ये कभी देहली की सेना का सामना करते और कभी गोविंद बल्लाल जैसे शक्तिशाली मराठा सैनिक को पराजित करते थे। इन्होंने पानीपत के तृतीय युद्ध मे अहमदशाह अब्दाली की सहायतार्थ शुजाउद्दौलाह की सेना का नेतृत्व किया था। (१४ जनवरी, १७६१ ई०)। इनकी कूटनीति के फलस्वरूप गणेश शंभाजी नवाब अवध को झाँसी समर्पित करने को उद्यत हो गया था और कालपी पर शुजा का अधिकार करवा दिया था। अपनी इन विजयों से उन्मत्त होकर हिम्मतबहादुर ने १७६२ ई० मे बुन्देलखंड पर आक्रमण किया, पर हिन्दूपति ने इन्हे बुरी तरह पराजित किया।[1]

शुजाउद्दौलाह और अंगरेजों के मध्य होनेवाले पचपहाडी (३ मई, १७६४ ई०) तथा बक्सर (२३ अक्टूबर, १७६४ ई०) के युद्धों मे इन्होंने नवाब की ओर से अभूतपूर्व वीरता प्रदर्शित की थी। उक्त युद्धों मे हारकर शुजाउद्दौलाह असहायावस्था मे इधर-उधर मारा-मारा फिरने लगा। इन दुर्दिनों मे नवाब का साथ छोड़कर अनूपगिरि ने भरतपुराधीश जवाहरसिंह के यहाँ जाकर सेवा-वृत्ति स्वीकार कर ली। कुछ समय के उपरात वहाँ से वह रघुनाथ दादा से जा मिला। १७६७ ई० मे शुजाउद्दौलाह को अंगरेजों ने पुनः अवध के अधिकार सौप दिए। यह शुभ समाचार ज्ञात होने पर अनूपगिरि पुन उसके यहाँ लौट आए। इस प्रकार एक स्थान से दूसरे पर चले जाने से इनकी अवसरवादिता, कृतघ्नता एव स्वार्थपरता का पर्याप्त आभास मिल जाता है। १७७२ ई० के आरभ मे कूटनीति विशारद हिम्मतबहादुर को नवाब ने मराठों से सधि करने के निमित्त बाहिरजी के साथ भेजा। इसी वर्ष अगस्त मास मे इन्होने नवाब से प्रार्थना करके राय द्वारिकाप्रसाद को क्षमा प्रदान कराई।[2]

कुछ समय तक इटावा की फौजदारी पर रहने के पश्चात् समस्त मध्य दोआब—इटावा, एटा, मैनपुरी, रामघाट तथा आगरे की सीमा तक का उप-सूबेदार नियुक्त हुआ। इसके उपलक्ष्य मे वह ५२ लाख रुपये वार्षिक नवाब के कोष मे भेजा करता था। नवाब ने नौबत आदि प्रदान करके भी उसे सम्मानित किया था (१७७४ ई०। १७७५ ई० मे आसफउद्दौला की आज्ञा से वह एक सेना लेकर बुन्देलखड की ओर भी गया था।

मार्च, १७७६ ई० मे नवाब ने इसे दोआबा से अलग कर दिया। तब उसने नजफ खाँ के यहाँ जाकर नौकरी कर ली। उस समय की देहली की डाँवाडोल दशा के अवसर पर इसने बड़ी वीरता, चातुर्य तथा साहस का परिचय दिया। मुडसान के युद्ध मे वीरता प्रदर्शित करने वाले और अबाजी मराठा को प्रलोभन देकर फोड़ लेनेवाले हिम्मतबहादुर को नजफ खाँ ने जयपुर से कर चुकाने का कार्य सौंपा। इस कार्य मे असफल रहने के कारण एक वर्ष पश्चात् १७८० ई० में उसे वहाँ से हटा दिया गया।

---

[1] शुजाउद्दौलाह, भा०, पृ० १७, ३२, ३६-५०, ७७-८०, ६४-६६, १०३-७, १३८-६, १४७-६; वही, भाग २, पृ० ३४०, फ्राँस ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० ३, पृ० ३१३ [2] हिस्ट्री ऑव् दी बुन्देलाज़, पृ० ११३, ११६, पर्शियन करसपाँडेंस, भा० १, पत्र संख्या २०२३, पृ० २७५; पत्र सं० २२३२, पृ० ३११, शुजाउद्दौलाह भा० १, पृ० १६७-२००, २०४-५, २७७, २८६-७, वही, भा० २, पृ० १६८ (पाद-टिप्पणी ४६ सहित), १८६-७, फ्राँस ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० ३, पृ० ३१३

उस समय की मुगल सरकार की बिगडी हुई परिस्थिति को सुधारने और अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए यह सदैव सावधान रहने लगे। नजफखाँ की मृत्यु (६ अप्रैल, १७८२ ई०) के बाद अफरासयाब के साथ रहकर यह उसके प्रमुख परामर्शदाता बन गए। इसके उपरान्त वह शफी और सिन्धिया मे मैत्री-सस्थापन कराके देहली के प्रमुख दूत बनकर सिन्धिया के दरबार मे रहने लगे। नवम्बर, १७८४ ई० मे अफरासयाब की हत्या कर दी गई। अवसर पाकर हिम्मतबहादुर ने उनके तीन वर्षीय पुत्र को मीर बख्शी बनाकर स्वयं उसका सरक्षक बनने और सिन्धिया को धन देकर दक्षिण को लौटा देने का विफल प्रयत्न किया।

वह सिन्धिया का प्रमुख परामर्शदाता बनकर रहना चाहता था, पर महादाजी सिन्धिया ने उसकी उपेक्षा करना आरम्भ कर दिया। आगरा दुर्ग पर अधिकार प्राप्त करने में वह असफल रहा, इससे सिधिया उससे और भी अप्रसन्न हो गया। इस प्रकार दोनों में शनैः शनैःवैमनस्य बढने लगा। अनूपगिरि ने सिंधिया के विरुद्ध अलीगढ के दुर्गाध्यक्ष को कुछ पत्र लिखे जो सिधिया के हाथ पड गए (जनवरी, १७८६ ई०)। प्रयत्न करने पर भी मृत अफरासयाब के धन का सिधिया को इन्होंने पता न लगने दिया। इनकी सेना के व्यय के लिए सिंधिया को लगभग तीन लाख रुपए मासिक व्यय करने पडते थे। तग आकर सिंधिया ने उसे आज्ञा दी कि वह अपनी सारी जागीर (दोनों भाइयों की लगभग २० लाख रुपए वार्षिक आय की) छोड कर चला जाये। वह लगभग एक मास तक इसमे टाल-मटोल करता रहा। इसके बाद सिंधिया ने अनूपगिरि को मौट (झाँसी से तीस मील उत्तर-पूर्व) और वृन्दावन की जागीर, इस आज्ञा के साथ, प्रदान की कि वह सन्यासी बनकर वृन्दावन मे निवास करे, अपनी सेना का व्यय उठावे और उसे सिंधिया की सेवा मे रहने दे। पर वह इससे सहमत न हुआ और वृन्दावन को चला गया (१६ फरवरी, १७८६ ई०) कुछ समय से पश्चात् यमुना पार करके उसने फीरोजाबाद पर अधिकार कर लिया और अवध की सीमा मे जाकर शरण ली (जुलाई, १७८६ ई०)।

अगस्त १७८७ ई० मे लालसोत के युद्ध मे सिधिया की पराजय हो गई। इस अवसर से लाभ उठाने के अभिप्राय से इसने उसके राज्य में अशान्ति फैलाने के प्रयत्न प्रारम्भ कर दिए। जब उसने फीरोजाबाद अधिकृत कर लिया, तो अवध के नवाब और अँगरेजों ने अपनी सीमा में उसका प्रवेश निषिद्ध कर दिया। अँगरेज उससे सदैव सावधान रहते थे। गुलाम कादिर से दिल्ली की रक्षा करने के लिए शाह आलम ने इसे बुलाया। उसका सामना करने मे स्वय को असमर्थ पाकर वह उस समय तक फ़ीरोज़ाबाद मे ठहरा रहा जब तक गुलाम कादिर का दिल्ली पर अधिकार हो गया (अगस्त, १७८८ ई०)। उसी वर्ष अक्टूबर मास मे दिल्ली से गुलाम कादिर को भगाने मे इसने सिधिया की सहायता की।

जुलाई १७८६ ई०मे वह बाँदा के अलीबहादुर की शरण में चला गया। उसे पकड़ने के लिए किये गये सिंधिया के समस्त उपाय विफल हुए और वह स्वय आपत्ति ग्रस्त हो गया। १७६० ई० मे अलीबहादुर के साथ हिम्मतबहादुर ने बुन्देलखड मे प्रवेश किया। वहाँ इन्होंने नौगाँव, अजयगढ, देवगाँव, गुढा, चरखारी आदि में भयकर युद्ध करने के उपरात रीवाँ की ओर प्रस्थान किया। तदुपरान्त कालिंजर का घेरा डाला (१८०० ई०)। अलीबहादुर की मृत्यु हो जाने पर १८०२ ई० मे उसके पुत्र शमशेरबहादुर का साथ छोड़कर हिम्मतबहादुर अँगरेजों से जा मिला।

इसकी सहायता से कर्नेल पॉवेल ने कनवारा तथा कुवसा के युद्धों में शमशेरबहादुर को पराजित किया (सितंबर, १८०३ ई०)। इसने मराठों के विरुद्ध अँगरेजों की जो सहायता की उससे प्रसन्न होकर उन्होंने इसे बुन्देलखंड का एक भू-भाग—यमुना निकटस्थ एक भू-खण्ड, कालपी, सिकन्दरा (कानपुर जिले मे) आदि जागीर मे दिये जिसकी वार्षिक आय लगभग २२ लाख रुपये थी।

इसके कुछ समय के उपरान्त सत्तर वर्ष की अवस्था में जनवरी, १८०४ ई० मे बाँदा निकटस्थ कनवारा नामक स्थान पर हिम्मतबहादुर की मृत्यु हो गई।[1]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि वह अपने समय का एक अनुभवी सेनापति, चतुर कूट-नीतिज्ञ, लोभी, स्वार्थी तथा शक्तिशाली व्यक्ति था, जिससे सभी उसकी ओर से सावधान रहने का प्रयत्न किया करते थे।

उमरावगिरि—उमरावगिरि के समकालीन 'आसफउद्दौलाहकार' तथा अर्वाचीन लेखक 'इरविन' दोनों के मतानुसार यह हिम्मतबहादुर के कनिष्ट भ्राता थे। सरकार ने इन्हे उनका ज्येष्ठ भाई माना है। अपने भाई के समान यह भी चार सहस्र रुपये (संभवतः वार्षिक) पर शुजाउद्दौलाह की सेवा मे नौकर थे। इनके सेनापतित्व मे दो सहस्र अश्व रहा करते थे। कहा जाता है कि वह शुजाउद्दौलाह की एक प्रेयसी नर्त्तकी को लेकर चले गये और फर्रुखाबाद के अहमदशाह बंगश की सेवा में जाकर रहने लगे। इस पर असंतुष्ट होकर शुजाउद्दौलाह ने फर्रुखाबाद पर आक्रमण कर दिया। नजीब खाँ की मध्यस्थता से दोनों मे संधि हो गई। फर्रुखाबाद से निर्वासित होकर उमरावगिरि आगरे की ओर चला गया (१७६३ ई०)। कुछ समय के पश्चात् वह फिर अवध को लौट गया।

२६ जनवरी, १७७५ ई० मे शुजाउद्दौला की मत्यु हो गई। उमरावगिरि शोक विह्वल होकर रात-दिन उसकी कब्र के पास पडा रहने लगा। यह समाचार मिलने पर आसफउद्दौलाह ने इसे अपने पास बुला लिया। कालान्तर मे यह अवध को छोडकर नजफ़ खाँ की सेवा मे चला गया (१७७७ ई०)।

इसके अनन्तर यह अपनी पारिवारिक जागीर की देख-रेख करने लगा। अनुकूल अवसर

---

[1] शुजाउद्दौलाह, भा० २, पृ० २३५-६, २७५-६; आसफ़उद्दौलाह, पृ० ५-६, १७; पर्शियन करसपॉंडेंस, भा० ४, पत्र सं० १६६३; वही, भा० ६, पत्र सं० ४६३; वही, भा० ७, पत्र सं० ४१ (पाद-टिप्पणी ५, पृ० १७), ३१५ (I), ४८७, ६३०, १५५६, १६४४, १८२६; पूना रेज़ीडेंसी करसपॉंडेंस, भा० १, पत्र सं० ७, ८, १०, ११, १६, २८, २६, ३२, ३३, ३६, ४०, ४१, ४६, ६०, ६६, ६८, १४०, १४३, १४६, १५०, १५८, २१० २१६, २२०, २२१, २२८, २३४, २५२, २५३, २५५, २५६, २७८, फ्रॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० ३, पृ०१२३ १२७-८, १६५-६, १६६, १७२, २०८-८, २१०, २३२, २४५, २५६-६०, २७२, २७५-७, २७६, २६१-२, २६६, ३०१-२, ३०७, ३१३-६, ३३५, ३४१, ३४६, ४२७, ४३७-४१, ४६१, ४६४, हिस्ट्री ऑव् दी बुन्देलाज़, पृ० ११६-२६, १२८; इम्पीरियल ग़ज़ेटियर, भा० १४, प० ३१८ (कालपी);डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर, जालौन, पृ० १३०, वही, झांसी, पृ० २७०, वही, कानपुर, पृ० २०६; ऐचिसनः ट्रीटीज़, इंगेजमेट्स आदि भा० ५, खं० २, पृ० ४७ ४६

पाकर वह अपनी जागीर में स्थित सिंधिया के थानों पर आक्रमण करने लगा। यही नहीं, सिन्धिया द्वारा इसकी जागीर पर अधिकार करने के लिए भेजे गये केशवपन्त की इसने हत्या तक कर डाली और फीरोजाबाद पर अपना अधिकार कर लिया (१७८६ ई०)। इसके पश्चात् उसने अतरौली, छर्रा, भमौरी, आदि के मराठा अधिकारियों को निकालकर भगा दिया, उसने अंभाजी की सेना को मार भगाया और उसकी बन्दूकें छीन ली। देवजी गोले की अध्यक्षता मे आती हुई मराठा सेना का समाचार जानकर वह कासगज की ओर भाग गया (१७८६ ई०का अन्त)।

वहाँ से उमरावगिरि नवाब-अवध की सीमा मे रुहेलखंड मे चला गया। वहाँ वह लगभग एक वर्ष पर्यन्त शान्तिपूर्वक काल-यापन करता रहा। लालसोत में सिंधिया के पराजित हो जाने पर (अगस्त, १७८७ ई०) उसने पुनः मराठों को तग करना आरम्भ कर दिया। इससे अप्रसन्न होकर नवाब-अवध ने इसे अपनी सीमा से निर्वासित करने की घोषणा की (सितम्बर, १७८७ ई०)। इस मास में उसने फीरोजाबाद का घेरा डाला और भाऊ बख्शी की विस्तृत सीमा पर अधिकार कर लिया। वह इसी प्रकार इधर उधर लूटमार करता रहा। अन्त में वह ७ अप्रैल, १७८८ ई० को पकडा गया। सिधिया ने उसका उचित आदर सत्कार किया। १८ मई, १७८८ ई० को अवसर पाकर वह सिंधिया के कारागार से मुक्त होकर भाग गया।

कुछ समयोपरान्त उमरावगिरि ने नवाब-अवध के विरुद्ध एक भयंकर षड्यन्त्र रचा, जिसके कारण नवाब ने इसे कठोर कारावास का दड दिया। उसे दीर्घ काल तक कारागार भोगना पडा यहाँ तक कि वह १८०३ ई० के लगभग भी बन्दी जीवन व्यतीत कर रहा था।[1]

सबसुखराय—इनका अधिक विवरण ज्ञात नहीं है। केवल इतना ही विदित है कि यह हिम्मतबहादुर के एक प्रमुख सेनापति तथा कोषाध्यक्ष थे।[2]

अर्जुनसिंह नोने—कहा जाता है कि अर्जुनसिंह का जन्म बाँदा प्रान्तान्तर्गत कुल-पहाड़ निकटस्थ कुँवरपुर नामक ग्राम मे हुआ था। इनके पिता जैतपुर के एक जागीरदार थे। वयस्क होने पर इन्होंने बाँदा के राजा गुमानसिह की सेना में नौकरी कर ली और अपनी वीरता के कारण अल्पकाल ही में वे प्रमुख सेनापति बन गए। इन्होंने पद्माकार से दीक्षा ली थी।

दिसम्बर, १७६२ ई० मे जब हिम्मतबहादुर ने हिन्दूपति पर आक्रमण किया था, उस समय अर्जुनसिह भी उक्त युद्ध मे सम्मिलित हुए थे। यह युद्ध तेंदवारी नामक स्थान पर लडा गया था।

गुमानसिंह की मृत्यु के उपरान्त अल्पवयस्क बखतसिह बाँदा की गद्दी पर बैठे। सरकार[3]

---

[1] आसफ़उद्दौलाह, पृ० ६, १७, २०, २२, ३०, जरनल ऑव् एशियाटिक, सोसायटी ऑव् बंगाल, संख्या XLVIII, १८७६ ई०, पृ० १३७ (पाद-टिप्पणी सहित), १४०, १४२; फ़ॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० ३, पृ० ३१२-१३, ३१७ ६, ४१६, ४४५; शुजाउद्दौलाह, भा० १, पृ० १७, ८०, १५४, १५८; वही, भा० २, पृ० २६२, ३३४, ३४०; पूना रेज़ीडेंसी करसपॉडेंस, भा० १, पत्र संख्या २६, ३२, ३६, १४०, १४३-४, १४६-७, १५६-८, १६७, १७३ ६, २२१, २२८; पर्शियन करसपॉडेन्स, भा०७, पत्र संख्या ४८७, ६३०, १५५६, १७८७, १८२६; एचिसन, ट्रीटीज़, इंगेज़मेंट्स आदि, भा०५, खं०२, पृ०४७

[2] हिस्ट्री ऑव् दी बुन्देलाज़, पृ० १२२; हिम्मतबहादुर-विरुदावली, (पाद-टिप्पणी), पृ० २४

[3] फ़ॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० ३, पृ० ३२१

ने बाँदा के उस शासक का नाम मधुकरशाह माना है। अर्जुनसिंह बाँदा के उस अल्पायु शासक के सरक्षक तथा शासक नियुक्त हुए (१७७८ ई०)। उसने चरखारी के खुमानसिंह को 'मौधा' पर पराजित किया। वह फिर विशाल सेना लेकर आ उपस्थित हुए। पंडौरी पर घोर संग्राम हुआ जिसमे खुमानसिंह खेत रहे (अप्रैल, १७८५ ई०)।

जब पन्ना मे उत्तराधिकार युद्ध आरभ हुआ तो अर्जुनसिंह ने सरनेतसिंह (अथवा सरमेदसिंह)का पक्ष लेकर पन्ना की सेना को गठ्यौरी पर पराजित किया और पन्ना का अधिकाश भाग बाँदा में मिलाकर स्वय शासन करने लगे (१७८५ ई०)। इसके कुछ समय के उपरात इन्हे पुनः पन्ना की सेना से चछौरी (Chuch, hnreea) नामक स्थान पर युद्ध करना पडा जिसमे दोनों पक्षों को भयङ्कर हानि उठानी पड़ी।

अर्जुनसिंह का अन्तिम युद्ध हिम्मतबहादुर के साथ हुआ था जिसका वर्णन पद्माकर ने अपने ग्रंथ मे किया है।[1]

छत्रसाल बुन्देला[2]

अनिश्चि पात्र

नीचे लिखे हुए पात्रों के सबध मे विशेष विवरण उपलब्ध नही हैं :—

हिन्दू-पात्र—उत्तमगिरि, गगागिरि, दिलावरजग, राजगिरि, जगत्बहादुर, सरुपगिरि, सुदरगिरि। कहा जाता है कि ये सभी व्यक्ति हिम्मतबहादुर के भतीजे थे।[3]

मानधाता—यह सबसुखराय के पुत्र बतलाए जाते हैं।[4]

नरिदसिंह पमार, जगतसिंह पमार, हिन्दूपति पमार, बहादुरसिंह, कंसराज, उमरावसिंह सेंगर, बुद्धसिंह सेंगर, दिलीपसिंह गौर, निवाजसिंह गौर, दुर्जनसिंह गौर, उत्तमसिंह गौर, नवलसिंह (गुलौलीवाले), निधानसिंह पडिहार, दीवान दूलहसिंह, दीवान खुमानसिंह, हीरालाल, सरुपसिंह ज्योतिषी।

मुसलमान-पात्र—मेवात के नवाब जुलफिकार।

युद्ध-वर्णन

पद्माकर ने प्रस्तुत ग्रंथ मे हिम्मतबहादुर द्वारा किए गए तीन युद्धों का उल्लेख किया है। उन्ही तीनों युद्धों की ऐतिहासिकता पर नीचे क्रमशः विचार किया जा रहा है :—

प्रथम युद्ध—पद्माकर ने लिखा है कि हिम्मतबहादुर ने 'गूजर गलीम (गनीम = शत्रु) को जीता।"[5] इससे लाला भगवानदीन ने अनुमान लगाया है "कि हिम्मतबहादुर ने किसी समय गूजर-देश अर्थात् गुजरात पर भी चढाई की थी।"[6] परन्तु हिम्मतबहादुर सबधी प्राप्त विव-

---

[1] फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भा० ३, पृ० ३१६-२५, हिस्ट्री ऑव दी बुन्देलाज़, पृ० १०६, ११२-४, हिम्मतबहादुर-विरुदावली, भूमिका पृ० २६ ३३, एशियाटिक एनुअल रजिस्टर, १८०३ ई०, अध्याय-विविध (miscellaneous) पृ० ५८-६२; बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास, पृ० २३५, २५७, २६४, २६८ [2] देखिए द्वितीय खं०, अध्याय ५, पृ० २६६ [3] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, भूमिका, पृ० २८ तथा २६ के मध्य का वंशवृत्त, वही, पाद-टिप्पणियाँ, पृ० २७, २८, २६, ३२ [4] वही, पाद-टिप्पणी, पृ०२४ [5] वही, छं० १५, पृ० ४ [6] वही, पाद टिप्पणी, पृ० वही

रण से यह नही विदित होता है कि उसने कभी भी गुजरात पर आक्रमण किया था। वर्त्तमान परिस्थितियों मे 'गूजर' से गुजरात का अर्थ लेना कोरा अनुमान ही है। हो सकता है कि बुन्देलखड के किसी भू-भाग अथवा अन्यत्र किसी प्रदेश पर गूजर-वश का कोई शासक उस समय राज्य करता हो जिसको हिम्मतबहादुर ने पराजित किया हो। कुछ भी हो, इस युद्ध के विषय मे वर्तमान सामग्री के आधार पर कोई भी निश्चयात्मक निर्णय करना कठिन है।

द्वितीय युद्ध - पद्माकर द्वारा वर्णित उसका दूसरा युद्ध दतिया के शासक के विरुद्ध था जहाँ से उसने मनमानी चौथ ली। इस युद्ध का विस्तृत विवरण अप्राप्य है। केवल इतना ही ज्ञात है कि उस समय दतिया मे राजा रामचन्द्र राज्य करते थे। हिम्मतबहादुर ने उन्हे गद्दी से हटाकर कर उगाहा था।[1]

तृतीय युद्ध—"दतिया-युद्ध के उपरात हिम्मतबहादुर ने छत्रसाल के देश मे प्रविष्ट होकर वहाँ के निर्भीक मनः अर्जुनसिह पर आक्रमण किया।"[2]

पद्माकर के छत्रसाल के देश कहने का केवल इतना ही अभिप्राय है कि बाँदा और अजयगढ़ उस समय छत्रसाल के वशजों के आधीन थे। उन्होंने अर्जुनसिह को वहाँ का शासक माना है। पर, वह वास्तव में शासक नहीं था, वरन् वहाँ के अल्पवयस्क राजा का सरक्षक और प्रमुख सेनापति था। सभवतः इसी से कवि ने उन्हे शासक मान लिया है।

पद्माकर का विचार है कि अर्जुनसिंह किसी से डरता नही था। इसी से कोप करके हिम्मतबहादुर ने आक्रमण किया था। पर इतिहास से विदित होता है कि बात ऐसी नहीं थी। वास्तव में बुन्देलखड के शासकों के पारस्परिक युद्धों के कारण उस प्रदेश की जीर्ण-शीर्ण दशा हो गई थी। नोने अर्जुनसिह ने पन्ना राज्य का अधिकाश भाग बादा मे सम्मिलित कर लिया था। बुन्देलखंड की ऐसी दयनीय दशा से लाभ उठाने के उद्देश्य से नाना फड़नवीस ने अली बहादुर को सिधिया के डेरे मे भेज दिया था, कि वह अवसर पाकर बुन्देलखंड को अधिकृत कर ले।

इसी उद्देश्य की पूर्ति की लालसा से हिम्मतबहादुर तथा अली बहादुर की सयुक्त सेना ने बुन्देलखड मे प्रवेश किया (१७८६ ई० अथवा १७६० ई०)। नोने अर्जुनसिह ने इनकी आधीनता अस्वीकार की। अतः नयागाँव (नौगाँव) और अजयगढ के मध्य भयङ्कर युद्ध हुआ। जिसमे अर्जुनसिह मारे गए। उनका सिर काटकर अली बहादुर को भेंट किया गया।[3]

पद्माकर का कथन है हिम्मतबहादुर ने स्वय अर्जुनसिह का सिर काटा था।[4] पर लाला भगवानदीन की धारणा है के वे अपने वश के किसी व्यक्ति, जो हिम्मतबहादुर की ओर से लड़ रहा था, के हाथ से मारे गए।[5] कुछ भी हो वे इस युद्ध में वीरतापूर्वक लड़ते हुए मारे गए थे, यह निश्चित है।

---

[1] वही, छं० १६, पृ० ४; बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास, पृ० २५७ [2] हिम्मतबहादुर-विरुदावली, छ०१६-८, पृ० ४ [3] हिस्ट्री ऑव् दी बुंदेलाज़, पृ० ११६, १२१; बुंदेलखड का संक्षिप्त इतिहास, पृ० २७३-४; एशियाटिक एनुअल रजिस्टर, १८०६ ई०, विविध (Miscellaneous) पृ०३०-१ [4] हिम्मत बहादुर-विरुदावली, छं०, २०७, पृ० ४३ [5] वही, भूमिका, पृ० २४-५

इस प्रकार हिम्मतबहादुर-विरुदावली के ऐतिहासिक विवेचन से स्पष्ट है कि यह बड़े महत्त्व की कृति है। इसमे हिम्मतबहादुर का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन है, पर घटना ऐतिहासिक विवरण पर अवलंबित है। कवि ने अर्जुनसिंह का भी सच्चा एवं तथ्यपूर्ण वृत्त दिया है। उक्त युद्ध की तिथि, सम्मिलित होनेवाले पात्रों, युद्ध-विवरण आदि की दृष्टि से यह सक्षिप्त काव्य इतिहास का एक अत्यन्त महत्त्वशाली ग्रथ है।

अध्याय ११

हम्मीररासो की ऐतिहासिकता

आगे के पृष्ठों मे हम्मीररासो मे वर्णित तिथियों, राजपूत-अग्निकुलोत्पत्ति, पात्रों, हम्मीर और अलाउद्दीन की शत्रुता के कारणों, रणथम्भौर पर आक्रमण, युद्ध-वर्णन, हम्मीर के मन्त्रियों द्वारा विश्वासघात, मुसलमानों द्वारा रणथम्भौर-विजय, राव हम्मीर, मीर महिमा आदि की मृत्यु, अलाउद्दीन का रामेश्वर मे जाकर प्राण-विसर्जन करना, चन्द्रकला-नृत्य, राव हम्मीर और अलाउद्दीन की सेनाओं की संख्या आदि पर विचार किया जा रहा है।

तिथियाँ

जोधराज ने ऐतिहासिक घटनाओं सम्बन्धी निम्नलिखित तिथियों का उल्लेख किया है :—

(अ) रणथम्भौर-सस्थापन-तिथि = स० १११० वि० वैशाख सुदी अक्षय तृतीया, शनिवार।[1]

(आ) पद्म-ऋषि-मरण-तिथि = स० ११४० वि०, माघ शुक्ल १२, सोमवार।[2]

(इ) हम्मीर की जन्म-तिथि = स० ११४१ वि०, कार्तिक शुक्ल १२, रविवार।[3]

(ई) अलाउद्दीन की जन्म-तिथि = कवि ने हम्मीर और अलाउद्दीन की जन्म-तिथि एक ही मानी है।[4]

(उ) रणथम्भौर पर आक्रमण की तिथि = स० ११३८ वि० चैत्र द्वितीया अथवा ११८८ वि०, चैत्र तृतीया।[5]

(ऊ) युद्ध-समाप्ति-तिथि* = युद्ध आरम्भ होने की तिथि से चौदह वर्षोपरान्त, अर्थात् ११४२ अथवा १२०२ वि० चैत्र द्वितीया।[6]

(ए) हम्मीर-मरण-तिथि = इस कवि ने युद्ध-समाप्ति-तिथि ही राव हम्मीर की मरण-तिथि मानी है।[7]

(ऐ) अलाउद्दीन की मृत्यु तिथि = जोधराज ने रणथम्भौर-विजय, हम्मीर-मरण तथा अलाउद्दीन की मृत्यु एक ही समय मे हुई मानी है।[8]

(ओ) छाडगढ-पराजय और रण—

---

*टिप्पणी १ कवि ने छं० ५०४, पृ० १०१ में १२ वर्ष पर्यन्त युद्ध होते रहने का उल्लेख किया है। यह भी उसकी अज्ञानता का द्योतक है।

[1] हम्मीररासो, छ० ८६, पृ० १७; वार्त्ता, पृ० १८ [2] वही, छं० १६५-७१, वार्त्तिक, पृ० ३३-४ [3] वही, छं० १७२-८१, पृ० ३५-६; वचनिका, पृ० ३७-८ [4] वही, छं० वही, पृ० वही [5] वही, छं० ३७२ (पाद-टिप्पणी ५ सहित), पृ० ७६ [6] वही, छ० ४२८-६, पृ० ८७, छं० ५८७, पृ० ११६; वचनिका, पृ० १८५ [7] देखिए ऊपर (ऊ); वचनिका, पृ० १८५-६ [8] देखिए ऊपर (ऊ); छं० ६५३-४, पृ० १८६, छं० ६६५, पृ० १८७

धीर-मृत्यु-तिथि = युद्धारम्भ होने के पाँच वर्ष के पश्चात् अर्थात् ११४३ वि०, चैत्र शुक्ल ६, शनिवार।[1]

उपर्युक्त तिथियों की प्रामाणिकता पर नीचे विचार किया जा रहा है।

(अ) रणथम्भौर—संस्थापन-तिथि :—

स० १११० वि० वैशाख सुदी अक्षय तृतीया, शनिवार (अप्रैल, १०५३ ई०)

वैशाख अमावस्या का मध्यन्न समाप्ति काल	३	अप्रैल २०.८६
३ तिथियों का समस्त व्याप्ति काल	२+१	२ ६५
	६	२३.८४

=शुक्रवार २४ जनवरी, १०५३ ई०।

अतः गणना से सिद्ध होता है कि कवि द्वारा दी हुई उक्त तिथि अशुद्ध है।

हम्मीर महाकाव्य[2] के अनुसार स० १३३६ वि० (१२८२ ई०) मे और प्रबन्ध-कोष[3] के अन्त की वंशावली के अनुसार १३४२ वि० (१२८५ ई०) में हम्मीर सिंहासनारूढ हुए। अतएव उनके पिता जैत्रसिंह का स० १११० वि० (१०५३ ई०) मे वर्त्तमान होकर रणथम्भौर की नीव डालना जोधराज के मस्तिष्क की कल्पना है।

रणथम्भौर का प्राचीन इतिहास अभी तक अन्धकार के गर्त्त मे निहित है। कहा जाता है कि १२वीं शताब्दी मे पृथ्वीराज चौहान ने यादवों से यह दुर्ग छीना था।[4] इससे भी यह सिद्ध होता है कि जैत्रसिंह से बहुत पहले ही यह दुर्ग सस्थापित हो चुका था।

(आ) पद्म-ऋषि-मरण-तिथि

सं० ११४० वि०, माघ शुक्ल १२, सोमवार

माघ अमावस्या का मध्यन्न समाप्ति काल	४	जनवरी १०.११
१२ तिथियों का समस्त व्याप्ति काल	११+१	११.८१
	१६	२२.३२

=सोमवार २२ जनवरी, १०८४ ई०।

गणना के अनुसार उक्त तिथि ठीक है, पर पद्म ऋषि को ऐतिहासिक व्यक्ति मानने के लिए कोई सामग्री प्राप्त नहीं है। वह पौराणिक अथवा काल्पनिक पात्र प्रतीत होते हैं, अतएव उक्त तिथि का कोई विशेष महत्त्व नहीं है। इस तिथि के आधार पर उन्हें जैत्रसिंह अथवा हम्मीर का समकालीन भी नहीं माना जा सकता।

(इ) हम्मीर की जन्म-तिथि

---

[1] हम्मीररासो, छं० ५०४, पृ० १०१, छं० ५८४, पृ० ११६ [2] हम्मीर महाकाव्य, सर्ग ८, श्लोक ५६ [3] राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० २२८ [4] दी इम्पीरियल गज़ेटियर ऑव् इंडिया, भा० २१, पृ० २३५

स० ११४१ वि०, कार्त्तिक शुक्ल १२, रविवार

कार्त्तिक अमाचन्द्र का मध्यन्य समाप्ति काल	४	अक्टूबर २ २६
१२ तिथियों का समस्त व्याप्ति काल	११+१	११.८१
	१६	१४.१०

=सोमवार, १४ अक्टूबर, १०८४ ई०।

यह तिथि भी अशुद्ध है।

अलाउद्दीन ने १३०० ई० मे रणथम्भौर पर आक्रमण किया था। उस समय हम्मीर की आयु ८ वर्ष की थी।[1] इसके अनुसार हम्मीर १२७१ ई० में उत्पन्न हुआ होगा। यह कथन भी रासो की उक्त तिथि की निस्सारता सिद्ध करता है।

(ई) अलाउद्दीन की जन्म तिथि—जोधराज ने हम्मीर और अलाउद्दीन की जन्म-तिथि एक ही मानी है। इसके अनुसार ११४१ वि० कात्तिक शुक्ला १२ रविवार अक्टूबर, १०८४ ई० को अलाउद्दीन ने जन्म लिया। यह-तिथि भी निरर्थक है।

अलाउद्दीन के समकालीन किसी भी इतिहास लेखक ने उसकी जन्म तिथि का उल्लेख नही किया है। पर १७वी शताब्दी के आरंभ में हाजीउद्दवीर ने लिखा है कि :—

"सन् १३००-०१ ई० मे रणथंभौर की विजय के पश्चात् वह (अलाउद्दीन) अभिमानी तथा विलासी हो गया। उस समय उसकी अवस्था ३४ वर्ष की थी।"[2] यदि इस कथन को सत्य माने तो अलाउद्दीन का जन्म १२६७ ई० मे हुआ होगा। इतिहास से स्पष्ट है कि अलाउद्दीन का शासन-काल १२९६ से १३१६ ई० तक था। इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि कवि जोधराज द्वारा दी हुई अलाउद्दीन की जन्म-तिथि एकदम काल्पनिक है।

(उ) रणथंभौर पर आक्रमण की तिथि :—

स० ११३८ वि०, चैत्र, द्वितीया (मार्च १०८१ ई०)

अथवा

स० ११८८ वि०, चैत्र द्वितीया (मार्च, ११३१ ई०)

जोधराज ने इस तिथि के साथ दिवस एव पक्ष का उल्लेख नहीं किया है, अतः गणना द्वारा इसकी जॉच नही की जा सकती। हम्मीर महाकाव्य,[3] राजपूताने का इतिहास,[4] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इडिया,[5] अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी,[6] आदि के अनुसार सुलतान अलाउद्दीन ने १३००-०१ ई० में रणथभौर पर आक्रमण किया था। अतएव जोधराज द्वारा दी हुई उक्त तिथि एकदम निराधार है।

(ऊ) युद्ध-समाप्ति-तिथि—अलाउद्दीन के आक्रमण के अवसर पर हम्मीर ने पूजा द्वारा महादेव जी को प्रसन्न करके चौदह वर्ष के उपरान्त आषाढ़ सुदी पुष्प (नक्षत्र) को शाका पूर्ण होने का वरदान प्राप्त किया।[7]

---

[1] अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी, पृ० ६८ [2] वही, पृ० २ [3] सर्ग १३, श्लो० १९६ [4] भा० १, पृ० २२७ [5] तृ० भा०, पृ० ६६९ [6] पृ० ७७, ९३ [7] हम्मीररासो, छं० ४२८-९, पृ० ८७

क्रम संख्या	घटना	इतिहास में दी हुई तिथि	जोधराज द्वारा दी हुई तिथि	अंतर	विवरण
५	युद्ध-समाप्ति	१३०१ ई०	१०९५ ई० अथवा	२०६ वर्ष अथवा	
		,,	११४५ ई०	१५६ वर्ष	
६	अलाउद्दीन की मृत्यु	१३१६ ई०	१०९५ ई० अथवा	२२१ वर्ष अथवा	
		,,	११४५ ई०	१७१ वर्ष	

ऊपर के सक्षिप्त विवेचन के पश्चात् यही सार निकलता है कि कवि ने सवत् और तिथि का प्रयोग करने मे वास्तविकता का ध्यान नहीं रक्खा है। प्रत्येक घटना के घटित होने से सैकड़ों वर्ष पूर्व के सन्-सवतों को मानकर मनगढंत तिथियों का उसने प्रयोग कर दिया है। उसके द्वारा उपर्युक्त घटनावली सबंधी सारी तिथियाँ पूर्णरूप से काल्पनिक और ऐतिहासिक प्रमाणों से रहित हैं। अतः उनका कोई भी ऐतिहासिक मूल्य नही है।

अग्नि-कुलोत्पत्ति

जोधराज ने चौहान, चालुक्य (सोलकी), प्रतिहार और प्रमार राजपूतों की अग्नि-कुल से उत्पत्ति का उल्लेख किया है।[1] इनके इस कथन की वास्तविकता की परीक्षा नीचे की जा रही है :—

"अर्बुदगिरि पर वशिष्ठ जी के यज्ञ-कुड से चौहान, चालुक्य (सोलकी) प्रतिहार और प्रमार राजपूतो के मूल पुरुषों की उत्पत्ति का उल्लेख हिन्दी के प्राप्य ग्रन्थो मे सर्व-प्रथम पृथ्वीराजरासो मे मिलता है। इसी ग्रंथ का आश्रय लेकर यह मत प्रचारित हुआ। 'पृथ्वीराजरासो' विद्वानों के लिए अभी तक एक समस्या बना हुआ है। श्री ओझा जी के मतानुसार यह जाली ग्रंथ विक्रमी संवत् की सोलहवीं शताब्दी के पूर्व का रचना नही है।[2] इस ग्रन्थ के निर्माण से पूर्व उक्त क्षत्रिय वश 'अग्नि-कुल' नाम से विख्यात नही थे, जैसा कि नीचे के विवरण से स्पष्ट है :—

चौहान—पृथ्वीराज चौहान के राज-कवि पडित जयानक ने पृथ्वीराज-विजय-महाकाव्य[3] मे अनेक स्थलों पर चौहानों को सूर्य-वशी बतलाया है, यथा :—

काकुत्स्थमिक्ष्वाकुरघू च यद्वत्पुराभवत्त्रि प्रवररघोः कुलम्।
कला वपि प्राप्य सचाहमानतां प्ररूढतुर्य प्रवर बभूव तत् ॥२॥७१॥
.. .. भानो. प्रतापोन्नति।
तन्वन्गोत्र गुरोर्निजेन नृपतेर्जज्ञे सुतो जन्मना ॥७॥५०॥
सुतोष्य परगागेयो निन्येस्य रविसूनुना।
उन्नति रवि वशस्य पृथ्वीराजेन पश्यता ॥८॥५४॥

[1] हम्मीररासो, छं० ४५-७०, पृ० ६ १४ [2] राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० ७२
[3] वही, पृ० ७३; सारडा; पृथ्वीराज विजय, पृ० ७

अर्थात् जिस प्राचीन रघु के श्रेष्ठ काकुत्स्थ कुल ने इक्ष्वाकु और रघु को धारण किया अर्थात् जो काकुत्स्थ कुल इक्ष्वाकु और रघुकुल के नाम से प्राचीन काल मे चला, वही कुल कलियुग में चाहमान को प्राप्त करके अपने चौथे प्रवर मे आया अर्थात् उसी का चौथा नाम कलियुग मे चाहमान से उत्पन्न हुआ ॥२॥७१॥

...अपने वंश-गुरु सूर्य के प्रताप की उन्नति का विस्तार करते हुए राजा का पुत्र जन्मा। ७ : ५० :

इसका पुत्र भी दूसरे भीष्म के समान हुआ जिसने कि सूर्यपुत्र-पृथ्वीराज के देखते-देखते सूर्यवश को उन्नत किया। ८ : ५४ :

पृथ्वीराज के पूर्वज विग्रहराज (बीसलदेव चौथा) ने अजमेर मे सरस्वती-मन्दिर की स्थापना करके, स्वरचित 'हरिकेलि नाटक' तथा अपने राजकवि सोमेश्वर कृत 'ललित-विग्रहराज नाटक' को शिलाओं पर खुदवाकर उसमे रखवाया था। वहाँ से प्राप्त एक बड़ी शिला पर किसी अज्ञात कवि के बनाये हुए चौहानों के इतिहास के किसी काव्य का प्रारम्भिक अश खुदा है। इसमें भी चौहानों को सूर्य-वशी ही लिखा है।"[1]

हर्ष के शिलालेख मे चाहमानों को गूयक का वशधर माना है। इस शिलालेख से विदित होता है कि दसवी शताब्दी ई० मे चौहान अपने को सूर्य-वशीय मानते थे। यथा :—

"तन्मुक्त्यर्थं मुपागता रघुकुले भू चक्रवर्ती स्वयं।"[2]

"अर्थात् उसकी मुक्ति के लिए रघुवशीय चक्रवर्ती राजा स्वयं आया।"

१४वीं शताब्दी की रचना हम्मीर-महाकाव्य मे भी चौहानों को सूर्य-वशीय माना है।"[3]

उपर्युक्त प्रमाणों से सिद्ध है कि संवत् ८१३ वि० (७५६ ई०) से पृथ्वीराजरासो की रचना के समय १६वीं शताब्दी (१५४३ ई०) तक चौहान अपने को अग्निवशीय नहीं वरन् सूर्यवशीय मानते थे।

चालुक्य वंश—"शक सवत् ५०० (वि० स० ६३५=ई० स० ५७८) से लगाकर वि० सं० की १६ वी शताब्दी तक सोलकियों के अनेक दानपत्र, शिलालेख एव ऐतिहासिक सस्कृत-ग्रंथ मिले हैं, जिनमे कहीं भी उनका अग्निवंशीय होना नही लिखा है, किन्तु स्थल-स्थल पर उन्हे चन्द्र-वशीय और पाडवों की सन्तान बतलाया गया है।"[4]

प्रतिहार—"वि० संवत् ८७२ (ई० ८१५) से लगाकर वि० सवत् की १४ शताब्दी के पीछे के प्रतिहारों (पड़िहारों) के जितने शिलालेख, दानपत्रादि मिले हैं उनमे कहीं भी उनका अग्निवंशीय होना नही माना है। वि० सवत् ९०० (ई० सन् ८४३) के आसपास की ग्वालियर से मिली हुई प्रतिहार राजा भोजदेव की बड़ी प्रशस्ति मे प्रतिहारों को सूर्यवंशी बतलाया है। ऐसे ही वि० सं० की दशवीं शताब्दी के मध्य मे होनेवाले प्रसिद्ध राजशेखर ने अपने नाटकों मे अपने शिष्य महेन्द्रपाल (निर्भय नरेन्द्र) को, जो उक्त भोजराज का पुत्र था 'रघुकुल-तिलक' (रघुकुल-तिलको महेन्द्रपालः) कहा है।"[5]

परमार (प्रमार)—"मालवे के परमार राजा मुज (वाक्पतिराज, अमोघवर्ष) के समय अर्थात्

---

[1] राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० ७३ [2] हिस्ट्री ऑव् मेडिविल हिन्दू इंडिया, भा० २, पृ० १३-१४, ६७ [3] सर्ग १, श्लोक १५-८ [4] राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० ७४ [5] वही, पृ० वही

क्रम संख्या	घटना	इतिहास में दी हुई तिथि	जोधराज द्वारा दी हुई तिथि	अंतर	विवरण
५	युद्ध-समाप्ति	१३०१ ई०	१०९५ ई० अथवा	२०६ वर्ष अथवा	
		,,	११४५ ई०	१५६ वर्ष	
६	अलाउद्दीन की मृत्यु	१३१६ ई०	१०९५ ई० अथवा	२२१ वर्ष अथवा	
		,,	११४५ ई०	१७१ वर्ष	

ऊपर के संक्षिप्त विवेचन के पश्चात् यही सार निकलता है कि कवि ने सवत् और तिथि का प्रयोग करने में वास्तविकता का ध्यान नहीं रक्खा है। प्रत्येक घटना के घटित होने से सैकड़ों वर्ष पूर्व के सन्-सवतों को मानकर मनगढंत तिथियों का उसने प्रयोग कर दिया है। उसके द्वारा उपर्युक्त घटनावली सबंधी सारी तिथियाँ पूर्णरूप से काल्पनिक और ऐतिहासिक प्रमाणों से रहित हैं। अतः उनका कोई भी ऐतिहासिक मूल्य नही है।

अग्नि-कुलोत्पत्ति

जोधराज ने चौहान, चालुक्य (सोलकी), प्रतिहार और प्रमार राजपूतों की अग्नि-कुल से उत्पत्ति का उल्लेख किया है।[1] इनके इस कथन की वास्तविकता की परीक्षा नीचे की जा रही है :—

"अर्बुदगिरि पर वशिष्ठ जी के यज्ञ-कुंड से चौहान, चालुक्य (सोलकी) प्रतिहार और प्रमार राजपूतो के मूल पुरुषों की उत्पत्ति का उल्लेख हिन्दी के प्राप्य ग्रन्थो मे सर्व-प्रथम पृथ्वीराजरासो मे मिलता है। इसी ग्रंथ का आश्रय लेकर यह मत प्रचारित हुआ। 'पृथ्वीराजरासो' विद्वानों के लिए अभी तक एक समस्या बना हुआ है। श्री ओझा जी के मतानुसार यह जाली ग्रंथ विक्रमी संवत् की सोलहवीं शताब्दी के पूर्व का रचना नही है।[2] इस ग्रन्थ के निर्माण से पूर्व उक्त क्षत्रिय वश 'अग्नि-कुल' नाम से विख्यात नहीं थे, जैसा कि नीचे के विवरण से स्पष्ट है :—

चौहान—पृथ्वीराज चौहान के राज-कवि पडित जयानक ने पृथ्वीराज-विजय-महाकाव्य[3] मे अनेक स्थलों पर चौहानों को सूर्य-वशी बतलाया है, यथा :—

काकुत्स्थमिक्ष्वाकुरघू च यद्वत्पुराभवत्त्रि प्रवररघोः कुलम्।
कला वपि प्राप्य सचाहमानतां प्ररूढतुर्यं ऽवर बभूव तत् ॥२॥७१॥
. ... भानो. प्रतापोन्नति।
तन्वन्गोत्र गुरोर्निजेन नृपतेर्जज्ञे सुतो जन्मना ॥७॥५०॥
सुतोप्य परगांगेयो निन्येस्य रविसूनुना।
उन्नति रवि वशस्य पृथ्वीराजेन पश्यता ॥८॥५४॥

[1] हम्मीररासो, छं० ४५-७०, पृ० ६ १४ [2] राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० ७२

अर्थात् जिस प्राचीन रघु के श्रेष्ठ काकुत्स्थ कुल ने इक्ष्वाकु और रघु को धारण किया अर्थात् जो काकुत्स्थ कुल इक्ष्वाकु और रघुकुल के नाम से प्राचीन काल मे चला, वही कुल कलियुग में चाहमान को प्राप्त करके अपने चौथे प्रवर मे आया अर्थात् उसी का चौथा नाम कलियुग मे चाहमान से उत्पन्न हुआ ॥२॥७१॥

...अपने वंश-गुरु सूर्य के प्रताप की उन्नति का विस्तार करते हुए राजा का पुत्र जन्मा। ७ : ५० :

इसका पुत्र भी दूसरे भीष्म के समान हुआ जिसने कि सूर्यपुत्र-पृथ्वीराज के देखते-देखते सूर्यवश को उन्नत किया। ८ : ५४ :

पृथ्वीराज के पूर्वज विग्रहराज (बीसलदेव चौथा) ने अजमेर मे सरस्वती-मन्दिर की स्थापना करके, स्वरचित 'हरिकेलि नाटक' तथा अपने राजकवि सोमेश्वर कृत 'ललित-विग्रहराज नाटक' को शिलाओं पर खुदवाकर उसमे रखवाया था। वहाँ से प्राप्त एक बड़ी शिला पर किसी अज्ञात कवि के बनाये हुए चौहानों के इतिहास के किसी काव्य का प्रारम्भिक अश खुदा है। इसमें भी चौहानों को सूर्य-वशी ही लिखा है।"[1]

हर्ष के शिलालेख मे चाहमानों को गूयक का वशधर माना है। इस शिलालेख से विदित होता है कि दसवीं शताब्दी ई० मे चौहान अपने को सूर्य-वशीय मानते थे। यथा :—

"तन्मुक्त्यर्थं मुपागता रघुकुले भू चक्रवर्ती स्वयं।"[2]

"अर्थात् उसकी मुक्ति के लिए रघुवशीय चक्रवर्ती राजा स्वयं आया।"

१४वीं शताब्दी की रचना हम्मीर-महाकाव्य मे भी चौहानों को सूर्य-वशीय माना है।"[3]

उपर्युक्त प्रमाणों से सिद्ध है कि संवत् ८१३ वि० (७५६ ई०) से पृथ्वीराजरासो की रचना के समय १६वी शताब्दी (१५४३ ई०) तक चौहान अपने को अग्निवशीय नहीं वरन् सूर्यवशीय मानते थे।

चालुक्य वंश—"शक सवत् ५०० (वि० स० ६३५=ई० स० ५७८) से लगाकर वि० सं० की १६ वी शताब्दी तक सोलकियों के अनेक दानपत्र, शिलालेख एव ऐतिहासिक सस्कृत-ग्रंथ मिले हैं, जिनमें कहीं भी उनका अग्निवंशीय होना नही लिखा है, किन्तु स्थल-स्थल पर उन्हे चन्द्र-वशीय और पांडवों की सन्तान बतलाया गया है।"[4]

प्रतिहार—"वि० संवत् ८७२ (ई० ८१५) से लगाकर वि० सवत् की १४ शताब्दी के पीछे के प्रतिहारों (पड़िहारों) के जितने शिलालेख, दानपत्रादि मिले हैं उनमे कहीं भी उनका अग्निवंशीय होना नही माना है। वि० सवत् ९०० (ई० सन् ८४३) के आसपास की ग्वालियर से मिली हुई प्रतिहार राजा भोजदेव की बड़ी प्रशस्ति मे प्रतिहारों को सूर्यवंशी बतलाया है। ऐसे ही वि० सं० की दशवी शताब्दी के मध्य में होनेवाले प्रसिद्ध राजशेखर ने अपने नाटकों में अपने शिष्य महेन्द्रपाल (निर्भय नरेन्द्र) को, जो उक्त भोजराज का पुत्र था 'रघुकुल-तिलक' (रघुकुल-तिलको महेन्द्रपालः) कहा है।"[5]

परमार (प्रमार)—"मालवे के परमार राजा मुज (वाक्पतिराज, अमोघवर्ष) के समय अर्थात्

---

[1] राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० ७३ [2] हिस्ट्री ऑव् मेडिविल हिन्दू इंडिया, भा० २, पृ० १३-१४, ६७ [3] सर्ग १, श्लोक १५-८ [4] राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० ७४ [5] वही, पृ० वही

वि० सं० १०२८ से १०५४ (ई० सन् ९७१ से ९९७) के आस-पास होने वाले उसके दरबार के पडित हलायुध ने 'पिगल सूत्र वृत्ति' में मुंज को 'ब्रह्मक्षत्र कुल' कहा है। ब्रह्मक्षत्र शब्द का प्रयोग प्राचीन काल मे उन राजवशों के लिए होता रहा है, जिनमे ब्रह्मत्व और क्षत्रित्व दोनों गुण विद्यमान हों या जिनके वशज क्षत्रिय से ब्राह्मण हुए हों। मुंज के समय के पीछे के शिलालेखों तथा ऐतिहासिक पुस्तकों मे परमारों के मूल पुरुष का आबू पर वशिष्ठ के अग्नि-कुंड से उत्पन्न होना अवश्य मिलता है, परन्तु यह कल्पना भी इतिहास के अन्धकार मे पीछे से की हुई प्रतीत होती है। परमारो के शिलालेखों मे उक्त वश के मूल पुरुष का नाम धूमराज मिलता है। धूम अर्थात् धुँआँ अग्नि से उत्पन्न होता है, शायद इसी पर परमारों के मूल पुरुष का अग्नि-कुड से निकलना और उसके अग्नि-वंशी कहलाने की कथा पीछे से प्रसिद्ध हो गई हो तो आश्चर्य नही।

साराश यह है कि चौहान, सोलंकी और प्रतिहार विक्रम की १७वीं शताब्दी तक अपने को अग्नि-वंशी मानते ही नही थे और राजा मुंज के समय तक परमार भी ब्रह्म-क्षत्र कहे जाते थे, न कि अग्नि-वंशीय।"[1]

अतएव, ऐसा प्रतीत होता है कि जोधराज ने उक्त राजवशों को अग्नि-कुलोत्पन्न मानने मे पृथ्वीराजरासो का अनुकरण किया है। उसका यह कार्य इतिहास के प्रतिकूल है। सच बात तो यह है, कि ये चारों राजपूत वश प्राचीन क्षत्रिय जाति के ही वशधर हैं।

पात्रों की ऐतिहासिकता

हम्मीररासो में बहुत से पात्रों के उल्लेख मिलते हैं। यहाँ पर केवल उन्हीं पात्रों के विषय में सक्षिप्त विवेचन किया जारहा है, जो ऐतिहासिक प्रतीत होते हैं। पौराणिक एवं काल्पनिक पात्रों को छोड़ दिया गया है।

निश्चित पात्र

हिन्दू पात्र—चाहमान—चाहमान की उत्पत्ति सूर्य-वश मे मानकर इन्हें चौहान वश का प्रवर्त्तक बतलाया गया है।[2] इनके जन्म के सबध में जोधराज का मत निराधार है। चाहमान को एक दम काल्पनिक व्यक्ति नहीं माना जा सकता। पर्याप्त सामग्री के अभाव मे इनका अधिक विवरण देना दुष्कर है।

जैत्रसिंह—"११९३ ई० के उपरान्त पृथ्वीराज चौहान के पुत्र गोविन्दराय रणथंभौर में जाकर राज्य करने लगे। उनके पश्चात् बाल्हणदेव, प्रह्लाददेव, वीरनारायण, वाग्भट (वहाददेव) तथा राव जैत्रसिह क्रमशः शासक हुए।"[3] वि० सं० १३४५ (१२८८ ई०) के कवाल जी के कुंड (कोटा राज्य के शिलालेख) के अनुसार जैत्रसिंह ने मंडल (माडू) के जयसिंह को बार बार सताया। मालवे के उस राजा के सैकड़ों योद्धाओं को झंपाइथाघट्ट (झपायता के घाटे) मे हराया और उनको रणस्तभपुर (रणथंभौर) में बन्दी रक्खा।[4] इन्होंने संवत् १३३९ वि० (१२८१-१२८२ ई०)

---

[1] राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० ७५-६ [2] पृथ्वीराज-विजय-महाकाव्य, सर्ग २ श्लो० ४४-५; हम्मीर महाकाव्य, सर्ग १, श्लो० १४-२५ [3] हम्मीर ऑव् रणथम्भौर, पृ० २-६; भारत के प्राचीन राजवश, भा० १, पृ० २६३-८ [4] राजपूताने का इतिहास, भा० १, पृ० २२७

अथवा १३४२ विक्रमी (१२८४ ई०) मे वाणप्रस्थ लेकर अपने पुत्र हम्मीर का राज्याभिषेक कर दिया।[1]

अतः जोधराज द्वारा इनका जो विवरण दिया गया है, वह भ्रमात्मक है।

हम्मीर—यह जैत्रसिंह के पुत्र तथा रणथंभौर के प्रसिद्ध शासक थे। यही हम्मीररासो के नायक हैं, जिनके साथ अलाउद्दीन का युद्ध हुआ था।[2]

रत्न—जोधराज ने हम्मीर के पुत्र का नाम 'रत्न' बतलाया है, जो चित्तौड़ का शासक था। पर उस समय चित्तौड़ मे सीसोदियों का राज्य था, न कि चौहानों का। जोधराज ने यह कोरी कल्पना की है। विश्वेश्वरनाथ रेउ ने हम्मीर के उत्तराधिकारी का नाम 'रामदेव' माना है।[3] इस संबंध में निश्चित मत निर्धारित करना कठिन है।

रणधीर—जोधराज ने हम्मीर के काका रणधीर का उल्लेख किया है, जो छाड़गढ के शासक थे। जयसिंह सूरि[4] ने अपने ग्रंथ में रणमल्ल नामक एक सेनापति का नाम दिया है, जो हम्मीर के साथ विश्वासघात करके अलाउद्दीन से जा मिला था। संभव है, नाम साम्य का आश्रय लेकर हम्मीररासो के रचयिता ने रणधीर नाम दिया हो। पर दोनों—रणधीर और रणमल्ल-के चरित्रों मे विषमता है। अतएव उपर्युक्त संभावना को अधिक महत्त्व नहीं प्रदान किया जा सकता। पर इस नाम को काल्पनिक भी नही माना जा सकता।

भोज—जोधराज के अनुसार यह भील सरदार वीरतापूर्वक युद्ध करके हम्मीर की ओर से मारा गया। हम्मीर महाकाव्य[5] मे भोज नामक व्यक्ति हम्मीर का भाई, खड्ग-ग्राही तथा दंड-नायक माना गया है। अन्त मे वह देशद्रोही बनकर अलाउद्दीन से मिल गया था। इन उल्लेखों से स्पष्ट है कि भोज नाम का कोई प्रधान व्यक्ति हम्मीर के दरबार मे अवश्य रहा था।

साह सुरजन—(शाह सुर्जन) ऐसा विदित होता है कि अकबर के समकालीन रणथंभौर-दुर्गाध्यक्ष, बूँदी के हाडा राव सुर्जन, को भ्रमवश हम्मीर का समकालीन मानकर जोधराज ने अपने काव्य में इस नाम का उल्लेख किया है। इन्ही के नाम पर इनके राजकवि चन्द्रशेखर वैद्य ने संस्कृत में 'सुर्जन-चरित्र' की रचना की थी।[6] सुर्जन के इतिहास प्रसिद्ध व्यक्ति होने में कोई सन्देह नही है, पर कवि जोधराज ने प्रमादवश उन्हे हम्मीर का समकालीन मान लिया है।

माणिक्यराव—सुर्जन चरित्र[7] के अनुसार माणिक्यराज सोमेश्वर का पुत्र और पृथ्वी-राज का भाई था। हर्ष-शिलालेख, बिजौलियन-शिलालेख, पृथ्वीराज-विजय, प्रबन्धकोष तथा हम्मीर महाकाव्य के आधार पर दिए हुए चौहान-वंश वृक्षों मे इस नाम का उल्लेख नहीं है।[8]

अन्य पात्र—हम्मीररासो में प्रसंगवशात् जगदेव, वीसलदेव (वीसलह), सोमेश्वर, पृथ्वी-राज आदि चौहान सम्राटों[9] तथा जगदेव प्रमार, भोज, विक्रम, आदि अन्य ख्याति-लब्ध एवं इतिहास प्रसिद्ध वीरों का उल्लेख किया गया है।

---

[1] हम्मीर महाकाव्य, सर्ग ४, श्लो० १४१-२; भारत के प्राचीन राजवंश भा० १, पृ० २६६ [2] देखिए इसी अध्याय में आगे युद्ध-वर्णन [3] भारत के प्राचीन राजवंश, भा० १, पृ० २७८ [4] हम्मीर महाकाव्य, सर्ग १०, श्लो० ३६; सर्ग १३, श्लो० १३०-४ [5] सर्ग ६, श्लो० ८, १० [6] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भा० १५, १९९१ वि०, पृ० १६५-७; सारडा, पृथ्वीराज विजय, पृ० ६, पादटिप्पणी १ [7] वही, पृ० १५ [8] वही, पृ० १४-१५ [9] वही, पृ० वही

स्त्री-पात्र—आसा (आशा)—जोधराज की सम्मति मे हम्मीर की रानी का नाम 'आशा' था। हम्मीर-काव्य[1] मे सात रानियों के साथ उसके विवाह होने का उल्लेख किया गया है। सारडा[2] ने इनकी पत्नी का नाम रगादेवी माना है।

देवलकुँवरि—जोधराज ने हम्मीर की राजकुमारी का नाम देवलदेवी माना है। हम्मीर महाकाव्य[3] मे भी इसी नाम का उल्लेख किया गया है।

मुसलमान पात्र मुहम्मद ग़ौरी (अलाउद्दीन का पिता)—जोधराज के मतानुसार गजनी के शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ौरी के घर अलाउद्दीन अवतीर्ण हुआ था, पर इतिहास से विदित है कि शहाबुद्दीन मुहम्मद गौरी की मृत्यु १२०६ ई० मे हुई थी और इसके ६१ वर्ष पश्चात् अलाउद्दीन का जन्म हुआ था। वास्तव मे अलाउद्दीन के पिता का नाम शहाबुद्दीन मसऊद खिलजी था। वह अपने भ्राता जलालउद्दीन के साथ बलबन (१२६८–८८ ई०) के यहाँ नौकरी करता था।[4]

सभवतः अलाउद्दीन के पिता के नाम के पूर्वाद्ध 'शहाबुद्दीन' के कारण जोधराज ने उक्त भूल कर दी है। खिलजी और गौर दोनों ही अफ़ग़ान वश के थे। हो सकता है कि इन दोनों के मिलाने के प्रयत्न में भी कवि ने अलाउद्दीन के पिता के नाम के सबध में यह भूल कर दी हो, तो कोई आश्चर्य नहीं है।

अलाउद्दीन—इतिहास प्रसिद्ध यह सुलतान दिल्ली का शासक था।[5]

अलावृत्त—जोधराज ने अलाउद्दीन के शाहजादे का नाम 'अलावृत्त' दिया है, जो असत्य है। सुल्तान अलाउद्दीन के चार शाहजादे थे जिनके नाम हैं—खिज्र खाँ, शादी, शहाब और कुतुबुद्दीन।[6] न उसके अलावृत्त नाम का कोई पुत्र था और न कभी इस नाम का कोई सुलतीन ही दिल्ली की गद्दी पर बैठा।

महरम ख़ाँ—हम्मीररासो मे अलाउद्दीन के मन्त्री का नाम 'महरम खाँ' बतलाया गया है। इतिहास मे उसके चार मन्त्रियों का उल्लेख आया है। अलाउद्दीन के राज्याभिषेक के अवसर पर ख्वाजा खातिर उसका मन्त्री था। उसके पश्चात् नुसरत खाँ इस पद पर १२९७ ई० से १३०० ई० तक रहा। उसके उपरान्त सैय्यद खाँ तथा ताजुद्दीन काफूर हजार दीनारी क्रमशः मन्त्री बने।[7] अतएव कवि द्वारा दिया हुआ उक्त नाम असत्य है।

मीर महिमा—इतिहास में इस नाम के किसी भी अमीर का उल्लेख नही मिलता है। सभवतः कवि ने मुहम्मद शाह नामक विद्रोही नो-मुस्लिम सरदार के लिए, जिसने हम्मीर के यहाँ जाकर शरण ली थी[8] मीर महिमा शब्द का प्रयोग किया है।

गभरु—सभवतः काभरू (कबरू) नामक सरदार के लिए यह नाम प्रयुक्त किया गया है।[9]

मुहम्मद शाह और काभरू दोनों ही हम्मीर की ओर से लडे थे।[10] कवि का यह कहना कि गभरू अलाउद्दीन की ओर से युद्ध मे सम्मिलित हुआ था, असत्य है।

---

[1] पृथ्वीराज विजय, सर्ग ४, श्लो० १४३ [2] हम्मीर ऑव् रणथंभौर, पृ० ४४ [3] सर्ग १३, श्लो० १०६ [4] अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी, पृ० १ (पाद-टिप्पणी १ सहित) [5] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ३, पृ० ९३-११९ [6] अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी, पृ० २३४ (पाद-टिप्पणी) [7] वही, पृ० १७१ [8] फ़तूह-उल्-सलातीन, पृ० २४५ [9] वही, पृ० वही [10] अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी, पृ० ६५

अनिश्चित-पात्र—निम्नलिखित पात्रों की ऐतिहासिकता के सबध मे, पर्याप्त सामग्री के अभाव मे, निश्चयात्मक निर्णय करना कठिन है :—

हिंदू-पात्र : पुरुष-पात्र—अभयसिंह, अजमत्त चहूवान (अजमत चौहान), कन्ह, बल्हन (बाल्हन), रेणुकुमार, चतुरंग, सखोदर, हरीसिह बघेल।

स्त्री-पात्र—चन्द्रकला, सुदरी कुँवरि।

मुसलमान-पात्र—पुरुष-पात्र—अली सैय्यद, अलीशेर, अलीखान, अजमत, अबदुलमीर, जमाल खाँ, जैनसाह सिकन्दर, निजामदीन, नूर मीर अफर्रस, बादिन खाँ, मीर सिकन्दर, गौरीशाह मुहम्मद अली, मोहोबत मुदफ्फर, हसन हुसेन, हिम्मति (हिम्मति बहादुरअली [११])।

स्त्री-पात्र—चिमना बेग़म, रूप-विचित्रा।

युद्ध-वर्णन

हम्मीर और अलाउद्दीन मे बैर के कारण—जोधराज के मतानुसार 'रूप-विचित्रा' पर आसक्त होने के कारण मीर महिमा को अलाउद्दीन ने दिल्ली से निकाल दिया। उसने रणथभौर के राव हम्मीर के पास जाकर शरण ली। इसी से कुपित हो दिल्ली सम्राट् ने रणथभौर पर आक्रमण किया।[१]

इस भयंकर युद्ध के उक्त कारण की कल्पना मे कवि ने परपरा का अनुसरण किया है। पृथ्वीराजरासो की 'हुसेन-कथा'[२] से प्रभावित होकर इसने इस घटना का उल्लेख किया हो, तो आश्चर्य नहीं। किसी प्राप्त प्रामाणिक ऐतिहासिक ग्रन्थ अथवा शिलालेख में इस कथानक का उल्लेख नही है। हम्मीर महाकाव्य भी इस सबध मे मौन है। उसमे युद्ध का यह कारण दिया है :—

"जैत्रसिंह हम लोगों (अलाउद्दीन आदि) को कर देता था, पर यह उसका बेटा हम्मीर न कि, केवल कर ही नही देता वरन् हम लोगों के प्रति अपनी घृणा दिखाने के लिए प्रत्येक अवसर ताकता रहता है।"[३] इसके अतिरिक्त उसमें हम्मीर के दरबार मे चार मुगलों का वर्त्तमानत्व भी युद्ध का कारण माना गया है।[४]

फारसी इतिहास मे इस युद्ध के कारणो के सबंध मे यह लिखा है :—

"गुजरात विजय (१२९७ ई०) के पश्चात् उलग खाँ और नुसरत खाँ देहली के लिए चल पडे। जालौर मे लूट की सामग्री का विभाजन किया गया। सैनिकों ने सामान को छिपाने का प्रयत्न किया। इस पर सेनापतियों ने कठोरता-पूर्वक व्यवहार किया। सैनिकों मे विद्रोह की ज्वाला भडक उठी। उन्होंने नुसरत खाँ के भाई मलिक ऐजुद्दीन तथा उलग़ खाँ के धोखे में, सुलतान के भाजे को मार डाला। उलग़ खाँ और नुसरत खाँ ने विद्रोह शान्त कर लिया। विद्रोही भाग गए। मुहम्मद शाह और काभरू (कबरू) ने रणथभौर के राणा हम्मीर के यहाँ तथा यलहक़ एवं बुर्राक ने देव-गिरि के रामदेव के अतिथि, गुजरात के निर्वासित राय कर्ण के पास नन्दुरुवार में जाकर शरण ली।[५]

---

[१] हम्मीररासो, छं० १८८ ३७०, पृ० ३९-७६ [२] पृथ्वीराजरासो-सार, पृ० ३९-४३ [३] हम्मीर महाकाव्य, सर्ग ९, श्लो० १०२-५५ [४] वही, सर्ग १०, श्लो० ७४ [५] अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी, पृ० ४९-५०; केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ३, पृ० १००

उक्त विवरण से स्पष्ट है कि जालौर मे सेना ने विद्रोह किया था तथा मुहम्मद शाह एव काभरू ने हम्मीर देव के यहाँ जाकर शरण ली थी। कोई भी तत्कालीन इतिहास लेखक इस घटना को रणथभौर पर आक्रमण करने का कारण नहीं बतलाता, परन्तु उत्तरकालीन इतिहासकारों द्वारा अनुमोदित अप्रत्यक्ष साक्ष्य से इनकी पुष्टि होती है।[1] इसामी के अनुसार "यह ज्ञात होने पर कि रणथभौर के चौहान राणा के यहाँ मुगल शरणार्थी ठहरे हुए है उलगखाँ ने सुल्तान के नाम से यह सन्देश भेजा कि यदि राय उन शरणार्थियों को मरवा दे अथवा उसके पास भेज दे तो सुल्तानी सेनायें देहली को लौट जायेगीं। राणा को इस बात के लिए भी सावधान कर दिया गया था कि जब शरणार्थी, जिनको सुल्तान ने जीवन और सम्मान दिया, उसके प्रति स्वामि-भक्त न रह सके तो भला वे राणा के साथ कैसे सत्य व्यवहार रख सकेंगे। इस राजाज्ञा के विरुद्ध कार्य करने के दुष्परिणामों को सहने के लिए प्रस्तुत रहने की चेतावनी भी राव को दी गई थी।"[2]

इस घटना के पचास वर्ष के उपरान्त इसामी ने अपने ग्रथ की रचना की (रचना-काल १३४६-५० ई०)। इससे और इसके पश्चात् की रचना 'हम्मीर महाकाव्य' से विदित है कि हम्मीर ने विद्रोहियों को आश्रय दिया था। मुहम्मद शाह और मीर काभरु (कबरू) ही 'हम्मीर महाकाव्य' एव 'हम्मीररासो' के मीर महिमा शाह तथा मीर गभरु प्रतीत होते हैं। फारसी इतिहासों एव हम्मीर-महाकाव्य के अनुसार जालौर से भागकर उन्होंने रणथभौर में आश्रय प्राप्त किया था। जोधराज के विचार मे दिल्ली से निर्वासित होकर केवल मीर महिमा हम्मीर के दरबार मे पहुँचा था और उसका भाई मीर गभरु अलाउद्दीन की सेवा ही मे रह गया था। इस अन्तर का कारण 'हुसेन-कथा, का कवि पर प्रभाव और काव्य मे शृगार का समावेश करने की भावना से प्रेरित होना ही, प्रतीत होता है।

यद्यपि अलाउद्दीन ने विद्रोहियों के हम्मीर की शरण मे चले जाने के कारण से रणथभौर पर आक्रमण किया था, पर इसके अन्य कारण भी थे। दिल्ली के निकटस्थ एक शक्तिशाली हिन्दू राज्य को अलाउद्दीन अपनी सत्ता के लिए भयप्रद समझता था। इसके अतिरिक्त जलालउद्दीन खिलजी की रणथभौर पर पराजय से मुसलमानी प्रतिष्ठा को भारी धक्का लगा था। इन्ही कारणों से अलाउद्दीन ने रणथभौर पर आक्रमण किया था। जोधराज द्वारा दिए हुए कारणों मे से केवल इतना ही अश सत्य है कि मीर महिमा हम्मीर की शरण मे गया था और उसकी रक्षा करने के लिए हम्मीर ने युद्ध किया था।

आक्रमण—जोधराज[3] के मतानुसार अलाउद्दीन स्वय ससैन्य रणथंभौर की ओर चला, पर हम्मीर-महाकाव्य के मत में सर्वप्रथम उसके सेनापति उलग खाँ ने आक्रमण किया और वह स्वय पीछे से गया।[4] बरनी का कथन है कि खिलजी सुल्तान ने उलग खाँ को उसके विरुद्ध चढाई करने की आज्ञा दी। इस सेवा के उपलक्ष्य मे उसे बयाना का प्रान्त दिया गया। कड़ा का प्रान्त प्राप्त करके और सेना लेकर नुसरत खाँ भी उलग खाँ की सहायता के लिए जा पहुँचा।[5]

---

[1] अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी, पृ० ६५ [2] वही, पृ० ६६ [3] हम्मीररासो, छं० ३७१-८५, पृ० ७६-६ [4] सर्ग ६, श्लो० १०६; सर्ग ११, श्लो० ७, ८ [5] अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी, पृ० ६६

मुसलमानी सेना 'मलहारणों गढ' को विजय करती हुई 'बनास' नदी के किनारे पर पहुँची जहाँ पर राजपूतों ने बड़ी वीरता प्रदर्शित की, पर वे पराजित हुए। हम्मीररासो में उल्लिखित इस 'मलहारणों गढ' स्थान की स्थिति का बतलाना कठिन है। पर इतना निश्चित है कि दिल्ली से रणथभौर तक पहुँचने में मुसलमानों को मार्ग मे अनेक स्थानों पर युद्ध करना पडा होगा। उन्ही स्थानों में से किसी एक का उक्त नाम भी रहा होगा।

सरकार ने 'फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर' मे रणथंभौर दुर्ग से १८ मील उत्तर में अवस्थित मलारना (Malarna) नगर का उल्लेख किया है। सभव है जोधराज द्वारा उल्लिखित 'मलहारणों गढ' यही नगर हो।[1]

बनास (वर्णनाशा) नदी के युद्ध का उल्लेख करते हुए हम्मीर-महाकाव्यकार[2] ने लिखा है कि इस युद्ध मे भोमसिंह मारा गया और विजयी उल्लू खॉ (उलग़ खॉ) दिल्ली को लौट गया। वह पुनः रणथभौर पर चढ आया। जोधराज ने उक्त दोनों युद्धों का वर्णन, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, किया है। इन युद्धों के सबंध मे फारसी इतिहासकार मौन हैं। संभवतः अलाउद्दीन की पराजय ही उनके इस मोन का कारण है।

वहॉ से चलकर उलग खॉ एव नुसरत खॉ ने झॉई पर अधिकार कर लिया और उसे अपना स्कंधावार बनाकर रणथभौर का घेरा डाला।[3] इसॉमी के मतानुसार उलग खॉ ने 'झॉई' का 'शहर-इ-नौ' नाम रक्खा। बदायूँनी ने भी उसका समर्थन किया है। 'झॉई' अथवा 'शहर-इ-नौ' का अब पता नहीं चलता। परन्तु रणथभौर से पूर्व मे कुछ दूर पर 'नयगॉव' जिसका अर्थ 'शहर-इ-नौ' होता है, नामक एक स्थान अवस्थित है। संभवतः यही 'झॉई' नामक स्थान है।[4]

हम्मीररासो मे प्रयुक्त 'छाडगढ़' नामक स्थान की वास्तविक स्थिति का अनुमान लगाना कठिन है। हो सकता है कि इस स्थान से कवि ने 'झॉई' की ही ओर सकेत किया हो। 'छाड़गढ' पर पाँच वर्ष तक सेना पडी रहने और युद्ध होते रहने की ऊहात्मक उडान से यह ध्वनि निकलती है कि वह स्थान शाही सेना का पडाव-स्थान था। ऊपर कहा जा चुका है कि 'झॉई' अलाउद्दीन की सेना का स्कंधावार था। अतएव 'छाडगढ़' और 'झॉई' एक ही स्थान की ओर संकेत करते हुए पाए जाते हैं। पर निश्चित मत निर्धारित करना दुष्कर कार्य है। यह भी सकता है कि वह कोई अन्य नगर रहा हो, जिसका पता लगना इस समय कठिन है।

"रणथंभौर मे पहुँचकर उसके सेनापतियों ने सुरंगें एव गरगच बनाने की आज्ञा दी। मुग्दर लगने से नुसरत खाँ के प्राण पखेरू उड़ गए। पराजित होकर उलग खॉ 'झॉई' की ओर लौट पड़ा। इस पराजय की सूचना पाकर सुलतान स्वयं दिल्ली से रणथभौर की ओर चल पड़ा। वहॉ पहुँचकर उसने 'रण' नामक पहाडी पर डेरा डाला। 'रण' और 'मदन' पहाडियों के मध्य की घाटी को मुसलमानों ने घास-फूस आदि से भर दिया। राजपूतों ने अग्नि-वर्षा करके उसे भस्मसात् कर दिया। दोनों ओर हताहत की सख्या अपार थी।"[5]

---

[1] हम्मीररासो, छं० ३८६-४०५, पृ० ७६-८२, फ्रॉल ऑव् दी मुग़ल इम्पायर, भा० ३, पृ० २०६ [2] सर्ग ६, श्लो० १४६-५० [3] हम्मीररासो, छं० ४०६, पृ० ८२-३ [4] अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी, पृ० ६६ (पाद-टिप्पणी २ सहित) [5] वही, पृ० ६६-७२

"यह युद्ध अधिक समय तक चलता रहा। नुसरत खाँ जैसा सेनापति मारा गया, अलाउद्दीन के प्राण लेने का प्रयत्न किया गया, साम्राज्य में विद्रोह-ज्वाला प्रज्वलित हो रही थी, अपार सैन्य-संहार हो रहा था तो भी सुलतान विचलित होने का नाम नहीं लेता था। कालान्तर में दुर्ग मे खाद्य सामग्री का इतना अभाव हो गया कि स्वर्ण के दो दानों मे चावल का केवल एक दाना मिलने लगा।"

युद्ध का अत—खुसरो लिखता है कि "मनुष्य हर एक दुःख सह सकता है, पर क्षुधा पीड़ा उसके लिए असह्य है। अन्त मे कष्ट, निराशा एव भूख-पीडा से व्यथित होकर जौहर-कार्य किया गया। रानी रगादेवी आदि महिलाओं ने अग्नि-प्रवेश किया। शेष शूर सामन्त सहित वीर हम्मीर केसरिया वस्त्र धारण करके युद्धार्थ निकल पडे। मुहम्मद शाह तथा काभरू अन्त तक वीरतापूर्वक युद्ध करते रहे, इसॉमी का कथन है कि राणा के परिवार का कोई भी व्यक्ति जीवित नही पकड़ा गया। शिवपुर प्रान्त के गढला स्थान के स्मारक (मैमोरियल टेबलिट) से भी हम्मीर के १३०१ ई० में मारे जाने की पुष्टि होती है।"[१]

उपर्युक्त विवरण के अनुसार खाद्य सामग्री के अभाव में जौहर-प्रथा का अनुसरण किया गया। जोधराज ने भी जौरा-भौरा कोशों की सामग्री समाप्ति की ओर सकेत किया है।[२] जोधराज ने अपने नायक के शौर्य को द्विगुणित करने ही के लिए हम्मीर की विजय, उनके द्वारा पकड़कर अलाउद्दीन को मुक्त करने तथा अन्त मे शिव जी को शिर समर्पित करने की कल्पना कर ली है। अलाउद्दीन को बन्दी बनाकर छोडने की घटना का आधार पृथ्वीराजरासो मे वर्णित पृथ्वीराज द्वारा गौरी को पकडकर मुक्त कर देनेवाला कथन भी हो सकता है।

सुर्जन का विश्वासघात

"राणा हम्मीर के दो मन्त्रियों रणमल और रतनपाल के देशद्रोह के कारण रणथभौर का पतन हुआ इस बात की पुष्टि हाजीउद्दवीर और फरिश्ता दोनों ही करते हैं। हाजीउद्दवीर कहता है कि रणमल अलाउद्दीन के साथ सन्धि नियम निश्चित करने के लिए भेजा गया था। वह सुलतान की ओर मिल जाने के लिए प्रस्तुत हो गया। उसने एक लिखित प्रमाण-पत्र प्राप्त कर लिया और रतनपाल आदि के साथ दुर्ग छोडकर शाही सेना मे सम्मिलित हो गया। फरिश्ता लिखता है कि दुर्ग पर अधिकार हो जाने के उपरान्त अलाउद्दीन ने देशद्रोही एवं कृतघ्न राजपूत रणमल एव उसके अन्य साथियों को प्राणदंड दिया।"[३]

जोधराज ने विश्वासघातक का नाम राव सुर्जनसिह माना है, जो अनैतिहासिक है।[४] इस घटना के वास्तविक पात्रों के नामों से यह कवि अनभिज्ञ था, यह बात उक्त उदाहरण से स्पष्ट है।

"रणथभौर निरकुशतापूर्वक लूटा गया। 'हरदेव' का देवालय आदि मन्दिर पृथ्वी पर गिरा दिये गये। मकान नष्ट किये गये। 'कु फ्र-केन्द्र' इस्लाम का आवास हो गया। उलग़ खाँ को झाँई तथा रणथंभौर का शासक नियुक्त करके अलाउद्दीन दिल्ली को लौट गया।"[५]

---

[१] अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी, पृ० ७६-८ (पाद-टिप्पणी २ सहित) [२] हम्मीररासो, छं० ६५०-७, पृ० १३२-३ [३] अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी, पृ० ७७-८ [४] हम्मीररासो, छं ६४७-५५, पृ० १३१-३ [५] अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी, पृ० ७९, केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ३, पृ० ५१६-७

"निजामुद्दीन और फरिश्ता ने एक घटना का उल्लेख करते हुए लिखा है कि युद्ध-भूमि मे घायल पडे हुए मुहम्मद शाह को देखकर अलाउद्दीन को दया आई। उसने मीर से पूछा कि 'यदि घावों की चिकित्सा करके मृत्यु से बचा दिया जाये तो वह उसके साथ कैसा व्यवहार करेगा। उसने तिरस्कारपूर्वक निर्भीकता से उत्तर दिया कि वह सुलतान को मारकर हम्मीर-पुत्र को सिंहासनारूढ़ करायेगा।' इस पर क्रोधोन्मत्त सुलतान ने उसे गज-पद से कुचलवा दिया। अंत में उसने उसका वीरोचित अन्त्येष्ठ-सस्कार कराया।"[1]

संभवतः उक्त घटना की ओर संकेत करते हुए जोधराज ने अलाउद्दीन द्वारा मीर महिमा को गोरखपुर का परगना देकर अपनी ओर फोड लेने के लिए विफल प्रयत्न का वर्णन किया है।[2]

अलाउद्दीन की मृत्यु—अलाउद्दीन का रामेश्वर से जाकर प्राण-विसर्जन करना भी जोधराज के मस्तिष्क की निराधार उपज है।[3] अलाउद्दीन जैसे कट्टर मुसलमान द्वारा रामेश्वर में जाकर अर्चना करना साधारण समझ से बाहर की बात है। इसके अतिरिक्त "सन् १२९५ ई०मे देवगिरि-विजय के पश्चात् अलाउद्दीन फिर कभी दक्षिण को नही गया और १३०३ ई० के उपरान्त तो वह दिल्ली को भी नही छोड़ सका था। पर उसके योग्य सेनापति विजय कार्य करते रहे थे। सन् १३०८ से १३१२ ई० तक मलिक काफूर दक्षिण के विविध स्थानों की विजय करता रहा था। वह २५ फरवरी, १३११ ई० को द्वारसमुद्र तक पहुँचा था।"[4]

संभव है कि अलाउद्दीन के सैनिकों के द्वारसमुद्र तक पहुँचने की इसी घटना से प्रेरित होकर प्रमादवश जोधराज ने उपर्युक्त अनर्गल एव भ्रमात्मक वर्णन कर दिया हो।

चन्द्रकला-नृत्य—कवि जोधराज द्वारा वर्णित चन्द्रकला नर्त्तकी-नृत्य का वर्णन हम्मीर-महाकाव्य मे भी आया है। इस काव्य[5] के अनुसार उड्डानसिह नामक व्यक्ति ने वाण द्वारा राधा नामक वेश्या को मारकर दुर्ग के नीचे उपत्यका मे गिरा दिया था और मीर महिमा ने उस उड्डानसिंह को लक्ष्य करके काल कवलित कर दिया था। जोधराज[6] ने मीर गमरू (कबरू) के वाण से नर्त्तकी का घायल होकर गिरना तथा मीर महिमा के वाण से अलाउद्दीन के मुकुट गिराने की बात कही है। इन पर तुलसी कृत रामचरित मानस[7] मे वर्णित राम द्वारा मन्दोदरी के ताटक गिराने और अगद द्वारा रावण के मुकुट फेंकने की घटनाओं का प्रभाव पड़ा हो, तो आश्चर्य नही है।

सेनायें

राव हम्मीर की सेना—जोधराज ने राव हम्मीर की सेना की संख्या का दो बार उल्लेख किया है। सर्व प्रथम, रणथंभौर का विवरण अलाउद्दीन को देते समय दूत ने हम्मीर की सेना की संख्या सत्तर सहस्र तुरगम, दो लाख पैदल तथा पाँच सौ हाथी बतलाई है।[8] दूसरे, जब हम्मीर ने युद्ध

---

[1] अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी, पृ० ७८ [2] हम्मीररासो, छं० ८३०, पृ० १६१ [3] हम्मीररासो, छं० ६२५-५, पृ० १८६-७ [4] अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी, पृ० १४७, १५०, ३४४-५ [5] हम्मीर महाकाव्य, सर्ग १३, श्लो० २६-३२ [6] हम्मीररासो, छं० ६२२-४५, पृ० १२६ ३१ [7] डा० माताप्रसाद गुप्त, श्री रामचरितमानस, लंकाकांड, पृ० ४०६-१०, ४२१ [8] हम्मीररासो, छं० ३३३, पृ० ६७-८

के लिए प्रस्थान किया है तब उसके साथ अस्सी सहस्र सेना थी।[1] इसके अतिरिक्त राव रणधीर के साथ मे इकतीस सहस्र घोडे, अस्सी गजराज तथा दश सहस्र वीर थे।[2] साथ ही चित्तौड के कुमार सोलह सहस्र सेना लेकर इनकी सहायता करने आए थे।[3]

राव हम्मीर की ओर के युद्ध-स्थल मे मरने वालों की संख्या कवि ने अपेक्षाकृत कम मानी है। बनास युद्ध मे एक सौ पच्चीस,[4] चित्तौड़ कुमार के साथ सोलह सहस्र,[5] और रणधीर के साथ तीस सहस्र[6] वीर हम्मीर की ओर से काम आए थे।

और भी ऐसे प्रसंग हैं, जहाँ पर जोधराज ने हम्मीर की ओर के सेनापतियों की सेना तथा युद्ध मे हताहत सैनिकों की संख्या का उल्लेख किया है। पर उपर्युक्त कतिपय विवरणों से स्पष्ट हो गया होगा कि कवि ने सेना की सख्या निर्धारित करने मे कल्पना से अधिक काम लिया है।

"यहिया ने राव हम्मीर की सेना की संख्या बारह सहस्र अश्वारोही और अमीर खुसरो ने दश सहस्र द्रुतगामी सवार मानी है।"[7] "हाजीउद्दवीर ने मुहम्मदशाह के साथ तीन सहस्र सैनिकों का उल्लेख किया है।"[8] पीछे बतलाया जा चुका है कि मुहम्मद शाह ही हम्मीररासो का मीर महिमा प्रतीत होता है।[9] अतएव उसकी सेना को भी सम्मिलित कर लेने पर हम्मीर की सेना की सख्या पन्द्रह सहस्र अथवा तेरह सहस्र रही होगी। इस सख्या से तुलना करने पर हम्मीररासो में कथित हम्मीर सेना के आँकडे अतिशयोक्तिपूर्ण ठहरते हैं। अतएव उसका राव हम्मीर की सेना सबधी कथन विश्वस्त नही माना जा सकता।

अलाउद्दीन की सेना—जोधराज के मतानुसार अलाउद्दीन ने पैतालीस लाख सेना के साथ रणथभौर पर आक्रमण किया था।[10] हम्मीररासो मे अलाउद्दीन की ओर के मृतकों की संख्या भी अत्युक्तिपूर्ण है। कुछ उदाहरण देखिए। जोधराज ने सुलतान की सेना के बनास-युद्ध में तीस सहस्र,[11] रणधीर अजमत-युद्ध मे अस्सी सहस्र,[12] चित्तौड कुमार-युद्ध मे पचहत्तर सहस्र[13], तथा रणधीर की मृत्यु के अवसर पर एक लाख[14] सैनिकों के मरने का उल्लेख किया है। यहाँ पर अन्य अवसरो के मृतकों के विवरणों को नही दिया गया है। केवल उपर्युक्त कुछ सख्याओं से ही अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि जोधराज ने मनमानी सख्याओं की कल्पना कर ली है।

जोधराज द्वारा दी हुई अलाउद्दीन की सेना की सख्या अन्य ऐतिहासिक ग्रंथों मे दी हुई संख्या से मेल नहीं खाती। हम्मीर-महाकाव्य में कहा गया है कि उलग़ खाँ प्रथम बार अस्सी सहस्र सेना लेकर बनास नदी पर लड़ा था।[15] दूसरी बार वह सवा लाख सेना लेकर रणथभौर पर चढा था।[16] तीसरी बार नुसरत खाँ के साथ जो सेना आई थी उसका उल्लेख हम्मीर-काव्य मे नही किया गया है। अलाउद्दीन के आने पर प्रथम दो दिन मे पचासी सहस्र मुसलमान मारे गए थे।[17]

---

[1] हम्मीररासो, छं० ६६६, पृ० १४१ [2] वही, छं० ३३५, पृ० ६८ [3] वही, छं० ५१०१, पृ० १०३ [4] वही, छं० ४०४, पृ० ८२ [5] वही छं० ५५६-७, पृ० ११२-३ [6] वही, छं० ५८४, पृ० ११६ [7] अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी, पृ० ६७ [8] वही, पृ० ४६ [9] देखिए पृ० ३५४ [10] हम्मीररासो, छं० ३८१, पृ० ७८, छं० ३८६, पृ० ८० [11] वही, छं० ४०२ पृ० ८२ [12] वही, छं० ५५३, पृ० ६२ [13] वही, छं०५५५, पृ० ११२ [14] वही, छं० ५८०, पृ० ११८ [15] सर्ग ६, श्लो०२३ [16] हम्मीर-महाकव्य, सर्ग १०, श्लो० ३१ [17] वही, सर्ग १२ श्लो० ८८

फ़ारसी लेखकों के अनुसार अलाउद्दीन की सेना की सख्या का यह विवरण मिलता है :—

"अलाउद्दीन सुलतान बनने के उपरान्त (१६ जुलाई, १२६६ ई०) साठ सहस्र अश्वारोही और साठ सहस्र पदाति लेकर दिल्ली को रवाना हुआ। ..जलालउद्दीन को मारकर जब अलाउद्दीन बदायूँ पहुँचा, उस समय उसकी सेना मे छप्पन सहस्र अश्वारोही तथा साठ सहस्रपैदल थे।"[1] "१२६६ ई०में उसके पास बहुत से हाथी और सत्तर सहस्र अश्वारोही थे।"[2] "फरिश्ता के मतानुसार १२६६ ई० मे मुग़लों के विरुद्ध शाही सेना की सख्या तीन लाख अश्वारोही और दो सहस्र सात सौ हाथी थे।"[3] 'राज्य की ओर से नियमित रूप से वेतन पाने वाली सेना मे चार लाख पचहत्तर सहस्र अश्वारोही रक्खे गए थे।"[4] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इडिया के लेखक ने अलाउद्दीन की स्थायी सेना की सख्या लगभग पाँच लाख अश्वारोही बतलाई है।[5]

अलाउद्दीन की सेना के विषय में ऊपर जो विभिन्न विद्वानो द्वारा भिन्न-भिन्न आँकड़े दिए गए हैं उनकी तुलना करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि जोधराज द्वारा दी हुई उसकी सेना की सख्या अप्रामाणिक अतः अमान्य हैं।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् यह परिणाम निकलता है कि हम्मीररासो ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ नहीं है। उसमे प्रयुक्त तिथियाँ एकदम अशुद्ध हैं और अधिकांश पात्रों की ऐतिहासिकता सदिग्ध है। कवि ने घटनाओं की वास्तविकता, सत्यता एवं प्रामाणिकता का बहुत कम ध्यान रक्खा है। उसने परंपरागत प्रचलित एवं मनगढ़न्त बातों का स्वतन्त्रता-पूर्वक प्रयोग किया है, जिसके फलस्वरूप इतिहास की दृष्टि से यह ग्रंथ अत्यन्त साधारण कोटि का बन पड़ा है। इसके सबध मे केवल इतना ही कहा जा सकता है कि जोधराज ने अपनी कृति के लिए रोचक, शौर्य-प्रधान और इतिहास-प्रसिद्ध कथानक को चुनकर अपनी दूरदर्शिता का परिचय दिया है। अतः ठोस ऐतिहासिक तथ्यों की दृष्टि से पूर्णरूपेण खरा न उतरने पर भी हम्मीररासो अपने ढङ्ग का एक महत्त्वपूर्ण ग्रथ है।

---

[1] केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ३, पृ० ६८; अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी, पृ० ३४ [2] वही, पृ० ४१ [3] वही, पृ० ६६ [4] वही, पृ० १२६, १६७ [5] भा० ३, पृ० ११४

परिशिष्ट - १

सहायक ग्रथ-सूची

स्थानाभाव के कारण यहाँ पर संपूर्ण सहायक ग्रथों की सूची देना कठिन है। केवल प्रमुख एव चुने हुए ग्रंथों और पत्र-पत्रिकाओं की ही तालिका नीचे दी जा रही है :—

१. अगरचद नाहटा : राजस्थान मे हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज, भाग २, प्राचीन साहित्य शोध-सस्थान उदयपुर विद्यापीठ, उदयपुर।

२. अखौरी गगाप्रसाद सिह : पद्माकर की काव्य-साधाना, साहित्य-सेवा-सदन काशी, प्रथम संस्करण, जन्माष्टमी, १९९१ वि०।

३. अयोध्यासिह उपाध्याय हरिऔध : हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास, पुस्तक-भंडार, लहेरिया सराय, १९२७ ई०।

४. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, डाक्टर : फर्स्ट टू नवाब्स ऑव् अवध, अपर इडिया पब्लिशिग हाउस लिमिटेड, १९३३ ई०।

५. ,, : शुजाउद्दौलाह, भाग १, एस० एन० सरकार, २, गंगाराम ललित लेन, कलकत्ता।

६. ,, : शुजाउद्दौलाह, भाग २ ,, ,,

७. आर० डबल्यू० फ्रेजर : ए लिट्रेरी हिस्ट्री ऑव् इडिया, तीसरी आवृति लन्दन, १९१५ ई०

८. आर० सी० मजूमदार, एच० सी० राय चौधरी, काली किंकरदत्त } एन एडवान्स्ड हिस्ट्री ऑव् इडिया, मेक्मिलन एन्ड को० लिमिटेड, लदन, १९४८ ई०।

९. ईश्वरी प्रसाद, डाक्टर : हिस्ट्री ऑव् मैडीविल इडिया, इडियन प्रेस इलाहाबाद, १९४० ई०।

१०. ,, : हिस्ट्री ऑव् मुस्लिम रूल इन इंडिया। ,,

११. उदयनारायण तिवारी, डाक्टर : वीरकाव्य, भारती-भडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद। प्रथम सस्करण, २००५ वि०।

१२. ए० के० फोर्ब्स : रासमाला भाग १, लन्दन १८५६ ई०।

१३. एच० ए० एस्वर्थ : बैलड्स ऑव् दी मराठाज, लॉगमैन्स, १८९४ ई०।

१४-२०. एच० एम० इलियट एन्ड डाउसन : हिस्ट्री ऑव् इडिया, भाग १-७, ट्रूबनर एण्ड को० ८ एण्ड ६० पेटरनोस्टर रो० लन्दन।

२१. एच०एम०इलियट : मेमायर्स ऑव् दी हिस्ट्री, फॉकलोर एन्ड डिस्ट्रीब्यूशन ऑव् दी रेसेज ऑव् दी नॉर्थ-वेस्टर्न प्रॉविन्सेज़, ऑव् इंडिया, भाग १, जॉन बीम्स द्वारा संपादित।

२२. एस० आर० शर्मा : ए बिबिलयोग्राफ़ी ऑव् मुग़ल इडिया } करनाटक पब्लिशिग
२३. ,, : दी क्रेसेंट इन इंडिया } हाउस, बबई २।

२४. आर० एच० शर्मा : ए स्टडी इन मेडीविल हिस्ट्री, करनाटक पब्लिशिंग हाउस, बंबई २।

२५. एल० पी० टेसीटरी, डाक्टर : छन्द राउ जेता सी रो विथू सूजे रो किओ, एशियाटिक सोसायटी आव् बगाल, कलकत्ता, १६२०ई०।

२६. ,, : डेस्क्रिप्टिव कैटॉलॉग ऑव् बारडिक पोइट्री ,, ,, १६१७ ई०।

२७. एच० मुनरो चेद्विक एण्ड एन० के० चेद्विक : दी ग्रोथ ऑव् लिट्रेचर, भाग २, यूनीवर्सिटी प्रेस केम्ब्रिज, १६३६ ई०।

२८. एच० जी० रॉलिसन : शिवाजी दी मराठा, आक्सफ़ोर्ड, १६१५ ई०।

२६-३१ ए० रोजर्स एन्ड एच बीवरेज : अकबर नामा, भाग १-३
३२-३५. ,, : अकबर नामा फेसीकुलस १-४
३६. ,, : आईन-इ-अकबरी, भाग १
} एशियाटिक सोसाइटी ऑव् बगाल कलकत्ता।

३७-३८. ,, : तुजुक इ-जहाँगीरी, भाग १-२ लन्दन, ,, १६०६।

३६. ,, : दी मआसिरुल् उमरा, एशियाटिक सोसायटी : ऑव् बगाल, कलकत्ता, १६११।

४०. कविराजा मुरारिदान : डिंगल-कोष।

४१. कृष्णानन्द : राग-कल्पद्रुम-खंड १, स्वर्गीय : कृष्णानन्द रागसागर विरचित, प्रकाशक : श्रीरामकमलसिह, २४३, १ अपर सरकुलर रोड, बंगीय-साहित्य-परिषद्-मंदिर, कलकत्ता सं० १६७१ वि०।

४२. ,, : दूसरा खड, ,, संवत् १६७३ वि०।

४३. कन्हैयालाल पौद्दार, सेठ : काव्य-कल्पद्रुम, प्रथम भाग
४४. ,, ,, द्वितीय भाग
} पौद्दार-भवन, मथुरा।

४५. कृष्णशकर शुक्ल, पंडित : केशव की काव्य कला, सुलभ पुस्तकमाला-कार्यालय बडा गणेश, बनारस, द्वितीय सस्करण, सवत् २००२।

४६. कृष्णबिहारी मिश्र : मतिराम-ग्रथावली, गगा-ग्रंथगार ३६, लॉटूश रोड, लखनऊ, द्वितीय सस्करण, १६६१ वि०।

४७. कानूनगो : दारा शुकोह; एस० सी० सरकार एण्ड सस, कलकत्ता।

४८. ,, : हिस्ट्री ऑव् दी जाट्स, भाग १, एच० सी० सरकार एन्ड सस, कलकत्ता, १६२५ ई०।

४६. किशोरीशरण लाल, डाक्टर : अलाउद्दीन मुहम्मद खिलजी (यह थीसिस अब प्रकाशित हो गई है। प्रस्तुत ग्रंथ में इसकी टाइपड़ प्रति (प्रयाग विश्वविद्यालय पुस्तकालय में वर्त्तमान) से सहायता ली गई है।

५०. कुलपति जीवानन्द-विद्यासागर, पडित : शब्द-सागर, आशुबोध भट्टाचार्य नित्यबोध भट्टाचार्य, प्रथम संस्करण, १६०० ई०।

५१. केशव : कवि-प्रिया, नवलकिशोर प्रेस लखनऊ, १६२४ ई०।
५२. केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भाग ३, (केम्ब्रिज) १६२८ ई०।
५३. केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इण्डिया, भाग ४, (,,)।
५४. गणेशप्रसाद द्विवेदी : हिन्दी के कवि और काव्य भा० १, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, उ० प्र० प्रयाग। १६३७ ई०।
५५. गङ्गादास : छन्दोमंजरी, जयकृष्णदास-हरिदास गुप्त, चौखंबा संस्कृत सीरीज़ ऑफिस बनारस सिटी।
५६. गुलबदन बेगम : हुमायूँ नामा, रॉयल एशियाटिक सोसायटी लन्दन, १६०२।
५७. गुलाबराय, बाबू : नवरस, प्रकाशक-मन्त्री, आरा नागरी प्रचारिणी सभा, आरा, द्वितीय संस्करण, १६३४ ई०।
५८-६०. गुलाम हुसेन खाँ : दी सैर मुताखरीन, भाग १-३ आर०केम्बे एन्ड को०कलकत्ता। (अनुवादक—नोटा मेनस)।
६१. गोरेलाल तिवारी : बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा। प्रथम संस्करण, संवत् १६६०।
६२. चन्द्रवरदायी : पृथ्वीराजरासो, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस।
६३. चन्द्रशेखर : हम्मीर-हठ, इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग, द्वितीय संस्करण, १६२८।
६४. चन्द्रमोहन घोष : प्राकृत पैंगलम्, एशियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, कलकत्ता १६०२।
६५. चिन्तामणि विनायक वैद्य : हिन्दू भारत का उत्कर्ष (मध्ययुगीन भारत, भाग २) श्री मुकुन्दलाल श्रीवास्तव, श्री काशी विद्यापीठ, काशी। प्रथम वार, संवत् १६८६।
६६. चौधरी रामलाल जी हाला : जाट क्षत्रिय-इतिहास (जाट क्षत्रिय-भंडार संघ, आगरा, १६६८ वि०)
६७. जगन्नाथ प्रसाद 'भानु' : छन्द-प्रभाकर, बिलासपुर, १६२२ ई०।
६८. जदुनाथ सरकार : दी हिस्ट्री आव् औरंगजेब, भाग १,
६६. ,, : ,, भाग २,
७०. ,, : ,, भाग ३,
७१. ,, : ,, भाग ४, १६१६ ई०
७२. ,, : दी हिस्ट्री ऑव् औरंगजेब, भाग ५, १६२४ ई०
७३. ,, : दी फॉल ऑव् दी मुगल इम्पायर, भाग १, १६३२ ई०
७४. ,, : ,, भाग २, १६३४ ई०
७५. ,, : ,, भाग ३,
एस० सी० सरकार एण्ड संस, कलकत्ता।

७६. जदुनाथ सरकार : दी फ़ॉल आव् दी मुग़ल इम्पायर, भाग ४, एस० सी० सरकार एन्ड संस, कलकत्ता।
७७. ,, शिवाजी एन्ड हिज टाइम्सः १९१९ ई०
७८. ,, : हाउस ऑव् शिवाजी
७९. जानकी नाथसिंह, डाक्टर : दी कट्रीब्यूशन ऑव् हिन्दी पोयट्स टू प्रॉसॉडी, (थीसिस) १९४५, प्रयाग विश्वविद्यालय।
८०. जी० एस० सर देसाई : न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज, भाग १, फुनेक्स पब्लीकेशन्स चीरा बाज़ार के लिये के० बी० धावले द्वारा प्रकाशित, बम्बई २।
८१. ,, न्यू हिस्ट्री ऑव् दी मराठाज, भाग २ ,, ,, ,,
८२. जी० ग्रियर्सन : माडर्न वर्नाक्यूलर लिट्रेचर ऑव् हिन्दुस्तान, कलकत्ता, १८८९।
८३. टॉड : राजस्थान, भाग १, कलकत्ता, १८७७।
८४. डब्ल्यू ह्वे : हिस्ट्री ऑव् आसफउद्दौलाह, (अबू तालिब कृत) लदन, १८८५।
८५. ताराचद, डाक्टर : इंफ्लुएंस ऑव् इस्लाम ऑन इण्डियन कल्चर, दी इण्डियन प्रेस लिमिटेड, इलाहाबाद, १९३६।
८६. दास गुप्ता एस० एन० एड एस० के० डे : ए हिस्ट्री ऑव् संस्कृत लिट्रेचर, भाग १, कलकत्ता विश्वविद्यालय।
८७. दीवान बहादुर एल० डी० स्वामी कुन्नू पिल्लई : इंडियन क्रानॉलॉजी*, ग्रांट एन्ड को० मद्रास, १९११।
८८. देशराज, ठाकुर : जाट इतिहास, श्री ब्रजेन्द्र साहित्य समिति, आगरा प्रथम संस्करण, १९३४ ई०।
८९. धीरेन्द्र वर्मा, डा० विद्यापीठ अभिनदनग्रथ, काशी विद्यापीठ रजत जयंती अभिनंदन ग्रंथ का लेख चन्दवरदायी के पृथ्वीराजरासो पर।
९०. जयचन्द सूरि कृत हम्मीर महाकाव्य, नीलकंठ जनार्दन कीरतने द्वारा संपादित एज्यूकेशन सोसायटी प्रेस, बाइकुला बम्बई, १८७९ ई०।
९१. पर्शियन करसपॉडेंस, केलेंडर ऑव, भाग १, प्रकाशक दी इडियन गवर्मेंट कलकत्ता, १९११
९२. ,, ,, भाग ४, १९२५, ,, ,, कलकत्ता।
९३. ,, ,, भाग ६, १९३८, ,, ,, देहली।
९४. ,, ,, भाग ७, १९४०, ,, ,, देहली।
९५. पॉगसन कैप्टेन डब्ल्यू० आर० : हिस्ट्री ऑव् दी बुन्देलाज, एशियाटिक लिथोग्राफिक कंपनी, पार्क स्ट्रीट, कलकत्ता, १८२८ ई०।
९६. प्राकृत-पिंगल सूत्राणि, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, १८९४।

---

* प्रस्तुत ग्रन्थ में तिथियों की गणना करने में इस पुस्तक में दिये हुए चक्रों आदि से सहायता ली गई है।

९७. पुरोहित हरिनारायण शर्मा : व्रजनिधि-ग्रथावली, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, प्रथमावृत्ति, १९९० वि०।

९८. पूना रेजीडेंसी करसपांडेंस, भाग १, (संपादक जदुनाथ सरकार) बबई सरकार १९३६

९९. व्रजरत्न दास : मुआसिरुल् उमरा, भाग १ प्रथम संस्करण, १९८८ वि०
१००. ,, ,, भा० २, प्रथम सस्करण, १९९५ वि०
भा० ३, ,, प्रथम संस्करण, २००४ वि०
} काशी नागरी प्रचारिणी सभा

१०१. ,, : भूषण-ग्रथावली रामनारायण लाल, पब्लिशर और बुक्सेलर, इलाहाबाद, प्रथम बार १९३०।

१०२. बाबूराम सक्सेना, डाक्टर : कीर्तिलता (विद्यापति कृत) इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग, प्रथम सस्करण, १९८६।

१०३.-१०५. बाँकीदास-ग्रंथावली, भाग १-३, काशी नागरी प्रचारिणी सभा।

१०६. ब्रिटिश म्यूजियम कैटॉलॉग

१०७. बेनीप्रसाद, डाक्टर : हिस्ट्री ऑव् जहाँगीर, भाग १, आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, १९२२ ई०।

१०८. भगवान दीन, लाला : केशव-कौमुदी (रामचन्द्रिका, पूर्वार्द्ध), रामनारायण लाल पब्लिशर और बुकसेलर इलाहाबाद, मार्गशीर्ष, २००१ वि०।

१०९. ,, : ,, (उत्तरार्द्ध) ,, ,,

११० ,, : राजविलास (कवि मान कृत), काशी नागरी प्रचारिणी सभा।

१११. ,, केशव-पंचरत्न, रामनारायण लाल बुकसेलर कटरा, इलाहाबाद, प्रथमबार, श्रावण नागपचमी, १९८६ वि०।

११२. ,, : हिम्मतबहादुर-विरुदावली, शकरदत्त बाजपेयी द्वारा, भारत-जीवन प्रेस बनारस में मुद्रित।

११३. भगीरथ मिश्र, डाक्टर : हिन्दी काव्य-शास्त्र का इतिहास, लखनऊ विश्व-विद्यालय २००५ वि०।

११४. भगीरथ प्रसाद दीक्षित : भूषण-विमर्श, सरस्वती प्रकाशन मदिर, इलाहाबाद, पहला सस्करण, १९९५।

११५. भूरसिंह शेखावत, ठाकुर मलसीसर द्वारा सग्रहीत : महाराणा यशप्रकाश, राज्य जयपुर, १९००ई०, श्री बेंकटेश्वर (स्टीम) प्रेस, बम्बई।

११६. महताब चन्द्र खरैड : रघुनाथ रूपक गीतॉरो, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

११७. महाकवि सूर्य मल्ल मिश्रण : वीर सतसई, बगाल हिन्दी मण्डल, ८, रायल एक्सचेंज प्लेस, कलकत्ता।

११८. ,, : वंश-भास्कर, रामश्याम प्रेस, जोधपुर।

११६. महामहोपाध्याय डाक्टर राय बहादुर गौरीशकर हीराचन्द ओझा, राजपूताने का इतिहास भाग १, वैदिक यन्त्रालय अजमेर द्वितीय सस्करण १६८३ वि०।

१२०. ,, ,, भाग २, ,, वि० स० १६२३ ई०

१२१. ,, ,, तीसरा खड, ,, १६८६ वि०।

१२२. ,, ,, चौथी जिल्द, ,, १६३८ ई०।

१२३ ,, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग १, १६८८ वि०।

१२४ ,, ,, भाग २, ,,

१२५-१२६. महामहोपाध्याय प० विश्वेश्वर नाथ रेउ : मारवाड़ का इतिहास, प्रथम तथा द्वितीय भाग, आर्क्यालॉजिकल डिपार्टमेंट, जोधपुर, १६३८ ई०।

१२७-१२६. ,, ,, : भारत के प्राचीन राजवश, भाग १-३, हिंदी ग्रंथ-रत्नाकर कर्यालय हीराबाग़ पो० गिरगॉव, बम्बई।

१३०. महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री : प्रेलीमिनरी रिपोर्ट ऑव् दी ऑपरेशन इन सर्च ऑव् दी मेनुस्कृप्ट्स ऑव् बॉरडिक क्रॉनीकिल्स एशियाटिक सोसायटी ऑव् बगाल, कलकत्ता, १६१३ ई०।

१३१. माताप्रसाद गुप्त, डाक्टर : श्री रामचरित मानस, साहित्य कुटीर प्रयाग, प्रथम सस्करण, १६४६ ई०।

१३२. ,, : हिन्दी पुस्तक साहित्य, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद १६४५ ई०।

१३३. मिश्र-बन्धु : मिश्र-बन्धु-विनोद, प्रथम भाग, गङ्गा ग्रथागार, ३० अमीनाबाद पार्क, लखनऊ, चतुर्थ संस्करण, १६६४ वि०।

१३४. ,, ,, द्वितीय भाग, वही, द्वितीय वार, १६८४ वि०।

१३५. ,, ,, तृतीय भाग, गङ्गा-ग्रंथागार, ३६, लॉटूश रोड लखनऊ, द्वितीयावृत्ति, १६६१ वि०।

१३६. ,, ,, चतुर्थ भाग, वही, प्रथमावृत्ति, १६६१।

१३७. ,, ,, भूषण-ग्रथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी। पचम संशोधित सस्करण १६६६ वि०।

१३८. ,, संक्षिप्त हिन्दी नवरत्न, गङ्गा-ग्रथागार ३०, अमीनाबाद पार्क, लखनऊ प्रथमावृत्ति, १६६२ वि०।

१३६. मोतीलाल मेनारिया : डिंगल मे वीररस, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग। संवत् २००३।

१४०. मोतीलाल मेनारिया : राजस्थानी भाषा और साहित्य, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, सं० २००६।

१४१. ,, : राजस्थान मे हिन्दी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज, प्रथम भाग, हिन्दी विद्यापीठ उदयपुर। प्रथम बार १९४२ ई०।

१४२. ,, : राजस्थानी साहित्य की रूप-रेखा, छात्रहितकारी पुस्तक माला, दारागंज प्रयाग, अगस्त, १९१९ ई०।

१४३-१४४. रामनारायण दूगड़ (अनुवादक) मुहणोत नैणसी की ख्यात, भाग १-२, काशी नागरी प्रचारिणी सभा।

१४५. रघुवंश महाकाव्य, श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस सन् १९६४, शाके १८२९। (कालिदास कृत)

१४६. रघुवश सहाय वर्मा, डाक्टर : प्रकृति और काव्य, साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग।

१४७. रमाशकर शुक्ल, डाक्टर : हिन्दी साहित्य का इतिहास।

१४८. ,, : इवॉल्यूशन ऑव् हिन्दी पोयटिक्स (थीसिस) अप्रकाशित।

१४९. ,, : अलंकार-पीयूष (पूर्वार्द्ध), रामनारायण लाल, इलाहाबाद, १९२९ ई०।

१५०. ,, ,, उत्तरार्द्ध, वही।

१५१. प० राजनारायण शर्मा और देव चन्द्र विशारद भूषण-ग्रथावली, हिन्दी भवन, लाहौर।

१५२. रामचन्द्र श्रीवास्तव, हिन्दी काव्य में प्रकृति, सरस्वती मंदिर बनारस, १९४८ ई०।

१५३. रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी-साहित्य का इतिहास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, द्वितीय सस्करण, २००३ वि०।

१५४. ,, : जायसी ग्रथावली, द्वितीय संस्करण, १९३५ ई०। (तथा) चतुर्थ संस्करण २००६ वि०, काशी नागरी प्रचारिणी सभा।

१५५. ,, चिन्तामणि, भाग २, सरस्वती मंदिर जतनवर काशी २००२ वि०।

१५६. रामकुमार वर्मा, डाक्टर : हिन्दी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, रामनारायण लाल, इलाहाबाद, १९३८।

१५७. रामकर्ण पडित : राजरूपक, नागरी प्रचारिणी सभा काशी, १९९८ वि०।

१५८. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, डाक्टर : हिंदी लिट्रेचर एन्ड इट्स कलचुरल बैक-ग्राउंड (१७५७-१८५७ ई०)-थीसिस।*

१५९. लाला सीताराम : सिलेक्शन्स फ्रॉम हिन्दी लिट्रेचर भाग १, यूनीवर्सिटी ऑव् कलकत्ता, १९२१ ई०।

१६०. ,, : हिन्दी सर्वे कमेटी रिपोर्ट, १९३० ई०।

---

* अब इसका हिन्दी रूपांतर 'हिन्दी-साहित्य की भूमिका' नाम से हिन्दी परिषद् प्रयाग विश्वविद्यालय से प्रकाशित हो गया है।

१६१-२. विलियम इरविन : लेटर मुग़ल्स, भाग १-२, एस० सी० सरकार एण्ड सस, कलकत्ता
१६३. विश्वनाथप्रसाद मिश्र : पद्माकर पचामृत, प्रथम सस्करण, श्रीरामभवन पुस्तक भवन, काशी, १६६२ वि०
१६४. विसेंट स्मिथ : अकबर दी ग्रेट
१६५. वी० एस० आप्टे : प्रेक्टीकल सस्कृत इगिलश डिक्शनरी, गोपाल नारायण एण्ड को० बम्बई, १६२४ वि०
१६६. श्यामसुन्दरदास (डा०) : हिन्दीशब्दसागर, (नागरी प्रचारिणी सभा), १६२७
१६७. ,, : हिन्दी भाषा और साहित्य, इडियन प्रेस, इलाहाबाद
१६८-६. ,, हस्तलिखित पुस्तकों का विवरण, भाग १-२
१७०. श्यामनारायण कपूर : डिगल के गीत और उनका पिंगल
१७१. शिवदयाल जायसवाल : वीरगाथा, शिवदयाल ठेकेदार, पत्थर गली, इलाहाबाद
१७२. शिवसिंह सेगर : शिवसिहसरोज
१७३. शिवाजी सोवेनियर।
१७४ शिवाजीमहाराजचरितम्
१७५. शिवचरित निबन्धावली
१७६. सर मोनियर विलियम्स् : ए सस्कृत इगलिश डिक्शनरी, क्लेरंडन प्रेस ऑक्सफ़र्ड, नवीन संस्करण, १८६६ ई०
१७७ सत्यजीवन वर्मा : बीसलदेव रासो, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १६२२
१७८. सरकार एन्ड दत्त : टेक्स्ट-बुक ऑव् मॉडर्न इडियन हिस्ट्री, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद, तीसरी आवृत्ति, १६३७
१७६. साहित्यसागर।
१८०. सिद्धान्त, एन० के० : हीरोइक एज ऑव् इंडिया
१८१. सिन्हा, डाक्टर : राइज ऑव् दी पेशवाज
१८२. सी० बी० वैद्य : हिस्ट्री ऑव् मेडीविएल हिन्दू इंडिया, भाग २
१८३-४. सी० ए० किकेड एन्ड रा० ब० डी० बी० पारसनिस : हिस्ट्री ऑव् दी मराठा पीपुल, भाग १, आक्सफ़र्ड, १६१६ ई०, भाग १६।
१८५. सुजानचरित्र की हस्तलिखित प्रति, महाराजा पब्लिक लाइब्रेरी, भरतपुर
१८६. सूर्यकान्त, डाक्टर : हिन्दी साहित्य का इतिहास
१८७. हरबिलास सारडा : पृथ्वीराज-विजय, वैदिक-यन्त्रालय, अजमेर, १६३५
१८८. ,, इम्परर बीसलदेव, ,, , १६३५
१८६. ,, हम्मीर ऑव् रणथम्भौर, अजमेर, १६२१
१६०. ,, महाराणा सॉगा, अजमेर, १६२४ ई०
१६१. ,, महाराणा कुंभा, अजमेर
१६२. हस्तलिखित ग्रथों की रिपोर्ट १६४० ई० (अप्रकाशित) काशी नागरी प्रचारिणी सभा

१६३-७. आर्कियालॉजीकल सर्वे रिपोर्ट्स : भाग ७, भाग ११, १६१६-१७, १६२५-२६
१६८-६. इंडियन एंटीक्विरी, १६०४ ई०, १६११ ई०
२००-६. इम्पीरियल गजेटियर ऑव् इंडिया, भाग ६, १४, १६-२१, २३, २५
२०७-८. एशियाटिक एनुअल रजिस्टर, १८०३ ई०, १८०६, ई०
२ ६. गजेटियर ऑव् बॉम्बे प्रेसीडेन्सी, भाग १८, खण्ड २, पूना ब्रांच, १८८५
२१०-११. गज़ेटियर अरवल तथा जयपुर
२१२-२१. डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर, झाँसी, फतेहपुर, गाजीपुर, जालौन, इलाहाबाद, कानपुर, बाँदा, ब्रिटिश गढवाल, ग्वालियर स्टेट गजेटियर, भाग १,नार्थ-वेस्टर्न प्रॉविंस् गज़ेटियर, भाग १
२२२. जरनल ऑव् इंडियन आर्ट एन्ड इंडस्ट्री
२२३-३१. दी जरनल ऑव् रॉयल एसियाटिक सोसायटी ऑव् बंगाल, सं० LXXI, १, अंक २, १६०२ ई०, १८८१, स० XLVII, भाग १, अंक ४, १८७८ ई०, १८७६ ई०, १६०० ई०, भाग ५, १८८७ ई०, १८६७ ई०, १८६५ ई०
२३२. जरनल ऑव् इण्डियन आर्ट, १६१५-१६
२३३. जरनल ऑव रॉयल एशियाटिक सोसायटी, १६०६
२३४. डी क्रुज : पोलीटिकिल रिलेशन्स एक्जिटेन्सि बिट्विन दी ब्रिटिश गवर्नमेंट एण्ड नेटिव स्टेट्स एण्ड चीफ सबजेक्ट टू दी गवर्नमेंट ऑव् नार्थ वेस्टर्न प्रॉविन्सेज
२३५. द्वादश हिन्दी-साहित्य सम्मेलन लाहौर, कार्य विवरण, दूसरा भाग (निबन्ध माला), १६७६ वि०, स्वागत-कारिणी-सभा द्वारा, प्रकाशित
२३६-४८. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण भाग ३, १६७६, वि०, १६८०, भाग ५, १६८१ वि०, भाग ६, १६८२ वि०, भाग ८, १६८४ वि०, भाग १०, १६८६ वि०, भाग ११, १६८७ वि०, भाग १२, १६८८ वि०, भाग १३, १६८६ वि०, भाग १४, १६६० वि०, भाग १५, १६६१ वि०, भाग २०, १६६६ वि०, भाग २२, १६६८ वि०
२४६-५०. माडर्न रिव्यू अक्टूबर १६२३, दिसम्बर १६३८
२५१. माधुरी सितम्बर, १६३६
२५२. राजस्थान, वर्ष १, अंक २, १६६२ वि०
२५३. विन्ध्य-भूमि, पन्ना-राज्य, वर्ष २, स० १, दिसम्बर, १६४६ ई०
२५४. विशाल भारत, अगस्त, १६३०
२५५-६. सी० यू० एचिसन : ट्रीटीज, इङ्गेजमेंट्स एण्ड सनद्स इन इन्डिया, भाग ५, खंड २, द्वितीय संस्करण, १८७६ ई०, भाग ३, कलकत्ता, १६०६ ई०
२५७. सर्च रिपोर्ट फॉर हिन्दी मेनुस्क्रिप्ट्स (सभी प्रकाशित तथा उन्नीस सौ छियासी तक की अप्रकाशित रिपोर्ट्स), काशी नागरी प्रचारिणी सभा
२५८. हिन्दुस्तानी पत्रिका, भाग २, अंक ३, जुलाई १६३२ ई०

— —

परिशिष्ट (ख)

नामानुक्रमणिका

हिन्दी वीरकाव्य (१६०० १८०० ई०) में प्रयुक्त व्यक्तियों, स्थानों, पर्वतों, नदियों आदि के नामों की सूची नीचे दी जा रही है। नामों के सामने के अंक पृष्ठ-संख्या सूचित करते हैं।

अंकुश, अंकुश ख़ाँ दे० आँकुश ख़ाँ
अंकोला २१६
अगद (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७७, २७७
अंगद (रामायण के एक पात्र) ५२, ३५६
अंगरेज़ ११, २१७, २३१, २३२, ३३८, ३३६, ३४०
अंगरेज़ी २१८
अंचलसिंह राजा १६
अंतर्वेदी ३०८
अंबाजी मराठा, अंभाजी मराठा ३३८, ३४१,
अंबरीक, अंबरीष १६४
अंब पसाव दे० अंबा प्रसाद
अंबा प्रसाद २४१
अकबर (द्वितीय) ११
अकबर अली ख़ाँ २६८
अकबर अदल राहि, अकबर आदिल शाह ३१६ ३२६, ३२७
अकबर (सम्राट्) ६, १०, १२, १३, १४, २१, ३६, ४०, ५२, ५७, ५८, ५६, ६०, ६४, ६६, ७६, ६६, १७६, १७७, १७८, १७६, १८०, १८१, १८२, १८३, १८५, १८६, १८७, १८८, १८६, १६८, २०१, २४३, २४६, २४७, २६५, २८६, ३१७, ३२५, ३५३
अकबर-शाहज़ादा ६६, २४७, २४८, २५६, २६१, २६२, २६३, २६४, २६५, २७१, २८२, २८३
अकिलाबाद ३०२
अकुत दे० याक़ूत ख़ां
अखैराज (सिरोही के एक शासक) २६१
अगरो दे० आगरा
अग्नि-कुल ५१, २६८, ३४५, ३५०, ३५१, ३५२
अग्नि-वंशीय दे० अग्निकुल
अजगैव २४८
अज़मत ३५५, ३६०
अजमतुल्लाह ख़ां ३१०
अजमेर १८३, २३६, २४४, २४७, २५७, २५६, २६१, २६२, २६३, २६५, २७७, २८२, २८३, २८५, २६०, २६५, ३२२, ३२३, ३५१
अजयगढ़ ३३६, ३४३
अजयसिंह २४२
अजयसी दे० अजयसिंह
अजीत राइ २७२
अजीतसिंह (महाराज रीवांवाले) २०
अजीतसिंह (महाराज जोधपुर के शासक) ४३, ६५, २४५, २४७, २५६, २६०, २६१, २८२, ३१३, ३२१
अजीतसिंह फते दे० नायक रासा
अज़ीज़ कोका १८६
अज़ीमाबाद-पटना २६४, २६६
अज़ीमुश्शान (फ़रुंखसियर का पिता) २८६, २६०, २६१, २६६, २६६, ३००, ३०१
अज़ीमुश्शान (एक स्थान) २८६
अज़ीमुश्शानी दे० अज़ीमुश्शान (फ़रुंख़सियर का पिता)
अटल बिहारी ३२१
अटेर ३१६
अतरौली ३४१
अधसेरी उमराव २७२
अनंत फंदी १६
अनंद चौधरी २७२
अनवर ख़ां ११०, २३४, २८६
अनिरुद्ध (भूषण के एक आश्रय दाता) २०५, २१०, २३६
अनूपगिरि दे० हिम्मतबहादुर
अनूपसिंह दे० हिम्मनबहादुर
अनूपसिंह ३२१
अनौर दे० अनवर ख़ां
अपभ्रंश १६२, १६४, १६६, १६८
अप्पा साहब दे० रघुनाथराव (सागरवाले)

अफ़गन दे० सैद अफ़गन
अफ़गान १८३, २०६, २२८, २६८, २८१-८२, ३०६, ३२०, ३२३, ३२४, ३३२, ३५४
अफ़गान हुसेन ख़ाँ २०६
अफ़गानिस्तान २३३, २८२, ३१८
अफ़ज़ल, अफ़ज़ल ख़ां (बीजापुर का एक सरदार) ६३, २११, २१२, २१३, २१४, २२६, २३२, २३६
अफ़ज़ल ख़ां, (फ़र्रुखसियर का एक अमीर) २६८
अफ़रासयाब ख़ां, अफ़रासयाब ख़ाँ बहादुर रुस्तम जंग २६२, २६६, २६८, ३३६
अबदुर्रहमान शेख़ १८६, १८८
अबदुर्रहीम १८१
अबुल् फ़तेह (शाइस्ता खाँ का एक पुत्र) २१६
अबुलफ़ज़ल् ३६, ४०, ५७, ६०, ७८, ७६, ६६, १७७, १८०, १८३, १८५, १-६, १८८, २४६
अबूमलिक अजेज, अबू मलिक अजीज़ २४८
अबूमलिक सैद (तैमूर का वंशज) २३१
अबीसीनियन २३४
अबुल् हसन ३००
अब्दुल अज़ीज़ दिलावर ख़ाँ २६२
अब्दुल मंसूर खाँ सफ़दरजंग मंसूर, (अवध के द्वितीय नवाब) ७१, ११५, ३०८, ३११, ३१२, ३१४, ३१५, ३१६, ३१७, ३१६, ३२० ३२१, ३२३, २३४ ३२५, ३२६, ३२७, ३२८, ३२६, ३३१, ३३२
अब्दुल् रसूल २६८
अब्दुल मीर ३५५
अब्दुल्लाह खाँ खोजा, अबदुल्ला ख़ाँ फ़ीरोज़ जंग १८१
अब्दुल्लाह ख़ाँ सैय्यद मियाँ २६२
अब्दुल्लाह खाँ (विलौर का शासक) २२६
अब्दुल्लाह भटारी दे० अफ़ज़ल ख़ाँ
अब्दुल्ला नबाब दे० ख्वाज़ा अबदुल्लाह ख़ाँ फ़ीरोज़जंग
अब्दुल्लाह (जहाँगीर का एक सेनापति जिसने चित्तौड़ पर आक्रमण किया) १७७, २५२
अब्दुल्ला खाँ २७१, २७३, २७४
अब्दुल्लाह खाँ खोजा २६८
अब्दुल्लाह खाँ ख्वाज़ा (अकबर का एक सेनापति) ५६, १८८, १८६
अब्दुल्लाह खाँ (सैय्यद) ११, २०६, २६०, २६२, २६३, २६४, २६५, २६७, २६६, ३००, ३०१ ३०२, ३१४ ३०२
अब्दुल् ग़फ़्फ़ार, अब्दुल् ग़फ़्फ़ार ख़ाँ २६०, २६७, ३००, ३०१, ३०२
अब्दुल्ल समद २०६, २३४, २७१, २८६
अब्दुल समद (अब्दुस्समद खाँ बहादुर दिलेर अब्दुस्समद जंग, सैफ़ुद्दौला) २८६, ३०५,
अभय सिंह, (जोधपुर-शासक) ३१३, ३५५
अमर दीवान २७२
अमरवाला सौगरिया ३२१
अमर साह १७२
अमर सिंह (चन्द्रावत) २०५, २२५
अमर सिंह (चित्तौड़ के महाराणा) १७७, २४३, २४४, २५२
अमर सिंह (नीमडीवाले) २४६
अमर सिंह (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
अमर सिंह (महाराणा राजसिंह के पौत्र) २५६, ३२१
अमर सिंह (जोधपुरवाले) १८
अमानगंज २८
अमान सिंह ३२१
अमीनुद्दीन खाँ (बहादुर अमीनुद्दौला) २६०
अमीर-उल्-उमरा दे० शाइस्ता ख़ाँ
अमीरुल् उमरा दे० अब्दुल्लाह ख़ाँ सैय्यद
अमीर-उल्-उमरा दे० हुसेन अली ख़ाँ
अमीर उल्-उमरा दे० समसामुद्दौलाह अशरफ़ ख़ाँ
अमीर-उल्-उमरा कोकल ताश खाँ दे० कोकलताश ख़ाँ
अमीरुल उमरा फीरोज़ जंग ३२०
अमीर ख़ाँ २६३ २६६
अमीर ख़ाँ मीर मीरान २६३
अमीर खुसरो १६१, १६३, १६४, १६५, २००, २०१, ३४८, ३५८, ३६०
अमोघवर्ष दे० मुंज
अयोध्या १७४
अरकाट २०५
अरब २३०, २४६
अरबी १५६, १६१, १६२, १६३, १६५, १६६, १७१
अरसला ख़ाँ दे० अर्सला ख़ाँ
अरसी दे० अरिसिंह
अरसी, अरिसिंह २४२, २
अराकान २७०

अरारुसिंह राजा ३०८
अरिसाऊ २७२
अरिसाल ३२१
अर्जुन दे० अर्जुनसिंह, (नोने)
अर्जुन देव १७५, १७६, २६८
अर्जुनपाल १७५, २६८
अर्जुनवर्म २७१
अर्जुनसिंह (नोने) ३२, ३३, ५०, ७२, ७३, ११७, ३३७, ३४१, ३४२, ३४३, ३४४।
अर्द्ध कथा १६
अर्बुदगिरि दे० अर्वली
अर्वली २६२, २६३, ३५०
अर्सला ख़ाँ २६०
अलंकार-दीपक १६
अलवर-राज्य ३४
अलाउद्दीन—दे० अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी।
अलाउद्दीन मुहम्मद ख़िलजी २३, ३४, ४१, ५१, ५२, ५३, ६१, ६२, ७३, ७५, ६६, १०२, १५८, १६१, १६२, १६३, १६४, १६५, १६६, १६७, १६८, १६६, २०१, २०२, २४१, २४२, २४७, २५२, ३१७, ३२५, ३४५, ३४७, ३४८, ३४६, ३५०, ३५३, ३५४, ३५५, ३५७, ३५८, ३५६, ३६१
अलादीन, अलावदीन दे० अलाउद्दीन, मुहम्मद ख़िलज़ी
अलावृत्त ३५४
अली असगर, अली असगर ख़ाँ ३०२, ३०३, ३०५
अली आदिलशाह २०४, २११, २१४, २१६ २२६
अली कुली ख़ाँ १७६, १८१
अली कुली (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २८४
अली कुली (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३२१
अली ख़ाँ न्याज़ी ख़ाँ २२
अलीख़ाँ २७२
अलीखान ३०८
अलीखान ३५५
अलीगढ़ ३१५, ३१६, ३२०, ३२१, ३२४, ३३०, ३३२, ३३६
अली नक़ी ख़ाँ, २६७, ३२३,
अली बहादुर ३३७, ३३६, १४३
अली मुराद ख़ाँ जहाँ कोकल ताश ख़ाँ दे० कोकल ताश ख़ाँ
अली रुस्तम ख़ाँ ३२२
अली शेर ३५५
अली सैय्यद ३५५
अली हुसेन २६१
अल्लट, दे० अल्लूरावर २४०
अल्लामी फ़हामी शेख दे० अबुलफ़ज़ल
अल्लि फ़ते २१०
अल्लिहुसेन दे० हसन अली ख़ाँ (औरंगज़ेब का एक सेनाध्यक्ष)
अवंती-प्रदेश २७६
अवध ११, १७५, २८६, २६६, ३०८, ३०६, ३१५, ३२६, ३२७, ३२६, ३३७ ३३८, ३३६, ३४०, ३४१
अवधी १६६, १६७
अवधूत (एक व्यक्ति) ३२१
अवधूतसिंह २१०, २३६।
अशरफ़ ख़ाँ दे० ख्वाजा आसिम
अशरफ ख़ाँ दे० समसामुद्दौलाह अशरफ़ख़ाँ
अशीका-देवलरानी व ख़िज्र ख़ाँ ३४८
अषैसिह३२१
असग़र ख़ाँ दे० अली असगर ख़ाँ
असद अली ख़ाँ २६८
असद ख़ाँ (ख़ानाज़ाद) ३२१ ३२२, ३३२
असद ख़ाँ आसफुद्दौलाह २६१
असद् बेग १८३, १८४, १८५
असरफ ख़ाँ १८१
असोथर ७०, ३०८
अहमद खाँ बंगश दे० अहमद ख़ाँ पठान
अहमद ख़ाँ बंगश ३१५, ३१६, ३१६, ३२०, ३२१, ३२३, ३२४, ३४०
अहमद खाँ सरवानी २६८
अहमदनगर २०४, २१०, २१६, २२५, २८४
अहमद बेग दे० गाज़ी उद्दीन ख़ाँ बहादुर गालिब जंग
अहमदशाह (सम्राट्) ११,३१७, ३१६, ३२०, ३२५, ३२६, ३२७, ३२६, ३३०
अहमदशाह अब्दाली ११, ३१७, ३३८
अहमदशाह दुर्रानी २६१
अहमदाबाद २५७ २६६, २७५
अहिल्याबाई ३१७
अहीर ८०

आंकुश खाँ २११, २१३
आंकुस दे० आंकुश ख़ाँ
आंतरी ३२

आंध्र देश २७
आंध्र-वंश २४०
आंवला (एक स्थान) ३२४
आईन इ-अकबरी १८०
आकुत दे० याकूत ख़ाँ
आकिबत ३१६, ३२६, ३३०, ३३१ ।
आकिबत महमूद काश्मीरी दे० आकिबत
आकिल खाँ २७५
आगरा–११, ३६, ५८, ६३, ६६, ८४, १००, १०८, १७८, १८२, १८३, १८६, १८७, १८८, १८६, १६०, १६८, २०५, २१३, २२१, २२३, २३१, २३३, २५३, २५७, २५८, २६६, २७०, २७३, २७४, २७५, २७६, २६३, २६६, २६७, २६६, ३००, ३०१, ३०२, ३०३, ३०४, ३०५, ३१४, ३१६, ३२२, ३२५, ३३०, ३३८, ३३६, ३४०
आज़म ख़ाँ नवाब १६
आजम खाँ (नवाब) २६१, २६८, २६६, ३०५
आजमखान १८१
आज़म शाहज़ादा २६२, २६३, २८३
आतश खां २६८
आतस दे० आतश खाँ
आदिल शाह दे० अली आदिलशाह
आनंदराइ चौधरी २७२
आनन्दराव, दे० हम्मीर राव (एक मराठा सरदार)
आनंदी पुरोहित १८१
ऑना जी दत्तो २१४
आपा ३१७
आबू पर्वत ५१, ३५२
आमनदास १८१, २७२
आमेर दे० जयपुर
आम्र प्रसाद दे० अंबा प्रसाद
आलम खान १८१
आलमगीर दे० औरंगज़ेब
आलमगीर (द्वितीय) ११
आलमगीरनामा २७५, २७८, २७६
आलमपुर ३१६
आलीजाह प्रकाश, दे० आलीजाह सागर आसा ७३, ३५४
आलीजाह सागर ३३, ३४
आल्हा १६६
आसकरण (दुर्गादास राठौर के पिता) २४७
आसकरन १७६, १७६, १८२, २६८
आसफ़उद्दौला (एक ग्रन्थ) ३४०
आसफ़उद्दौला (नवाब) ३३८, ३४०
आसफ़जाह दे० इमादुलमुल्क
आसाम २०६, २५८
आहाड (नगर) २४१

इंतज़ाम ३२६, ३२७
इंद्र १०८
इंद्रजीत, इंद्रजीतसिंह (ओड़छावाले) २१, २२, ५८, ५६, १८१, १८३, १८६
इंद्रप्रस्थ दे० दिल्ली
इंद्रमणि, इंद्रमनि (ओडछा के राजा) २६६, २७७, २७८, २८३,
इंद्रमणि धँधेरा २६६, २७८
इंद्रमनि (साहिगढ़वाले) २७२
इंपीरियल गज़ेटियर २८३
इंद्रपुर दे० दिल्ली
इख्तियार खाँ २६८
इख़लास ख़ाँ २२५
इक्ष्वाकु ३५० ३५१
इजाद ३०२
इटावा १७४, १७६, २६२, ३०२, ३०५, ३१५, ३३८
इदगार बेग २६८
इनायत खाँ २६८
इनायखाँ (सूरत का सूबेदार) २१७
इनायतुल्ला २६५
इनायतुल्लाह खाँ (फ़रुंख़सियर का मामा) २६५
इनायतुल्लाह ख़ाँ काश्मीरी २६५
इनायत शाह २६८
इफ्तख़ार ख़ाँ २६८
इब्नबतूता १६३, २०१
इबादुल्ला ख़ाँ दे० मीर जुमला
इब्राहीम (दिल्ली-सुलतान) २४३, ३१८
इब्राहीम हुसेन २६८
इम्त्याज़ ख़ाँ, इमत्याज़ खान २६४
इमादुलमुल्क (प्रधानमंत्री) ३१६, ३२०, ३२६, ३२७, ३२८, ३२६, ३३०
इमॉद दे० इमादुलमुल्क (प्रधान-मंत्री)
इमॉद (एक इतिहास लेखक) ३२८
इरविन ३०, १२८, १२६, १४२, २७६, २८१, २८८, २६६, ३००, ३०१, ३०३, ३०६, ३४०,

इलायची बेग २६८
इलाहाबाद १७, १८१, १८५, २०६, २७०, २८६, २६०, २६३, २६६, ३१५
इलियट १७७, १७५
इसा खाँ ३२१
इसफ़हान २६७
इसॉमी १६३, २०१, ३५६, ३५७, ३५८
इस्माइल ख़ाँ (सफदर जंग का एक सेनानायक) ३०५, ३१६, ३२८, ३२६
इस्माइल बेग (ख़ाँ) ३२३
इस्लाम ३५८
इस्लाम खाँ (औरंगजेब का एक सेनापति) २७५
इस्लाम खाँ (बहादुर खाँ का एक सेना-नायक) २८५
इस्लाम शाह दे० सलीम शाह सूर
इस्लामाबाद २७३
इस्लिम शाह दे० सलीम शाह सूर

ईडर २६२, २६३
ईदगाह ३२८
ईरान २३१, २५८, ३२५
ईरानी ३२५, ३२७
ईलियट दे० इलियट
ईश्वर ६७, ६८
ईश्वरदास (एक इतिहास लेखक) २६३, २७५
ईश्वर राउत १८१
ईश्वरी सिंह ३११, ३१५, ३२२
ईसफ खान २७२
ईसा खाँ ३२४
ईसागढ़ २१६
ईसुरी सिंह दे० ईश्वरीसिंह

उंबर-खंड २१५
उग्रसेन १८१, २०३, २७२
उजागर ३२१
उज्जैन २३१, २५७, २६६, २६६, २७५, २७६, २७८, ३५६
उड़ीसा २६७, ३०१
उत्तमगिरि ३४२
उत्तम सिंह गौर ३४२
उत्तमचंद १६
उत्तम लाल गोस्वामी तैलंग २७
उदयकरण-दे० उदयभानसिंह (कोठारिया वासी)
उदयपुर (नगर) १६, ३३, ४४, १५१, १५२, १६१, १६२, २४६, २४६, २५२, २५३, २५४, २५५, २५६, २६१, २६२, २६३, २६४, २६५, २८२
उदयपुर म्युज़ियम १६५
उदयभान सिंह (कोठारियावासी) २४६
उदयभान (सिरोही के शासक) २६१
उदयभान (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
उदयभान (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३२१
उदयभान सिंह राठौर (सिंहगढ़ वाले) २२४
उदयभान सिंह चौहान २६५
उदयराम ३२१
उदय सिंह (महाराणा) २५२, ३४३
उदय सिंह (कुंभा का पुत्र) २४३
उदयाजीत २७१
उदार सिंह ३३४
उदैकरन २७२
उद्दित-भुवपाल २७१
उद्दोतसिंह ३३४
उबैदुल्लाह देखिए मीर जुमला
उमर सेख दे० उम्र शेख़ मिर्ज़ा
उमरानी (एक स्थान) २२७
उमराव गिरि ३१६, ३३४, ३४०, ३४१
उमरावसिंह सेंगर ३४२
उमादतुलमुल्क अमीरुल उमरा बहादुर फ़ीरोज़ जंग सैय्यद हुसेन अली ख़ां २६४
उम्मेदसिंह ३२२
उम्र शेख़ मिर्ज़ा ३१८
उर्दू १२७, १६८, १६६
उर्वशी १५७
उलग खां ३४८, ३५५, ३५६, ३५७, ३५८, ३६०
उल्लू खां दे० उलग़ खां

ऊदा दे० उदयसिंह (कुंभा का पुत्र)
ऊदाजी, ऊदोजी (दौलतराव सिंधिया का एक मुसाहिब) ३३

ऋतु विलास १५०
ऋषभदास जैन १७

एकलिंग महात्म्य १६२, २००
एजुद्दीन दे० ऐज़ुद्दीन
एटा ३२३, ३३८

ए टेल ऑव् टू सिटीज़ २०१
एत्माद्उद्दौलाह दे० इंतज़ाम
एतमादुद्दौला क़मरुद्दीन ख़ाँ दे० कमरुद्दीनख़ाँ बहादुर एतमादुद्दौलाह
एमादुद्दौला मुहम्मद अमीन खाँ बहादुर २६१

ऐजुद्दीन ६६, ८६, २८६, २६३, २६४, २६५, २६६, ३०२, ३०४
ऐतमादपुर ३०५
ऐरछ, ऐरछगढ़ १८१ १८६, २७३

ओंकार नाथ (एक तीर्थ-स्थान) २५३
ओझा २२, २३, १६१, १६२, १६३, १६६, १६८, २०१, २३६, २४०, २४६, २४८, २४६, २५०, २५२, २५३, २५५, २५६, ३४६, ३५०
ओड़छा, ओरछा २०, २१, ५७, ५८, ५६, ६६, १७६, १८८, १८६, १६०, २३४, २६६, २७३, २७७, २७८, २८१, २८३, २८५, २८६।
ओरंग, दे० औरंगज़ेब
ओसवाल २४६

औरंगज़ेब १०, ११, १२, १८, २८, २६, ३०, ४३, ६३, ६४, ६५, ६६, ६७, ८४, १०८, १६८, २०४, २०५, २१३, २१६, २१७, २१८, २२०, २२१, २२२, २२३, २२४, २२५, २२६, २३३, २३४, २३६, २४४, २४६, २४७, २४८, २५५, २५६, २५७, २५८, २५६, २६० २६१, २६२, २६४, २६५, २६६, २६७, २६८, २६६, २७०, २७१, २७३, २७५, २७६, २७७, २७६, २८१, २८२, २८३, २८४, २८६, २८६, २६१, २६२, २६३, २६४, ३१७, ३१६
औरंगसाह, औरगसाहि दे० औरंगज़ेब
औरंगाबाद २०५, २१६, २१७, २१६, २८३

कधार १०, ४५, ६६, १०७, २०५, २३०, २३३, २६६, २७०, २७४
कंस २०३
कंसराज ३४२
कंस-संहारक दे० कृष्ण
कंसारि दे० कृष्ण
कच्छ २५७
कछवाहा १७८, १७६, १८८, ३३४
कछवाहाधार ३३४
कछोवा ५८, ६०, १७७
कटेरा गढ़ १७५
कड़ा ३०२, ३५६
कड़ा-जहानाबाद २८६
कडा-मानिकपुर २६६, ३००
कनरपीघाट की लड़ाई २०
कनवज्ज दे० कन्नौज
कनवारा ३४०
कनारा २२७, २२८
कनेरा २७५
कन्नौज १५७, १७४, १८१, २३१, ३०५, ३१८, ३२३
कन्नौज-शाहदाबाद ३०६
कन्ह ३५५
कन्हर १८१
कन्हा सगताउत दे० कान्हा शक्तावत
कबरू ३५४, ३५५, ३५६, ३५८, ३५६
कमधज्ज दे० राठौर
क़मरुद्दीन ख़ाँ (दिल्ली का प्रधान-मंत्री) ३०८, ३१०
क़मरुद्दीनखाँ, क़मरुद्दीन ख़ां बहादुर एतमादुद्दौला २६१, ३२०
क़मरुद्दीन ख़ाँ बहादुर दे० इंतजाम
क़मरुद्दीन ख़ाँ हुलास १६
कमलचंद २७१
करन, कर्ण (वीरसिंहदेव-चरित के एक पात्र) १७५
करन जू (कर्न छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
करन्न दे० कर्ण (बीकानेर के शासक)
कर्कट ३४, ३५
कर्ण (बीकानेर के शासक) २०५, २२०
कर्ण, कर्णसिंह (चेमसिंह के पिता और चित्तौड़ के शासक) २४०, २४१, २४२, २५१
कर्णसिंह (शिवाजी के पूर्वज) २०३
कर्णसिंह महाराणा (अमर सिंह के पुत्र) २४३, २४४
कर्ण (महाभारत के एक पात्र) २२०
कर्ण-तीर्थ (मंदिर) १७५
कर्नल टॉड दे० टॉड।
कर्नल पॉवेल ३४०
करनला (एक दुर्ग) २१६
करनाटक २०६, २२८, २२६, २३०

कर्णसीह २४८
करहरा १७५
करहिया ३२, ४६, ६२, ३३३, ३३४, ३३५, ३३६
करहिया कौ रायसौ १७, ३२, ३७, ३८, ४६, ७२, ६२, ६३, ११५, १७०, ३३३, ३३६
कर्रिजा २२५
करुदीं खाँ दे० क़मरुद्दीन खाँ बहादुर एतमादुद्दौला
कलिंग २३१
कलकत्ता २३१
कलस २७१
कल्यान, कल्याण २१६, २२०, २२४, २३३
कल्याणदास (केशव के भ्राता) २१
कल्यानदे (रानी) ५६, ६०, १८१
कवाल जी के कुंड ३५२
कवि प्रिया २१, २२, १४६, १७५
कवि विनोद ३१
क़सूर (स्थान-विशेष) २०६
काकडोली २५६
कांगडा १०
काकुत्स्थ कुल दे० सूर्य-वंश
काकोरी-(स्थान-विशेष) २६८
कानपुर ३३, ३४०
काठियावाड़ २७०
क़ादिर दाद खां २६२
क़ानूनगो ३११, ३१२, ३१३, ३२४, ३३२
क़ानूनगो परिवार ३१५
क़ानोड़ २४५
कान्ह सिंह (गोगूँदेवाले) २४६
कान्हा शक्तावत २४६
काबुल १७६, २०६, २३०, २३३, २५८, २६३
काभरू दे० कबरू
कामबक्स, कामबख्श २८४, ३१६, ३२६
कामव्र (एक इतिहासकार)३०१
कायम खाँ बंगश ३१६, ३२३, ३२४
कायस्थ ३१५
कारतलब खाँ २१५
कारतलब अंसारी-२६२
कारातीय (एक स्थान) २८५
कालजमन ६०
कालभोज(द्वितीय) दे० बापा
कालपी १७५, १८६, २३५, ३३४, ३३८, ३४०
कालिका देवी ७८, ३२८
कालिंजर १७५, १७६, २३१, ३१८, ३३६
कालिदास १४७, १४८, २४७ ।
काली नदी ३२४
काली पहाड़ी ३२८
काली कुमारी २७६
कावेरी २२६
काव्य-विलास १६
काश्मीर २३१, २५८, २६५, २६७
काशी १६, १७, १८, २२, ५६, १७४, २२४, २३४, २६७
काशी (शिवाजी के एक सेनापति) २१०
काशीनाथ (केशव के पिता) २१
काशीमेघ (बेगूवाले) २४५
काशीराज २६७, २७१
कासगंज ३४१
क़ासिम खाँ २७२
क़ासिम अली खाँ १७६
क़ासिम बेग खाँ मिर्ज़ा २६८
कासी दे० काशी
क़ादिर दाद खाँ बहादुर दे० नूरुल्लाह खाँ
किशनगढ़ २४७
किशनसिंह ३२१, ३२४
किशनसिंह राठौर २४७
किशोरसिंह (कोटावाले) २०५
किशोरसिंह २२५
किशोरीलाल गोस्वामी १७
किशोरी शरण लाल ३४८
किसनेस, किसुनेस दे० किशनसिंह
किसुनदास २७२
किसोरी खंगार २७२
कीतू (कीर्त्तिपाल) १६२
कीरति, कीरतसाहि २७२
कीरतसिंह ३३४
कीर्त्तिसिंह २२४
कीर्त्ति निश्शुंकदेव पराक्रमबाहु २०१, २०२
कुंभ दे० कुंभा
कुंभलमेर, कुम्भल गढ़, कुंभलनेर १६२, २००, २०२, २४१, २५२
कुंभा २००, २३८, २४३, २५२
कुम्भकरण (एक कवि) दे० कुंभा
कुंभनदास २६
कुंभेर ३१६, ३१७, ३३०, ३३१
कुंवर कुशल १६

कुंवर नरायन दास २७२
कुंवर राज रनधीर धंधैरो २७२
कुंवरसेन २७२
कुवरपुर ३०२, ३४१
कुमाऊँ २३४, २३६
कुमारपाल रासो १८
कुमारसिंह २४१
कुलज़म (एक ग्रंथ) २७०
कुलपति मिश्र १८
कुलवार कुरी २६८
कुल पहाड़ (स्थान-विशेष) ३४१
कुलीर ३४, ३५
कुवसा ३४०
कुडाल २१६
कुतुबमीनार ३२८
कुतुबुद्दीन, क़ुतुबुद्दीन खाँ १८०
१८१, ३५४
क़ुतुबुल्मुल्क सैयद अब्दुल्लाह ख़ाँ दे० अब्दुल्लाह ख़ां सैय्यद
कुतुबुल्मुल्क बहादुर यार वफ़ादार ज़फ़रजंग दे० अब्दुल्ला ख़ाँ सैय्यद
क़ुतुबशाह २१६, २२६
कुश (राम के पुत्र) १७४, १६१, २६७, २७१
कूर्म-प्रताप ३२१
कृष्ण १६, ३१, ४६, ४६, ६८, ११०, ११५, १२६, १५२, १५५, २०३, २८४, ३३१
कृष्ण जी (अफ़ज़ल खाँ का एक साथी) २१२
कृष्ण जी बाजी दे० चंद्र राव
कृष्ण जी भास्कर २११
कृष्णगढ़ २४७, २५५
कृष्णानंद २६
कृष्ण नारायण १७४
कृष्णदास २६, १८१
कृष्ण शास्त्री २७
कृष्ण सिंह (बूँदीवाले) २०५
कृ.ण सिंह राठौर दे० किशन सिंह राठौर
कृ ष्ण-वंशीय ३१२
कृपाराम १८१, २७२, ३२१
केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव् इंडिया १८५, ३४७, ३४८, ३६१
केवलराम १६
केशव, केशवदास १४, १५, १६, १८, २१, २२, ३६, ४०, ४८, ५६, ५७, ५८, ५६, ६०, ६१, ७६, ७७, ७८, ७६, ८०, ६८, ६६, १००, १०१, १२०, १२१, १२४, १२५, १२६, १२७, १३१, १३२, १३३, १३५, १३६, १३८, १३६, १४०, १४१, १४५, १४६, १४७, १४८, १४६, १५३, १५६, १६०, १६१, १६८, १७४, १७५, १७७, १७८, १८०, १८१, १८२, १८३, १८४, १८५, १८६, १८७, १८८, १८६, १६०, २६८।
केशव पन्त ३४१
केशव मिश्र दे० केशव
केशवराय बुन्देला २८२
केशरीसिंह रावत २६१
केसरीसिंह चौहान २४५
केसरी सिंह सगतावत दे० केहरीसिंह शक्तावत
केसरीसिंह धंधेरा २७२
केसव दे० केशव
केसवराय (करहिया का एक व्यक्ति) ३३४
केसौदास दे० केशव
केहरीसिंह शक्तावत २४४
केहरीसिंह चौहान दे० केसरीसिंह चौहान
केसरीसिंह (करहिया का एक व्यक्ति) ३३४
केहरीसिंह (सूरजमल का पौत्र) ३१४
कोइना (नदी विशेष) २१२
कोकसिंह २७६
कोकलताश खाँ २६३, २६४, २६८, ३०४, ३०५
कोकिलतास दे० कोकसताश ख़ाँ
कोटज (एक दुर्ग) २१६
कोटरा दे० कोहतिला
कोटा २६, २०५, २८५, ३५२
कोठारिया २४५
कोड ३१०
कोड़ जहानाबाद, कोड़ा जहानाबाद ३०८, ३०६, ३१०
कोड़ा ३०२, ३०४, ३०५, ३०७, ३०६, ३२०
कोणकण २१८, २१६, २२६
कोनदन दे० सिंहगढ़
कोयल दे० अलीगढ़
कोरडे दे० रघुनाथ बल्लाल कोरडे
कोलर (एक स्थान) २२६
कोलर्न नदी २२६
कोलावा (एक ज़िला) २१५
कोली (एक जाति) २२४
कोली-प्रदेश २२७, २२८
कोल्हापुर २१३, २२८

कोहतिला ३२७, ३२८, ३२९
कौंच २७४
कौसिलापुरी २३१
क्षत्रिय ४५, ५१, ६७, ७१, ७३, ३०८, ३१२, ३५२
क्षीर-दुर्ग २१६
क्षेत्रसिंह २४२, २५१

खंडहर २३४
खंडू दे० खांडे राव होल्कर
खंद कला (एक दुर्ग) २१६
खजुआ २३३, २५७, २५८, २७०, २७६, २७७, २९३, ३०२, ३०३, ३०४
खड्गराय १८१, १८६
खरगराइ २७२
खरगराय (करहिया के संस्थापक) ३३३
खरगसेन १८१
खरगे बारी २७२
खत्री १७८
ख़फ़ी ख़ाँ २५८ ३०१, ३०५
खमसरा घाट ३०२
खलील उल्लाह ख़ाँ २७७
ख़लीलुल्ला ख़ाँ यज्दी २९३
खवा (एक स्थान) ३५
ख़वास ख़ाँ २१९, २२१
खांडेराइ २७२
खांडेराय १ ८१
खाँडेराव होल्कर ३१६, ३३०, ३३१, ३३२
खांडोजी होल्कर दे० खाँडेराव होल्कर
खाँ जहाँ लोदी १०
ख़ाँ ज़मा दे० ख़ाँ जमां अली असगर खाँ
खाँ ज़मा अली असगर खाँ २९२, ३०५
ख़ाँ ज़मां दे० असग़र खाँ
ख़ाँ-दौरा (वह व्यक्ति जो नादिरशाह के युद्ध में मारा गया) ३२०
खाँ दौरा नौशेरी खाँ दे० नौशेर खाँ
खाँ दौरा नौसरी दे० नौशेर खाँ
ख़ान जहान १८१
ख़ान जहाँ २७२
ख़ान जहाँ, मुज़फ्फर अली खाँ खान-इ-जहाँ २९५
ख़ान-इ-ज़मां दे० मुनीम खाँ
खान दौरा दे० ख्वाजा हुसेन
खान-ए-दौरा २७३
खान दौरा अमीरुल् उमरा ख्वाजा आसिम दे० समसामुद्दौलाह अशरफ़खाँ
खान दे० शेर अफ़गन
खानखानानबहादुर ज़फ़रजंग दे० मुनीम खाँ
खानज़ादा खाँ शाहस्ता खाँ २९५
खानखानान निज़ामुल्मुल्क बहादुर फ़तह जंग दे० गाज़ी उद्दीन खाँ चिक्लीच खाँ निज़ामुल्मुल्क
खान आलम बहादुर शाही २९६
खान दे० अफ़ज़ल खाँ
खान खानान दे० मीर जुमला
खान खानान महावत दे० महावत खाँ
खानचन्द ३२१
खानदेश २२५, २९२
खान खाना नबाब दे० अब्दुर्रहीम
खानखाना २७२
खानवा २४३
खानापुर २१६
खालिक २७२
ख्वाज़ा अब्दुल्ला १८१
ख्वाजा आसिम ३०१
ख्वाजा खातिर ३५४
ख्वाजा हुसेन २९४
खाँ बहादुर दिलेर जंग दे० अब्दुलसमद
खिज्रखाँ (शाहज़ादा) १९४, १९५, १९७, २००, ३५४
खिज्रखा, (एक बीजापुरी सरदार) २२८
खिज्राबाद १९४
खिलजी ३२५, ३५४, ३५६
खिमानन्द ३२१
खीची-वंशावली (एक ग्रंथ) १९
खीची २४६, ३०८
खीचीदरा दे० राघवगढ़
खीची राव रतनसेन २४६
खीर दुर्ग दे० क्षीर दुर्ग
खुम्माण २४८
खुमान २०३
खुमान ३३४
खुमानसिंह (चरखारी के शासक) ३४२
खुमानसिंह दीवान ३४२
खुरासान १०८, २३०, २३३
ख़ुर्रम दे० शाहजहाँ

खुसरो शाहज़ादा १०, १००, १८०, १८६
खुस्याल सिंह ३२१
खूबू शेख़ दे० कुतुबुद्दीन ख़ाँ
खेतल २४८
खेरुद्दीं अली खाँ २६८
खैगढ़ २१६
खोजा रहमतुल्लाह २६८
ख़्वाजा इनायतुल्लाह ख़ाँ दे० खानाज़ाद ख़ाँ शाइस्ता खाँ
ख्वाजा मुज़फ्फर ख़ाँ पानीपती दे० ख्वाजा मुज़फ्फर अली ख़ाँ तोराबाज़
ख़्वाजा मुज़फ्फ़र अली ख़ाँ तोराबाज २६५
ख़्वाजा अब्दुल्लाह ख़ाँ फीरोज़ जंग २४७
ख्वाजा अब्दुल्लाह ख़ाँ दे० अब्दुल्लाह खाँ खोजा
ख़्वाजा हुसेन (ख़ाँ दौरां) २६४, ३०२

गंग, गंगा ३३, ६१, ११४, १४६, ३१०, ३२४
गंगागिरि ३४२
गंगादास २४४
गंगाधर शास्त्री तैलंग २७
गंगाधर तांतिया ३२२
गंगाराम (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
गंगाराम (सुजानचरित्र का एक पात्र) ३२१
गंगासिंह सगताउत (शक्तावत) २६१
गंगा लहरी ३३
गंजन १६
गंधर्वसिंह २६८
गंधर्वसेन २०१, २०२
गभीरराय १८
ग़ज़नी १८१, ३५४
गजहिय खान दे० शहाबुद्दीन एमादुल्मुल्क ग़ाज़ी उद्दीन ख़ाँ बहादुर फ़ीरोज़ जंग
गजसिंह (छत्रप्रकाश के एक पात्र) २७२
गजसिंह (जोधपुर के महाराजा) २४६, २५३, २६६
गजसिंह (सुजानचरित्र के एक पात्र) ३२१
गजा छितपाल ३३४
गजू २४६
गठ्यौरी ३४२
गढ़ बोर (गांव) २५६
गढ़ा मांडला ३२
गढ़-कुंडार १७५
गढ़ चांदा २२८
गढ़नेर २३१
गढ़ला (एक स्थान) ३५८
गढ़वाल २३६
गढ़ा कोटा २८६
गढ़ी मैदान ३२८, ३२६
गणेश शंभाजी ३३८
गणेश जी ४४, ४६, ५१, १३१, १३२
गदाई खाँ १८४
गनेशखेरा १७५
गभरू दे० कबरू
गया २२४
गरीबदास कुँवर २४४
गरीबदास (छत्रसाल का पुत्र) २८४
गरीबदास (महाराणा राजसिंह का पुरोहित) २४६, २४८
गहिरदेव (एक व्यक्ति) २६७, २७१
गहिरवार कुल ५७, १७४, २६७
गागरौन २८४
गाजण (बादल का पिता) १६२, १६४
ग़ाज़ीउद्दीन ख़ां, गाज़ीउद्दीन ख़ा इमादुल्मुल्क ग़ाज़ीउद्दीन ३०५, ३२५, ३२७
गाज़ी उद्दीन ख़ां, गाज़ीउद्दीन ख़ाँ बहादुर गालिब जंग २६१, २०१
गाज़ीउद्दीन ख़ाँ चिकलीच खां निज़ामुल्मुल्क २६३
गाज़ीउद्दीन फ़ीरोज़ जंग २६३
गाज़ीपुर (कानपुर निकटस्थ एक नगर ३०६, ३१०
गारदेजी परिवार २६६
गिद्दा २७
गिरधन २७
गिरधरदास १८१
गिरधर लाल, गिरिधर लाल बहादुर, (छबीलेराम नागर का भतीजा) २८६, ३०२
गिरिवर पुरोहित २४८
गिरशास्प (व्यक्ति विशेष) २६२
गिरिजा ६१
गुजरात ६५, १७८, १८१, १६६, १६८, १६६, २०१, २३१, २३३, २४१, २४३, २५८, २६२, २६३, २६४, २७०, २७५, २७७, २६०, २६२, २६५, ३१६, ३४२, ३४३, ३५५
गुढ़ा ३३६
गुमान सिंह (चित्तौड़वासी) २४४

गुमानसिंह (बाँदा के शासक) ३४१
गुलाब कवि १७, ३२, ४६, ७६, ६२, ११५, ११६, १२१, १२५, १२६, १३१, १३२, १३३, १३७, १३८, १४०, १४१, १४३ १५८ १७०, ३३३, ३३४, ३३५, ३३६
गुलाब (एक महात्मा) १३
गुलाबराय (राजा छबीलेराम नागर का दामाद) २६८
गुलाब मेंहदी ख़ाँ, दे० गुलाम मेंहदी खाँ
गुलाम (वंश) ३२५
गुलाब अली ख़ाँ गुलाम अली ख़ाँ, जुलूफिकार ख़ाँ बहादुर २६४
गुलाम कादिर ३३६
गुलाम मुईउद्दीन ख़ाँ २६८
गुलाम मेंहदी खाँ २६८
गुलौली ३४२
गुहिल (वंश) १६१, १६२, २४०, २४२, २४८, २५१
गुहदत्त, गुहादित्य गुहिल दे० गृहादित्य
गूजरराज ३२१
गूजर ३४२, ३४३
गूयक ३५१
गुपालमनि २७२
गुपाल बारी २७२
गुपाल खवास १८१
गृहादित्य १६१, २४०, २४६, २५०, २५१
ग़ैरत ख़ाँ, ग़ैरति ख़ाँ २६३, २६४
गोंड (जाति) १७७, २७३
गोंडवाना २३१
गोआ २३२
गोकुलस्थ ३२
गोकुला, गोकुलराम गौर, ३२१
गोदावरी ३२, १४८
गोगूंदे २४६
गोपचंद २७१
गोपाल २०
गोपालदास २४५
गोपालदास, (नकटा) १८३
गोपालसिंह २६३
गोपालसिंह भदौरिया ३०६
गोपालसिंह ३१६
गोपीनाथ (बूँदी के शासक) २८, २७०
गोपीनाथ कमध्वज २४६, २६५
गोपीनाथ (अफ़ज़ल ख़ाँ का एक साथी) २१२
गोमती (राजस्थान की एक नदी) २५५, २५६
गोर (राजपूतों की एक जाति) १६२, १६३
गोर, गौर (एक स्थान) २३३, ३१८, ३५४
गोरखपुर ३५६
गोरखा (एकस्थान) २७५
गोरा २३, ६१, ६२, ८०, १६२, १६३ १६५, १६६
गोरा बादल की कथा, गोरा बादल री कथा, गोरा बादल की बात १७, २२, २३, ३७, ३८, ४१, ६१, ८०, १०२, १६१, १६१, १६३, १६६, १६७, २०१
गोरेलाल दे० लालकवि (बुन्देलखंडवाले)
गोलकुंडा २०४, २२०, २२४, २२७, २३१, २३४
गोविन्द (मेवाडवाले) २४८
गोविंदचंद २७१
गोविंददास मिश्र १८१
गोविंद बल्लाल ३३८
गोविंदराय ३५२
गोविंदराइ (पैंतपुर वारे) २७२
गोविंदसिंह (सिक्ख गुरु) २८५
गोवर्द्धन ६८, १२६, १५२
गोसाईं (एक जाति) ३३४
गोहद २७५, ३३४
गोसाईं राजेन्द्रगिरि दे० राजेन्द्रगिरि गोसाईं
गौडवंश ३४
गौड़ देश दे० बंगाल
गौतम २७२
गौर दे० गोर (राजपूतों की एक जाति)
गौरासिंह ३०८
गौरी दे० मुहम्मदगौरी
गौरीशाह ३५५
ग्रांड डफ़ २२३
ग्रियर्सन २५, २६, २८, २६, ३०, ३१, ३५
ग्वालियर ३३, १७५, १७६, १७६, १८६, २३१, २७१, २७३, २७५, २७६, २८१, २८४, २८६, २६२, ३१७, ३३४, ३५१

घनसिंह ३३४
घनश्याम २७२
घनश्याम शुक्ल १८
घनस्याम दे० घनश्याम
घाणेराव २४६

घासहरा ३१५, ३२४, ३२५, ३३०, ३३१, ३३२
घासेरा दे० घासहरा
घोरपदे २०३

चंडौस दे० चंदोसी
चंद (चंदबरदायी से भिन्न व्यक्ति) २७२
चंदनदास २७२
चंदवरदायी ५१, १२०, १३३, १५७
चंदवार (एक स्थान) १७४
चंदेल १७५ चदेरी २७७
चंदोसी ३२२
चंद्रकला (एक नर्त्तकी) ५२, ३४५, ३५५, ३५६
चंद्रराव (जावली के शासकों की उपाधि २१०
चंद्रालोक (एक ग्रंथ) ३३
चंद्रहँस २७२
चंद्रभान (भूषण-ग्रंथवली का एक पात्र) २०५
चंद्रभान (वीरसिंहदेव-चरित्र के एक पात्र) १८१
चंद्रभान (सुजान चरित्र के एक पात्र) ३२१
चंद्रभान, चंद्रभाण (नीमराणा के राजा) ३४, ३५
चंद्र-वंश ५१, २०३, ३१२, ३५१
चंद्रशेखर वैद्य ३५३
चंपतराइ (बड़गूजर सुत) १८१, १८३
चंपति, चंपतिराय बुंदेला २८, ३०, ४५, ६६, ६७, ६८, ८३, ८७, १७७, २०५, २३४, २६७, २६८, २६६, २७१, २७३, २७४, २७५, २७६, २७७, २७८, २७६, २८५, २८७
चंबल ६६, २७५, ३१६
चकत्ता कुल-दे० चगताई कुल
चकला कड़ा-मानिकपुर ३०२
चकला-कोयल ३१५, ३२४
चगताई-कुल-दे० मुगल
चचेड़ी (एक स्थान) ३०७, ३०८, ३०६
चछौरी ३४२
चतुरंग ३५५
चतुर्भुज (एक तीर्थ-स्थान) २५५, २५६
चतुर्भुज वैद्य ३२
चरखारी ३३६, ३४२
चहुँवाण दे० चौहान
चरणदास १३
चाँदा (स्थान विशेष) २७३, २७६
चाँपा (व्यक्ति विशेष) २४५
चांपावत (राठौड़ों की एक शाखा) २४५
चाकन २१५
चाचा २४३
चारण ३७, ३८, ४३, ४४, ५३, ५५, ६२, ६४, ७७, १२३, १६७, १७०, १७३, १६२, १६६, १६६, २००, २०३ २५५, २६६, २६७, २६८, २८५
चारभुजा दे० चतुर्भुज
चारुमती ६४, १२८, २४७, २५५
चालुकुंड २३१
चालुक्य २४५, २५१, ३५०, ३५१ ३५२
चाहमान ३५१, ३५२
चिंची दे० जिंजी
चिंजाउर दे० तंजौर
चितामनि सुरकी २७२
चिकली (एक स्थान) २२७
चिकलीच ख़ां दे० ग़ाज़ीउद्दीन ख़ाँ चिकलीच ख़ाँ निजामुल्मुल्क
चितउर दे० चित्तौड
चित्तौड २३, ४१, ५२, ६१, १५२, १७८, १६१, १६२, १६३, १६४, १६५, १६६, १६७, १६८, १६६, २००, २०१, २०२ २३६, २४०, २४१, २४२, २४३, २४८, २४६, २५१, २५४, २६१, २६२, २६३, ३५३, ३६०
चित्रंग मोरी २४८, २४६, २५१
चित्रां दे० चित्रंग मोरी
चित्रगि, चित्रंगी दे० चित्रंग मोरी
चित्रांगद मोरी २४८, २५१, २६४, २७२
चित्रकूट दे० चित्तौड़
चित्रकोट दे० चित्तौड़
चित्रपाल २७१
चिदम्बरम् २२६
चिन किलिच ख़ाँ ३०४, ३०५
चिमना बेगम ३५५
चीताखेड़े २४६
चीन २३०
चूरामनि ३१४
चूड रावर २४८
चेलरा १७६
चैतकर्ण १७४
चैनसिंह ३२१
चैप्लेन २१७, २१८
चोंड, चोडसिंह २४८
चौदहा मेघ २७

चौरागढ़ १७७, २७३
चौसा ३१८
चौहान ३४, ५२, ८२, १७५, १६१, १६२ २४१, २४६, २४७, ३०८, ३५०, ३५१ ३५२, ३५३, ३५६

छतरसाल (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३२१
छता दे० छत्रसाल बुंदेला
छतारौ दे० छत्रसाल बुन्देला
छत्र-कीर्ति ३०
छत्र-छंद ३०
छत्र-छाया ३०
छत्र दंड ३०
छत्र-प्रशस्ति ३०
छत्रसालदशक १७, २५, २६, ३७, ४३, १६०
छत्रसालशतक ३०
छत्रहज़ारा ३०
छत्रप्रकाश १३, १७, २७, २८, २६, ३०, ३७, ४४, ४५, ६६, ६६,६८, १०६, १११, १२०, १६६, १७५, २३५, २६७, २६८, २७२, २७३, २७५. २७६, २७६, २८०, २८१, २८२, २८३, २८४, २८५, २८६, २८७
छत्रमुकुट बुन्देला २८४
छत्रसाल बुंदेला १३, १६, २५, २६, २८, २६, ३०, ३८, ४३, ४५, ४६, ४७, ६३, ६४, ६६, ६७, ६८, ८२, ८३, ८७, ८८, १०५, १०६,१०६, ११०, २०६,२३४,२३५, २३७, २६८, २६६, २७०, २७१, २७२, २७५, २७८, २७६, २८०, २८१, २८२, २८३, २८४, २८५, २८७, ३४२, ३४३
छत्रसाल-विरुदावली १६
छत्रसालसिंह दे० छत्रसाल बुंदेला
छत्रसाल हाड़ा २८, २६, ३०, २०५, २३३, २४६, २५३, २५४, २७०, २७५, २७६
छत्रसाहि (गौड देश का शासक) २४८
छत्रसिंह (कुँवर) २४४
छबीलेराम (नागर) ६६, ८८, २८६, २६३, २६८, ३०२, ३०५
छर्रा (स्थान विशेष) ३४१
छाड़गढ़ ३४५, ३४६, ३५३, ३५७
छोटा मिर्जापुर १०३
छोटी सादड़ी १६२

जंगनामा १७, ३०, ३१, ३७, ३८, ४६, ४७, ६६, ७०, ८८, १११, १२०, १२८,१५४, १६७, २८८, ३०२, ३०३
जंगमनि १८१, १८२
ज़ंज़ीरा २१३, २१४, २२५, २२६, २३४
ज़करिया ख़ाँ २६२
जगन्नाथ (लाल कवि के पूर्वज) २७
जगन्नाथ (जयपुर वाले) १७८
जगन्नाथ प्राचीन १६
जगजीवन १३
जगत्राज १६
जगत्नारायण ३२३
जगतसिंह पमार ३४२
जगत्बहादुर ३४२
जगत्दिग्विजय १६
जगतराइ २७२
जगतसिंह (छत्रप्रकाश के एक पात्र) ११०, २७२, २८५, २८६
जगत्सिंह (मऊवाले) १८
जगत्सिंह (जयपुर-नरेश) ३३, ५०, ७३, १७६, २३६, २४३
जगत्सिंह (मेवाड के राणा) १८, ६५, २४३, २४४, २५२, २५३, २५४।
जगद्विलास १८
जगदेव (प्रमार) ३५३
जगदेव गढ़ २२६
जगद्विनोद १७, २०, ३३, ३४, ३७, ५०, ७३, ७६, ६३, ६४, ११६, १२१, १४१
जगमोहन पुरोहित दे० जंगमनि
जगेतस २७२
जटमल १७, २२, २३, ३८, ४१, ४२, ५५, ६१, ७६, ७७, ८०, ८१, १०१, १२०, १२५, १३१, १३२, १३३, १३८, १४२, १५८, १६१, १६२, १६१, १६२, १६३, १६४, १६५, १६६, १६७, २००
जनकसिंह (नीमराणा के राजा) ३५
जनादे रानी २४७, २५३
ज़फ़र ख़ाँ (औरंगजेब का वज़ीर) २१३, २२२
ज़फ़र ख़ाँ दे० ख़्वाजा मुज़फ़्फ़र अली ख़ाँ तोराबाज़
ज़फ़र नगर २६३
ज़फ़रजग ख़ाँ २६८
ज़फ़रुलवली (एक पुस्तक) १६८
ज़बरदस्त ख़ाँ २६८

जबारि दे० जवाहर
जब्बर ख़ाँ २६८
जब्बार १८३, १८५
जमल १८१
जमाल ख़ाँ (वीरसिंहदेव का एक पात्र) १७२, १८१
ज़माल ख़ाँ (हम्मीररासो का एक पात्र) ५२, ३१५
जमानाबेग बिन गोर बेग काबुली २०६
जमुना दे० यमुना नदी
जम्मू प्रान्त २६३
जयकृष्ण (सुजान-चरित्र के एक पात्र) ३२१
जयकृष्णदास (नज्मुद्दीन अली ख़ां का दीवान) २६८
जयचंद (पंग) १६, २४७, २५२
जयचंद वंशावली १६
जयतपुर १६
जयदेव (संस्कृत के एक कवि) ३३
जयदेवविलास १६
जयपुर १८, १६, ३३, ३४, ३५, ५०, ७३, ११४, १७८, १७६, २२२, २२३, २३४, २३६, २६६, ३१३, ३१४, ३१५, ३१६, ३१७, ३२२, ३२६, ३३०, ३३१, ३३८
जयमल १७८, २०१, २४३, २४५
जयसलमेर २५५
जयसिंह राजा (वीरसिंहदेव-चरित का एक पात्र) १८८
जयसिंह (राजपूताना के कोई राजा) २०
जयसिंह (मांडूवाले) ३५२
जयसिंह (सीसोदे के राणा) २४२
जयसिंह (जोधपुरवाले) २७०
जयसिंह (महाराणा राजसिंह के पुत्र) २३६, २४४, २६४
जयसिंह द्वितीय (जयपुराधीश) ३१३, ३१४, ३१५, ३२२
जयसिंह प्रथम (सवाई महाराजा) १६, २०५, २०६, २१३, २१६, २२०, २२१, २२२, २२४, २३६, २५७, २६६, २७६, २८०
जयसिंह सूरि (एक ग्रंथकार) ३५३
जयसिंह-प्रकाश २०
जयाजी अप्पा सिंधिया दे० आपा
जयानक ३५०
जरनल ऑव् ऐशियाटिक सोसायटी ऑव् बङ्गाल २८३
जलालउद्दीन (खिलजी) ३५४, ३५६, ३६१
जलालउद्दीन अकबर दे० अकबर (सम्राट्)
जलालउद्दीन मुहम्मद अकबर दे० अकबर (सम्राट्)
जलाल खां दे० सलीमशाह सूर
जलालुद्दीन हैदर शुजाउद्दौलाह दे० शुजाउद्दौलाह
जलेसर ३२४, ३३०
जवाहर (एक स्थान) २०५, २२६, २२७
जवाहरसिंह (भरतपुराधीश) ३२, ४६, ६२, ३१४, ३३१, ३३३, ३३४, ३३५, ३३८
जवाहिर दे० जवाहिरसिंह
जस (डूँगरपुर के स्वामी) दे० यशकर्ण
जसकरन रावल (सीसोदे के एक शासक) १६५, २४८
जसवंत १८१
जसवंत २७२
जसवतसिंह दे० यश-कर्ण
जसवंतसिंह बुन्देला २६६
जसवंतसिंह, महाराजा (धारानगरीवाले) २०
जसवंतसिंह झाला २४६
जसवंत, जसवंतसिंह, (जोधपुर के महाराज) १८, ४३, ४४, ६५, ८५, २०५, २१६, २१७, २२१, २२२, २२३, २३४, २४५, २४६, २४७, २५३, २५७, २५८, २५६, २६०, २६१, २६६, २६६, २७५, २८२
जसवंतविलास १८
जसराज दे० यशकर्ण
जसरारी २२७, २२८
जहाँगीर १०, १२, ३६, ४०, ५७, ५८, ६०, १००, १७६, १७७, १७८, १७६, १८०, १८१, १८२, १८३, १८४, १८५, १८६, १८७, १८८, १८६, १६०, २०६, २४६, २४७, २५२, २७०, २७३, ३१७
जहाँगीर-जस चंद्रिका १८, २२
जहाँगीर शाह दे० मुहम्मद फ़र्ख़ुंदासियर जहाँगीर शाह
जहाँदार, जहाँदार शाह ११, ३१, ४७, ६६, २८८, २८६, २६०, २६१, २६३, २६४, २६५, २६६, २६८, २६६, ३००, ३०२, ३०३, ३०४, ३०५, ३१२, ३१३, ३१४, ३१७
जहाँशाह (शाहज़ादा) २६६
जहाज़पुर २५४
जानिसार ख़ाँ २६१, २६८, ३०८, ३०६
जाट ४८, ४६, ६२, ३१२, ३१३, ३१४, ३१६,

३१७, ३२२, ३२४, ३२६, ३२७, ३२८, ३२९, ३३०, ३३१, ३३४, ३३५
जादौं राइ १८१, २७२
जानी ख़ाँ २९४, ३०५
जामकुली ख़ाँ १७६, १८१
जामनगर २७०
जामवंत (रामायण का एक पात्र) १७२
जामवद् (स्थान) २९२
जामसाह २७२
जायसी ४१, १२०, १६६, १९१, १९२, १९३, १९६, २००, २०१
जालौर ३५५, ३५६
ज़ालिमसिंह ३२१
जावली २१०, २११, २१४
जिजी २२८, २२९, २४७
ज़िकरियाँ ख़ाँ बहादुर हिज़ब्र जग दे० ज़कारिया ख़ाँ
जिगनी ३३४
ज़ियाउद्दीन बरनी, ज़ियाबरनी दे० बरनी
जीजाबाई २०३, २०४
जीवमहल २१२
जुगराज १८१
जुझारसिंह १०, १७७, १८१, २६८, २६९, २७३, २८५, २८६
जुन्नार २१०
जुल्फिक़ार (मेवात वासी) ३४२
जुल्फ़िकार खाँ नसरतजंग २४७, २८९, २९१, २९९, ३०४, ३०५।
जुल्फ़िक़ार दे० गुलब अली ख़ाँ जुल्फ़िक़ार ख़ाँ बहादुर
जूनागढ़ १९
जूनेर २७८
जैकोबी २८८
जैत पटेल २७२
जैतपुर ३२, ३४१
जैतसीह (मेवाड़ के शासक) १९१, १९२, २४१
जैतसिंह (सुजान-चरित्र के एक पात्र) ३२१
जैत्रसिंह (रणथम्भौर वाले) ३४६, ३५२, ३५३, ३५५
जैन २६, ३१, २४९, २५०
जैनदीं ख़ाँ, जैनुद्दीन ख़ाँ बहादुर ख़ाँ २९३, ३०१
जैनसाह सिकन्दर ३५५
जैसिंह (रासा भगवंतसिंह का एक पात्र), ३०८
जैसिंह (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
जोगराज दे० योगराज (मेवाड के एक शासक) २४८
जोगिया २७
जोधपुर १०, ६५, २५३, २५७, २५८, २५९, २६०, २६४, २६५, २८२, ३२२
जोधराज १५, १८, ३४, ३५, ३६, ५१, ५२, ५३, ५५, ७३, ७४, ७५, ७७, ९४, ९६, ९८, ११८, ११९, १२१, १२५, १२६, १३०, १३१, १३२, १३३, १३४, १३६, १३८, १३९, १४०, १४१, १४२, १४३, १४४, १५७, १५८, १५९, १७१, १७२, ३४५, ३४६, ३४७, ३४८, ३४९, ३५०, ३५२, ३५३, ३५६, ३५७, ३५८, ३५९, ३६१
जोधसिंह ३२१
जौंरा-भौंरा (कोषों के नाम) ३५८

झंपाइथाघट्ट दे० झपायता के घाटे
झंपायता के घाटे ३५२
झाँई (स्थान विशेष) ३५७, ३५८
झाँसी ३१५, ३३४, ३३८, ३३९
झारखंड २३४
झालाचंद्रसेन २४४
झाला जैतसिंह २४५
झूना २८४
झूसी ३०१

टाँकी (एक दुर्ग) २१९
टॉड १९२, १९९, २००, २४२, २५०, २६३, २६८
टिहनपाल २७१
टीकाराम २९८
टीकैत ३२१
टेहरी २१
टोडरमल १७८, १७९

ठाकुरदास सेगर ३२१

डंडा राजपुरी २२६
डच २१८, २३२
डामन २३२
डिंगल १५, १६५, १६७, १६८, १६९
डिर्किस् २०१
डीग ३३०
डूंगरपुर २४२, २४५

डूंगर सी २४८
डोडर डोडिया महासिंह २४८
डौडिया खेरे १६

दिल्ली दे० दिल्ली
दुंढहार दे० जयपुर

तजौर २२८, २२६
तकमील-इ-अकबरनामा १८५, १८८
तकरुंब ख़ाँ २६६
तहवर, तहवर ख़ा (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २३४, २७१, २८५, २८६
तहव्वर, तहव्वर ख़ां (औरंज़ गब का एक सेनापति) २६२, २७१ २८२, २८३
तांतिया ३२१
ताजुद्दीन काफूर हज़ार दीनारी ३५४
ताना जी मालुसरे २२४
ताप्ती (नदी) २१७, २१८, २३२
तारीख़ इ-अलाई १६१, १६५, ३४८
तारीख़-इ-फ़रिश्ता १६७, ३४८
तारीख़-इ-फ़ीरोज़शाही १६४
तारीख़-इ-मुबारकशाही १६३, २०१
तारीख़-इ-मुहम्मदी १६३, २६२
ताहिरख़ां २२२
तिकोना (एक स्थान) २१६
तिघरा २७
तिपुर १७८, १७६, १८६ १८७, १८८
तिरखाराम ३२१
तिरुआबादी २०६, २२६
तिरुमलवादी २२६
तिलंगाना १७८, २२७
तिलोकसिंह तोमर ३२१
तीरोली २४४
तीरुवांडी दे० निरुआबादी
तीर्थराज (एक व्यक्ति) १६
तुज़ुक-इ-जहांगीरी १८५
तुँवर दे० तोमर
तुकाराम १३
तुग़लक़ ३२५
तुग़लकाबाद ३२८
तुरसीदास दे० तुलसीदास (वीरसिंह देव का एक पात्र)
तुर्राबाज, तुर्राबाज़ ख़ाँ दे० ख्वाजा मुज़फ़्फ़र अलीख़ाँ तोराबाज़

तुराब ख़ाँ ८६, २१०, २३६, ३०८,३१०
तुरुक ६३ ८३, ८४, १०८, ११०, २८३
तुर्क दे० तुरुक
तुर्की १५६, १६३
तुलसी खूल २१६
तुलसीदास (वीरसिंहदेव चरित का एक पात्र) १८१
तुलसी, तुलसीदास (हिन्दी के कवि) ३७, ५२, ११४, १२०, १४५, १६५, १६६, १७१, १७२, ३५६
तूरान २३०
तूरानी ३००, ३२५, ३२७
तेजा २४६
तेजसिह (मेवाड के शासक) २४१
तेजसिंह (रासा भगवंतसिंह का एक पात्र) ३०८
तेदवारी ३४१
तेलिंगाना दे० तिलंगाना
तैत्तरीय ३२
तैमूर ३१८, ३२१, ३२५
तैमूर ख़ाँ (जंगनामा का एक मात्र) २६८
तैयब २६८
तैलंग ब्राह्मण ३२
तोड़ाबाज़ दे० तुर्राबाज़ ख़ाँ
तोफ़ाराम ३२१
तोफ़ेबाज़ २६८
तोमर १७५
तोमरधार ३३४
त्रिपुरसीह २४८
त्रिभुवन पाल २४१

थानसिह ३२१
थानेश्वर २८५

दतिया ३२, १८६, २७३, २७७, २८१, ३३४, ३४३
दत्तू दे० देवराज
दमोदर दे० दामोदर
दमोह २८
दयानाथ ३२१
दयाबहादुर दे० दयाराम
दयाराम २८६, ३२१
दयाल (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
दयालदास (एक कवि) १८

दयालदास (महाराणा राजसिंह के मंत्री) २४६, २६२
दयालशाह, दयालसाह दे० दयालदास (महाराणा राजसिंह के मंत्री)
दयाले (छत्रप्रकाश के एक पात्र) २७२
दरबार ख़ां २६८
दरवेश अली खां सैय्यद २६८
दरवेश मुहम्मद सैय्यद २६८
दरिया खां १८१
दर्भंगा २०
दलसाह मिश्र २७२
दलसिंगार २७२
दलसिंह (छत्र प्रकाश का एक पात्र) २४४
दलसिंह (रासा भगवंतसिंह का एक पात्र) ३०८
दलेल ३२१
दलेल कुमार ३२१
दलेल ख़ां ६८, २७१
दलेल ख़ान दे० दलेल ख़ां
दलेल दौवा २७२
दल्ला ३२१
दांदिक ३३४
दाऊद खां दे० हया ख़ां
दाऊद ख़ां दुपट्टेबाज २६४
दाऊदखां (भूषण-ग्रंथावली का एक पात्र) २०६, २२५
दागी, कैसौराइ मवासी २७२
दादा (एक मराठा सरदार) ३३४
दानापुर ३०१
दामोदर १८१
दॉमोल २३२
दारा २८, २६, ४५, ६६, ६७, २३३, २४७, २५७, ३६८, २७०, २७४, २७५, २७६, २७७
दारा शिकोह दे० दारा
दारा शुकोह दे० दारा
दारा सिकोह दे० दारा
दासजी राइ मवासी २७२
दिनकर (सीसोदे एक शासक) २४८
दिनराज-वंश दे० सूर्य-वंश
दिमानसिंह ३३४
दिल दिलावर ख़ाँ २६८
दिल दिलेर ख़ां २६८
दिलावर खां बहादुर दे० मुहम्मद नईम
दिलावर जंग (हिम्मतबहादुर का भतीजा) ३४२
दिलीप रजिनी १६
दिलीपसिंह गौर ३४२
दिलीपसिंह राजा १६
दिलेर ख़ां २३५
दिलेर ख़ां दे० अब्दुल समद ख़ां बहादुर दिलेर जंग सैफुद्दौलाह
दिलेर ख़ां (औरंगजेब खां एक सेनापति) २०५ २१६, २२१, २२५, २२७, २२८, २३०, २३५, २३६, २३७, २७६, २८०
दिलेर दिल ख़ां २६५, २६८
दिल्ली ११, ४१, ४८, ४६, ५३, ५४, ५५, ६०, ६६, ७१, ७२, ८२, ८४, ६०, १०८, ११३, ११५, १६६, १७७, १६४, १६७, १६८, २००, २०५, २१७, २२१, २२३, २३४, २३५, २३६, २४३, २५२, २५७, २५६, २६०, २६१, २७४, २७४, २७६, २८२, २८५, २६१, २६२, २६३, २६४, २६५, २६६, ३०२, ३०३, ३०४, ३०५, ३०७, ३०८, ३०६, ३१०, ३१२, ३१३, ३१४, ३१६, ३१८, ३२३, ३२४, ३२५, ३२६, ३२७, ३२८, ३२६, ३३०, ३३१, ३३२, ३३५, ३३८, ३३६, ३५४, ३५५, ३५६, ३५७, ३६१
दीन दयाल (लाल कवि का भाई) २७
दीन मुहम्मद ३०८
दीप दीवान २७२
दीपसाह २७२
दीपालपुर २७५
दुग्धा (एक गांव) २८
दुर्गादास (छत्र प्रकाश का एक पात्र) २७२
दुर्गादास (राठौर) १६३, २४५, २४७, २६६, २८२
दुर्गादास (वीरसिंह देव चरित का एक पात्र) १८१
दुर्गाप्रसाद २०
दुर्गा राउ १८१
दुर्गावती २८, ३२
दुर्गा सीसोदिया २०५
दुर्जनसाल १८१
दुर्जनसिंह (करहिया कौ रायसौ का एक पात्र) ३३४
दुर्जनसिंह गौर (हिम्मतबहादुर-विरुदावली का एक पात्र) ३४२
दुर्जनसिंह (रासा भगवंतसिंह का एक पात्र)

३०८, ३१०
दुनेरा २४७
दुलची २७२
दूनी १८६
दूलहसिंह दीवान ३४२
दूषण-उल्लास २५
देलवाड़े २४५
देव १४
देवकरन २७२
देव कुँवरि २७२
देवगर्जसिंह ३०८
देवगढ़ २७३, २७६, २८०, २८६
देवगांव ३३६
देवगिरि २०४, २३१, ३५५
देवजी गोले ३४१
देव दिवान दे० बलदाऊ
देवपाल २०२
देवराई २५८
देवराज २०
देवराय दे०दौराई
देवर्धिगण क्षमाश्रमण २४६
देवल कुंवरि ३५४
देवल देवी दे० देवल कुंवरि
देववारी २६२
देवसूरी २६१, २६२, २६५
देवा पायक १८१
देवारी २६२
देवीदत्त ३२८
देवीसिंह (ओडछा के शासक) २६६, २७३
देवीसिंह (करहिया का एक व्यक्ति) ३३४
देवीसिंह (चंदेरी के राजा) २७७
देवीसिंह (शाहमान धंधेरा का पुत्र) २८४
देवीसिंह (सुजानचरित्र का एक पात्र) ३२१
देह ली दे० दिल्ली
दोआब १७५, ३३८
दोस्त अली ख़ाँ २६८
दौराई २५७
दौरी-रसूलपुर ३२३
दौकुला ३२१
दौलत ख़ां (अकबर का एक सेनापति) ५७
दौलत खां (इब्राहिम लोदी का समकालीन एक सरदार) ३१८
दौलत खां पठान (वीरसिंह देव चरित्र का एक पात्र) १८१, १८२
दौलतराम ३२१
दौलतराव (सिंधिया) ३३
दौलताबाद १७७, २०५, २५७, २७३
द्रविड़ २३१
द्वारसमुद्र २०३

धंधेरा १७५, २७८, २७६
धनवती २४८, २५०
धनसिंह गौर ३२१
धनेश्वर सूरि २४६
धर्म २२
धर्मत २०५, २५७, २५७, २६६, २७१, २७५
धर्मपाल सिंह राजकुमार २०
धर्मसिंह (मेवाड़ वाले) २४८
धर्मसी दे० धर्मसिंह
धवल कीरति (मेवाड वाले) २४८
धामी २७०
धामौनी २७३, २८२, २८६
धार २६३, ३१६
धारमसिंघ दे० धर्मसिंह (मेवाड़ वाले)
धारा नगरी २०, ३३३
धारू २७२
धुरमंगद (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२, २८१ २८६
धूमराज (परमारों का मूल पुरुष) ३५२
धौकलसिंह ३३४
धौलपुर २८, २५७, २७५

नंग (एक दुर्ग) २१६
नंद दे० सदानंद
नंदगांव ३३०
नंदन छिपी (छीपी) २७२
नद महाराजा २७२
नंदसिंह ३२१
नंदुरुवर ३५५
नई दिल्ली दे० दिल्ली
नईम २६२
नकटा दे० गोपालदास नकटा
नखशिख (केशव का एक ग्रंथ) २२
नखशिख (महताब का एक ग्रंथ) १६
नगला (एक स्थान) ३२६
नजफ़ख़ां ३३८, ३३६, ३४०
नजीब, नजीब ख़ां (रुहेला) ३१७, ३२०, ३२८, ३४०

नजीम खां दे० नजीब खां रुहेला
नज्मुद्दीन अली खां बारह सैय्यद २९२, २९८
नज्मुद्दौलाह इशाक़ खां द्वितीय ३२३
नय गांव (राजस्थान का एक नगर) ३५७
नयागांव दे० नौगांव
नर-दुर्ग २१९
नरपति (सीसोदे के एक शासक) २४८
नरपुंज (एक व्यक्ति) २४८
नरवर २५२, ३३३, ३३४
नरवाहन २४०
नरसिंह (देव) दे० वीरसिंहदेव
नरहरिदास १८१
नरिंदसिंह पमार ३४२
नरूशंकर ३१५
नरेन्द्रभूषण २०
नरेन्द्रसिंह (दरभंगावासी) २०
नर्मदा १०१, २८१, २२३, ३१६
नवकोटि २३४
नवल २७२
नवलराय ७१, ३१५, ३२३, ३२४
नवलसिंह (गुलौली वाले) ३४२
नवलसिंह (सूरजमल का एक पुत्र) ३१४
नवलेश ३३४
नवाब मुसरफ १८१
नसरत जंग दे० जुल्फ़िक़ार खां नसरत जंग
नसीर खां २१०
नागदा २३८, २५०, २५१
नागद्राह दे० नागदा
नागनाथ२७, २८
नागमती २०१
नाग राजा १७५
नागा (एक जाति) ३१५
नागौर (स्थान विशेष) ३१७
नाज़िम खान १८१
नाडौल २४१, २६२, १९१, १९२
नादिरशाह ११, १६, २९०, २९५, ३२०
नाना फड़नवीस १९, ३४३
नामदार खाँ २७२, २७५, २७८
नायक रायसा २०
नारनौल २८५, ३२२, ३२३
नासिक २२७
नासिक त्र्यंबक २४९
नासिर खाँ २२
नासिर मुहम्मद खाँ (जिंजी के स्वामी) २२९
नासिरुद्दीन हैदर ३२३
नाहर खाँ दे० जटमल
नाहर खान (छत्र प्रकाश का एक पात्र) २७२
नाहर (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३२१
नाहरसिंह (भरतपुर का एक व्यक्ति) ३३४
नाहुचंद २७१
निज़ामगढ़ ३२९
निज़ाम बेग २१०
निज़ामशाह २०४
निज़ामशाही दे० गोलकुंडा
निज़ामुद्दी अली खाँ दे० नज्मुद्दीनअली खां बारह सैय्यद
निज़ामुद्दीन ३५५, ३५९
निज़ामुल्मुल्क ३१६, ३२५
निज़ामुल्मुल्क दे० हमादुल्मुल्क
निज़ामुल्मुल्क आसफ़जाह २९२, ३२०
निधान (एक कवि) १८
निधानसिंह पड़िहार ३४२
नियामत खां १७६
निर्भय नरेन्द्र ३५१
निवाज़ तिवारी १९
निवाज़सिंह गौर ३४२
नीमदी २४६
नीमराणा ३४, ३५, १७५
नीवागढ़ दे० नीमराणा
नुसरत खां ३४८, ३५४, ३५५, ३५६, ३५७, ३५८, ३६०
नूरुद्दीन ३०१
नूरुल्लाह खां २९२
नूरजहाँ १०
नूरमीर अफ़रंस ३५५
नूरमुहम्मद ३०८, ३१०
नूराबाद ३२६
नेकनाम खां २९८
नेताजी (शिवाजी के एक पदाधिकारी) २२२
नैनबारा २६१
नैपाल २३४
नृसिंह क्षेत्र-धर्मपुरी २७
नोने अर्जुनसिंह दे० अर्जुनसिंह (नोने)
नौगाँव (बुंदेलखंड का एक स्थान), ३३९ ३४३
नौनगदेव दे० नौनिकदेव
नौनिकदेव १७५, २६८

नौरंग, नौरंगसाह दे० औरंगज़ेब
नौलखा (एक स्थान) ३२४
नौला (रासा भगवंतसिंह का पात्र) ३०८
नौशेर खां, नौशेरी खां, नौसेरी खां, २१०, २७१, २६८

पंचम (एक व्यक्ति) १७५, २६७, २६८
पंचमसिंघ दे० पचमसिंह
पंचमसिंघ दे० पंचमसिंह (करहिया कौ रायसौ का एक पात्र)
पंचमसिंह ६२
पंचमसिंह (करहिया कौ रायसौ का एक पात्र) ३३४
पंचपहाडी ३३८
पंजाब ११, १२७, १६६, १७६, १८१, २५८, २७०, २७७
पंडौरी ३४२
पंबल ढीमर २७२
पवार भगवान् १८१
पंहाला २१४, २१५, २२६, २२७, २२८, २३०, २३२, २४६
पचै ३२१
पटना ६६, ३०१, ३०२, ३०३
पटैल ६७
पट्टन दे० पाटन
पट्टी (एक तहसील) ३०६
पट्यो (स्थान विशेष) ३०७, ३०६
पठान ३६, २०६, २३६, ३११, ३१५, ३१६, ३१७, ३१६, ३२३, ३२५, ३३२
पठानकोट १७८
पठारा (एक गाँव) २८
पढ़िहार दे० प्रतिहार
पतरदास राय रायां दे० तिपुर
पत्ता १६३, २४६
पथरी (एक स्थान) ३२४
पदमसी दे० पद्मसिंह
पदमनि दे० पद्मिनी
पद्म ऋषि ५१, १५७, ३४५, ३४६
पद्मसिंह २४१
पद्माकर १६, १७, १८, ३२, ३३, ३४, ५०, ५५, ७२, ७३, ७७, ६३, ६४, ११६, ११७, १२१, १२४, १२६, १२६, १३०, १३१, १३३, १३८, १४१, १४५, १५६, १६२, १७०, १७१, ३३७, ३४१, ३४२, ३४३
पद्माकर पंचामृत १७
पद्माभरण ३३
पद्मावत १२०, १६६, १६३, १६६, १६७, १६६, २००, २०१, २०२
पद्मावती दे० पद्मिनी
पद्मिनी ४१, ६१, ६२, ७६, १०२, १६२, १६३, १६४, १६६, १६७, १६८, १६६, २००, २०१, २०२, २४२, २४७
पन्ना २७०, ३४२, ३४३
परताप २७२
परताला दे० पंहाला
परदौन २७२
परबतसाह दे० परबतसिंह
परबतसिंह २७२
परभावती दे० प्रभावती
परमानंददास २६
परमार ४६, ६२, २१५, २२५, २४१, २५०, २६८, ३३३ ३३५, ३५०, ३५१, ३५२
परमालरासो १६
परवान दे० पृथ्वीपति
परसराम सोलकी २७२
परसोतमा ३२१
पराहछे १८३
परेंडा दे० परेदा
परेंदा १७७, २०५, २१६, २२०
परेझा दे० परेंडा (?)
पलबट ३२६
पलबल ३२६, ३३०
पलाऊँ दे० पालामऊ
पवार वंश दे० परमार-वश
पहाड़सिंह (बुंदेला) ४५, ६६, १७७, २६८, २७३, २७४, २७६
पहारसिंह दे० पहाडसिंह (बुंदेला)
पहुपसिंह ३२१
पांडव ११५, ३५१
पांडुचेरी २०६
पाखरमल ३२१
पाखरिया दे० पाखरमल
पाँगसन ३३७
पाटन १०८, ३०६
पानीपत ३३८
पार, पारघाट (स्थान विशेष) २११,
पारसोली २४५
पारीक्षत (दतिया के एक शासक) ३२

पालामऊ २३४
पाली (स्थान विशेष) २४५
पिंगल-सूत्र-वृत्ति ३५२
पिछौर ३३४
पिनाहट (स्थान-विशेष) ३१६
पीथड़ दे० पृथ्वीपाल (सीसोदे वाले)
पीर मुहम्मद (शेख़) २६८
पुण्यपाल (सीसोदे के एक शासक) २४८
पुरंधर २०५, २०६, २१६, २२०, २२१, २७६
पुराण १४८, १५२, ३१२
पुरानी दिल्ली दे० दिल्ली
पुरी २२४
पुर्त्तगाल १०, २३१, २३२
पुर्त्तगालियों २३१, २३२
पूठोली गाँव २५१
पूना २०४, २१५, २१६, २१६, २३६, २५८
पूरनमल्ल १८१
पूर्णी (एक स्त्री पात्र) २७
पूर्णमल्ल (भींडर वाले) २४५
पृथा दे० पृथाबाई
पृथाबाई २४३, २५२
पृथीराज दे० पृथ्वीराज (छत्रकाश का एक पात्र)
पृथीराज दे० पृथ्वीराज (वीरसिंहदेव-चरित्र का एक पात्र)
पृथ्वीपति ३२१
पृथ्वीपाल (सीसोदेवाले) २४८
पृथ्वीभट दे० पृथ्वीराज द्वितीय
पृथ्वीभल्ल (चित्तौड़ के शासक) २४२
पृथ्वीराज (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २६८, २७२, २७३
पृथ्वीराज (वीरसिंहदेव-चरित का एक पात्र) १७५
पृथ्वीराज (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३२१
पृथ्वीराज कछवाहा १७३
पृथ्वीराज चहुआन दे० पृथ्वीराज चौहान (तृतीय)
पृथ्वीराज चौहान् (तृतीय)५२, २४७, २५२, ३१६, ३२५, ३४६, ३५०, ३५१, ३५२, ३५३, ३५८
पृथ्वीराज द्वितीय २४७
पृथ्वीराजरासो १६, ३७, ५१, ५२, ५४, ७४, ७५, १५७, १५६, १७१, २५२, ३३६, ३५०, ३५१, ३५२, ३५५, ३५८
पृथ्वीराज-विजय ३५०, ३५३
पृथ्वीसिंह ३२१
पेच (एक स्थान)२२८
पेथड़ दे० पृथ्वीपाल (सीसोदेवाले)
पेशवा बालाजी राव दे० बालाजी राव (पेशवा)
पैमसिंह ३२१
पैमु परधान १८१
प्रतापगढ़ (उत्तर-भारत का एक नगर) ३०६
प्रतापगढ़ (दक्षिण का एक दुर्ग) २१०, २११, २१३, २१४
प्रताप पचीसी २०
प्रताप (महाराणा) १७७, १७८, १७६, १६८, २४३, २४५, २४६, २५२, २६५, २७२
प्रतापराव १८१
प्रतापराव (एक मराठा सेनानायक) २२५, २२७
प्रतापरुद्र १७६, २६८
प्रताप-विरुदावली १६, १८, २०, ३४, ३७, ५०
प्रतापसाहि १६, २०
प्रतापसिंह (जयपुर नरेश) ३३, ३४, ५०
प्रतापसिंह (महाराणा) दे० प्रताप (महाराणा)
प्रतापसिंह-विरुदावली दे० प्रताप-विरुदावली
प्रतापसिंह (सुजान-चरित का एक पात्र) ३२१
प्रतापसीह (महाराणा प्रताप से भिन्न व्यक्ति) २४८
प्रतिहार ३५०, ३५१, ३५२
प्रबंध-कोष ३४६, ३५३
प्रबंध-चिन्तामणि २४६
प्रबोध-पचासा ३३
प्रभावती १६४
प्रमार दे० परमार
प्रमार बेरिसाल २४५
प्रयाग १६, १७, ३०, ३६, ६८, १४७, १५५, १८३, १८५, १८६, १८७, २२४, २६६, ३००, ३०१, ३०२, ३१५
प्रशस्ति-महाकाव्य २५५
प्रह्लाददेव ३५२
प्रागदास २७२
प्राणनाथ १३, ४६, ६८, ८८, १५८, २७०, २८४
प्रेमचंद (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
प्रेमसाह २७२

प्रेमा ३२१

फ़कीरुल्लाह ख़ां (मिर्ज़ा) २६८
फ़ज़ल, फ़ज़ल ख़ां (अफ़ज़ल खां का पुत्र) २१२, २१४
फतहअली ख़ां (जंगनामा का एक पात्र) दे० सैय्यद फ़तहअली
फतूहा दे० फ़तेहाबाद
फ़ते खां छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
फ़ते ख़ां दे० फ़तेह ख़ां (जंजीरा का शासक)
फ़तेह ख़ां (जंजीरा का शासक) ११४, २२५, २२६
फ़तेह ख़ां फ़तेहअली ख़ां, (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३११, ३१६, ३२१, ३२२, ३३१
फ़तेहगढ़ ३२४
फ़तेहपुर सीकरी १८०, १८७
फ़तेहसिंह (चित्तौड़ वासी) २४४
फ़तेहसिंह वैस ३२१
फतेहसिंह (बहादुरसिंह का पुत्र) ३२४, ३३०
फ़तेहाबाद २६
फ़तेहाबाद (धर्मत के निकटस्थ स्थान विशेष) २७५
फ़तेहुल्लाह ख़ां (जंगनामा का एक पात्र) २६८
फ़तेहुल्लाह ख़ां (सलेहरि का दुर्गाध्यक्ष) २२५
फ़रगना ३१८
फ़रजंद ख़ां २६७
फ़रिश्ता १६१, १६३, १६७, २००, २०१, ३५८, ३५६, ३६१
फरीद ख़ां दे० शेरशाह सूर
फरीद खान १८१
फरीदाबाद ३१४, ३२८, ३२६, ३३०, ३३६
फ़रुकशाह दे० फ़र्रुख़सियर
फ़रुकसेर दे० फ़र्रुख़सियर
फ़र्रुंदाबख्त दे० मुहम्मद फ़र्रुखन्दसियर जहांगीरशाह
फ़र्रुख़सियर ११, ३१, ४६, ६६, १६६, २०६, २८८, २८६, २६०, २६१, २६२, २६३, २६४, २६५, २६६, २६७, २६८, २६६, ३००, ३०१, ३०२, ३०६, ३०४, ३०५, ३०६, ३१४, ३१७, ३१८
फ़र्रुख़ाबाद २०६, ३१५, ३१६, ३२४, ३२६, ३४०
फ़ाज़िल अली प्रकाश १८
फ़ॉदर बेंडिल ३३५
फानु भाट २७२
फ़ारस २७१, २६७, ३१८
फ़ारसी १५६, १६१, १६२, १५३, १६५, १६६, १६८, १७०, १७१, १७२
फ़ाल ऑव् दी मुगल इम्पायर ३५७
फ़िदाई ख़ाँ (आज़म खाँ का पिता) २६१
फ़िदाई ख़ाँ (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२, २८१, २८६
फ़िदाई खाँ (फ़र्रुखसियर का समकालीन एक व्यक्ति) ३६८
फ़िरंगियों दे० पुर्त्तगाली
फ़ीरोज़जंग दे० अब्दुल्लाह ख़ाँ जहाँगीर का एक सेनापति
फ़ीरोजाबाद ३३०, ३४१
फोजे मियाँ २७२
फौंदा ३२१
फ्रांस, फ्रांसीसी, फ्रासीसिओं २०१, २१८, २३२

बंका २७२
बंकापुर २२८
बंग दे० बंगाल
बंगश नबाब ७१, ३२०, ३२४
बंगाल ११, १६, ६०, १७७ १७८, १७६, १८३, १६६, २१६, २३१, २६६, २७०, २७५, २७८, २६१, २६६, २६६, ३०३
बंदा (सिक्ख गुरु) २८५
बबई २११, २१४, २२५
बक़ा उल्लाह ख़ाँ ३१५
बक्सर ११, ३३८
बक्सराइ (बीरसिंहदेव-चरित का एक पात्र) १८१
बक्सराय (सुजानचरित्र का एक पात्र) ३२१
बख़्तसिंह (राजविलास का एक पात्र) २४८
बख़्तसिंह (सुजान-चरित का एक पात्र) ३२२
बख्तसिंह (हिम्मतबहादुर विरुदावली का एक पात्र) ३४१
बगरू-महल ३११, ३१५, ३२२
बगलाना २२५
बदनगर २६२
बदी साहिबा (आदिलशाह की माता) २११
बदौन ५७, ५८, ५६, ६०, १८२
बदई (एक गाँव) २८
बदख्शां १७७, २७७

बदख़्शानी ३२८
बदनसिंह (सूरजमल के पिता) ३१, ६०, १६८, ३१२, ३१३, ३१४, ३२२
बदनेस दे० बदनसिंह (सूरजमल के पिता)
बदनोर २४५
बदरपुर ३२८,३२६
बदल्ला ३२१
बदायूँ ३६१
बदायूँनी ३५७
बधनोर २६२, २६६
बनवारी १८
बनारस १७५, २६८, २७५, २६१, ३०१
बनारसीदास जैन १६
बनास (नदी) ३५७, ३६०
बब्बर दे० बाबर
बयाना (एक प्रान्त) ३५६
बरकंदाज ख़ाँ दे० बहरामबेग
बरगीदास २७२
बरना २८४
बरनी १६३, १६४, २०१, ३४८, ३५६
बरवै (एक ग्रंथ) ३०
बरसाना (स्थान विशेष) ३३०, ३३१
बरार ५६, २२५, २२७
बलख़ १७७, २३०, २३३, २७०
बलदाऊ २७२, २८१, २८५
बल दिवान दे० बलदाऊ
बलबन ३५४
बलभद्र (केशव के भ्राता) २१
बलभी, बलभीपुर २४६, २५०
बलराम जाट ३१४, ३२०, ३२६, ३३०
बलिराम ३२१,
बलरामपुर २०
बलवंत १८१
बलवीर दे० बीरबल
बलसिंह ३२१
बले बैसु २७२
बल्लदेव दे० बलदाऊ
बल्लभगढ़, बल्लमगढ़ ३१४, ३२८, ३२६, ३३०, ३३१
बल्लू दे० बलराम जाट
बल्हन दे० बाल्हण देव
बल्लिका (नगर) दे० बलभी
बवंजा २३४
बवेरा दे० रूपनगर
बषतसीह दे० बख्त सिंह (राजविलास का एक पात्र)
बसंत (एक दुर्ग) २१६
बसंत (एक पात्र) १८१
बसंत (सूदन के पिता) ३१
बसंत (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
बसंतराय १८१
बसीन २३२
बहराम खाँ ५१
बहराम बेग २६६
बहलोल (बहलोल खाँ से भिन्न व्यक्ति) २१०
बहलोल खाँ (छत्रसाल बुन्देला का एक विरोधी) २३४
बहलोल खाँ (बीजापुर का एक सरदार) २२७, २२८
बहलोल ख़ान मयानौ २७२, २८४, २८५, २८६
बहलोल लोदी २७, १७६
बहादुदेव दे० वाग्भट
बहादुर अली १८१
बहादुर खाँ (छत्रप्रकाश का एक पात्र) ४५, २७१
बहादुर खाँ (मुगल सेनापति) २२५, २२६, २७१, २७३, २७६, २७७, २७६, २८०
बहादुर ख़ाँ दाऊद ज़ई २६३
बहादुर दिल ख़ाँ दे० इलायची बेग
बहादुर बिन मुज़फ़्फ़र १६६
बहादुर मुज़फ़्फ़र जंग दे० मीर जुमला
बहादुरशाह (सम्राट्) ११, ६८, २०१, २०५, २७१, २८४, २८५, २८८, २८६, २६०, २६१, २६२, २६४, २६८, २६६, ३०१, ३१७,
बहादुरसाह दे० बहादुरशाह
बहादुर सिंह बड़गूजर ६१
बहादुरसिंह (राजकुमार) २०
बहादुरसिंह (राजा घासहरे का) ७१, ७२, ३१२, ३१५, ३२१ ३२४, ३२५, ३३०, ३३२, ३४२,
बांदा १८, ३२, ३३, ३३६, ३४०, ३४१, ३४२, ३४३
बांधव दुर्ग १७८, २३४
बाग्भट ३५२
बाक़ी ख़ान बुन्देले (?) २७२, २७३, २८१, २८२
बागड़ दे० डूँगरपुर
बाग़ दहरा ३०४

बाघराज १८१
बाजीराव पसालकर २२६
बाजीराव (पेशवा) २०५, २०६ २३५, ३१६,
बाण १४६
बादित ख़ाँ ३५५
बानसी (एक ठिकाना) २४४
बादनगर २६३
बादल २३, ६१, ६२, ८०, १६२, १६३, १६५, १६६
बापा ४३, २३८, २४०, २४६, २५०, २५१, २६४
बापा रावल दे० बापा
बाबर ६४, २४३, ३१७, ३१८, ३२५
बाबाजी बापू जी २१६, २३६
बाबा जी भोंसले २०४
बाबा लाल १३
बाबी विलास १६
बाबू राय ३२१
बालकृष्ण (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
बालकृष्ण (जोधराज के पिता) ३४
बालाघाट २२८, २७०
बाला जी राव पेशवा ३१७
बाला जी विश्वनाथ (प्रथम पेशवा) २०५
बालि-चरित्र २२
बाली १८१
बाल्हणदेव ३५२, ३५५
बावनी २३४
बावराज परिहार २७३
बासकि, बासकी दे० बासू राजा
बासुदेव राजा दे० बासू राजा
बासू राजा १७८, १६०
बासै खाँ २६८
बाह (स्थान-विशेष) ३१६
बाहिरजी ३३८
बिंदकी २६४, ३०२
बिजौलियन शिलालेख ३५३
बिसुनदास २७२
बिहंगराज २७१
बिहार १७८, १७६, २६४, २६६, २६६, ३१८
बिहारीलाल १६
बीकानेर २७
बीजवार (एक ग्राम) ३४
बीजापुर २०४, २०५, २१०, २११, २१३, २१४, २१६, २२१, २२५, २२६, २२७, २२८, २३०, २३१, २३२, २३५, २३६, २३७, २५८, २७६
बीजापुरी २०६, २१०
बीजोलियाँ २४५
बीझलदेव २७१
बीदर २१६, २२०, २३१, २३३
बीदर बख्त (शाहज़ादा) ३१४
बीबी साहिबा (क़ायम ख़ाँ की माता) ३२३, ३२४
बीरबर दे० बीरबल
बीरबल २१, १७८, २०५
बीसलदेव चौथा दे० विग्रहराज
बुंदेल (एक व्यक्ति) २६७, २६८
बुंदेलखंड ६, १०, २८, ३६, ५७, ५८, ६०, ६६, १७७, १८८, १८६, १६०, २०६, २३४, २३५, २६८, २७०, २७१, २७३, २७६, २७७, २८१, २८३, २८७, ३१५, ३३४, ३३७ ३३८, ३३६, ३४०, ३४३
बुंदेलखंडी १५६, १६०, १७१
बुंदेल-चरित्र १७५
बुंदेल-वंश २७, २८, ३०, ४४, ५८, ६६, १७४, १७५, २३४, २३५, २६७, २६८, २७७, २८२, २८५, २८६
बुंदेल वंशावली १६
बुंदेला (एक व्यक्ति) दे० बुंदेल (एक व्यक्ति)
बुंदेला (वंश) दे० बुंदेल-वंश
बुंदेली (भाषा) १६३, १६६, १६७
बुद्धिपाल २७१
बुद्धिसिंह सेगर ३४२
बुखारा २३०
बुर्राक ३५५
बुर्हानपुर २६६, २८१, २८३
बुर्हानुलमुल्क सआदत खाँ २०, २०६, ३०७, ३०८, ३०६, ३१०, ३१४, ३१७
बूँदी २८, २६, ३०, ३३, ४२, ६२, ८१, १०२, २५३, २५४, २५६, २७०, ३२२, ३३०, ३५३
बृद्धाचलम २२६
बेगम ख़ाँ १८६, १८७
बेगूं २४५
बेतवा ४०, ६६, १४७, १४८, १८६
बेदनूर २२८
बेदनौर २६३
बेदर दे० बीदर
बेदला (एक ठिकाना) २४४

बेनीप्रसाद (डाक्टर) ११०
बेनीराम नागर २६८
बेलौर २२६
बैरम ख़ाँ दे० बैराम ख़ाँ (अकबर का समकालीन)
बैरम ख़ाँ दे० बैराम ख़ाँ (फ़र्रुख़सियर का समकालीन)
बैराम ख़ाँ (अकबर का समकालीन) १८०, १६१
बैराम ख़ाँ (फ़र्रुख़सियर का समकालीन) २६८
बैरीसाल ३२१
बैसवाड़ा ३०१
बैसवाडी १५६, १६३, १६६
ब्रज दे० 'ब्रज'
ब्रजराजदेव (राजा) २०
ब्रजराज पंचाशा २०
ब्रजलीला १६
ब्रजसिंह ३२१
ब्रजेन्द्र दे० बदनसिंह
ब्रजेश दे० बदनसिंह
ब्रह्मक्षत्र कुल ३५२
ब्राह्मण ३४, ५४, ६३, ६५, १६०, २२३, २५५, २६०, ३५२

भंडार दुर्ग २१६
भक्खर १०८, २३१
भगवंत दे० भगवंतराय खीची
भगवंत दे० भगवानदास (जयपुर वाले)
भगवंतराय की विरुदावली २०
भगवंतराय खीची १६, २०, ३१, ७०, ८६, ६०, ११२, २०५, २३६, २६८, ३०७, ३०८, ३०६, ३१०
भगवंतराय दीवान (काकोरीनिवासी) २६८
भगवंतराय-यश-वर्णन १६
भगवंत रायसा दे० रासा भगवंतसिंह
भगवंतसिंह दे० भगवंतराय खीची
भगवंतसिंह (चित्तौड़वासी) २४४
भगवंतसिंह (बूँदीवाले) २०५
भगवानदास (जयपुरवाले) १७८, १७६, २०५, २३६
भगवानदास (वीरसिंहदेव-चरित्र का एक पात्र) १८१
भगौतीराम (छबीलेराम का पुत्र) २६८
भज्जासिंह ३१४
भज्जू दीवान ३२१
भटेवरा नृप २४८
भट्ट काशीनाथ २७
भट्ट रावल २४८
भडौच २१७, २१८
भदावर २०५, २७५, ३१६, ३३४
भदौरिया (एक स्थान) २७५
भदौली २७५
भमर-माता (एक मंदिर) १६२
भमौरी ३४१
भरत (रामायण के एक पात्र) ५८
भरतपुर २२, ३१, ३२, ४७, ४६, १२५ १२७, १२८, १२६, १३०, १३१, १३२, १३४, १३५, १३६, १३८, १४३, ३१२, ३१३, ३१४, ३१६, ३२१, ३२६, ३३०, ३३४, ३३५, ३३८
भरतसिंह ३२१
भरस (व्यक्ति विशेष) २७
भर्तृभट द्वितीय २४०
भवानी प्रसाद ३०८
भवानीसिंह ३२१
भांडेर १८६
भाऊ दे० भाऊसिंह हाडा
भाऊ बख्शी ३४१
भाऊ सिंह हाड़ा १०२, २०५, २१७
भागनगरी दे० हैदराबाद
भागनेर २३१
भागवतराइ २७२
भागवत् ४६, ७२, १४६, १५८
भाट २६, ३८, ४१, ४३, ४७, ५४, ६१, १६६, २००, २६६
भाणसी दे० भुवनसिंह
भानु १२५, १४३
भारत ६, ४१, १६३, १४६, १८०, १८६, २०५, २२३, २३०, २३१, २७०, २८१, २८५, २८६, २६७, ३१८, ३२५
भारतवर्ष दे० भारत
भारतसाह १७६, २६६, २७२
भारतसाहि, भारथवीर दे० भारतसाह
भारती दे० सरस्वती (नदी)
भारतीचंद १७६, २६८
भारतीय २०१, २१८, २३०, २३१
भारमल दे० भारामल

भारमल्ल (किशनगढ़वाले) २४७
भारवि १४७
भारामल १७८, १७६
भावतराइ पमारु २७२
भावसिंघ दे० भावसिंह हाडा
भावसिंह (सुजानचरित्र का एक पात्र) ३२१
भावसिंह हाडा ४२, ६२, २४४, २४६, २५४
भिंड (स्थान विशेष) ३१६
भिलाये (एक नगर) २१७
भींडर २४५
भीखाराम ३२१
भीम (करहिया को रायसौ का एक पात्र) ३३४
भीमकुमार दे० भीमसिंह (महाराणा राजसिंह के पुत्र)
भीमनारायण (चौरागढ़वाले) १७७
भीमसिंह (चित्तौड के महाराणा) ३३, १६६, २००, २४२
भीमसिंह (नीमडीवाले) २४६
भीमसिंह (महाराणा राजसिंह के पुत्र)६५, २४४, २५४, २६२, २६३
भीमसिंह (शिवाजी के एक पूर्वज) २०३
भीमसिंह (हम्मीर का एक सरदार) ३५७
भीमसी दे० भीमसिंह (चित्तौड़ के महाराणा)
भीमसी सोलांकी २५१
भीमसेन (एक इतिहासकार) २७५, २८१
भीमा (नदी) २३०
भील ३५३
भीष्म ३५१
भुवनसिंह २४२
भुवपाल दे० भूपाल राव
भुवेकबाहु २०२
भूपतिराइ बैस २७२
भूपतिसाहि २७२
भूपालराइ, भूपालराव ४०, ५६, ७८, ७६, १००, १८१
भूरे ३२१
भूषण १४, १७, २५, २६, ३७, ३८, ४२, ४३, ४७, ६२, ६३, ६४, ७६, ८२, ८३, ८४, ८५, ६७, १०२, १०५, १०६, १०७, १२०, १२८, १३१, १३२, १३३, १४०, १४१, १४५, १४६, १५०, १५३, १५६, १६०, १६२, १६३, १६४, १६६, २०३, २०४, २१०, २११, २१३, २१४, २१५, २१६, २१७, २१८, २१६, २२०, २२१, २२२, २२३, २२४, २२५, २२६, २२७, २२८, २३०, २३१, २३२, २३३, २३४, २३५, २३६, २३७
भूषण-उल्लास २५
भूषण-ग्रंथावली १७, २६, ४२, ६२, १६२, २०३
भूषण-हज़ारा २५
भेराघाट २४१
भेलसा २३१
भैरोदास २७२
भोज (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
भोज (धारा नगरी का राजा) ३५१, ३५३
भोज (बूँदी-नरेश) ८२, १८०
भोज (हम्मीररासो का एक पात्र) ३५३
भोजदेव दे० भोज (धारा नगरी का राजा)
भोजराज दे० भोज (धारा नगरी का राजा)
भोजवर्मन १७५
भौंसिला, भौंसिले २०३
भौपति भाट ३२१

मंगद (करहिया को रायसौ का एक पात्र) ३३४
मंगद (वीरसिंहदेव-चरित्र का एक पात्र) १८१
मंजूर (मिर्ज़ा अथवा मियाँ) २६८
मझा ३२१
मंडप दे० मांडू
मंडलगढ़ २५४
मंदी अली खाँ दे० मेंहदी अली खाँ
मंदोदरी ३५६
मंधाता दे० मानधाता
मसूर दे० अब्दुल मंसूर खाँ सफदरजंग मसूर
मआसिरुल् उमरा २६८, २७८
मऊ १८, २६, ३०, १७५, १७८
मऊ रशीदाबाद ३२३
मकनि (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३२१
मकरदनगर ३०३, ३०५
मक्का १८१, २३०, २६५
मक्खनपुर ३०४
मठौध दे० मौठा-मठौध
मतिराम १७, ४२, ६२, ७६, ८१, ८२, ६७, १०२, १०३, १२०, १३१, १३३, १४०, १४२, १५८, १६२
मतिराम-ग्रंथावली १७
मतिवन्तसिंह ३२१

मथनसिंह २४१
मथुरा १०, ३१, ३२, २२४, २३४, ३१३, ३३०
मदन (एक पहाड़ी) ३५७
मदनलाल मिश्र २२
मदुरा दे० मदूरा
मदू ३२१
मदूरा २२८, २२६
मधुकर दे० मधुकरसाहि
मधुकर भट्ट ३२
मधुकरशाह दे० मधुकरसाहि
मधुकरसाहि ४०, ५७, ५८, ५६, १७६, १७७, १७६, १८६, २६८, ३४२
मधुरा दे० मदूरा
मध्य-एशिया ३१८, ३२५
मध्य-प्रांत ३२
मनमनदास २४५
मनसाराम ३२१
मनसूर दे० अब्दुल मंसूर खाँ सफ़दर जंग मंसूर
मनु २७१
मनुराज दे० मान (चित्तौड़ का मोरी जाति का एक शासक) मनूची २०१, २७५
मनोहर सिंह २४४
मनौला २७२
मयाराम १८१
मराठा ४६, २०६, २१०, २१४, २१५, २१६, २१७, २१८, २१६, २२०, २२५, २२६, २२७, २२८, २३० २३१, २३२, २५८, ३११, ३१२, ३१४, ३१५, ३१६, ३१७, ३२०, ३२२, ३२४, ३२६, ३२७, ३२८, ३२६, ३३०, ३३२,३३४, ३३८, ३४०, ३४१
मराठी १५६, १६३,
मरीयम मकानी १८७
मरु-भूमि दे० राजस्थान
मर्दन सिंह ३०८
मलखान १७६, १८१, २६८
मलहारणोंगढ़ दे० मलारना (नगर)
मलारना (नगर) ३५७
मलिक अंबर २०४
मलिक ऐजुद्दीन (अलाउद्दीन खिल्जी का एक सरदार) ३५५
मलिक हुसेन दे० बहादुर खाँ (छत्रप्रकाश का एक पात्र)
मल्लखान दे० मलखाश
मल्ल सुजान २७२
मल्लार दे० मल्हारराव होल्कर
मल्लारि दे० मालाबार
मल्हारराव होल्कर ११४, ३१६, ३२२, ३३०, ३३१, ३३२
मवासी २८४, २८६
मस्तराम गौतम ३२१
महकम सिंह दे० महुकम सिंह (भींडरवासी)
महताब १३
महणसिंह २४१
महणसी दे० महणसिंह
महमद खाँ बंगश दे० मुहम्मद खाँ बंगश
महमद पनाह ३२१
महमद बाकर दे० मुहम्मद बाकिर
महमद साहि दे० मुहम्मद शाह (सम्राट्)
महमद हाशिम २७२
महमूद ३२४
महमूद आखवत दे० आकिबत महमूद काश्मीरी
महरम खाँ ३५४
महाकाल (एक तीर्थ-स्थान) २५३
महाद (ताल्लुका) २१५,
महादाजी सिंधिया ३३३
महाबत खाँ १०, १७७, २०३, २२५, २२६, २७३
महाबलेश्वर २११, २१४
महाभारत (ग्रंथ) ११५, ३१२, ३२५
महाराष्ट्र १६३
महावीर ३२१
महासिंह (जयपुर-नरेश) २३६, २६३
महासिंह (बेगूंवाले) २४५
महियार खाँ २३८
महीपनारायण सिंह महाराजा २०
महुकमसिंह (भींडरवासी) २४५
महेंद्र (मेवाड़ के एक शासक) २४८
महेंद्र दे० बदनसिंह राजा
महेंद्रपाल दे० निर्भय नरेन्द्र
महेजा अमर सिंह दे० अमरसिंह (नीमडीवाले)
महेवा २६८, २७५
महेशदास दे० बीरबल
महोबा १७५
मांडव २३१
माखनसिंह बुंदेल ३३४
मार्गगढ़ (एक दुर्ग) २१६
माजदरान (फ़ारस का एक प्रान्त) २६७

मांडल (व्यक्ति विशेष) २४५
मांडू ३२१, ३५२
माणिक्यराज, माणिक्वराव ३५३
माथुर चतुर्वेदी ३१, ३२
माथुर चौबे दे० माथुर चतुर्वेदी
माधवरदास १८१
माधवराव होल्कर ३२४
माधवसिंह चौड़ा (चूड़ावत) २४६
माधवसिंह (जयपुर के महाराजा) ३१५, ३२२, ३२६
माधवसिंह (बूंदीवाले) ६३
माधवसिंह (मेवाड़वाले) १६५
माधोराइ २७२
माधोसिंह (कटेरावाले) २७२
माधोसिंह (कोटा नरेश) २०५
माधोसिंह दे० माधवसिंह (जयपुर के महाराजा)
मान कवि (चित्तौडवाले) १७, २६, ४३, ४४, ४५, ५५, ६४, ६५, ६६, ७६, ७७, ८५, ८६, ८७, १०८, १०६, १२०, १२४, १२६, १२७, १३०, १३१, १३३, १३४, १३६, १३७, १३८, १३६, १४०, १४१, १४२, १४३, १५०, १५१, १५२, १५३, १५४, १६४, २३८, २४०, २४१, २४२, २४७, २४८, २४६, २५०, २५१, २५२, २५३, २५४, २५६, २५७, २५८, २५६, २६०, २६१, २६३, २६४, २६५, २६६, २७२
मान कवि (नरेन्द्रभूषण के रचयिता) २०
मान दे० मानसिंह (जयपुरवाले) २०५
मान (समरसार के रचयिता) २०
मान कुमार (करहिया को रायसो का एक पात्र) ३३४
मानगढ़ २१६
मान-चरित्र १८
मानधाता (राजविलास का एक पात्र) २४८
मानधाता (सुजान-चरित्र-का एक पात्र) ३२१
मानधाता (हिम्मतबहादुर-विरुदावली का एक पात्र) ७२, ६४, ३४२
मान मोरी २५१
मानस दे० रामचरित-मानस
मानसाह दे० मानसाहि
मानसाहि २७२
मानसरोवर (पूठोली के निकट एक स्थान) २५१
मानसिंह (कानोड़वाले) २४५
मानसिंह (महाराजा जयपुरवाले) १८, १७६, १८०, १८२, १८३, १८६, २०५, २३६, २४६, २६५
मानसिंह राठौर २४७, २५५
मानसिंह (सुजान-चरित्त के एक पात्र) ३२१
मानिकपुर २६६
मारवाड़ २३४, २४५, २५५, २५६, २६०, २६१, २६२, २६३, २६४, २६६, २७१, २८२, २८३, ३१३, ३२२, ३३०
मारवाड़ी १६६
मारू १८१
मालदेव सोनगरा १६७, १८८
मालपुरा २३६, २४६, २५४, ३६४
मालमकरंद २०३, २०४
मालवा ८६, १८१, २०५, २०६, २३१, २४१, २५२, २६२, २६३, २६४, २७७, २८१, २८६, ३१४, ३१५, ३१६, ३२१, ३३३, ३५१, ३५२
मालावार २३१
मालसरे दे० तानाजी मालुसरे
मालो दे० मालमकरंद
मावली २२४
माहप २४२
माहब दे० माहप
माहुली २१६
माहेन्द्र दे० महेन्द्र (मेवाड के शासक)
मिनाजी भोंसले २१०
मिनार २३१
मियाँ निहाल २६६
मिराज-कोल्हापुर २२७
मिरात-इ अहमदी २६३
मिर्ज़ापुर २६८
मिर्ज़ा बहराम वेग २६६
मिर्ज़ा राजा जयसिंह दे० जयसिंह महाराजा प्रथम
मिश्र उद्दीन १८१
मिश्र हरि कृष्ण दे० हर कृष्ण
मीर अजीज़ ख़ाँ २६६
मीर अज़ीमुद्दीन बिलग्रामी ३२३
मीर अशरफ़ ३०५
मीर इस्हाक उमदतुल्मुल्क दे० अमीर ख़ां
मीर क़मरूद्दीन दे० ग़ाज़ी उद्दीन खाँ निज़ामुल्मुल्क
मीर काभरू दे० कबरू
मीर खान २६६

मीर गभरू दे० कबरू
मीर ग़ुलाम नबी ३२३
मीर जुमला २६६, ३००, ३०१, ३०५, ३०६
मीर दुर्जन ३२१
मीर बका ३२०
मीर मुकर्रम २६६
मीर मुशरिफ़ २६८, ३०१, ३०५
मीर मुहम्मद ३०८
मीर मुहम्मद तकी दे० सादात .खाँ
मीर मुहम्मद फ़ाजिल दे० कमरूद्दीन .खाँ बहादुर एतमादुद्दौलाह
मीर मुम्हमद वफ़ा २६६
मीर मुहसिन .खाँ २६८, २६६,
मीर महिमा ५१, ५२, ७४, ७५, ६५, ३४५, २५४, ३५५, ३५६, ३५६, ३६०
मीर हुसेन ५१
मीरां साहि १६६
मीरा साहि (तैमूर का वंशज) ३२१
मीर सिकन्दर ३५५
मुंज ३५१, ३५२
मुंहणोत-नैणसी २४६, २५०
मुअज़्ज़म .खाँ दे० मीर जुमला
मुअज़्ज़मशाह आलम बहादुर दे० बहादुर शाह
मुअज़्ज़म (शाहजादा) २१७, २२६, २६२
मुइज़ुद्दीन दे० जहाँदारशाह
मुकटगौर १८१
मुकुद ३३४
मुकुन्दसिंह हाडा २७२, २७५
मुख़त्यार .खाँ २६६, ३०५
मुख़लिस .खां २२१ २६८
मुग़ल ३०, ८६, ११५, १७६, १८७, १८०, १८८, २०४, २०५, २१०, २१५, २१६, २१७, २१८, २२०, २२१, २२४, २२५, २२६, २३०, २३१, २३३, २३४, २३६, २५४, २५८, २५६, २६०, २६१, २६२, २६३, २६५, २६८, २७४, २७५, २७६, २७७, २७८, २८०, २८१, २८२, २८४, ३०८, ३१४, ३१६, ३२०, ३२२, ३२३, ३२४, ३२५, ३३०, ३३६, ३५५, ३५६, ३६१
मुचकुंद ४६
मुज़फ़्फ़र अली ख़ाँ ख़ान-इ-जहाँ, २६५
मुज़फ़्फ़र जंग दे० मीर जुमला
मुड़सान ३३८
मुतहव्वर ख़ाँ २६६
मुदफ़्फ़र ख़ाँ १८१
मुनइम ख़ाँ १७८
मुनीम ख़ाँ २८४, २८५
मुबारक नागौरी शेख़ १८०
मुमताज़ ख़ाँ २६६
मुरंजन २१६
मुरलीधर दे० श्रीधर
मुराद खान २७२
मुराद (अकबर का पुत्र) १७६, १७८, १८०, १८२, २४७
मुराद (शाहजहाँ का पुत्र) २३३, २५७, २७१, २७५, २७६, २८६
मुराद बख़्श दे० मुराद (शाहजहाँ का पुत्र)
मुरादसाह दे० मुराद (शाहजहाँ का पुत्र)
मुरादसाहिं दे० मुराद (अकबर का पुत्र)
मुर्तज़ा ख़ाँ ३०५
मुर्शिद कुली ख़ाँ ३०३
मुलतान २७०, २६२
मुलेहरि (एक स्थान) २२५
मुसलमान ५२, ६३, ७४, १२७, १६३, १६८, १७४, १६७, १६६, २०१, २३० २५२, २६२, २६४, २७६, २७६, २८२, २८५, २८६, ३२५, ३४५, ३४८, ३५४, ३५७, ३५६, ३६०
मुस्तफ़ा हुसेन ३०२
मुस्लिम दे० मुसलमान
मुसलेह ख़ाँ २६८
मुहकम सिंह (बैरीसाल-सुत) ३२१
मुहम्मद अज़ीमुश्शान दे० अज़ीमुश्शान
मुहम्मद अमान बेग २६८
मुहम्मद अमी .खाँ २३५
मुहम्मद अमीन .खाँ २६६, ३०५
मुहम्मद अली ३२१, ३२३, ३५५
मुहम्मद अली सैय्यद २६८
मुहम्मद असकरी (मियाँ) २६६
मुहम्मद आज़मशाह २६६
मुहम्मद हमाम २६६
मुहम्मद इस्माइल दे० ज़ुल्फ़िक़ार .खाँ नसरतजंग
मुहम्मद कामबख़्श दे० कामबख़्श
मुहम्मद ख़ाँ बंगश २०६, २३५, २७१, २६२, ३०२, ३०३, ३०६, ३०८, ३१६

मुहम्मद ग़ौरी ५२, ३१८, ३५४, ३५८
मुहम्मद गौरी (अलाउद्दीन का पिता) ३५४
मुहम्मद ज़फ़र .खाँ शीराज़ी तकरुंब .खाँ दे० तकरुंब खाँ
मुहम्मद तुगलक २४२
मुहम्मद नईम २९२
मुहम्मद फ़र्रुंन्दासियर जहाँगीरशाह (फ़र्रुंख़सियर का पुत्र) ३०३
मुहम्मद बाकिर २९६
मुहम्मद बाक़िर मौतमिद .खाँ दे० मुहम्मद बाक़िर
मुहम्मद बासेह .खाँ दे० बासै .खाँ
मुहम्मद माह दे० आज़म .खाँ (नवाब)
मुहम्मद माह आज़म .खाँ २९३
मुहम्मद मुइज़्ज़ुद्दीन दे० जहाँदारशाह
मुहम्मद मेहदी फ़रज़ंद ख़ाँ दे० फ़रज़ंद .खाँ
मुहम्मद बसी .खाँ २९९
मुहम्मद शाह (अलाउद्दीन का एक सरदार) ३५४, ३५५, ३५६, ३५८, ३५९, ३६०
मुहम्मद शाह (बीजापुर का एक शासक) २११
मुहम्मद शाह (सम्राट्) ११, १६, २०९, २९०, ३०८, ३१८, ३१९
मुहम्मद शुजा २९९
मुहम्मद सुलतान २०८
मुहम्मद साले (सालेह) .खाँ २९८
मुहम्मद हयात .खाँ सैय्यद २९८
मुहम्मद हुसेन २९९
मुहुकम ३३४
मुहौनी १७५
मूकजी बंदीजन १९
मेंहदी अली .खाँ २९९
मेघराज २४६
मेघराज परिहार २७२
मेघी २७२
मेड़तिया राठौर २४५, २४७
मेद (एक जाति) २४९
मेदपाट दे० मेवाड़
मेदसिंह चौहान ३२१
मेदनीपाल १७६, २६८
मेदिनी मल्ल दे० मेदनीपाल
मेर दे० मेद (एक जाति)
मेरा (व्यक्ति विशेष) २४३
मेव २४९
मेवाड १०, १८, १९, २३, २३, २६, २७, ३९, ६०, १८२, २८३, १८७, १९१, १९२, १९३, १९८, १९९, २०१, २३४, २३९, २४०, २४१, २४२, २४३, २४४, २४७, २४८, २४९, २५०, २५१, २५२, २५३, २५४, २५९, २६०, २६१, २६२, २६३, २६४, २७१, ३२२
मेवात १३, ३१७, ३२१, ३२२, ३३०, ३३१, ३४२
मैनपुरी ३३८
मैमोरियल टेबलिट ३५८
मोकल २४२, २४३
मोगल दे० मुग़ल
मोजदी पातशाह दे० जहाँदारशाह
मोती-डूंगरी ३२२
मोदन मोदी ३२१
मोदी पतै २७२
मोमीदाना २०५
मोरंग (देश विशेष) २३४
मोर (एक मराठा परिवार) २१०
मोर गौर २७२
मोरछड़ो २२
मोरी दे० मौर्य
मोरी त्र्यंबक (पिंगले) २२५, २२७
मोरोपंत २२७
मोहकमसिंह (अमरसिंह चन्द्रावत का पुत्र) २०५, २२५
मोहकमसिंह (चूणामणि का पुत्र) ३१४
मोहनराम ३२१
मोहनसिंह ३२१ ३३४
मोहमदराज की कथा १९
मोहोवत मुदफ्फ़र ३५५
मौजदीन दे० जहाँदारशाह
मौठ (स्थान विशेष) ३१५, ३३९
मौतुमिदुल्मुल्क दे० मीर जुमला
मौधा ३४२
मौधा-मठौध २८४, २८६
मौर्य २४८, २४९, २५१

यजुर्वेदी ब्राह्मण ३२
यदुकुल दे० यदुवंशीय
यदुवंशीय २०३, ३१२, ३१३, ३४६
यमुना (एक नदी), ६९, ११४, ३०५, ३०८, ३२८, ३२९, ३३९, ३४०

यशकर्ण २४४
यशगुप्त १६२
यहलक़ ३५५
यहिया ३०५, ३६०
यहीया दे० यहिया
याक़ूत दे० याक़ूतख़ाँ
याक़ूत ख़ाँ (जंज़ीरा के शासकों की उपाधि) २१०, २११, २१३, २१४, २२६, २३४
यादगार १८१
यादगार बेग २६६
यादव दे० यदुवंशीय
यूसुफ़ज़ई २६३
योगराज (मेवाड़ के एक शासक) २४८

रऊफ़ख़ाँ (जिंजी का स्वामी) २२६
रक्मांगद दे० रुक्मांगद
रंगादेवी ३५४, ३५८
रघु ३५०, ३५१
रघुकुल दे० सूर्यवंश
रघुनाथ (करहिया को रायसौ का एक पात्र) ३३४
रघुनाथ दादा ३३८
रघुनाथ बल्लाल अत्रेय २२६
रघुनाथ बल्लाल कोरडे २१०
रघुनाथ राव (पेशवा बाला जी राव का भाई) ३१७, ३३०
रघुनाथ राव (सतारा वाले) ३३
रघुनाथ राव (सागर वाले) ३२, ३३
रघुनाथसिंह चूडावत २४५
रघुवंशी दे० सीसोदिया
रघू दे० रघुनाथराव (पेशवा बाला जी राव का भाई)
रजधान ३२
रज़ाकुली ख़ाँ ३०५
रणछोड़ १६
रणछोड़ राय २५५
रणजोर सिंह राजा २०
रणथम्भौर ३४, ५२, १६४, १६८, २४५, २६४, ३२६, ३४५, ३४६, ३४७, ३४८, ३४६, ३५२, ३५३, ३५५, ३५६, ३५७, ३५८, ३६०
रणदूलह, रणदूलह ख़ाँ २८२, २८६
रणधीर राव ७४, ३४६, ३५३, ३६०
रण (एक पहाड़ी) ३५७
रणमल (मारवाड़वासी) २४५
रणमल्ल ३५३, ३५८
रणसिंह दे० करणसिंह (मेवाड़वाले)
रणस्तंभपुर दे० रणथम्भौर
रतनचंद २६८
रतनपाल ३५८
रतनमासा १८
रतनसाह २७५, २७८
रतनसिंह (मेड़ू-नरेश) ३२१
रतनसिंह राठौर १८
रतनसिंह (सूरजमल का पुत्र) ३१४
रतनसेन दे० रत्नसिंह (ओड़छावाले)
रतनसेन दे० रत्नसिंह (चित्तौड़वाले)
रतनसेन चौडांवत दे० रत्नसिंह चौड़ावत
रतिभान ३३४
रत्तौंदी (एक पहाड़ी मार्ग) २११
रत्नसेन दे० रत्नसिंह (ओड़छा वाले)
रत्नसेन दे० रत्नसिंह (चित्तौड़ वाले)
रत्नसिंह (ओडछावाले) ४०, ५६, ५६, ६०, ८०
रत्नसिंह (चित्तौड़ वाले) २१, २३, ४१, ६१, १०२, १७७, १६१, १६२, १६३, १६४, १६५, १६६, १६७, १६८, १६६, २००, २०१ २०२, २३८, २४१, २४२, २५२
रत्नसिंह चौडांवत २४५
रत्नगिरि २३२
रत्न-बावनी १७, २१, २२, ३७, ३८, ४०, ५६, ७६, ८०, १६०, १६१
रत्न (हम्मीर-पुत्र) ३५३
रत्नाकर १८
रनजीत ३२१
रनजीत लोधी १८१
रनदूलह (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
रनदूल्लह (फ़र्रुख़सियर का समकालीन) २६६
रनदौला दे० रुस्तम इ-ज़मां
रनसिंह ३२१
रनौद २८४
रफ़ीउद्दरजात दे० रफ़ीउद्दर्जात
रफ़ीउद्दर्जात ११, २६०, ३१८
रफ़ीउद्दौलाह ११, ३१८
रफ़ीउलक़दर २६८, ३१८
रफ़ीउल्कद्र दे० रफ़ीउलक़दर
रफ़ीउश्शान दे० रफ़ीउलक़दर
रफ़ीदरजाति साहि दे० रफ़ीउद्दर्जात
रफ़ीसर बुलन्द ख़ाँ २६६

रफ़ीसान दे० रफ़ीउश्शान
रमज़ान खाँ, रमज़ानी खाँ ३२०
रवि वशी दे० सीसोदिया
रवि-वंशीय दे० सूर्य-वंशी
रशीद ख़ाँ २६६
रशीद ख़ाँ अंसारी २६२
रस-कल्लोल १६
रस-तरंगिनी १६
रसरहस्य १८
रसिक-प्रिया २१
रसूखियत ख़ाँ दे० शेख़रसूख़ियत ख़ाँ
रहमत खाँ २६६
रहमतुल्लाह (ख्वाजाह) २६६
रहमतुल्लाह ख़ाँ शेख़ २६६
रहमरहमान खाँ २६६
राइ अजीत दे० अजीत राइ
राइ अमान २७२
राइसेन १८१
राउ दलपति २६८
राउ बलोच अहीर ३२१
राउ मलार दे० मल्हार राव होल्कर
रागकल्पद्रुम २६
राग सागरोद्भव २६
राघवगढ़ ३०८
राघव चेतन ४१, १६४, २०१
राघोबा दे० रघुनाथराव (सतारा वाले)
राजकृष्णदत्त २१
राजगढ़ दे० रायगढ़
राजगिरि (व्यक्ति विशेष) ३४२
राजदुग्ग दे० रायगढ़
राजनगर २५५
राज पट्टन १६
राजपूत ४८, ५०, ५३, ५५, ६४, ६८, ७०, ७२, ७३, ७४, ७८, ११६, १२४, १२६, १६४, १६५, १६७, १६८, २५६, २६१, २६२, २६३, २६८, २७६, २८२, ३०८, ३१७, ३३३, ३३५, ३४५, ३५२, ३५७, ३५८
राजपूताना दे० राजस्थान
राजपूताने का इतिहास ३४७
राजप्रशस्ति महाकाव्य २३६, २४६, २५१, २५६
राजमहेंद्री २७
राज-विनोद ३०
राजविलास १७, २६, २७, ३७, ४३, ४४, ६४, ६५, ६६, ८५, ८७, ६८, १५१, १६४, १६५, २३८, २५०, २५३, २५६, २६३, २६४, २६५, २६६
राजशेखर (नाटककार) ३५१
राजसमुद्र दे० राजसरोवर
राजसर दे० राजसरोवर
राजसरोवर ६५, १५२, १५३, २३६, २५५, २५६
राजसिंघ दे० राजसिंह महाराणा
राजसिंह(कछवाहा) ४०, १७६, १८२, १८६, १८८
राजसिंह (बेगूंवाले) २४५
राजसिंह महाराणा २६, २७, ४३, ४४, ६४, ६५, ६६, १०८, १२४, २३८, २४४, २४५, २४६, २४७, २५०, २५३, २५४, २५५, २५६, २६०, २६१, २६३, २६४
राजसिंह राठौर मेडतिया २४७
राजस्थान ६, २०, १३२, १५२, १६४, १६६, २००, २३६, २४७, २४८, २५५, २७१, २८३
राजस्थान (एक ग्रंथ) १६२
राजस्थानी १२०, १२३, १२७, १३३, १५६, १६१, १६५, २०१,
राजा गंधर्वसिंह, दे० गंधर्वसिंह
राजा गोपाल सिंह दे० गोपालसिंह राजा
राजा छबीलेराम नागर दे० छबीलेराम नागर
राजा (दयालदास का पिता) २४६
राजापुर २३२
राजा रतनचंद दे० रतनचंद
राजाराम गूजर ३२१
राजाराम (जाट) ३१४
राजेन्द्रगिरि गोसांई ३१५, ३२६, ३२८, ३२६, ३३७
राजे मुहम्मद खां ३००
राठौर ४३, ८६, १०८, १७४, २२४, २५६, २६०, २६४ ३६१,
राठौर उदयभानसिंह दे० उदयभानसिंह राठौर
राठौर गोपीनाथ दे० गोपीनाथ राठौर
राठौर दुर्गादास दे० दुर्गादास राठौर
राणपुर २५२
राणा खेतल दे० खेतल राणा
राणा रासा १८
राधा १६

राधा (एक नर्त्तकी) ३५६
राधाकृष्णदास १७
रानाडे २२३
राना रामदास २७२
रानि जनादे दे० जनादे रानी
रानोजी सिंधिया ३१७
राम (रामायण के एक पात्र) २१, ४४, ४५, ६७, ८८, १६१, १७४, २०३, २६७, २७१, ३५६
रामगिरि २१६, २२०, २२७
रामघाट ३३८
रामचंद्र तोमर ३२१
रामचंद्र (वीरसिंहदेव-चरित का एक पात्र) १७५, १७६, २६८
रामचंद्र बुंदेला दे० रामसाहि बुंदेला
रामचंद्र (दतिया के शासक) ३४३
रामचंद्रिका १४७, १४८, १४६, १६०, १६८
रामचरितमानस ३७, १२०, १४६, १५६, १६६, १७२, ६५६
रामचौतनी ३२३, ३२४, ३३२
रामजू २७२
रामदास (वीरसिंहदेव-चरित का एक पात्र) १७८, १७६, १८१
रामदेव ३५३, ३५५
रामनगर (दक्षिण में एक स्थान) २२६, २२७
रामनगर (राजस्थान में एक स्थान) २५६
रामपुरा २०५
रामबलै ३२१
राममनि (दौवा) २७२
राम-रसायन (एक ग्रंथ) ३३
रामसाहि (ओड़छावाले) २१, ५७, ५८, ७६, १७६, १७६, १८२, १८८, १८६, १६०, २६६
रामसिंह दे० रामसाहि (ओडछावले)
रामसिंह कछवाहा दे० रामदास
रामसिंह (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७२
रामसिंह (जयपुरवाले) १८, २०६, २२१, २२२, २३६
रामसिंह (नरवर के शासक) ३३४
रामसिंह राठौर २७६
रामसिंह राणावत २६१
रामसिंह (वीरसिंहदेव-चरित का एक पात्र) १७५, १७६, २६८
रामसिंह (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३२१
रामसेवक ३२१
रामेश्वर ५३, ३४५, ३५६
रायकर्ण ३५५
रायगढ़ ४२, १४६, १६२, २१५, २१६, २२४, २२६, २२६, २८१
राय द्वारिकाप्रसाद ३३८
राय भगवन्तराय दीवान दे० भगवंतराय दीवान (काकोरी निवासी)
रायमल महाराणा ६१, १६२
राय रायां दे० पतरदास
रायरी दे० रायगढ़
राय शिरोमणिदास २६८
रायसा २०
रायसिंह सीसोदिया २२२
रावण ५२, १६१, ३५६
राव प्रताप दे० प्रतापराव (बुंदेलखडवाले)
राव अमरसिंह दे० अमरसिंह चन्द्रावत
राव कर्ण २१६
रायमल २४३
राव बहादुर, राव बहादुरसिंह दे० बहादुरसिंह (घासहरा वाले)
राव बुद्ध (बूंदीवाले) २०५, २३६
राव भूपाल दे० भूपालराइ
राव हम्मीर दे० हम्मीर (रणथंभौरवाले)
रावल गात्र २४८
रावल पुंजा २४८
रावलहंस दे० हंसपाल
रावल समरसिंह दे० समरसिंह रावल
रावी (नदी) २६०
रासा भगवंतसिंह १७, ३१, ३७, ३८, ४७, ७०, ८६, ११२, १६७, ३०७, ३१०
रासा भैया बहादुरसिंह का २०
रासो दे० हम्मीररासो
राहप २३८, २४२
रिडमल दे० रणमल (मारवाडवाले)
रीवां १८, २०, १७५, ३३६
रुकमांगद २४५, २४६
रुद्र (चित्रकूटवाले) २४, २१०, २३६
रुद्रप्रताप दे० प्रतापरुद्र
रुद्रमल दे० वज्रगढ़
रुपमांगद दे० रुक्मांगद
रुस्तम-इ-ज़माँ २१२, २१३, २१४
रुस्तम ख़ाँ ६१, २६६, ३२३, ३२४
रुस्तम ख़ाँ (अफ़रीदी) ३२१, ३२३

रुस्तम दिल ख़ाँ दे० रुस्तम ख़ाँ
रुस्तमे ज़माँ दे० रुस्तम-इ-ज़मां
रुहुल्लाह ख़ाँ २८२
रुहेलखड ११, २३१, ३१५, ३२०
रुहेला ३२०, ३२३, ३२८, ३२६
रुहेला ख़ाँ रुहेला २४८, २६२, २६६
रुंडी खुंडी (?) २१०, २३५
रूपकुमारी दे० चारुमती
रूपनगर २४५, २४७, २५५, २८५
रूपनारायण (एक तीर्थ-स्थान) २५५, २५६
रूप-पुत्ति रठ्ठवरि दे० चारुमती
रूपराम (कोठारी) ३३०, ३३१
रूप-विचित्रा ५१, ७५, ३५५
रूपसाह २७२
रूपसिंह राठौर २४७, २५५
रूम २३०
रूमी (व्यक्ति-विशेष) २६५, २७२, २८२
रेणुकुमार ३५५
रोज़ बहरी दे० रोज़-बिहासु
रोज़बिहांसु ३०५
रोशन गाँव २०४
रोशनाबाद ३०२
रोहिर २१६
रौरिया ३२१

लंका दे० सिंहल द्वीप
लक्ष्मणदास ३२१
लक्ष्मणसिंह (चित्तौड के राणा) २४२, २४३
लक्ष्मण (सीसोदे का राणा) १६५, १६६, २००, २०२, २४२
लखनऊ १७, २६८
लखपति-यश-सिंधु १६
लखमसी दे० लक्ष्मणसिंह (सीसोदे का राणा)
लच्छे राउत (रावत) २७२
लछनेस ३३४
लंबुक २७
ललितललाम १७, २०, ३७, ४२, ६२, ७६, ८१, ८२, ६७, १०२, १०३, १२०, १६२
ललित विग्रहराज नाटक ३५१
लव २७१
लहरास्प २०६
लाखा दे० लक्ष्मणसिंह (चित्तौड के राणा)
लाखू दे० लूख जी
लूख जी २०४
लूख जी जाधव २०४
लषण सी दे० लक्ष्मणसिंह (चित्तौड़ के राणा)
लषमसी दे० लक्ष्मणसिंह (सीसोदे के राणा)
लाल कवि (बुंदेलखंड वाले) १३, १७, २७, २८, २६, ३०, ३८, ४४, ४५, ४६, ६६, ६८, ७७, ८७, ६८, १०६, ११०, १११, १२०, १२५, १२६, १३१, १५८, १५६, १६०, १६६, २३५, २६७, २६८, २७१, २७३, २७४. २७५, २७६, २७७, २७८, २७६, २८०, २८१, २८३, २८४, २८५, २८६
लाल कवि (बूंदी वाले) २६, ३०
लाल कवि (महाराजा महीप नारायणसिंह के आश्रित) २०
लालकुंवरि (छत्रसाल बुंदेला की माता) ६८, २७२, २७६
लालकुंवरि (जहांदारशाह की प्रेयसी) ३०३, ३०४
लाल झा मैथिल २०
लालदास १३
लालसिंह ३२१
लालसोत ३३६, ३४१
लाहौर २६, १०८, १७८, २४७, २५८, २७७, २८२, २८६, २६२, २६६, २६८, २६६, ३००, ३०१, ३०२,
लुतुफुल्लाह खां ३०२
लुतुफुल्लाह खां सादिक २६५, २६६, ३०२
लुतुफुल्लाह खां बहादुर सादिक दे० लुतुफुल्लाह खा सादिक़
लोकमन ३२१
लोदी ३२५
लोहगढ़ (दक्षिण का एक दुर्ग) २२४
लोहगढ़ दे० लोहागढ़ (सिक्खों का एक दुर्ग)
लोहागढ (सिक्खों का एक दुर्ग) २८, ४६, २१५, २१६, २८४, २८५ २८६

वंशपाल दे० हंसपाल
वंशावली २०
वजारत खां ३०५
वज्रगढ़ २१६
वर्णनाशा दे० बनास (नदी)
वली खां मिर्ज़ा २६६
वली मुहम्मद २६६
वल्लभाचार्य जी (जगद्गुरू) २७
वल्लभ-दिग्विजय २७

वशिष्ठ ३५०, ३५२
व्यानको जी (शिवाजी का भाई) २२६
वाई (स्थान विशेष) २११
वाक्पतिराज दे० मुंज
वाग्भट ३५२
वहादुदेव ३५२
वाजिद १८१
वानी-डिंडोरी २०६
वाल्मीकीय रामायण ३३
वालीगंडपुरम २०६
विंध्यराज २७१
विंध्याचल २६७
विंध्यवासिनी देवी ३६, २६७
विकाया-इ-असद्बेग १८३, १८५
विक्रम-विलास २०
विक्रमशाह २२७
विक्रमसिंह (मेवाड के शासक) २४१
विक्रम दे० विक्रमादित्य (रूपनगर वाले)
विक्रम सोलकी २६५
विक्रम दे० विक्रमादित्य (गुप्त वंशीय शासक)
विक्रमाजीत रायरायाँ दे० तिपुर
विक्रमाजीत (जुझारसिंह के पुत्र) २७३
विक्रमादित्य (ओडछा वाले) २०
विक्रमादित्य (गुप्त वंशीय शासक) २४७, ३५३
विक्रमादित्य (रूपनगरवाले) २४५
विग्रहराज ३५१
विग्यसिंह दे० विज्झसिंह
विज्झसिंह ३३४
विज्ञान-गीता २१
विट्ठलनाथ (मारवाड़वासी) २४५
विट्ठलनाथ गोस्वामी ३२
विप्र दे० ब्राह्मण
विमलचंद २७१
विलियम (मोनियर) ३५
विरुदावली दे० हिम्मतबहादुर-विरुदावली
विष्णुविलास (एक ग्रंथ) २८, २६, ३०
विसनदास ३२१
वीर नराहन ३२१, ३५२
वीर (व्यक्ति-विशेष) १७५
वीरबल दे० बीरबल
वीर बुन्देल दे० बुंदेल
वीरभद्र (सिंह) १७४, १७५, १६७, २६८
वीरभान १३, १६४
वीर-विनोद (एक ग्रंथ) २६०
वीरसिंहदेव-चरित १७, २१, २२, ३७, ३८, ३६, ४०, ५६, ५६, ७८, ७६, ६८, ६६, १०१, १२५, १४१, १४७, १४८, १४६, १६०, १६१, १७४, १७५, १७६, १७८, १८१, १८३, १८४, १८५, २६७
वीरसिंहदेव-चरित्र दे० वीरसिंहदेव-चरित
वीरसिंहदेव (बुंदेला) १०, २१, ३६, ४०, ५७, ५८, ५६, ६०, ६६, १००, १०१, १२५ १४७, १७६, १७७, १७८, १७६, १८२, १८३, १८४, १८५, १८६, १८७, १८८, १८६, १६०, २६८, २७३
वीसलगढ़ २१४
वीसलदेव ३५१, ३५३
वीसलनगर २६३
वीसलह दे० वीसलदेव
वृन्दावन ३३६
वृजभान ३३४
वेद ५४, ६२, ६३, ६५, १४७
वेदनूर २१६
वेदपुर २७७
वैरसिघ दे० वैरिसिंह
वैरट २४१
वैरिसिंह २४१
वैश्य २६३
व्रज ४६, १२६, १२८, १३७, १५५, १५६, १५६, १६०, १६१, १६३, १६५, १६६, १६७, १६८, १६६, १७०, १७१, १७२, ३१३, ३३१, ३३२

शंभाजी २०४
शंभुनाथ मिश्र १६
शंभूजी कावजी २१२
शंभूजी (शिवाजी के पुत्र) २२१
शक्ति कुमार २४०, २४१
शक्तिसिंह (महाराणा प्रताप के भाई) २४५, २४६
शफी ३३६
शत्रुंजय-महात्म्य २४६
शमशेर बहादुर ३३६, ३४०
शमसामुद्दौलाह मीर ३२०, ३२७
श्यामदास ३३४
श्यामसिंह ३२१
शरजा खाँ २१०, २२०, २२१

शरीअतुल्लाह ख़ाँ दे० मीर जुमला
शरीफ़ ख़ाँ १८१, १८७
शहज़ादपुर ३०१
शहर-इ-नौ ३५७
शहादत ख़ाँ दे० बुर्हानुल्मुल्क सआदत ख़ाँ
शहाब ३५४
शहाबुद्दीन अहमद ख़ाँ १७६
शहाबुद्दीन एमादुल्मुल्क ग़ाज़ीउद्दीन ख़ाँ बहादुर फ़ीरोज़ जंग निज़ामुल्मुल्क आसफ़ जाह ३२०
शहाबुद्दीन मसऊद ख़िलजी ३५४
शहाबुद्दीन मुहम्मद गौरी दे० मुहम्मद ग़ौरी
शाइस्ता ख़ाँ ६३, २१५, २१६, २१७, २३६, २५८
शाइस्ता ख़ां (फ़र्रुखसियर का मामा) दे० खानाज़ाद खां शाइस्ता ख़ां
शाकिर मुहम्मद (मीर) २६६
शादिल खां ३२०, ३२४, ३२८
शादी ख़ां २६६
शादी (शाहज़ादा) ३५४
शालिवाहन (आंध्र वंशीय राजा) २४०
शालिवाहन (चित्तौड वाले) २४०, २४१
शाह आलम द्वितीय ११, ३३६
शाह कुली २८४
शाहजहां १०, १२, १८, २८, ६६, १७७, १७६, १८१, २०४, २०५, २२३, २३३, २३४, २५४, २५६, २५७, २६६, २७०, २७१, २७३, २७४, २७५, २७८, २८५, २८६, २६२, २६३, ३१७, ३२६
शाहजहांनाबाद दे० दिल्ली
शाहजहांपुर २६३
शाहज़ादा आज़म दे० आज़म शाहज़ादा
शाहज़ादा अकबर दे० अकबर शाहज़ादा
शाहजी दे० साहिजी
शाह जू पंडित १६
शाहनवाज़ ख़ां २५७
शाहबादगढ़ २८४
शाहमदार की दरगाह ३०४, ३०५
शाहमान धंधेरा २८४
शाह शुजा दे० शुजा
शाह सुर्जन दे० सुर्जन
शिकिन ख़ान दे० सफ़शिकन ख़ां
शिकोहाबाद ३०५
शिवनाथ २०
शिवनाथ (असनी वाले) २०
शिवपुर (एक प्रान्त) ३५८
शिवराज-भूषण १७, २५, २६, ३७, ४२, ७६, ६७, १०५, १०६, १०७, १४०, १४६, १६२, १६४, २१३, २१४, २२२, २२३, २२६,
शिवराम भट्ट २०
शिवसिंह (सीकर निवासी) ३२२
शिवसिंह-सरोज १८, २५, २६, ३५
शिवसिंह सेंगर २५, २६, २६, ३१
शिवाजी (भोंसला) १३, २५, २६, ३८, ४२, ४३, ४७, ५२, ६३, ६४, ६७, ७२, ८२, ८३, ८४, ६१, १०५, १०६, १०७, १५०, १६२, १६८, २०३, २०४, २०६, २१०, २११, २१२, २१३, २१४, २१५, २१६, २१७, २१८, २१६, २२०, २२१, २२२, २२३, २२४, २२५, २२६, २२७, २२८, २२६, २३०, २३१, २३२, २३३, २३६, २३७, २५८, २६६, २७६, २८०, २८१
शिवाजी-निबन्धावली २१३
शिवा-चरित्र-निबन्धावली २१३
शिवा-बावनी १७, २५, २६, ४२, १०५, १०७, २२२
शिहाबुद्दीन मुहम्मद गौरी दे० मुहम्मद ग़ौरी
शिहाबुद्दीन ग़ाजीउद्दीन ख़ां बहादुर फ़ीरोज़ जंग अमीरूल् उमरा इमादुल्मुल्क दे० इमादुल्मुल्क
शीलादित्य (मेवाड के शासक) २४६
शीलादित्य (बलभी के शासक) २४६
शुजा दे० शुजाउद्दौलाह
शुजा (शाहजहां का पुत्र) १८, २०५, २३३, २४७, २५७, २६६, २७०, २७५, २७६, २७७, २७८
शुजाअत अली ख़ाँ २६६
शुजाउद्दौलाह ११, ३१६, ३२६, ३२७, ३३७, ३३८, ३४७
शुजातुल्लाह (सैय्यद शुजातुल्लाह ख़ां से भिन्न-व्यक्ति) २६६
शुजायति अली ख़ां दे० शुजाअत अली ख़ां
शुभ-करन २७५, २७७, २८१
शुभ-कृष्ण २०३
शृंगारपुर २१५
शेख दे० मीर महिमा
शेख दे० अबुल्फ़ज़ल्
शेख अब्दुल्लाह ख़ां ३१०
शेख कुली ख़ां १७६

शेख़ खैरुल्लाह २६६
शेख़ नूरुल्लाह ख़ां दे० नूरुल्लाह ख़ां
शेख़ बदरुद्दीन की दरगाह ३०४
शेख़ रसूख़ियत ख़ां २६६
शेख़ रुहुल अमी खां बिलग्रामी ३१०
शेर अफ़गन २३४, २८४
शेरख़ां २७२
शेर ख़ां लोदी (करनाटक के एक भाग का शासक) २०६, २२८, २२६
शेरजग ३२०
शेरपुर ३०१
शेरशाह सूर १७६, ३१८
श्रीकृष्ण भट्ट कलानिधि १६
श्रीधर १७, ३०, ३१, ४६, ४७, ६६, ७७, ८८, १११, १२०, १२४, १२७, १२८, १२६, १३१, १३३, १३४, १३८, १४१, १४२, १४७, १५४, १६७, २८८, २८६, २६२, २६३, २६४, २६५, २६६, २६६, ३००, ३०१, ३०२, ३०३, ३०४, ३०५, ३०६
श्रीनर २४०
श्रीनगर २७०
श्रीपति भट्ट १८
श्रीराम चौधरी ३२१

पंधार दे० कंधार

संकुतकुमार दे० शक्ति कुमार
संकोलि २८
संखोदर ३५५
सग्राम दे० सांगा
संग्राम दे० संग्रामसाहि (ओड़छा वाले)
संग्राम सहाय (एक ग्रंथ) १८
सग्रामसाहि (ओड़छा वाले) १७, ५६, ६०, १७६, १८१
संग्रामसिंह दे० सांगा
संग्रामसी (नागदा के शासक) २४८, २५०
सआदत ख़ाँ दे० बुर्हानुल्मुल्क सआदत ख़ाँ
सकतसिंह कछवाहा १८१
सकतसिंह (छत्रप्रकाश का पात्र) २७२
सकसेना कायस्थ ३१५
सगेरा (एक गांव) २८
सज्जनराय (चपतिराय के भाई) २७७
सज्जनसिंह दे० सुजानसिंह (शिवाजी के एक पूर्वज)
सज्जनसेन २४८
सतारा ३३, २१०, २१४, २२८
सती प्रसाद १६
सत्रुसाल हाड़ा दे० छत्रसाल हाड़ा
सदानंद १७, ३१, ४७, ७६, ८६, ६०, ११२, १२१, १२६, १२८, १३०, १३१, १३३, १३५, १३७, १३८, १४०, १४१, १४२ १५८, १६७, १६८, ३०७, ३०८, ३०६, ३१०
सदाराम (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३२१
सफजंग (?) २१०
सफ़दरजग दे० अब्दुल मंसूर ख़ाँ सफ़दरजंग
सफ़शिकन ख़ाँ २६७, ३०१
सबदलराइ २७२
सबलसाह २७२
सबलसिंह चौहान २४४
सबलसिंह (भींडरवासी) २४५
सबसुखराय ७२, ६४, ३४१, ३५२
संभल २६०
संभाजी दे० शंभाजी
संभू ३२१
सभाराम ३१२
सभासद (ग्रंथ) २२३
सभासिंह २७२
समर्थ रामदास १३
समद दे० अब्दुल समद
समरकंद ३१८
समरसार १६, २०
समरसिंह चन्देल ३२१
समरसिंह रावल १६२, १६६, २४१, २४२, २४७, २५१, २५२
समरसिंह सेंगर ३२१
समरसी दे० समरसिंह रावल
समसामुद्दौलाह अमीरुल् उमरा बहादुर नसरत जंग दे० ज़ुल्फ़िक़ार ख़ाँ नसरत जंग
समसामुद्दौला अशरफ़ खाँ २६०
समसामुद्दौला ख़ान दौरा ख़्वाजा आसिम २६५
समसामुद्दौला ख़ान दौराँ बहादुर मंसूर जंग दे०
समसामुद्दौलाह अशरफ़ जंग
समुंदर खान २६६
सरकार २२३, २२६, २६३, २६४, २७८, २७६, २८१, ३११, ३१२, ३२४, ३३१, ३३२, ३४०, ३४१, ३५७
सरजा दे० शिवाजी

सरजे ख़ाँ दे० शरजा ख़ाँ
सर देसाई २२२, २२३, २२४, २३६
सरनाल १७६
सरनेत सिंह ३४२
सरबुलन्द ख़ाँ २६६
सरमेदसिंह दे० सरनेतसिंह
सरस्वती (नदी) ११४
सरस्वती-मन्दिर ३५१
सरहिन्द २६१
सराय-आलमचन्द २६७, ३०१
सराय जौहरमल २७०
सराय बरार १८३
सरायबेगम ३०५
सराय रोज़बहनी ३०५
सराय शोभाचन्द ३२२
सरीफ़ खान दे० शरीफ़ ख़ाँ
सरुपगिरि ३४२
सरुपसिंह ज्योतिषी ३४२
सरोज दे० शिवसिंह सरोज
सलूंवर २४५
सलावत १८
सलाबत खाँ मीर बख्शी दे० सलावत ख़ाँ ज़ुल्फ़िक़ार जंग अमीरुल् उमरा
सलावत ख़ां ज़ुल्फ़िक़ार जंग अमीरुल उमरा २६७, ३११, ३१७, ३२२, ३२३, ३२५, ३२६, ३२७, ३३१, ३३२
सलावत ख़ाँ दे० सिद्दी जौहर
सलावत जंग दे० सलावत ख़ां मीर बख़्शी
सलीम दे० जहाँगीर
सलीमगढ़ २७६
सलीमशाह (सूर) १७६, ३१८
सलेम साहि दे० सलीमशाह (सूर)
सलेहरि ६३, २०५, २२४, २२५, २२६
संवला दे० सिबुला
सवाई जयसिंह दे० जयसिंह द्वितीय (जयपुर वाले)
सवाई प्रतापसिंह दे० प्रतापसिंह महाराजा (जयपुर वाले)
सवाई जयसिंह-विरुदावली ३४
संस्कृत १६२, १६३, १६५, १६६, १६८, १७२, ३५३
सहज-इंद दे० सहजेन्द्र
सहजराम ३२१
सहजेन्द्र १७५, २६८
सहनपाल १७५, २६८
सहरा ६७, २६६, २७८, २७६, २८५
सहसराम (एक स्थान) ३१८
सहादत ख़ाँ दे० बुर्हानुल्मुल्क सआदत ख़ाँ
सहाब गौरी दे० मुहम्मद गौरी
सहिबाज़ ख़ाँ २७२
सहीराम ३२१
सांगा २४३, २५२
सांभर २५२, ३२२
साभर-युद्ध (एक ग्रंथ) १६
सांवलदास कमध्वज्ज २४५
सांवलदास (बधनोर के स्वामी) २६२
सांवलदास मेड़तिया २६६
सांवेला दे० सिबुला
सागर (एक स्थान) ३२, ३३
सादड़ी (बड़ी) २४४
सादति ख़ाँ दे० बुर्हानुल्मुल्क सआदत ख़ाँ
सादल ख़ाँ दे० शादिल ख़ाँ
सादत ख़ाँ (मीर मुहम्मद तक़ी का पिता) २६७
सादिक़ अली ख़ाँ १७६, १७७, १७६
सादात ख़ाँ (फ़र्रुखसियर का श्वसुर) २६७
सादिक़ ख़ाँ दे० सादिक़ अली ख़ाँ,
सादिल ख़ाँ रुहेला दे० शादिल खाँ
सादी दे० शादी ख़ाँ
सादुल्लाह ख़ाँ २६१, ३२४
साबर (एक स्थान) २८३
साबित ख़ाँ ३१६, ३२१
स मंतसिंह ३३४
साम (स्थान विशेष) २३०
सामूगढ़ २४७, २५७, २७०, २७१, २७५, २७६, २७७, ३०४, ३०५,
सामौली २४६
सारवाहन ४४, ८७, १०६, २७२
सार्दूलनंद ३२१
सारिवाहन दे० शालिवाहन (चित्तौड़वाले)
साहकुली २७२
साहजहां दे० रफ़ीउद्दौलाह शाहजहाँ द्वितीय
साहनपाल दे० सहनपाल
साह सुरजन दे० सुर्जन
साहिजहाँ दे० शाहजहाँ
साहिज़ादा अकबर दे० अकबर शाहज़ादा
साहिजी २०४
साहि सूजा दे० शुजा

साहिबराह दे० साहिबसिंह धंधेरा
साहिबराम ३२१
साहिबराय माथुर २९८
साहिबसिंह धंधेरा २७२, २७८, २८५
साहिम खाँ १८१
साहू २५, २०४, २३५
सिगारपुर दे० शृंगारपुर
सिंगोली १९६
सिघल दे० सिंहल-द्वीप
सिंध (देश) २४९
सिंध (नदी) ३१८
सिंधिया (महादाजी सिंधिया) ३१७, ३३९, ३४१, ३४३
सिंहगढ़ २१६, २१७, २१९, २२४, २३०, २३६
सिंहल-द्वीप ४१, १९१, १९४, १९५, १९६, १९९, २०१, २०२
सिऑर ३३५
सिकंदरा १८९, ३०५, ३४०
सिकंदराबाद ३१४
सिकरवार (स्थान) ३३४
सिक्ख २०९, २८५, २८९
सिद्दी (जौहर) २१३, २१४, २२६
सिद्धपुर २६२
सिनसिनी ३१४
सिबुला (ग्राम) २२, २३
सिरदारसिंह ३३४
सिराजुद्दीन देखिए सिरजुद्दीन अली खाँ
सिराजुद्दीन अली खाँ ३०१
सिरजे खाँ दे० शरजा खाँ
सिरोही २६०, २६१,
सिरौंज १७६, १८३, २३१, २८२, ३३४
सिलब्रेड १७६
सिवराज दे० शिवाजी
सिवराम दौवा २७२
सिवसिंह सरोज दे० शिवसिंह-सरोज
सिवा दे० शिवाजी
सिहुँड़ा दे० सिहोंदा
सिहोंदा २७१, २८६
सीकर (राजस्थान में एक स्थान) ३२२
सीकरी (दिल्ली के निकट एक स्थान) ३२८
सीता (रामायण की एक स्त्री-पात्र) ४५, ८८
सीमांत-प्रदेश ९
सीलोन दे० सिंहल (द्वीप)
सीसोदे (मेवाड़ में एक स्थान) १९१, १९९, २०३ २४०, २४१, २४२, २४८
सीसोदिया १९१, १९२, २०३, २३९, २४०, २५०, २६०, ३५३
सीसोदिया पत्ता दे० पत्ता
सुंदर (वीरसिंहदेव-चरित का एक पात्र) १८१
सुंदर (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३२१
सुंदर गिरि ३४२
सुंदर मनि २७२
सुंदरमनि पमार २७२
सुंदरी कुंवरि ३५५
सुखदेव मिश्र १८
सुखराम ३२१
सुगरा ३२
सुजान दे० सूरजमल (भरतपुर वाले)
सुजान-चरित दे० सुजान चरित्र
सुजान चरित्र १७, ३१, ३७, ४७, ४८, ४९, ७०, ७२, ९१, ११५, १२५, १२७, १२८, १३१, १३२, १५४, १६८, १६९, ३११, ३१२, ३१३, ३३१, ३३२,
सुजानराय (छत्रप्रकाश के एक पात्र) २७५, २७७
सुजान साहि (वीरसिंहदेव-चरित का एक पात्र) १८१
सुजानसिंह दे० सूरजमल
सुजानसिंह (ओड़छावाले) २६९, २७०, २७८, २७९, २८१, २८३
सुजानसिंह (करहिया कौ रायसौ का एक पात्र) ३३४
सुतरदीं दे० सुतरदीन
सुतरदीन २१०, २३४ २७२, २८३, २८६
सुदास सेंगर ३२१
सुबुला दे० सिबुला
सुभकरन २७२
सुभागसिंह २५४
सुरजन दे० सुर्जन (हाड़ा)
सुर्जन-चरित्र ३५३
सुर्जन (हाड़ा) ५२, ८२, १८०, ३५३, ३५८
सुलंकी २३६
सुलतान कुमार ३२१
सुलतान कुली ख़ाँ २९९
सुलतान जहाँ (सैय्यद) २९९
सुलतानपुर-बिलहरी २९१
सुलतान बेग ख़ाँ २९९

सुलतान मुहमद (तैमूर का वंशज) ३२१
सुलतान सलीमा बेगम १८७
सुलतानी दे० मीर जुमला
सुवंसराय २६८
सुहराब मिर्ज़ा दे० अफ़रासयाब ख़ाँ
सूजा दे० शुजा
सूदन १७, ३१, ४५, ४७, ४८, ४६, ५०, ५३, ५५, ७०, ७६, ७७, ६०, ६१, ६२, ६८, ११२, ११३, ११४, ११५, १२१, १२२, १२३, १२४, १२५, १२६, १२७, १२८, १२६, १३०, १३१, १३२, १३३, १३४, १३५, १३६, १३७, १३८, १३६, १४०, १४१, १४२, १४३, १५४, १५५, १५६, १६४, १६८, १६६, १७०, ३११, ३१२, ३१३, ३२१, ३२२, ३२३, ३२४, ३२५, ३२७, ३२६, ३३०, ३३१, ३३२
सूपा २०४
सूर (एक कवि) १४५
सूर (वंश) ३२५
सूरज दे० सूरजमल (भरतपुरवाले)
सूरज नाई १८१
सूरजभान दे० सूरजमल (भरतपुरवाले)
सूरजमल (भरतपुर वाले) ३१, ३२, ४७, ४८, ७०, ७१, ६१, ६८, ११४, ११५, १६८, २०३, २०५, २८४, ३११, ३१२, ३१३, ३१४, ३१५, ३२१, ३२२, ३२३, ३२४, ३२५, ३२६, ३२७, ३२६, ३३०, ३३१, ३३२, ३३५
सूरजमल (महाराणा अमरसिंह का एक पुत्र) २५४
सूरजसिंह राठौर २४६
सूरसिंह भुरटिया २०५
सूर्य (सूर्य-वंश के आदि पुरुष) २७१, ३५१
सूर्यराव सूरवे २१५
सूर्य-वंश ५१, १७४, १६१, २०३, ३३३, ३५०, ३५१, ३५२
सूर्य-वंशीय, दे० सूर्य-वंश
सूर्याजी मालुसरे २२४
सेउँढ़ा ३३४
सेख अनौर २७२
सेर अफगन २१०
सेरअली ३०८
सेर ख़ाँ दे० शेर ख़ाँ (छत्रप्रकाश का एक पात्र)
सेर ख़ाँ लोदी दे० शेर ख़ाँ लोदी
सेर साहि दे० शेरशाह सूर
सेवंत्री (गाँव) २५६
सेहरा दे० सहरा
सैद अफगन २१०, २७२, २८४, २८६
सैद अफगन दे० शेर अफगन
सैद बहादुर २७२
सैद बहादुर ख़ालिक २८२
सैद मनौवर २७२
सैद महमद दे० सैय्यद मुहम्मद
सैद मुज़फ़्फर ख़ान दे० मुदफ़्फर ख़ाँ
सैद लतीफ़ २७२, २८३
सैद हासा नवाब २४८
सैफ ख़ाँ २६७
सैफ़ुद्दौला दे० अब्दुस्समद ख़ाँ बहादुर दिलेर जंग
सैफ़ुद्दौला अब्दुस्समद ख़ाँ २६२
सैफ़ुद्दौला नवाब अब्दुस्समद ख़ाँ बहादुर दिलेर जंग दे० अब्दुल समद
सैफुल्लाह ख़ाँ २६७
सैफुल्लाह ख़ाँ बहादुर दे० सैफुल्लाह ख़ां
सैय्यद २६६, ३२५
सैय्यद अनवर ख़ां २६८
सैय्यद अफज़ल ख़ां बहादुर सदर जहाँ दे० अफज़ल ख़ां (फर्रुख़सियर का एक अमीर)
सैय्यद अब्दुल गफ्फ़ार दे० अब्दुल गफ़्फ़ार ख़ाँ
सैय्यद अब्दुल्लाह (छत्रप्रकाश का एक पात्र) २७३
सैय्यद अब्दुल्लाह खां दे० अब्दुल्लाह खां अली खां
सैय्यद फतह अली ख़ां २६३, २६४, ३०५
सैय्यद ख़ां ३५४
सैय्यद इमाम शेख़ २६६
सैय्यद अबुल्हसन ख़ां ३००, ३०१
सैय्यद मुज़फ़्फर (वीरसिंहदेव-चरित का एक पात्र) १८३
सैय्यद मुज़फ़्फर अली ख़ां २६५
सैय्यद मुज़फ्फर ख़ां (अब्दुल्लाह ख़ां का मामा) ३०२
सैय्यद मुहम्मद बारहा १७६

सैय्यद मुहम्मद २७२
सैय्यद मुरुतज़ा .खां २६६
सैय्यद मियां अब्दुल्लाह .खां २६४
सैय्यद राजे .खां दे० सैय्यद राजे मुहम्मद .खां
सैय्यद राजे .खां बहादुर दिलावर जग दे०
सैय्यद राजे मुहम्मद .खां
सैय्यद राजे बारा .खां १७६
सैय्यद राजे मुहम्मद .खां २६६
सैय्यद शुजातुल्लाह .खां २६७
सैय्यद सदर जहां सदरुस्सुदूर पिहानवी २६०
सैय्यद सलावत .खां जुल्फ़िकार जंग अमीरुल्उ-मरा ३२५
सैय्यद सैफुद्दीन अली .खां २६७
सैय्यद हसन अली .खां दे० अब्दुल्लाह .खां सैय्यद
सैय्यद हसन खां (दीवान प्रागी) २६०, ३०२
सैय्यद हुसेन अली .खां २६७, ३००
सैर-मुताख़रीन २०१
सोंनगढ़ २१६
सोनपत २८५
सोनारिन ३३
सोनिकदेव २७१
सोनिंग दे० सोनिगदेव राठौड
सोनिंगदेव राठौड २४५
सोनेसिंह ३३४
सोम चहुआन दे० सोमेश्वर चहुआन
सोमेश्वर (एक कवि) ३५१
सोमेश्वर चहुआन २४७, २५२, ३५३
सोरठ दे० सौराष्ट्र
सोलकी दे० चालुक्य
सोहनपाल दे० सहनपाल
सौराष्ट्र २४१, २५०

हंस दे० हंसपाल
हंसपाल २४१
हकीक़तुल् अक़ालीम २६८
हकीम १८१
हकीम खाँ ६१
हकीम खाँ कुबरा ३२१
हकीम खाँ ख़ेशगी ३२२
हठीसिंह अंवारिया ३२१
हथगाँव ३०२
हनुमान-जन्म-लीला २२
हनुमंत (रामायण के एक पात्र) ११४, १७२
हनुमान दे० हनुमंत
हमीद दे० हमीद खान
हमीद खान २७२, २८४
हमीद खाँ कुरेशी २६४
हमीदा बानू बेगम दे० मरीयम मकानी
हमीर धंधेरो २७२
हम्मीर दे० हम्वीरराव (एक माराठा सरदार)
हम्मीर काव्य दे० हम्मीर-महाकाव्य
हम्मीर (चित्तौड़ के राणा) २४०, २४१, २४२
हम्मीर-महाकाव्य ३४६, ३४७, ३५१, ३५३, ३५४, ३५५, ३५६, ३५७, ३५६, ३६०
हम्मीर (रणथंभौर के राव) ३४, ५१, ५२, ५३, ७३, ७४, ७५, १२६, १४४, १५८, २४५, ३४५, ३४६, ३४७, ३४८, ३४६, ३५३, ३५५, ३५६, ३५८, ३५६, ३६०
हम्मीरराव दे० हम्वीरराव (एक मराठा सरदार)
हम्मीररासो १५, १८, ३४, ३५, ३६, ३७, ५१, ५३, ७३, ७४, ६४, ६६, १२१, १४६, १५७, १७१, १७२, ३३६, ३४५, ३५२, ३५३, ३५४, ३५६, ३५७, ३६०, ३६१
हमीरसिंह चौहान (सीलोन का एक शासक) १६६
हम्वीरराव (एक मराठा सरदार २२७, २२८
हया खाँ २६४, ३०२
हर कृष्ण २७२
हरकेलि नाटक ३५१
हरजू २७२
हरजू मल्ल दे० हरजू
हरदास दे० तिपुर
हरदौल १८१
हरदौल-चरित्र १६
हरदौल पँवार १८१
हरधौर १८१
हरनागर मिश्र ३२१
हरसुख (द्विज) ३२१
हर्ष ३५१
हर्ष-शिलालेख ३५३
हरिकेश द्विज १६
हरिनारायण ३२१
हरिबस १८१, २७२
हरिब्रह्म २७१
हरी जसौंधी २७२
हरिसिंघ दे० हरिसिंह (करहिया को रायसो का एक पात्र)

हरिसिंह (करहिया को रायसो का एक पात्र) ३३४
हरिसिह (किशनगढ़ वाले) २४७
हरिसिंह देव ६६, १८१
हरी दे० हरीसिंह (सुजान-चरित्र का एक पात्र)
हरीसिंह देउ दे० हरिसिंहदेव
हरीसिह बघेल ३५५
हरीसिंह (वीरसिंहदेव-चरित का एक पात्र) दे० हरिसिहदेव
हरीसिंह (सुजान-चरित्र का एक पात्र) ३२१
हलायुध पंडित ३५२
हलीम खां दिलाजाक २६६
हवस खां (मुहम्मद अली का पुत्र) ३२१
हवसान दे० अबीसीनियनों
हसन अली दे० अब्दुल्लाह खां सैय्यद।
हसन अली खां (औरंगज़ेब का एक सेनापति) २४८, २६३
हसन खां (दीवान प्रागी) २६७
हसन खां (शेरशाह सूर का पिता) ३१८
हसन खां दे० सादात खां (फ़र्रुखसियर का श्वसुर)
हसन खान ११८
हसन बेग दे० सफ़शिकन खाँ
हसन षान दे० हसन खान
हसन हु सेन ३५५
हाजीउद्दवीर ११३, १६८, २००, २०१, ३४७, ३५८,र३६०
हाडा दुजनसाल २७२
हाडा राव सुर्जन दे० सुर्जन
हाथीराज (जाट) २७५
हाथीराम ३२१
हारीत मुनि २५०, २५१
हाशिम खां २८२
हिंदू ५३, ५४, ६०, ६२, ६३, ६४, ६५, ६७, ७४, ७५, ८३, ८६, १०८, ११०, १७४, २१३, २४३, २६० २८१, ३५२, ३५५, ३५६
हिंदूपति १६
हिंदूपति पमार ३४२
हिंदूपति (बुन्देलखंड का एक शासक) ३३८, ३४१
हिंदूसिंह (चंदेल) ३०६
हिज़बर खां २६६
हिंडोन-बियाना २६४
हितोपदेश ३३
हिम्मत खाँ सैय्यद (बांदा का नवाब) १८
हिम्मत-प्रकाश १८
हिम्मत-बहादुर ३२, ३३, ५०, ७२, १२४, १५६, २१६, २२०, ३१६, ३२८, ३२६, ३३७, ३३८, ३३६, ३४०, ३४१, ३४२, ३४३, ३४४
हिम्मत बहादुर-विरुदावली १७, ३३, ३४, ३७, ३८, ५०, ७२, ६४, ११६, १२१, १२६, १५६, १७०, १७१, ३३७, ३४४
हिम्मति दे० हिम्मति बहादुर अली (?)
हिम्मति बहादुर अली (?) ३५५
हिम्मतसिंह (भदावर-शासक) ३१६
हिमाऊँ दे० हुमायूँ
हीरादेवी दे० हीरादे रानी
हीरादे (रानी) २७२, २७६
हीरालाल ३४२
हुमायूँ १८०, ३१७, ३१८, ३२५
हुसेन अली खाँ दे० उमादतुलमुल्क अमीरुल् उमरा बहादुर फ़ीरोज़ जंग सैय्यद हुसेन अली खां
हुसेन अली खां सैय्यद २६६, ३०१, ३०२,
हुसेन उद्दीन खां दे० सैय्यद राजे मुहम्मद खां
हुसेन-कथा ३५५, ३५६
हुसेनी (जाति विशेष) २६७
हृदयराम २१०
हृदयराम-सुत रुद्र दे० रुद्र
हृदयशाह १६, २८५
हेम खाँ २६६
हैमू बक्काल १८०
हैदराबाद २२०, २२६
होडल ३१७, ३३०, ३३१
होडिलराव १७६, १७७, १८१
होयसाल २०३
होरिल दे० होडिलराव
होरिलराय दे० होडिलराव
होरिलराव दे० होडिलराव
होल्कर दे० मल्हारराव होल्कर
हौदलराय दे० होडिलराव

गान जागीरदार था।"[1] यह भी संभव है कि बाकी खाँ अथवा उसका कोई अन्य पूर्वज बुंदेला राजपूत से मुसलमान बन गया हो और बुंदेला शब्द अपने नाम के साथ प्रयुक्त करता रहा हो, जैसे कि वर्तमान समय में भी अधिकांश मुसलमानों के नामों के साथ उनकी जाति, वंश आदि के सूचक शब्द लगे रहते हैं।

"आरंभिक वर्षों में छत्रसाल ने धामौनी तथा उससे ६५ मील पश्चिम में अवस्थित सिरौंज के प्रदेशों को प्रत्येक वर्ष लूटा। धामौनी के मुगल फौजदारों ने उनको रोकने के लिए भरसक प्रयत्न किये, पर उन्हें मुँह की खानी पड़ी। हाशिम खा, सैद बहादुर खालिक, केशवराय बुन्देला, रणदूलह खां (संभवतः १६७३ ई० मे धामौनी का रूहुल्लाह खां फौजदार), रूमी आदि इनका कुछ न बिगाड़ सके।"[2]

ऊपर दिए हुए युद्धों के विस्तृत विवरण के लिए फारसी इतिहासकार मौन हैं। इन युद्धों तथा छत्रसाल का अपने बन्धु-बांधवों से मिलकर स्वान्त्र्य-प्राप्ति-योजनाओं को बनाकर कार्यरूप में परिणत करने आदि का विस्तृत एव ऐतिहासिक वर्णन छत्रप्रकाश मे सुरक्षित है।

जोधपुर पर औरंगज़ेब का आक्रमण—इसके आगे छत्रप्रकाश में जोधपुर पर औरंगज़ेब के आक्रमण और शाहजादा अकबर के विद्रोह का उल्लेख मिलता है।[3] इन घटनाओं के संबंध में इतिहास के विवरण का सार निम्नलिखित है :—

"अफ़गानिस्तान में युद्ध करते हुए ता० १०दिसम्बर, १६७८ ई०को जसवंतसिंह का देहावसान हो गया। ता० ६ जनवरी, १६७९ ई० को औरंगज़ेब अजमेर के लिए रवाना हुआ जिससे जोधपुर में सेना-सचालन कर सके। वह २ अप्रैल, १६७९ ई० को देहली लौट आया। जसवतसिंह का परिवार अफगानिस्तान से चलकर फरवरी, १६७९ ई० मे लाहौर पहुँचा। वहाँ उनकी दो रानियों से दो पुत्र उत्पन्न हुए जिनमें से एक मर गया और अजीतसिंह जीवित रहे। ये सब व्यक्ति जून में देहली पहुँचे। औरंगज़ेब ने अजीतसिंह को बंदी बनाना चाहा, पर वीर दुर्गादास वीरतापूर्वक युद्ध करते हुए २३ जुलाई, १६७९ ई० को मारवाड़ जा पहुँचे।

औरंगज़ेब ने मारवाड मुगल-साम्राज्य मे सम्मिलित कर लिया और सितबर, १६७९ ई० में स्वय अजमेर में जा उपस्थित हुआ।

अकबर का विद्रोह—कुछ समय के उपरांत महाराणा उदयपुर और दुर्गादास से सन्धि करके शाहजादा अकबर ने १ जनवरी, १६८१ ई० को अपने को सम्राट् घोषित करके विद्रोह कर दिया। वह १५ जनवरी, को अजमेर के निकट पहुँचा। औरङ्गजेब के जाली पत्र को पाकर दुर्गादास को यह भ्रम हो गया कि अकबर उन्हें धोखा दे रहा है। उसी रात को तहव्वर खाँ की मृत्यु हो जाने से उनके इस अनुमान की और भी पुष्टि हो गई (१५ जनवरी, १६८१ ई०)। अतएव वे उसे छोड़ कर चले गए। अकबर भी १६ जनवरी को अपने प्राण बचाकर भाग गया। अन्त में दुर्गादास ने अपनी भूल का अनुभव करके अकबर को पुनः अपनी शरण में लिया। उन्होंने उसे दक्षिण में सुरक्षित रूप से पहुँचा दिया।

---

[1] छत्रप्रकाश, पृ० ८०-९४; औरंगज़ेब, भा० ५, पृ० ३९३-५, लेटर मुगलस्, भा० २, पृ० १२८-९ [2] छत्रप्रकाश, पृ० ९४-१०८, औरंगज़ेब, भा० ५, पृ० ३९६; लेटर मुगलस्, भा० २, पृ० २२९ [3] छत्रप्रकाश, पृ० १०८

राजपूताने का युद्ध समाप्त होने के पश्चात् ११ जुलाई, १६८१ ई० को शाहज़ादा आजम अकबर का पीछा करने के लिए रवाना हुआ। औरंगज़ेब स्वय ८ सितंबर को चलकर १३ नवबर, १६८१ ई० को बुर्हानपुर पहुँचा और २२ मार्च, १६८२ ई० को औरङ्गाबाद में ठहरकर अकबर को पराजित करने का अवसर ताकने लगा।"[1]

ऊपर दिए हुए ऐतिहासिक विवरण से छत्रप्रकाश के उक्त घटना सम्बन्धी उल्लेख की पुष्टि हो जाती है। अन्तर केवल इतना है कि लाल कवि का वर्णन अत्यन्त संक्षिप्त एवं सकेतात्मक है।

तहव्वर पराजय—जिन दिनों छत्रसाल सावर में अपना विवाह रचा रहे थे उन्हीं दिनों तहवर खाँ ने बुन्देलखड पर आक्रमण किया। यह घटना उस समय की है जब औरङ्गज़ेब ने दक्षिण को प्रस्थान किया था।[2] यदि तहवर खाँ से लाल कवि का अभिप्राय उस तहव्वर खाँ से है जिसकी हत्या का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, तो उसका यह आक्रमण अकबर के विद्रोह (जनवरी, १६८१ ई०) और औरगज़ेब के दक्षिण को रवाना होने (८ सितंबर, १६८१ ई०) से पूर्व हुआ होगा। तहव्वर खाँ अगस्त, १६७६ ई० में मारवाड़-युद्ध में वर्त्तमान था और उसकी हत्या १५ जनवरी, १६८१ ई० को की गई थी। अतएव उसने बुन्देलखंड पर अपना आक्रमण या तो अगस्त १६७६ ई० से कुछ पूर्व किया होगा अथवा उक्त तिथि से कुछ समय उपरांत वहाँ आक्रमण करके जनवरी, १६८१ ई० से पूर्व अजमेर मे जा उपस्थित हुआ होगा। ऐसी परिस्थिति मे लाल कवि का कथन इतिहास के प्रतिकूल पड़ता है। पर हाँ, यदि यह कोई अन्य व्यक्ति था तो उनका कथन सत्य माना जा सकता है। पर ऐसे निर्णय के लिए पर्याप्त सामग्री का अभाव है।

अन्य युद्धों के समान छत्रसाल इस युद्ध में भी विजयी हुए थे और तहवर खां को हार कर भागना पड़ा था।

अध्याय १७–२२

राजा सुजानसिंह की मृत्यु और इंद्रमनि का राज्याभिषेक लाल कवि ने सुजानसिंह की मृत्यु के उपरान्त इन्द्रमनि (इन्द्रमणि) के ओड़छा के राजा बनने, छत्रसाल के प्रति उनके ईर्ष्या-द्वेष, छत्रसाल के उनके देश को लूटने और अन्त में दोनों के मित्र बन जाने का उल्लेख किया है।[3]

"सुजानसिंह की मृत्यु सन् १६६८ ई० में हुई।[4] इम्पीरियल गज़ेटियर जि० १६ पृ० २४४ में इनकी मृत्यु १६७२ ई० में और सन् १८७२ ई० के जरनल ऑव् ऐशियाटिक सोसायटी में सन् १६७१ ई० में होना लिखा है। सुजानसिंह का १६६६ ई० तक जीवित रहना निश्चित ज्ञात होता है।"[5] इनकी मृत्यु के उपरात इंद्रमणि गद्दी पर आसीन हुए थे।

इन अध्यायों में उल्लिखित छत्रसाल की विजयों की दीर्घ सूची,[6] तथा सुतरदीन-पराजय[7]

---

[1] औरंगज़ेब, भा०३, पृ०३२५,३२६, ३२८-६, ३३२-४, ३३५-६, ३५३-६८; वही, भा० ४, पृ० २५०-२ [2] छत्रप्रकाश, पृ० १०८-१३ [3] वही, पृ० ११७ [4] मआसिरुल् उमरा, भा० १, पृ० ४३६ [5] वही, भा० वही, पाद-टिप्पणी २, पृ० ४३६-७ [6] छत्रप्रकाश, अध्याय १७, पृ० ११४-२० [7] वही, अध्याय १८, पृ० १२१-७

के लिए दक्षिण को जा रहा था, तब छत्रसाल के हृदयशाह आदि पुत्रों ने उसकी सेवा में उपस्थित होकर मंसब प्राप्त किए थे। जब वह अपने शासन के चतुर्थ वर्ष में दक्षिण से उत्तर भारत को लौट रहा था, तब कोटा-प्रदेश में कारातीय नामक स्थान पर वह (छत्रसाल) स्वयं उपस्थित हुआ और सिक्ख गुरु गोविन्दसिंह के अनुयायी बन्दा को दबाने के लिए जाती हुई सेना के साथ हो लिया। वहाँ से चलकर बहादुरशाह अजमेर, रूपनगर, नारनौल, सोनपत, थानेश्वर (देहली को पर्याप्त व्यवधान पर छोड़ते हुए) आदि स्थानों पर होता हुआ लोहागढ के निकट पहुँचा। मुनीम खाँ की सेना के अग्रभाग में छत्रसाल बुन्देला और तोपखाने के सरदार इस्लाम खाँ थे (१० दिसम्बर, १७१० ई०)। गुरु बन्दा भाग गया और दुर्ग पर मुसलमानों का अधिकार हो गया। पृथ्वी को खोदने पर लगभग बीस लाख की संपत्ति शाही सेना के हाथ लगी (१६ दिसम्बर, १७१० ई०)।"[1]

दोनों विवरणों की तुलना करने पर लाल कवि का यह कथन, कि बहादुर शाह ने दिल्ली में रहकर छत्रसाल को लोहागढ जीतने के लिए भेजा, इतिहास के विरुद्ध ठहरता है। वास्तविकता तो यह थी कि सम्राट् दक्षिण से देहली को पर्याप्त दूरी पर छोड़ते हुए स्वय लोहागढ पहुँचा था और छत्रसाल मार्ग में ही उसके साथ हो लिये थे। हाँ, यह अवश्य सत्य है कि उक्त युद्ध के अग्रभाग में रहकर उन्होंने अभूतपूर्व वीरता प्रदर्शित की थी।

सेनायें

जुझारसिंह की सेना—छत्रप्रकाश से विदित होता है कि शाहजहाँ के आक्रमण का समाचार ज्ञात होने पर जुझारसिंह 'साठ सहस्र सुभट लेकर भाग गए।'[2] फ़ारसी इतिहासकारों के कथनानुसार 'जुझारसिंह की ओड़छा-स्थित सेना मे ५,००० अश्वारोही और १०,००० पैदल थे।'[3] इस ऐतिहासिक साक्ष्य के आधार पर लाल कवि का कथन अत्युक्तिपूर्ण ठहरता है।

चम्पतिराय और छत्रसाल की सेनायें—इन दोनों वीरों से सम्बन्धित विविध युद्ध-प्रसंगों की सेनाओं की संख्या का छत्रप्रकाश मे उल्लेख मिलता है, जो इस प्रकार है :—

(अ) 'सहरा के साहिबसिंह ने चम्पतिराय को सहायता के लिए दो सौ सैनिक भेजे।'[4]

(आ) 'छत्रसाल और बलदाऊ को प्रारम्भिक सेना में तीस अस्वार (असवार) और तीन सौ तुपक थीं।'[5]

(इ) 'तहवर-पराजय में १२ बुन्देले मरे और २७ सरदार घायल हुए।'[6]

(ई) 'जगत्सिंह २००बन्दूकधारियों के साथ बहलोल खाँ मयानी के सामने जा डटे।'[7]

(उ) 'लोहागढ-युद्ध में छत्रसाल के पन्द्रह सौ वीर काम आए।'[8]

उक्त उल्लेखों के अतिरिक्त लाल कवि ने यथास्थान छत्रसाल की उन्नति एव ख्याति के साथ सैन्य सख्या में होती हुई वृद्धि का भी उल्लेख कर दिया है। यद्यपि उक्त सैनिक-विवरणों के परीक्षण के साधन अप्राप्य है, पर उनकी प्रामाणिकता एकदम अस्वीकार नहीं की जा सकती।

---

[1] लेटर मुगल्स्, भा० १, पृ० १, ३६, १०४-१८, वही, भा० २, पृ० २२६-३०
[2] छत्रप्रकाश, पृ० २८ [3] हिस्ट्री ऑव् इंडिया, भा० ७, पृ० ४८; औरंगज़ेब, भा० १, पृ०२०
[4] छत्रप्रकाश, पृ० ५६ [5] वही, पृ० ८१, ६४ [6] वही, पृ० ११२ [7] वही, पृ० १३८
[8] वही, पृ० १६२

को देहली में मृत्यु हुई। इसने फ़र्रुखसियर को कुश्ती लड़ने और धनुविद्या की शिक्षा दी थी। फ़र्रुखसियर ने इसे अपना तृतीय बख्शी नियुक्त किया था।[1]

अमीर ख़ाँ—श्रीधर ने इस नाम के दो व्यक्तियों का उल्लेख किया है जिनका विवरण इस प्रकार है :—

(१) अमीर ख़ाँ मीर मीरान—यह खलीलुल्ला खाँ यज़्दी का लड़का था। शाहजहाँ के शासन काल में क्रमशः उन्नति करते-करते औरंगजेब के राज्य के समय मे यह जम्मू के प्रान्त का फौजदार नियत हुआ। औरंगज़ेब के १०वें वर्ष इसने यूसुफजई की चढाई में बड़ी वीरता प्रदर्शित की। १६वें वर्ष में काबुल की चढाई में यह साथ गया। २७ अप्रैल १६६८ ई० को यह मरा।[2]

(२) अमीर ख़ाँ—(मीर इस्हाक, उमदतुल्मुल्क)—यह अमीर खाँ मीर मीरान का पुत्र था। इसने जहाँदार के युद्ध में फ़र्रुखसियर की अच्छी सेवा की, जिससे यह शस्त्राध्यक्ष और शिकारी चिड़ियाघर का दारोगा नियत हुआ। ११५२ हिजरी में यह इलाहाबाद का सूबेदार बना। ११५६ हिजरी मे (५ जनवरी, १७४६-४७ ई०) यह एक नौकर द्वारा मार डाला गया।[3]

जैनदीं ख़ाँ (ज़ैनुद्दीन ख़ाँ बहादुर ख़ाँ)—यह गैरत खाँ का पुत्र और बहादुर खाँ दाऊद जई का पौत्र था। यह शाहजहाँपुर का एक निवासी था। इसने खजुआ के युद्ध में ऐज़ुद्दीन पर वीरतापूर्वक आक्रमण किया था। इसी युद्ध मे मुहम्मद माह आजम खाँ ने इसे घायल करके गिरा दिया था।[4]

कोकिलतास (कोकल ताश ख़ाँ)—अली मुराद खाँ जहाँ कोकल ताश ख़ाँ जहाँदार शाह का धाय-भाई था। जहाँदार शाह ने इसे अमीरुल् उमरा उपाधि देकर द्वितीय मन्त्री नियुक्त किया। फ़र्रुखसियर के विरुद्ध युद्ध करते हुए यह छबीलेराम के हाथ से मारा गया।[5]

गाज़ीउद्दीन ख़ाँ चिकलीच ख़ाँ निज़ामुल्मुल्क—यह गाजीउद्दीन फीरोज जंग का पुत्र था। इसका नाम मीर कमरुद्दीन तथा चिकलीच ख़ाँ उपाधि थी। यह धीरे-धीरे उन्नति करता गया और जहाँदार शाह के शासन के अन्तिम दिनों म यह आगरा का रक्षक नियत हुआ। वहाँ उसने फ़र्रुखसियर का साथ दिया। सिंहासनारूढ होने पर फ़र्रुखसियर ने इसे खान ख़ानान निजामुल्मुल्क बहादुर फतह जङ्ग की उपाधि से विभूषित करके सम्पूर्ण दक्षिण का सूबेदार नियुक्त किया। इसका जन्म ११ अगस्त, १६७१ ई० और मृत्यु १७४८ ई० में हुई थी।[6]

सैय्यद फ़तह अली ख़ाँ—सैय्यद फ़तह अली खाँ सैय्यद अब्दुल्लाह ख़ाँ की बहिन का लड़का था। यह फ़र्रुखसियर के तोपखाने का अध्यक्ष था। फ़र्रुखसियर के उत्तराधिकार युद्ध में वीरतापूर्वक लड़ते हुए यह मारा गया। एक ऐतिहासिक के मतानुसार इसकी वीरता की

---

[1] लेटर मुगलस् भा० १, पृ०२१७, २३० (पाद-टिप्पणी), २५८ [2] मआसिरूल् उमरा भा० २, पृ० २५०-८ [3] वही, भा० वही, पृ० २४८-१, लेटर मुगलस्, भा० १, पृ० १८७ (पाद-टिप्पणी सहित), २०७, २१० (पाद-टिप्पणी सहित) [4] वही, भा० वही, पृ०२११ (पाद-टिप्पणी सहित), २१७, २२५, २३०, २३१ [5] वही, वही, भा० १, पृ० १८६, १६७, २२१, २२६ (पाद-टिप्पणी सहित), २३०, २३३ [6] वही, भा० वही, पृ० १६४ (पाद-टिप्पणी सहित), २२१, २२६, २३२, २३३, २४४, २४५, २६२, २६८-७२; मआसिरुल उमरा, भा० ३, पृ० ५५१-५

ख्याति से विद्वेष-भावना के वशीभूत होकर सैय्यद अब्दुल्लाह खाँ ने एक योरोपीय डाक्टर द्वारा फतह अली खाँ के घावों पर विषैली औषधियों का प्रयोग करवा करके इसे मरवा डाला।[1]

गुलाब अली ख़ाँ (.गुलाम अली ख़ाँ) जुल्फ़िक़ार ख़ाँ बहादुर—यह फर्रुखसियर के बाला-शाही में नौकर था। उत्तराधिकार-युद्ध मे विजयी होने पर सम्राट् फर्रुखसियर ने इसे जुल्फिकार उपाधि से विभूषित करके तोपखाने का अध्यक्ष नियत किया।[2]

गैरति .खाँ (गैरत .खां)—यह अमीरुल् उमरा हुसेन अली खाँ का भानजा था और उसके सूबे अज़ीमाबाद-पटना (बिहार) में उप सूबेदार के पद पर नियुक्त था।[3]

दाऊद ख़ाँ दुपट्टे बाज़—यह निर्णय करना कठिन है कि श्रीधर ने इस नाम से किस व्यक्ति की ओर संकेत किया है। इतिहास से विदित होता है कि "जब फर्रुखसियर दिल्ली की ओर जा रहा था, तो मार्ग में बिदकी नामक स्थान पर २७ नवम्बर, १७१२ ई० को हमीद .खाँ .कुरेशी का पौत्र हया .खाँ शत्रु-पक्ष को त्याग कर फर्रुखसियर से आ मिला था। सम्राट् ने उसे दाऊद खाँ की उपाधि से विभूषित किया था।"[4] सभवत: कवि का इसी नाम से अभिप्राय है।

उमादतुल् मुल्क अमीरुल् उमरा बहादुर फ़ीरोज़ जग सैय्यद हुसेन अली .खां—यह सैय्यद मियाँ अब्दुल्लाह खाँ का पुत्र और .कुतुबुलमुल्क सैयद अब्दुल्लाह .खाँ का छोटा भाई था। औरङ्गज़ेब के शासन-काल में यह क्रमश: रणथम्भौर तथा हिडौन-बियाना का शासक रहा। बहादुरशाह के मरने पर अपने भाई के साथ हुसेन अली खाँ ने फर्रुखसियर का साथ दिया। परिणामस्वरूप उसके सम्राट् बनने पर यह उसका मीर बख्शी बना। १७२० ई० मे इसकी हत्या कर दी गई।[5]

इमत्याज़ खान (इम्त्याज़ .खाँ)—फर्रुखसियर के उत्तराधिकार-युद्ध मे इसने बड़ी वीरता प्रदर्शित की थी।[6]

जानी ख़ाँ—यह जहाँदार शाह की हरावल मे फर्रुखसियर के विरुद्ध था। वीरतापूर्वक युद्ध करते हुए इसने वीरगति प्राप्त की।[7]

ख्वाजा हुसेन—यह जहाँदारशाह के प्रमुख अमीरों में से था। कोकल ताश खाँ की पत्नी की भगिनी से इसका विवाह हुआ था। जहाँदार शाह ने इसे ख़ानदौराँ की उपाधि देकर अपना द्वितीय बख्शी बनाया। जब ऐज़ुद्दीन फर्रुखसियर का सामना करने के लिए भेजा गया था, उस अवसर पर यह उसकी सेना के प्रमुख अफसरों में से एक था। यह ऐज़ुद्दीन को बहला-फुसलाकर बिना युद्ध

---

[1] लेटर मुग़लस्, भा० १, पृ० २१७, २२६ (पाद-टिप्पणी); २३०, २३१ (पाद-टिप्पणी सहित) [2] वही, वही, पृ० २२६ (पाद-टिप्पणी), पृ० २६० [3] वही, भा० वही, पृ० २६२ [4] वही, भा० वही, पृ० २१८ [5] वही, भा०वही, पृ० २०३-५, २०६, २१७, २२७, २२६, २३०, २५८, २८२, २८७-६०, २६२, ३०२, ३०३, ३५७-६२, ३७४, ३७७-६, ३८५, ३६५, ४०७, ४१७, ४२२-६; वही, वही, पृ० १४, ३४, ४५, ५१, ५३, ५६-६२, १०० [6] वही, वही, पृ० २३० [7] वही, भा० वही, पृ० १८१, २२१, २२६ (पाद-टिप्पणी सहित), २३०-२३१, २३२